राहुल वाङ्मय

राहुल
वाङ्मय

राहुल-वाङ्मय

परामर्श

डॉ. विद्यानिवास मिश्र

डॉ. नामवर सिंह

डॉ. निर्मला जैन

सम्पादन

कमला सांकृत्यायन

सम्पादन सहयोग

बसन्तकुमार कपूर

रामकुमार कृषक

संयोजन

जया पड़हाक

जेता सांकृत्यायन

राधाकृष्ण

राहुल

वाङ्मय

ISBN 81-7119-186-x

राहुल-वाङ्मय

खण्ड : दो—जीवनी और संस्मरण—जिल्द : 4

प्रथम संस्करण : 1994

पहली आवृत्ति : 1998

मूल्य

1500 रुपये

(जीवनी और संस्मरण : खण्ड दो—4 जिल्दें)

प्रकाशक

राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड

2/38, अंसारी रोड, दरियागंज

नयी दिल्ली-110002

साज-सज्जा : प्रशान्त

लेज़र कम्पोज़िंग

कम्प्यूटेक सिस्टम

मानसरोवर पार्क, दिल्ली-110032

मुद्रक

हिन्दुस्तान ऑफसेट प्रिंटर्स

शाहदरा, दिल्ली-110032

RĀHUL VĀNGMAYA

Part-2 : Jeevani aur Sansmaran : 4 Volumes

Rs. 1500.00



महापण्डित राहुल सांकृत्यायन : चीन जाते समय रंगून (वर्मा) प्रवास–1958

प्रकाशकीय

महापण्डित राहुल सांकृत्यायन हिन्दी के युगान्तरकारी लेखक हैं। उनके ऐसा क्रांतिचेता लेखक पहले नहीं हुआ और बाद में भी, अभी तक तो नहीं ही हुआ है। वे एक व्यक्ति ही नहीं, एक संस्था थे। उनका सम्पूर्ण जीवन और समग्र लेखन, अपने देश और देशवासियों के लिए था। उन्होंने सदैव भारत के हित में ही सोचा और लिखा। अपनी आत्मकथा–जीवन-यात्रा–में भी उन्होंने अपने बारे में कम, भारत और भारत के बाहर युग-परिवर्तन की ऐतिहासिक स्थितियों को निर्मित करनेवालों के सम्बन्ध में ही अधिक लिखा है।

अपने जीवनी और संस्मरण-साहित्य में भी इसी प्रकार उन्होंने जीवन के सामाजिक, राजनीतिक संघर्ष और आत्म-बलिदान प्रेरित घटनाओं का प्रामाणिक एवं विशद विवरण प्रस्तुत किया है। उन्होंने भारत के उन देशभक्तों और क्रांतिकारियों की जीवनियाँ लिखीं, जिन्होंने देश की आजादी और उस के मूलगामी विकास के लिए अपना सर्वस्व निछावर कर दिया।

ऐसे अप्रतिम लेखक राहुल सांकृत्यायन के रचना-लोक–'राहुल-वाङ्मय' के विभिन्न खण्डों–को विषयवार उनकी पुस्तकों के आधार पर नियोजित किया गया है।

'राहुल-वाङ्मय' के इस द्वितीय खण्ड की चौथी जिल्द में हैं–'स्तालिन' और 'माओ चे-तुंग'। यह प्रख्यात पुरुषों के जीवनचरित्र तो हैं ही, इनके साथ ही रूस और चीन की सामाजिक-राजनीतिक विकास-यात्रा को समझने-समझाने के प्रयास के बीच, वहाँ के राजनीतिक संघर्ष, कम्युनिस्ट पार्टी की गतिविधियों, समाजवादी उद्योगीकरण की योजनाओं आदि विभिन्न पक्षों के विविध पहलुओं की परख भी है।

प्रकाशन में रह गयी किसी भी त्रुटि के लिए हम क्षमा-प्रार्थी हैं।

विषयानुक्रम



महापण्डित राहुल सांकृत्यायन : कलकत्ता–1947

स्तालिन

साथी श्रीपाद अमृत डांगे को

[7 नवम्बर, 1953, महान अक्तूबर क्रांति की 36वीं वर्षगाँठ के अवसर पर]

भूमिका

दुनिया की अनेकों भाषाओं में स्तालिन की जीवनी या जीवनियों का अभाव नहीं, यद्यपि उनमें कितनी ही बातों की कमियाँ देखी जाती हैं। पर, हिंदी में तो प्रायः उनका अभाव ही है। वैसे स्तालिन के ऐतिहासिक जीवन ही नहीं, बल्कि भावी संसार के पथ-प्रदर्शक के रूप के प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करना भी एक उद्देश्य हो सकता था, जिसके कारण मुझे लेखनी उठानी पड़ती। मैं यह मानता हूँ कि इस जीवनी में भी एक त्रुटि दिखाई पड़ेगी, जो त्रुटि दूसरी भाषाओं की जीवनियों में भी देखी जाती है। वह है–वैयक्तिक जीवन की घटनाओं की कमी। मैं उनकी खोज में हूँ, लेकिन उनके प्राप्त करने तक पुस्तक लिखने या उसे प्रकाशित करने से रोके रखना, इसे अनिश्चित काल के लिए स्थगित करना होता। दूसरे संस्करण में, मुझे आशा है, उस दिशा में भी मैं कुछ और चीजें पाठक को दे सकूँगा। स्तालिन का जीवन केवल ज्ञानवर्द्धन का साधन ही नहीं, है, बल्कि वह पग-पग पर गहन कर्म-पथ पर प्रकाश डालता है।

स्तालिन की जीवनी लिखते समय, मेरे मन में ख्याल आया कि जैसे नये संसार के इस महान् निर्माता की जीवनी को हिंदी के पाठकों के सामने रख रहा हूँ, वैसे ही अच्छा होगा, यदि इसी तरह की मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और माओ की चारों जीवनियाँ भी लिख डालूँ। इन पाँचों महापुरुषों की जीवनियाँ लिखने का संकल्प करके, मैंने मार्क्स की जीवनी में हाथ लगा भी दिया है। आशा, है बाकी तीन जीवनियों को भी सन् 1953 में ही लिखकर समाप्त कर सकूँगा। वैसे तो यह भी सोच रहा हूँ कि 'नये संसार के निर्माता' के नाम से नई दुनिया के बनानेवाले बीस पुरुषों की जीवनियाँ लिखूँ जिनमें एशिया और यूरोप के बहुत-से देशों के नेता होंगे; लेकिन, बहुतों के बारे में अंग्रेजी और रूसी भाषा में भी सामग्री उपलब्ध नहीं है। इसलिए, नहीं कह सकता, कब तक वह संकल्प पूरा हो सकेगा।

मसूरी, 1 नवम्बर '53

–राहुल सांकृत्यायन

1
बालपन (सन् 1879-85)

1. जन्मभूमि

कोहकाफ़ का नाम हम बचपन से सुनते आये हैं। यह अद्भुत पहाड़ परियों का देश माना जाता था। उर्दू और फारसी की पुस्तकों में यहाँ की अनिंद्य सुन्दर परियों की न जाने कितनी कहानियाँ हम पढ़ते-सुनते आये हैं। लेकिन, परियों और देवताओं का जमाना अब बीत चुका है, उन पर कोई विश्वास करने के लिए तैयार नहीं। इसी कोहकाफ़ को रूसी में 'कफ़काश' और अंग्रेजी में 'काकेशस' कहते हैं। किसी समय सभी ने पाठशाला के भूगोल में पढ़ा होगा कि यहाँ के स्त्री-पुरुष दुनिया में सबसे सुन्दर होते हैं। लेकिन, इसकी सच्चाई के बारे में कुछ कहना मुश्किल है, तो भी यह मान लेने में कोई हर्ज नहीं कि काकेशस के लोग अपेक्षाकृत अधिक सुन्दर होते हैं। और, सुन्दरता के साथ वीर भी अधिक होते हैं, यह इतिहास बतलाता है।

काकेशस पर्वतमाला वस्तुतः उसी विशाल पर्वत-श्रेणी का एक अंग है, जो पश्चिमी चीन से स्विट्ज़रलैंड और स्पेन तक, अर्थात् लगभग प्रशान्त महासागर से अटलान्टिक महासागर तक यूरेशिया महाद्वीप की कटि-मेखला बनी हुई है। चीन के पर्वतों के बाद, आसाम से कश्मीर तक हमारा हिमालय उसी का एक अंग है; फिर पामीर, हिन्दूकुश और ईरान की उत्तरी पर्वत-श्रेणी (कोपेतदाग) को लेते हुए वह कास्पियन समुद्र के दक्षिणी पूर्वी कोने पर पहुँचती है। इसी स्थल पर, समुद्र के पश्चिमी तट से काला सागर के पूर्वी तट तक काकेशस पर्वत-श्रेणी फैली हुई है। यह पूर्व-पश्चिम जितनी चौड़ी है, उत्तर-दक्षिण में भी इसका विस्तार प्रायः उतना ही है। हिमालय की तरह, यहाँ भी सनातन हिम से आच्छादित बहुत-से पर्वत-शिखर हैं और सचमुच ही कास्पियन में सामुद्रिक यात्रा करनेवाले उन्हें देख, भूलकर कह सकते हैं कि हम हिमालय के पास आ गये हैं। हिमालय की भाँति, इस भूमि में भी प्रकृति की अद्भुत शोभा चारों तरफ बिखरी हुई है। कहीं देवदारों के घने जंगल हैं, नीचे बंज और दूसरे हिमालीय वृक्षों की हरियाली दिखलाई पड़ती है। हिमालय की तरह, काकेशस पर्वतमाला में भी भिन्न-भिन्न भाषा-भाषी जातियों का अद्भुत जमावड़ा है। यहाँ की लड़ाकू जातियों ने अपने पहाड़ों को किला बनाकर हमेशा अपनी स्वतंत्रता की रक्षा की है–विदेशियों से भी, और पड़ोसियों से भी। कुर्द, ओसेत् (प्राचीन अ़लान) जैसी इंदो-ईरानी भाषाएँ बोलनेवाली जातियाँ जहाँ काकेशस की गोद में आज भी मिलती हैं, वहाँ आज़ुर्बाइजानी जैसे तुर्की-भाषी लोग भी यहाँ के बहुत-से भागों में रहते हैं। आज आज़ुर्बाइजान की राजधानी बाकू दुनिया का प्रसिद्ध तेल-क्षेत्र है। दागिस्तान के तुर्की भाषा-भाषी लोगों से मिलकर, कास्पियन के पश्चिमी तट के काफी भाग में तुर्कवंशी जातियाँ रहती हैं। ओसेती और अबखाजी काकेशस के सबसे ऊँचे भागों में रहते हैं। इनके अतिरिक्त, काकेशस के पश्चिमी भाग में इन्दो-यूरोपीय भाषा की पुरानी शाखाओं–अर्मनी और गुर्जी (जार्जियन) बोलनेवाले रहते हैं। विद्वानों का मत है कि ये दोनों जातियाँ अपनी भाषा के रूप में एक बहुत पुरानी भाषा के अवशेष को कायम रखे हुए हैं। इस प्रकार, मालूम होगा कि क्षेत्र में छोटा होने पर भी,

इस भू-भाग में अनेकों जातियाँ एकत्रित हैं। तुर्की और तद्भाषा-भाषी जातियों की तरह यद्यपि ऐतिहासिक काल में बहुत-सी भाषाएँ और जातियाँ यहाँ आपस में मिलकर एक हो गईं, लेकिन दुर्गम पर्वतों और लोगों की वीरता के कारण अब भी बहुत-सी जातियाँ और भाषाएँ मिलती हैं।

काकेशस यूरोप का नहीं, बल्कि हमेशा से एशिया का अभिन्न अंग रहा है। एशिया और यूरोप की वर्तमान सीमा काला सागर से शुरू हो, काकेशस के उत्तर-उत्तर कास्पियन पहुँच, फिर उसमें गिरने वाली उराल नदी से होती हुई, उराल पर्वत-श्रेणी से मिल जाती है। गुर्जी (जार्जी) और अर्मनी लोग बहुत पहले ईसाई हो गए थे, जिसमें उनकी वीरता से फायदा उठाते हुए उन्हें अपने प्रतिद्वंद्वी ईरानियों के विरुद्ध खड़ा करने का, रोमन साम्राज्य का प्रयत्न भी एक कारण था। सासानी ईरानियों के शासन को जब अरबों ने खतम किया, तब भी कितने ही समय तक अर्मनी और गुर्जी बहादुर वही काम करते रहे, जो कि भारत के पश्चिमोत्तर में अरबों और तुर्कों के विरुद्ध पठान करते रहे। उन्होंने कितनी सफलता के साथ मुकाबला किया, यह इसी से मालूम होगा कि इस्लामी विजेताओं ने गुर्जियों और अर्मनियों को मुसलमान बनाने में सफलता नहीं पाई। अर्मनी और गुर्जी जहाँ ईसाई होने से पश्चिम की शक्तियों की ओर आशा लगाये रहते थे, वहाँ कुर्द और तुर्क आदि मुसलमान हो जाने के बाद इस्लामी जगत से अपनी घनिष्टता मानते थे। शायद आज जैसा भाव उनमें कभी भी पैदा नहीं हुआ, जब कि सभी काकेशस का पुत्र मानते हुए, अपने को भाई-भाई समझते हों। आज काकेशस की भिन्न-भिन्न जातियों का आपसी संघर्ष अतीत की बात हो गई है, सभी जातियों की भाषा और संस्कृति के अनुसार अपने स्वतंत्र या स्वायत्त गणराज्य हैं, जहाँ वह अपनी जातीय इकाई को अक्षुण्ण बनाये, अपने को सोवियत की विशाल महाजाति का अंग मानती है। उनके ऐसे परिवर्तन तथा सुख-समृद्धिपूर्ण सांस्कृतिक जीवन के निर्माण में जिस पुरुष का सबसे बड़ा हाथ है, वह इसी काकेशस भूमि में पैदा हुआ था।

2. जन्म

काला सागर के नातिदूर काकेशस के पश्चिमी भाग में गुर्जी लोगों का प्राचीन नगर तिफलिस (त्विलिसी) है, जिसके पास गोरी कस्बा है। इसी कस्बे के पास दिदिलियो नामक छोटा-सा गाँव है, जहाँ पिछली शताब्दी के मध्य में बिसारियोन नामक एक गरीब चमार रहता था। उसके वंश का नाम जुगशविली था। बिसारियोन जूते बनाने के साथ-साथ कुछ खेती भी कर लिया करता था, लेकिन दोनों से भी उसका गुजारा मुश्किल से होता था। बि.सारियोन ने गम्बरयोली गाँव के अर्धदास, गुर्जी गेलाद्जे की लड़की एकातेरिना (केथरिन) से ब्याह किया, जिसके बारे में मालूम है कि वह बड़ी सुन्दर, काली बड़ी आँखों तथा गम्भीर मुखमुद्रा वाली स्त्री थी। बिसारियोन को अपना काम दिदिलियो में ठीक चलता नहीं दिखाई पड़ा; क्योंकि अब कुटीर-उद्योग की तरह जूते बनानेवालों की भी प्रतिद्वंद्विता जूते के कारखानों से थी। अब दूसरे देशों के सहकर्मियों की तरह, बिसारियोन ने भी पराजय स्वीकार करते हुए गाँव छोड़कर, पहिले गोरी फिर तिफलिस की अदिल-खानोफ फैक्टरी में जाकर काम किया।

एशिया की एक इतनी उत्पीड़ित श्रेणी में पैदा हुए बालक के लिए कोई ज्योतिषी भी कब ऐसे पद की, जिस पर इस बालक को पहुँचना था, भविष्यवाणी कर सकता था ? एक एशियाई चमार का लड़का दुनिया का अद्वितीय नेता और अमर पूज्यनीय शिक्षक होगा, इसकी आशा एकातेरिना और बिसारियोन भी कब कर सकते थे ? बिसारियोन जार्जिया की तत्कालीन राजधानी तिफलिस की बूट-फेक्टरी में काम करता था। गोरी कस्बे के उपनगर में, वही छोटा-सा पैतृक घर था, जिसके बारे में स्तालिन के सहपाठशालीय द. गोगोखिया ने अपने संस्मरण में लिखा है : "जिस घर में परिवार रहता था, वह पाँच वर्ग गज से ज्यादा बड़ा नहीं था। घर के साथ रसोई की कोठरी भी थी। दरवाजे से सीधे आँगन में पहुँचते थे, वहाँ कोई दहलीज नहीं थी। फर्श ईंटों का था। एक छोटा-सा झरोखा था, जिससे छनकर रोशनी आती थी। घर में सारा फर्नीचर यह था : एक छोटी-सी मेज, एक स्टूल, एक लम्बा सोफा, जो पुआल भरकर मामूली कपड़े से ढाँककर बनाया गया था।" बिसारियोन जुगशविली के काम के हथियार थे–एक पुराना सड़ा-सा गोढ़ा, हथौड़ा और चमड़ा सीने की सुई, जो संग्रहालय में आज भी मौजूद है। इसी घर में 18 दिसम्बर, 1879 को बिसारियोन और एकातेरिना

के घर में एक पुत्र पैदा हुआ। रात-दिन घर का काम करके भी गुजारा होना मुश्किल देख, एकातेरिना दूसरों के कपड़े धोने का काम भी करती थी। इस प्रकार स्तालिन को अपने शैशव से ही अनुभव था कि गरीबी क्या चीज है।

माँ-बाप ने लड़के का नाम सोसो रखा, जो रूसी योसेफ और अंग्रेजी जोजफ का रूपान्तर है। बिसारियोन ने सात वर्ष की उमर में ही सोसो का अक्षरारंभ कराया। एक वर्ष में ही वह पहले गुर्जी और फिर रूसी पढ़ने लग गया। लेकिन, पिता बहुत दिनों तक न जी सका, इसलिए सोसो के पालन-पोषण का भार एकातेरिना के ऊपर पड़ा (एकातेरिना जून सन् 1937 में मरी)। सोसो के बाल्य जीवन पर किसी ने प्रकाश डालने की कोशिश नहीं की। उसका बाद का जीवन इतनी बहुलता और भारी सफलताओं से भरा है कि इस ओर किसी का ध्यान ही नहीं गया।

2
विद्यार्थी जीवन (सन् 1885-98)

1. गोरी में

सोसो का जन्म गोरी में हुआ था और उसका अक्षरारम्भ भी वहीं हुआ। यद्यपि माता-पिता शिक्षा से वंचित थे, लेकिन वह उसके महत्त्व को भली प्रकार जानते थे। कुछ दिनों तक सोसो साधारण पाठशाला में पढ़ता रहा। उनकी स्थिति के माता-पिता अपने लड़के को अधिक खर्चीली शिक्षा नहीं दे सकते थे। उस समय सारा काकेशस रूसी जार के अधीन था, जिसका धर्म ईसाई था, और ईसाई पादरियों का बहुत सम्मान था। माता-पिता ने सोचा कि पादरी बनाने में पुत्र का भविष्य उज्ज्वल हो सकता है, इसीलिए सन् 1888 में, जब कि सोसो अभी नौ वर्ष का ही था, उसे गोरी के पुरोहित स्कूल में दाखिल करा दिया। छह वर्ष तक सोसो वहीं पढ़ता रहा।

गोरी के पुरोहित स्कूल में सोसो बड़ा ही मेहनती और बुद्धिमान विद्यार्थी था। उसे सबसे अधिक अंक मिला करते थे। वह पढ़ने में जितना तेज था, उतना ही खेल-कूद में भी, इसीलिए सभी खेलों में वह अपने सहपाठियों का नेता बना करता था। अपने सहपाठियों के साथ उसका बड़ा प्रेम था। पढ़ने के अलावा उसे ड्राइंग तथा गाने का भी शौक था।

वह साधारण लोगों के साथ कितना मिलनसार था, यह उसके सहपाठी ग. एलिजाबेदेश्विली द्वारा उल्लिखित निम्न घटना से मालूम होगा :

> " एक दिन गाँव में गये। एक खेत में हमने हलवाहों को विश्राम करते देखा। उनमें से एक को आनंदविभोर हो रोटी और दाल खाते देख, साथी स्तालिन (सोसो) ने उससे पूछा : 'तुम क्यों ऐसा खराब खाना खाते हो !'···
>
> ···'तुम जोतते हो, बोते हो और स्वयं फसल काटकर जमा करते हो। तुम्हें तो अच्छी तरह रहना चाहिए।'
>
> 'हाँ, यह बिलकुल ठीक है। हम स्वयं फसल काटते हैं,' किसान ने कहा, 'लेकिन पुलिस इन्स्पेक्टर को उसका भाग मिलना चाहिए, और पुरोहित को उसका। इस प्रकार तुम देखते हो, हमारे लिए बहुत कम बच रहता है।'
>
> " इस भूमिका से बातचीत शुरू हो गई। उसके दौरान में साथी सोसो ने समझाना शुरू किया कि किसान क्यों इतनी गरीबी का जीवन बिताते हैं, कौन उनका शोषण करता है, कौन उनके मित्र हैं और

कौन शत्रु। वह इतने सीधे-सादे शब्दों में और दिलचस्प ढंग से बातें करता रहा कि किसानों ने उससे फिर आकर बातें करने के लिए प्रार्थना की।"

सोसो के दूसरे लँगोटिया यार ग. ग्लुरजिद्जे की निम्न बातें बतलाती हैं कि गोरी के जीवन में ही सोसो धर्म के बारे में कहाँ तक पहुँच गया था :

"मैं भगवान के बारे में कहने लगा। सोसो मेरी बात सुनता रहा और फिर जरा-सा चुप रहकर, उसने कहा : 'तुम जानते हो, वह (पादरी) हमें बेवकूफ बना रहे हैं, कोई भगवान नहीं है।...'

"इन शब्दों को सुनकर, मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ। पहले मैंने उसके मुँह से कभी ऐसी बात नहीं सुनी थी।

" 'तुम कैसे ऐसी बातें करते हो सोसो ?'–मैंने आश्चर्य से पूछा।

" 'मैं तुम्हें पढ़ने के लिए किताब दूँगा, जो बतलायेगी कि दुनिया और सभी सजीव चीजें उससे बिलकुल दूसरी हैं, जैसा कि तुम मान रहे हो, और ईश्वर के बारे में कही जानेवाली सारी बातें केवल बेवकूफी हैं।'–सोसो ने कहा।

" 'कौन-सी किताब ?'–मैंने पूछा।–'डारविन की। तुम उसे जरूर पढ़ना'–सोसो ने बहुत जोर देकर मुझसे कहा।"

गोरी के सहपाठी वानो केच्खोवेली ने अपने संस्मरण में लिखा है :

"वसंत और शरद में इतवार के दिन, हम अक्सर देहात में घूमने जाया करते थे। गोरी के ज्वरी पर्वत की ढलान में एक छोटी-सी खुली जगह थी, जो हमें बहुत पसन्द थी। दिन बीतते गए और अपने साथ हमारे शैशव की आशाओं और स्वप्नों को भी लेते गए। गोरी स्कूल के ऊपर के दर्जा में हमने गुर्जी साहित्य से परिचय प्राप्त किया, लेकिन वहाँ हमें रास्ता बतानेवाला, और हमारे विचारों को एक निश्चित दिशा देनेवाला कोई भी नहीं था। चोचवाद्जे की कविता 'डाकू काको' से हम बहुत प्रभावित थे। कज्बेगी की कविता के नायकों ने हमारे तरुण हृदय को जगाकर, अपने देश के प्रति प्रेम पैदा कर दिया, और स्कूल छोड़ते समय हमें उससे अपने देश की सेवा के लिए प्रेरणा मिली थी। लेकिन हममें से कोई नहीं जानता था कि यह सेवा किस रूप में होगी।"

2. तिफलिस सेमिनरी

पादरी बनने की उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए, सोसो पन्द्रह वर्ष की उमर में गोरी से जाकर तिफलिस की सेमिनरी में दाखिल हो गया। सेमिनरी में दाखिल होने के साथ ही साथ, सोसो अपने ही शब्दों में :

"मैं क्रांतिकारी आन्दोलन में पन्द्रह वर्ष की उमर में शामिल हो गया, जब कि उस समय काकेशिया में रहनेवाले कुछ फरार (अण्डरग्राउण्ड) रूसी मार्क्सवादी समुदायों के साथ मैंने सम्बन्ध स्थापित किया। इन टुकड़ियों ने मेरे ऊपर भारी प्रभाव डाला और मुझमें गैरकानूनी मार्क्सीय साहित्य की चाट पैदा कर दी।"

जब सोसो को वर्जित फल खाने की चाट लग गई, तो कहने की आवश्यकता नहीं कि तिफलिस की इस सेमिनरी में दाखिल होने के बाद, उसका जीवन वह नहीं रह गया, जो एक भावी पादरी का होना चाहिए था। सोसो अपनी शिक्षा को अपनी पाठ्य-पुस्तकों तक ही सीमित नहीं रख सकता था। सन् 1894 से 1899 तक पाँच वर्षों का जीवन, जब सोसो पन्द्रह वर्ष से बीस वर्ष का हो गया, उसके गंभीर अध्ययन का समय था।

3. राजनीतिक अवस्था

उस समय अर्मीनिया और अजुर्बाइजान के साथ, गुर्जी, (जार्जिया) काकेशिया या 'काकेशस-पार' नामक रूसी सूबे का एक भाग था। तुर्की जैसे शक्तिशाली शत्रु से लड़ते-लड़ते अन्त में 19वीं सदी के आरम्भ में गुर्जी ने

रूसी साम्राज्य का अंग बनना स्वीकार कर लिया। रूस के शासकों की इच्छा रहती थी कि अपनी प्रजा को रूसी साँचे में ढाला जाय, जिसके लिए गुर्जी सामन्त पहले से ही तैयार थे। साम्राज्यवादी अंग्रेजों की तरह, जारशाही भी फूट डालकर शासन करने की नीति का खूब पालन करती, और जरा भी सिर उठाते देख गुर्जियों, अर्मनियों, तुर्कों, कुर्दों को आपस में लड़ा देती। वह इस बात की पूरी कोशिश करती थी कि इन पहाड़ी जातियों के छुरे हमेशा एक-दूसरे की गर्दन पर तने रहें। सन् 1854-56 में रूस को क्रिमिया के युद्ध में पड़ना पड़ा, जिसमें तुर्की की पीठ ठोकते हुए अंग्रेजों और फ्रांसीसियों ने स्वयं युद्ध में उतरकर जार को भयंकर हार दी। पश्चिमी यूरोप के सम्पर्क के कारण, रूस में इससे तीस साल पहले ही, उच्च वर्ग ने जार की निरंकुशता को हटाने का प्रयास किया था। उस समय कितने ही 'दिसम्बरियों' को प्राणों से हाथ धोना पड़ा था। क्रिमिया पराजय के बाद, फिर जारशाही के विरुद्ध रूसियों की भावना जाग उठी। जार ने छोटे-मोटे सुधारों के द्वारा बहलाना चाहा। सन् 1860 और 1869 के कुछ सुधारों द्वारा किसानों के खून की एक-एक बूँद निचोड़ कर, जमींदारों को भारी रकम दे, किसानी अर्ध-दासता को खतम किया गया। जेम्स्त्वो (म्युनिस्पैलिटी, जिला बोर्ड जैसी संस्थाओं) तथा न्यायालयों में कुछ सुधार करके क्रांति की लहर को दबाने की कोशिश की गई। अब नरोदूनिकी ('जनतावादी') क्रांतिकारी बमों और पिस्तौलों को लेकर, उसी तरह जार के खिलाफ हो गए थे, जिस तरह कि उससे चालीस वर्ष बाद भारत में अंग्रेजों के खिलाफ हमारे क्रांतिकारी। सन् 1870 से 1881 तक 'जनतावादी' क्रांतिकारियों का युग रहा। ये स्वतंत्रता के दीवाने समझते थे कि जार या उसके बड़े कर्मचारियों की इक्की-दुक्की हत्या करके, जनता की सहायता के बिना ही मुट्ठी भर वीर नया युग लाने में सफल हो सकते हैं। सन् 1881 में, उन्होंने जार अलेक्सान्द्र द्वितीय को मार डाला, जिसके 'अपराध' में ही लेनिन के बड़े भाई अलेक्सान्द्र को फाँसी पर चढ़ना पड़ा था। लेकिन, धीरे-धीरे मालूम हो गया कि यह मुक्ति का रास्ता नहीं है; जैसा कि अपने बड़े भाई के फाँसी पर चढ़ने की खबर सुनकर तरुण ब्लादिमिर इलिच (लेनिन) ने कहा था : "नहीं, हमें दूसरा रास्ता अपनाना है। यह वह रास्ता नहीं है, जिसे हमें अपनाना होगा।"

और, यह दूसरा रास्ता था–कार्ल मार्क्स का कम्युनिज्म, जिसका अनुसंधान इस महान मनीषी ने 19वीं सदी के पूर्वार्ध में करके, उसे सन् 1848 में प्रकाशित 'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' के नाम से दुनिया के सामने रखा था।

जारशाही साम्राज्य में भी रूस और उसके अधीन दो प्रकार के देश और दो प्रकार की प्रजाएँ उसी तरह थीं, जैसे कि इंग्लैंड में। लेकिन, दोनों में एक भेद था : जार का राज्य स्थल द्वारा एक-दूसरे से सम्बद्ध था; और बड़ी भारी संख्या में रूसी किसान और मजदूर भी परतंत्र एशियाई जातियों के बीच रहते थे। जारशाही ने अपने शासन को मजबूत करने के लिए ही इन किसानों और मजदूरों को दूसरी जातियों में ले जाकर बसाया था, लेकिन उनके कारण परतंत्र जातियों को रूस के घनिष्ठ सम्पर्क में आने तथा वहाँ की सब तरह की हलचलों को जानने का सुभीता था; जब कि सात समुन्दर पार के इंग्लैंड को परतंत्र भारतीय किसी दूर के स्वप्नलोक जैसा समझते थे। 'जनतावादियों' के बाद अब रूस में मार्क्सवादी क्रांतिकारियों का युग आरम्भ हुआ। लोगों में मार्क्सवाद का प्रचार होने लगा। लेनिन कार्य-क्षेत्र में उतर चुके थे। जारशाही इस नए खतरे को और भयंकर समझकर उसे दबाने की कोशिश करती थी। उन्हें पकड़कर जेल या निर्वासन की कठोर सजाएँ दी जातीं। निर्वासित हुए लोग, रूसी लोगों से अलग रखने के लिए, दूर-दूर भेजे जाते; लेकिन वे वहाँ जाकर भी लोगों में मार्क्सवाद का संदेश पहुँचाते।

19वीं शताब्दी के अन्त में, अब रूस के अधीन दूसरे देशों में भी पूँजीवाद का प्रसार होने लगा था। काकेशस में बाकू का महान तेल-क्षेत्र था, जहाँ पर तेल निकालने और साफ करने के कई कारखाने खुल गए थे। इन कारखानों में विदेशी पूँजी लगी हुई थी। अक्तूबर क्रांति के पहले रूसी पूँजीवाद बराबर इंग्लैंड और फ्रांस की पूँजी और सहायता के बल पर जीता रहा। तेल के अलावा तम्बाकू और धातु के कारखाने भी काकेशस में जहाँ-तहाँ खुल गए। इन कारखानों ने नए तरह के सर्वहारा मजदूरों को पैदा किया। मजदूर श्रेणी के अस्तित्व में आने के साथ-साथ, मार्क्सवाद भी वहाँ पहुँचा।

सन् 1896 में, सत्रह वर्ष की उमर में सोसो ने अपनी सेमिनरी में मार्क्सवादी अध्ययन-कक्षा चलानी शुरू कर दी। उस समय तक रूस में 'रूसी समाजवादी जनतांत्रिक मजदूर पार्टी' के नाम से मार्क्सवादियों का दल कायम हो चुका था, जिसकी शाखा 'मेस्सामेह दास्सी' के नाम से गुर्जी में भी स्थापित हो गई थी। अगस्त सन् 1898 में सोसो तिफलिस के इस दल का सदस्य बन गया। इस दल ने सन् 1893-98 में मार्क्सवाद का प्रचार करने में बहुत काम किया था। 'मेस्सामेह दास्सी' वस्तुतः एक एकताबद्ध दल नहीं था, बल्कि उसमें मतभेद रखनेवाले बहुत-से दल शामिल थे। 'मेस्सामेह दास्सी' का अर्थ है–तृतीय दल। एक गुर्जी लेखक ग. चेरेतेली ने साहित्यकार नेनोश्विली की श्मशान-यात्रा के समय गुरिया में, अपने व्याख्यान में इस दल को यह नाम दिया था; जब कि मार्क्सवादी तरुणों का प्रोग्राम सार्वजनिक तौर से लोगों के सामने रखा गया था। तृतीय दल होने का मतलब ही है कि इससे पहले दो और राजनीतिक दल गुर्जी में पैदा हो चुके थे। 'मेस्सामेह दास्सी' में भी कई दल थे, जिनमें नोआ यारदानिया के दल (सन् 1893-98) का स्थान प्रमुख था। उसकी ओर से 'क्वाली' और 'मोअम्वेह' नाम के पत्र भी निकलते थे। यारदानिया के विचार कैसे थे, यह उसके निम्न वाक्यों से मालूम होगा :

> "गुर्जी संस्कृति के आधार पर गुर्जी भूमि में यूरोपी-करण आगे बढ़ रहा है। हमारा देश और दूसरे देश–गुर्जी और यूरोप हैं, लेकिन हमारे सामने नया लक्ष्य है, गुर्जी और यूरोपीय दोनों ही बनना। इस समय का यह ऐतिहासिक कर्तव्य है कि हम इस तत्त्व को समझें और लोगों को इसके प्रति सचेत बनायें।"

यारदानिया का मार्क्सवाद अभी यूरोपी-करण और यूरोप के उदारवाद से बहुत आगे नहीं गया था। ब्रिटिश साम्राज्य उसके लिए एक आदर्श राज्य था, इसीलिए उसने लिखा था :

> "बोअर (दक्षिणी अफ्रीका के गोरों) के साथ हमारी सहानुभूति का यह मतलब नहीं कि हम अंग्रेजों के प्रति घृणा करें। हम बोअरों के साथ इसलिए सहानुभूति रखते हैं कि वह एक छोटी-सी जाति है, जो अपने देश और स्वतंत्रता की रक्षा के लिए लड़ रही है। और, इंगलैंड ? हमें इंग्लैंड के साथ प्रेम करना होगा और बहुत बातों में उसके साथ सहानुभूति दिखलानी होगी। इंग्लैंड ऐसी सभी चीजों का गहवारा है, जिन पर आज की सभ्य मानव जाति अभिमान करती है। बोअरों को अपने छोटे राष्ट्र की रक्षा के लिए लड़ने दो।··· लेकिन, साथ ही ब्रिटेन, नव-जीवन का अग्रदूत, नई ध्वजा का वाहक, एक महान ब्रिटेन बना रहे, वह सभ्यता का नेता और झंडाबरदार बना रहे।"

'मेस्सामेह दास्सी' (तृतीय दल) में सोसो 1898 में शामिल हुआ, जब कि शाशा चुलुकिद्जे 1895 में, और लादो केच्खोवेली 1897 में उसके सदस्य हुए थे।

मेस्सामेह दास्सी में चाहे कितनी ही त्रुटियाँ रही हों, लेकिन मार्क्स और एंगेल्स की रचनाओं को गुर्जी में फैलाने का आरंभिक काम इसी ने किया था। सोसो के सदस्य होते ही उसी साल इस दल में एक क्रांतिकारी मार्क्सवादी दल तैयार हो गया, जिसमें सोसो के अतिरिक्त, अ. चुलूकिद्जे और लादो केच्खोवेली भी शामिल थे। मतभेद का पहला कारण तब पैदा हुआ, जब सोसो और उसके साथियों ने कानूनी अखबारों पर संतोष न कर, मार्क्सवाद की क्रांतिकारी विचारधारा का स्पष्ट रूप से प्रचार करने के लिए गैरकानूनी प्रेस तैयार करने का प्रस्ताव रखा।

एक क्रांतिकारी के लिए सेमिनरी का जीवन असह्य हुए बिना कैसे रह सकता था ? वहाँ के शिक्षक और प्रबंधक जारशाही के कठपुतले और खुफियों से कुछ कम नहीं थे। स्तालिन (सोसो) ने स्वयं लिखा था :

> "एक अत्यन्त अपमानजनक शासन तथा भारी स्वेच्छाचारी व्यवस्था से हमारा पाला पड़ा था। वहाँ बड़े जोर की खुफियागीरी चल रही थी। 9 बजे नाश्ते की घंटी बजी। हम भोजनशाला में गए। और लौटकर आने पर देखा कि जब हम भोजन कर रहे थे, उसी समय हमारी सभी आलमारियाँ और सन्दूकें एक-एक कर खोलकर देख ली गईं और सब चीजों को उलट-पलट दिया गया।"

जारशाही के अत्याचारों को चिरस्थायित्व देने के लिए, सेमिनरी के कर्ता-धर्ता तरुणों को तैयार करने में लगे हुए थे। उन्हें यह कब पसन्द हो सकता था कि वहाँ जारशाही को उखाड़ फेंकने वाले क्रांतिकारी पैदा

हों। लेकिन, दुनिया विरोधी समागमों से भरी पड़ी है। पादरियों के इस विद्यालय के विद्यार्थियों में कई राजनीतिक विचार वालों के अपने-अपने दल थे। राष्ट्रवादी तरुण स्वतंत्र गुर्जी देश का स्वप्न देख रहे थे, जनतंत्रवादी 'स्वेच्छाचार, क्रूरता–मुर्दाबाद' का नारा लगा रहे थे। इनके साथ, तीसरा दल सोसो जैसे मार्क्सीय अन्तर्राष्ट्रीयतावादियों का था।

सोसो बालपन में दुबला-पतला-सा लड़का था। लेकिन, उस वक्त भी उसके चेहरे पर सदा निर्भयता की छाप देखी जाती थी और वह हमेशा सिर ऊपर उठाकर चलता था। बढ़कर जब वह और लम्बा हुआ, तब वह देखने में बहुत पतला-दुबला मालूम होता था। उसके रूप-रंग में आवश्यकता से अधिक कोमलता थी, यद्यपि उनके चेहरे से प्रतिभा साफ झलकती थी। उस वक्त भी कोयले जैसे काले, घने केश सोसो के सिर पर थे। उसके वर्तुलाकार चेहरे और बादामी काली-काली आँखों में गुर्जी लोगों की जातीय आकृति का पूरा आभास मिलता था। उसके एक सहपाठी एनोकिद्ज़े के कथनानुसार, अपने आरंभिक क्रांतिकारी जीवन में तरुण सोसो बुद्धिजीवी और मजदूर दोनों के गुणों का एक अद्भुत सम्मिश्रण था। वह बहुत लम्बा नहीं था। उसके कंधे कुछ अधिक पतले, चेहरा कुछ अधिक लम्बा, दाढ़ी अभी छोटी-छोटी निकल रही थी, आँखें भारी और नाक लम्बी तथा सीधी। वह अपनी चौरस टोपी जरा एक ओर तिरछी लगाता था, जिससे एक ओर बहुत सारे घने काले केश दिखलाई पड़ते थे।

काकेशस में एनूकिद्ज़े क्रांति का सबसे पुराना कार्यकर्ता था, जो बाद में वहाँ का एक बड़ा नेता बना। उस समय सोसो जुगश्विली के साथ उसका बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध था। एनूकिद्ज़े के अनुसार, मजदूरों से बातचीत करने में सोसो बहुत दक्ष था। हर वक्त मजदूर उसके पास आसानी से पहुँच, दिल खोलकर बात कर सकते थे, उसी प्रकार जैसे कि उस समय सोसो से दस साल बड़े लेनिन के पास रूसी समाजवादी आन्दोलन के मुख्य केन्द्रों के कमकर। सोसो में एक स्वाभाविक ढंग की सादगी थी। वह अपने शरीर के बारे में बिलकुल उपेक्षा रखता था। अपने ज्ञान और नैतिक बल के कारण, वह तब भी लोगों पर अपना भारी प्रभाव रखता था। लोग खिंचकर उसके साथ हो जाते थे। तिफलिस के कमकर उसे 'हमारा सोसो' कहते थे।

सोसो में एक और भी चमत्कारिक गुण था, जिसके कारण वह कमकरों को मोह लेता था। वह बात करते वक्त, क्लास लेते वक्त या व्याख्यान देते वक्त, अपने को उसी स्तर पर लाकर रखता था, जो कि उसके श्रोताओं का होता था। इस कारण, वह जो भी कहता, श्रोता उसकी एक-एक बात को हृदयंगत कर सकते थे। सोसो के उस समय के साथी ओरेखेलश्विली का कहना था : "न वह पंडितमन्य था, और न गँवार।" वह समाजवाद और राजनीति के गम्भीर सिद्धान्तों और विचारों को लोगों के सामने रखता, लेकिन उनकी व्याख्या इतने सरल और सीधे तौर से करता कि उसके श्रोताओं को समझने में जरा भी दिक्कत न होती। इसे दिखलाते हुए ओरेखेलश्विली ने कहा है :

> "उसके साथ प्रचारकों के एक दल में हम भी थे। लेकिन, हम कुछ परिभाषाओं को नहीं छोड़ पाते थे। वाद, प्रतिवाद तथा संवाद इसी तरह के दूसरे तर्कशास्त्रीय शब्द हमारे पीछे पड़े रहते थे। जब हम मजूरों और किसानों के सामने बोलते, तब भी यह परिभाषाएँ हमारे मुँह से निकलती रहतीं। लेकिन, सोसो के भाषणों में ऐसा नहीं होता। वह विषय को एक दूसरे ही ढंग से–जीवन के दृष्टिकोण से–उठाता। उदाहरणार्थ, यदि मध्यवर्गीय जनतंत्रता के विचार को लेता, तो वह उसे दिन की तरह स्पष्ट करके दिखला देता। जारशाही की अपेक्षा यह क्यों अच्छा है, क्यों समाजवाद की अपेक्षा अच्छा नहीं। फिर तो सभी समझ जाते कि जनतंत्रता यद्यपि साम्राज्य को उखाड़ फेंकने में बिलकुल समर्थ है, लेकिन एक दिन वह समाजवाद के विरुद्ध बाधा के रूप में उपस्थित होगी, और उसे तोड़ फेंकना ही पड़ेगा।..."

सोसो बड़ा खुशमिजाज और मिलनसार था। ओरेखेलश्विली ने लिखा है :

> "एक दिन हम लोग एक काकेशीय मुखिया साथी के घर में जमा हुए। हम सदा किसी एक के घर में जमा होते थे, क्योंकि दूसरी जगह मिलना प्रायः असम्भव-सा था। भोजन के समय घर के मालिक का बच्चा आकर अपने बाप की जाँघ पर बैठ कर ठमकने लगा। बाप पीठ ठोककर उसे चुप करने

की कोशिश कर रहा था। जो गम्भीर बातचीत वहाँ चल रही थी, लड़का उसे समझने की आयु का नहीं था। बाप को असफल होते देख, सोसो अपनी जगह से उठा, बड़ी नरमी के साथ लड़के को हाथ से पकड़ उसे दरवाजे के पास ले जाकर बोला : 'मेरे छोटे दोस्त, आज के प्रोग्राम में तुम्हें शामिल नहीं किया गया है।' "

ओरेखेलश्विली ने सोसो के स्वभाव के बारे में यह भी लिखा है :

"वह अपने विरोधियों को कभी बुरा-भला नहीं कहता था। मेन्शेविक हमें उस समय इतना सता रहे थे कि जब कभी हम अपने भाषण में उन्हें बैठे देखते, तो अपने को उनके ऊपर तीक्ष्ण वाक्-बाण चलाने से नहीं रोक सकते थे। सोसो इस तरह के आक्रमण को कभी पसन्द नहीं करता, कटु वाणी उसके लिए वर्जित हथियार थी। जब वह अपने तर्कों और युक्तियों से अपने विरोधी को चुप करा देता, विरोधी मौन हो बच निकलने की कोशिश करता, तो उस समय वह चुटकी लेते हुए इतना-भर कहता : 'आप इतने भद्र पुरुष हैं, यह देखकर मुझे आश्चर्य होता है कि आप हमारे जैसे नगण्य आदमी से भय खाते हैं।' "

गोरी स्कूल के अन्तिम दिनों में ही, सोसो डारविन की पुस्तकों और मार्क्स के विचारों से परिचित हो चुका था। सन् 1894 में, वह बहुत अधिक अंकों के साथ वहाँ की परीक्षा में उत्तीर्ण हुआ। तिफलिस की सेमिनरी में, दाखिल होने पर वहाँ का जीवन उसे बड़ा गलाघोंटू मालूम हुआ। यह बड़ा ही दकियानूसी स्कूल था। लड़के दुनिया से अलग-थलग करके कोठरियों में रखे गये थे। सब अध्यापक ईसाई साधू थे, जो विद्यार्थियों में ईश्वर, जार और ईसाई चर्च के प्रति सम्मान के भाव को जबर्दस्ती भरने की कोशिश करते थे। मठों की तरह, विद्यार्थियों को प्रार्थना में आने के लिए गिरजे का घंटा निश्चित समय पर बजाया जाता। पाठ्य-विषयों में ईसाई धर्मशास्त्र का विशेष स्थान था। विद्यार्थियों पर खुफियावालों की हर वक्त निगाह रहती थी। इस तरह की धार्मिक शिक्षा और खुफियावालों की निगरानी लड़कों पर बड़ा बुरा प्रभाव डालती थी। लेकिन उससे क्या ? सेमनरी का तो काम ही था–जार के भक्त-अनुचर, और धर्मान्ध प्रतिगामियों को पैदा करना। पर, सेमिनरी अपने उद्देश्य में सफल हुई नहीं दीख पड़ती थी, क्योंकि हम देखते हैं कि उसी से निकोलाई चेर्नीशेव्स्की, लादो केच्खोवेली, मिखा छकाया और सोसो जुगशविली जैसे क्रांतिकारी पैदा हुए।

सेमिनरी के संकीर्ण वातावरण के बारे में स्तालिन ने स्वयं जर्मन लेखक एमिल लुडविग से कहा था :

"सेमिनरी में जिस प्रकार का अपमानजनक शासन और धर्मान्धतापूर्ण व्यवहार सर्वत्र फैला हुआ था, उसके विरोध के लिए मैं तैयार था और वैसा ही हुआ भी, जब कि मैं एक क्रांतिकारी और मार्क्सवाद–जो कि एकमात्र असली क्रांतिकारी सिद्धांत है–का अनुयायी बना।"

तिफलिस में उन दिनों मार्क्सवादी साहित्य प्राप्त करना आसान नहीं था। सन् 1938 में स्तालिन ने अपने पुराने जीवन की बातें बतलाते हुए कहा था कि कैसे तिफलिस के तरुण मार्क्सवादी पुस्तकों के लिए एक-एक पैसा जमा करते, और मार्क्स की 'कैपिटल' (पूँजी) की एक ही कापी होने से हाथ से लिखकर उसकी कापियाँ तैयार करते, इसी हस्तलिखित पुस्तक से अपने गुप्त अध्ययन-केन्द्रों में मार्क्स के ग्रंथ का अध्ययन करते। इन्हीं केन्द्रों में, पुस्तकों को बड़ी मुश्किल से प्राप्त करके उन्होंने मार्क्स, प्लेखानोफ, चेर्नीशेव्स्की, पिसारेफ, बेलिन्स्की, दोब्रोल्युबोफ और हर्जेन की कृतियाँ पढ़ीं। सोसो के लिए रूसी पढ़ना-लिखना अब आसान हो गया था, इसलिए गुर्जी भाषा में न रहने पर भी रूसी लेखकों को उसने ध्यान से पढ़ा। उसके कारण उसके ज्ञान का क्षेत्र बहुत बढ़ गया और वह ज्ञान की भिन्न-भिन्न शाखाओं में खुलकर विचरने लगा। सेमिनरी के विद्यार्थियों के लिए वर्जित होने पर भी, वह तिफलिस के एक घुमन्तू पुस्तकालय का सदस्य हो गया था। उसे वहाँ से सस्ते में बहुत तरह की पुस्तकें पढ़ने को मिल जाया करती थीं। शेक्सपियर, शिलर, ताल्सताय, सल्तीकोफ-श्चेद्रिन, गोगल और चेखोफ जैसे महान् लेखकों के प्रति उसका बहुत प्रेम था। साथ ही, वह अपनी मातृभाषा के लेखकों का भी प्रेमी था। शोता रुस्थ्वेली, एरिस्तावी, चौचवाद्ज़े आदि के काव्यों और ग्रंथों को उसने बड़े ध्यान से पढ़ा था। केवल साहित्य ही उसका प्रिय विषय नहीं था। इतिहास और समाजशास्त्र के अतिरिक्त, उसे रसायन और

भूगर्भशास्त्र जैसे विषयों में भी बड़ी दिलचस्पी थी। कविता के साथ तो अधिक प्रेम होना जरूरी ही था, क्योंकि तरुणाई में सोसो ने कविताएँ भी की थीं, जो मामूली नहीं थीं। यह इसी से मालूम होगा कि राफेल एरिस्तवी की जुबली को समर्पित किये गये एक कविता-संग्रह में तरुण सोसो जुगशविली की एक कविता भी सम्मिलित की गई थी। सोलह वर्ष की उमर (सन् 1895) में सोसो ने 'सोसेलो' के नाम से 'इबेरिया' में अपनी एक कविता छपवाई थी ('इबेरिया' गुर्जी देश का पुराना नाम है) जो इस प्रकार है :

"जिसकी कमर अन्तहीन मेहनत से टेढ़ी हो गई,
जो अभी कल तक दासता के सामने नताशिर था,
मैं कहता हूँ, वह उठेगा पर्वतों का ईर्ष्यापात्र हो,
आशा के पंखों पर, सबसे ऊँचे, ऊपर।"

ग. परकाद्जे ने अपने सहपाठी तरुण सोसो के विद्यार्थी जीवन के बारे में लिखा है :

" हम तरुणों को ज्ञान की हद से अधिक पिपासा थी; इसीलिए सेमिनरी के विद्यार्थियों के दिमाग से छः दिन में दुनिया पैदा करने की पौराणिक गप्प को हटाने के लिए, हमने भूगोलशास्त्रीय सृष्टि-संबंधी विचार, तथा पृथिवी की आयु के बारे में पढ़ा। इसीलिए, हमने डारविन की शिक्षाओं से परिचय प्राप्त किया। हमारे इस काम में गलीलियो, कोपर्निकस तथा कामिल फ्लामोरियोन की दिलचस्प पुस्तकों ने मदद की। हमने लायल की 'मनुष्य की प्राचीनता' और डारविन की 'मनुष्य की उत्पत्ति' भी पढ़ी। डारविन की इस पुस्तक का अनुवाद शेचेनोफ ने किया था। साथी स्तालिन शेचेनोफ की वैज्ञानिक कृतियों को बड़े चाव से पढ़ते थे।

" क्रमशः हम वर्ग-समाज के अध्ययन की ओर बढ़े, और मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन के ग्रंथों पर पहुँचे। उन दिनों मार्क्सीय साहित्य पढ़ने को क्रांतिकारी काम कहकर दंडनीय अपराध माना जाता था। सेमिनरी में तो वह और भी निषिद्ध था। वहाँ डारविन का नाम हमेशा गालियों के साथ लिया जाता था।

" सामाजिक शास्त्र और अर्थशास्त्र संबंधी साहित्य के परिचय के साथ हम तरुणों की दिलचस्पी ज्योतिष, भौतिकशास्त्र, और रसायनशास्त्र की ओर बढ़ी। लुडविग फ्वारबाख की पुस्तक 'ईसाइयत-सार' पढ़ने से हमें बड़ा फायदा हुआ।

" इन सब पुस्तकों से हमारा परिचय साथी स्तालिन (सोसो) ने कराया। वह कहा करते थे कि जो सबसे पहले करना है, वह है अनीश्वरवादी बनना। इसका फल यह हुआ कि हममें से बहुत-से बाइबल के विचारों की उपेक्षा करके, भौतिकवादी दृष्टिकोण स्वीकार करने लगे।

" विज्ञान की भिन्न-भिन्न शाखाओं के अध्ययन ने हम तरुणों को सेमिनरी के धर्मान्ध और कूपमंडूकतापूर्ण वातावरण से मुक्त होने में सहायता ही नहीं दी, बल्कि उसके कारण, मार्क्सीय विचारों को स्वीकार करने के लिए भी हमारे दिमाग तैयार हो गये। पुरातत्त्व, भूगर्भशास्त्र, ज्योतिष या आदिम सभ्यता के बारे में हम जो भी पुस्तक पढ़ते, वह मार्क्सवाद की सत्यता को हमारे हृदय में और दृढ़ कर देती।

" आज की तरुण पीढ़ी के लिए यह समझना भी मुश्किल है, कि उन दिनों किताबों का प्राप्त करना ही नहीं, बल्कि उन्हें पढ़ना भी बहुत मुश्किल था। उदाहरणार्थ, सेमिनरी के अधिकारियों ने सहायक-निरीक्षक की सूचना पर विक्तर ह्यूगो की पुस्तक 'समुद्र के मेहनतकश' को साथी स्तालिन से लेकर जब्त कर लिया था। वही बात ह्यूगो की दूसरी पुस्तक 'तिरानवे' के साथ हुई।

" तिफलिस की किरोचनया स्ट्रीट के एक घुमन्तू पुस्तकालय से हम पुस्तकें लिया करते थे। इस पुस्तकालय में अध्यापक और दूसरे बुद्धिजीवी अक्सर जाया करते थे। सन् 1920 के आस-पास मैक्सिम गोर्की ने भी इससे फायदा उठाया था। पुस्तकालय की स्थापना साधारण शिक्षण के उपयोग के लिए की गई थी, लेकिन किसी को क्या पता था कि बिलकुल साधारण-सी पुस्तकों के रूप में वहाँ कितनी

बारूद जमा की जा रही है।

" साथी स्तालिन हमें बतलाते थे कि कैसे किताबों के अर्थ को हृदयंगत करना चाहिए, और कैसे किसी विशेष विषय पर पुस्तकों के न होने पर मासिक पत्रिकाओं के लेखों, आलोचनाओं, यहाँ तक कि जब-तब की टिप्पणियों का इस्तेमाल करना चाहिए। इस कारण, हम जो कुछ पढ़ते उसे संक्षिप्त करके उतार लेने की हमें आदत पड़ गई। पढ़ने के लिए किसी विषय का सुझाव रखते समय, स्तालिन पहले आसान पुस्तकों को चुनते फिर कुछ अधिक कठिन। साहित्य को पढ़ने-समझने में जहाँ भी कठिनाई आती, उसे स्तालिन (सोसो) हमें बड़ी मेहनत से समझाते।

" एक दिन मुझे मेन्देलयेफ का 'रसायन' हाथ लगा। यह पुस्तक मुझे अब भी अच्छी तरह याद है। स्तालिन उसमें बहुत दिलचस्पी रखते थे।

" सेमिनरी के कागज-पत्रों से हमें आज मालूम है कि उसके सुपरवाइजर साधू गेरमोगेन ने रिपोर्ट दी थी : 'जुगशविली (स्तालिन) एक सस्ते पुस्तकालय का सदस्य है, जिससे वह पुस्तकें लेता है।'

" साथी स्तालिन की इतिहास के साहित्य के प्रति भारी आसक्ति थी। हमें अक्सर अचरज होता था कि वह इन पुस्तकों को कहाँ से पाते हैं। मुझे याद है, उनके पास महान फ्रेंच-क्रांति, सन् 1848 की क्रांति, पेरिस, कम्यून, रूसी इतिहास आदि पर पुस्तकें थीं…।

" साथी स्तालिन सत्रह वर्ष के थे, जब कि सन् 1896 में सेमिनरी के भीतर प्रथम गैरकानूनी मार्क्सीय अध्ययन-चक्र कायम कर, वह मार्क्सवाद के प्रचारक बन गये। उसके बाद, एक दूसरा चक्र कायम हुआ। मेरा सम्बन्ध प्रथम चक्र से था।… इन दिनों जिन पुस्तकों को स्तालिन और उनके साथी पढ़ते थे, उनमें थीं–'कम्युनिस्ट घोषणापत्र', एंगेल्स की 'इंग्लैंड के मजूरों की स्थिति', लेनिन की 'जनता के मित्र कौन हैं और वह कैसे समाजवादी जनतंत्रियों से लड़ते हैं।' ऐडम स्मिथ और रिकार्डो की राजनीतिक अर्थशास्त्र की पुस्तकें, स्पिनोजा का 'आचारशास्त्र', बर्कले का 'इंग्लैंड में सभ्यता का इतिहास', ल-तूर्चो का 'संपत्ति का विकास', जीबर का 'डेविड रिकार्डो' और कार्ल मार्क्स की सामाजिक और आर्थिक शोध और दर्शन पर भी पुस्तकें थीं।

" साथी स्तालिन को उपन्यास साहित्य से भी प्रेम था। उन्होंने सल्तिकोफश्चेदरिन के 'गोलोव्ल्योफ परिवार', गोगल की 'मृत आत्माएँ', येर्कमानचरित्रयान की 'एक किसान की कहानी', थेकरे की 'वैनिटी फेअर' और दूसरी पुस्तकें पढ़ डाली थीं। बचपन से ही वह गुर्जी साहित्यकारों से परिचित थे, और रुस्तावेली, इलिया चौचवाद्जे और वाजा प्शावेली को बड़े चाव से पढ़ते थे। साहित्य के प्रति उनका बहुत अनुराग था। तिफलिस सेमिनरी में रहते वक्त, उन्होंने कितनी ही कविताएँ लिखी थीं, जिनकी प्रशंसा इलिया चौचवाद्जे ने की थी। चौचवाद्जे ने अपने सम्पादित पत्र में विशेष स्थान देते हुए, इन कविताओं को मुखपृष्ठ पर छापा था; यद्यपि सेमिनरी के विद्यार्थियों के लिए पत्र-पत्रिकाओं में लेख लिखने की सख्त मनाही थी। "

तिफलिस सेमिनरी के जीवन के बारे में सोसो के दूसरे सहपाठी ग. ग्लुरजिद्जे ने अपने संस्मरण में लिखा

" कभी-कभी गिरजाघर में, हम उपासना के समय बेंचों के पीछे छिपाकर पुस्तकें पढ़ते। हमें बहुत सावधानी रखनी पड़ती थी कि मास्टर देख न ले। पुस्तकें सोसो की अभिन्न मित्र थीं, भोजन के समय भी वह उनको नहीं छोड़ता था।…

" सेमिनरी के असह्य गलाघोंटू वातावरण में हमारे आनन्द की एक सबसे बड़ी चीज थी–गाना। हम फूले नहीं समाते, जब सोसो हमारे लिए जैसे-तैसे एक संगीत-मंडली जमा करता, और अपने स्पष्ट और मधुर कंठ से हमारे किसी प्रिय लोकगीत को गाने लगता था। "

स्तालिन को सेमिनरी में रहते समय ही पहले-पहल लेनिन की सबसे पहली लिखी कृतियाँ पढ़ने को मिलीं। सेमिनरी में स्तालिन के साथी पपानाद्जे ने लिखा है :

"मुझे सन् 1898 की एक दिलचस्प बात विशेष तौर से याद आती है। एक दिन पूर्वाह्न में नाश्ते के बाद, मैं पुश्किन-चौरस्ते पर टहलने गया। वहाँ मैंने अपने विद्यार्थियों के एक झुंड से सोसो को भिड़े देखा। वह उनके साथ गर्मागर्म बहस करते हुए यारदानिया के विचारों की आलोचना कर रहा था। सभी बहस में भाग ले रहे थे। यहीं पर मैंने सबसे पहले लेनिन के बारे में सुना। इसी समय घंटी बजी और हम सभी जल्दी-जल्दी अपनी क्लासों में दौड़ गए। मुझे यारदानिया के विचारों की सोसो द्वारा इतनी सख्त आलोचना सुनकर आश्चर्य हुआ। मैंने उससे इसके बारे में कहा। उसने बतलाया कि उसने अभी-अभी तूलिन (लेनिन) का लेख पढ़ा है, जो उसे बहुत पसन्द आया। उसने यह भी कहा : चाहे जैसे भी हो, मुझे इस (लेनिन) से मिलना है।"

x x x

सेमिनरी के अधिकारियों को यह पता लगते देर नहीं लगी कि उनके कुछ अत्यन्त कुशाग्र बुद्धि विद्यार्थी सोसो को अगुवा मानते और उसकी बातों पर चलते हैं। यह जानकर, वह सोसो पर सावधानी से निगाह रखने और उसके बारे में रिपोर्ट देने लगे। 29 सितम्बर, 1898 को सेमिनरी के रेक्टर को यह रिपोर्ट दी गई :

"9 बजे शाम को भोजनशाला में विद्यार्थियों का एक समूह सोसो जुगशविली के पास बैठा था। सोसो उन्हें ऐसी पुस्तकें पढ़कर सुना रहा था जिनकी सेमिनरी के अधिकारियों ने स्वीकृति नहीं दी थी। इसके लिए विद्यार्थियों की तलाशी ली गई।"

सेमिनरी के चाल-चालन सम्बन्धी रजिस्टर में सोसो के बारे में कुछ बड़ी ही दिलचस्प बातें लिखी हुई मिलीं:

"मालूम होता है कि जुगशविली के पास सस्ते पुस्तकालय की सदस्यता का टिकट है। वह वहाँ से किताबें लिया करता है। आज मैंने विक्तर ह्यूगो की पुस्तक 'समुद्र के मेहनतकश' को छीन लिया, जिसमें उक्त पुस्तकालय का टिकट पाया।—स. मुराखोव्स्की, सहायक-सुपरवाइजर, फादर गेरमोगेन, सुपरवाइजर।"

रिपोर्ट में दंड के तौर पर निम्न पंक्तियाँ लिखी हैं : "दंड वाली कोठरी में उसे लम्बे अर्से के लिए बन्द कर दो। मैं उसे एक बार पहले भी एक असम्मत पुस्तक—विक्तर ह्यूगो की 'तिरानवे'—के बारे में सावधान कर चुका हूँ। (नवम्बर, 1896)"

"11 बजे रात को मैंने सोसो जुगशविली से ल-तूरनो की पुस्तक 'राष्ट्रों का साहित्यिक विकास' छीन ली, जिसे वह सस्ते पुस्तकालय से लाया था। पुस्तकालय का टिकट किताब के भीतर मिला। जुगशविली इस पुस्तक को गिरजे की सीढ़ियों पर बैठा पढ़ रहा था। यह तेरहवीं बार है, जब इस विद्यार्थी को सस्ते पुस्तकालय से उधार ली गई पुस्तकों को पढ़ते पाया गया। मैंने पुस्तक फादर सुपरवाइजर के हाथ में दे दी।—सं. मुराखोव्स्की, सहायक-सुपरवाइजर।"

इस पर दंड के लिए निम्न नोट लिखा गया : "फादर रेक्टर की आज्ञानुसार कड़ी चेतावनी देकर, उसे कालकोठरी में लम्बे अर्से के लिए बन्द कर दो—(मार्च, सन् 1897)।"

"निरीक्षण बोर्ड के सदस्य जब पाँचवीं श्रेणी के विद्यार्थियों की तलाशी ले रहे थे, तो सोसो जुगशविली ने कई बार उनके साथ बहस करनी चाही, और विद्यार्थियों की बार-बार तलाशी लेने के बारे में असंतोष प्रकट करते हुए घोषित किया कि दूसरी सेमिनरियों में इस तरह की तलाशियाँ कभी नहीं ली गईं। जुगशविली आम तौर से अधिकारस्थ व्यक्तियों के प्रति बड़ा ही असम्मानपूर्ण और रूखा बर्ताव करता है। एक मास्टर स. अ. मुराखोव्स्की को प्रणाम करने से बराबर इन्कार करता है, क्योंकि उसने बार-बार उसके बारे में निरीक्षण बोर्ड के पास शिकायत की है।—अ. र. जावेन्स्की, सहायक-सुपरवाइजर।"

इस पर नोट है : "उसे फटकारा गया। फादर रेक्टर की आज्ञानुसार उसे पाँच घंटे के लिए काल कोठरी में बन्द कर दिया गया।—फादर (साधू) दिमित्रि-(16 दिसम्बर, 1898)।"

ऐसी ही एक तलाशी के समय सेमिनरी सुपरवाइजर फादर दिमित्रि सोसो के कमरे में दाखिल हुआ। उस समय वह अपनी किताब पढ़ता रहा, मानो उसने फादर को देखा ही नहीं। इस पर फादर ने पूछा : "देखते

नहीं हो, तुम्हारे सामने कौन खड़ा है ?" सोसो अपनी आँखें मलते हुए खड़ा हो बोला : "मुझे कुछ नहीं दिखाई पड़ता, सिवाय इसके कि मेरी आँखों के सामने एक काला दाग है।"

27 मई, 1899 को इसी 'काले दाग' ने सेमिनरी परिषद् के सामने प्रस्ताव किया : "सोसो जुगशविली को राजनीतिक तौर से अविश्वसनीय समझकर सेमिनरी से निकाल दिया जाय।"

यद्यपि बाहर से यह लिखा गया कि सोसो को फीस न दे सकने तथा 'अज्ञात कारणों से' परीक्षा में उपस्थित न होने के लिए निकाला गया, लेकिन असली कारण था—सोसो का राजनीतिक कार्य।

स्तालिन ने सन् 1931 में एक प्रश्न के उत्तर में लिखा था : "(मैं) मार्क्सवाद का प्रचार करने के कारण सेमिनरी से निकाला गया।"

जिस वक्त सोसो ने सेमिनरी छोड़ी, उस समय तक उसका मार्क्सवादी दृष्टिकोण पक्का और पूरा हो चुका था।

3

क्रांतिकारी जीवन (सन् 1899-1905)

सेमिनरी ने सोसो जुगशविली को अपने कैदखाने से मुक्त करके बाहर खुलकर काम करने का मौका दे दिया, इसलिए उन्हें उसका जरा भी अफसोस नहीं हुआ। 19वीं सदी का अन्त होते-होते काकेशस के पिछड़े प्रदेश में भी पूँजीवाद अपने पैर फैलाने लगा था। अब वहाँ भी रूसी पूँजीपति अपने कल-कारखाने बढ़ा रहे थे। तिफलिस और बातूम पूँजीवाद के केन्द्र बनते जा रहे थे। हमें इस नई प्रगति का पता नगरों की जन-वृद्धि से भी मालूम होता है। सन् 1863 में जहाँ काकेशस के नगरों में साढ़े तीन लाख आदमी बसते थे, वहाँ सन् 1897 में उनकी संख्या नौ लाख हो गई थी। काकेशस का और भी महत्त्वूपर्ण स्थान इसलिए था कि दुनिया का एक सबसे बड़ा तेल-क्षेत्र बाकू भी वहीं था, जहाँ नोबेल और राथचाइल्ड जैसे विदेशी पूँजीपतियों ने भी करोड़ों की पूँजी लगाकर, एक विशाल उद्योग खड़ा कर दिया था। एक ओर रूसी और विदेशी पूँजीपति काकेशस के लोगों के शोषण में लगे थे, दूसरी ओर जारशाही इन पहाड़ी जातियों का घोर उत्पीड़न कर रही थी। वह पद-पद पर उनकी राष्ट्रीय भावना को कुचलने का प्रयत्न करती थी। अगर स्कूल के विद्यार्थियों में कोई अपनी भाषा बोलता, तो उसकी गर्दन में जीभ निकाले हुए एक कुत्ते के सिर की तसवीर लटका दी जाती थी।

सोसो जुगशविली, लादो केच्खोवेली, और सासा चुलुकिदूजे जैसे तरुण इस तरह के अपमान और शोषण अपमान को कैसे बर्दाश्त कर सकते थे ? उन्होंने अपने जीवन को जन-मुक्ति के लिए अर्पित कर दिया, लेकिन सोसो के दोनों तरुण साथी बहुत दिनों तक इस काम को नहीं चला पाये। लादो सोसो और सासा के साथ, काकेशस में क्रांतिकारियों के काम और गुप्त प्रेस के संगठन में दिलोजान से लग गया था। लेनिन ने गुप्त संगठन सम्बन्धी कई जिम्मेवारियाँ सौंपी थीं, जिन्हें उसने बड़ी योग्यता से पूरा किया। जारशाही ने उसे पकड़कर जेल में ही बन्द नहीं कर दिया, बल्कि पहरेदार सैनिक ने 17 अगस्त, 1903 को उसे कालकोठरी में गोली भी मार दी। सोसो के दूसरे साथी, सासा चुलुकिदूजे का स्वास्थ्य पहले से ही बहुत कमजोर था, लेकिन वह अपने आदर्श और लक्ष्य के सामने उनकी परवाह नहीं करता था। तरुण सोसो अपने प्रतिद्वंद्वियों के साथ बहस-मुबाहिसा करने में बहुत भाग लिया करते थे। मार्क्सवादी विचारधारा के प्रचार के लिए यह शास्त्रार्थ अच्छे साधन थे। उनमें कमकर जनता देखती थी कि मार्क्सवादी विचारधारा कितनी दृढ़ और सत्य है। सासा भी इस काम में सोसो का सहायक होता था। उसने गैरकानूनी पत्रों में बहुत-से लेख लिखे थे। अन्त में तपेदिक ने सन् 1905 में उसके तरुण जीवन को खतम कर दिया।

उक्रइनी बोल्शेविक जूबेनली मेल्नीकोफ ने कहा था : "जनता को एक इंच ऊपर उठाना उससे कहीं अधिक

अच्छा है कि एक आदमी को पूरे एक मंजिले तक उठाया जाये।" सोसो जुगशविली की भी यही धारणा थी। गम्भीर विचारक और अध्ययनशील होते हुए भी, वह दूसरे प्रचारकों की तरह, लोगों के सामने अपनी पंडिताई दिखाना बिलकुल पसंद नहीं करते थे। हम यह बतला चुके हैं कि वह कैसे गम्भीर तत्त्वों को श्रोताओं के तल पर उतरकर, बहुत सरल करके, उनकी ही भाषा में रख देते थे। फिजूल की बातें बघारने के लिए उनके पास फुर्सत नहीं थी। उनके एक पुराने साथी तोद्रिया ने लिखा है :

"मैंने सोसो से कहा–'वह हमें बतलाते हैं, सूर्य कैसे घूमता है।' इस पर उन्होंने मुस्कुराते हुए, जवाब दिया–'सुनो दोस्त, सूर्य के बारे में तुम चिन्ता मत करो, वह अपनी कक्षा से नहीं हटेगा। तुम्हारे लिए यह सीखना बेहतर है कि क्रांतिकारी कैसे आगे बढ़ता है और इसके लिए एक छोटा-सा गैरकानूनी प्रेस स्थापित करने में मेरी सहायता करो।"

ज्यार्जी निनुवा नामक कमकर ने सोसो के आरम्भिक प्रचार-कार्यों के बारे में बतलाया :

" साथी सोसो ने दो वर्षों से अधिक समय तक हमारी क्लास चलायी। जिस विषय पर भी उन्हें बोलना होता, वह उसे पहले भिन्न-भिन्न प्रकरणों में बाँट लेते। उन्हें पश्चिम के मजदूर आन्दोलन के इतिहास और क्रांतिकारी समाजवादी जनतांत्रिक सिद्धांतों का अद्‌भुत ज्ञान था। मजदूरों का ध्यान तुरन्त उनकी बातों की ओर खिंच जाता। वह अपने भाषणों में उपन्यासों और कहानियों से लेकर वैज्ञानिक ग्रंथों तक के उद्धरण देते। कहावतें तो उनकी जीभ पर नाचती रहती थीं। हमारे सामने बोलते समय, उनके सामने एक नोटबुक या बारीक अक्षरों में लिखा हुआ कोई कागज का टुकड़ा होता। वह पहले से तैयारी करके बोलते, इससे यह स्पष्ट है। हम अधिकतर शाम को, गोधूलि के समय इकट्ठे होते और इतवार की छुटी के दिन पाँच-दस आदमियों के गिरोह में देहात चले जाते, जहाँ समय का बिलकुल ख्याल किए बिना वार्तालाप और बहस करते रहते।

" साथी स्तालिन के उस समय के भाषण अधिकतर मामूली बातचीत के ढंग पर होते थे। उनका नियम था कि जब तक एक विषय को अच्छी तरह न समझा लें, तब तक दूसरे विषय को हाथ न लगायें। उनके प्रश्नों का जवाब देते वक्त, हम मजदूरों के जीवन की घटनाएँ पेश करते और बतलाते कि फैक्टरियों में क्या हो रहा है, प्रबन्ध-विभाग, ठेकेदार और फोरमैन किस तरह हमारा शोषण कर रहे हैं। जब कभी इस विषय पर बात होती, तो साथी स्तालिन उसे बड़े ध्यान से सुनते। वह हमसे बहुत-से प्रश्न करते और अन्त में निष्कर्ष निकालते।··· साथी स्तालिन हमारे अध्यापक थे, लेकिन वह अक्सर कहते कि मैं स्वयं मजूरों से सीख रहा हूँ। स्तालिन की यह धारणा बराबर बनी रही और वह हमेशा इस बात की हिदायत करते थे कि आदमी को जनता से सीखना चाहिए : 'सबसे बड़ी बीमारी जो एक नेता पर आक्रमण कर सकती है, वह है–जनता का भय।'

" नेता की जनता को जितनी आवश्यकता है, उससे कहीं अधिक नेता को जनता की आवश्यकता है। जनता उससे जितना सीखेगी, नेता उसकी अपेक्षा जनता से कहीं अधिक सीख सकता है। जैसे ही कोई नेता जनता पर विश्वास किए बिना अपनी योजनाएँ बनाना शुरू करता है, वह अपनी विजय और उद्देश्य दोनों की सफलता को बरबाद कर देता है। "

सेमिनरी से निकलकर, कार्यक्षेत्र में प्रवेश करना फूलों की शय्या नहीं, बल्कि बड़ी ही कंटकाकीर्ण राह थी। सोसो ने उसे अपनाया। अपने क्रांतिकारी जीवन में जारशाही पुलिस से बचने के लिए सोसो को बहुत-से नाम बदलने पड़े, कभी वह 'दाविद' थे, कभी 'कोबा' (कोंबी), कभी 'नियेराद्‌जे' तो कभी 'शिचइकोफ', 'इवानोविच' और कभी 'स्तालिन'।

सोसो मजदूरों की हड़तालों में सबसे पहले तिफलिस में पड़े, जब सन् 1898 में रेलवे मिस्तरीखाने और कुछ दूसरे कारखानों के मजदूरों ने हड़ताल की। सोसो और लादो ने इन हड़तालों के संगठन में बहुत काम किया था। पहले-पहल सन् 1899 में तिफलिस के मजदूरों ने मई दिवस को क्रांतिकारी तरीके से मनाया। इस महोत्सव के उपलक्ष्य में पाँच सौ मजदूरों की एक सभा हुई, जिसमें सोसो ने भाषण दिया था। उसी साल के अन्त में,

तिफलिस में ट्रामवाले मजदूरों ने हड़ताल की, जिसमें उनकी विजय हुई।

विद्यार्थी जीवन ही में सोसो का पिता बिसारियोन मर चुका था। विधवा मजूरिन माँ अपने क्रांतिकारी बेटे की क्या सहायता कर सकती थी ? इसलिए, सोसो को अपनी रोटी का भी कोई प्रबन्ध करना जरूरी था। काम ढूँढ़ने पर, उन्हें तिफलिस की वेधशाला में नौकरी मिल गई। सोसो के पीछे पुलिस इतनी हाथ धोकर पड़ी थी कि रोटी कमाने के अतिरिक्त, छिपने की भी कोई जगह चाहिए थे। वानो केच्खोवेली वेधशाला की नौकरी के बारे में लिखता है :

"दिसम्बर सन् 1899 के अन्त में, वेधशाला में, एक वेधक की जगह खाली थी। लादो के कहने पर, सोसो ने उसके लिए अर्जी भेज दी। वेधशाला में सारी रात जागकर, निश्चित समय के अन्तर से बारीक यंत्रों द्वारा वेध लेना पड़ता था। काम में बड़े धैर्य और दिमाग थकानेवाली एकाग्रता की आवश्यकता थी, इसीलिए वेधक की जगह सदा खाली हो जाया करती थी। यही कारण था, जो सेमिनरी छोड़ने के बाद पहले मैंने, फिर साथी स्तालिन ने, फिर म. दवितशविली और अन्त में वासो बेईजनिशविली ने वेधशाला में बहुत आसानी से काम पाया।"

बातूम में (सन् 1901-2)

सोसो बहुत दिनों तक तिफलिस में नहीं रह सके। इसमें गिरफ्तार होने का डर ही एक कारण नहीं था, बातूम अब कालासागर का एक बहुत महत्त्वपूर्ण बन्दरगाह बन चुका था, जिसके कारण वहाँ मजदूरों की संख्या बहुत बढ़ गई थी। 11 नवम्बर, 1901 को तिफलिस के समाजवादी-क्रांतिकारी संगठन की पहली कान्फ्रेंस हुई। इसमें 25 प्रतिनिधि शामिल हुए थे। इसी में एक कमिटी का चुनाव किया गया, जिसके एक सदस्य सोसो भी बनाये गए। कमिटी ने नवम्बर के अन्त में ही सोसो को बातूम भेज दिया। बाकू और तिफलिस के बाद, काकेशस में यह तीसरा सबसे बड़ा मजदूरों का केन्द्र था। वहाँ पहुँचते ही, सोसो ने बड़े जोरों से अपना काम शुरू किया। सजग मजदूरों से सम्बन्ध स्थापित करने में देर नहीं लगी, और जल्दी ही उन्होंने वहाँ भी अपने अध्ययन-चक्र स्थापित कर लिए, जिनमें से कुछ में वह स्वयं भाग लेते थे। बातूम से तिफलिस नजदीक ही है, इसलिए सोसो का सम्बन्ध दोनों जगहों के संगठनों से था, इसे कहने की आवश्यकता नहीं। साथ ही, सोसो का ध्यान बाकू पर भी था। सोसो की प्रेरणा से, लादो केच्खोवेली ने एक गैरकानूनी प्रेस कायम किया, और सितम्बर सन् 1901 में तिफलिस से गुर्जी भाषा का प्रथम गैरकानूनी पत्र बरद्जोला (संघर्ष) क्रांतिकारी समाजवादी-जनतंत्रियों की ओर से निकलना शुरू हुआ। पत्र का लक्ष्य था–कमकरों को जार, जमींदारों और पूँजीपतियों के खिलाफ संघर्ष करने के लिए तैयार करना। बरद्जोला सारे रूस के मजूरों की अटूट एकता का पक्षपाती था। वह उत्पीड़ितों को समाजवाद के लिए लड़ने को प्रेरित करता था। बरद्जोला ने अपने पहले ही अंक में घोषित किया था : "गुर्जी समाजवादी जनतांत्रिक आन्दोलन··· सम्पूर्ण रूसी आन्दोलन के साथ हाथ में हाथ मिलाये चलेगा, इसलिए वह अपने को रूसी समाजवादी जनतांत्रिक दल के अधीन मानता है।" पत्र खुल्लमखुल्ला कमकरों की अधिनायकता का समर्थन करता था और जारशाही से डरनेवाले 'कानूनी मार्क्सवादियों' और गैरकानूनी संगठनों से अलग रहनेवाले 'अर्थशास्त्रियों' के विचारों की धज्जियाँ उड़ाता था। वह कमकर वर्ग के खुलकर क्रांतिकारी संघर्ष करने पर जोर देता था।

सेमिनरी से निकलने के साथ ही अब, पुलिस हाथ धोकर सोसो के पीछे पड़ गई। सोसो उस समय बेर्दजेनिशविली के साथ जिस मकान में रहते थे, पुलिस ने 21 मार्च, 1901 को उसकी तलाशी ली। सोसो उस वक्त वहाँ नहीं थे। बेर्दजेनिशविली ने इस तलाशी के बारे में लिखा है :

"पुलिस ने एकाएक कमरे के भीतर घुसकर पूछा कि मैं कौन हूँ और उस घर में दूसरा कौन रहता है। इसके बाद तलाशी शुरू की। उन्होंने पहले मेरी कोठरी को एक-एक करके ढूँढ मारा और मार्क्सवादी विचारधारा के कुछ कानूनी प्रकाशनों को मुहरबन्द कर, सूची बनाकर मुझसे उस पर हस्ताक्षर कराया। फिर, वह साथी स्तालिन (सोसो) की कोठरी में गए। वहाँ की एक-एक चीज को उन्होंने उलट-पलट

दिया, कोने-कोने को देख डाला, बिस्तरे को झाड़ा;—लेकिन कोई भी चीज उनके हाथ नहीं आई। साथी स्तालिन की आदत थी कि पढ़कर समाप्त करते ही वह पुस्तक को लौटा देते, उसे कभी घर में नहीं रखते थे। जहाँ तक गैरकानूनी पुस्तकों का सम्बन्ध था, वह उन्हें कुरा नदी के किनारे एक ईंटों के ढेर के भीतर छिपाकर रखते थे। इन बातों में साथी स्तालिन बहुत सावधान रहते थे। दूसरी कोठरी की तलाशी के बाद, पुलिसवाले एक सूची बनाकर खाली हाथ लौट गए।"

सोसो के बातूम जाने से पहले, कार्लो, चूखेइद्जे और दूसरे कानूनी मार्क्सवादी बातूम में काम कर रहे थे। चूखेइद्जे ने सोसो को यह कहकर मना करने की कोशिश की कि बातूम में किसी काम का भी संगठन करना बिलकुल असम्भव है। उसने बहुत चाहा कि सोसो बातूम से निराश होकर चले जायें, लेकिन जहाँ तक साधारण जनता और विशेषतः मजदूरों का सम्बन्ध था, सोसो उन्हें कहीं अधिक जानते थे। सोसो ने चौबा मुहल्ले में जाकर अपना डेरा डाला और बड़े जोर-शोर के साथ अपना काम शुरू किया। बातूम में मजदूरों की बहुत भारी संख्या थी, जो मन्ताशेफ सीदेरिंदी, राथचाइल्ड और नोबेल की बड़ी-बड़ी तेल-शोधनियों में काम करते थे। राजनीतिक क्लासों के अतिरिक्त सोसो ने गुप्त छापाखाने की भी व्यवस्था की। वह स्वयं पुस्तिकाएँ लिखते और उनके छापने में मजदूर उनकी सहायता करते। बातूम की खुफिया पुलिस ने उस वक्त रिपोर्ट दी थी कि वहाँ के कमकर सोसो जुगशविली का बड़ा सम्मान करते तथा उसे अपना गुरु समझते हैं :

"... समाजवादी जनतांत्रिक आंदोलन ने सन् 1901 की शरद से बहुत प्रगति की है, जब से रूसी समाजवादी जनतांत्रिक दल ने सोसो जुगशविली नामक अपने सदस्य को यहाँ भेजा है। सोसो तिफलिस धर्मशास्त्रीय सेमिनरी के छठे दर्जे का विद्यार्थी था... जुगशविली की तत्परताओं के कारण, बातूम के सभी कारखानों में समाजवादी जनतांत्रिक संगठन बनने लगे हैं।... "

31 दिसम्बर, 1901 की रात को सोसो ने नव वर्ष के उत्सव के बहाने कमकरों के अध्ययन-चक्रों की एक कान्फ्रेंस बुलाई, जिसमें करीब तीस आदमी शामिल हुए। इसी कान्फ्रेंस में रूसी समाजवादी जनतांत्रिक दल की बातूम कमिटी का संगठन हुआ। बातूम में स्थापित होने वाला यह पहला लेनिनवादी संगठन था, इस कान्फ्रेंस के बारे में सोसो के सहकारी रोदियोन कोर्किया ने लिखा है :

"सोसो ने अपना भाषण समाप्त करते हुए कहा—'देखो, प्रभात हो चुका है। जल्दी ही सूर्य उगेगा। सूर्य हमारे लिए प्रकाशित होगा। मेरी बातों पर विश्वास करो, साथियो !' "

बातूम की कमिटी ने सन् 1902 के आरम्भ में वहाँ कई बड़ी हड़तालें कराईं। कारखानों की हड़ताल-कमेटियों का संचालन सोसो स्वयं करते थे। जारशाही के अधिकारी इतने घबड़ा गए कि उन्होंने बातूम के लिए एक सैनिक राज्यपाल नियुक्त किया। राज्यपाल ने धमकाकर हड़ताल खतम करने का प्रयत्न किया, लेकिन उसका कोई भी फल नहीं हुआ। 7 मार्च की रात में लोगों को भारी संख्या में गिरफ्तार किया, तो भी कोई फायदा नहीं हुआ। गिरफ्तारी के विरुद्ध 8 मार्च, 1902 को सोसो ने मजूरों का एक सामूहिक प्रदर्शन संगठित किया, जिसने गिरफ्तार साथियों को छोड़ने की माँग की। पुलिस ने इसका जवाब तीन सौ प्रदर्शनकारियों को गिरफ्तार करके दिया। अगले दिन सोसो ने एक और भी जबर्दस्त प्रदर्शन संगठित किया, जिसमें राथचाइल्ड और मन्ताशेफ के कारखाने के मजदूर ही नहीं, बल्कि जहाजघाट, रेलवे और दूसरे स्थानों के मजदूर भी शामिल हुए। प्रदर्शन बड़ी ही सुव्यवस्थित रीति से सड़कों पर घूमा। हाथों में लाल झंडे लिये, लोग क्रांतिकारी गीत गा रहे थे। वह उस बैरिक तक गए, जिसमें उनके गिरफ्तार साथी बंद थे। छोड़ने की माँग करने पर, अबकी बार पुलिस ने गोली चलाई। पन्द्रह मजदूर वहीं मर गए और चौवन घायल हुए। उस दिन के प्रदर्शन के बारे में ई. दरख्वेलिद्जे नामक कमकर कहता है :

"साथी सोसो कमकरों के तूफानी समुद्र के बीच खड़े, स्वयं प्रदर्शन का संचालन कर रहे थे। कलन्दाद्जे नामक मजूर जब बाँह में घायल हो गया, तो साथी सोसो ने उसे भीड़ से बाहर निकालकर स्वयं घर तक पहुँचाया।"

12 मार्च को, साथी सोसो ने 9 मार्च के दिन मारे गये मजदरू शहीदों की क्रांतिकारी श्मशान-यात्रा का

प्रबन्ध किया। लोग पुलिस की गोलियों और खून के अभिषेक से भयभीत नहीं हुए और वह भारी संख्या में शहीदों की श्मशान-यात्रा में शामिल हुए। इस अवसर पर सोसो ने एक क्रांतिकारी भावों से ओत-प्रोत पुस्तिका छपाकर बातूम और दूसरे नगरों में बँटवाई थी, जिसके कुछ वाक्य थे :

"हम सम्पूर्ण हृदय से तुम्हारा सम्मान करते हैं, जिन्होंने सत्य के लिए अपने प्राणों को अर्पण किया। जिस स्तन ने तुम्हें दूध पिलाया, हम उसकी पूरी इज्जत करते हैं ! जिनकी पेशानी शहीदी मुकुट से शोभित हुई और जिन्होंने मृत्यु के अन्तिम घंटे में अपने पीले और काँपते ओठों से संघर्ष के नारों को दोहराया, उनके लिए पूरा सम्मान ! उस छाया (आत्मा) के लिए पूरा सम्मान जो हमारे कानों में आशा का संदेश संचार करती हुई कहती है–हमारे खून का बदला लो !"

सोसो पहले मते रुसिद्जे के घर में रहे। वहाँ से कासिम स्मिरबा नामक एक किसान के घर में चले गए। स्तालिन के इस समय के जीवन के बारे में निनुस्सा मोदेबाद्जे ने 'जार्या वस्तोका' में प्रकाशित अपने लेख में कहा है :

" साथी स्तालिन मते रुसिद्जे के घर में रहते थे, जिसकी दो कोठरियों में दख्वेलिद्जे माई और कोत्सिया कन्देलाकी रहते थे। पास की एक छोटी कोठरी में साथी स्तालिन रहते थे। इस कोठरी में कोई खिड़की या रोशनदान नहीं था। इसका बाहर का दरवाजा हमेशा बन्द रहता, जिसके कारण किसी का भी ध्यान उधर नहीं जा सकता था। बाहरी और भीतरी दरवाजों के बीच की जगह में कपड़े लटकते थे, जिनके देखने से मालूम होता था कि द्वार में कोई आलमारी है।

" घर के दूसरे आधे भाग में इविलियान और देस्पिने श्फ्तवा रहते थे। सोसो की कोठरी में छापे का प्रेस रखा था, यहीं वह काम करते थे और यहीं उनके पैम्फलेट छपते थे। काफी रात बीतने पर, यहीं अग्रगामी कमकरों की बैठकें होतीं।

" मेरी बहन देस्पिने अक्सर इन पुस्तिकाओं को विश्वसनीय साथियों के पास ले जाती थी। साथी स्तालिन स्त्रियों को क्रांतिकारी कामों की ओर खींचते और उन्हें क्रांति के सम्बन्ध में बातें बतलाते थे।"

सोसो जब अपनी जगह बदल कर कासिम के घर चले गए, तो गुप्त छापखाना अब वहीं काम करने लगा। यह अबखासी मुसलमान किसान बिलकुल सीधा-सादा, अनपढ़ था, लेकिन सोसो के सम्पर्क ने उसके दिल में भी क्रांति की आग जला दी थी। वह अपने सोसो की लिखी और छापी पुस्तिकाओं को फलों की टोकरी में छिपा कर बाहर ले जाता। कासिम की तरह ही, सैकड़ों सीधे-सादे किसान और मजदूर सोसो के काम में सहायता कर रहे थे। भावी स्तालिन के साथ उनकी इतनी आत्मीयता और विश्वास था कि वह उनके लिए सब कुछ करने को तैयार थे। बातूम के कमकर उन्हें 'कमकरों का गुरु' कहते थे। इन कमकरों में स्तालिन के अपने जाति के गुर्जी ही नहीं थे, बल्कि कासिम की तरह के अबखासी, आजुर्बाइजानी, कुर्द, अर्मनी और रूसी भी थे। स्तालिन को इस प्रकार अपने क्रांतिकारी जीवन के आरम्भ में ही अन्तर्राष्ट्रीय मजदूरों और किसानों के घनिष्ठ सम्पर्क में आने का मौका मिला। राष्ट्रीय समस्याओं के अध्ययन का इससे अच्छा मौका और कहाँ मिल सकता था ?

2. प्रथम गिरफ्तारी

5 अप्रैल, 1902 को पार्टी के मुख्य सदस्यों की एक बैठक हो रही थी। उसी समय पुलिस ने छापा मार, सोसो को पकड़कर बातूम जेल में बन्द कर दिया, फिर कुछ समय बाद कुतैस के जेल में भेज दिया। लेकिन, जेल में बन्द करके सोसो को अपने क्रान्तिकारी कामों से नहीं रोका जा सकता था। आखिर सभी जगह मनुष्य रहते थे, जिनमें अधिकांश शोषित और पीड़ित ही थे, जिनके लिए ही सोसो ने अपना जीवन अर्पण किया था और जिनके प्रति उनके हृदय में अगाध प्रेम था। जेल के इन आदमियों द्वारा सोसो ने अपने बाहर के साथियों से सम्बन्ध स्थापित किया। साथ ही, जेल में बन्द राजनीतिक बंदियों में तत्परता से काम करना शुरू किया। उन्हें मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन के विचारों को समझने में मदद दी। जारशाही ने सोसो जुगशविली पर बातूम के

मजदूरों के क्रान्तिकारी आन्दोलन का मुख्य नेता और शिक्षक, एवं तिफलिस समाजवादी जनतांत्रिक संगठन का सदस्य होने के अपराध लगाये थे। फरवरी, सन् 1903 में काकेशीय समाजवादी जनतांत्रिक संगठन की प्रथम कांग्रेस हुई, जिसमें काकेशीय फेडरल कमिटी का संगठन हुआ था। सोसो यद्यपि 5 अप्रैल, 1902 से ही जेल में बन्द थे, लेकिन उनकी अनुपस्थिति में ही उन्हें कमिटी का सदस्य चुना गया। प्रायः सवा वर्ष जेल में बन्द रखने के बाद, 5 जुलाई, 1903 को परममहाभट्टारक (जार) का निर्णय घोषित करते हुए, सोसो को तीन वर्ष के लिए पुलिस की खुली देख-रेख में पूर्वी साइबेरिया में निर्वासित करने की सजा दी गई। साइबेरिया भेजने से पहले ही, नवम्बर सन् 1903 के अन्त में सोसो को बातूम के जेल में लाया गया, जहाँ से उन्हें इर्कुत्स्क प्रदेश के बलगान्स्क जिले के नोवयाउदा नामक गाँव में भेज दिया गया।

इस प्रथम निर्वासन के समय तक सोसो एक प्रमुख संगठनकर्ता और जनता के बड़े नेता हो चुके थे। काकेशस की भूमि में उनका नाम सभी जगह बड़े सम्मान के साथ लिया जाने लगा था। यही नहीं, सन् 1903 तक, अब रूस के क्रांतिकारी भी इस गुर्जी तरुण को सम्मान की दृष्टि से देखने लगे थे। सोसो आतंकवाद के माननेवाले नहीं थे, मार्क्सवाद ने उन्हें सिखाया था कि क्रांति के लिए काम आनेवाली सारी शक्तियों का स्रोत जनता ही है। उसी जनता को जगाना सबसे जरूरी काम है, जिसके लिए छापेखाने की सबसे अधिक आवश्यकता थी। सोसो ने अपने मित्रों लादो केच्खोवेली, साशा चुलुकिद्जे, मिखा चूखाकया और दूसरे साथियों से मिलकर, गुप्त प्रेस स्थापित करने की व्यवस्था की थी, जिनके बारे में हम आगे देखेंगे कि वह कुछ ही वर्षों में कितना विशाल रूप ले चुका था।

इसी प्रथम निर्वासन के समय से सोसो का लेनिन से पत्र-व्यवहार होने लगा। 28 जनवरी, 1904 को क्रैमलिन सैनिक स्कूल की लेनिन संस्मरण सभा में बोलते हुए, स्तालिन ने इसके बारे में कहा था :

> "पहले-पहल सन् 1903 में मैंने लेनिन का परिचय प्राप्त किया। यह सच है कि वह परिचय अभी साक्षात्कार के रूप में नहीं था। तो भी पत्र-व्यवहार द्वारा, यह परिचय लगातार जारी रहा। उन्होंने मेरे हृदय पर एक ऐसी अमिट छाप छोड़ी, जो मेरे पार्टी के सारे कामों पर अपना प्रभाव डाले बिना नहीं रही। उस समय मैं साइबेरिया में निर्वासित था। लेनिन के क्रांतिकारी कामों के बारे में 1890 वाली दशाब्दी के बाद, विशेषकर 1901 से, जब कि 'इस्का' (चिनगारी) का प्रकाशन शुरू हुआ, जो बातें मुझे मालूम हुईं उन्होंने मेरे मन में पक्की तरह से बैठा दिया कि लेनिन एक असाधारण प्रतिभा के धनी पुरुष हैं। मैं उन्हें दल के केवल एक नेता ही नहीं, बल्कि उसके वास्तविक संस्थापक समझता था; क्योंकि केवल वही ऐसे पुरुष थे जो हमारी पार्टी की अत्यावश्यक जरूरतों और आन्तरिक तत्त्वों को समझते थे। जब मैं पार्टी के दूसरे नेताओं से उनकी तुलना करता, तो मुझे सदा मालूम होता कि प्लेखानोफ, मर्तोफ, अखेलरोद् और दूसरे नेता उनके कन्धों तक भी नहीं पहुँचते थे। लेनिन बहुत-से नेताओं में से केवल एक नहीं थे, बल्कि वह सर्वोच्च नेता, एक शाहबाज थे; जो संघर्ष में भय क्या चीज है इसे नहीं जानते थे। उन्होंने बड़ी हिम्मत और निर्भीकता के साथ, क्रांतिकारी आन्दोलन के अपरिचित मार्ग से पार्टी को आगे बढ़ाया। यह प्रभाव मेरे ऊपर इतना जबर्दस्त था कि मैं इसके बारे में उस समय विदेश में निर्वासित अपने एक घनिष्ट मित्र को लिखे बिना नहीं रहा; और उससे इसके बारे में पूछा भी। कुछ समय बाद सन् 1903 के अन्त में, जब मैं साइबेरिया में निर्वासित हो चुका था, मुझे अपने मित्र का एक बड़ा ही उत्साहवर्धक पत्र मिला, जिसके साथ एक सीधा-सादा, लेकिन बहुत ही भावपूर्ण पत्र लेनिन का भी था, जिससे मालूम हुआ कि मेरे मित्र ने मेरे पत्र को उन्हें दिखा दिया था। लेनिन का पत्र अपेक्षाकृत बहुत छोटा था। ... इस सीधे-सादे, किन्तु निर्भीक पत्र ने लेनिन के बारे में मेरी राय को और भी दृढ़ कर दिया कि वह हमारी पार्टी के शाहबाज हैं। मैं इसके लिए अपने को क्षमा नहीं कर सकता, कि मैंने पुराने गुप्त कार्यकर्ताओं की आदत के अनुसार, और बहुत-से पत्रों की तरह लेनिन के इस पत्र को भी आग में डाल दिया। लेनिन से मेरा परिचय उसी समय से शुरू होता है।"

नोवायउदा में सोसो 27 नवम्बर, 1903 को पहुँचे और 1904 की वसंत तक, साइबेरिया का यही ग्राम

उनका निवास-स्थान रहा। क्रान्तिकारियों को साइबेरिया के इन सुदूरस्थ स्थानों में भेजकर जारशाही चाहती थी कि क्रान्ति के कीटाणु जनता के भीतर न पड़ने पायें, लेकिन उसमें उसे सफलता कहाँ मिल सकती थी, जब कि इन कीटाणुओं से सारा वातावरण ही भरा हुआ था और जो जारशाही के अपने शोषण और उत्पीड़न से पैदा होते थे। जारशाही के दुर्भाग्य से, सोसो का यह निर्वासित जीवन डेढ़ महीने से भी कम का रहा। 5 जनवरी, 1904 को एक दिन आँख बचाकर, वह गुर्जी तरुण नोवयाउदा से गायब हो, छिपते-बचते अपने केन्द्र बातूम में पहुँच गया ! अपने संस्मरण में नतालिया किरतार्द्जे बतलाती है कि स्तालिन उसके घर कैसे पहुँचे :

"सन् 1904 के आरंभिक भाग में, एक रात मेरे दरवाजे पर खटखट की आवाज हुई। आधी रात बीत चुकी थी। मैंने पूछा : 'कौन है ?'

" 'मैं हूँ, भीतर आने दो।'

" 'तुम कौन हो ?'

" 'मैं हूँ, सोसो।'

" मेरे लिए यह विश्वास करनेवाली बात नहीं थी; और मैंने तब तक दरवाजा नहीं खोला जब तक कि उन्होंने अपना संकेत-वाक्य—'हजार बार दीर्घजीवी'—नहीं बता दिया। मैंने पूछा : 'तुम बातूम में कैसे चले आये ?' सोसो ने जवाब दिया : 'मैं निकल भागा।' इसके बाद ही वह तिफलिस के लिए रवाना हो गए, जहाँ से उन्होंने कई बार हमें चिट्ठियाँ लिखीं। साथी सोसो उस समय काकेशीय फेडरल कमिटी के कामों का संचालन कर रहे थे। सन् 1904 की वसंत में, एक बार फिर सोसो बातूम आये। अबकी बार उन्होंने बर्तजखाना में इलिको शराशिद्जे के घर में मेन्शेविकों के साथ कई शास्त्रार्थ किए।"

अब सोसो का नाम 'कोबा' था। साथी कोबा का न कोई घर था, न परिवार। उनका सारा समय मजदूरों के संगठन और क्रांति के काम में बीतता था। उनके पास एक भी पैसा नहीं था। निनुवा और दूसरे साथी जैसे चार वर्ष पहले उनके लिए भोजन आदि का प्रबन्ध करते थे, उनकी वही हालत अब भी थी। जलावतन से भागकर आये आदमी के पीछे जारशाही पुलिस का पड़ा रहना स्वाभाविक था, इसलिए साथी कोबा को बहुत सावधानी से रहने की जरूरत थी। सभाओं में वह एकाएक पहुँचते, चुपचाप कहीं बैठ जाते और सिर्फ बोलने के समय ही प्रकट होते। दो-तीन साथी हमेशा उनके साथ रहकर दरवाजे पर रखवाली किया करते। कोबा लम्बे भाषण कैसे दे सकते थे ? उनका काम था भाषण दिया और लुप्त हुए। कोबा को बराबर एक जगह से दूसरी जगह घूमते रहना पड़ता था, क्योंकि उनके लिए अपने को छिपाना नहीं, बल्कि असली काम प्रचार और संगठन था। रेलवे लाइन सन् 1883 में ही काकेशस पार करके, बाकू से तिफलिस और बातूम जा चुकी थी। सन् 1900 में बाकू का तेल पाइप द्वारा बातूम पहुँचने लगा था, जिसके कारण वहाँ कई बड़ी-बड़ी तेल-शोधनियाँ स्थापित हुई थीं, जहाँ से जहाजों द्वारा तेल काला सागर से दरे दानियाल होते हुए दुनिया के दूसरे देशों में जाता था। कोबा को यात्रा में ट्रेन का भी सहारा लेना पड़ता, लेकिन उन्हें इस बात का बहुत ही ध्यान रखना पड़ता कि खुफिया पुलिस वाले पीछा न कर सकें। कोबा की सावधानी का एक उदाहरण लीजिये : एक गुप्त बैठक हो रही थी। स्थान नाट्यशाला का एक ऐसा भाग चुना गया था कि यदि पुलिस इमारत को घेर ले, तो एक दरवाजा तोड़कर प्रेक्षणशाला के लोगों में मिलकर अपने को छिपाया जा सकता था। एक बार वह विशाल पपोफ पुस्तकालय में गए। वहाँ रूसी लेखक बेलिन्स्की की पुस्तक माँगकर उसे ध्यान से पढ़ने लगे, लेकिन साथ ही वह हमेशा कनखियों से पुस्तकालय के एक सहायक की ओर देखते रहे, जिसको उन्होंने बिना दूसरे के देखे-जाने दो झूठे पासपोर्ट दे दिये थे। यह पासपोर्ट दो साथियों को देश से बाहर निकालने के लिए बनाये गए थे, जिन्हें पुलिस थोड़ी ही देर बार गिरफ्तार करनेवाली थी। पपोफ एक राजवादी पुस्तकाध्यक्ष था, इसीलिए स्तुरोना रुइकोफ, तोंदरिया, एनोकिद्जे जैसे क्रांतिकारी वहाँ आपस में मिला करते थे।

पुलिस बड़े ध्यान से कोबा की हुलिया लिये फिरती थी : "जुगशविली योसेफ बिसारियोनोविच, मोटा-तगड़ा ··· गम्भीर स्वर··· बायें कान पर छोटा-सा चिह्न··· सिर की आकृति साधारण··· देखने में एक साधारण-सा आदमी।"

बाकू की ओखराना (पुलिस) खुफिया-विभाग के मुखिया को रिपोर्ट देती थी : "किसान योसेफ जुगशविली यहाँ की (गुप्त) सभाओं का प्रधान संचालक है, जिनका उद्देश्य है—एक गुप्त छापाखाना स्थापित करना।" दूसरे समय एक खुफिया पुलिस का आदमी खबर देता है कि इस समय जेल भेजा जानेवाला केसोम नीयेरादूजे नाम वाला आदमी और कोई नहीं, किसान जुगशविली ही है।

किसान जुगशविली या कोबा गुप्त प्रेस को पहले भी संगठित कर चुके थे; क्योंकि वह जानते थे कि सबसे बड़ा हथियार ज्ञान का प्रसार ही है—राजनीतिक ज्ञान, वर्ग चेतना और वर्ग संघर्ष के ज्ञान का प्रसार ही है। इसीलिए, जिस तरह आतंकवादियों का ध्यान बमों और रिवाल्वरों की तरफ जाता, उसी तरह कोबा का ध्यान प्रेस की तरफ था। अपने साथियों से मिलकर, उन्होंने अबलाबार में एक गुप्त प्रेस संगठित किया, जिससे बहुत-सी पुस्तिकाएँ और गैरकानूनी पत्र-पत्रिकाएँ निकलती थीं। इस प्रेस के बारे में हम आगे लिखनेवाले हैं।

कोबा और उसके बोल्शेविक साथी काकेशस के नगरों और कस्बों में बराबर घूमा करते थे। यह वह समय था जब कि कोबा शास्त्रार्थ के मैदान में अपने प्रतिद्वंद्वी मेनूशेविकों, समाजवादी क्रांतिकारियों, और क्रोपात्किन के अनुयायी अराजकतावादियों से बराबर लोहा लेते रहते थे। तरुण कोबा की प्रतिभा का चमत्कार इस समय इन बहस की सभाओं में अच्छी तरह दिखाई पड़ता था। कभी वह तिफलिस में जाते, कभी बाकू में, कभी कुतैस, गोरी, चियातुरी, खोनी, बोर्चालो, बातूम या अन्य जगहों में। इन जगहों में जाकर कोबा ने शास्त्रार्थ ही नहीं किए, बल्कि पार्टी के संगठनों को बनाकर मजबूत करना भी उनका काम था। चियातुरी में उन्होंने एक बोल्शेविक इलाका कमिटी स्थापित की। उसी की प्रेरणा से कुतैस में भी भूतपूर्व कुतैस प्रदेश के लिए पार्टी की कमिटी बनी। खोनी में मेन्शेविकों के साथ जो शास्त्रार्थ हुआ था, उसके बाद ही वहाँ भी एक बोल्शेविक कमिटी स्थापित हो गई। इन शास्त्रार्थों में तर्कों और युक्तियों के द्वारा क्रान्तिकारी मार्क्सवाद के पक्ष का समर्थन करते हुए, कोबा ने श्रोताओं को मुग्ध कर दिया था। सन् 1905 में दो हजार कमकरों की सभा में अराजकतावादी गोगेलिया, चेरेतेली और दूसरों से एक बड़ा शास्त्रार्थ हुआ। उसके एक प्रत्यक्षदर्शी केकेलिद्जे ने इस सभा के बारे में बतलाया है :

> "सभा आरम्भ हुई। कोबा पहले बोले। इस पर बहस शुरू हुई। विरोधियों ने बहुत जोर लगाकर उनके पक्ष का खंडन किया। साथी कोबा ने जरा भी घबराहट या उतावलापन न दिखलाते हुए, विरोधियों के एक-एक तर्क के चिथड़े-चिथड़े उड़ा दिये। इस प्रकार यहाँ भी बोल्शेविक विजयी हुए। मजूर एक राय से साथी कोबा के समर्थक हो गए।"

शास्त्रार्थों के अतिरिक्त, कमकरों में जाग्रति पैदा करने के लिए उनके कष्टों को दूर करने का रास्ता हड़ताल का था। दिसम्बर, 1904 में बाकू तेल-क्षेत्र में एक जबर्दस्त हड़ताल हुई, जिसके लिए कहा जा सकता है कि अगले साल होने वाली रूसी क्रान्ति की वह पूर्व-सूचना थी। हड़ताल में बाकू के मजदूरों की जीत हुई और रूसी कमकर-आन्दोलन के इतिहास में पहली बार यहाँ मालिकों ने मजदूरों के सामूहिक बातचीत के अधिकार को स्वीकार किया। इसका फल यह हुआ कि मेन्शेविको, समाजवादी क्रांतिकारियों, अराजकतावादियों, कादेतों और दशनकों (आर्मनियन राष्ट्रीयतावादियों) की बाकू से टिक्की उड़ गई। सर्वत्र बोल्शेविकों की जय-जय होने लगी।

कोबा इस समय प्रतिवादी-भयंकर के रूप में शास्त्रार्थ-सभाओं में दिखाई पड़ते थे। सुधारवादी राजनीतिक दलों के मंतव्यों का भंडाफोड़ करने के लिए इससे अच्छा साधन और क्या हो सकता था। तिफलिस बूट फैक्टरी में भी कोबा ने शास्त्रार्थ किया था। यह वही फैक्टरी थी, जिसमें उनका पिता जूते बनाया करता था। नोवा योरदानिया, ई. चेरेतेली, न. रामेशविली जैसे मेनूशेविक नेताओं को तरुण कोबा ने शास्त्रार्थों में परास्त कर दिया। बातूम के एक बड़े शास्त्रार्थ में वह न. रामेश्विली और र. अर्सेनिद्जे आदि मेनूशेविक नेताओं के सामने बोले थे। पेरेविस्सी और शुकुर्ती आदि की मैंगानीज की खानों में भी जाकर कोबा ने शास्त्रार्थ किया। उनके विरोधी मेनूशेविक नेता न. लोर्दकीपानिद्जे, ग. खोमेरिकी, क. नीनेदूजे, ज. गुरुली आदि थे। कुतेस के शास्त्रार्थ ने वहाँ

मेनूशेविकों का प्रभाव कम किया। खोनी जिले के खोनी और कुखी आदि स्थानों में कोबा, मिला चूखाकया, फ. मखरादूजे आदि ने मेनूशेविकों के साथ शास्त्रार्थ जीता। पोती में भी साथी कोबा ने सफलतापूर्वक शास्त्रार्थ करके, वहाँ बोलूशेविक संगठन स्थापित किया। खिसियाकर योरदानिया, न. रामेशविली आदि मेनूशेविक नेताओं ने बोलूशेविकों पर झूठे लांछन लगाने शुरू किए; खास कर कोबा और उनके गुरु लेनिन को तानाशाह, खूनी ब्लांकवादी आदि के नाम देकर बदनाम करने लगे।

भाषण-शैली–साथी कोबा के बोलने का ढंग बड़ा सरल और आकर्षक था। कोबा जानते थे कि वह उन मजदूरों के सामने हैं, जो क्रांति के सबसे बड़े सैनिक हैं। इसलिए, उनका सारा ध्यान इस ओर रहता था कि मार्क्सवाद के क्रांतिकारी विचारों को किस तरह उनके हृदयों में बैठाया जाय। एक भाषण में वह इस सिद्धांत को समझाने लगे कि जीवन की भौतिक स्थितियों के बदल जाने पर भी विचारधाराएँ उसी गति से नहीं बदलतीं। इसे उन्होंने इस तरह पेश किया–जैसे एक मोची को ले लो (यह मोची शायद कोबा का अपना पिता बिसारियोन ही उनके ध्यान में रहा होगा)। वह पहले अपनी छोटी-सी झोंपड़ी में काम करता था। उसके अपने छोटे-छोटे हथियार थे और किसी से कुछ लेना-देना नहीं था। लेकिन, एक बड़ा आदमी अदिलखानोफ जूते के बाजार में आया। वह सस्ते जूते बेचने लगा। मोची बेचारा उसके सामने कैसे ठहर सकता था ? उसने अपनी झोंपड़ी और दुकान छोड़ी और वह अदिलखानोफ की फैक्टरी में भर्ती हो गया। भर्ती होते वक्त, उसका यह ख्याल नहीं था कि मैं हमेशा के लिए मजूरी करनेवाला मोची बन जाऊँगा। उसका ध्यान था कि कौड़ी-कौड़ी करके कुछ पैसा जमा कर, मैं अपना एक छोटा-सा कारखाना खोल लूँगा। मोची कारखाने में भर्ती होकर, अब सर्वहारा हो चुका है। इस जीवन से बचने का उसके पास कोई उपाय नहीं है, लेकिन अब भी वह अपने सर्वहारापन को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं है और स्वतंत्र कारीगर होने का स्वप्न देख रहा है। स्वतंत्र कारीगरी या असर्वहारापन उसके लिए अब बीती कहानी है, लेकिन तब भी वह उसी मनोभाव को पकड़े हुए है। अपनी नई सामाजिक स्थिति को स्वीकार करने के लिए वह तैयार नहीं है। इस तरह साफ है कि मनुष्य के जीवन की बाहरी स्थितियाँ पहले ही बदल जाती हैं, लेकिन उसके मनोभावों के बदलने में देर लगती है। इसे बतलाते हुए, साथी कोबा ने अपने श्रोताओं के मन में यह भी बैठा दिया कि भौतिक स्थिति जब पहले ही बदल जाती है, तो इसी बदली हुई स्थिति के सहारे हमें अपने मनोभावों को बदलकर आगे बढ़ना चाहिए। हवाई विचारधाराएँ कोई क्रांति नहीं कर सकतीं, न उनसे कोई सफलता प्राप्त हो सकती है। आर्थिक स्थितियों पर निर्भर विचारधारा ही सफलता की ओर ले जाती है। इसके साथ ही, साथी कोबा ने यह भी समझाया कि मनुष्य के मनोभाव, आचार-विचार या आदतें उसकी बाहरी भौतिक स्थिति से ही पैदा होती हैं। अगर कानूनी और राजनीतिक रूप अपनी बाहरी आर्थिक या भौतिक स्थितियों के प्रतिकूल हैं, तो इसका प्रभाव लोगों के सदाचार, आदतों आदि पर भी पड़े बिना नहीं रहेगा। भौतिक स्थिति या आर्थिक स्थिति ने जो अवसर दिया है, उससे लाभ उठाकर हमें लोगों के आर्थिक सम्बन्धों में मौलिक परिवर्तन करने का प्रयत्न करना चाहिए, और मोची को बतलाना चाहिए कि तुम्हारी बीती हुई स्थिति फिर नहीं लौट सकती, अब तुम सर्वहारा हो; अब तो सर्वहारों की विजय अर्थात् पूँजीपतियों की समाप्ति पर ही तुम्हारे लिए भले दिनों की आशा है।

एक भाषण में कोबा अर्थशास्त्रीय भौतिकवाद की आलोचना कर रहे थे। अपने सिद्धांत के लिए मार्क्स की दुहाई देनेवाले, इस फूहड़ भौतिकवाद के समर्थकों से कोबा ने पूछा : "किस ग्रह में, कौन से मार्क्स ने कहा है कि आदमी की विचारधारा उस रोटी पर निर्भर है, जिसे वह खाता है ?" उन्होंने विरोधियों को चुनौती दी कि अपनी बातों के समर्थन में मार्क्स की किताबों में से एक भी वाक्य निकाल कर दिखलाएँ, "यह सच है कि मार्क्स कहते थे कि मनुष्य के मनोभाव–उसकी विचारधारा–की निर्णायक उसकी आर्थिक स्थितियाँ हैं। लेकिन, उन्होंने यह कहाँ कहा है कि आर्थिक स्थितियाँ और रोटी एक ही चीज है ? क्या यह स्पष्ट नहीं है कि रोटी जैसा एक शरीरोपयोगी पदार्थ समाज-शास्त्रीय पदार्थ से बिलकुल भिन्न है ?"

उस वक्त का उनका फरारी जीवन ही इसका कारण नहीं था, बल्कि वैसे भी वह छोटे-छोटे भाषण दिया करते थे, लेकिन वह होता था गागर में सागर। ओरखेलशविली कहता है **स्तालिन के भाषणों में पानी की एक**

बूँद भी नहीं रहती ? पानी की बूँद से यहाँ मतलब बेकार की बातों से है। वह उतने ही शब्द बोलते थे जिनकी आवश्यकता श्रोताओं के मन में किसी बात के बैठाने के लिए जरूरी होती थी। भाषण में वक्तृत्वकला के लिए आवश्यक स्वर का आरोह-अवरोह और नाटकीय ढंग, लेनिन की तरह ही, कोबा में भी नहीं था। उनका ध्यान अपने सारे तर्कों और युक्तियों से उसी एक बात के समझाने की ओर होता, जिस पर कि वह उस समय बोलते थे, मानो वह सुन्दर इमारत की एक-एक ईंटें चुनकर अपने तर्कों और युक्तियों द्वारा रख रहे हैं। सीधी-सादी भाषा अपनी एक अलग ही कला रखती है। इस प्रकार हम नहीं कह सकते कि कोबा अर्थात् भावी स्तालिन् के भाषण में कला का अभाव था।

कोबा को मालूम हो रहा था कि सशस्त्र संघर्ष का समय दूर नहीं है। वह आतंकवाद के पक्षपाती नहीं थे कि दो-चार तरुणों को बम और रिवाल्वर चलाने के लिए तैयार करके सफलता की आशा रखते। उन्हें कमकरों को हथियारबंद कर, संघर्ष के लिए तैयार करना था। उन्होंने इसके लिए काकेशीय वीर कामो पेत्रोस्यान की सहायता से हथियार इकट्ठे करने का काम शुरू किया। तृतीय पार्टी कांग्रेस इसी साल, सन् 1904 में हुई थी, जिसमें साथी कोबा नहीं जा सके और काकेशीय बोल्शेविकों की ओर से मिखा चूखाकया प्रतिनिधि बनकर गए। काकेशस की घटनाओं पर कांग्रेस ने यह विशेष प्रस्ताव पास किया था :

" जबकि,

" 1. काकेशस की आज की विशेष सामाजिक और राजनीतिक स्थितियाँ इसके अनुकूल हैं कि वहाँ हमारी पार्टी के अत्यन्त लड़ाकू संगठन कायम किए जा सकें;

" 2. काकेशस के नगर और देहात–दोनों के अधिकांश लोगों में क्रांतिकारी आन्दोलन उस अवस्था तक पहुँच गया है जब कि स्वेच्छाचारिता के विरुद्ध सारे देश में विद्रोह किया जा सके;

" 3. निरंकुश सरकार अपनी सेनाओं और तोपखानों को इसीलिए गुरिया में भेज रही है कि विद्रोह के सभी महत्त्वपूर्ण केन्द्रों को बड़ी निष्ठुरतापूर्वक दबा दिया जाय;

" 4. अगर निरंकुश शासन काकेशस के लोगों के विद्रोह को दबाने में सफल हुआ, जिसमें वहाँ की गैर जातियों के अधिक होने से सुभीता भी है, तो यह रूस में विद्रोह की सफलता के लिए आम तौर से हानिकारक होगा।

" इसलिए, रूसी समाजवादी जनतांत्रिक दल की तृतीय कांग्रेस रूस के वर्ग चेतना वाले सर्वहारों के नाम से बोलते हुए काकेशस के बहादुर सर्वहारों और किसानों के पास अपना हार्दिक अभिनन्दन भेजती है, और केन्द्रीय समिति तथा पार्टी की स्थानीय समितियों को हिदायत करती है कि काकेशस की स्थिति के संबंध की सूचनाएँ पुस्तिकाओं, सभाओं, कमकरों की बैठकों और सामूहिक वाद-विवादों आदि के द्वारा, बड़े व्यापक पैमाने पर सब जगह फैलाएँ; और अपने पास जितने भी साधन हैं उनसे ठीक समय पर काकेशस की मदद करें। "

इसी समय काकेशस में आन्दोलन और आगे बढ़ाने के लिए कोबा ने 'पोलेतारियातिम् बरद्जोला' (सर्वहारा-संघर्ष) की स्थापना की, जो आबलाबार के गुप्त प्रेस से निकलता था। लेनिन द्वारा सम्पादित 'प्रोलेतारी' (सर्वहारा) के भी कितने ही लेख इसमें उद्धृत किए जाते थे।

'बरद्जोला' का सातवाँ अंक 1 सितम्बर, 1904 को निकला था, जिसमें साथी कोबा ने सबसे पहले जातियों की समस्या का प्रश्न छेड़ा था। लेख का नाम था–'जातीय प्रश्न के बारे में समाजवादी जनतांत्रिक दृष्टिकोण'। इस समस्या को समय-समय पर और भी विकसित करके, अन्त में व्यावहारिक रूप से उसका हल निकालने का काम कोबा ने ही स्तालिन के रूप में किया। अपने इस लेख में कोबा ने मध्यवर्ग के राष्ट्रीयतावादी तथा मेन्शेविकों के इस विचार का खंडन किया कि मजदूरों के संगठन जातीयता पर निर्भर होने चाहिए और ऊपर से उनका फैडरेशन (संघ) भर होना चाहिए। कोबा ने कहा कि सर्वहारा की विजय के लिए, जातीयता का कोई भी ख्याल किए बिना सभी कमकरों की एकता आवश्यक है, और जहाँ तक कमकरों के संगठन का सवाल है–रूसी, गुर्जी, अर्मनी, पोल, यहूदी आदि का कोई भी भेद न रख, सबका एक ही संगठन होना चाहिए। इसके

बिना, सारे रूस में सर्वहारों की जीत नहीं हो सकती। काकेशस इस विचार की परीक्षा का सबसे उपयुक्त स्थान था, जहाँ बाकू, तिफलिस, बातूम आदि में सभी जातियों के कमकर इकट्ठे काम करते थे। लेकिन साथ ही, सन् 1905 में कोबा ने यह भी स्पष्ट कर दिया कि जातियों को आत्म-निर्णय का अधिकार होना चाहिए। गुर्जी पत्र 'सकरत्वेलो' में जो वाद-विवाद चल रहा था, उसमें भाग लेते हुए कोबा ने अपने ये विचार रखे थे।

कोबा के सम्पादकत्व में निकलनेवाला 'प्रोलेतारियातिस बरद्जोला' उस समय लेनिन के 'प्रोलेतारी' के बाद, बोल्शेविकों का सबसे प्रभावशाली पत्र था।

इसी गुप्त जीवन में 4 जनवरी, 1904 को कोबा की शादी एकातेरिना स्वानिद्ज नामक एक गुर्जी तरुणी से हुई, जिससे सन् 1906 में याकोब नामक पुत्र हुआ। क्रान्तिकारी कोबा को परिवार सँभालने की फुर्सत कहाँ थी ? बीवी कुछ समय बाद तपेदिक से मर गई और याकोब के पालन-पोषण का भार नाना-नानी ने अपने ऊपर ले लिया।

सन् 1905 में, कोबा का घनिष्ठ मित्र सहकारी शाशा चुलुकिद्जे 29 वर्ष की छोटी उमर में मर गया। कोबा ने अपने मृत साथी की अन्त्येष्टि-क्रिया के समय बड़ा मार्मिक व्याख्यान दिया था। शाशा को खोनी में दफनाया गया।

3. विद्रोह की तैयारी

सन् 1904 से 1907 तक, काकेशस में बोल्शेविक आन्दोलन का संचालन कोबा के हाथ में था। इस सारे समय में उन्होंने जहाँ कमकरों में वर्ग चेतना फैलाने, उनके संगठन को मजबूत करके उनकी रोज-रोज की शिकायतों के लिए लड़ने का प्रबन्ध किया था, वहाँ अब सशस्त्र विद्रोह के लिए तैयारी करना भी जरूरी समझा। काकेशस की अवस्था के बारे में लेनिन ने उसी समय लिखा था : "इस बारे में हम (रूसी) काकेशस, पोलैंड और बाल्तिक प्रदेशों से पीछे रह गए हैं। यही वह केन्द्र है, जहाँ हमारा आन्दोलन पुराने आतंकवादी ढंग से बहुत ही आगे बढ़ चुका है, जहाँ पर विद्रोह की सबसे अच्छी तैयारी हुई है, जहाँ सर्वहारा संघर्ष का सामूहिक रूप अत्यंत स्पष्ट और शक्तिशाली दिखाई पड़ता है।"–'बरद्जोला' के 15 जुलाई, 1905 वाले अंक में 'हथियारबन्द विद्रोह और हमारे दाव-पेंच' नाम से एक लेख प्रकाशित हुआ, जिसमें यह घोषित किया गया था कि क्रांति दूर-दूर तक फैलती जा रही है। और वह समय दूर नहीं जब कि सारे रूस में वह एक ऐसे विशाल तूफान के तौर पर फूट पड़ेगी और सामने जारशाही स्वेच्छाचारिता की सारी गंदगी बह जायेगी। 'बरद्जोला' ने इस बात पर भी जोर दिया कि प्रत्येक जिले में विद्रोह की एक योजना बननी चाहिए और शत्रु के रक्षा-कवच के उस सबसे निर्बल स्थान का पता लगाना चाहिए, जहाँ से विद्रोह आरम्भ करना है। पहले से ही उस स्थान का निश्चय कर लेना चाहिए। अपनी सेनाओं को ठीक अनुपात से सारे जिले में बाँटकर रखना चाहिए और जिले की भूमि के नक्शे का सैनिक दृष्टि से अध्ययन करना चाहिए। ऐसा होने पर ही विजय निश्चित हो सकती है। 'बरद्जोला' के प्रथम अंक में ही इस तरह का लेख निकला था। उस समय काकेशस के मेन्शेविक 'सोत्सियल-देमोक्रात' (समाजवादी जनतंत्री) नाम से अपना एक पत्र निकालते थे। 'बरद्जोला' उससे लोहा लेकर मेन्शेविकों के विचारों की धज्जियाँ उड़ाता था।

अभी रूस में प्रथम क्रांति का सूत्रपात नहीं हुआ था। इसी समय 5 अक्तूबर, 1905 के अंक में 'बरद्जोला' में 'प्रतिगामिता फैल रही है' के नाम से एक लेख निकला, जिसमें बतलाया गया कि जनता की क्रांति को दबा देने के लिए जारशाही सरकार हर तरह के प्रयत्न कर रही है। सर्वहारा के लिए गोलियाँ, किसानों के लिए झूठे वादे, बड़े बुर्जुवाओं को अधिकार–यह वे हथियार हैं, जिनसे कि प्रतिगामिता अपने को हथियारबन्द कर रही है।

जार ने 17 अक्तूबर, 1905 को जो सुधारों की घोषणा प्रकाशित की थी, उसे मेन्शेविक एक भारी विजय समझते थे। कोबा ने तिफलिस में नद्जलादेवी की सभा में उसका मुँहतोड़ जवाब दिया था। सभा में उपस्थित एक लेखक ने सन् 1929 के 'कम्युनिस्ट' में, अपने संस्मरण के तौर पर इसका वर्णन किया है :

"साथी कोबा भाषण-मंच पर आये और उन्होंने लोगों से कहा–'तुम्हारी एक बुरी आदत है, जेसे मैं तुम्हारे सामने साफ-साफ कहना चाहता हूँ। चाहे कोई भी सामने आये और चाहे कुछ भी कहे, तुम बराबर दिल खोलकर ताली बजाकर उसका अभिनन्द करते हो। अगर वह कहता है–स्वतंत्रता चिरंजीव, तो तुम ताली पीटते हो, अगर वह कहता है–क्रांति चिरंजीव, तो भी तुम ताली पीटते हो; और यह बिलकुल ठीक है। लेकिन, अगर जब कोई आकर कहता है–हथियार मुर्दाबाद, तब भी तुम ताली पीट देते हो ! बिना हथियारों के क्रांति को सफल होने का अवसर कब मिल सकता है ? वह किस तरह का क्रांतिकारी है, जो चिल्लाता है–हथियार मुर्दाबाद ? जो वक्ता ऐसा कहता है, वह शायद तालस्ताय का अनुयायी हो सकता है, किन्तु क्रांतिकारी हरगिज नहीं। चाहे वह जो भी हो, वह क्रांति का शत्रु है, लोगों की स्वतंत्रता का शत्रु है !' –सभा के लोगों में खलबली-सी मच गई। लोग एक-दूसरे से पूछने लगे–'कौन है यह ? कितना कड़ा बोल रहा है ! जैसे किसी याकोबीय (पेरिस के क्रांतिकारी) की जबान हो !' कोबा आगे बोल रहे थे–'विजय प्राप्त करने के लिए, वस्तुतः हमें किस चीज की जरूरत है ? हमें तीन चीजों की जरूरत है। अच्छी तरह गाँठ बाँध लो। पहली चीज है–हथियार, दूसरी चीज है–हथियार, और तीसरी हथियार और फिर हथियार !'–चारों ओर से तालियों की गड़गड़ाहट सुनाई देने लगी, लेकिन तब तक वक्ता भाषण-मंच से जा चुका था।"

नवम्बर, 1905 में काकेशीय पार्टी संगठन का चतुर्थ बोल्शेविक सम्मेलन साथी कोबा के नेतृत्व में हुआ। उसमें बाकू, तिफलिस, गुरिया आदि के प्रतिनिधि आये थे। सम्मेलन ने हथियारबन्द विद्रोह की जबर्दस्त तैयारी का प्रस्ताव पास किया और उसके लिए संगठन की कई बातें निश्चित कीं।

दिसम्बर, 1905 में प्रथम रूसी इन्कलाब हुआ। यह महीनों से चलनेवाले सर्वहारों के संघर्षों का ही चरम रूप था। कोबा पहले से ही उसके लिए तैयारी कर रहे थे, यह हम बतला आये हैं। मेन्शेविक जगह-जगह होनेवाले कमकरों के संघर्ष को स्वतःस्फूर्त संघर्ष बतलाते थे। इसका जवाब कोबा ने 9 जनवरी, 1905 के अपने एक लेख द्वारा इस प्रकार दिया था :

"नहीं, भद्रपुरुषो, तुम्हारा यह सारा प्रयत्न व्यर्थ है ! रूसी क्रांति अनिवार्य है, इतनी ही अनिवार्य है, जैसे सूर्य का उगना। क्या तुम सूर्य को उगने से रोक सकते हो ? इस क्रांति की मुख्य सेना है–शहर और देहात के सर्वहारा; इसका झंडाबरदार समाजवादी जनतांत्रिक मजदूर दल है, तुम नहीं !…"

सन् 1905 में ही, जारशाही के विरुद्ध दो तरह के संघर्षों को लोगों ने देखा। एक था–जनवरी के आरंभ वाले खूनी इतवार का वह जुलूस, जिसमें लोग ईसा मसीह और संतों की मूर्तियाँ तथा जार की तसवीरें लिये हुए, धार्मिक भजन गाते, 'भगवान जार की रक्षा करें' कहते हुए पादरी गैपन के नेतृत्व में, जार के पास अपने दुखों की गाथा लिखकर पेश करने जा रहे थे, जिनका स्वागत जार ने गोली चलवाकर सैकड़ों निहत्थे स्त्री-पुरुषों, बाल-बच्चों का खून करके दिया। लेकिन, दिसम्बर में जारशाही के सामने दूसरी तरह के लोग आये, इनके हाथों में न मूर्तियाँ थीं और न जार के चित्र। इनके हाथों में लाल झंडे और मार्क्स तथा एंगेल्स की तसवीरें थीं। भजन और जार की मंगल-कामना की जगह, वह–'मार्सेइयेज'–वीरतापूर्ण गान तथा दूसरे क्रांतिकारी गीत गा रहे थे। वह निहत्थे नहीं थे। उनके हाथों में हथियार थे, यद्यपि अभी उनकी संख्या बहुत नहीं थी। पादरी गैपन नहीं, बल्कि बोल्शेविक इस संघर्ष का संचालन कर रहे थे। मॉस्को की इस प्रथम क्रांति के असफल होने का एक कारण था–कमकरों में पूर्ण एकता का अभाव, और दूसरा कारण था–आक्रमण की नीति छोड़कर, रक्षात्मक दाव-पेंच स्वीकार करना। साथी कोबा ने भविष्य के लिए सजग करते हुए, कहा था : "विद्रोह की विजय के लिए, यह जरूरी है कि दल एकताबद्ध हो, उसके द्वारा विद्रोह का हथियारबन्द संगठन किया जाय और लड़ने में आक्रमण की नीति को अपनाया जाय।"

दिसम्बर की क्रांति को मेन्शेविक तटस्थ होकर देखते ही नहीं रहे, बल्कि उन्होंने उसे असफल करने की भी कोशिश की थी। क्रांति के विफल होने पर, वह हँसी उड़ा रहे थे। कोबा ने इस पर लिखा था : "नहीं साथियो ! सर्वहारा पराजित नहीं हुए, बल्कि कुछ समय के लिए पीछे हट आये हैं। अब वह एक नए और

यशस्वी आक्रमण के लिए तैयार हो रहे हैं। रूसी सर्वहारा अपने खून से रंगे झंडे को गिरने नहीं देंगे। वही महान् रूसी क्रांति के नेता हैं, और वही योग्य नेता बनेंगे।"

4. तमरफोर्स (दिसम्बर, सन् 1905)

क्रांति विफल होने के बाद, फिनलैंड के तमरफोर्स नामक स्थान पर दिसम्बर में अखिल रूसी बोलूशेविक कान्फरेंस हुई, जिसमें साथी कोबा काकेशस के प्रतिनिधि बनकर गए थे। यहीं पर, उनकी लेनिन से पहले-पहल मुलाकात हुई। पहले ही दोनों एक-दूसरे से काफी परिचित हो चुके थे, इसलिए यह कोई आश्चर्य की बात नहीं यदि कोबा को पार्टी के एक प्रमुख नेता के तौर पर लेनिन के साथ विषय-निर्धारिणी में काम करने का मौका मिला। लेनिन के साथ इस पहली मुलाकात के बारे में, बाद में स्तालिन ने अपने एक भाषण में कहा था :

" सन् 1905 के दिसम्बर में तमरफोर्स (फिनलैंड) की बोल्शेविक कान्फ्रेंस में, मैं पहले-पहल लेनिन से मिला। मैं आशा करता था कि हमारी पार्टी के पहाड़ी गरुड़, महान् पुरुष को राजनीतिक तौर से ही महान् नहीं, बल्कि शारीरिक तौर से भी मैं महान् देखूँगा। मैंने अपनी कल्पना में लेनिन को एक विशालकाय, प्रभावशाली, भव्य रूप में चित्रित किया था, लेकिन मुझे निराशा हुई जब देखा कि वह एक साधारण-सा दिखाई देनेवाला आदमी है, जो कद में भी औसत से कम है, और मामूली आदमियों से किसी बात में भिन्नता नहीं रखता।

" एक महान् पुरुष के बारे में यह सामान्य धारणा है कि वह सभा में देर से आये, जिसमें लोग साँस रोके उसके प्रकट होने की प्रतीक्षा करें। फिर महान् पुरुष के प्रवेश करने से पहले तुरन्त सजग कर दिया जाय : 'हुश ! चुप ! वह आ रहा है।' मुझे यह प्रक्रिया बेकार-सी नहीं जान पड़ती थी; क्योंकि इससे प्रभाव पड़ता है, लोगों में सम्मान का भाव आता है। लेकिन, मुझे उस वक्त यह जानकर निराश होना पड़ा कि लेनिन प्रतिनिधियों के आने से पहले ही कान्फरेंस में पहुँचकर, किसी एक कोने में बैठ, बिना किसी दिखावे के बातचीत कर रहे थे। बिलकुल मामूली-सी बातचीत थी, और सो भी कान्फरेंस के अत्यंत मामूली प्रतिनिधियों के साथ। मैं आप लोगों से छिपाना नहीं चाहता कि उस समय लेनिन की यह बात मुझे कुछ आवश्यक नियमों के उल्लंघन जैसी मालूम हुई थी।

" कुछ समय बाद ही, मुझे पता लगा कि लेनिन की यह सादगी, यह शालीनता, दिखावा न करने का प्रयत्न या कम से कम अपने को विशेषता न देना, अपने ऊँचे पद का प्रकाशन न करना नई जनता, सीधी-सादी और साधारण जनता, बिलकुल मामूली मानवों के नये नेता के लिए सबसे महत्त्व की चीज थी।

" लेनिन ने कान्फरेंस में जो भाषण दिये थे, वह भी उल्लेखनीय थे। उनमें से एक राजनीतिक परिस्थिति के बारे में था, दूसरा किसानों की समस्या के बारे में। दुर्भाग्य से उनको लिखकर सुरक्षित नहीं रखा गया। सारी कान्फरेंस में उन्होंने भारी उत्साह का संचार कर दिया था। "

दिसम्बर की क्रान्ति के असफल होने से, लेनिन और बोल्शेविकों के निश्चय में कोई कमजोरी नहीं आई। कोबा ने भी इसको उसी रूप में लिया। फिर, आगे की तैयारी होने लगी।

4
बोल्शेविक क्रान्ति से पहिले

1. गुप्त प्रेस (सन् 1906-17)

हम यह बतला चुके हैं कि क्रांतिकारी प्रचार के लिए साथी कोबा ने तिफलिस के अवलाबार मुहल्ले में एक

गुप्त प्रेस स्थापित किया था। तीन वर्ष से अधिक समय तक, इससे तरह-तरह का क्रांतिकारी साहित्य रूसी, गुर्जी, अर्मनी, आजुर्बाइजानी आदि भाषाओं में निकलकर काकेशस में ही नहीं, बल्कि रूस के और स्थानों में भी फैलता रहा। पुलिस बराबर खोज करती रही, लेकिन उसका पता न पा सकी। भारतीय क्रांतिकारियों के बारे में, यशपाल ने अपने संस्मरण में एक जगह लिखा है कि पहले पूर्ण एकाग्रता और उत्साह के साथ किसी बड़े काम को करने के लिए क्रांतिकारियों का उत्साह दो हफ्ते से ज्यादा नहीं रहता था, पीछे भगतसिंह और उनके साथी जब केवल आतंकवाद को अपर्याप्त समझ उसमें कुछ समाजवादी भावनाओं को भी लाने लगे, तो भी उसकी आयु दो महीने से ज्यादा नहीं हुई। लेकिन, बोल्शेविकों को केवल विचारों के आधार पर क्रांति नहीं लानी थी, उनका आधार था—सब तरह से शोषित-उत्पीड़ित सर्वहारा वर्ग, जो नए आर्थिक सम्बन्धों के साथ कल-कारखानों में संगठित हो रहा था। वहाँ दिन-दिन के संघर्ष उनमें स्फूर्ति और साहस पैदा कर रहे थे। कासिम जैसा अनपढ़ किसान भी बोल्शेविकों के प्रभाव में आकर, खतरे की कोई परवाह न कर उनकी सहायता के लिए तैयार था। कासिम अपने सोसो पर कितना विश्वास करता था, यह हम देख आये हैं। एक दिन उसने सोसो से कहा था : 'मैं बहुत ही अकिंचन और बहुत ही सताया हुआ आदमी हूँ। मैं कभी किसी मुखिया के सामने नहीं बोला, लेकिन मैं तुम्हें पहचानता हूँ...मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि तुम कौन हो, तुम 'नपि अफिर कात्जा' (एक अबखासी वीर) हो। मालूम होता है कि तुम कड़क और बिजली से पैदा हुए हो; तुम बड़े सूक्ष्म हो; तुम्हारे पास एक महान् हृदय और एक महान् आत्मा है।'

कासिम और उसके बेटे स्वयं सोसो और उसके गुप्त प्रेस को अपने घर में लिवा ले गए थे, और पीछे लम्बा बुर्का ओढ़कर कई भारी-भरकम औरतों को भी वह अपने गाँव में ले गये। यह सोसो के साथी थे, जो छापने का काम करने आये थे। गाँव के लोग प्रेस चलने की आवाज सुनकर तरह-तरह की कल्पनाएँ करते। बेचारे प्रेस और क्रान्तिकारी साहित्य के बारे में क्या समझें ? एक शाम को, उनमें से कुछ ने सोसो से आकर कहा : "तुम जाली सिक्का बना रहे हो, न ? और यह शायद हमारे लिए कोई उतना बुरा पेशा भी नहीं है; क्योंकि हम गरीब हैं। तुम अपने सिक्कों को कब चलाओगे ?" सोसो ने इसका जवाब देते हुए कहा : "मैं जाली सिक्का नहीं बना रहा हूँ, बल्कि तुम्हारी तकलीफों को छापकर दुनिया को बतला रहा हूँ।" इस पर गाँव के किसान संतुष्ट हो, सहायता करने का वचन देकर चले गये। सोसो के इस प्रेस को जमीन में गाड़े कई साल हो गए थे, जब सन् 1917 में कासिम के उसी बगीचे में क्रांतिकारी सैनिक आकर ठहरे, तब कासिम ने खोदकर प्रेस के अलग-अलग पुर्जों को निकाल, उन्हें जोड़ दिया। फिर, उसने अपने लड़के से कहा : "देख, यह वही चीज है, जिससे इन्कलाब बनाया गया था।"

लेकिन, अवलाबार का प्रेस अधिक छोटा और खिलौना जैसा प्रेस नहीं था। जारशाही को बड़ी प्रसन्नता हुई, जब अवलाबार के प्रेस का पता लग गया। पुलिस ने छापा मारकर, उसे अपने हाथ में कर लिया। उसी समय, 16 अप्रैल, 1906 को काकेशस के पूँजीवादी पत्र 'कफकाज' ने लिखा था :

> "**गुप्त छापाखाना**—15 अप्रैल, शनिवार को अवलाबार मुहल्ले में द. रोश्तोमश्विली के एक अलग-थलग निर्जन घर के हाते में, छूत की बीमारियों के नगर-अस्पताल से डेढ़-दो सौ कदम पर एक सत्तर फुट गहरे कुएँ का पता लगा, जिसके भीतर रस्सी और गराड़ी की सहायता से उतरा जा सकता था। पचास फुट नीचे उतर, एक गलियारा दूसरे कुएँ की ओर जाता था, जिसमें पैंतीस फुट ऊँची एक सीढ़ी लगी हुई थी, जिसके द्वारा घर के तहखाने के नीचे एक मकान में पहुँचा जा सकता था। इस मकान में सब सामान सहित एक पूरा छापाखाना निकला, जिसमें रूसी, गुर्जी, अर्मनी अक्षरों के बीस केस थे; हैंड-प्रेस था, जिसका मूल्य डेढ़-दो हजार रूबल हो सकता है। साथ ही, वहाँ भिन्न-भिन्न प्रकार के एसिड, भड़कनेवाले गैलातिन तथा बम बनाने की दूसरी चीजें भी थीं। गैरकानूनी साहित्य, भिन्न-भिन्न पलटनों और सरकारी संस्थाओं की मुहरें तो भारी मात्रा में थीं ही, साथ ही साढ़े सात सेर डायनामाइट वाली एक भयंकर मशीन भी थी। वहाँ रोशनी एसिटिलेन वाली लालटेनों से होती थी और बिजली के सिगनल का भी प्रबन्ध था। घर के हाते के एक झोंपड़े में तीन सजीव बम, कितने ही बमों के खोल और उसी तरह की दूसरी चीजें

पाई गईं। 'एलवा' (बिजली) पत्र के सम्पादकीय आफिस में मीटिंग करते हुए चौबीस आदमियों को पकड़कर, उन पर इस कांड में शामिल होने का दोष लगाया गया। 'एलवा' के आफिस की तलाशी लेने पर गैरकानूनी साहित्य और पुस्तिकाओं के भारी परिमाण में प्राप्त होने के अतिरिक्त बीस के करीब सादे पासपोर्ट के फार्म भी मिले। संपादकीय आफिस को बन्द करके, मुहर लगा दी गई। गुप्त छापाखाने से भिन्न-भिन्न दिशाओं में जानेवाले बिजली के तार प्राप्त हुए हैं, इसलिए घर के नीचे की भूमि से और चीजों का पता लगाने के लिए खुदाई की गई। छापाखाने से निकली चीजों को पाँच गाड़ियों पर लादकर हटाया गया। इसी कांड के सम्बन्ध में, उसी शाम को तीन और आदमी गिरफ्तार हुए। गिरफ्तार किए हुए आदमी जब जेल की ओर ले जाये जा रहे थे, तो वह मार्सेइयेज गा रहे थे।"

अवलाबार प्रेस का यह रूप बतलाता है कि सोसो या कोबा जारशाही पुलिस से आँख बचाकर काम करने में कितने चतुर और सफल थे।

2. चौथी पार्टी कान्फरेंस (सन् 1906)

सन् 1906 के अप्रैल महीने में, स्टॉकहोम (स्वीडन) में पार्टी की चौथी कान्फरेंस हुई, जिसमें कोबा, इवानोविच के नाम से काकेशीय प्रतिनिधि के तौर पर शामिल हुए। लेनिन ने इस कान्फरेंस में मेनूशेविकों के खिलाफ युद्ध घोषित कर दिया था। इवानोविच ने अपने भाषण में मेनूशेविकों को लक्ष्य कर कहा : "चाहे तो सर्वहारा का नायकत्व स्वीकार करो, या जनतांत्रिक पूँजीवादियों का—पार्टी के सामने यह सीधा प्रश्न है, जिसके सम्बन्ध में हमारा मतभेद है।" इस कांग्रेस में प्लेखानोफ, अखेलरोद्, मर्तोफ जैसे चोटी के मेनूशेविक नेता भाग ले रहे थे। लेनिन ने उनकी युक्तियों में से एक-एक की धज्जी उड़ाई थी। लेनिन भी नाटकीय ढंग की भाषण-कला पसन्द नहीं करते थे। वह भाषण नहीं दे रहे थे, बल्कि बोल रहे थे। वह लोगों की भावुकता को अपील नहीं करते थे, बल्कि अपनी बातों की सच्चाई को हृदयंगत कराते थे। स्टॉकहोम कान्फरेंस में बोलशेविकों को सफलता नहीं मिली और बहुमत मेनूशेविकों के पक्ष में रहा। इस समय के लेनिन के मनोभाव के बारे में, स्तालिन ने बाद में एक बार कहा था :

> "...इस समय पहली बार, मैंने लेनिन को पराजित के रूप में देखा था। लेकिन, वह हताश नहीं थे। वह भविष्य की विजय की बात सोच रहे थे। दूसरे बोलूशेविक कुछ हतोत्साहित से हो गए थे। लेनिन ने उन्हें प्रोत्साहन देते हुए कहा : 'साथियो, मत घबराओ, हम अवश्य विजयी होंगे; क्योंकि हम ही ठीक रास्ते पर हैं।' लेनिन ने उस समय कुड़बुड़ाते हुए बुद्धिवादियों के प्रति घृणा, अपनी शक्ति और विजय में हमारे अन्दर विश्वास पैदा किया। हम सोच रहे थे, बोलूशेविकों की पराजय केवल क्षणिक है। अन्त में हम अवश्य विजयी रहेंगे।"

चौथी कान्फरेंस एकता की कान्फरेंस कही जाती थी, क्योंकि स्टॉकहोम में बोलूशेविक और मेनूशेविक दोनों ही उसमें सम्मिलित हुए थे और दोनों पक्षों को एक करने का प्रयत्न भी किया गया था। एकता की कान्फरेंस कही जाने पर भी, वह एकता लाने में सफल नहीं हुई। मेनूशेविक क्रान्तिकारी नहीं, बल्कि सुधारवादी थे। वह अपने विचारों पर दृढ़ थे। उन्होंने अपने स्वतंत्र संगठनों को भी बरकरार रखा। अवसरवादी मेनूशेविकों से क्रान्तिकारी बोलूशेविकों की कैसे पट सकती थी ? इसलिए, रूसी समाजवादी जनतांत्रिक मजदूर दल की एकता केवल कागजी ही रह गई।

कोबा कान्फरेंस से काकेशस लौट आये। वहाँ बोल्शेविकों के संगठन को मजबूत करने के लिए, उन्होंने एक बोल्शेविक क्षेत्रीय ब्यूरो की स्थापना की। इस ब्यूरो के द्वारा इस बात के लिए जबर्दस्त आंदोलन शुरू किया गया कि पार्टी की एक नई कांग्रेस बुलाई जाय, जिसमें क्रान्तिकारी मार्क्सवाद के आधार पर वास्तविक एकता कायम की जाय। इसका फल जहाँ काकेशस में पार्टी का प्रचार और संगठन मजबूत करने के रूप में हुआ, वहीं पाँचवीं कांग्रेस का आयोजन भी निश्चित हुआ।

3. पाँचवीं (लंदन) कांग्रेस (सन् 1907)

सन् 1907 की अप्रैल और मई में होनेवाली इस कांग्रेस में, साथी कोबा ने काकेशस के प्रतिनिधि के तौर पर भाग लिया। कोबा के अनुसार, इस कांग्रेस का सबसे महत्त्वपूर्ण काम यह हुआ कि इसने फूट नहीं बल्कि पार्टी की अटूट एकता का काम किया। सारे रूस के प्रमुख कार्यकर्ताओं को एक अटूट पार्टी में लाकर एक कर दिया। यह सच्चे अर्थों में अखिल रूस की एकता कांग्रेस थी। लंदन कांग्रेस उस समय हुई थी, जबकि जारशाही जनता के अधिकारों पर भारी प्रहार करने के लिए तैयार हो रही थी। इसके बाद ही, 3 जून को जारशाही ने द्वितीय राज्य-दूमा (संसद) को तोड़ दिया और अब वह बोल्शेविक संगठनों को चूर्ण-विचूर्ण करने में लगी हुई थी। सन् 1905 की क्रांति विफल होने के बाद, जो निर्बलता और निराशा कमकरों में आई थी, उससे फायदा उठाकर जारशाही अपने विरोधियों का नामोनिशान मिटा देना चाहती थी। चारों तरफ आतंक का राज्य था। लेकिन यही समय था, जब साथी कोबा ने लंदन से लौटकर बाकू को अड्डा बना, मजदूरों में जोर-शोर से काम करना शुरू किया।

इस कठिन परिस्थिति में, बाकू में सफलतापूर्वक काम करना कोबा जैसे योग्य संगठक और प्रचारक का ही काम था। कोबा ने अपने कामों से बाकू के कमकरों को बोल्शेविकों की ओर करने में सफलता पाई। बाकू का तेल-क्षेत्र बहुत दूर तक फैला हुआ था और दुनिया का एक सबसे बड़ा तेल-क्षेत्र होने से, उसका औद्योगिक महत्त्व भी बहुत था। बालाखानी, बीबीऐबत, चोर्नीगोरद और बेलीगोरद के तेल-क्षेत्रों में यहाँ के मजदूर बिखरे हुए थे। मेन्शेविकों का उन पर काफी प्रभाव था। लेकिन, उन्हें कोबा जैसे विरोधी का सामना करना पड़ रहा था, जो हर तरह से मेन्शेविकों के रास्ते को गलत साबित कर मजूरों को अपनी ओर खींच रहे थे। कोबा ने 'बाकिन्स्की प्रोलेतारी', 'गुदांक' और 'बाकिन्स्की रबोची' नाम के गैरकानूनी पत्र निकाले। इसी समय, तृतीय राज्य दूमा (पार्लामैन्ट) का निर्वाचन हो रहा था। निर्वाचन में भाग लेते हुए कोबा ने 'तृतीय राज्य दूमा के समाजवादी जनतांत्रिक डेपुटियों का कर्तव्य-पत्र' के नाम से एक लेख लिखा, जिसे 22 सितम्बर को बाकू में मजदूर प्रतिनिधियों की सभा ने स्वीकार किया। कोबा के सहायक उस समय सेर्गो ओर्जोनीकिद्ज़े, क्लिमेन्त वोरोशिलोफ (वर्तमान राष्ट्रप्रति), अल्योशा जापरिद्ज़े, स्त्वोपानौ, सुरेन स्पन्दरयान, स्तेपन शौम्यान, बान्या फयोलेतोफ, व. प. नोगिन (मकर), वत्सक, अलीलयेफ, ग्वंचलाद्ज़े अपोसतोल, रादुस जैकोविच (ईगर) जैसे लगन वाले कर्मी थे। बोरोशिलोफ उस समय बीबीऐबत जिले के तेल-मजदूर-संघ का मंत्री था और ओलियम कंपनी में ब्वाइलर बनाने का काम करता था। बाकू में मंताशेफ, लियानोजोफ जैसे रूसी और राथचाइल्ड तथा नोबल जैसे विदेशी करोड़पति पूँजीपतियों से मुकाबला था। बाकू के अलग-अलग तेल-क्षेत्रों की अलग-अलग कमिटियाँ थीं, जिनके ऊपर बाकू कमेटी तथा उसके कार्यकारिणी ब्यूरो को कोबा की अध्यक्षता में कायम किया गया था। बाकू के मुसलमान मजदूर सबसे पिछड़े हुए थे, जिनको बहकाने के लिए पूँजीपति और जारशाही मुल्लों और प्रतिगामी शक्तियों की सहायता लेती थी। उनमें काम करने के लिए, उम्मत (गुर्म्मेत) के नाम से एक नया संगठन कायम किया गया, जिसका काम था मुसलमान कमकरों में तत्परता के साथ काम करना, उन्हें मुल्लों और सामन्तों के पंजे से निकालना। बीबीऐबत जिले को मेन्शेविकों का गढ़ समझा जाता था, इसलिए कोबा ने उसकी ओर विशेष तौर से ध्यान दिया। उन्होंने अपने एक लेख 'कान्फ्रेंस और कमकर' में बाकू के काम के बारे में लिखा था :

> "सन् 1903 की वसंत में, बाकू की पहली साधारण हड़ताल ने जुलाई की हड़तालों के आरंभ और रूस के दक्षिणी नगरों के प्रदर्शनों की सूचना दी। सन् 1904 के नवम्बर-दिसम्बर की आम हड़ताल ने सारे रूस में होनेवाले जनवरी-फरवरी के यशस्वी संघर्षों का सिगनल दिया। सन् 1905 में, बाकू के सर्वहारा अर्मनी-तुर्क-हत्याकांड के प्रभाव से जल्दी मुक्त हो, अब संघर्ष में भाग लेने लगे, जिसका प्रभाव सारे काकेशस में एक भारी जोश के रूप में देखा जा रहा था। 1905 की क्रांति असफल होने के बाद भी, सन् 1906 में बाकू का जोश कम नहीं हुआ, मई-दिवस का उत्सव यहाँ रूस की और सभी जगहों से अच्छी तरह प्रति वर्ष मनाया जाता था, जिसे देखकर दूसरे नगरों को डाह ही सकती थी।"

लंदन कांग्रेस के बाद ही, मेन्शेविक जारशाही के अत्याचार से घबराकर बाकू के कमकरों के सभी लड़ाकू संगठनों को ठप्प करने लगे, जिसका बोल्शेविकों ने जबर्दस्त विरोध किया और उन संगठनों को फिर से स्थापित किया। अगस्त सन् 1907 में, कोबा ने एक पुस्तक प्रकाशित की, जिस पर संगठन-कमीशन का हस्ताक्षर था। इस संगठन-कमीशन में बालाखान, बीबीऐबत, चोन्मीगोरद, बेलीगोरद, मॉस्कोइ जिलों के संगठन ही नहीं, बल्कि रूसी समाजवादी जनतांत्रिक मजदूर पाटी के बाकू संगठनों वाला मुस्लिम उम्मत गुट भी शामिल था। इस लेख में मजदूरों से मेन्शेविक केन्द्र के नेतृत्व को छोड़ देने की अपील की गई थी, जिसका जनता से कोई सम्बन्ध नहीं था और जो अवसरवादी नीति का अनुसरण करता था और बाकू के सर्वहारा के विचारों और भावों का प्रतिनिधित्व नहीं करता था। मेन्शेविकों का यह केन्द्र सचमुच ही बाकू के सर्वहारों का विश्वासपात्र नहीं हो सकता था; क्योंकि वह उनके संघर्षों में नेतृत्व करने के लिए तैयार न हो, उन्हें पीछे खींचना चाहता था। जार ने राज्य दूमा को तोड़ दिया, तो उसके विरुद्ध भी बाकू में कुछ करना जरूरी समझा गया। वहाँ के रेलवे कमकरों तथा बाकू के चार तेल-क्षेत्रों के मजदूरों का सम्मेलन किया गया। आपस में विचार-विनिमय के लिए भिन्न-भिन्न पार्टियों के प्रतिनिधियों का एक और भी सम्मेलन हुआ। तृतीय राज्य दूमा के चुनावों का प्रश्न था। अतः इसके लिए आजुर्बाइजानी (तुर्की) और अर्मनी भाषाओं में भी पुस्तिकाएँ निकाली गईं, जिनमें दशनकों (अर्मनी राष्ट्रवादियों), बंद (यहूदी मजदूर सभा) और मेन्शेविकों की अवसरवादिता की पोल खोली गई। इसी समय, मॉस्को और पीतरबुर्ग की तरह, बाकू में भी एक बोल्शेविक केन्द्र स्थापित करने का सवाल उठा, जिसका सभी जगह से समर्थन हुआ; और वह बोल्शेविक केन्द्र स्थापित हो गया। इस केन्द्र ने बाकू के मजदूर-आन्दोलन को बढ़ाने में बड़ा काम किया।

अगस्त सन् 1907 में, दूमा के निर्वाचन के सम्बन्ध में कई जिला-कमेटियों की तरफ से एक पुस्तिका प्रकाशित की गई, जिसमें बतलाया गया—यद्यपि जारशाही दूमा में सच्चे जनप्रतिनिधियों का पहुँचना असम्भव है, लेकिन तो भी कमकरों को वोट की पेटियों से फायदा उठा, जारशाही सरकार की चालाकियों का भंडाफोड़ करना चाहिए, जिसमें वह मजदूरों को धोखा देने के अपने लक्ष्य में सफल न हो सके। निर्वाचन में बोल्शेविक इसलिए भाग ले रहे हैं कि जारशाही सरकार को हटाकर, जनतांत्रिक गणराज्य स्थापित करने के लिए, एक नए संघर्ष का आरम्भ किया जाय। यद्यपि प्रथम क्रांति के बाद, दूसरे स्थानों में आन्दोलन का जोर बहुत घट गया था, लेकिन जहाँ तक बाकू का सम्बन्ध था, वहाँ के कमकर अक्तूबर की महान् क्रांति तक बोल्शेविकों के पथ-प्रदर्शन में उसी तरह डटे रहे।

22 अगस्त, 1907 को 'गुदांक' में साथी कोबा का एक लेख 'समाजवादी जनतंत्रियों में' छपा। अवसाद और निराशा के समय अराजकतावाद बुद्धिजीवियों पर काफी प्रभाव डालने लगा था और यह बीमारी घटने की जगह बढ़ती ही जा रही थी। चोर-डाकू भी इससे लाभ उठाने के लिए तैयार थे। कोबा ने अपने लेख के कमकरों और किसानों से कहा कि अपने आदर्श के लिए, श्रमिक जनता की मुक्ति के लिए अपने को संगठित करो और अराजकतावाद के दलदल में मत फँसो।

कोबा जाति के गुर्जी थे, जो धर्मतः ईसाई होते थे; और बाकू आजुर्बाइजान के मुसलिम इलाके में है। भारतीय पाठकों को यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि निरक्षर और पिछड़ी जनता कितनी आसानी से उन मुल्लों के हाथ में फँस जाती है, जो हाकिमों के इशारों पर नाचते हैं। यह साथी कोबा के अनुकरणीय कार्य का चमत्कार ही था कि एशियाई और रूसी, मुसलमान और ईसाई, सब एक ही तरह से उन्हें अपना नेता मानते थे। बीबीऐबत जिले में, नैप्थलन कंपनी के तेल के कुएँ थे। वहाँ खानलार नामक एक आजुर्बाइजानी मजदूर कर्मठ कार्यकर्ता था। उसके कारण मुसलमानों में प्रतिगामियों की नहीं चलती थी। मालिक भयभीत थे। इसलिए उनके इशारे पर, जाफर और अबजरबेक दो गुंडों ने खानलार को मार डाला। कोबा ने सितम्बर, सन् 1907 में 'खानलार पर जो बीती, वह हम पर बीती' के नाम से एक पर्चा निकाला, जिसमें लिखा था :

"हत्यारों ने खानलार के ऊपर गोली नहीं चलाई, बल्कि हमारे ऊपर, आगे बढ़े हुए कार्यकर्ताओं के ऊपर चलाई है। हमारे ऊपर गोली चलाकर, पूँजीपतियों के गुर्गे हमारे अग्रगामी साथियों की पाँति

को छिन्न-भिन्न करना चाहते हैं, जिसमें आगे चलकर वह बाकू के सर्वहारों की गर्दनें और कड़ाई के साथ रस्सी से कस सकें।"

पर्चे में हड़ताल करने तथा खानलार के हत्यारों को काम से निकाल देने की माँग पेश की गई थी। दो हफ्ते की हड़ताल घोषित कर दी गई, और उसके बारे में एक पर्चा निकालकर कहा गया : 'हम सारी दुनिया को दिखला देंगे कि खानलार अकेला नहीं था, और हर एक आगे बढ़े हुए कार्यकर्ता के पीछे हजारों की सेना तैयार है, जो अपने साथियों और नेताओं की रक्षा करने के लिए मजबूती से खड़ी है।'

'गुदांक' के पाँचवें अंक (14 अक्तूबर, 1907) में साथी कोबा ने खानलार की शहादत पर एक टिप्पणी लिखी थी, जिसमें शहीद के प्रति श्रद्धांजलि देते हुए कहा था : 'उसके हृदय में सर्वहारा की आत्मा की आग और भाव-प्रवणता थी; उसके दिल में किसानों का दुख और कष्ट भरा हुआ था।' खानलार के अतिरिक्त, दुश्मनों ने रेलवे और दूसरे कारखानों में काम करनेवाले तुछकिन, लीसैनिन और दूसरे कितने ही सजग मजदूरों की हत्या करवाई थी। इस पर बोलूशेविक बाकू कमेटी ने कमकरों को आत्म-रक्षा के लिए संगठित होने तथा जरूरी सामान जमा करने के लिए आदेश दिया।

तीसरी राज्य दूमा तोड़ देने के बाद, चौथी राज्य दूमा निर्वाचित हुई, जिसके पथ-प्रदर्शन के लिए भी साथी कोबा ने एक निर्देश-पत्र तैयार किया। इस पत्र में लंदन कांग्रेस की कार्रवाइयों के बारे में भी बतलाया गया था। 22 सितम्बर, 1907 को बाकू में कमकर प्रतिनिधियों ने इस पत्र का समर्थन किया। इसमें कहा गया था कि राज्य दूमा में समाजवादी जनतांत्रिक डेपुटियों को अपना अलग गुट कायम करना चाहिए, और एक खास पार्टी के प्रतिनिधि होने के कारण उन्हें अपनी पार्टी और उसके नेतृत्व के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रखना चाहिए। इस गुट को सर्वहारा वर्ग के हित के लिए एक विशेष कार्यक्रम पर चलना; पार्लामेण्ट का उपयोग कादेतों (राजवादियों) और मेनूशेविकों से भिन्न तौर पर करना है। कमकरों के प्रतिनिधि दूमा में विधान बनाने के अभिप्राय से नहीं जा रहे हैं, बल्कि अपने विचारों के प्रचार और क्रांतिकारी शक्तियों को मजबूत करने के लिए, उसे मंच के तौर पर इस्तेमाल करने जा रहे हैं। यह बातें तृतीय दूमा के डेपुटियों के पथ-प्रदर्शन के लिए कही गई थीं। तृतीय राज्य दूमा के उद्घाटन के समय, नवम्बर सन् 1907 में एक पर्चा निकालकर कहा गया कि कमकरों का गुट दूमा में तभी सफलतापूर्वक काम कर सकता है, जब कि वह लोगों को यह सूचित करता रहे कि दूमा में क्या हो रहा है और साथ-साथ, पार्टी-संगठन लोगों को समझाते रहें कि शांतिपूर्ण, अहिंसात्मक ढंग और पार्लामेण्टी तरीके से अपनी माँगें पूरी कराने की आशा केवल दुराशा मात्र है।

सन् 1908 के आरंभ में, मिस्तरीखानों के फोरमैनों की परिषद् और तेल-उद्योग के कमकरों तथा आफिस के नौकरों की परिषद् के प्रतिनिधियों की प्रथम मीटिंग, मालिकों के साथ होनेवाली कान्फरेंस में अपने प्रतिनिधि चुनने के लिए हुई। इस कान्फरेंस ने बतला दिया कि बाकू के कमकरों में बोलूशेविक पार्टी का कितना अधिक प्रभाव है। जब मालिकों ने देखा कि ऐसे प्रतिनिधियों के साथ बातचीत करके वह अपना मतलब पूरा नहीं कर सकते, तो उन्होंने दूसरा रुख लिया और मजदूरों पर आक्रमण करने एवं कारखानों के फोरमैनों को—जो कमकरों पर बहुत प्रभाव रखते थे—नौकरी से निकालना शुरू किया; और कमकरों में जातीय वैमनस्य पैदा करने के लिए भी अपने गुर्गों को भेजा। इस पर 'गुदांक' के 22वें अंक, (9 मार्च, 1908) में साथी कोबा ने 'तेल के मालिक पैंतरा बदल रहे हैं' के नाम से एक लेख लिखा, जिसमें कमकरों को तेल-कमकर-संघ के साथ जुट जाने और छुट-पुट हड़ताल करके अपनी शक्ति को व्यर्थ ही बरबाद न करने के लिए कहा गया। बाकू कमेटी ने पहले पूँजीपतियों द्वारा प्रस्तावित कान्फरेंस में सम्मिलित होने का विरोध किया और इसके लिए 29 सितम्बर, 1907 के 'गुदांक' में कोबा के नाम से एक लेख 'कान्फरेंस का बायकाट करो' निकाला, जिसमें साथी कोबा ने कहा था :

"कान्फरेंस में शामिल होने या बायकाट करने का प्रश्न, हमारे लिए कोई सिद्धान्त का प्रश्न नहीं है, बल्कि यह व्यावहारिक उपयोगिता की बात है। हम एक ही बार, सदा के लिए सभी कान्फरेंसों के बायकाट का निश्चय नहीं कर सकते...और, न हम एक बार ही सदा के लिए कान्फरेंस में सम्मिलित

होने का निर्णय ही कर सकते हैं, जैसा कि कादेत-मनोभाव रखनेवाले लोग कर लेते हैं। हमें सम्मिलित होने या बायकाट करने पर, यथार्थ घटनाओं और केवल घटनाओं की दृष्टि से ही विचार करना होगा।"

मार्क्सवाद का अत्यंत शीघ्रता से दुनिया, उसकी चीजों और घटनाओं के क्षण-क्षण बदलते रहने का सिद्धान्त केवल दार्शनिक उड़ान भरने के लिए नहीं है, बल्कि हर क्षण सजग रहकर, घटनाओं के अनुसार व्यवहार के परिवर्तन के लिए नये रास्ते ढूँढ़ निकालने में उसकी मदद लेनी जरूरी है। लेनिन और स्तालिन हवाई विचारक नहीं थे। वह दार्शनिकों और वेदांतियों की तरह, दुनिया की व्याख्या नहीं करते फिरे, बल्कि दुखों और अत्याचारों की मारी दुनिया को बदलने के लिए, उन्होंने उसका इस्तेमाल किया। इसी पर आरूढ़ रहकर, स्तालिन ने अपने जीवन के अन्त तक भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में सफलता पाई। प्रतिभा के साथ, क्रांतिकारी दर्शन का व्यवहार में ठीक से उपयोग करना उनकी सफलता का गुर था।

मालिकों ने कमकरों पर हल्ला बोल दिया। उनके आक्रमणों को मेन्शेविक और अराजकतावादी ही अनदेखा कर सकते थे। बोल्शेविकों ने सन् 1908 की जनवरी और फरवरी में कितनी ही हड़तालों से इसका मुँहतोड़ जवाब दिया, जिनमें से कई बहुत सफल रहीं। इनके कारण, बोल्शेविकों का प्रभाव और भी बढ़ा। इससे पहले सन् 1907 की शरद में, कान्फरेंस में सम्मिलित होने के लिए बोल्शेविकों ने निम्न शर्तें पेश की थीं :

(1) अपनी माँगों पर बहस करने का अधिकार हो,

(2) अपनी भावी फोरमैन-परिषद् की मीटिंगें करने का अधिकार हो,

(3) अपनी मजदूर सभाओं की सेवाओं से लाभ उठाने का अधिकार हो,

(4) कान्फरेंस की तारीख चुनने का अधिकार हो।

'समाजवादी-क्रांतिकारी', मेन्शेविक और 'दशनक' (अर्मनी राष्ट्रवादी) बोल्शेविकों के प्रस्ताव का विरोध करते थे। मेन्शेविकों ने तो यह भी कहा था कि बिना किसी गारंटी या शर्त के कान्फरेंस में शामिल होना चाहिए। उनका नारा था–'चाहे जिस मूल्य पर भी–कान्फरेंस !'। समाजवादी क्रांतिकारियों और दशनकों को मजदूरों से कोई आशा नहीं थी, इसलिए उन्होंने नारा लगाया–'चाहे जिस मूल्य पर भी–बायकाट !'। इसके लिए कमकरों में प्रचार और मत-संग्रह किया गया, जिसका परिणाम निम्न प्रकार का हुआ : "पैंतीस हजार कमकरों के पास कनवैसिंग की गई, जिनमें से आठ हजार ने समाजवादी क्रांतिकारियों और दशनकों (बिना शर्त बायकाट) के पक्ष में वोट दिया, आठ हजार ने मेन्शेविकों (बिना शर्त कान्फरेंस) का समर्थन किया, जब कि उन्नीस हजार कमकरों ने बोल्शेविकों की माँग (गारंटी के साथ कान्फरेंस) का समर्थन किया।"

साथी कोबा के नेतृत्व में, सन् 1907 के अन्त में ये सब घटनाएँ बाकू में उस वक्त घटित हो रही थीं, जब राजनीतिक अवसाद से लाभ उठाकर, जारशाह कसाई स्तोलिपिन सारे देश में आतंक फैलाये हुए था और लोग सहमे-सहमे-से मालूम होते थे।

बाकू के कमकर और उनके नेता देशव्यापी क्रूर अत्याचारों से आँखें नहीं मूँद सकते थे। इसीलिए, 15 अप्रैल, 1908 के 'बाकिन्स्की प्रोलेतारी' (बाकू सर्वहारा) में 'वर्तमान प्रतिगामिता और हमारा कर्तव्य' के नाम से एक लेख निकला जिसमें स्तोलिपिनीय अत्याचारों की काली छाया के सिर पर मँडराने से सजग करते हुए कहा गया कि मजूरों ने भारी विजय प्राप्त की है, लेकिन वह उसके फल को अपने हाथों में नहीं रख सके। इसका कारण यही था कि किसान अपने सर्वहारा भाइयों की सहायता के लिए आगे नहीं बढ़े। जालिम सरकार ने इससे फायदा उठाकर, सर्वहारा के ऊपर आक्रमण कर दिया। पिछले अक्तूबर में जो अधिकार मजूरों ने प्राप्त किए थे, उन्हें वह एक-एक करके छीन रही थी। छापे की स्वतंत्रता और संगठन की स्वतंत्रता को छीनती जा रही थी। साथी कोबा ने बतलाया कि यह स्थिति अधिक समय तक नहीं रह सकती। जागरूक शक्तियाँ जारशाही को मनमानी करने के लिए बहुत दिनों तक नहीं रह सकतीं। पुराने और नए रूस का निर्णायक संघर्ष अवश्य होके रहेगा। क्रांति अनिवार्य है। इससे मालूम होगा कि बोल्शेविक सर्वहारा वर्ग के अंतिम संघर्ष में, किसानों के सहयोग की कितनी आवश्यकता समझते थे। 'बाकिन्स्की प्रोलेतारी' ने इसीलिए गाँवों के सर्वहारों तथा अर्ध-सर्वहारों, गरीब किसानों में भी आन्दोलन और संगठन करने पर जोर दिया।

कमकरों का यह रुख देखकर, कान्फरेंस को रोक दिया गया। इस पर, जुलाई सन् 1908 में 'बाकिन्स्की प्रोलेतारी' के पाँचवें अंक के परिशिष्ट के रूप में, कोबा के नाम से 'कान्फरेंस और कमकर' लेख निकला। इस लेख में कहा गया था : "मिस्टर जुंनूकोव्स्की, तिफलिस का पुराना भांड घोषित कर रहा है कि तमाशा खतम हो गया। पूँजीपतियों का खुशामदी कुत्ता, मिस्टर करामुर्जा उस पर ताली पीट रहा है। पर्दा गिरता है और हम पुराना परिचित दृश्य देखते हैं–तेल-मालिक और कमकर नए संघर्ष के लिए, नए तूफान के लिए, अपनी पुरानी जगह पर खड़े प्रतीक्षा कर रहें हैं।" लेख में कान्फरेंस के इतिहास का वर्णन करते हुए बतलाया गया, कि मालिक इसीलिए कान्फरेंस नहीं करना चाहते क्योंकि वह जानते हैं कि मजूर उनकी बात नहीं मानेंगे, बल्कि बोल्शेविकों के कहने पर चलेंगे।

हम देख चुके हैं कि सन् 1907 के बाद, कोबा और उसके बोल्शेविक साथी बाकू के कमकरों को कितना संगठित किए हुए थे और किस तरह पूँजीपतियों और जारशाही की एक भी नहीं चलने देते थे। जारशाही परेशान थी और वह साथी कोबा को पकड़ने के लिए बेकरार थी। साथी कोबा को जिस तरह अपने बाकू के काम में बरोशिलोफ, ओर्योनिकिद्जे जैसे बोल्शेविक क्रांतिकारियों का सहयोग मिला था, उसी तरह खानलार, महमदेफ, अजीजबेक्रोफ, क्याजीमामेत और दूसरे वर्गचेतन कमकरों का भी पूर्ण सहयोग प्राप्त था। इसी कारण, बाकू बोल्शेविकों का गढ़ बन गया। अपने इस जीवन पर दृष्टिपात करते हुए, स्तालिन ने बाद में कहा था :

> "तेल-उद्योग के कमकरों में तीन वर्ष के क्रान्तिकारी काम ने मुझे व्यावहारिक योद्धा, व्यावहारिक स्थानीय नेता के रूप में फौलादी (दृढ़) बना दिया। बाकू के वत्सैक, सरातो वेत्सक और फयेलेतोफ जैसे आगे बढ़े हुए मजूरों तथा तेल-स्वामियों और कमकरों के बीच चलनेवाले कठोर संघर्ष के तूफान ने मुझे पहले-पहल सिखलाया कि मजूरों के एक भारी समूह के नेतृत्व करने का क्या मतलब होता है। यह बाकू ही था, जहाँ इस प्रकार मैंने द्वितीय क्रांतिकारी अग्नि-अभिषेक प्राप्त किया।"

4. द्वितीय गिरफ्तारी (सन् 1908)

अन्त में, 25 मार्च, 1908 को पुलिस साथी कोबा को गिरफ्तार करने में सफल हुई। वह उन्हें बेलोफ जेल ले गई। वहाँ भी बोलूशेविक कोबा विश्राम करने नहीं गए थे। उन्होंने बाहर के साथियों से सम्बन्ध स्थापित किया। उनके लेख बराबर जेल से बाहर जाकर, कमकरों के पत्रों में छपते रहे। 'बाकिन्स्की प्रोलेतारी' के द्वितीय अंक की प्रायः सारी लेख-सामग्री उन्होंने जेल से तैयार करके भेजी थी। राजनीतिक बंदी इस तरुण बोलूशेविक का बड़ा सम्मान करते थे। उन्होंने वहाँ पर भी समाजवादी क्रांतिकारियों और मेनूशेविकों के साथ क्रांतिकारी संघर्ष के सिद्धांत और व्यवहार पर कई शास्त्रार्थ किए। स्तोलिपिन काल-रात्रि की काली छाया जेलों पर भी पूरी तरह पड़ रही थी। जेल के अधिकारी राजबंदियों के साथ और भी कठोरता का व्यवहार करते थे। जेल में कोबा की कलम ही नहीं चल रही थी, न वह केवल बहस-मुबाहिसों में ही भाग लेते थे, बल्कि वहाँ भी वह जारशाही के साथ संघर्ष कर रहे थे। जेल के अधिकारियों ने राजनीतिक बन्दियों को पाठ पढ़ाने का निश्चय कर लिया था। उन्होंने दबाने के लिए 'साल्यान्स्क' पलटन बुलाई गई। दो पाँति में सैनिक खड़े कर दिए गये और, राजनीतिक बंदियों को उनके बीच से जाने के लिए मजबूर किया गया। बीच से गुजरते समय सैनिक बंदूकों के कुंदों से उनको खूब पीटते थे। कोबा कुंदों की वर्षा के बीच से सिर को सीधा किए हुए निकले। उनके सिर पर मार्क्स की पोथी थी। मार्क्स की पोथी के साथ सिर का सीधा रखना भी कोबा की दृढ़ता और मार्क्सवाद की अंतिम विजय पर उनके विश्वास को प्रकट कर रहा था।

आठ महीने जेल में रखने के बाद, मुकदमे का फैसला हुआ और कोबा को सोल्वीचेगोदूस्क (बोलोग्दा) में दो वर्ष निर्वासन का दंड मिला। लेकिन, तरुण गुर्जी बोल्शेविक कोबा अपनी सारी मियाद पूरी करने के लिए कब तैयार थे। उन्हें चुपचाप निर्वासित जीवन बिताने के लिए फुर्सत कहाँ थी ? 24 जून, 1909 को वह सोल्वीचेगोदूस्क से गायब हो, बाकू पहुँच गए। अपने निर्भीक और निःस्वार्थ नेता को छिपाने के लिए, बाकू

के सारे कमकर तैयार थे। नरमदली मेन्शेविक और दूसरे भी जारशाही के अत्याचार से परास्त हो, अपना सब काम छोड़कर मुँह छिपाते थे और लेनिन का कड़ा विरोध कर रहे थे। इसी समय, लेनिन के समर्थन में ओगनेस तोतोम्यान्त्स ने 'काकेशस के पत्र' के नाम से कई महत्त्वपूर्ण पत्र बोल्शेविक पार्टी के केन्द्रीय पत्रों में, साथ ही कई लेख 'बाकिन्स्की प्रोलेतारी' में भी लिखे। लौटकर, ओगनेस के नाम से कोबा ने फिर गुप्त छापाखाने को संगठित किया। छापाखना उनका तोपखाना था। यद्यपि इस समय तक जारशाही के अत्याचारों के कारण शिथिलता आ गई थी, लेकिन ओगनेस ने बाकू कमिटी को फिर कर्मशील बनाया, फिर प्रचारकों की टुकड़ियाँ तैयार हुईं। इसी टुकड़ी में ओगनेस भी सम्मिलित थे। वह बाकू से बाहर भी जाते रहते थे। बाकू के तेल-मजूरों के अतिरिक्त रेलवे मजदूरों, चेरनीगोरद और बेलीगोरद के कमकरों में ही नहीं, बल्कि जहाजी मजदूरों में भी उन्होंने काम शुरू कर दिया।—बाकू कास्पियन समुद्र के किनारे एक महत्त्वपूर्ण बन्दरगाह है, जहाँ काम करनेवाले मल्लाहों और दूसरे कमकरों को ओगनेस कैसे छोड़ सकते थे ? ओगनेस, कोबा या सोसो ने जिस क्षेत्र में भी कदम रखा, उसी में अपना कमाल दिखाया।

ओगनेस के कामों ने फिर जागृति पैदा कर दी। जनवरी सन् 1910 में, फिर जागृति के लक्षण दिखलाई पड़ने लगे। इसी समय, 'तिफलिसिकी प्रोलेतारी' पत्र के प्रथम अंक में ओगनेस ने 'हम नये संघर्ष के आरंभ में हैं' आदि लेख लिखे। ओगनेस बुद्धिजीवियों के मुरझाये चेहरों से भविष्य की परख नहीं किया करते थे, इसके लिए वह कमकरों और साधारण जनता को, उनकी दिन पर दिन खराब होती भौतिक-आर्थिक परिस्थिति को, जो उग्र होकर सर्वहारों को कभी चुप नहीं रहने दे सकती थी—देखते थे। ओगनेस के 'काकेशस के पत्र', केन्द्रीय पत्र 'सोत्सियल देमोक्रात' (समाजवादी जनतंत्री) के 26 फरवरी, 1910 के अंक तथा 'बहस का पर्चा' के 24 जून, 1910 के अंक में निकले; जिनमें काकेशस में क्या हो रहा है, इसका सजीव वर्णन किया गया था। इनमें मेन्शेविकों और दूसरे अवसरवादियों का भी पर्दाफाश किया गया था, जिसके कारण वह बहुत चिढ़ गए थे। इस समय, पत्र-व्यवहार द्वारा ओगनेस का लेनिन के साथ बराबर सम्बन्ध था।

5. तृतीय गिरफ्तारी (सन् 1910)

इस बार बाहर आकर, उन्हें बहुत समय तक काम करने का मौका नहीं मिला। आठ महीने के बाद बाकू में ही, 23 मार्च, 1910 को ओगनेस को फिर गिरफ्तार कर लिया गया। 23 सितम्बर, 1910 तक जेल में रखकर उन्हें फिर सोलविचेगोद्स्क में निर्वासित कर दिया गया, जहाँ 6 जुलाई, 1911 तक रहना पड़ा।

इस निर्वासित जीवन को ओगनेस जिस घर में बिता रहे थे, वहाँ दूसरे राजनीतिक निर्वासित बराबर आया करते थे। पुलिस ने रिपोर्ट दी थी कि यहाँ बराबर क्रांतिकारी प्रचार और व्याख्यान होते रहते हैं। पुलिस की आँख बचाकर यहाँ से भी ओगनेस लेनिन के पास पत्र लिखते रहे, जिसमें प्लेखानोफ के समर्थकों के रवैये का खंडन करते हुए, वह त्रॉत्स्की के सिद्धांतहीन गुट पर भी छींटे कसते थे। इसी समय, उन्होंने राय दी कि एक कानूनी समाचार-पत्र निकालने की बड़ी आवश्यकता है। थोड़े ही दिनों बाद, 'ज्येज्दा' (तारा) के नाम से ऐसा पत्र निकलने भी लगा। उन्होंने रूस में प्रमुख सदस्यों की एक केन्द्रीय समिति तथा उसके ब्यूरो के स्थापित करने के लिए कहा, जिससे देश में पार्टी का काम ठीक से संचालित किया जा सके। अपने बारे में लिखते हुए, उन्होंने कहा था : "अभी मुझे छः महीने और बिताने हैं। इस मियाद के खतम होते ही, मैं आपकी सेवा के लिए बिलकुल तैयार हूँ। अगर लोगों ने बहुत जरूरत समझी, तो मैं तुरन्त केंचुल छोड़ सकता हूँ।"—स्तालिन केंचुल छोड़ने में कितने उस्ताद थे, हम यह देख चुके हैं।

जून, सन् 1911 में बोल्शेविक केन्द्रीय समिति की जो कान्फरेंस हुई थी, उसमें स्तालिन को अखिल रूसी कान्फरेंस के बुलाने के लिए बनाई गई संगठन-कमिटी का सदस्य चुना गया था।

यह हम बतला चुके हैं कि योरदानिया जैसे तरुण एक समय मार्क्सवाद के वाहक रह चुके थे। उनके द्वारा काकेशस में नए विचारों का काफी प्रचार हुआ था। लेकिन, बाद में वह फिसल गए। योरदानिया जैसे आदमियों की किसी देश में भी कमी नहीं है। हमारे देश में भी ऐसे चेहरे दिखाई पड़ते हैं, जो समाजवाद के

नाम की रटन इसीलिए लगाया करते हैं कि देश में समाजवाद न आने पाये, जिसमें पूँजीवादी जोंकें अपने काम को निर्द्वन्द्वतापूर्वक करती रहें। यदि कुछ पूँजीपति इन योरदानियों को हाथों पर उठाये फिरें, उनके पत्र उनकी तारीफ करते न थकें, तो आश्चर्य की क्या बात है ! पंजाबी कहावत के अनुसार, वह जानते ही हैं कि यह 'साड्डा बन्दा' है। एक बड़ा गुर्जी पूँजीपति द. सर्जिशविली मर गया। उसको दफन करने के दिन 26 जून, 1911 को मेन्शेविक नेता उसके गुणों का बखान करते नहीं अघाते थे। गुर्जी मेन्शेविकों के जयप्रकाश–योरदानिया ने इस यूरोपीय कारखाने के शिक्षित मालिक के भव्य संस्मरण में एक लेख लिखा था :

"हाल ही में, निष्ठुर मृत्यु ने हमें दुर्लभ गुर्जी–द. ज. सरजिशविली से वंचित कर दिया।··· स्वर्गीय पुरुष एक उद्योगपति के नाम से विख्यात था, लेकिन यह बहुत कम लोग जानते हैं कि यूरोपीय ढंग का वह प्रथम उद्योगपति था। उसने एक बार मुझसे कहा था : 'हमारे देश में भौतिक तौर पर अपने पैरों पर खड़ा होना, आर्थिक सफलता प्राप्त करना मुश्किल है, जैसे ही कोई आदमी कुछ जखीरा जमा कर पाता है, वैसे ही सैकड़ों भूखे-नंगे उसके पीछे पड़ जाते हैं और तब तक चैन नहीं लेने देते, जब तक कि उसका सफाया नहीं कर देते।' ऐसी स्थिति में भूखों की पलटन से अपने को बचाये रख, अपनी सम्पत्ति का ठीक तौर से इस्तेमाल वही कर सकता है, जिसमें दुर्लभ प्रतिभा और बड़ी व्यावहारिक बुद्धि हो। अगर स्वर्गीय दाविद सच्चा गुर्जी उद्योगपति होता, तो गुर्जी तरीके से वह कभी का अपने को खतम कर चुका होता और उसकी सम्पत्ति का कुछ भी बाकी न रहता। एक यूरोपियन ही इस तरह की व्यवस्था कर सकता है, जिससे वह हर एक को संतुष्ट भी रखे, और साथ ही अपने धन को बरबाद न करे।··· एक बार हम ठंडी सड़क पर एक दूसरे के सामने से गुजर रहे थे। उसने मुझे दूर से पुकारकर कहा : 'देखो तो तुम्हारा बर्न्स्टाइन (एक अवसरवादी समाजवादी) क्या लिख रहा है ? घर चलो और इसे लेकर पढ़ो'–पुस्तक अभी-अभी जर्मनी में प्रकाशित हुई थी और तिफलिस में नहीं मिल सकती थी। दूसरे दिन, मैंने दाविद के पास जाकर उस पुस्तक को लिया। 'इसके बारे में तुम्हारी क्या राय है ?'–मैंने उससे पूछा।–'मेरी क्या राय है ? जर्मनी से यह भयंकर बम है। सारी किताब में, मैं एक स्थल को पसन्द करता हूँ, जिसमें वह कहता है कि आन्दोलन सब कुछ है, अन्तिम लक्ष्य कुछ भी नहीं है।'

" एक बार मैंने स्वर्गीय पुरुष को उसके आफिस में बहुत ही चिंतित देखा। वह निराशावादी नहीं था। मैंने पूछा–'क्या बात है ?' –उसने कहना शुरू किया : 'हमारा कोई भविष्य नहीं है। तुम दावा करते हो, और कहते हो कि निम्न-मध्य वर्ग बड़े मध्य वर्ग को पैदा करेगा, लेकिन मैं उसे नहीं देख पा रहा हूँ। ऐसा होने के लिए भी, हमें नागरिक भावों और संस्कृति की आवश्यकता है, किन्तु हम मामूली योकेल हैं।··स्वर्गीय दाविद चकाचौंध में पड़े बच्चे की तरह, क्रांति में बह नहीं गया था, लेकिन साथ ही वह प्रतिगामिता का दास भी नहीं बना था।··· आज हम इस अद्वितीय पुरुष को कब्र में रख रहे हैं। वह उसी खुले दिल और दिमाग के साथ मरा, जिस तरह कि जीता रहा। विदा, प्रिय दाविद ! तुम्हारी महान स्मृति सदा हमारे साथ रहेगी। "

यह एक समाजवादी द्वारा गुर्जी के एक बड़े सेठ की स्तुति थी, एक करुणापूर्ण मर्सिया था। सेठ सर्जिशविली के पास तिफलिस, किजलयर, एरिवान (अर्मनी), कलाराश (बेसराबिया) और ग्योकचे में शराब के अच्छे-अच्छे कारखाने थे, जहाँ अंगूरी तथा दूसरी मदिराएँ बनती थीं। जारशाही सरकार ने अपने परम भक्त सेठ को 1 जनवरी, 1902 को 'व्यापार कॉन्सलर' की उपाधि दी थी, जो हमारे यहाँ के 'सर' के आसपास की थी; क्योंकि वह देश के उद्योग और व्यापार के क्षेत्र में उपयोगी काम कर रहा था ! यह कोई आश्चर्य नहीं था कि योरदानिया बोल्शेविक क्रांति के बाद भी, पश्चिमी साम्राज्यवादियों का परम विश्वासपात्र बना रहा और जब गुर्जी में मेन्शेविकों की सरकार नहीं टिक सकी, तो उसे बड़े सम्मान के साथ उन्होंने अपने यहाँ बुलाकर रखा।

पार्टी की कान्फरेंस प्राग में होने जा रही थी। ऐसे समय में, स्तालिन बलोगंदा में रहना कैसे पसन्द करते ! उन्होंने 6 सितम्बर, 1911 को चुपचाप वहाँ से निकलकर, रूस की राजधानी पुतरबुर्ग का रास्ता लिया और वहाँ पहुँचकर, वह पार्टी के संगठन को मजबूत करने के काम में लग गये। अब काकेशस नहीं, रूस की

राजधानी में उनका काम करना यही बतलाता है कि स्तालिन प्रादेशिक नेता न रहकर, सारे देश के नेताओं में से थे, और उसी के अनुरूप उन्हें अपनी प्रतिभा और अनुभव का प्रयोग करना था। इसी समय से, स्तालिन के जीवन का पीतरबुर्ग वाला अध्याय शुरू हुआ। लेकिन, जान पड़ता है पीतरबुर्ग में अभी उनके लिए काकेशस जैसे सुरक्षित स्थान तैयार नहीं हो पाये थे। साथ ही, वह मेन्शेविकों की अकर्मण्यता फैलानेवाली नीति के जबर्दस्त आलोचक थे, जिससे वह भी पुलिस की तरह ही, उनके पीछे पड़े हुए थे।

6. चतुर्थ गिरफ्तारी (सन् 1911)

9 सितम्बर, 1911 को पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार कर, फिर बलोगदा भेज दिया, लेकिन फरवरी सन् 1912 में स्तालिन ने फिर केंचुल छोड़ दी।

पुलिस स्तालिन के बारे में कैसे विचार रखती थी, इसके कुछ उदाहरण उसके रेकार्डों से लीजिए :

क. "30 सितम्बर की पुलिस-विभाग की माँग के अनुसार, काकेशीय जिला-खुफिया पुलिस-विभाग के अध्यक्ष की सूचना के अनुसार, साइबेरिया से भागनेवाला सोसो वही है, जो कोबा के नाम से संगठन कर रहा है; और ओगनेस वर्तानोफ, तोतोम्यन्तस भी उसी का नाम है। वह तिफलिस नगर का निवासी है, जिसके नाम से इस साल 12 मई को तिफलिस पुलिस सुपरिंटेंडेंट द्वारा एक साल के लिए दिया गया 982 नम्बर का पासपोर्ट उसके पास है।··· तोतोम्यन्तस, कोबा तथा मलोच्नी नाम का आदमी रूसी समाजवादी जनतांत्रिक मजूर पार्टी के बाकू-संगठन का मुखिया है, बीबी ऐबत जिले के दो दूसरे सदस्य भी उसी संगठन से सम्बन्धित हैं। उन पर गुप्त रूप से लगातार, और कभी-कभी खुले तौर से भी, निगाह रखी जाती है। संगठन तोड़ने के लिए जो कदम उठाया जाये, उसमें यह भी आयेंगे।"

ख. "जुगशविली रूसी समाजवादी जनतांत्रिक मजूर पार्टी की बाकू कमेटी का एक मेम्बर है। उसे पार्टी संगठन में कोबा के नाम से पुकारा जाता है।···शासकीय दंडों के होते हुए भी, वह अपने कामों में बड़ी दृढ़ता से लगा हुआ है और क्रांतिकारी संगठनों में सदा उसका प्रमुख स्थान रहा है। वह अपने निर्वासन-स्थान से दो बार भाग चुका है और उसे राज्य की ओर से जो दंड दिए गए थे, उनमें से उसने एक को भी पूरा नहीं किया। इसलिए, मैं और कड़ा दण्ड देने की सिफारिश करूँगा। उसे पाँच वर्ष के लिए साइबेरिया के सबसे दूर वाले जिले में निर्वासित कर देना चाहिए।—24 मार्च, 1910 कप्तान गलिम्तोव्स्की।"

ग. "24 मार्च, 1910 को कप्तान मर्तिनोफ रिपोर्ट देता है कि रूसी समाजवादी जनतांत्रिक मजदूर पार्टी की बाकू कमिटी के संगठन में कोबा के नाम से ज्ञात तथा पार्टी का अत्यन्त कर्मठ नेता गिरफ्तार कर लिया गया।"

घ. "17 मई 1912 को काकेशीय जिला खुफिया पुलिस-विभाग ने पीतरबुर्ग के पुलिस विभाग के डाइरेक्टर को लिखा था : 'सोसो बिसारियोनोविच जुगशविली नाम के, तिफलिस प्रदेश के दीदीलियो गाँव के एक किसान का नकली नाम है, जिसे पार्टी में कोबा कहा जाता है, सन् 1902 से ही, एक समाजवादी जनतांत्रिक कर्मठ कार्यकर्ता के नाम से प्रसिद्ध है। सन् 1902 में, तिफलिस के रू. स. ज. म. पार्टी के गुप्त चक्र के मुकदमे में अभियुक्त के तौर पर पूछताछ के लिए, उसे तिफलिस प्रदेश के पुलिस विभाग के सामने लाया गया। इस अपराध में उसे पुलिस की खुली निगरानी में तीन वर्ष के लिए पूर्वी साइबेरिया में निर्वासित कर दिया गया जहाँ से वह भाग निकला। पुलिस-विभाग ने उसकी गिरफ्तारी के लिए विज्ञापन निकाला। बाद में, जुगशविली भिन्न-भिन्न समयों में बातूम, तिफलिस और बाकू के समाजवादी जनतांत्रिक संगठनों का नेता होकर, काम करता रहा। कई बार उसकी तलाशी और गिरफ्तारी हुई, लेकिन वह हवालात से निकलकर निर्वासन से बचता-छिपता फिरा। इस समय, पुलिस-विभाग के 15 अप्रैल, 1922 के सर्कुलर के अनुसार, गिरफ्तारी के लिए उसकी माँग है। 6 तारीख को जिले के अफसर ने जो सूचना दी है, उससे पता लगता है कि जुगशविली हाल ही में तिफलिस नगर में था। इसी समय, बाकू के गुप्त

खुफिया-विभाग के मुखिया ने गुप्त रूप से सूचना दी है कि कोबा रूसी केन्द्रीय समिति में नियुक्त किया गया है··· और, 30 मार्च को पीतरबुर्ग के लिए रवाना हो गया है। इसके बारे में लेफ्टिनेंट कर्नल मर्तिनोफ ने 6 अप्रैल को तत्रभवान् राज्यपाल तथा पीतरबुर्ग-खुफिया पुलिस-विभाग के मुखिया को भी उसी दिन सूचित किया।"

जारशाही पुलिस की इन रिपोर्टों से भी स्तालिन का एक विशेष रूप प्रकट होता है।

जनवरी, सन् 1912 में बोल्शेविक पार्टी की एक बड़ी कान्फरेंस प्राग में होनेवाली थी। स्तालिन उसके महत्त्व को अच्छी तरह समझते थे। मेन्शेविकों और दूसरे अवसरवादियों से सम्बन्ध रखने से अब कोई फायदा नहीं था। पीछे स्तालिन ने अपने एक व्याख्यान में इस कांग्रेस के बारे में कहा था :

> "सबको पता है कि यह कान्फरेंस हमारी पार्टी के इतिहास में भारी महत्त्व रखती है, क्योंकि इसी ने बोल्शेविकों और मेन्शेविकों के बीच सीमा-रेखा खींची, और सारे देश के बोल्शेविक संगठनों को एक संयुक्त बोल्शेविक पार्टी के रूप में परिणत कर दिया था।"

लेनिन को यह देखकर बड़ी प्रसन्नता हुई कि पार्टी से मेन्शेविक निकाल दिए गए। उन्होंने गोर्की को लिखा था :

> "आखिर दिवालियों, कमीनों की सारी कोशिशों पर भी हमें पार्टी और उसकी केन्द्रीय समिति को फिर से मजबूत करने में सफलता मिली। मुझे आशा है कि तुम इस पर हमारी ही तरह प्रसन्न होगे।"

इस कान्फरेंस में स्तालिन उपस्थित नहीं हो सके, लेकिन तब भी उन्हें पार्टी के रूसी ब्यूरो का सदस्य बनाया गया। केन्द्रीय कमेटी में निर्वाचित हो जाने के बाद, अब निर्वासित की स्थिति में और रहना उनके लिए ठीक नहीं था, और स्तालिन को तुरन्त 'केंचुल छोड़ने' की आवश्यकता थी। वह सेर्गी ओर्योनिछीदूज के साथ बलोगदा से 26 फरवरी, 1912 को भाग निकले। कितने ही जिलों में पार्टी संगठन को मजबूत करते हुए, अन्त में वह पीतरबुर्ग में उसी समय लौटे जब कि साइबेरिया की लेना सुवर्ण-खान में जारशाही ने मजदूरों के साथ खून की होली खेली थी। 'ज्वेज्दा' ने इसी समय लेना-कांड पर स्तालिन का एक लेख छापा था, जिसकी कुछ पंक्तियाँ थीं :

> "लेना-हत्याकांड ने अकर्मण्यता की बर्फ को तोड़ दिया और जन-आन्दोलन की भागीरथी बह निकली; बर्फ टूट गई।··· वर्तमान शासन के सारे पाप, दुराचार तथा चिरकाल से उत्पीड़ित रूस के सारे दुर्भाग्य जिस एक बात पर केन्द्रित हो गए हैं, वह है लेना-कांड। इसीलिए यह लेना-गोलीकांड ही था, जिसने हड़तालों और प्रदर्शनों के एक संकेत का काम किया।"

7. पाँचवीं गिरफ्तारी (अप्रैल सन् 1912)

स्तालिन और लेनिन काफी समय से पार्टी के एक केन्द्रीय मुख-पत्र की बड़ी आवश्यकता अनुभव कर रहे थे। बोल्शेविक देपुती जहाँ दूमा को अपने विचारों के प्रचार के लिए एक भाषण-मंच के तौर पर इस्तेमाल कर रहे थे, वहाँ एक ऐसे शक्तिशाली दैनिक पत्र की भी आवश्यकता थी। यह काम 'ज्वेज्दा' नहीं कर सकता था। स्तालिन ने अब केंचुल बदलकर, ऐसे पत्र के निकालने की तैयारी में अपनी पूरी शक्ति का उपयोग किया। 22 अप्रैल, 1912 को 'प्राव्दा' (सत्य) का प्रथम अंक निकला। लेकिन, उसी दिन किसी भेदिये ने पुलिस को खबर कर दी और फिर जारशाही स्तालिन को गिरफ्तार करने में सफल हो गई। 'प्राव्दा' का प्रकाशन क्रांतिकारी आन्दोलन के नए उत्थान के साथ-साथ हुआ। पुराने पंचांग के अनुसार यद्यपि प्रकाशन का दिन 22 अप्रैल था, लेकिन जब क्रांति के बाद, दुनिया के और भागों में प्रचलित पंचांग को सोवियत सरकार ने स्वीकार कर लिया, तो 'प्राव्दा' का प्रकाशन-दिवस 5 मई हो गया। आज भी, 5 मई को कमकर-प्रेस-दिवस के नाम से उसे मनाया जाता है। साथी स्तालिन ने 'प्राव्दा' की दसवीं वर्षगाँठ के समय लिखा था : "सन् 1912 में 'प्राव्दा' का निकालना, सन् 1917 में बोल्शेविक विजय की आधारशिला का रखना था।"

अबकी बार उन्हें गिरफ्तार कर, जारशाही ने कई महीनों तक जेल में बन्द रखकर तीन वर्ष के लिए

एक बहुत दूर के स्थान नरिम में निर्वासित कर दिया। नरिम पश्चिमी साइबेरिया में बहुत ठंडे स्थान पर अवस्थित था। लेकिन ठंडा हो या गरम, स्तालिन को इतनी फुर्सत कहाँ थी कि वहाँ पड़े रहते। लेना-गोलीकांड ने बर्फ तोड़ दी थी, क्रांति-धारा बह निकली थी, और उस धारा को गम्भीर और शक्तिशाली बनाने में इस गुर्जी तरुण को योग देना था। इसीलिए, 2 जुलाई, 1912 को तीन वर्ष का निर्वासन-दंड पाकर भी वह नरिम में दो ही महीने रहे। 1 सितम्बर, 1912 को नरिम से लुप्त हो वह फिर अपने कार्यक्षेत्र में पहुँच गए। लेनिन विदेश में थे, पर मानो बेतार के सम्बन्ध द्वारा वह रूस के भीतर होनेवाली हर एक घटना को जानते हुए वहाँ की क्रांति की धारा का संचालन कर रहे थे, स्तालिन को लेनिन की ओर से रूस के भीतर रहकर काम करना था। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है, और इसे ठकुरसुहाती कहना सिर्फ अपने को धोखा देना है कि स्तालिन का लेनिन से कभी भी मतभेद नहीं हुआ। वस्तुतः मतभेद वहाँ होता है, जहाँ पुस्तकी ज्ञान और केवल दिमागी कसरत काम करती है, लेकिन जहाँ घटना और वास्तविकता की व्यावहारिक कसौटी पर कसकर एक-एक कदम आगे रखना हो, वहाँ मतभेद उसी तरह आवश्यक नहीं होते, जैसे कि सच्चे वैज्ञानिक आविष्कारों में। एक प्रयोगशाला में एक वैज्ञानिक जो कोई नई खोज करता है, उसी को जब दूसरे वैज्ञानिक अपनी-अपनी प्रयोगशालाओं में भी पाते हैं, तभी तो उसे वैज्ञानिक सत्य कहा जाता है। मार्क्स, ऐंगल्स, लेनिन और स्तालिन ने साम्यवादी विचारधारा और क्रांतिकारी सिद्धांतों को कोरे दिमाग से नहीं निकाला था, बल्कि यथार्थ की कसौटी पर कसा जाकर ही, उनका वाद वैज्ञानिक सत्य बना।

ध्रुवकक्षीय रेखा के बहुत भीतर सुदूर साइबेरिया के बादाइबो (लेना) स्थान में जारशाही ने गोलियाँ चलाईं, जिसने सारे रूस को हिला दिया। इसके विरोध में देश में हड़तालों की बाढ़ आ गई। पीतरबुर्ग के सर्वहारा अपने क्षोभ-प्रदर्शन के लिए सड़कों पर निकल आये। 'ज्वेज्दा' ने इस समय की स्थिति के बारे में लिखा था : "हम सजीव हैं, अटूट शक्ति भरी आग हमारे लाल खून को खौला रही है।"

ऐसी परिस्थिति में, स्तालिन का साइबेरिया से भागकर पीतरबुर्ग पहुँचना बड़े काम की बात थी। बोल्शेविक पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के एक मेम्बर तथा केन्द्रीय मुख-पत्र 'प्राव्दा' के सम्पादक के तौर पर, अब वह बड़ी लगन के साथ काम करने लगे। इसी समय तीसरी राज्य दूमा का चुनाव होनेवाला था, जिसमें स्तालिन ने पीतरबुर्ग के कमकरों के संघर्षों का संचालन करते हुए पूरी तौर से भाग लिया। लेनिन इस समय रूस से बाहर क्राकोओ में रहते थे, जहाँ उस समय बोल्शेविक पार्टी का केन्द्रीय कार्यालय था। वह गुप्त रीति से अपने संदेश और पथ-निर्देश भेजते रहते थे; और मौके पर स्तालिन के होने से निश्चिंत थे कि सब काम ठीक से होगा।

स्तालिन 'प्राव्दा' के लिए लेख लिखते थे और उसके चलाने में उन्हीं का सबसे बड़ा हाथ था। कुछ ही समय बाद, बोल्शेविक पत्रिका 'प्रोस्वेश्चेनिए' (उद्बोधन) निकली। प्रथम अंक से ही स्तालिन उसमें हाथ बँटाने लगे। सन् 1913 के उसके तीसरे, चौथे और पाँचवें अंकों में स्तालिन का एक महत्त्वपूर्ण लेख 'जातीय समस्या और समाजवादी जनतंत्रता' के नाम से प्रकाशित हुआ, जो पीछे 'मार्क्सवाद और जातीय प्रश्न' के रूप में अलग प्रकाशित हुआ। इसी पत्रिका में स्तालिन ने यह भी बताया कि क्यों राजकीय दूमा का बायकाट नहीं करना चाहिए। पुलिस जिस तरह से इस 'खतरनाक क्रांतिकारी' के पीछे हाथ धोकर पड़ी थी, उसमें कमकरों की भक्ति और दृढ़ता ही ऐसी चीज थी, जिसने स्तालिन को पुलिस के हाथों में पड़ने से बचाये रखा। अक्तूबर में, दूमा-निर्वाचन के सम्बन्ध में निर्वाचक-प्रतिनिधियों की एक कान्फरेंस हुई, जिसमें अपने कमकर देपुतियों के लिए पीतरबुर्ग के कमरों का 'आदेशपत्र' (मेंडेट) पास किया गया। आज भी मॉस्को के केन्द्रीय लेनिन म्यूजियम में लेनिन के हाथों के नोट के साथ, इस पत्र को देखा जा सकता है। आदेशपत्र को स्तालिन ने लिखा था, लेकिन लेनिन ने उसे इतना महत्त्वपूर्ण समझा कि उसके हाशिये पर नोट लिखा—'इसे अत्यन्त सावधानी से सुरक्षित रखो।' अभी बोल्शेविक क्रांति के होने में चार वर्षों की देर थी। आदेशपत्र में मजदूरों और किसानों की शोचनीय स्थिति का वर्णन करते हुए, बतलाया गया था :

"क्रांति की हराबल सेना मजदूर वर्ग है और किसान क्रांति में उसके सहायक हैं। जो संघर्ष हमारे सामने आनेवाला है, उसमें दोनों मोर्चों पर लड़ाई लड़नी होगी—सामन्तवादी नौकरशाही व्यवस्था से भी

और पुराणपंथी शासन की सहायता चाहनेवाले उदार पूँजीवाद से भी।··· हम चाहते हैं कि दूमा के मंच से समाजवादी जनतांत्रिक मंडली के सदस्यों की आवाज जोर से सुनाई दे, जो सर्वहारा के अन्तिम लक्ष्य की घोषणा करे, सन् 1905 की सारी माँगें पूर्ण करने की घोषणा करे, रूसी मजदूर वर्ग को जन आन्दोलन का नेता घोषित करे, किसानों को मजदूर वर्ग का अत्यन्त विश्वसनीय सहायक घोषित करे और उदार मध्यवर्ग को जन-स्वतंत्रता के विश्वासघाती के तौर पर घोषित करे।

" चतुर्थ दूमा में समाजवादी जनतांत्रिक गुट ऊपर के नारों के आधार पर अपने कामों में एकताबद्ध और घनिष्ठता से सम्बद्ध हो।

" विशाल जनता के साथ लगातार सम्बन्ध रखकर, शक्ति प्राप्त करे।

" वह रूस के मजदूर वर्ग के राजनीतिक संगठन के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर आगे बढ़ता चले। "

निस्सन्देह, आदेशपत्र ने भारी काम किया। निर्वाचन के परिणाम और आदेशपत्र के महत्त्व के बारे में 19 अक्तूबर, 1912 के 'प्राव्दा' में 'क. स्त.' के हस्ताक्षर से स्तालिन ने लिखा था : "आदेशपत्र देपुतियों के लिए हिदायत है। आदेशपत्र देपुती को बनाता है। आदेशपत्र के गुणों पर देपुतियों के गुण निर्भर करते हैं।"

15 नवम्बर, 1912 को चतुर्थ दूमा का उद्घाटन हुआ। राजधानी की बोल्शेविक कमिटी ने इस समय जारशाही और उसके पिट्ठुओं के बातें बनाने और उत्सव मनाने के मुकाबिले में, राजनीतिक प्रदर्शन संगठित किया। यह स्तालिन की सूझ का परिणाम था। पता लगने पर लेनिन ने लिखा : "प्रदर्शन के लिए बहुत ही अनुकूल समय चुना गया ! काली दूमा (पार्लामेण्ट) के उद्घाटन के मुकाबले में राजधानी की सड़कों पर लाल झंडों के प्रदर्शन करके सर्वहारा की एक अद्भुत सूझ का परिचय दिया गया !"

इस समय (सन् 1912 में) स्तालिन का लेनिन के साथ पत्र-व्यवहार द्वारा लगातार सम्बन्ध था, लेकिन लेनिन उनसे मिलना चाहते थे। उन्होंने बाहर आने के लिए जोर दिया। स्तालिन जैसे क्रांतिकारी के लिए जारशाही पुलिस से बचकर विदेश जाना आसान काम नहीं था। लेकिन, खुफियों की पाँत को चीरकर नवम्बर सन् 1912 में वासिली (स्तालिन) ने क्राकाओं में जाकर, लेनिन से मुलाकात की। भावी कार्यक्रम के बारे में इतनी बातें और इतने निर्णय करने थे कि वह सभी पत्र-व्यवहार से नहीं हो सकते थे। सब काम कर लेने के बाद, जब दिसम्बर में स्तालिन रूस की ओर लौटने लगे, तो अपने अद्भुत शिष्य के जीवन को हर वक्त खतरे में देखकर लेनिन ने कोशिश की कि वह कुछ दिन और बाहर रहें। लेकिन वासिली को काम पुकार रहा था, उन्हें खतरे का भय कब रोक सकता था ! भय क्या है इसे उन्होंने कभी जाना ही नहीं। लेनिन ने दूमा के छः बोल्शेविक देपुतियों को भी लेकर आने के लिए 23 दिसम्बर, 1912 के पत्र में वासिली को लिखा था : "आओ··· हमें बड़ी चिन्ता हो रही है।" कुछ ही समय बाद, वासिली फिर क्राकाओ पहुँचे और रू. स. म. दल की केन्द्रीय कमेटी तथा पार्टी कार्यकर्ताओं की एक कान्फरेंस में भाग लिया। कान्फरेंस ने वासिली को रूस की केन्द्रीय कमेटी के ब्यूरो का मेम्बर चुना। यद्यपि यह कान्फरेंस सन् 1912 में हुई थी, लेकिन इसे छिपाने के लिए फरवरी सन् 1913 की कान्फरेंस कहा गया।

जनवरी और फरवरी सन् 1913 में वासिली रूस से बाहर रहे। इसी समय, उन्होंने जातीय प्रश्न पर बहुत सामग्री जमा करके लेख लिखना शुरू किया। लेनिन ने उनके इस काम के बारे में, एक पत्र में गोर्की को लिखा था : "एक अद्भुत गुर्जी जो यहाँ बैठा एक 'प्रोस्वेश्चेनिए' के लिए लेख लिख रहा है, उसने आस्ट्रियन तथा दूसरी सभी सामग्रियों को इकट्ठा कर लिया है।"

इसी अध्ययन और परिश्रम का परिणाम था–स्तालिन की पुस्तक 'मार्क्सवाद और जातीय समस्या', जो सदा सामन्तवाद और पूँजीवाद के लिए भयंकर सिरदर्द रही है। पिछले हजारों वर्षों के अपने इतिहास में, वे कोई हल नहीं निकाल पाये। उसी असम्भव काम को अब मार्क्सवाद संभव करने जा रहा था। मार्क्सवाद ने दिशा-निर्देशन किया। स्तालिन ने अपनी प्रतिभा और उनके जातियों के सम्मिलन-स्थान काकेशस की अपनी मातृभूमि के लम्बे तजर्बे से समस्या की रग को पहचाना, और उसका हल निकाला। दुनिया में कहीं भी यदि जातीय समस्या का हल करना होगा, तो स्तालिन के बतलाये हुए रास्ते से ही करना पड़ेगा। साठ-साठ, सत्तर-सत्तर

जातियों का रूस क्यों एक ठोस पत्थर की चट्टान जैसा देश बन गया, जिससे टकराकर हिटलर और दूसरे साम्राज्यवादियों ने सिर्फ अपना सर भर फोड़ा ? इस हल का आधार था जातीय शोषण का अंत, पिछड़ी हुई जातियों को आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक तौर से अपने बराबर लाकर खड़ा करना, और उन पर पूर्ण विश्वास करते हुए, उनके अलग होने तक के अधिकार को स्वीकार करना।

अपने इस ग्रंथ को समाप्त करने के बाद, वासिली पीतरबुर्ग लौट आये। कितने ही दिनों तक लेनिन को जब उनका कुछ पता नहीं लगा, तो 8 मार्च, 1913 के अपने एक पत्र में उन्होंने पूछा : "वासिली की क्यों कोई खबर नहीं मिल रही है ? उसे क्या हुआ है ? हमें बड़ी चिंता हो रही है।" दो ही दिन बाद, फिर लेनिन ने लिखा : "उसका बहुत ध्यान रखना। वह बहुत बीमार है।"

8. छठी गिरफ्तारी (फरवरी 1913)

मालीनोव्स्की पार्टी की केन्द्रीय समिति का सदस्य और दूमा में बोल्शेविक देपुती था, जो पुलिस से मिल गया था। दूसरी पार्टियों के लिए यह उतनी आश्चर्य की बात नहीं थी; लोभ के कारण खुफिया पुलिस और विदेशी शक्तियों के हाथ में खेलनेवाले पाये ही जाते हैं। लेकिन बोल्शेविक पार्टी उन पार्टियों की तरह नहीं थी। उसमें कड़ा अनुशासन था। तो भी, जारशाही मालीनोव्स्की को कुछ चाँदी के टुकड़ों पर विश्वासघाती बनाने में सफल हुई। 'प्राव्दा' में स्तालिन के अतिरिक्त, याकोफ (स्वेर्दलोफ) और मोतो (मोलोतोफ) भी सम्पादन का काम करते थे। मालीनोव्स्की ने पहले भेद बतलाकर स्वेर्दलोफ को गिरफ्तार करवा दिया—यही स्वेर्दलोफ पीछे बोल्शेविक रूस का प्रथम राष्ट्रपति बना। मालीनोव्स्की ने थोड़े ही दिनों बाद, उस गुप्त स्थान का भी पता बतला दिया जहाँ वासिली छिपकर काम करते थे। इस प्रकार 23 फरवरी, 1913 को पुलिस पीतरबुर्ग में उन्हें गिरफ्तार करने में सफल हुई। इस गिरफ्तारी के बारे में बद्येफ ने लिखा है :

> "पुलिस बड़ी व्यग्रता के साथ गिरफ्तारी के लिए प्रतीक्षा कर रही थी कि कब वह सड़क पर आयें। जल्दी ही उसे ऐसा मौका मिल गया। 'प्राव्दा' और दूसरे क्रांतिकारी कामों की सहायता के लिए, क्लशनिकोफ-हाल में एक संगीत मंडली का अनुष्ठान किया गया था। ऐसी संगीत मंडलियों में बड़ी संख्या में मजदूर और सहानुभूति रखनेवाले बुद्धिजीवी उपस्थित हुआ करते थे। उनमें गुप्त रीति से काम करनेवाले, पार्टी मेम्बर भी आते थे, क्योंकि ऐसी भीड़ में उन लोगों से मिलकर बातचीत की जा सकती थी, जिनके साथ खुले में मिलना खतरे से खाली नहीं था। स्तालिन ने क्लशनिकोफ-हाल की संगीत मंडली में ऐसे ही काम के लिए आने का निश्चय कर लिया था, जिसका पता मालीनोव्स्की को था। उस विश्वासघाती ने पुलिस-विभाग को इसकी सूचना दे दी। हमारी आँखों के सामने ही, उसी साँझ को हाल के कमरे में स्तालिन गिरफ्तार कर लिये गए।"

इस प्रकार, छठी बार पुलिस ने स्तालिन को गिरफ्तार कर चार साल के लिए साइबेरिया के सुदूर स्थान तुरुखान्स्क में निर्वासित कर दिया। पहले उन्हें कोस्तिने की छोटी-सी बस्ती में रखा गया। लेकिन, फिर डर लगा कि वह कहीं केंचुल न बदल दें, इसलिए उन्हें वहाँ से हटा कर और उत्तर में कूरेइका बस्ती में रख दिया गया, जो कि ध्रुवकक्षीय रेखा के बिलकुल किनारे पर थी। इस समय पुलिस की कड़ाई बहुत अधिक थी। जारशाही और दूसरी साम्राज्यवादी शक्तियाँ प्रथम महायुद्ध की तैयारियाँ कर रही थीं। इसके कारण, पुलिस ऐसा मौका नहीं देना चाहती थी कि स्तालिन फिर ऐसे मौके से लाभ उठाकर क्रांति की आग भड़काने के लिए मुक्त हो जायें।

साथी स्तालिन 2 जुलाई, 1913 को निर्वासित हुए थे, और तब से 8 मार्च, 1917 तक उन्हें तुर्खन के इलाके में ही निर्वासित बन्दी का जीवन बिताना पड़ा। लेकिन, ध्रुवकक्षा के इस सुदूर स्थान में रहते हुए भी, स्तालिन चुपचाप नहीं रह सकते थे। अगले ही साल सितम्बर सन् 1914 में, प्रथम महायुद्ध घोषित हो गया और घमासान लड़ाई शुरू हो गई। द्वितीय इन्टर्नेशनल (सुधारवादी समाजवादियों की अन्तर्राष्ट्रीय संस्था) के धनी-धोरियों ने तुरन्त अपने देश के पूँजीवादियों का साथ देते हुए युद्ध का समर्थन किया, लेकिन लेनिन

साम्राज्यवादियों के बाजारों और उपनिवेशों की नोच-खसोट के लिए होनेवाली इस लड़ाई में शामिल होना, सर्वहारा वर्ग के साथ विश्वासघात समझते थे। उन्होंने तुरन्त बिना कुछ आगा-पीछा सोचे, साम्राज्यवादी युद्ध के विरुद्ध संघर्ष करने की घोषणा की। अभी स्तालिन का लेनिन के साथ पत्र-व्यवहार द्वारा सम्बन्ध स्थापित नहीं हो पाया था, और न पार्टी केन्द्र से ही कोई सम्बन्ध था, लेकिन सच्ची मार्क्सवादी अंतर्राष्ट्रीय दृष्टि होने के कारण कूरेइका में रहते हुए भी स्तालिन को अपना कर्तव्य वही सूझा, जिसे कि लेनिन ने दुनिया के सर्वहारा के सामने रखा था। उनका मार्क्सवाद का ज्ञान उथला होता, तो द्वितीय इन्टर्नेशनल वालों की तरह पथ-भ्रष्ट होने की सम्भावना होती।

कूरेइका में भी आखिर मनुष्य रहते ही थे और सभी बन्दी या निर्वासित नहीं थे। उनमें भी गरीबों और सर्वहारों की संख्या अधिक थी, जिनकी श्रद्धा और सहानुभूति स्तालिन को हमेशा मिला करती थी। उन्होंने बाहरी दुनिया से फिर सम्बन्ध स्थापित कर लिया। लेनिन के साथ चिट्ठी-पत्री होने लगी। सन् 1915 में मोनास्तिस्कोंये गाँव में बोल्शेविकों की एक सभा में उन्होंने व्याख्यान दिया। गुप्तचर मालीनोव्स्की के अतिरिक्त, पाँच और बोल्शेविक देपुती चतुर्थ राज्य दूमा के सदस्य थे, जिन पर जारशाही ने राजद्रोह का मुकदमा चलाया था। कामेनेफ ने उस समय उनके साथ विश्वासघात किया, जिसकी स्तालिन ने इस मीटिंग में बड़ी कड़ी आलोचना की थी।

बोल्शेविकों ने इसी समय 'वोप्रोसिस्त्रखोवानिया' (बीमा के प्रश्न) के नाम से एक पत्रिका निकाली, जो वैधानिक तौर से खुलेआम प्रकाशित होती थी। बोल्शेविक वैधानिक और अवैधानिक दोनों ही तरह के पत्रों का होना उसी तरह आवश्यक समझते थे, जिस तरह कि गुप्त क्रांतिकारी संस्थाओं को रखते हुए वह साथ-साथ पार्लामेंट में भी अपने प्रतिनिधि भेजते थे। वह अपने कार्य और प्रचार के सुभीते के किसी भी साधन को हाथ से जाने देने के लिए तैयार नहीं थे। इस पत्रिका का उद्देश्य था : 'पेतरेस्सोफ, लेवेच्की और प्लेखोनोफ जैसे 'भद्रपुरुषों के अन्तर्राष्ट्रीयतावादी सिद्धांतों' के विरुद्ध विचारों को फैलाना, देश के मजदूर वर्ग के खिलाफ भ्रष्टाचारपूर्ण वक्तव्यों और अन्तर्राष्ट्रीयतावादी सिद्धांतों के विरुद्ध कही जानेवाली बातों के खिलाफ देश के मजदूर वर्ग के विचार-सम्बन्धी बीमा को सुरक्षित रखने के लिए अपने सारे प्रयत्नों और शक्तियों को लगाना।

अपने सम्पादकों की गिरफ्तारी के बाद, फरवरी सन् 1915 में यह पत्रिका कुछ दिनों बन्द रहकर फिर से निकलने लगी। पत्रिका जहाँ अपने को कानूनी प्रहार से बचाते हुए बोल्शेविकों की विचारधारा और कार्यनीति का प्रचार करती थी तथा विरोधियों का मुँहतोड़ जवाब देती थी, वहाँ इसके सम्पादकीय विभाग ने मोलोतोफ के नेतृत्व में पार्टी के एक खुले केन्द्र का काम करना शुरू किया था। सरकारी सेंसर पत्रिका की एक-एक लाइन को देखता, लेकिन जितने अंश को वह काट देता था, उसे पत्रिका में सादा ही छोड़ दिया जाता था। जब स्तालिन को इसका पहला अंक मिला तो उन्होंने तुरन्त निर्वासितों से चन्दा करके छह रूबल पचासी कोपेक सम्पादक के पास भेजते हुए, तुरखान्स्क के बोल्शेविकों की तरफ से एक पत्र लिखा था, जिस पर स्तालिन, अ. मस्लेन्निकोफ (जिसे पीछे कोलचक ने गोली मरवा दी), स्पन्दर्यान बेरा, श्वाहजैर आदि के हस्ताक्षर थे। उसकी कुछ पंक्तियाँ थीं :

> "प्रिय साथियो, तुरखान्स्क के निर्वासितों की एक टुकड़ी 'वोप्रोसिस्त्रखोवानिया' के फिर से प्रकाशन का बड़ी प्रसन्नता के साथ स्वागत करती है। आज के समय में जब कि रूस में कमकर समूह की सार्वजनिक राय को इस तरह जान-बूझ कर गलत समझाया जाता है, और जब कि अ. गुच्कोफ और प. रयाबुशिन्स्की की सक्रिय सहायता से सच्चे कमकर प्रतिनिधियों को सामने नहीं आने दिया जाता, इस तरह की एक सच्ची मजूर पत्रिका को देखना और पढ़ना आनन्द की बात है।"

स्तालिन इसको बड़ा आवश्यक समझते थे कि मैदान खाली देखकर मेन्शेविक अपने झूठे समाजवाद की आड़ में कमकरों को बहकाने में सफल न हो सकें।

स्तालिन का कूरेइका का जीवन किस तरह का था, यह एक दूसरी निर्वासिता वेरा श्वाइजेर के संस्मरणों से मालूम होता है। वेरा ने लिखा था :

> " जाड़ों (सन् 1913) के दिनों में, पुलिस को जानने का मौका दिये बिना सूरेन स्पन्दयोन के साथ

मैंने कूरेइका गाँव में स्तालिन से मिलने के लिए यात्रा की। दूमा के बोल्शेविक सदस्यों पर उस समय मुकदमा चल रहा था और कई दूसरी भी पार्टी-सम्बन्धी बातें थीं, जिनके बारे में फैसला करने के लिए हमने स्तालिन से मिलना आवश्यक समझा था। जाड़े के दिनों में यहाँ कितने ही हफ्तों तक रात और दिन एक हो जाते थे, और हद दर्जे की जाड़े-पाले वाली रात में यह सफर करना था। हम बिना पहियेवाली, कुत्ते की गाड़ी लेकर रास्ते में बिना रुके, जमी हुई येनिसेइ नदी के नीचे की ओर चलते हुए मोनास्तिर्स्कोये और कूरेइका के बीच के दो सौ किलोमीटर की हिमाच्छादित निर्जन भूमि को ऐसे समय पार कर रहे थे, जबकि भेड़ियों की गुर्राहट बराबर हमारा पीछा कर रही थी।

" हम कूरेइका में पहुँचे और उस झोंपड़ी को खोजने लगे, जिसमें साथी स्तालिन रहते थे। गाँव में पन्द्रह झोंपड़े थे, जिनमें वह सबसे अधिक गरीबी का था—एक बाहरी कोठरी, एक रसोईघर, जिसमें अपने परिवार के साथ घर का मालिक रहता था।—इन दोनों के अतिरिक्त एक और कोठरी थी, जिसमें साथी स्तालिन थे। और बस !

" हमारे अप्रत्याशित आगमन से साथी स्तालिन बहुत प्रसन्न हुए और ध्रुवकक्षीय यात्रियों को आराम देने के लिए जो कुछ हो सकता था, वह उन्होंने किया। पहला काम जो उन्होंने किया, वह था येनिसेइ की ओर दौड़ जाना, जहाँ पर कि उन्होंने बर्फ में छेद करके मछलियों के लिए बंसी लगा रखी थी। कुछ ही मिनटों के बाद, अपने कन्धे पर एक विशाल मछली उठाए हुए वह लौट आये। उस 'सिद्धहस्त मछुए' की देख-रेख में, हमने बहुत जल्दी मछली काट-कूटकर तैयार की और उसके कुछ भाग को निकालकर शोरवा तैयार किया। जिस वक्त यह पाकशास्त्र का चमत्कार दिखलाया जा रहा था, उसी समय हम पार्टी के कामों के बारे में गम्भीरतापूर्वक वार्तालाप करते रहे। स्तालिन के कर्मठ दिमाग की गन्ध उस कोठरी के सारे वातावरण से आ रही थी। साथ ही, अपने चारों ओर की वास्तविकता से उस दिमाग को क्षण-भर के लिए भी अलग नहीं किया जा सकता था। उनकी मेज पर पुस्तकों और अखबारों के बड़े-बड़े बंडलों का ढेर लगा हुआ था। एक कोने में मछुवे और शिकारी के सामान रखे थे, जिन्हें स्तालिन ने स्वयं बनाया था। "

महायुद्ध के समय लेनिन और स्तालिन एक-दूसरे से हजारों मील दूर थे और दुनिया के एक छोर पर बसे, इस गाँव में अखबार मुश्किल से पहुँचते थे। डाक कभी-कभी दो-तीन महीनों की एक ही साथ आती थी। लेनिन के पास पत्रों के जाने में इतना पेचीदा रास्ता और साधन इस्तेमाल करना पड़ता था कि स्तालिन के बहुत कम पत्र पहुँच पाते थे। सन् 1914 के अन्त में ही, स्तालिन को महायुद्ध के बारे में लेनिन के निबंध के पहले मसौदे से परिचय प्राप्त करने का मौका मिल सका। वेरा ने अपने संस्मरण में लिखा है :

"हमारे निर्वासित जीवन में यह बड़ा ही उत्तेजक क्षण था, जब कि लेनिन की हिदायतें हमारे पास पहुँचीं। तुरखान्स्क के लिए निर्वासित होकर जाते समय कास्नोयार्स्क में, युद्ध पर लेनिन के निबंध का पहला मसौदा मुझे मिला। वह एक गुप्त पते पर पहुँचकर मेरे पास आया था, जिस पते पर कि नादेजदा कान्स्तन्तिनोवा (क्रुप्सकाया) लेनिन के पत्रों को भेजा करती थी। मैंने इन निबंधों को साथी स्तालिन को दिया, जो उस समय सूरेन स्पन्दर्यान के साथ मोनास्तिर्स्कोये गाँव में रहते थे। लेनिन के युद्ध पर लिखे सात निबंधों ने हमें बतलाया कि साथी स्तालिन इस जटिल ऐतिहासिक स्थिति के मूल्यांकन में ठीक लेनिनीय निर्णय पर पहुँचे थे। साथी स्तालिन लेनिन के निबंधों को पढ़ते समय जिस आनन्द, दृढ़ विश्वास और सफलता की भावना का अनुभव कर रहे थे, उसका वर्णन करना मुश्किल है।"

स्तालिन और स्पन्दर्यान ने उस समय जो पत्र लेनिन के पास भेजे थे, उनमें से एक अब भी सुरक्षित है। इस पत्र में उन्होंने प्लेखानोफ, क्रोपत्किन और फ्रेंच समाजवादी मंत्री सर्वत को उनके रवैये पर बहुत फटकारा है। तुरुखान्स्क इलाके में ही याकोब स्वेर्दलोफ को भी निर्वासित किया गया था और वहाँ के सभी बोल्शेविक निर्वासित बहुधा आपस में मिला करते थे। यहाँ स्तालिन का जीवन अधिकतर पुस्तकों के अध्ययन तथा पार्टी

के कामों पर विचार-विनिमय करने आदि में ही बीतता था। इसके अतिरिक्त, जीविका को थोड़ा और बहुविध बनाने के लिए वह मछली मारने और शिकार करने भी जाया करते थे।

लड़ाई चलते दो साल से अधिक हो गए थे। सन् 1916 के दिसम्बर में, जारशाही ने अनिवार्य सैनिक सेवा का नियम सैनिक आयु के निर्वासितों पर भी लागू किया और उसके लिए स्तालिन को क्रास्नोयार्स्क भेज दिया गया। लेकिन, ऊपर के अधिकारियों को अपनी गलती तुरन्त मालूम हो गई कि ऐसे खतरनाक क्रांतिकारियों को सेना में भेजना भारी मूढ़ता होगी। इसीलिए, उन्होंने स्तालिन को सेना में न भेजकर अपने बाकी निर्वासन के समय को काटने के लिए अचिन्स्क में भेज दिया।

जब युद्ध घोषित हुआ उस समय लेनिन गलीसिया में थे। पकड़े जाने के डर से, वह वहाँ से तटस्थ देश स्विट्जरलैंड में चले गए, जहाँ उन्होंने 'सोत्सियल देमोक्रात' (समाजवादी जनतंत्री) के नाम से रूसी बोल्शेविक पार्टी का मुख-पत्र निकालना शुरू किया। इसी पत्र में लेनिन ने 'धारा के विरुद्ध' नाम से कई लेख लिखे, जिनमें युद्ध के बारे में अपने विचार रखे थे और हासे. कॉत्स्की, प्लेखानोफ जैसे युद्ध-समर्थक नामधारी समाजवादियों की खूब खबर ली थी। आस्ट्रिया और जर्मनी में भी प्रथम विश्वयुद्ध के समय समाजवादी क्रांति के लिए वैसा ही अवसर मिला था, जैसा रूस में, लेकिन नकली समाजवादी क्रांति लाने के लिए थोड़े ही हैं, उनका काम तो क्रांति के साथ विश्वासघात करके गाढ़े वक्त में पूँजीवाद के लिए ढाल बनना ही है। कगानोविच ने स्तालिन के बारे में कहा था :

> "वह पुराने बोल्शेविकों में एक विशेष धातु के बने हैं। स्तालिन के सभी राजनीतिक कार्यकलापों में एक अत्यन्त उल्लेखनीय तथा बहुत ही महत्त्वपूर्ण बात जो पाई जाती है, वह यही है कि वह कभी लेनिन से दूर नहीं गए—न दक्षिण और न चरम वाम पंथ की ओर।"

5
क्रांति और प्रतिक्रांति (सन् 1917-21)

1. फरवरी-क्रांति

सन् 1917 में क्रांति का आरम्भ हुआ। औद्योगिक तौर से बहुत ही पिछड़े तथा जर्मन आक्रमणों के मुख्य लक्ष्य बने हुए रूस की हालत तीन वर्षों से ज्यादा लगातार लड़ते-लड़ते बहुत बुरी हो गई थी। युद्ध-क्षेत्र में हार पर हार हो रही थी। इस्तेमाल के लिए काफी हथियार न पाने और अपने नालायक अफसरों के कारण सैनिक दुर्गति में पड़े हुए थे। उनमें जारशाही के प्रति भारी असंतोष पैदा होना स्वाभाविक था। दूसरी ओर, देश में चारों ओर अभाव ही अभाव दिखाई पड़ता था। जनवरी से ही, इसके विरोध में हड़तालें होने लगीं। 6 जनवरी, 1905 को जारशाही ने गोलियों की वर्षा करके इतवार के दिन खून की होली खेली थी। उसी की स्मृति में जनवरी के प्रथम हफ्ते में जबर्दस्त हड़ताले हुईं; जो कम होने की जगह बढ़ती और फैलती गईं। मजदूरों के प्रदर्शनों में अब सैनिक और नौसैनिक भी भाग लेने लगे। 27 फरवरी को जब जारशाही ने गोली चलाने का हुक्म दिया, तो सैनिकों ने मजदूरों पर गोली छोड़ने से इन्कार कर दिया और वह सरकार का साथ छोड़कर जनता की ओर जाने लगे। आखिर बन्दूकें ही तो शासकों की रक्षा करती हैं। जब वही विरोधियों का साथ देने लगीं, तो जारशाही के भले दिनों की क्या आशा हो सकती थी ? जारशाही के हाथ से एक-एक करके रक्षा के सभी साधन निकलने लगे। फिर धोखेधड़ी से काम लेते हुए, जार और उसके पिट्ठुओं ने अपने को बचाने की कोशिश की, लेकिन अब तो चिड़ियाँ खेत चुग चुकी थीं ! मजदूर जारशाही को उखाड़ फेंकने में सबसे आगे थे। वर्दीधारी किसान सैनिक तथा दूसरे शोषित-उत्पीड़ित उनका साथ देने के लिए तैयार थे। जार

की नैया डाँवाडोल देखकर, मध्यमवर्ग ने अपना काम बनाना चाहा। फरवरी में जार को इस्तीफा देकर, रोमनोफ वंश का खात्मा करने के लिए मजबूर होना पड़ा। सरकार की बागडोर पहले राजुल लबोफ और फिर वकील केरेन्स्की ने सँभाली। नई सरकार भी समाजवादी क्रांति के लिए तैयार नहीं थी, लेकिन उसे जार की जगह पर बैठानेवाली तो साधारण मजूर-किसान जनता ही थी, इसलिए जारशाही की तरह, हर बात में वह मनमानी कैसे कर सकती थी ? मध्यमवर्गीय जनतांत्रिक क्रांति के होने का फल यह हुआ कि राजबन्दियों के लिए कैदखानों के दरवाजे खुल गये। राजनीतिक निर्वासित मुक्त हो गये। अब तक गुप्त रहकर काम करनेवाली बोल्शेविक पार्टी खुलेआम काम करने लगी। चारों तरफ अखबारों और भाषण की स्वतंत्रता की बाढ़ आ गई।

मध्यवर्ग ने शासन की बागडोर हाथ में सँभालते हुए निश्चय किया था कि पीतर के अनुवांशिक शासन को हटाकर, उसकी जगह जनतांत्रिकता का दम भरनेवाले मध्यमवर्ग की सरकार स्थापित कर दी जाय; और दूसरे पूँजीवादी देशों की तरह, रूस में भी उनके ही वर्ग के दो-तीन दल हों, जो मतदाताओं को बारी-बारी से बेवकूफ बनाकर, जनतंत्रता के नाम पर जनता-विरोधी कामों के लिए शासन सँभालते रहें। सम्राट कैसर या जार की जगह एक प्रेसीडेंट और सिंहासन की जगह एक आरामकुर्सी रख दी जाय। राज-लांछनों को कहीं-कहीं इमारतों, वर्दियों और तमगों से मिटा देने, झंडे और डाकखाने के टिकटों में हलके से परिवर्तन करने; कुछ थोड़े से व्यक्तियों की अदला-बदली के सिवाय, वह उसी पुराने आर्थिक-सामाजिक ढाँचे को बनाये रखना चाहते थे। स्तालिन के शब्दों में :'

> "संक्षेप में मध्यवर्गीय क्रांति का मुख्य काम शक्ति को हथियाना और उसे विद्यमान मध्यवर्गीय आर्थिक व्यवस्था के अनुसार बनाना था; जबकि सर्वहारा क्रांति का मुख्य काम अधिकार हाथ में करने के बाद, एक नयी समाजवादी आर्थिक व्यवस्था का निर्माण करना है।"

और जगहों की तरह, रूस में भी मध्यवर्गीय क्रांति ने चाहा था कि सर्वहारा की सभी कुर्बानियों और आशाओं पर पानी फेर दे।

अचिन्स्क में स्तालिन को भेजनेवाले खतम हो चुके थे, इसलिए उन्हें साइबेरिया में रोक रखनेवाला कौन था ? 12 मार्च, 1917 को स्तालिन चुपचाप पेत्रोग्राद पहुँच गये। जर्मनों के आक्रमण के कारण, उनके प्रति अपनी घृणा को व्यक्त करने के लिए इसी लड़ाई के दौरान में पीतरबुर्ग का नाम जर्मन शब्द बुर्ग हटाकर, रूसी शब्द ग्राद जोड़कर पेत्रोग्राद कर दिया गया था। स्तालिन को स्वागत और प्रदर्शन की आवश्यकता नहीं थी। उन्हें सदा से चुपचाप ठोस काम करने की आदत रही है। पेत्रोग्राद पहुँचते ही, वह पार्टी के काम में लग गये। उस समय की असाधारण स्थिति में क्षण-क्षण जो नई समस्याएँ सामने आती थीं, उनका हल ढूँढ़ निकालना स्तालिन के ही जिम्मे था। रोमनोफ वंश के खतम होने के बाद, जो शासन उसका स्थान लेनेवाला था उसका क्या रूप होना चाहिए, यह सबसे अहम् बात थी। कौन-सा वर्ग अपने हाथ में सरकार की बागडोर ले ? समाजवादी क्रांतिकारियों और मेन्शेविकों ने मध्यवर्ग का साथ दिया था, इसलिए अस्थायी सरकार में पूँजीवादियों का बोलबाला था। लेकिन, दूसरी ओर जारशाही के खिलाफ जो असंतोष के जबर्दस्त प्रदर्शन हो रहे थे और जिनमें देश के सर्वहारा तथा पीड़ित जनता विद्रोह के लिए खड़ी हो गई थी, वह कोई असंगठित अव्यवस्थित भीड़ नहीं थी। सन् 1905 की क्रांति के तर्जबे से फायदा उठाकर, मजदूरों और कमकरों के देपुतियों की सोवियतें जगह-जगह संगठित होकर, सभी कामों को सुव्यवस्थित रूप से कर रही थीं। यह बोल्शेविकों की ही दूरदर्शिता का परिणाम था कि उन्हें बारह वर्ष पहले ही पुराने शासन-यंत्र का स्थान लेनेवाले एक नये शासन-यंत्र का आविष्कार कर लिया था। यह सोवियतें अब हर जगह तुरन्त संगठित हो रही थीं। दाल-भात में मूसरचन्द की कहावत के अनुसार, सर्वहारा और जारशाही के संघर्ष के भीतर घुसकर, मध्यवर्गीय क्रांति-विरोधियों को लाभ उठाने का मौका बोल्शेविक कैसे दे सकते थे ? स्तालिन ने 14 मार्च, 1917 के 'प्राव्दा' में 'मजूर-सैनिक देपुतियों की सोवियतें' के नाम से एक लेख लिखा, जिसमें उन्होंने फौरी कामों के बारे में बतलाया था : "पुरानी शक्तियों को खतम कर डालने के लिए, जीते हुए अधिकारों को हाथ में रखना तथा प्रदेशों से मिलकर रूसी क्रांति को और आगे बढ़ाना…।" स्तालिन ने क्रांति की आधारभूत शक्ति के बारे में भी यह बतलाया था : "रूसी क्रांति का बल

मजदूरों और वर्दी पहने सैनिकों के रूप में किसानों की मैत्री पर निर्भर करता है।" स्तालिन ने मजदूरों और सैनिकों की सोवियतों (पंचायतों) को और भी व्यापक बनाने तथा मजदूर और सैनिक देपुतियों की केन्द्रीय सोवियत के तत्त्वावधान में जनता की क्रांतिकारी शक्ति के स्वरूप को बनाने के लिए कहा; और यह भी कि "क्रांतिकारी समाजवादी जनतंत्रियों को इसी दिशा में काम करना होगा।"

इस समय, जनता के सामने सबसे बड़ा प्रश्न था–युद्ध के सम्बन्ध में दो टूक फैसला करना, उसे बंद करना। 16 मार्च, 1917 के 'प्राव्दा' में 'युद्ध' के नाम से एक लेख में स्तालिन ने कहा :

> "हमारे लिए यह जरूरी है कि साम्राज्यवादियों का नकाब फाड़ दिया जाय। जनता को बतलाया जाय कि इस युद्ध के पीछे असल बात क्या है। इसका अर्थ है–युद्ध के खिलाफ वास्तविक युद्ध घोषित करना; इसका अर्थ है–वर्तमान युद्ध के और आगे चलाने को असम्भव कर देना।"

रूस बहुजातीय राज्य था। क्रांति की देहरी पर पहुँचकर, स्तालिन सभी जातियों को एकताबद्ध रखने का ख्याल कैसे छोड़ सकते थे ? इसीलिए 25 मार्च, 1917 के 'प्राव्दा' में उन्होंने 'जातीय अयोग्यताओं को खत्म करना' लेख लिखते हुए कहा कि यह अत्यावश्यक है कि आज उत्पीड़न से मुक्त हुई जातियों के अधिकारों को तुरन्त स्थापित किया जाय; इस अधिकार को कानून की शक्ति प्रदान की जाय। उन्होंने इस लेख में जोर देकर कहा कि जातियों को आत्म-निर्णय का अधिकार मिलना चाहिए, जिसमें उनको अपने अलग राज्य बनाने का हक भी होना चाहिए।

स्तालिन के नेतृत्व में जिस वक्त बोल्शेविक इस तरह क्रांति को आगे बढ़ाने की कोशिश कर रहे थे, उसी समय मेनूशेविक और समाजवादी क्रांतिकारी पूँजीपतियों और जमींदारों के पुराने शोषण को अक्षुण्ण रखने की कोशिश कर रहे थे। सर्वहारा को धोखा देने के लिए दुनिया के सभी प्रतिगामियों का बड़ा हथियार है–सुधारों की भूलभुलैया में डालकर समय गुजारना। रूसी मेनूशेविक और समाजवादी-क्रांतिकारी भी किसानों को समझाने-बुझाने की कोशिश कर रहे थे कि तुम अपनी समस्याओं को तुरन्त हल करने की माँग न करो, संविधान-सभा के बनने की प्रतीक्षा करो। वह जानते ही थे कि संविधान-सभा को कब बुलाना चाहिए, या नहीं ही बुलाना चाहिए, यह उन्हीं के हाथ है; जब प्रतीक्षा करते-करते जनता का जोश धीमा पड़ जायेगा, तो फिर वह जैसा चाहेंगे वैसा करने लगेंगे। लेकिन, जनता के हित-समर्थक बोल्शेविक इतने भोले नहीं थे। वह जनता के अधिकार की माँग को खटाई में पड़ने देने के लिए तैयार नहीं थे। लेनिन ने पेत्रोग्राद पहुँचने के ग्यारह दिन बाद, 14 अप्रैल, 1917 के 'प्राव्दा' में 'जमीन किसानों को' के नाम से स्तालिन ने एक लेख लिखा कि इस धोखे में नहीं पड़ना चाहिए। उन्होंने समाजवादी, क्रांतिकारी, मेनूशेविक और कादेत (प्रतिगामी सुधारवादियों) का भंडाफोड़ करते हुए बतलाया :

> " उन्हें तब तक किसानों की क्या परवाह है, जब तक कि जमींदार मौज उड़ा रहे हैं। इसीलिए, हम रूस के किसानों, सभी गरीब किसानों को पुकारकर कहते हैं कि लक्ष्य को अपने हाथ में लो; उसे आगे बढ़ाओ।
>
> " हम उनसे पुकारकर कहते हैं कि जिलों, देहाती इलाकों आदि की क्रांतिकारी किसान-कमेटियाँ संगठित करो। इन कमेटियों द्वारा जमींदारियों पर अधिकार करो और किसी हुक्म का इन्तजार किए बिना, संगठित ढंग से उन्हें जोतना-बोना शुरू करो।
>
> " हम उनसे पुकारकर कहते हैं कि जरा भी देर किए बिना, संविधान-सभा की प्रतीक्षा किए बिना, और प्रतिगामी मैत्रियों की मंसूखी की आज्ञा की ओर बिलकुल ध्यान दिए बिना, देर किए बिना इस काम को करें, क्योंकि यह चीजें क्रांति के चक्के के रास्ते में बाधाओं के सिवा और कुछ नहीं हैं। "

लेनिन के रूस में आने के पहले, किसानों और मजदूरों के सामने जो सबसे जबर्दस्त समस्याएँ खड़ी हुईं, स्तालिन ने ठीक समय पर उनका हल सामने रख दिया था। मेनूशेविकों, समाजवादी क्रांतिकारियों और कादेतों की छीछालेदर हो रही थी। अपनी लीडरी को हाथ से जाते देखकर, वह दाँत पीस रहे थे। पार्टी में भी कामेनेफ जैसे कुछ बुजदिल थे। लेकिन, स्तालिन के सामने उनकी क्या चल सकती थी ?

2. लेनिन की वापसी

अन्त में, 3 अप्रैल का दिन आया। पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने लेनिन के स्विट्‌जरलैंड से लौटने में हर तरह की रुकावटें डालीं। फ्रांस और इंग्लैंड लेनिन की शक्ति और प्रभाव को जानते थे और यह भी जानते थे कि वह साम्राज्यवादी युद्ध के बिलकुल विरुद्ध हैं। अब तक उन्हें लाखों की संख्या में बहुत आसानी से रूसी किसान, युद्ध की बलि के बकरे मिल जाते थे। और, जार की जगह पर जो सरकार आई थी उसने भी पूरा विश्वास दिया था कि जार का सिंहासन च्युत होना तो एक घरू काम था, जहाँ तक लड़ाई का सवाल है, उसमें वह तब भी पश्चिमी मित्रों के साथ थे। जर्मनी भी लेनिन के क्रांतिकारी विचारों के साथ सहानुभूति नहीं रख सकता था, लेकिन वह जानता था कि लेनिन के रूस में पहुँच जाने पर उनके दुश्मनों को रूसी मदद नहीं मिलेगी। रूस और दूसरे देशों में लड़ाई के कारण जो असंतोष फैला हुआ था, उसका प्रभाव जर्मनी में भी मौजूद था, इसलिए जर्मन यह पसन्द नहीं करते थे कि लेनिन उनके देश से खुल्लमखुल्ला गुजरते हुए रूस जायें, इसलिए उन्होंने लेनिन के सामने यह शर्त रखी कि एक बन्द डिब्बे में बिना किसी से मिले-जुले या उतरे, रूस जाने के लिए तैयार हों, तभी जर्मनी से जाने की इजाजत दे सकते हैं। लेनिन कोई हवाई क्रांतिकारी नहीं थे। उन्हें क्रांति के लिए पैर रखने की एक उपयुक्त जगह चाहिए थी, और वह था—अपना देश रूस। उन्हें वहाँ पहुँचने की जल्दी थी, इसलिए जर्मनों की शर्त मानकर, वह ट्रेन में बैठ रूस के लिए रवाना हो गये।

एक लम्बे अर्से के निर्वासन के बाद, 3 अप्रैल, 1917 को लेनिन रूस पहुँचे। लेनिन के आने की खबर पेत्रोग्राद के अग्रगामी कमकरों को तुरन्त मिल गई और स्तालिन के साथ, उनके नेता लेनिन का स्वागत करने के लिए राजधानी से बाहर वेलो ओस्रोफ पहुँचे। क्रांति के दो महान् नेता, गुरु और शिष्य, आज एक-दूसरे से ऐसे समय मिल रहे थे, जब उनके जीवन का ध्येय पूरा होनेवाला था। पेत्रोग्राद के रास्ते में, ट्रेन पर बैठे-बैठे स्तालिन ने लेनिन को देश और पार्टी की सारी अवस्था तथा क्रांति की प्रगति बतलाई। लेनिन अद्‌भुत प्रतिभा के धनी पुरुष थे। स्विट्‌जरलैंड में रहते हुए भी, वह रूस की खबरों से अपने को वंचित नहीं रखते थे, और थोड़ी-थोड़ी बातों से भी असली तत्त्व को पकड़ लेना उनके बायें हाथ का खेल था। मॉस्को के फिनलैण्ड स्टेशन पर, जनता की अपार भीड़ ने अपने प्रिय नेता का स्वागत किया और उनके व्याख्यान के एक-एक शब्द को ध्यान से सुना। अगले ही दिन (4 अप्रैल) को एक कान्फरेंस हुई, जिसमें उन्होंने अपने प्रसिद्ध 'अप्रैल-निबंध' को रखा, जिसका भाव था—सोवियतों द्वारा राज-शक्ति पर अधिकार करने की योजना। बुजदिल, ढुलमुलयकीन, नामनिहादी क्रांतिकारी इससे घबरा उठे। वह कब क्रांति के लिए सर्वस्व की बाजी लगाने को लिए तैयार हो सकते थे ? लेकिन, लेनिन वह लक्ष्य-वेधी धनुर्धर थे, जो अच्छी तरह समझते थे कि समय का महत्त्व भी भारी होता है। एक बार चूक जाने पर फिर मौका बार-बार हाथ नहीं आता। स्तालिन और दूसरे बोल्शेविक लेनिन के साथ थे। स्तालिन ने बाद में 8 जून, 1926 को तिफलिस में रेलवे कमकरों की सभा में इसके बारे में बतलाया था :

> "अन्त में, मुझे सन् 1917 याद आता है, जब कि पार्टी की इच्छानुसार एक जेल से दूसरे जेल में बन्दी होते हुए, एक जगह से दूसरी जगह निर्वासित होकर घूमते हुए, मैं लेनिनग्राद भेजा गया। वहाँ रूसी कमकरों के बीच, सभी देशों के सर्वहारा के महान् गुरु, साथी लेनिन की समीपता में सर्वहारों और बूर्ज्वा वर्ग के बीच होते भयंकर संघर्ष के बीच, साम्राज्यवादी युद्ध के मध्य, मैंने पहली बार यह सीखा कि मजूर वर्ग की एक महान् पार्टी का नेता होना क्या अर्थ रखता है। वहाँ उत्पीड़ित जनता के मुक्तिदाता और सभी जातियों के सर्वहारों के संघर्ष की हरावल सेना—रूसी कमकरों—के बीच मुझे तीसरा क्रांतिकारी अग्नि-अभिषेक मिला। वहाँ लेनिन के पथ-प्रदर्शन में मैं क्रांति की कला में सिद्धहस्त हुआ।"

लेनिन के साथ, स्तालिन ने पेत्रोग्राद सोवियत की कार्यकारिणी कमिटी की बैठक में भाग लिया। अखिल रूसी मजूर-सैनिक-देपुती-सोवियत कान्फरेंस के संचालन में स्तालिन ने लेनिन का हाथ बँटाया। केन्द्रीय कमिटी के सदस्य के तौर पर, लेनिन के दाहिने हाथ की तरह, स्तालिन ने पार्टी के केन्द्रीय मुख-पत्र 'प्राव्दा' का संचालन

किया। अब से 'प्राव्दा' में बारी-बारी से लेनिन और स्तालिन के लेख निकलने लगे, जिन्होंने क्रांति के मार्ग को प्रशस्त किया। बोलूशेविकों की अप्रैल कान्फरेंस में, स्तालिन ने जातीय समस्या पर अपनी रिपोर्ट दी और जातियों के आत्म-निर्णय के अधिकार को स्वीकार करने पर जोर दिया। इस कान्फरेंस में जातियों को अधिकार देने के विरोधी सदस्यों को मुँहतोड़ जवाब देते हुए, स्तालिन ने यह भी कहा था :

"इस प्रकार, जातीय प्रश्न के बारे में हमारे विचारों को निम्न रूपों में रखा जा सकता है–1. जातियों के राज्य से अलग होने के अधिकार को स्वीकार करना। 2. किसी राज्य के भीतर रहने के लिए तैयार जातियों को स्थानीय स्वायत-शासन देना। 3. अल्पसंख्यक जातियों के विकास को उन्मुक्त रखने की गारंटी देते हुए, विशेष कानून बनाना। 4. किसी राज्य की सभी जातियों के सर्वहारों के लिए एक अकेली, अविभाज्य सर्वहारा जमात, एक अकेली पार्टी का होना।"

मई, सन् 1917 में, केन्द्रीय कमिटी का एक राजनीतिक ब्यूरो संगठित किया गया। स्तालिन इसके सदस्य निर्वाचित हुए। स्तालिन सन् 1917 से 1953, अपने निधन के समय, छियालीस वर्षों तक पोलिट (राजनीतिक) ब्यूरो के सदस्य बने रहे।

अब दोनों महान् गुरु और शिष्य बोल्शेविक पार्टी का नेतृत्व और सर्वहारों की अपार शक्ति का संचालन करते हुए, सर्वहारा क्रांति की तैयारी करने लगे। उस समय जरूरी था कि बूर्ज्वा सरकार यह न समझे कि वह जारों की तरह ही मनमानी करने के लिए स्वतंत्र है। इसीलिए, हर अवसर पर कमकरों के विराट प्रदर्शन किए जाने लगे, जिनकी अपार शक्ति देखकर प्रतिगामियों का दिल दहल जाता था। अप्रैल में कई प्रदर्शन हुए। मई दिवस का जुलूस भी अपूर्व रहा, पर 18 जून के ऐतिहासिक प्रदर्शन ने तो कमाल कर दिया। इस प्रदर्शन के लिए स्तालिन ने एक घोषणा–'पेत्रोग्राद के सभी मेहनतकशों, सभी कमकरों और सैनिकों के लिए'–लिखी, जिसमें उनसे कहा गया था कि इस दिन को उत्पीड़न और अत्याचार के फिर से चालू करने के विरुद्ध क्रांतिकारी पेत्रोग्राद द्वारा एक जबर्दस्त विरोध-प्रदर्शन करने के दिवस में परिणत कर दो। घोषणा में आगे कहा गया था :

" स्वतंत्रता और समाजवाद के शत्रुओं में बौखलाहट पैदा करने के लिए, कल हमारी विजयी ध्वजाएँ लहरायें !

" तुम्हारी पुकार, क्रांति के योद्धाओं की पुकार, सभी उत्पीड़ितों और बंधुओं के आनन्द के लिए सारी दुनिया में गूँज उठे !

" कमकरो ! सैनिको ! अपने हाथों को बंधुता से एक-दूसरे से मिलाये, समाजवाद के झंडे के नीचे आगे बढ़ो !

" साथियो, सभी सड़कों पर आ जाओ !

" अपने झंडों के चारों ओर, घनिष्ठता के साथ घेरा बाँधकर इकट्ठे हो जाओ !

" राजधानी की सड़कों पर अटूट पंक्तियों के रूप में मार्च करो ! "

18 जून के प्रदर्शन में बोलूशेविक दल के झंडे के नीचे पाँच लाख मजूर और किसानों ने भाग लिया था। बोलूशेविकों की शक्ति को इस तरह बढ़ते देखकर, अस्थायी सरकार कैसे चुपचाप रह सकती थी ? उसने बोलूशेविक पार्टी पर प्रहार कर, उसे फिर भूमिगत बनाने का निश्चय किया। लेकिन, राजधानी के उद्‌बुद्ध कमकर और सैनिक बनियों की बंदरघुड़की मानने के लिए कब तैयार थे ? उनके इस प्रयत्न का फल यही हुआ कि 3 और 4 जुलाई को फिर जबर्दस्त प्रदर्शन हुए। सड़कों पर मजदूरों और सैनिकों पर गोली चलवाकर 'प्राव्दा' के कार्यालय को नष्ट-भ्रष्ट करने के बाद, अस्थायी सरकार ने लेनिन पर झूठा आरोप लगाकर उन्हें गिरफ्तार करने के लिए वारण्ट निकाला। पार्टी के भीतर अभी भी ऐसे विश्वासघाती थे, जो अदालत में प्रतिगामी सरकार के न्याय का झंडा फाड़ने के बहाने लेनिन का बलिदान देने के लिए तैयार थे। लेनिन उस वक्त क्रांति की एक सबसे बड़ी शक्ति थे, उसे अस्थायी सरकार खूब जानती थी। यह निश्चय ही था कि लेनिन पर बाकायदा मुकदमा चलाने की जगह, वह अपने किसी गुंडे से उन पर गोली चलवाकर क्रांति के एक शक्तिशाली ज्वालामुखी को दबा सकती थी। लेकिन, स्तालिन और दूसरे बोलूशेविक ऐसी कच्ची गोली नहीं खेले थे, और न लेनिन

ही उनकी बात के महत्त्व से इन्कार कर सकते थे। इसलिए, यही निश्चय किया गया कि लेनिन को छिपा दिया जाय। यदि उस दिन कामनेफ, रुइकोफ और त्रॉत्स्की की बातों को माना गया होता, तो कौन जानता है कि लेनिन को खो देने पर क्रांति का रास्ता किस ओर जाता। यह बुज़दिल, नेतृत्व के लिए अन्धे क्या उस समय क्रांति की धारा को ठीक रास्ते पर चला सकते थे ? लेनिन अब पेत्रोग्राद से कुछ दूर रजलिफ के जंगल की एक कुटिया में शिकारी बनकर रहते थे। स्तालिन उस गुप्त स्थान में दो बार गये। पत्र-व्यवहार द्वारा तो वह उनसे बराबर सम्बन्ध रखते थे। दोनों की राय एक ही थी—हथियारबन्द विद्रोह द्वारा अस्थायी सरकार को उलटकर, सर्वहारों की सरकार स्थापित करना। त्रॉत्स्की और दूसरे ढुलमुलयकीन सदस्य दलीलें देते हुए कहते थे कि सर्वहारा क्रांति पश्चिम के देशों में ही हो सकती है। इस पर स्तालिन का जवाब था :

> "यह सम्भावना भी हो सकती है कि रूस ही ऐसा देश बने, जो समाजवाद का रास्ता बनाने में सफल हो। हमें इस पुराने, सड़े विचार को छोड़ देना चाहिए कि केवल यूरोप ही हमको रास्ता दिखा सकता है। मार्क्सवाद रूढ़्यात्मक और सृजनात्मक दोनों तरह का होता है। मैं सृजनात्मक मार्क्सवाद का समर्थक हूँ।"

इसे कहने की आवश्यकता नहीं कि त्रॉत्स्की, कामनेफ जैसे आदमियों को पुस्तकी ज्ञान का अजीर्ण हो गया था। उनकी आँखों पर उसका ऐसा पर्दा पड़ गया था कि तत्कालीन परिस्थिति को देखकर, उनके पास पुस्तक की पंक्तियाँ उद्धृत करने के सिवा कोई रास्ता ही नहीं था। हर परिस्थिति में जो घटनाएँ घटित होती हैं, वह चाहे किसी पुरानी परिस्थिति में घटी घटनाओं से समानता रखती हों, लेकिन वह सामूहिक रूप से अपना बिलकुल ही नया स्वरूप प्राप्त कर लेती हैं। ऐसे समय, ठीक रास्ता खोज निकालना लेनिन और स्तालिन जैसी प्रतिभाओं का ही काम था। सौभाग्य से लेनिन के फरार होने के बाद, स्तालिन सभी कामों को सँभालने के लिए तैयार थे। हथियारबन्द विद्रोह के लिए शक्ति-संचय का काम निर्बाध रूप से चलता रहा। 10 जुलाई, 1917 को 'रबोची सोलूदात' (कमकर और सिपाही) का प्रथम अंक निकला। अस्थायी सरकार ने 'प्राव्दा' को बन्द कर दिया था, इसीलिए वह इस नये रूप में निकला था। इसमें स्तालिन ने 'क्रांति-विरोध की विजय' के नाम से एक लेख लिखते हुए कहा था :

> " कमकर इसे कभी नहीं भूलेंगे कि जुलाई के भीषण अवसर पर, जबकि गुस्से से पागल क्रांति-विरोधियों ने क्रांति के ऊपर गोली-वर्षा आरम्भ की तो बोल्शेविक पार्टी ही एकमात्र ऐसी पार्टी थी, जिसने मजूरवर्गीय मुहल्लों को नहीं छोड़ा।
>
> " कमकर इसे कभी नहीं भूलेंगे कि उन भयंकर क्षणों में समाजवादी क्रांतिकारी और मेन्शेविक जैसी 'शासनारूढ़' पार्टियाँ उस कैम्प में थीं, जो कि कमकरों, सैनिकों और नौसैनिकों पर आक्रमण करने तथा उनसे हथियार छीनने में लगा हुआ था।
>
> " कमकर इस सबको याद रखेंगे और उसका ठीक निष्कर्ष निकालेंगे। "

इसमें क्या सन्देह है कि क्रांति की तैयारी के इन स्मरणीय दिनों में स्तालिन का एक-एक शब्द, एक-एक भयंकर बम का काम दे रहा था।

क्रांति-विरोधी अपनी क्षणिक सफलता पर फूले नहीं समाते थे। उन्होंने लेनिन को फरार करवा दिया था। इसी समय 26 जुलाई, 1917 को छठी पार्टी कांग्रेस हुई। लेनिन का अभाव खटकता था। लेकिन, वहाँ उप-लेनिन मौजूद थे। स्तालिन ने कांग्रेस में रिपोर्ट पेश की, जिसमें उन्होंने बतलाया कि उनके सामने मुख्य काम है—बूर्ज्वा सरकार को हथियारों द्वारा पदच्युत करने और सर्वहारा तथा गरीब किसानों का राज्य स्थापित करने की आवश्यकता को जनता को समझाना ! बस, एक ही बात बाकी रहती है, अर्थात् बलपूर्वक अस्थायी सरकार को हटाकर शासन अपने हाथों में लेना। और गरीब किसानों की सहायता से, केवल सर्वहारा ही में वह शक्ति है, जिससे कि वह बलपूर्वक शासन को अपने हाथों में ले सकता है। त्रॉत्स्की और दूसरे किताबी पंडित और अदूरदर्शी यही राग अलापते रहे कि रूस जैसा पिछड़ा देश हथियार के सहारे समाजवादी क्रांति नहीं कर सकता, यह काम उद्योग-धंधों में बढ़े हुए पश्चिमी राष्ट्रों में ही हो सकता है। हमें तो जनतांत्रिक तरीके से आगे बढ़ना

चाहिए। इसमें शक नहीं कि जनतांत्रिकता की पुकार कायर और धोखेबाज समाजवादियों के लिए हमेशा से एक ढाल का काम करती आ रही है।

इस सारे समय, लेनिन जंगल में अपनी पर्णकुटी के भीतर छिपे हुए सो नहीं रहे थे। वह बड़ी सतर्कता के साथ, क्षण-क्षण की घटनाओं की देख-भाल करते रहते थे। सेर्गो ओरयोनिकिद्जे गुरु और शिष्य के बीच बातों और सूचनाओं के लाने-ले जाने का काम करता था। इस समय, साथी स्तालिन बाकू में ही अपने घनिष्ठ सहकारी तथा मित्र स. अलीलुयैफ के घर में छिपकर रहते थे, जिसने अपने संस्मरणों में लिखा है :

" जुलाई के दिनों में, गुस्से से पागल बूर्ज्वा वर्ग के प्रहार के कारण फरार होने से पहले, लेनिन 6 से 11 जुलाई तक मेरे साथ रहे। साथी स्तालिन लेनिन से मिलने मेरे घर आया करते थे। जब साथी लेनिन 11 जुलाई की रात को सेस्त्रोरेच्क में छिपने के लिए रवाना हुए, तो मैं और साथी स्तालिन सेस्त्रोरेच्क स्टेशन तक उनके साथ गये। उस समय, यह स्टेशन बोलशयानेव्वा बाँध पर नोवयादेरेव्न्या में अवस्थित था। हम दशम रोज्देसवेंस्कया सड़क से उक्त स्टेशन तक पैदल ही गये।

" रजलिफ और बाद में फिनलैंड की झोंपड़ी में रहते समय, साथी लेनिन समय-समय पर स्तालिन को देने के लिए मेरे पास पत्र भेजा करते थे। चिट्ठियाँ मेरे घर आती थीं। चूँकि उनका जवाब तुरन्त देना होता था, इसलिए अगस्त में साथी स्तालिन रोजथ रोज्देस्तेंस्कया सड़क वाले मेरे घर में चले आये और उसी कमरे में रहने लगे, जिसमें जुलाई के दिनों में साथी लेनिन छिपकर रहते थे।"

पुराने क्रांतिकारी साथी और बहुत दिनों तक सोवियत संघ के राष्ट्रपति, कालिनिन ने इस समय के बारे में लिखा था : "अक्तूबर के तुरन्त ही पहले स्तालिन उन चन्द आदमियों में से थे, जिनको साथ लेकर लेनिन ने विद्रोह का निश्चय किया था। जिनोवियेफ और कामेनेफ भी उस समय केन्द्रीय कमिटी के मेम्बर थे, लेकिन लेनिन ने उन्हें इसका पता भी नहीं दिया था।" यह दोनों अपने को दूरदर्शी समझनेवाले कायर बराबर सशस्त्र विद्रोह का विरोध करते रहे, और संविधान सभा के ऊपर सब-कुछ छोड़कर बैठे रहना चाहते थे। लेकिन, जब विद्रोह शुरू ही हो गया, तो कोई दूसरा चारा नहीं रहा था। इसलिए, लेनिन ने मानो लाठी के हाथों उन्हें भी क्रांति के भीतर ढकेल दिया। त्रॉत्स्की यद्यपि स्वेच्छापूर्वक शामिल हो गया था, लेकिन पूरे मन से नहीं; क्योंकि उसके मत के अनुसार सर्वहारा क्रांति का स्थान पश्चिम यूरोप के उद्योग-प्रधान देश थे, न कि पिछड़ा हुआ कृषि-प्रधान रूस। इन तीनों को छोड़, बाकी सभी बोल्शेविक सर्वस्व की बाजी लगाने के लिए तैयार थे। लेनिन ने क्रांति आरम्भ करने के समय को बिलकुल गुपचुप रखना चाहा था, लेकिन जिनोवियेफ ने इस निर्णय के विरोध में पत्र में लिखना शुरू किया, जिससे केरेन्स्की की सरकार को सजग होने का मौका मिल गया।

अगस्त सन् 1917 में जनरल कोर्निलोफ ने अस्थायी सरकार से विद्रोह करके, फिर से जारशाही स्थापित करना चाही। केरेन्स्की उस समय किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया था, लेकिन क्रांति केरेन्स्की के बल पर नहीं हुई। जिन सर्वहारों और सैनिकों ने जार का तख्ता उलट दिया था, वह अब भी अपने नव-प्राप्त अधिकारों की रक्षा के लिए तैयार थे। सचमुच ही, 'जो शालिग्राम को भूनकर खा गया, उसे बेंगन भूनकर खाने में क्या देर लगेगी ?' की कहावत को चरितार्थ किया। और, ज़ारशाही तीसमार खाँ के मनसूबे को उन्होंने बिलकुल विफल कर दिया। सारे कमकर हथियारबन्द हो, क्रांतिकारी सैनिकों के साथ लड़ने के लिए आगे बढ़े और इनके शौर्य के सामने कोर्निलोफ़ की सेना धुन्ध की तरह विलीन हो गई।

'रबोची सोलूदात' को भी जब केरेन्स्की की सरकार ने बन्द कर दिया, तो बोल्शेविकों ने 'प्रोलेतारी' के नाम से अपना पत्र निकालना शुरू किया। अगस्त सन् 1917 के पहले अंक में स्तालिन ने क्रांति को स्थगित करने के विचार से मॉस्को में की गई कौन्सिल की बैठक के खिलाफ लिखते हुए, मॉस्को-कौन्सिल की इस कार्रवाई के विरोध में संगठित हुई कमकरों की हड़ताल का स्वागत किया।

कोर्निलोफ को करारी हार देकर, बोल्शेविक पार्टी ने कमकर जनता में अपने प्रति पूरा विश्वास स्थापित कर लिया था। जनता अब इसी पार्टी को अपनी रक्षक और अजेय वाहिनी समझती थी। इसलिए जब सोवियतों का नया चुनाव हुआ, तो उनमें बोल्शेविक सबसे अधिक संख्या में आये और अब फिर से 'सभी शक्ति–सोवियतों

को'–का नारा चारों ओर गूँज उठा। लेनिन सारी परिस्थिति को अपने गुप्त स्थान से देख और सभी शक्तियों को आँक रहे थे। वह समझ गये कि यही वह दुर्लभ क्षण है, जिसकी वर्षों से प्रतीक्षा करते रहे हैं। उन्होंने अपने एक पत्र में विद्रोह की तैयारी करने पर जोर देते हुए लिखा था, "अब बोल्शेविकों को अपने हाथ में शक्ति लेनी होगी।" स्तालिन अपने गुरु के एक-एक आदेश और परामर्श को कार्यरूप में परिणत करने में लगे थे। अब उनका सारा समय सशस्त्र विद्रोह की तैयारी, लाल गारद और कमकरों की सेना के संगठन में लग रहा था। 10 अक्तूबर, 1917 को केन्द्रीय कमिटी ने स्तालिन को विद्रोह का संचालक नियुक्त किया। यह बैठक 10 से 16 अक्तूबर तक चलती रही, जिसमें जिनोवियेफ आदि बराबर संविधान-सभा की प्रतीक्षा करने की बात करके, संघर्ष को रोकना चाहते थे। 16 अक्तूबर को बोल्शेविक केन्द्रीय कमिटी की एक परिवर्द्धित मीटिंग हुई, जिसमें विद्रोह का संचालन करने के लिए स्तालिन को पार्टी-केन्द्र का नेता बनाया गया। इसी पार्टी-केन्द्र को महान् क्रांति का संचालन करना था!

3. महान् क्रांति

आखिर २४ अक्तूबर का दिन आया, जो कि नये पंचांग के अनुसार 6 नवम्बर का था। उस दिन, 11 बजे सेवरे 'रबोची पुत' (कमकर पथ) पत्र अस्थायी सरकार को हटा फेंकने के नारे के साथ निकला। पत्र के बाहर निकलते ही, पार्टी-केन्द्र ने विद्रोह के बारे में हिदायत देते हुए हुक्म निकाला और उसके सुनते ही क्रांतिकारी सैनिकों और लाल गारदों की टुकड़ियाँ जल्दी-जल्दी आकर स्मोल्नी में जमा होने लगीं। यहीं पार्टी-केन्द्र था। विद्रोह शुरू हो गया। उसी दिन लेनिन ने 'केन्द्रीय कमिटी के मेम्बरों को पत्र' में लिखा था :

" चाहे जो भी हो, आज ही इसी रात को सरकार को गिरफ्तार करना होगा, पहले युंकरों (जारशाही के अफसरों) को निःशस्त्र करना होगा। अगर वह प्रतिरोध करें, तो हराकर, इत्यादि।

" हमें इन्तजार नहीं करना होगा। नहीं तो हम सब कुछ खो देंगे।...

" इस बात का बिना चूके, आज ही शाम को या आज ही रात को निश्चय करना होगा; निर्णय करना होगा।...

" सरकार आगा-पीछा कर रही है, चाहे जो भी हो उसे नष्ट करना होगा।

" कार्रवाई में देर करना खतरनाक होगा।"

ये वाक्य कैसे दृढ़ निश्चयी और पारदर्शी पुरुष की लेखनी से निकले थे ? वस्तुतः यदि किसी को अन्तर्प्रत्यक्ष (इन्ट्यूशन) वाला कहा जा सकता है, तो वह लेनिन ही थे। उस समय जो शक्तियाँ एक-दूसरे के मुकाबले में खड़ी थीं, लेनिन उनके बलाबल को गणित के किसी प्रश्न के तौर पर साफ-साफ देख रहे थे। वह अन्तर्दृष्टि कामेनेफ, जिनोवियेफ और त्रॉत्स्की के पास नहीं थी, न वह तत्त्वदर्शी थे, और न दाव में सर्वस्व की बाजी लगाने की हिम्मत रखते थे। यशपाल ने अपने क्रांतिकारी जीवन के संस्मरणों में एक साथी को इसीलिए अयोग्य बतलाया है कि वह प्राण जाने की 99 प्रतिशत संभावना वाले काम के लिए तैयार होते समय, सबसे पहले जान बचाने की फिक्र करता था। लेनिन अपनी गुप्त झोंपड़ी में कितने तड़फड़ा रहे होंगे, लेकिन उनको स्तालिन जैसा सहायक मिला था, जो सभी बातों को अपने गुरु की दृष्टि से देख सकता था। उसी दिन स्तालिन ने 'रबोची पुत' में 'हमें क्या चाहिए ?' के नाम से एक लेख लिखा :

" वह समय आ गया है, जबकि और भी देर करना क्रांति के सारे उद्देश्य के लिए खतरनाक होगा।

" जमींदारों और पूँजीपतियों की वर्तमान सरकार की जगह, मजदूरों और किसानों की एक नई सरकार स्थापित करनी होगी।"

24 अक्तूबर (6 नवम्बर) की रात को लेनिन ने अपनी झोंपड़ी छोड़कर, संचालक-केन्द्र के स्थान स्मोलनी में आकर क्रांति-युद्ध की बागडोर अपने हाथों में सँभाल ली। सामन्ती-पूँजीपतियों की अन्तिम सरकार सचमुच ही सड़ी ही लाश साबित हुई। उसको जनसाधारण का न कोई विश्वास और न कुछ सहायता प्राप्त थी। 24 अक्तूबर के सवेरे केरेन्स्की ने शक्ति-परीक्षा करनी चाही, जब कि हथियारबन्द मोटरों के साथ उसने 'रबोची

पुत' को दबाना तथा पत्र के सम्पादन कार्यालय एवं छापाखाने को नष्ट कर डालना चाहा था। लेकिन, स्तालिन पक्के खिलाड़ी थे, वह दुश्मन की एक-एक हरकत से पहले ही वाकिफ हो जाते थे। इसलिए, उस दिन 10 बजे सवेरे ही लाल गारद और क्रांतिकारी सैनिक अपने मुख-पत्र की रक्षा के लिए वहाँ मौजूद थे। उन्होंने हथियारबन्द गाड़ी को वहाँ से भगाकर, आफिसों की रक्षा के लिए जबर्दस्त सैनिक गारद बैठा दी। उसी दिन, 11 बजे अखबार में स्तालिन का मशहूर लेख 'हमें क्या चाहिए ?' छपकर निकला। उसी दिन सशस्त्र क्रांति आरम्भ हो गई। यह वह नकली क्रांति नहीं थी, जिसमें एक सामन्त वंश दूसरे का स्थान लेता है, अथवा एक बूर्ज्वा दल दूसरे की जगह सरकार का संचालन करने लगता है, जिसका मतलब है–सिर्फ ऊपरी, मामूली-सा परिवर्तन तथा शोषण-उत्पीड़न का पूर्ववत् ही जारी रहना। यह वह क्रांति थी, जिसके द्वारा दुनिया के छठे भाग पर शोषकों की शासन-व्यवस्था समाप्त हुई और उसकी जगहं समाजवादी शासन आरम्भ हुआ। अब तक निठल्ली जोंकें भाग्य का निपटारा करती थीं। अब मजूर-किसान रूस के ही नहीं, विश्व के भाग्य-विधाता बननेवाले थे।

जिस असानी से और सबसे पहले नगर के शक्ति-केन्द्रों–तारघर, बिजली-कारखाना, बैंक आदि पर कब्जा किया गया, उससे मालूम होता है कि लेनिन ने सन् 1905 के एक-एक तजर्बे से फायदा उठाया था। राजनीतिक और सेना सम्बन्धी दाव-पेंच का सारा नेतृत्व लेनिन ने किया था। इसमें सन्देह नहीं कि लेनिन के दिमाग के बिना अक्तूबर की क्रांति सफल न होती।

क्रांति की बल-परीक्षा 7 नवम्बर को हुई। पुराने रूसी पंचांग के अनुसार उस दिन 25 अक्तूबर था, इसीलिए 'लाल क्रांति' को अक्तूबर-क्रांति भी कहते हैं। (3 महीने के बाद, 1 फरवरी, 1918 से पुराने पंचांग को छोड़कर, यूरोप में सर्वत्र प्रचलित पंचांग को स्वीकार किया गया, उस दिन पेत्रोग्राद के चौरस्ते और सड़कें युद्ध-क्षेत्र बन गई थीं। कहीं बाल्तिक के नौसैनिक लड़ रहे थे और कहीं कारखानों के मजदूर–जिनमें औरतें भी थीं–अपने रोजमर्रा के कपड़ों में रायफिलें लेकर दुश्मनों पर धावा बोल रहे थे। उसी दिन शाम को सोवियत की दूसरी कांग्रेस के उद्घाटन के समय, नयी सरकार के शासनारूढ़ होने की घोषणा की गई। कांग्रेस में बोल्शेविकों का बहुत बहुमत था। घोषणा के समय तक शरद् प्रासाद को छोड़कर सारी राजधानी सैनिक-क्रांतिकारिणी-समिति के हाथ में आ गई थी। केरेन्स्की संयुक्त राष्ट्र अमरीका के दूतावास की मोटर में बैठकर भाग गया। उस समय हेमन्त प्रासाद में अस्थायी सरकार के मंत्रिमंडल की बैठक हो रही थी। कुछ ही घंटों में हेमन्त प्रासाद बोल्शेविकों के हाथों में था और अस्थायी सरकार के सदस्य बन्दी थे। लेनिन ने खुद कांग्रेस में आकर इस विजय की घोषणा की थी। पिछली जुलाई से यह पहला अवसर था, जबकि वह जनता के सामने आये थे। उत्साह और आनंद के साथ, लोगों ने उनका स्वागत किया।

दूसरे दिन, नई सरकार स्थापित हुई। लेनिन अध्यक्ष हुए। सरकार का नाम रखा गया–सोवियत-जनता-कमीसार (सोवेत नरोद्निक कामिसरोफ), संक्षेप में सोव्-नर्-कोम्। अस्थायी मंत्रिमंडल के सदस्यों को मन्त्री कहा जाता था, उनसे भेद करने के लिए 'कमीसार' नाम रखा गया। प्रथम सोव्-नर-कोम् के सभी सदस्य बोल्शेविक थे। कामेनेफ, जिनोवियेफ, सिकोफ, लूनाचार्स्की, रियाजनोफ जैसे सर्वोच्च शिक्षित बोल्शेविकों ने लेनिन को धमकी दी कि यदि वह दूसरी समाजवादी पार्टियों को नहीं लेंगे, तो वे सहयोग नहीं देंगे। लेकिन, लेनिन जानते थे कि गंगा-जमुनी मंत्रिमंडल हानिकारक सिद्ध होगा। उन्होंने उनकी बात मानने से इन्कार कर दिया और कहा–"जो हमारी योजना नहीं मानते, हम उन्हें नहीं ले सकते।" उनका प्रोग्राम था–सभी शक्ति सोवियतों के हाथ में देना, लड़ाई को तुरन्त बन्द करना, रूस में बसनेवाली सभी जातियों को आत्म-निर्णय का अधिकार देना, भूमि और उद्योग-धंधों को व्यक्तियों के हाथ से छीनकर राष्ट्र के हाथ में दे देना।

अधिकार सँभालने के बाद लेनिन ने जो पहला काम किया, वह भूमि-सम्बन्धी घोषणा का था। कांग्रेस की दूसरे दिन (8 नवम्बर) की बैठक में प्रस्ताव पास हुआ कि "सभी जमींदारियाँ तथा उनके साथ के पशु और कृषि सम्बन्धी यंत्र आदि जब्त किए जाते हैं और उनको सँभालने का भार किसानों द्वारा निर्वाचित स्थानीय भूमि-समितियों के हाथ में दिया जाता है।"

इस प्रस्ताव ने किसान-सोवियतों की कांग्रेस–जो कि कुछ ही दिन बाद बैठी–को लेनिन के पक्ष में कर

दिया और इस प्रकार उन समाजवादियों को निराश होना पड़ा, जो किसान-सोवियतों से बोल्शेविकों के कड़े विरोध की आशा रखते थे।

सोव-नर-कोम ने अपने बोल्शेविक-प्रोग्राम को बड़ी ईमानदारी से पूरा किया। एक सप्ताह के भीतर ही उसने बैंक और उद्योग-धंधों को राष्ट्रीय बना दिया। काफी समय तक, नई सरकार ने पूँजीवादियों के साथ नरमी का बर्ताव किया। इस नरमी का उन्होंने फायदा उठाना चाहा। कलम-जीवी श्रेणी बड़ी कायर साबित हुई, वह देर तक विरोध पर न टिक सकी। हर पूँजीवादी को दिल में सोवयित-शासन से घृणा थी, लेकिन सामने आने की हिम्मत न थी। विरोध करनेवाले थे–सेना के बड़े-बड़े अफसर तथा शासन–विभाग के कुछ अफसर। उनके साथ सैनिक स्कूल के तरुण विद्यार्थी थे, जो कि प्रायः सभी धनिकों के लड़के थे। पत्रोग्राद् से बाहर भी सोवियत-शासन के फैलने में उतनी दिक्कत नहीं हुई।

इतनी आसानी से क्रांति को सफल बनाना लेनिन का ही काम था। इसके बारे में स्तालिन ने कहा है : "लेनिन सचमुच ही क्रांतिकारी विस्फोटों की एक अद्भुत प्रतिभा थे। बेढंगे से कोनों में भी वह आगे ही से उस दिशा को जान लेते थे, जिसकी ओर भिन्न-भिन्न वर्ग चलेंगे और जिन रास्तों पर जाने से क्रांति सफल होगी। इन सब बातों को मानो वह अपनी हथेली पर रखकर देख रहे हों। क्रांति में घंटों का नहीं, बल्कि मिनटों का भी बहुत मूल्य है, और लेनिन की प्रतिभा सेकिंडों का भी उपयोग करती थी।" राज्य की बागडोर सँभालते ही, नई सरकार के लिए यह जरूरी था कि युद्ध बन्द किया जाय। उन्होंने मित्र–शक्तियों को भी इसके लिए कहा कि बिना किसी भूभाग को दबाये 'सुलह कर लेनी चाहिए', लेकिन वे मानने के लिए तैयार नहीं थीं। अब जर्मनी के साथ इसके लिए बात करनी जरूरी थी। सोवियत सरकार ने प्रधान सेनापति दुखोनिन को आदेश दिया कि युद्ध की कार्रवाई बन्द करो। लेकिन जारशाही जेनरल दुखोनिन यह मानने के लिए कब तैयार था ? उस समय की घटना स्तालिन के शब्दों में सुनिये :

"... मुझे वह दिन याद है, जब लेनिन, किलेंको (भावी मुख्य सेनापति) और मैं पेत्रोग्राद में जनरल स्टाफ के हेडक्वार्टर में एक खास तार पर दुखोनिन से बातें करने गये थे।... दुखोनिन और हेडक्वार्टर के स्टाफ ने लोक कमीसार-परिषद् (मंत्रिमंडल) के आदेशों को मानने से साफ इन्कार कर दिया। सेना के कमांडर पूरी तौर से हेडक्वार्टर स्टाफ के हाथ में थे। और, सैनिक ?–कोई नहीं जानता था कि सेना क्या कहेगी; क्योंकि वह ऐसे संगठनों के अधीन थी, जो बिलकुल सोवियत सरकार के विरुद्ध थे। हम जानते थे कि पेत्रोग्राद में युंकर विद्रोह करने के लिए तैयार हो रहे हैं और केरेन्स्की राजधानी पर आक्रमण करने के लिए प्रयाण कर रहा है।... मुझे याद है, किस तरह टेलीफोन के सामने एक क्षण तक चुप रहने के बाद, एकाएक लेनिन का चेहरा अत्यन्त असाधारण रूप से चमक उठा। देखनेवाला समझ सकता था कि वह किसी निर्णय पर पहुँचे हैं। उन्होंने कहा–'हम बेतार के स्टेशन पर चलेंगे, वह हमारे मतलब को अच्छी तरह पूरा कर देगा। हम एक विशेष आदेश से जेनरल दुखोनिन को उसके पद से हटाकर, उसके स्थान पर साथी किलेंको को मुख्य सेनापति (कमांडर-इन-चीफ) नियुक्त करेंगे, और अफसरों को छोड़कर सीधे सिपाहियों से अपील करेंगे कि अपने जनरलों को गिरफ्तार कर लें, सभी सैनिक कार्रवाइयों को बन्द कर दें, आस्ट्रिया और जर्मनी के सैनिकों के साथ मेल-जोल करें और सुलह-शांति के काम को आगे बढ़ाना अपने हाथों में ले लें।"

लेनिन परिणाम समझते थे और वही हुआ भी।

4. ब्रेस्त-लितोव्स्क संधि

पश्चिमी शक्तियाँ बोल्शेविकों की संधि की बातों को मानने के लिए तैयार नहीं थीं। वह चाहती थीं कि युद्ध तब तक चलता रहे, जब तक कि जर्मनी चारों खाने चित न हो जाये और उसके उपनिवेशों तथा कितने ही भागों को इंग्लैंड और फ्रान्स अपने हाथों में न कर लें। इसीलिए, बोल्शेविकों को जर्मनी के साथ सुलह करके काम को आगे बढ़ाना था। जर्मनी के साथ सुलह की बात चलने लगी। जर्मन रूस की सैनिक अवस्था से फायदा

उठाना चाहते थे। वह कड़ी से कहीं शर्तें रख रहे थे। बातचीत के लिए त्रॉत्स्की को भेजा गया था। जर्मनी की कड़ी शर्तों को देख कर त्रॉत्स्की ने लेनिन के पास एक तार भेजा। जवाब में, लेनिन ने 15 फरवरी, 1918 को निम्न तार दिया : 'त्रॉत्स्की को जवाब। उसके प्रश्न का जवाब देने से पहले मुझे स्तालिन से सलाह लेनी होगी।' और, 18 फरवरी को लेनिन ने त्रॉत्स्की को तार दिया : 'स्तालिन अभी-अभी यहाँ पहुँचा। हम दोनों मिलकर स्थिति का अध्ययन करेंगे, फिर जितनी जल्दी हो सकेगा तुम्हारे पास संयुक्त उत्तर भेजेंगे। लेनिन।' जर्मनों की शर्तों को देखकर, त्रॉत्स्की इस संधि के खिलाफ था और हर गम्भीर बात में कोई भी निश्चय करने में असमर्थ, वह 'न शांति, न युद्ध' का मंत्र जप रहा था। लेकिन, लेनिन और स्तालिन को मालूम था कि वे इस समय ऐसा करने की स्थिति में नहीं थे। स्तालिन का समर्थन पाकर, लेनिन ने जर्मनों की सर्वथा अन्यायोचित शर्तों के साथ ब्रेस्त-लितोव्स्क संधि कर ली। क्रांति के बाद, घर के शत्रुओं और बाहर के सबल दुश्मनों–दोनों ही से लड़ना शक्ति से बाहर था, इसीलिए इस समय बाहर के शत्रु से अपने को बचाकर क्रांति की रक्षा करना सबसे पहला काम था। लेनिन जानते थे कि बाद में वे ऐसी स्थिति में होंगे, जब बाहरी शत्रुओं के मनसूबे विफल कर सकेंगे। इस संधि को लेकर, पार्टी के भीतर भयंकर झगड़ा पैदा हो गया। वामपक्षी उसका जबर्दस्त विरोध कर रहे थे। 23 फरवरी, 1918 को केन्द्रीय कमिटी की मीटिंग में वामपक्षियों को मुँहतोड़ जवाब देते हुए, लेनिन ने कहा था :

"कुछ विश्राम मिलना चाहिए, नहीं तो, क्रांति का अन्त हो जायेगा। हमारे सामने प्रश्न है–या तो हमारे देश में क्रांति पराजित होती है, और यूरोप में भी क्रांति के मार्ग में बाधाएँ होती हैं, नहीं तो हमें कुछ समय मिले जिसमें हम अपनी स्थिति को मजबूत कर सकें।"

स्तालिन, स्वेर्दलोफ और दूसरे बोल्शेविकों के साथ, लेनिन अपनी बात पर दृढ़ रहे और कमिटी के बहुमत ने उनकी बात को स्वीकार किया। लेनिन ने इस संधि को 'शोकजनक संधि' कहा था और अगले दिन लिखा था : "संधि की शर्तें असह्य हैं। तो भी, इतिहास का निर्णय दूसरा ही होगा।··· आओ, हम काम में लगें, संगठन करें, संगठन करें और संगठन करें; चाहे कितनी ही परीक्षाओं में पड़ना पड़े, भविष्य हमारा है।"

5. उक्रइनी रादा

उक्रइन में, वहाँ के राष्ट्रवादियों ने इस नाम से अपनी सरकार स्थापित कर ली थी, जिसमें विदेशी सेनाओं, मेन्शेविकों और समाजवादी क्रांतिकारियों ने उनकी सहायता की थी। इसका फल सोवियत सरकार और उक्रइनी रादा के बीच संघर्ष के रूप में हुआ था। ऐसे पेचीदा काम के लिए, लेनिन की नजर स्तालिन को छोड़कर और किस पर पड़ती ? स्तालिन ही भेजे गये। वहाँ उन्होंने रादा के राजनीतिक रूप को देखा–वह दावपेंच चलाकर सर्वहारों और किसानों को अधिकार से वंचित कर सामन्तों-पूँजीपतियों का शोषण जारी रखना चाहते थे। अक्तूबर-क्रांति ने मजदूरों और किसानों को भी सजग कर दिया था। इस प्रकार, वहाँ रादा और सर्वहारा–दो शक्तियों का मुकाबला था। स्तालिन की नीति के आगे रादा कैसे ठहरता ? उन्होंने उक्रइन की जनता का नेतृत्व किया और रादा को मुँह की खानी पड़ी। बेलोरुसिया में भी, सोवियत-प्रभाव को बढ़ाने में स्तालिन का जबर्दस्त हाथ था। जातियों की समस्या और उसका हल स्तालिन का अपना विषय था, जिस पर वह पिछले बारह वर्षों से मनन कर रहे थे। स्वयं भी एशियाई जाति के होने के कारण, वह उनकी मनोवृत्ति से पूरी तौर से वाकिफ थे। रूसियों की तरह, दूसरे लोगों में भी सर्वहारा, गरीब किसान और शोषक सामन्त, पूँजीपति दो वर्ग थे। जातीय शक्ति को क्रांति के विरुद्ध न जाने देने के लिए, दोनों वर्गों के इस रूप को सर्वहारा के सामने स्पष्टता से रखना जरूरी था। कोई भी स्तालिन को कल की प्रभु जाति का, रूसी कहकर सन्देह नहीं कर सकता था।

काकेशस में वर्षों क्रांति का काम करते हुए, स्तालिन ने अपने प्रति रूस की भिन्न-भिन्न जातियों का पूरा विश्वास पैदा कर लिया था। स्तालिन तातार-बाश्किर गणराज्य की संविधान कांग्रेस के अध्यक्ष हुए थे। यह भी स्तालिन के प्रति गैर-रूसी जातियों के विश्वास को प्रकट करता था। उन्होंने इस कांग्रेस में अध्यक्ष-पद से जो भाषण दिया था, वह 10 मई, 1918 के 'प्राव्दा' में छपा था। उन्होंने इस भाषण द्वारा तातार-बाश्किर

के मुसलमानों से ही नहीं, बल्कि पूर्व की सभी मुसलमान जातियों से अपील की थी। आगे हम देखते हैं कि पूर्व की इन मुसलमान जातियों ने युगों के अत्याचारों से मुक्ति दिलाने वाले संघर्षों में बहुत महत्त्वपूर्ण भाग लिया है। काकेशस के गरीबों को मेन्शेविकों, दशनकों (अर्मनी राष्ट्रवादियों) और मोसावातियों (काकेशीय मुस्लिम राष्ट्रवादियों) के फन्दे से निकालने में, स्तालिन का बहुत बड़ा हाथ था। एशियाई जातियों में भी, सोवियत शासन ने इस तरह आसानी से जो विजय-यात्रा की, उसमें स्तालिन के प्रयत्नों और दूरदर्शिता ने भारी काम किया है।

रूस में क्रांति हो जाने के बाद, यह जरूरी था कि विश्व के सर्वहारा वर्ग की सहानुभूति को भी एक संगठित रूप दिया जाय, जिससे और देशों में भी क्रांति होने में आसानी हो। केन्द्रीय कमिटी के आदेश के अुनसार, जनवरी सन् 1918 में यूरोप और अमरीका की समाजवादी पार्टियों के क्रांतिकारी तत्त्वों के प्रतिनिधियों की एक कान्फरेंस बुलाई गई। यह कान्फरेंस तृतीय कम्युनिस्ट इन्टर्नेशनल की स्थापना में बड़ी सहायक हुई।

6. आहार समस्या (सन् 1918)

जिस समय बोल्शेविकों ने राज्य-शासन अपने हाथों में लिया था, उस समय पेत्रोग्राद (आधुनिक लेनिनग्राद)–राजधानी में केवल दो दिन का खाद्य मौजूद था। स्तालिन ने सभी गोदामों और अनाज के ढेरों की खोज-पड़ताल करके, किसी तरह दस दिन की रोटी का प्रबन्ध किया। रयाबुशिन्स्की और दूसरे क्रांति-विरोधियों की यह धमकी केवल बन्दरघुड़की नहीं थी कि वे अकाल के हाथों क्रांति का गला घुटवा देंगे। यदि लड़ाई के कारण चारों ओर फैली हुई भुखमरी ने क्रांतिकारियों की शक्ति को बढ़ाया था, तो भुखमरी से बचाने के लिए कोई रास्ता न निकालने पर क्रांति को भी खतरा पैदा हो सकता था। आहार की समस्या का हल त्रॉत्स्की जैसे हवाई नेता क्या कर सकते थे ? इसलिए, इस समस्या का भार सौंपते हुए, 29 मई, 1918 को लोक-कमीसार-परिषद् ने निश्चय किया :

> "लोक-कमीसार-परिषद् (मंत्रिमंडल) लोक-कमीसार-परिषद् के सदस्य, लोक कमीसार–योसेफ बिसारियोनोविच स्तालिन को दक्षिणी रूस में खाद्य-विभाग का डाइरेक्टर जनरल (प्रधान संचालक) नियुक्त करती है।"

लेकिन, रोटी प्राप्त करना आसान नहीं था। देश में अन्न के भंडार–दक्षिणी रूस–को सफेद गारदों (क्रांति-विरोधियों) ने अलग काट दिया था। इस काम में हाथ लगाते ही, स्तालिन ने समझ लिया कि वह हथियार के बल पर ही अन्न पा सकते हैं। मंत्रिमंडल के निश्चय से पहले ही, स्तालिन ने लेनिन की राय से दक्षिण की ओर प्रस्थान कर दिया था। स्तालिन ने लेनिन से बात करते हुए, वहाँ से टेलीफोन पर कहा था :

> "उत्तरी काकेशस में अनाज का बहुत भारी जखीरा मौजूद है। लेकिन, रेलवे लाइनों के कट जाने से उसे उत्तर की ओर नहीं भेजा जा सकता। जब तक कि लाइन को ठीक न कर दिया जाता, तब तक अनाज के यातायात की बात ही नहीं उठ सकती। समारा और सरातोफ के प्रदेशों में अभियान भेजा गया है। लेकिन, अगले कुछ दिनों तक अनाज भेजना सम्भव नहीं होगा। हम आशा करते हैं कि करीब दस दिनों में रेलवे लाइन ठीक हो जायेगी। सारी शक्ति लगाकर डटे रहिये। मछली और मांस का राशन चलवाइये। हम उसे खूब अच्छे परिमाण में भेज सकते हैं। एक सप्ताह के भीतर अवस्था अनुकूल हो जायेगी।"

स्तालिन ने इस नये क्षेत्र में कितनी जल्दी सफलता पाई, यह चन्द दिनों बाद ही लेनिन के पास भेजे हुए उनके इस तार से मालूम होता है :

> "इस रास्ते से आपको 160 गाड़ी अनाज और 64 गाड़ी मछली पहुँच जायेगी। बाकी चीजें सरातोफ के रास्ते से भेजी जायेंगी।"

7. जारित्सीन

स्तालिन को दक्षिण में अन्न बटोरकर भेजने के लिए रवाना किया गया था। स्तालिन ने देखा कि अन्न पाने

का रास्ता भी लड़ाई के द्वारा ही है। उस समय, दोन-क्षेत्र में क्रांति-विरोधी बड़े जोर-शोर से काम कर रहे थे, जिनके कारण वोल्गा के किनारे का नगर जारित्सीन (वर्तमान स्तालिनग्राद) एक सैनिक महत्त्व का स्थान बन चुका था। जमींदारों को हटा कर, जमीन पर किसानों का अधिकार स्थापित किया गया। इसे कुलक (धनी किसान) बर्दाश्त करने के लिए तैयार नहीं थे। सर्वहारों के ये क्रूर शत्रु हर जगह सोवियत सरकार के खिलाफ विद्रोह करवा रहे थे। अन्न का रास्ता रोककर, वह सचमुच ही क्रांति का गला घोंटना चाहते थे।

क्रांति और गृह-युद्ध के समय, हम अनेक बार देखेंगे कि लेनिन सबसे खतरनाक मोर्चे और दुष्कर कार्य पर स्तालिन ही को भेजते थे। वह जानते थे कि वही ऐसी कठिनाइयों में रास्ता ढूँढ़ सकते हैं। स्तालिन को आहार के संचय के लिए उधर भेजकर, मंत्रिमंडल (द्वितीय महायुद्ध के बाद तक सोवियत सरकार के मंत्रिमंडल को लोक-कमीसार-परिषद् कहा जाता था, जिसे हम आसानी से समझने के लिए मंत्रिमंडल कहेंगे। मंत्रियों को उस समय लोक कमीसार के नाम से पुकारा जाता था) ने उसी समय 'सभी मेहनतकश लोगों को' के नाम से एक घोषणा निकालकर कहा :

> "साइबेरियन रेलवे के कुछ केन्द्रों पर क्रांति-विरोधियों का अधिकार हो जाने से कुछ समय के लिए भूखों मरते हुए देश के लिए अन्न की प्राप्ति कठिन हो जायेगी। लेकिन, रूसी, फ्रेंच, अंग्रेज और चैकोस्लोवाकी साम्राज्यवादी क्रांति को भूखों मारकर मजबूर करने में, नत-मस्तक करने में सफल नहीं हो सकेंगे। भूखे उत्तर की सहायता के लिए, दक्षिण-पूर्व आगे आ रहा है। लोक कमीसार स्तालिन इस समय जारित्सीन में हैं, जहाँ वह दोन तथा कूबान के इलाकों से खाद्य-संचय के काम का संचालन कर रहे हैं। वह तार द्वारा हमें सूचित कर रहे हैं कि वहाँ पर अन्न का भारी जखीरा है, जिसे वह एक सप्ताह के भीतर ही उत्तर की ओर भेजने की आशा करते हैं।"

नई सरकार में सेना-मंत्री का पद त्रॉत्स्की को दिया गया था। त्रॉत्स्की कभी भी लेनिन का विश्वासपात्र नहीं रहा था। क्रांति के पहले, बहुत वर्षों तक तो वह लेनिन-विरोधियों का अगुवा था। पर, क्रांति के पहले दिनों में यह जरूरी था कि जितनों को भी क्रांति के विरुद्ध न जाने दिया जाय, उतना ही अच्छा हो। लेकिन, अब उसके कारण सैनिक मोर्चों में तत्परता और अनुशासन की कमी दिखाई पड़ती थी। जारित्सीन वोल्गा के किनारे ऐसे मुकाम पर था, जहाँ से दक्षिण में काकेशस और उक्रइन की सैनिक परिस्थिति को भी देखा जा सकता था और साइबेरिया के क्रांति-विरोधी क्या कर रहे हैं इसका पता भी वहीं से पाया जा सकता था। स्तालिन को अन्न जमा करने के लिए भेजा गया था, लेकिन उनके अपने शब्दों में ही : "मैं युद्ध-विभाग के गन्दे तबेलों को साफ करने का विशेषज्ञ बन गया।" सचमुच ही, त्रॉत्स्की ने युद्ध-विभाग को गन्दा तबेला बना रखा था। स्तालिन को वहाँ दो वर्ष रहकर तबेले को साफ करके, शत्रुओं के मनसूबों को चूर-चूर करना पड़ा। इसमें उन्हें बोरोशिलोफ और मीनिन जैसे योग्य सहायक मिले थे। देश में हर जगह क्रांति का खतरा पैदा हो गया था। मॉस्को में यदि समाजवादी क्रांतिकारी विद्रोह करने पर उतारू थे, तो पश्चिम में मुरावियेफ शत्रुओं के सामने क्रांति के पक्ष को कमजोर बना रहा था। युद्ध के समय बन्दी बनाकर साइबेरिया भेजे गये, चैक क्रांति-विरोधी उराल प्रदेश में सोवियत के खिलाफ अपनी शक्ति मजबूत कर रहे थे। बाकू के तेल-क्षेत्र को देख कर, अंग्रेजों के मुँह में पानी क्यों न भर आता ? इसलिए, वह अपने दाव-पेंच चला रहे थे। यह क्रांति का सौभाग्य था कि स्तालिन ऐसे ही समय में जारित्सीन पहुँचे। वह जानते थे कि दोन प्रदेश के विद्रोह की सफलता और जारित्सीन के हाथ से निकल जाने पर, सारे उत्तरी काकेशस के गेहूँ का प्रदेश हाथ से निकल जायेगा। जारित्सीन में रहते समय, स्तालिन का लेनिन के साथ लगातार पत्र-व्यवहार और तार द्वारा विचार-विमर्श होता रहता था। जारित्सीन में पहुँचने के साथ ही, स्तालिन के शब्दों में :

> "मैं उन सभी को धमकाता और बुरा-भला कहता हूँ, जिनको इसकी जरूरत है। साथी लेनिन, आप निश्चिंत रहें, मैं किसी को भी दम नहीं लेने दूँगा, न खुद दम लूँगा। चाहे कुछ भी हो, हम आपके पास गेहूँ भेजेंगे। अगर हमारे सैनिक विशेषज्ञ–जिनके दिमागों में गोबर भरा हुआ है–सोये न रहते तो हमारी लाइन कभी न कटी होती; और अगर हम उसे फिर से ठीक कर लेते हैं, तो यह उनकी सहायता

से नहीं, बल्कि उनकी कार्रवाइयों के बावजूद ही।"

स्तालिन ने इस सारे प्रदेश को भयंकर अस्त-व्यस्त रूप में पाया। कम्युनिस्ट मजदूर सभा ही नहीं, सैनिक संगठन भी बिलकुल टूटे-फूटे थे। ऊपर से क्रांति-विरोधी कसाकों के साथ टक्कर का भारी डर पैदा हो गया था, जिन्हें उक्रइन पर दखल जमाये बैठी जर्मन सेना पूरी मदद दे रही थी। एक के बाद एक, जारित्सीन के सभी इलाकों को सफेद गारदों ने अपने अधिकार में कर लिया था; मॉस्को तथा पेत्रोग्राद की ओर भेजे जानेवाले अन्न के यातयात को बिलकुल रोक दिया था। अब स्वयं जारित्सीन भी खतरे में पड़ गया था।

ऐसी अवस्था में, स्तालिन के लिए सिवाय इसके और कोई चारा नहीं था कि सैनिक कमांड को भी अपने हाथ में ले लें। 11 जुलाई के तार में उन्होंने लेनिन को लिखा :

> "अवस्था इसलिए और भीषण हो गई है कि उत्तरी काकेशस का हेडक्वार्टर-स्टाफ क्रांति-विरोधियों से लड़ने में बिलकुल असमर्थ है। जनरल हेडक्वार्टर के अधीन रहना तथा अभियान की योजनाएँ तैयार करना ही अपना काम समझकर, और बातों से बिलकुल अलग-थलग, वह अपने को केवल तमाशा देखनेवाले ही समझते हैं। और इसीलिए, कार्रवाइयों में कुछ भी दिलचस्पी नहीं लेते।"

स्तालिन ने बीमारी पहचान ली, लेकिन वह इतने ही से चुप रहनेवाले नहीं थे। उन्होंने आवश्यक कार्रवाई भी शुरू की :

> "जब मैं देख रहा हूँ कि उत्तरी काकेशस के मोर्चे की रसद का रास्ता कट गया है और सारे उत्तरी रूस का सम्बन्ध अपने गेहूँ-क्षेत्र से टूट चुका है, तो मैं कैसे चुपचाप रह सकता हूँ ? मैं इस कमजोरी को, और दूसरी भी कितनी ही स्थानीय कमजोरियों को दूर करूँगा। मैं इसके लिए ठीक से उपाय कर रहा हूँ। हमारे काम को बिगाड़नेवाली रेजीमेण्ट तथा स्टाफ के अफसरों को अगर हटाना पड़ेगा, तो भी किसी तरह की कायदे आदि की कठिनाइयों की परवाह न कर, जरूरत पड़ने पर उनकी उपेक्षा भी करते हुए, इस काम को करूँगा। इसके लिए स्वभावतः ऊपर की सारी जिम्मेवारी मैं अपने ही ऊपर लेता हूँ।"

सारे लाल संगठन को ठीक से अपने पैरों पर खड़ा करने के लिए, मॉस्को से जवाब आया : "फिर से व्यवस्था कायम करो। सैनिक टुकड़ियों को बाकायदे सेना के रूप में बनाओ। एक ठीक कमांड की नियुक्ति करो। जो आज्ञा-पालन के लिए तैयार नहीं हैं, उन्हें हटा दो।"–यह आदेश क्रांतिकारी युद्ध-परिषद् की ओर से आया था, जिसमें लिखा हुआ था : 'यह तार लेनिन की सम्मति से भेजा जा रहा है।'

जारित्सीन में भयंकर स्थिति थी। वहाँ व्यवस्था कायम करना असम्भव-सा मालूम होता था : "लेकिन स्तालिन झूठे ही फौलादी नहीं कहे जाते थे। उन्होंने उसी अव्यवस्था में, छूमंतर की तरह, सुव्यवस्था स्थापित की। एक क्रांतिकारी युद्ध-परिषद् कायम हो गई, जिसने उसी वक्त बाकायदा एक सेना का संगठन कर डाला। जल्दी-जल्दी सैनिक कोरें बनाई गईं, और उनको डिवीजनों, ब्रिगेडों और रेजीमेंटों में विभक्त कर दिया गया। सैनिक स्टाफ, रसद-व्यवस्था और मोर्चे से पीछे स्तालिन के हाथों के सैनिक संगठनों से सभी क्रांति-विरोधी आदमियों को निकाल बाहर किया गया। वही बात सोवियत तथा कम्युनिस्ट पार्टी के संगठनों की हुई। वहाँ पक्के के बोल्शेविकों की कमी नहीं थी, जब ऊपर से लादे गये अविश्वसनीय आदमियों को हटाकर उन्हें रखा गया, तो क्रांति एक दूसरे ही रूप में दिखलाई देने लगी। दोन का क्षेत्र जारित्सीन से बहुत दूर नहीं है, जहाँ पर क्रांति-विरोधी अपने को बड़ा शक्तिशाली समझते थे; लेकिन स्तालिन ने उन्हीं की नाक के नीचे एक जबर्दस्त मोर्चा कायम कर लिया।

पार्टी और सैनिक संगठनों में ही विश्वासघाती नहीं घुस गये थे, बल्कि सारे जारित्सीन नगर में क्रांति-विरोधी अपना जाल बिछाये हुए थे। समाजवादी क्रांतिकारी, आतंकवादी और राजवादी–सभी मिलकर क्रांति को विफल करने के लिए तैयार थे। लेकिन, स्तालिन ने बहुत मजबूत हाथों से झाड़ू फेरनी शुरू की। मध्यवर्गीय शरणार्थियों का समूह यहाँ आकर डेरा डाले हुए था, और वह खुलकर सफेद अफसरों के साथ मिले हुए थे। फुटपाथों, सड़कों, सार्वजनिक उद्यानों और विनोद-शालाओं में, जहाँ भी देखो, वहीं जारित्सीन खुले षड्यंत्र के केन्द्र का रूप धारण किए हुए था। स्तालिन जानते थे कि यह सब बाहरी दिखावा है, और इसको तभी तक शक्ति प्राप्त

है, जब तक कि शासन का सूत्र अयोग्य कर्मचारियों के हाथों में है। स्तालिन ने वहाँ बात की बात में एक नया वातावरण पैदा कर दिया। स्तालिन के संचालन में, स्थानीय क्रांतिकारी युद्ध-परिषद् ने एक विशेष कार्यकारिणी कमिटी कायम करके, उस पर इन आदमियों का ध्यान से परीक्षण करने का काम सौंपा। इसमें शत्रुओं की हर एक खतरनाक योजना और दुरभिसंधि का पता लगाया। नासोविच सैनिक कार्रवाई का मुख्य अफसर था, जो विरोधी बनकर क्रास्नोफ की सफेद सेना में चला गया था। उसने बाद में जारित्सीन की स्थिति का विवरण एक सफेद अखबार 'दोन-संघर्ष' (3 फरवरी, 1919) में दिया था। उसने इस बात को कबूल किया कि स्तालिन किसी काम को हाथ में लेकर अधूरा नहीं छोड़ते। उन्होंने सैनिक और असैनिक–सारे शासन-प्रबन्ध को अपने हाथ में लेकर, क्रांति के शत्रुओं के सारे प्रयत्नों और चालों को एक-एक करके व्यर्थ कर दिया। उस समय स्थानीय क्रांति-विरोधी संगठन बहुत शक्तिशाली हो गये थे। मॉस्को से आये हुए पैसे की सहायता से, वह सैनिक दखलंदाजी की तैयारी करते और दोने के कसाकों की मदद से, जारित्सीन को बोल्शेविकों से मुक्त करना चाहते थे। उनके दुर्भाग्य से इन संगठनों के मुखिया–जिनमें इंजीनियर अलेक्सियेफ और उसके दो पुत्र भी थे–को वास्तविक स्थिति का बहुत कम पता था। उनके एक गलत कदम उठाने के कारण संगठन का पता लग गया। अलेक्सियेफ अपने दो पुत्रों तथा काफी संख्या में सहयोगियों के साथ गोली से मार दिया गया।

जुलाई सन् 1918 में मॉस्को में विद्रोह करके, वाम पक्षीय समाजवादी क्रांतिकारी अब जारित्सीन पर भी आक्रमण करनेवाले थे। लेनिन को भी इस खतरे का पता लग गया था, जिसके लिए स्तालिन को टेलीफोन करने पर, उन्हें जवाब मिला : "जहाँ तक इन खप्तियों का सवाल है, आपको निश्चिंत रहना चाहिए। हम दृढ़ता के साथ तैयार हैं। शत्रुओं के साथ, हम शत्रुओं जैसा ही बर्ताव करेंगे।"

स्तालिन ने लोगों में एक नई स्फूर्ति, एक नया उत्साह पैदा कर दिया। सैनिक और राजनीतिक नेता तथा पलटन के साधारण सिपाही भी अनुभव करने लगे कि एक सच्चे और मजबूत नेता से काम पड़ा है, जो उन लोगों के साथ जरा भी दया दिखाने के लिए तैयार नहीं है जो फिर से पुरानी दासता में ले जाना चाहते हैं। नसोविच ने त्रॉत्स्की की बौखलाहट को भी अपने उसी लेख में बतलाते हुए कहा है : "इतनी मेहनत से तैयार किए हुए सैनिक कमांड को नष्ट होते देखकर, त्रॉत्स्की घबड़ा गया और उसने तार भेजकर कहा कि हेडक्वार्टर-स्टाफ और कमीसारों को फिर से उनके पदों पर स्थापित करके उन्हें अपना काम करने देना चाहिए। स्तालिन ने उस तार पर लिख दिया : 'इसकी ओर कोई ध्यान नहीं देना चाहिए।' और, उस तार की ओर बिलकुल ध्यान नहीं दिया गया। जारित्सीन में सारा तोपखाना-कमांड और हेडक्वार्टर-स्टाफ का भी एक भाग एक स्टीमर के ऊपर वैसे ही बेकार बैठा रहा।

स्तालिन किसी काम को आधे मन से करना नहीं जानते थे। वह नया संगठन करने में ही अपने काम को समाप्त नहीं समझते थे। जारित्सीन के चार सौ मील के मोर्चे पर, उन्होंने स्वयं जगह-जगह जाकर बोल्शेविक-शासन को मजबूत किया। स्तालिन ने कभी सेना में काम नहीं किया था। युद्ध ने जबर्दस्ती भरती होने का एक मौका दिया था, लेकिन जारशाही डर गई थी। अब यहाँ जारित्सीन में आकर, उन्होंने पहले-पहल अपनी सैनिक प्रतिभा का परिचय दिया। उस समय भी, नजदीक से जानकारी रखनेवाले नहीं कह सकते थे कि स्तालिन में इस काम के करने की कोई अपनी मौलिकता नहीं है। दूसरे महायुद्ध में तो दोस्त और दुश्मन–दोनों को ही मानना पड़ा है कि सैनिक दाव-पेंच में भी यह पुरुष उतना ही निष्णात था, जितना राजनीतिक और अर्थनीतिक क्षेत्रों में। कगानोविच ने इस बारे में लिखा है :

> "मुझे जैसे वह बात कल की ही मालूम होती है। सन् 1918 के आरम्भ में, क्रास्नोफ की कसाक सेना ने जारित्सीन पर आक्रमण किया और उसे चारों ओर से घेरकर, लाल सेना को वोल्गा पर ढकेलने की कोशिश की। एक कम्युनिस्ट डिवीजन के अधीन, दौनेत्स्क के कमकरों से बनी हुई इस लाल सेना ने कई दिनों तक, पूरी तौर से शिक्षित और संगठित कसाकों के आक्रमण को अद्भुत दृढ़ता के साथ रोका, वह सचमुच ही भयंकर दिन थे। तुम उस समय स्तालिन को देख सकते थे। वह हमेशा की तरह शान्त और अपने विचारों में लीन रहते थे। वस्तुतः, वह बिलकुल नींद न लेते थे। वह अपने अनथक

काम को युद्ध-पंक्ति और सैनिक हेडक्वार्टर में बाँटे हुए थे। मोर्चे पर हालत प्रायः निराशाजनक थी। फिजखलोरोफ, मामोन्तोफ और दूसरे अफसरों के नेतृत्व में, आस्नोफ की सेनाएँ हमारी थकी-माँदी पलटनों का भीषण संहार कर रही थीं। शत्रु का व्यूह अर्धगोलाकार था, जिसके दोनों छोर वोल्गा पर थे। वह दिन-प्रतिदिन और अधिक भूमि घेरता जा रहा था, निकलने का कोई रास्ता नहीं था। लेकिन, स्तालिन ने इसकी चिंता नहीं की। उनके दिमाग में सिर्फ एक ही विचार था—हमें जीतना है। स्तालिन की यह अदम्य इच्छाशक्ति ही थी, जिसने उनके नजदीकी सहायकों में जान फूँक दी। यद्यपि हम ऐसी स्थिति में थे, जहाँ बचाव का कोई रास्ता नहीं रह गया था, तो भी किसी को एक क्षण के लिए विजय में सन्देह नहीं था; और हम विजयी हुए ! पराजित शत्रु-सेना को दोन नदी के उस पार भगा दिया गया।"

जारित्सीन के वे दिन कितने भयंकर थे, कितने निराशापूर्ण थे, और स्तालिन ने उनमें किस तरह सफलता प्राप्त की, यह बतलाता है कि बाद में, स्तालिनग्राद के नाम से मशहूर इसी जारित्सीन में हिटलर की विजयोन्मत्त सेना को क्यों भयंकर हार खानी पड़ी।

जारित्सीन को बचाकर और क्रांति-विरोधियों की शक्ति को छिन्न-भिन्न करके, स्तालिन ने सोवियत जनता को अकाल और भुखमरी से बचा लिया, साथ ही वहाँ सैनिक महत्त्व का एक ऐसा जबर्दस्त गढ़ तैयार किया, जिसने उत्तरी काकेशस, दक्षिणी उक्रइन और साइबेरिया से आनेवाले क्रांति-विरोधियों के तूफान को बेकार बना दिया।

स्तालिन ने जिस समय जारित्सीन में यह सफलता प्राप्त की थी, उसी समय उक्रइन में जर्मनों ने भयंकर स्थिति पैदा कर दी थी।

8. उक्रइनी मोर्चा

जारित्सीन के विजेता को अब केन्द्रीय कमिटी ने उक्रइन के मोर्चे पर भेजा। उनके साथ बोरोशिलोफ आदि, बारह पार्टी कार्यकर्ता भेजे गये। नवम्बर के अन्त में, क्रांति की सेनाएँ पेतलुरा और जर्मनों के विरुद्ध आगे बढ़ीं और उन्होंने उक्रइन के महान् नगर रकोफ को मुक्त कर लिया। उक्रइन ही नहीं, पश्चिम में मिन्स्क को भी लाल सैनिकों ने दुश्मनों के हाथ से आजाद किया।

30 नवम्बर, 1918 को लेनिन की अध्यक्षता में कमकर-किसान-परिषद् कायम की गई, जिसका काम था—मोर्चे और युद्ध-पंक्तियों के पीछे भी प्रतिरक्षा के सारे काम का संचालन करना, तथा उद्योग-धंधों, यातयात-व्यवस्था या देश के सभी सम्पत्ति-स्रोतों को इसी काम में लगाना।

9. गृह-युद्ध

बोल्शेविक अच्छी तरह से जानते थे कि गृह-युद्ध को खतम किये बना समाजवादी राज्य ढंग से कायम नहीं किया जा सकता। जिन जोंकों को उन्होंने पदच्युत किया था; पीढ़ियों और सहस्राब्दियों से जो 'परमुंडे फलाहार' करते थे, दुख और चिन्ता के दिन नहीं देखे थे, वह अपने पैरों के नीचे से धरती खिसती देखकर शान्त नहीं बैठे रह सकते थे। सामंत और पूँजीपति अपनी पशुता और बर्बरता को चरम रूप में दिखाये बिना, ऐसे ही हथियार नहीं डाल देंगे। इसलिए, रूस के साम्राज्यवादी युद्ध से छुट्टी पाने का मतलब यह नहीं था कि वह गृह-युद्ध से बच जायेगा। पूँजीवादी राष्ट्र इसीलिए तो उस महायुद्ध को चला रहे थे कि विश्व में अपनी-अपनी शक्ति को मजबूत करते हुए, देशों को परतंत्र बनाते हुए, जनसाधारण का शोषण और दोहन करें। समाजवाद चुपके से दुनिया के छठे हिस्से को अपने हाथ में कर ले, यह भला वह कैसे पसन्द कर सकते थे ? जर्मनी से छुट्टी पाते ही, उनका ध्यान इस तरफ गया। इंग्लैंड और फ्रांस के साम्राज्यवादियों ने चैकोस्लोवाकी सेनाओं को बड़े यत्नपूर्वक विद्रोह के लिए उकसाया; रूसी क्रांति-विरोधी—कादतों, मेन्शेविकों और समाजवादी क्रांतिकारियों—की पीठ पर हाथ रखा। सन् 1918 के पूर्वार्ध में ही, दो निश्चित शक्तियाँ सोवियत शासन को उठा फेंकने के लिए तैयार हो रही थीं। वह थीं—विदेशी साम्राज्यवादी मित्र शक्तियाँ और घर में क्रांति-विरोधी।

सोवियत के विरुद्ध संघर्ष शुरू कर लेने पर, यह दोनों विरोधी शक्तियाँ एक होने के लिए मजबूर हुईं। यह एकता सन् 1918 के पूर्वार्ध में स्थापित हो गई थी। इस प्रकार, जर्मनी से फुर्सत पाने पर, क्रांति के बाद के कुछ महीनों का जो विश्राम मिला था, उसे साम्राज्यवादियों ने खतम कर दिया और गृह-युद्ध शुरू हो गया। रूस के कमकरों-किसानों का यह युद्ध विदेशी-स्वदेशी शत्रुओं के विरुद्ध हुआ। शत्रुओं ने पाँच मुख्य मोर्चे स्थापित किए थे, जहाँ से वह रूस के भिन्न-भिन्न भागों पर भयंकर प्रहार कर रहे थे। ये मोर्चे थे : (1) पूर्वी मोर्चा, जिसका नेता कोलचक्र था; (2) दक्षिणी (काकेशस) मोर्चा, जिसका नेता देनीकिन था; (3) उत्तर-पश्चिमी मोर्चा, जिसका नेतृत्व रोदजेंको और यूदेनिच के हाथों में था; (4) पोल-मोर्चा और (5) रेंगल-मोर्चा। गृह-युद्ध के समय, सोवियत सरकार की प्रायः सारी शक्ति इन भीषण शत्रुओं का मुकाबला करने में लगी हुई थी। कम्युनिस्ट पार्टी और तरुण कम्युनिस्ट लीग के 57 प्रतिशत सदस्य हथियार लेकर लड़ रहे थे, और शत-प्रतिशत को शत्रुओं से लड़ने के लिए सेना में भरती होना पड़ा था। इस युद्ध में स्तालिन ने क्या पार्ट अदा किया, इसे वर्तमान सोवियत-राष्ट्रपति बोरशिलोफ के शब्दों में सुनिए :

> "सन् 1918 से 1920 के समय में, सम्भवतः साथी स्तालिन अकेले ही ऐसे आदमी थे, जिसे केन्द्रीय कमिटी एक मोर्चे से दूसरे मोर्चे पर भेजती रही। क्रांति के लिए जिस जगह सबसे ज्यादा खतरा होता, वह उन्हें ही भेजती थी।"

4 अगस्त, 1918 में जारित्सीन से स्तालिन ने लेनिन को लिखा था : "अब फिर उन्हीं बातों को आरम्भ करना पड़ा है। हमने रसद का इन्तजाम किया, सैनिक-कार्रवाई के विभाग को कायम किया, मोर्चे के सभी भागों के साथ संचार-सम्बन्ध स्थापित किया, पुरानी व्यवस्था—जो कि अपराधपूर्ण व्यवस्था थी—को हटाया, और यह सब करने के बाद ही, तिखोरेच्क के दक्षिण तथा कलाच पर आक्रमण किया है।"

10. पेर्म का मोर्चा

वस्तुतः, क्रांति अभी तक अपना कोई सुव्यवस्थित सैनिक संगठन नहीं कर सकी थी। पुरानी सेना जारशाही के खतम होने के साथ ही विलीन हो गई थी। नई सेना का अभी-अभी निर्माण किया गया था। सेना-संचालन का काम त्रॉत्स्की जैसे को दिया गया था, जिसे न सेना का ज्ञान था, और न जिसमें सैनिक संगठन की प्रतिभा ही थी। इस पद पर त्रॉत्स्की का होना सैनिक संगठन के लिए एक बहुत भारी बाधा थी; हम यह जारित्सीन के पहले संघर्ष में ही देख चुके हैं। जहाँ तक सैनिकों की संख्या का सवाल था, कोई कमी नहीं थी। गोरिल्ला ढंग की लड़ाई सफलतापूर्वक की जा सकती थी। लेकिन, कायदे-नियम की पाबंद, एक संगठित और अनुशासित सेना तैयार करने में बड़ी बाधाएँ थीं। क्रांति की रक्षा के लिए, ऐसी सेना का निर्माण करना अत्यंत जरूरी था। यह सौभाग्य की बात थी कि पार्टी हर एक खतरनाक मोर्चे पर स्तालिन को ही भेजती थी। सन् 1918 के अन्त में, पूर्वी मोर्चे की अवस्था बड़ी भयंकर हो गई, कोलचक ने पेर्म पर अधिकार कर लिया था। उत्तर की ओर से साम्राज्यवादियों की सेनाएँ बढ़ रही थीं। कोलचक ने चाहा था कि उनसे सम्बन्ध स्थापित करके, नई सरकार को खतरे में डाल दे। बोल्शेविक तृतीय सेना हारकर, भारी नुकसान के साथ पीछे हट रही थी, जिसका एक बड़ा कारण था—कमाण्डरों की अयोग्यता। केन्द्रीय कमिटी ने इस हार के कारण की जाँच करने के लिए, स्तालिन और जेर्जिन्स्की की एक जाँच-समिति 'पेर्म के आत्म-सर्मपण और उराल के मोर्चे पर हाल की पराजय के कारणों की पूरी तौर से जाँच करने के लिए, और सभी परिस्थितियों का पता लगाने के लिए नियुक्त की। नवम्बर के अन्त में, इस मोर्चे पर स्थिति सचमुच ही बड़ी निराशापूर्ण हो गयी थी। न सेना में अनुशासन था, न उसके राशन का कोई प्रबन्ध था। 29वीं डिवीजन को पाँच दिनों तक एक रोटी का टुकड़ा भी नहीं मिल पाया था; इस पर हिमबिन्दु से भी 35 डिग्री नीचे की भयंकर सर्दी पड़ रही थी। इस ढाई सौ मील लम्बे मोर्चे के सारे रास्ते दुर्गम हो गये थे। ऊपर से, जार के जिन अफसरों को त्रॉत्स्की ने अपने पदों पर बहाल रखा था, वह पूरी तौर से विश्वासघात करके दुश्मन से मिल गये थे। बीस दिनों के अन्दर करीब दो सौ मील पीछे हटना, अठारह हजार आदमियों को खोना, दर्जनों तोपों और सैकड़ों मशीनगनों से हाथ

धोना—कितनी भयंकर बात थी। शत्रु इतने नजदीक आ गया था कि व्यात्का और सारे पूर्वी मोर्चे को खतरा पैदा हो गया था। लेनिन ने क्रांतिकारी युद्ध-परिषद् को तार दिया :

"पेर्म के आस-पास से हमें कई रिपोर्टें मिली हैं, जिनमें तृतीय सेना के शराब पीकर मतवाले होने और खतरनाक स्थिति की बातें बतलाई गई हैं। मैं स्तालिन को भेजने की सोच रहा हूँ।"

जैसाकि ऊपर कहा गया है, केन्द्रीय कमिटी ने पेर्म की पराजय के कारणों का पता लगाने के लिए, स्तालिन को जेर्जिन्स्की को भेजा था। सचमुच, वहाँ की स्थिति प्राप्त हुई सूचना से भी कहीं अधिक भयंकर थी। स्तालिन ने वहाँ पहुँचकर राष्ट्रीय प्रतिरक्षा-परिषद् के अध्यक्ष (लेनिन) को तार देकर, तुरन्त कुमुक भेजने के लिए लिखा। फिर एक सप्ताह बाद, पेर्म की पराजय के भिन्न-भिन्न कारणों को लिख भेजा और लड़ने की क्षमता बढ़ाने के लिए कुछ उपायों को काम में लाने का प्रस्ताव रखा। जारित्सीन की तरह, यहाँ भी स्तालिन ने सैनिक और राजनीतिक संगठन के लिए ऐसे असाधारण कदम उठाए कि उसी महीने (जनवरी, सन् 1919) में पूर्वी मोर्चे पर शत्रु की प्रगति रोक दी गई। यही नहीं, बल्कि सेना के दाहिने पक्ष ने आगे बढ़कर, आक्रमण करके उराल्स्क पर अधिकार कर लिया। दखल देने के लिए आई हुई चैक सेनाओं से कोलचक की सेना के मिलने की सम्भावना खतम हो गई। दक्षिण और उत्तर—दोनों ओर से इतने जबर्दस्त प्रहार किए गये कि कोलचक के पैर उखड़ गये।

पूर्वी मोर्चे से लौटने के बाद, स्तालिन पर राज्य-नियंत्रण के संगठन का काम पड़ा। मार्च सन् 1919 में लेनिन के कहने पर, उन्हें राज्य-नियंत्रण का जन कमीसार नियुक्त किया गया। स्तालिन ने अपनी स्वाभाविक तत्परता के साथ मजूर-किसान-निरीक्षण-जन-कमीसारियत का संगठन किया। उन्हें इस काम में अप्रैल सन् 1922 तक लगा रहना पड़ा। सेना के लिए इस कमीसारियत की कितनी जरूरत थी, इसे कहने की आवश्यकता नहीं।

स्तालिन की पहली शादी उनके फरारी क्रांतिकारी जीवन के समय एकातेरीना से हुई थी। उससे एक लड़का हुआ था। एकातेरिना सन् 1917 में निमोनिया से मर गई थी। बाकू में काम करते समय, स्तालिन के सहकारियों में अलीलुयेफ भी था। एक बार स्तालिन पीतरबुर्ग में इन्हीं के घर में गिरफ्तार हुए थे। क्रांति के समय, लेनिन और स्तालिन अलीलुयेफ-परिवार में छिपकर रहे थे। यहीं रहते समय, अलीलुयेफ की छोटी लड़की नादेज्दा से स्तालिन का परिचय हुआ था। उसकी बड़ी बहिन ओल्गा प्रधान कार्यालय में काम करती थी। नादेज्दा सन् 1901 में बाकू में पैदा हुई थी और घर के कामों में निपुण होने के साथ, पार्टी के काम में भी बड़े उत्साह से योग देती थी। सन् 1918 में स्तालिन ने नादेज्दा से शादी की। स्तालिन के लिए वैयक्तिक जीवन का बहुत कम महत्त्व था, इसीलिए उसके बारे में बहुत कम लिखा गया है। स्तालिन के जीवन की महत्ता और बहुमूल्यता जिस काम के लिए थी, लेखकों का ध्यान उसी तरफ ज्यादा गया।

11. पेत्रोग्राद पर खतरा (सन् 1919)

कोलचक को मार भगाने में बोल्शेविकों ने सफलता पाई। लेकिन, पश्चिमी साम्राज्यवाद और उसके सैनिक नेता—चर्चिल को अपने सहकारियों को नष्ट होने देना कब पसन्द आ सकता था? उन्होंने पूर्वी मोर्चे से बोल्शेविकों का ध्यान हटाने के लिए, उत्तर से पेत्रोग्राद पर आक्रमण करना चाहा। इसके लिए, एस्तोनिया में जनरल यूदेनिच के नेतृत्व में सफेद गारदों की सेना तैयार की गयी, जो बड़ी तेजी से पेत्रोग्राद की ओर बढ़ने लगी। स्वयं राजधानी के नौसैनिक अड्डे क्रोन्स्तात के बाल्तिक बेड़े में पुराने अफसरों के रूप में दुश्मन के आदमी मौजूद थे, जिसके कारण कास्नयागोर्का और सेरयालोशद् जैसे कुछ महत्त्वपूर्ण सैनिक दुर्ग बोल्शेविकों के हाथ से निकल गये। उधर पश्चिम में जनरल बुलक-बलखोविच की सेनाएँ प्स्कोफ़ के सैनिक महत्त्व के स्थान तथा पेत्रोग्राद के पश्चिमी दरवाजे की ओर बढ़ने लगीं। इस आक्रमण में अंग्रेजी नौसैनिक बेड़ा भी भाग ले रहा था। इसी समय, पेत्रोग्राद में षड्यंत्र का पता लगा और मालूम हुआ कि इसमें सेना और नौसेना के सैनिक अफसरों का भारी हाथ है। यूदेनिच के पेत्रोग्राद के नजदीक पहुँचने पर प्स्कोफ को खतरा हो जाने और साथ ही भीतरी शत्रुओं के बिछे हुए जाल को देखकर, ऐसा मालूम होने लगा कि क्रांति खतम होने जा रही है। कम-से-कम चर्चिल और उसके

सहायक ऐसी ही आशा करने लगे थे। सफेद सेनाओं और पेत्रोग्राद के बीच का फासला क्षण-क्षण कम होता जा रहा था; लाल सैनिक पीछे हट रहे थे। लेकिन, लेनिन के पास एक ऐसा आदमी था जो ऐसे भयंकर खतरों का दो बार सफलातपूर्वक मुकाबला कर चुका था। केन्द्रीय कमिटी ने तुरंत स्तालिन को इस काम पर नियुक्त किया। तीन सप्ताहों में ही, स्तालिन ने पासा पलट दिया। बीस दिन बीतते-बीतते सेना की भीतरी खराबियाँ, झिझक और किंकर्तव्यविमूढ़ता दूर हो गई। पेत्रोग्राद के कमकर और कम्युनिस्ट भारी संख्या में युद्ध में भाग लेने लगे। भीतरी शत्रुओं को पकड़कर, उनका सफाया कर दिया गया। दुश्मन के कदम रुक गये। इस लड़ाई में स्तालिन ने युद्ध सैनिक कार्रवाइयों में भी भाग लिया था। उन्होंने लेनिन को एक तार में लिखा था :

"..... क्रास्नयागोर्का और सेरेयालोशद् का काम ठीक कर देने के बाद, सभी किलों और किलेबंदियों में बड़ी तेजी से व्यवस्था कायम कर दी गई है। नौसैनिक विशेषज्ञ मुझे विश्वास दिला रहे हैं कि क्रास्नयागोर्का (लाल गिरि) पर अधिकार करने में मैंने नौसैनिक-विज्ञान के सभी सिद्धांतों को उलट-पुलट दिया है। , मुझे सिर्फ इसका अफसोस है कि वह विज्ञान न जाने किसको कहते हैं। गोर्का पर इतनी जल्दी अधिकार करने का कारण था—मेरी ओर से बड़ी जबर्दस्त दखलंदाजी और सैनिक कार्रवाइयों में नागरिकों का भी आम तौर से तत्परता से भाग लेना। इस कार्रवाई को करने के लिए जल और स्थल पर निकाली हुई दूसरी आज्ञाओं को रोककर, उनकी जगह हमारी अपनी आज्ञाओं को कार्यरूप में परिणत किया गया था। मैं आपको यह सूचित करना अपना कर्तव्य समझता हूँ कि विज्ञान के लिए मेरे दिल में भारी सम्मान रहते हुए भी, मैं आगे भी इसी तरह करूँगा।"

किताबी ज्ञान-विज्ञान और स्तालिन जैसे प्रतिभा के धनी तथा व्यवहार में निपुण व्यक्ति के ज्ञान में कितना अन्तर है, यह स्तालिन की इस कार्रवाई से मालूम होता है। यह कोई आकस्मिक घटना नहीं थी। द्वितीय महायुद्ध में भी हिटलर और उसके सैनिक पंडितों को स्तालिन के सामने मुँह की खानी पड़ी। मॉस्को और स्तालिनग्राद की भावी विजयों की तैयारी स्तालिन ने इसी समय, पेत्रोग्राद को बचाकर की थी। 6 दिन बाद के तार में, इस युद्ध के बारे में स्तालिन ने फिर लिखा था :

"हमारी सेनाओं का कायाकल्प होना शुरू हो गया है। इस सारे सप्ताह में वैयक्तिक या सामूहिक पलायन या आत्म-समर्पण की एक भी घटना नहीं घटी। हजारों की संख्या में भगोड़े सेना में लौट आये। दुश्मन की सेना से भागकर, हमारी ओर आ मिलनेवालों को और अधिक संख्या में देखा गया। एक सप्ताह में अपने सारे हथियारों को लिए करीब-करीब चार सौ आदमी हमारी सेना में आकर शामिल हो गये हैं। कल से हमने अपना आक्रमण शुरू किया है। यद्यपि ऊपर से जिस कुमक का वचन दिया गया था, वह अभी तक हमारे पास नहीं आई है, लेकिन तब भी हम आगे बढ़ने में सफल हुए हैं। हमारे लिए अपनी पुरानी पाँत में रहना असम्भव था; क्योंकि वह पेत्रोग्राद के बहुत नजदीक थी। इस बार का हमारा आक्रमण सफल रहा। शत्रु सिर पर पैर रखकर भाग रहा है। आज हमारी पाँत केनीवो, वरानिनो, स्लेपिवो और कस्कोवो पर है। हमने बहुत-से बन्दियों, तोपों, मशीनगनों और गोला-बारूद पर अधिकार कर लिया है। शत्रु—अंग्रेजों के युद्ध-पोतों ने मुँह नहीं दिखाया। यह साफ है कि वह क्रास्नयागोर्का से डरते हैं, जो अब पूर्णतया हमारे हाथ में हैं।"

इस प्रकार, स्तालिन ने चर्चिल के मंसूबों को विफल कर दिया। यूदेनिच को भाग कर एस्तोनिया में शरण लेनी पड़ी थी। लेकिन, सबसे बड़ा खतरा सन् 1919 की शरद में दिखाई पड़ा, जिसके बारे में मानूइलूस्की ने लिखा है : "यह सारे गृह-युद्ध का निर्णायक और बहुत ही खतरनाक समय था।"

12. दक्षिणी मोर्चा (सन् 1919-20)

जिस तरह पूर्व से कोलचक ने और उत्तर से युदेनिच ने बोल्शेविकों के लिए खतरा पैदा कर दिया था, अब वही काम दक्षिण से देनीकिन करने लगा। अब तक जर्मनी हथियार डाल चुका था। इंग्लैंड तथा फ्रांस को युद्ध से छुट्टी मिल चुकी थी। अब विश्व पूँजीवाद को काल-स्वरूप दिखाई देने वाले, बोल्शेविकों को पीछे पड़ना

जरूरी मालूम हुआ। देनीकिन को रुपयों और हथियारों से ही मदद नहीं मिल रही थी, बल्कि अंग्रेज और फ्रेंच जनरल स्टाफ उसकी पूरी तौर से सहायता कर रहा था। सफेद सेना ओरेल की ओर बढ़ रही थी; और सारी दक्षिणी युद्ध-पंक्ति खतरे में पड़ गई थी। एक ओर लाल सैनिक पीछे हट रहे थे और दूसरी ओर युद्ध-पंक्ति के पीछे स्थिति भयंकर हो गई थी। एक-एक क्षण में अवस्था संगीन होती जा रही थी। ऐसी समस्याएँ सामने आ रही थीं, जिनके हल करने का एकाएक कोई उपाय नहीं सूझता था। युद्ध और गृह-युद्ध के कारण, रूस के तीन-चौथाई उद्योग-धंधे नष्ट हो चुके थे। न कच्चा माल था, न ईंधन, न काम करने वाले। इसके कारण, बचे-खुचे कल-कारखाने भी बन्द थे। सारे देश में, यहाँ तक कि मॉस्को में भी—जो कि अब सोवियत की राजधानी बन चुका था—क्रांति-विरोधी अपने कामों में बड़े जोर-शोर से लगे हुए थे। हथियारों और लोहे के कारखानों वाला नगर तुला खतरे में पड़ गया था। उसके निकल जाने पर, राजधानी मॉस्को को भी बचाना मुश्किल होता। एक बार फिर केन्द्रीय कमिटी की नजर स्तालिन की ओर गई और उसने उन्हें दक्षिण मोर्चे पर जाने के लिए कहा। सितम्बर सन् 1919 में क्रांतिकारी युद्ध-परिषद् के सदस्य—स्तालिन ने दक्षिण का रास्ता लिया। मानूइलस्की में लिखा है :

> "आज इस बात को छिपाने की कोई जरूरत नहीं है कि स्तालिन ने प्रस्थान करने से पहले (पार्टी) केन्द्रीय कमिटी पर तीन शर्तों को मानने के लिए जोर दिया था—(1) त्रॉत्स्की को दक्षिणी मोर्चे में कोई दखल नहीं देना होगा और उसे अपनी जगह पर ही रहना पड़ेगा; (2) उन सैनिक नेताओं को, जिन्हें स्तालिन सैनिक स्थिति ठीक करने के लिए अयोग्य समझते हों, तुरन्त वापिस बुला लेना होगा; और, (3) इस काम के करने में स्तालिन द्वारा चुने गये सक्षम नेताओं को तुरन्त ही दक्षिणी मोर्चे पर भेज देना होगा। कमिटी ने इन शर्तों को पूरी तौर से मान लिया था।"

सैकड़ों मील लम्बा दक्षिणी मोर्चा वोल्गा से पोलैंड-उक्रइन की सीमा तक फैला हुआ था, जहाँ लाखों की संख्या में सैनिक जमा थे। अस्त-व्यस्तता और शिथिलता को दूर करके, इतनी भारी सेना का सुव्यवस्थित रूप से संचालन करना आसान काम नहीं था। इसके लिए एक निश्चित योजना बनाकर चलना जरूरी था, जिससे कि सेना के हर एक भाग को मुस्तैदी के साथ अपने सामने के काम के लिए आगे बढ़ाया जा सके। स्तालिन ने मोर्चे पर जाकर देखा कि सभी जगह भयंकर विशृंखलता और अनुत्साह फैला हुआ है। कुर्स्क-ओरेल-तुला की मुख्य रक्षा-पंक्ति पर लाल सेना को हार खानी पड़ी थी। उसका पूर्वी पक्ष भी किसी ही तरह कायम था। दक्षिणी मोर्चे के लिए उच्चतर युद्ध-कमिटी ने पिछले सितम्बर में एक योजना बनाई थी, जिसके द्वारा लाल सेना के वामपक्ष को जारित्सीन से और दोन के मैदानों से नवोरोसिस्क तक की शत्रु-सेना पर आक्रमण करना था। स्तालिन को यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि सितम्बर की बनाई हुई योजना आज भी जरा परिवर्तन किए बिना उसी तरह बनी हुई थी। 'कोरिन की सैनिक टुकड़ी को आक्रमण करना है। उसका काम है—दोन और कूबान नदियों पर जाकर, शत्रु को नष्ट करना।'—स्तालिन ने इस योजना को बड़े ध्यान से देखा, फिर निश्चय किया कि वह ठीक नहीं थी। कम-से-कम उस समय के लिए तो बिलकुल उपयुक्त नहीं थी। दो महीने पहले के लिए भले ही अच्छी रही हो; लेकिन तब से परिस्थितियाँ बदल चुकी थीं। उस योजना से काम नहीं चलेगा, यह सोचकर स्तालिन ने लेनिन के पास नये सुझाव लिख भेजे। इस भाग्य-निर्णायक अवसर पर, लेनिन के पास भेजे हुए इस पत्र की कुछ पंक्तियाँ थीं :

> "दो महीने पहले उच्चतर कमिटी ने सिद्धांत के रूप में स्वीकार किया था कि मुख्य आक्रमण पश्चिम से पूर्व की ओर दोनेत्स्क की घाटी के भीतर से होना चाहिए। यह कार्रवाई नहीं की गई, क्योंकि गर्मियों में दक्षिण से सेना के पीछे हटने के कारण पैदा हुई स्थिति उसके अनुकूल नहीं थी—अर्थात् दक्षिण-पूर्वी मोर्चे पर सेना के पुनर्विभाजन में जो समय लगा, उससे देनीकिन ने फायदा उठाया। लेकिन, सेनाओं के पुनर्विभाजन के साथ मिलकर अब स्थिति बिलकुल बदल गई है। पूर्वी अष्टम सेना (पुराने दक्षिणी मोर्चे की एक प्रधान सेना) आगे बढ़ी है, और दोनेत्स्क की घाटी उसके सामने है। बुदयन्नी-रिसाला जैसी दूसरी महत्त्वपूर्ण सेना भी आगे बढ़ी है। लेत डिवीजन नामक एक नयी सेना की हमारी सेना में और

वृद्धि हुई है। एक महीने के भीतर, जब वह पुनः संगठित हो जायगी, तो वह देनीकिन को खतरा पैदा कर देगी।··· ऐसी स्थिति में उच्चतर कमिटी को पुरानी योजना को कायम रखने के लिए क्या मजबूरी है ? इसका कारण स्पष्ट ही ऐसी हठधर्मी है जो कि हमारे गणराज्य के लिए बहुत ही खतरनाक और अदूरदर्शितापूर्ण हो सकती है, और जिसे सैनिक दावपेंच के महान् विशेषज्ञ (त्रॉत्स्की) उच्चतर कमिटी द्वारा लालित-पालित कर रहे हैं।"

"कुछ समय पहले उच्चतर कमिटी ने कोरिन को दोन के कान्तार को पार करके, नवोरोसिस्क पर आगे बढ़ने का आदेश दिया था। यह ऐसा रास्ता है, जो कि हमारे वैमानिकों के लिए ही व्यवहार्य हो सकता है। हमारी सेना और तोपखाने का दोन कान्तार होते हुए आगे बढ़ना असंभव है। यह निपट लड़कपन है। यह बतलाना बिलकुल आसान है कि शत्रु-देश में एक असम्भव पाँत के ऊपर होते हुए बढ़ाव की यह योजना बिलकुल निर्बुद्धितापूर्ण है, और सत्यानाश का कारण बन जायेगी। यह बतलाना बिलकुल आसान है कि इस प्रकार कसाक गाँवों के ऊपर से बढ़ने का एक ही फल होगा—जो कि कुछ ही समय पहले हो भी चुका है—अपने गाँवों की प्रतिरक्षा के लिए कसाकों का देनीकिन के साथ मिल जाना, और देनीकिन को दोन का त्राता बनने का मौका देना अर्थात् देनीकिन को इस प्रकार अपने हाथों को मजबूत करने में सफल होने देना। इसलिए, पुरानी योजना एक क्षण की भी देर किये बिना बदलनी होगी और उसकी जगह खरकोफ और दोनेत्स-घाटी के बीच से रस्तोफ के ऊपर केन्द्रीय आक्रमणवाली योजना स्वीकार करनी पड़ेगी। इस प्रकार, (1) शत्रु-देश के बीच से नहीं, बल्कि हमें मित्रतापूर्ण इलाकों से गुजरना पड़ेगा, जिससे आगे बढ़ने में आसानी होगी; (2) हम दोनेत्स जैसी एक महत्त्वपूर्ण रेलवे लाइन—देनीकिन की सेना के संचार की मुख्य लाइन—बोरोनेज-रस्तोफ-लाइन पर अधिकार कर सकेंगे; (3) हम देनीकिन की सेना को दो भागों में काट देंगे जिनमें से एक भाग (स्वयं सेवकों) को मखनो ठीक कर देगा, और हम कसाक सेना को पीछे से खतरा पैदा कर देंगे; (4) यह भी हो सकता है कि हम देनीकिन से कसाकों को नाराज करा दें, क्योंकि यदि हमारा बढ़ाव क़ामयाब रहा तो देनीकिन कसाकों को पश्चिम की ओर हटाने की कोशिश करेगा, जिसे अधिकांश कसाक मानने से इन्कार कर देंगे; और (5) हमें कोयला मिल जायेगा, जबकि देनीकिन को कुछ भी कोयला नहीं मिल सकेगा। अभियान की इस योजना को स्वीकार करने में जरा भी देर नहीं करनी चाहिए।··· संक्षेपतः, हाल की घटनाओं के कारण अब समय से पिछड़ी हुई पुरानी योजना किसी भी हालत में काम में नहीं लानी चाहिए, क्योंकि यह गणराज्य के लिए खतरा पैदा करते हुए, देनीकिन की स्थिति को बेहतर बनाने का कारण अवश्य होगी। उसकी जगह एक नई योजना स्वीकार करनी होगी। उसके लिए परिस्थितियाँ और अनुकूलताएँ भी पूरी मात्रा में मौजूद हैं, बल्कि इस तरह के परिवर्तन की भारी आवश्यकता है। अन्यथा, दक्षिणी मोर्चे पर मेरा काम व्यर्थ, अपराधपूर्ण और बेकार हो जायेगा; जो मुझे अधिकार देता या मजबूर करता है कि मैं यहाँ न रहकर चाहे जहाँ, शैतान के पास भी, चला जाऊँ।—आपका, स्तालिन।"

केन्द्रीय कमिटी ने स्तालिन की योजना मानने में जरा भी आनाकानी नहीं की। लेनिन ने अपने हाथों दक्षिणी मोर्चे के जनरल स्टाफ को लिखकर, उन्हें अपनी आज्ञाओं को बदलने का हुक्म दिया। लाल सेना ने दोनेत्स-रस्तोफ घाटी में खरकोफ के ऊपर मुख्य आक्रमण किया और इसका फल हुआ—सन् 1920 के आरंभ में देनीकिन की सेना को कालासागर के किनारे तक ढकेल देना। उक्रइन और उत्तरी काकेशस सफेद गारदों के हाथ से छीन लिये गये और गृह-युद्ध की निर्णायक विजय बोल्शेविकों के ही हाथ रही। इस युद्ध में स्तालिन के सहायक थे—बोरोशिलोफ, ओर्योनिकिद्जे, किरोफ, बुदयोन्नी, श्वादेंको और मेखली।

सितम्बर सन् 1919 में केन्द्रीय कमिटी ने स्तालिन को दक्षिणी मोर्चे की ओर भेज, 'देनीकिन के विरुद्ध लड़ने के लिए सभी चलो'—का नारा दिया था। इसी समय बुदयोन्नी के नेतृत्व में प्रथम सवार-सेना संगठित हुई।

देनीकिन की पराजय के बाद, सोवियत गणराज्य को जो थोड़ा-सा समय मिला, उसी में लेनिन ने स्तालिन को युद्ध से नष्टप्राय उक्रइन की अवस्था सुधारने के लिए भेजा। सन् 1920 की फरवरी और मार्च में स्तालिन

इस काम पर जुट पड़े। उद्योगों को फिर से चालू करने के लिए कोयला बहुत जरूरी था। कल-कारखानों को चालू किए बिना, देश को न सैनिक और न आर्थिक तौर से ही सबल बनाया जा सकता था। स्तालिन ने 'रूस के लिए कोयला उतना ही महत्त्वपूर्ण है, जितनी की देनीकिन पर विजय थी'—कहते हुए, मार्च सन् 1920 में कमकर सेना को उत्साहित किया और थोड़े ही दिनों में कोयले की पैदावार तथा रेलों का काम बहुत कुछ सुधर गया।

12. रेंगल की पराजय (1920)

देनीकिन के हारने के बाद, चर्चिल और उसके साथियों ने अब बैरन रेंगल की पीठ ठोकी और अगस्त सन् 1920 में फिर उसी जगह भयंकर लड़ाई छिड़ गई, जहाँ से देनीकिन को भागना पड़ा था। 2 अगस्त, 1920 को केन्द्रीय कमिटी ने निश्चय किया :

> "रेंगल की सफलताओं और कूबान के खतरे को देखते हुए, रेंगल-मोर्चे को जबर्दस्त महत्त्व वाला एक बिलकुल स्वतंत्र मोर्चा मानकर, उसकी अलग व्यवस्था करनी होगी। साथी स्तालिन को आदेश दिया जाता है कि वह एक क्रांतिकारी सैनिक-परिषद् बनाकर, अपना सारा प्रयत्न रेंगल-केन्द्र पर लगायें।"

जिस समय (अप्रैल सन् 1920 में) रेंगल ने दक्षिण में आक्रमण शुरू किया, उसी समय साम्राज्यवादियों की शह पर पोल सरकार ने भी सोवियत-भूमि पर आक्रमण करके, उक्रइन की राजधानी कियेफ पर अधिकार कर लिया। स्तालिन ने जाकर रेंगल के विरुद्ध प्रतिरक्षा की तैयारी की और लड़ाई की योजना बनाई। 3 अगस्त, 1920 को केन्द्रीय कमिटी ने निम्न प्रस्ताव पास किया :

> "स्तालिन को क्रांतिकारी सैनिक-परिषद् बनाने का काम देना होगा। सभी उपलब्ध सेनाओं को इसी मोर्चे पर लगाना होगा। इगोरोफ या फुंजे को इसी मोर्चे की कमांड देनी होगी, जैसा कि स्तालिन के साथ सलाह करके उच्चतर परिषद् ने तय किया है।"

स्तालिन ने नये मोर्चे का संगठन किया, लेकिन इसी समय बीमार पड़ जाने से उन्हें वहाँ से हटना पड़ा। तो भी, उन्हीं की बनाई हुई योजना के अनुसार फुंजे ने रेंगल को भगाने में सफलता पाई।

13. पोलिश मोर्चा (सन् 1920)

रेंगल के खिलाफ लड़ाई होते समय, बीमारी के कारण स्तालिन को वहाँ से चला आना पड़ा था, लेकिन पोलैंड के क्रांति-विरोधियों से लोहा लेने के समय वह फिर मैदान में आ गये थे। स्तालिन का अर्थ ही अब विजय हो गया था और, पुराने श्लोक को जरा-सा बदलकर, हम कह सकते हैं : 'यत्र युक्तीश्वरो लेनिन, यत्र स्तालिन धनुर्धरः। तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम।' पोलिश सेना पछाड़ी गई। कियेफ और उक्रइन मुक्त कर लिये गये। लाल सेना गलीसिया के बहुत भीतर तक घुस गई। कियेफ, बेदीचेफ और जितोमिर में तृतीय पोलिश सेना के प्रायः पूर्णतया नष्ट हो जाने के बाद, पोलिश-मोर्चा खतम हो गया। एक ओर लाल रिसाला लूवोफसर पर आक्रमण करने की तैयारी कर रहा था, और दूसरी ओर लाल सेना पोलैण्ड की राजधानी वारसा के पास पहुँच गई थी। इस पर पोलों ने सर्वस्व की बाजी लगाकर, बोल्शेविक सेना को हराया। इसका कारण था, कुछ सफलता दिखलाने के लिए लालायित युद्ध-मंत्री त्रॉत्स्की को अपनी बेवकूफी दिखलाने का मौका मिल जाना। विजय की सफलता से फूले न समाते हुए, गोला-बारूद और सर्दी का इन्तजाम किए बिना ही, त्रॉत्स्की ने एक सेना को वारसा पर अधिकार करने के लिए भेज दिया था, जिसके कारण ही यह पराजय हुई और जिसका परिणाम यह हुआ—पश्चिमी उक्रइन और पश्चिमी बेलोरुसिया का सन् 1919 से बीस वर्षों के लिए पोलों के हाथ में चला जाना।

लेनिन की प्रेरणा से 27 नवम्बर, 1919 को अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति ने गृह-युद्ध की विजयों के उपलक्ष्य में, स्तालिन को लाल झंडे का तमगा प्रदान किया। इंग्लैंड, फ्रांस तथा दूसरे साम्राज्यवादी देशों ने गृह-युद्ध में क्रांति-विरोधियों को धन और सामान से सहायता देकर ही संतोष नहीं किया, बल्कि हार

के बाद जब जर्मनी की सेनाएँ रूस से हटीं तो फ्रेंच और अंग्रेजी सेनाएँ जल और स्थल–दोनों मार्गों से रूस के भीतर घुसकर लूट-मार करने तथा वहाँ के निवासियों के खून से हाथ रँगने लगीं। जो भी हाथ आये, कल-कारखाने आदि सबको उन्होंने बेदर्दी से नष्ट कर दिया। जर्मन सेना ने रूस से बाल्तिक तक के प्रदेश (लिथुवानिया, लेत्विया और एस्तोनियाँ) और फिनलैंड छीन लिये थे। फ्रैंच-ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने पश्चिमी उक्रइन और बेलोरुसिया के कितने ही भाग को देकर, पोलैंड में एक नया राज्य कायम कर दिया; उन्होंने कालासागर के तटवर्ती बेसराबिया को छीनकर रूमानिया को दे दिया। यह स्मरण रखने की बात है कि जिस समय यह काम किया जा रहा था, उस समय फ्रांस या इंग्लैंड की रूस से कोई लड़ाई नहीं थी। फ्रांस के एक बड़े नेता रेने पिनो के अनुसार : "यह दखल देना, एक विदेशी राज्य के भीतरी कामों में दखल देना भर नहीं था, बल्कि साथ ही एक देश तथा उसके साथ सारी दुनिया को, एक (खतरनाक) सामाजिक और सामान्य व्यवस्था (बोल्शेविज्म) के खतरे से मुक्ति दिलाने का प्रयत्न था (1)··· " सारी दुनिया के प्रतिगामियों की पीठ ठोकने और हर तरह की मदद देने के लिए, जिस तरह द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अमरीका तैयार हुआ है, वही काम प्रथम विश्वयुद्ध के बाद इंग्लैंड और फ्रांस ने किया था। इस काम में उस समय इंग्लैंड का अगुवा वही चर्चिल था, जिसने द्वितीय युद्ध की समाप्ति के समय अमरीका को शह देकर, हिरोशिमा और नागासाकी पर अणुबम गिरवाकर नृशंस नरसंहार कराया है।

गृह-युद्ध की इन घटनाओं से मालूम होगा कि स्तालिन एक तिकड़मी आदमी या केवल लेनिन की रबड़-मुहर नहीं थे। उनके पास मौलिक प्रतिभा थी, जिसका चमत्कार उन्होंने पद-पद पर दिखलाया है।

पूँजीवादी अखबार और उनके भरमाये हुए दूसरे आदमी, स्तालिन और बोल्शेविकों पर यह दोष लगाते हैं कि उन्होंने अपने शत्रुओं के साथ हद से अधिक कठोरता का बर्ताव किया है। स्तालिन ने इसके बारे में सन् 1931 के अन्त में, एक वार्तालाप के दौरान में कहा था :

> "जिस समय बोल्शेविकों ने अधिकार सँभाला, उस समय उन्होंने अपने शत्रुओं के प्रति बड़ी नर्मी दिखानी चाही थी। मेन्शेविक काफी समय तक कानूनी तौर से रहते और अपना पत्र भी निकालते थे। यही बात समाजवादी क्रांतिकारियों की थी। यहाँ तक कि कादेत भी अपना पत्र निकालते थे। जनरल क्रस्नोफन क्रांति-विरोधी सेना लेकर पेत्रोग्राद पर कूच करते हुए, हमारे हाथ में पड़ गया था। युद्ध के नियमों के अनुसार, उसके साथ हम चाहे कुछ भी कर सकते थे या कम-से-कम कैदी बनाकर तो रख सकते थे, उसे गोली से भी मरवा सकते थे, लेकिन हमने उसे पैरोल (वचन बंदी) पर छोड़ दिया था। लेकिन, उसका फल क्या हुआ ? हमने जल्दी ही देख लिया कि इस तरह की नर्मी सोवियत शक्ति की स्थिरता को कमजोर बनाती है और कमकर वर्ग के शत्रुओं के प्रति इस तरह की सहिष्णुता का परिचय देकर हम गलती कर रहे हैं। अगर हम आगे भी इस तरह की नर्मी जारी रखते, तो यह कमकर वर्ग के प्रति हमारा अपराध होता, उनके हितों के प्रति विश्वासघात होता। जल्दी ही हमारे सामने यह बात स्पष्ट हो गई। हमने जल्दी ही मालूम कर लिया कि अपने शत्रुओं के प्रति हम जितनी ही अधिक उदारता दिखलाते हैं, वह उतनी ही अधिक मजबूती के साथ हमारा प्रतिरोध करते हैं। थोड़े ही समय बाद, समाजवादी क्रांतिकारी गोत्ज आदि और दक्षिण पंथी मेन्शेविकों ने पेत्रोग्राद के सैनिक-स्कूल में विद्रोह संगठित किया, जिसके कारण हमारे बहुत-से क्रांतिकारी नौ-सैनिकों की जानें गईं। जिस क्रास्नोफ को हमने पैरोल पर छोड़ दिया था, उसने हमारे विरुद्ध सफेद कसाकों को संगठित किया, ममन्तोफ से मिलकर दो साल तक सोवियत सरकार के विरुद्ध हथियारबन्द लड़ाई की।··· यह आसानी से समझा और देखा जा सकता है कि अधिक नर्मी दिखलाकर हमने गलती की थी।"

प्रसिद्ध फ्रैंच लेखक आँरी बारबुस ने उक्त उद्धरण देते हुए, यह भी कहा था :

"इसके अतिरिक्त, मैं स्तालिन की उस बात को भी जोड़ता हूँ, जो कि उन्होंने मुझसे सात वर्ष पहले (सन् 1927 में) प्रसिद्ध 'लाल-आतंक' के सम्बन्ध में कही थी। वह मृत्यु-दंड के बारे में बातें कर रहे थे : 'हम सभी मृत्यु-दंड बन्द करने के पक्ष में हैं। सचमुच हमारा विश्वास है कि सोवियत संघ के

शासन-प्रबन्ध में इसको रखने की आवश्यकता नहीं है। हमने मृत्यु-दंड को कभी का खतम कर दिया होता, यदि बाहरी दुनिया, बड़े साम्राज्यवादी राज्य, हमें अपने अस्तित्व को बचाये रखने के लिए, उसे कायम रखने पर मजबूर न किए होते।''

6

उपनेता (सन् 1921-23)

गृह-युद्ध में भीतरी और बाहरी शत्रुओं को करारी हार देने के बाद, यद्यपि लड़ाई से छुट्टी मिल गई थी, लेकिन सोवियत नेताओं के सामने पुनर्निर्माण का भारी काम था। सन् 1914 के महायुद्ध ने रूस के चालीस अरब सुवर्ण रूबल की सम्पत्ति का नुकसान पहुँचाया था। कमकर जनता के एक-तिहाई का खून हो चुका था। सन् 1913 की अपेक्षा, सन् 1921 में उद्योग-धंधों, उपज और यातायात का पाँचवाँ या छठवाँ हिस्सा ही शेष रह गया था। गृह-युद्ध के समय पचास अरब रूबल की सम्पत्ति और भी नष्ट हो गई थी। सभी कारखाने ध्वस्त हो गये थे। सारे देश में युद्ध की आग भड़कने के कारण, आधे खेत परती पड़ गये थे। शासन-व्यवस्था, शिक्षा-व्यवस्था, सभी अस्त-व्यस्त थीं। लाल सेना के पास राइफिलों और बूटों की ही नहीं, बल्कि रोटियों की भी कमी थी। ऊपर से बड़े-बड़े साम्राजी राज्य देश पर कहर ढा रहे थे। फ्रांस के क्लेमेन्सो और प्वानकारे तथा इंग्लैंड के लायड जार्ज और चर्चिल, चौदह राष्ट्रों को लेकर सोवियत शक्ति को नेस्तानाबूद करने पर तुले हुए थे। कोलचक की सेना को 'फ्रेंच सरकार ने सत्रह सौ मशीनगनें, तीस टैंक और दर्जनों बड़ी-बड़ी तोपें दी थीं। कोलचक के साथ मिलकर, आक्रमण करनेवालों में हजारों अंग्रेज और अमरीकन सिपाही, सत्तर हजार जापानी और करीब साठ हजार चेकोस्लावाकी सिपाही भी थे। देनीकिन की सेना के साठ हजार आदमियों को इंग्लैंड ने अपने हथियारों और गोला-बारूद से लैस करते हुए, उसे दो लाख राइफिलें, दो हजार बन्दूकें और तीस टैंक दिए थे, साथ ही सेना को सलाह और शिक्षा देने के लिए सैकड़ों अंग्रेज अफसर भेजे थे। साइबेरिया को रूस से छीनने के लिए, साम्राज्यवादियों ने ब्लादीबोस्तोक पर अपनी सेना उतारी, जिसमें दो जापानी डिवीजन, दो अंग्रेजी बटालियनें, 6 हजार अमरीकी और तीन हजार फ्रेंच तथा इटालियन थे। रूस के गृह-यृद्ध में इंग्लैंड ने चौदह करोड़ पौंड और पचास हजार सिपाहियों की जानें होमी थीं। पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने खूनी दखलंदाजी करके, रूस में जो सत्यानाश मचाया, उसमें चौवालीस अरब सुवर्ण रूबल की सम्पत्ति का सत्यानाश हुआ था। सन् 1921 में रूस में एक फ्रेंच एडमिरल अपनी सरकार का प्रतिनिधि बनकर भी, सोवियत सरकार के शत्रुओं को खुले आम संरक्षण दे रहा था। फ्रांस ने बहुत बाद तक वह काम किया, जिसे करने की हिम्मत तब इंग्लैंड और तुर्की भी नहीं करते थे। गुर्जी से भागे हुए क्रांति-विरोधी योरदानिया और चेकेली को फ्रेंच सरकार गुर्जी के मुखिया और राजदूत के तौर पर स्वीकार करती थी। उसने कोलचक को शासक स्वीकार किया था, और रेंगल के बारे में भी वही करने जा रही थी।

गृह-युद्ध के बाद, एक और भारी खतरा पार्टी के भीतर पैदा हो गया था। बोल्शेविकों ने त्रॉत्स्की जैसे बहुत-से छोटे-बड़े ढुलमुलयकीनों को खुल्लमखुल्ला विरोधी न होने देने के लिए अपने भीतर ले लिया था। उन्होंने अपनी बेवकूफी से गृह-युद्ध के समय भारी हानि पहुँचाई ही थी। अब पुनर्निर्माण के समय, वह उससे भी ज्यादा विरोध करने के लिए तैयार थे। सन् 1920 में लेनिन की सिफारिश पर,-राज्य बिजलीकरण-कमीशन (गो-एल-रो) स्थापित किया गया था, जिसने देश के बिजलीकरण के लिए दस वर्षों की एक योजना का काम पहले-पहल यहीं से शुरू हुआ। त्रॉत्स्की और रुइकोफ ने इस योजना का विरोध करना शुरू किया; जब कि योजना की एक कापी के साथ लेनिन का पत्र पाकर स्तालिन ने तुरन्त जवाब दिया था कि यह एक सच्ची आर्थिक योजना है, और उनके विचार में 'आज के समय में आर्थिक तौर से पिछड़े हुए रूस के सोवियत वाले ऊपरी ढाँचे

को वस्तुतः व्यावहारिक टेकनीक तथा उत्पादन के आधार पर आधारित करने का एक मात्र मार्क्सवादी प्रयत्न है।'—स्तालिन ने जोर देकर कहा कि उसे काम में लाने में देर नहीं करनी चाहिए और सारे काम का कम-से-कम एक-तिहाई इसी योजना में लगना चाहिए। लेकिन, त्रॉत्स्की और उसके अनुयायियों का कहना था कि युद्धकालीन साम्यवादी नीति को, अब भी शांतिकालीन आर्थिक क्षेत्र और पार्टी के काम में बर्ता जाय तथा फंदे को ढीला करने की जगह और भी कस दिया जाय।

1. दशम कांग्रेस (मार्च सन् 1921)

यह बोल्शेविक पार्टी की वही कांग्रेस थी, जिसमें युद्धकालीन साम्यवाद नीति की जगह लेनिन द्वारा प्रस्तावित नवीन आर्थिक नीति के प्रोग्राम को स्वीकार किया गया था। इसी कांग्रेस में स्तालिन ने जातीय समस्या के सम्बन्ध में पार्टी के सामने फ्रौरी विषयों पर अपनी रिपोर्ट दी थी, जिसमें कांग्रेस ने स्पष्ट माना था कि गो जातीय उत्पीड़न मिटा दिया गया है लेकिन वह काफी नहीं है। उन्हें अतीत के बुरे दाय भाग को भी खतम करना है, जिसका अर्थ है—भूतपूर्व दलित जातियों के आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक पिछड़ेपन को खतम करना, इन सभी बातों में उन्हें रूस के लोगों के बराबर लाना। नवीन आर्थिक नीति का जबर्दस्त समर्थन करते हुए, स्तालिन ने उसकी व्याख्या की थी : "नवीन आर्थिक नीति सर्वहारा राज्य की एक विशेष नीति है, जो पूँजीवाद को सहन करते हुए, लेकिन अहम् स्थानों को सर्वहारा राज्य के हाथों में रखते हुए; पूँजीवादी और समाजवादी तत्त्वों के संघर्ष में समाजवादी तत्त्वों के महत्त्वपूर्ण विकास के लिए पूँजीवादी तत्त्वों के मत्थे, पूँजीवादी तत्त्वों के ऊपर समाजवादी तत्त्वों की विजय और वर्गों के खतम करने तथा समाजवादी आर्थिक व्यवस्था की नींव रखने के उद्देश्य से बनाई गई है।" स्तालिन ने जातीय प्रश्न पर कहा था : "उन जातियों को आर्थिक और सांस्कृतिक सहायता देने की ओर बहुत ध्यान देना चाहिए, जो कि जारशाही शासन में उपेक्षित और पद-दलित रही थीं, जिससे क्रांति-विरोधियों को उन्हें भड़काने का मौका न मिले। स्तालिन ने सबसे पहले जातीय समस्या को हल करने के महत्त्व को समझा, उसकी तरफ बोल्शेविकों का ध्यान आकृष्ट किया था। प्रथम युद्ध से एक साल पहले, उन्होंने अपने विचारों को एक पुस्तक के रूप में पेश किया था, लेनिन ने भी जिसकी दूरदर्शिता की दाद दी थी। इसमें शक नहीं कि शांति, किसानों को खेत और मजदूरों को कारखानों पर अधिकार देने के साथ-साथ जातियों की स्वतंत्रता की अभिलाषा को प्रोत्साहन देना भी अक्तूबर-क्रांति की सफलता का एक कारण था। स्तालिन ने लिखा था : "कोलचक और देनीकिन को मार भगाने में हम इसीलिए सफल हुए कि दलित जातियों की सहानुभूति हमारे साथ थी।" सन् 1917 में राज्य के सभी मुसलिम कमकरों को सम्बोधित करते हुए, लेनिन और स्तालिन ने अपने हस्ताक्षरों से एक घोषणा निकाली थी, जिसमें कहा गया था :

> "तुर्किस्तान, साइबेरिया, काकेशिया और वोल्गा के प्रदेशों में जगह-जगह बिखरे हुए करोड़ों लोगों को दूसरों के बराबर लाना हमारा पहला कर्तव्य होगा।"

और, यह कर्तव्य उन्होंने जनता को मुगालते में रखने के लिए पेश नहीं किया था। सोवियत के भाग्य-विधाताओं ने उस पर सच्चे दिल से अमल करने का निश्चय किया था। जातियों की अपनी विशेषताओं—समष्टिगत नैतिक और बौद्धिक राष्ट्रीय संस्कृति, राष्ट्रीय परम्परा, जनकथाओं में प्रकट होनेवाली प्रत्येक वस्तु, कला और कला-सम्बन्धी सृजन, मानसिक उत्पादन तथा पारिवारिक भावना और पूर्वजों के अभिमान, मातृभाषा द्वारा किये जानेवाले हर एक काम—इन सभी चीजों को सिर्फ सुरक्षित ही नहीं रखने, बल्कि बोल्शेविकों ने उन्हें और भी समृद्ध करने का भार अपने ऊपर लिया। उन्होंने जातीय समस्याओं को केवल राष्ट्रीय दृष्टिकोण से ही नहीं, बल्कि प्रादेशिक दृष्टिकोण से भी सुलझाने का प्रयत्न किया। जहाँ तक जातीय धर्मों का सम्बन्ध था, वह कहीं भी स्थानीय उपज नहीं थे। ईसाई धर्म जारों के साथ बाहर से आया था; इसलाम को अरब गाजियों ने बड़ी खून-खराबी के बाद मध्य एशिया में फैलाया था; —तो भी, सोवियत-अधिकारियों ने उनको छेड़ा नहीं, और सिर्फ बहुपत्नी-विवाह तथा मठों की सम्पत्ति जैसे सामाजिक और आर्थिक क्षेत्रों में ही उनके अनुचित दखल को बन्द किया। जातियों के सम्बन्ध में स्तालिन का नुस्खा बहुत ठीक साबित हुआ। द्वितीय

विश्व-युद्ध ने भी उसकी पुष्टि की। इस सम्बन्ध में स्तालिन ने एक बार कहा था :

"सोवियत देश-भक्ति की शक्ति इस बात पर आधारित है कि वह नस्ली या राष्ट्रीय पक्षपातों पर आधारित न होकर, सोवियत-मातृभूमि के प्रति जनता की पूर्ण भक्ति और विश्वास पर, हमारे देश में रहनेवाली सभी जातियों के कमकरों के भाईचारे वाले सहयोग पर निर्भर है। लोगों की राष्ट्रीय परम्पराओं तथा सोवियत संघ की सभी कमकर जनता के मुख्य एकसमान हितों के साथ सोवियत देश-भक्ति का बड़ा ही सुन्दर सम्मिश्रण है। यह देश-भक्ति बिना भेद-भाव के, बिना बिलगाव के सभी जातियों को एक भ्रातृभावपूर्ण परिवार में एकताबद्ध करती है।"

सन् 1921 की गर्मियों में स्तालिन बीमार पड़ गये थे। लेनिन को अपने इस इकलौते बेटे जैसे शिष्य के लिए बड़ी चिन्ता हुई। उन्होंने सेर्गो ओर्योनिकिद्ज़े को तुरन्त तार दिया :

"कृपया मुझे बतलाओ कि स्तालिन का स्वास्थ्य कैसा है और डाक्टरों की क्या राय है ?"

जवाब पाकर, लेनिन ने फिर तार दिया :

"स्तालिन की चिकित्सा करनेवाले डाक्टर का नाम और पता भेजो। वह कितने समय से बीमार है ?"

सन् 1921 की शरद् में, लेनिन ने क्रैमलिन के अधिकारी को लिखा था : "रसोईघर के पास सोने में बाधा होती हैं, इसलिए स्तालिन को किसी और आरामदेह मकान में ले जाना चाहिए।" लेनिन ने इस काम को तुरन्त करने के लिए हुक्म देते हुए, यह भी पूछा था : "मुझे सूचित करो कि तुम इसे कर सकते हो या नहीं और कर सकते हो, तो कब ?" लेनिन ने दिसम्बर में अपने सेक्रेटरी के पास नोट लिखा रखा था कि वह रोज सवेरे इस बात को याद दिलाया करे कि स्तालिन को देखना है, और उससे पहले स्तालिन के डाक्टर के साथ टेलीफोन का सम्बन्ध भी जोड़ दे। यह समझना बिलकुल आसान है कि अप्रतिम स्तालिन में लेनिन ने अपनी भविष्य की सारी आशाओं को केन्द्रित देखा था। उनकी अपनी कोई संतान नहीं थी। स्तालिन में उनका अपने पुत्र जैसा ही वात्सल्य निहित था।

बीमार पड़ने से पहले 6 जुलाई, 1921 को स्तालिन ने तिफलिस के पार्टी संगठनों की एक सभा में भाषण दिया था। वहाँ पर भी राष्ट्रवादी मध्यवर्ग अपना दूसरा ही रास्ता पकड़ना चाहता था और सारे काकेशिया का फैडरल सोवियत गणराज्य बनाने में सहमत नहीं था। लेनिन ने इस बात को पसन्द किया और स्तालिन ने वहाँ फैडरल गणराज्य कायम कर दिया था।

2. ग्यारहवीं कांग्रेस (सन् 1922)

नवीन अर्थनीति का एक साल बीत गया था, जब कि सन् 1922 की मार्च-अप्रैल में पार्टी ने इस कांग्रेस में नई नीति के परिणामों पर विचार किया। इसी समय, लेनिन ने घोषित किया था :

"एक साल तक हम पीछे हटते रहे, लेकिन अब पार्टी के नाम पर हमें, 'ठहरो' कहना है। पीछे हटने का जो उद्देश्य था, वह पूरा हो गया है। वह काल खतम हो रहा है, या हो चुका है। अब हमारा उद्देश्य दूसरा है, वह है–अपनी शक्तियों को एकत्रित करना।" इसी कांग्रेस में 3 अप्रैल को लेनिन के प्रस्ताव पर, केन्द्रीय कमिटी के प्लेनम (बड़ी बैठक) में केन्द्रीय कमिटी ने स्तालिन को महामंत्री निर्वाचित किया। पार्टी में यह नया और बड़ा महत्त्वपूर्ण पद था, जो अंतिम समय तक स्तालिन के हाथ में रहा। भविष्य ने लेनिन के इस काम को सर्वथा उचित सिद्ध किया। स्तालिन-विरोधी प्रेओब्रजेन्स्की ने इसकी आलोचना करते हुए कहा था कि स्तालिन पहले ही से दो विभागों–जातीय विभाग और कमकर-किसान-निरीक्षण-विभाग के जन-कमीसार हैं। इस तरह, उनके हाथ में और शक्तियों को देना अच्छा नहीं है। इस पर लेनिन ने कड़ा जवाब देते हुए कहा था :

"प्रेओब्रजेन्स्की ने हल्कापन दिखलाते हुए शिकायत की है कि स्तालिन के हाथ में दो विभाग दे दिए गये हैं।··· लेकिन, जातीय विभाग के जन-कमीसार के पद की वर्तमान स्थिति को कायम रखने और तुर्किस्तान, काकेशिया तथा दूसरे सभी प्रश्नों की गहराई तक पहुँचने के लिए हम और क्या कर सकते हैं ? आखिर यह राजनीतिक समस्याएँ हैं, और इन समस्याओं को हल करना होगा। यह ऐसी समस्याएँ हैं जो कि यूरोपीय राज्यों

को सैकड़ों वर्षों से परेशान किये हुए हैं; और जो जनतांत्रिक गणराज्यों में भी बहुत थोड़े ही परिणामों के साथ हल की गई हैं। हम इन समस्याओं को हल कर रहे हैं, जिसके लिए हमारे पास एक ऐसा आदमी होना चाहिए जिसके पास जातियों का कोई भी प्रतिनिधि आकर सम्बन्धित विषयों पर सविस्तार बातचीत कर सके। हम ऐसा आदमी कहाँ से पायेंगे ? मैं समझता हूँ कि इस काम के लिए प्रेओब्रजेन्स्की भी साथी स्तालिन को छोड़कर किसी दूसरे आदमी का नाम नहीं दे सकते। यही बात कमकर-किसान निरीक्षणालय के बारे में भी है। यह बहुत जबर्दस्त काम है। लेकिन, जाँच-पड़ताल के काम को ठीक से करने के लिए, हमें एक अधिकारयुक्त आदमी की आवश्यकता है, नहीं तो हम छोटी-छोटी तिकड़मों में ही डूब जायेंगे।"

3. लेनिन का निधन (सन् 1924)

सन् 1918 में क्रांति-विरोधियों द्वारा बहकाई हुई, एक स्त्री ने लेनिन पर मरणान्तक आक्रमण किया था। यद्यपि उससे उसी वक्त उनकी जान नहीं गई, लेकिन छाती में मर्मस्थान पर गोली लगने से लेनिन का स्वास्थ्य हमेशा के लिए बिगड़ गया था; और सन् 1921 के अन्त से ही उन्हें काम से अक्सर अलग रहना पड़ता था। तभी से पार्टी की सारी जिम्मेवारी स्तालिन के कन्धों पर थी। इसी समय, स्तालिन ने जातीय सोवियत गणराज्यों का निर्माण तथा सारे सोवियत गणराज्यों को मिलाकर एक संघ-राज्य–सोवियत समाजवादी गणसंघ–का निर्माण किया। सन् 1922 की गर्मियों में लेनिन की बीमारी भयंकर हो उठी। उस समय स्तालिन बराबर अपने गुरु को देखने जाया करते थे और डाक्टरों की आज्ञा होने पर राजकाज की बातों को भी बतलाते थे। जैसे ही लेनिन का स्वास्थ्य कुछ ठीक हुआ, वैसे ही उन्होंने स्तालिन को मिलने के लिए बुलाया। स्तालिन ने अपने संस्मरणों में बतलाया है कि लेनिन सभी राजनीतिक परिस्थितियों में कितनी दिलचस्पी लेते थे।

अक्तूबर सन् 1922 में लेनिन का स्वास्थ्य इतना अच्छा हो गया था कि उनके डाक्टरों ने काम पर जाने के लिए इजाजत दे दी थी। वह जन-कमीसार-परिषद् (मंत्रिमंडल) की बैठकों में जाने लगे। उसी महीने में, केन्द्रीय कमिटी की एक प्लेनरी (बड़ी) मीटिंग में भी शामिल हुए। वह सोवियतों की अखिल रूसी केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी की चतुर्थ कांग्रेस में भी बोले, और उन्होंने कम्युनिस्ट इण्टर्नेशनल की चतुर्थ कांग्रेस में नवीन आर्थिक नीति और विश्व-क्रांति की सम्भावना के बारे में एक रिपोर्ट भी दी। 20 नवम्बर सन् 1922 को मॉस्को सोवियत (नगर पालिका) की एक प्लेनरी बैठक में, गृह और विदेश-सम्बन्धी नीति पर भाषण देते हुए लेनिन ने अपना दृढ़ विश्वास प्रकट किया था कि नवीन अर्थनीति पर चलनेवाला रूस एक दिन अवश्य ही समाजवादी रूस बनेगा। लेनिन का यह अंतिम सार्वजनिक भाषण था। वह अखिल रूसी सोवियत कांग्रेस में भाषण देने की तैयारी कर रहे थे। उन्होंने उसकी योजना भी बना ली थी, लेकिन उनका स्वास्थ्य तेजी से खराब होने लगा। उन्होंने स्तालिन को एक चिट्ठी भी पार्टी की केन्द्रीय कमिटी की विस्तारित मीटिंग में पढ़ने के लिए लिखी, जिसमें राज्य इजारेदारी के विरोधियों बुखारिन आदि की कड़ी आलोचना करते हुए, उन पर कुलक-नीति के समर्थन करने का दोष लगाया था।

दिसम्बर सन् 1922 को सोवियत समाजवादी गणसंघ की स्थापना हुई। लेनिन बीमार थे। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इस काम में स्तालिन का ही सबसे अधिक हाथ था। संघ के संधि-पत्र को उन्होंने ही तैयार किया और उन्हीं की रिपोर्ट पर सोवियत संघ की प्रथम कांग्रेस ने 30 दिसम्बर, 1922 को उस संधि-पत्र को स्वीकार किया था। स्तालिन ने ही सोवियत समाजवादी गणसंघ के संविधान को तैयार किया, जिसे संघ की द्वितीय कांग्रेस ने सन् 1924 में पास किया था। स्तालिन ने इस समय प्रथम कांग्रेस के सामने भाषण देते हुए कहा था :

> "आज का दिन सोवियत सरकार के इतिहास में एक नये युग का परिचायक है। यह पुराने युग और नये युग की विभाजन-सीमा को बनाता है। पुराना युग, जो अतीत हो गया है–जबकि सभी सोवियत गणराज्य यद्यपि एक होकर काम करते थे, लेकिन तो भी उनमें से हरएक अपने-अपने रास्ते जाता और अपनी ही रक्षा के साथ अपना मुख्य सम्बन्ध रखता था। नया युग, जो अब आरम्भ हो रहा है–इसमें

भिन्न-भिन्न सोवियत गणराज्यों के अलग-थलग अस्तित्व को खतम किया जा रहा है और आर्थिक अस्त-व्यस्तता को सफलतापूर्वक हटाने के लिए, उसे एक अकेले फैडरल राज्य के रूप में परिणत किया जा रहा है। अब से सोवियत सरकार सिर्फ अपने ही अस्तित्व को कायम रखने का ध्यान न रखकर, अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति पर प्रभाव डालने और मेहनतकशों के हितों में सुधार करने में सक्षम होने के लिए एक महत्त्वपूर्ण अन्तर्राष्ट्रीय शक्ति के रूप में विकसित हो रही है।"

बोल्शेविकों की, विशेषकर स्तालिन की, जबर्दस्त सूझ का ही फल था कि जातीय गणराज्यों ने मिलकर एक राज्य हो जाने में कोई हिचकिचाहट महसूस नहीं की। उन्होंने क्रांति के बाद के पाँच वर्षों में देख लिया था कि बोल्शेविकों के हृदय में किसी तरह का जातीय पक्षपात नहीं है और रूसी जैसी सबसे आगे बढ़ी हुई जाति भी पिछड़ी जातियों के साथ सच्चा भाई-चारा दिखाती हुई, उन्हें हर तरह से अपने बराबर लाने की कोशिश कर रही है। इसीलिए, जब तातार और बाशकिर बूर्ज्वा-राष्ट्रवादियों ने सुलतान हलीयैफ (गलीयैफ) के नेतृत्व में कुछ गड़बड़ी मचानी चाही, तो उन्हें अपनी जनता की सहायता न पाकर विफल-मनोरथ होना पड़ा।

सन् 1922 के बाद, बीमारी के कारण लेनिन मॉस्को के पास गोर्की गाँव में रहते थे। वह अब इस स्थिति में नहीं रह गये थे कि राजकाज में भाग लेते। एक वर्ष से ऊपर का उनका जीवन अपने पुराने कर्मठ जीवन से बिलकुल भिन्न था। वस्तुतः, इस सारे समय वह जीवन और मृत्यु के बीच में लटके हुए थे, लेकिन उनको इस बात का संतोष था कि सोवियत राज्य का भार बड़े ही योग्य कंधों पर पड़ा है। सन् 1923 का पूरा साल सारे देश, लेनिन और उनकी पार्टी के लिए भारी परीक्षा का समय था। लेनिन की बीमारी से फायदा उठाकर, त्रॉत्स्की और उसके अनुयायी हर तरह से पार्टी और सरकार पर आक्रमण करके उसे कमजोर करने की कोशिशें करते रहे। उनके प्रहार के मुख्य लक्ष्य थे—केन्द्रीय कमिटी के महामंत्री स्तालिन। उन्होंने पार्टी के सम्बन्ध में वाद-विवाद खड़ा कर दिया और एक दूसरी पार्टी बनाने का भी मनसूबा बाँधा, लेकिन स्तालिन कई क्षेत्रों में अपनी अद्भुत प्रतिभा दिखला चुके थे। वह राजनीतिक शतरंज में भी कच्चे गोइयाँ नहीं निकले। पार्टी के लोग उन पर अपार विश्वास रखते थे। वह पिछड़ी जातियों के हिमायती और श्रद्धेय बन चुके थे। 2 दिसम्बर, 1923 को क्रास्नयाप्रेस्न्या (मॉस्को) जिला कमिटी की एक बैठक में स्तालिन ने पार्टी को मजबूत करने और बोल्शेविक संगठन तथा बोल्शेविक नीति के शत्रुओं के मनसूबों को विफल करने के लिए केन्द्रीय कमिटी ने क्या काम किया था, इसे बतलाया। 15 दिसम्बर, 1923 को स्तालिन के हस्ताक्षर से केन्द्रीय कमिटी की एक घोषणा 'प्राव्दा' में प्रकाशित हुई, जिसमें अवसरवादियों के विरुद्ध एक होकर संघर्ष करने के लिए कहा गया था। जनवरी सन् 1924 में पार्टी की एक कान्फरेंस हुई, जिसमें स्तालिन ने रिपोर्ट दी। कान्फरेंस में त्रॉत्स्की और उसके अनुयायियों को निम्न बूर्ज्वा पथभ्रष्ट कहते हुए, उनकी निंदा की गई।

अन्त में 21 जनवरी, 1924 का वह मनहूस दिन आया, जब मॉस्को के पास गोर्की गाँव में महान् लेनिन ने संसार से अंतिम विदाई ली। साम्यवाद और सोवियत राष्ट्र के लिए यह भयंकर क्षति थी, इसमें शक नहीं; लेकिन, पिछले एक साल के तूफानों का मुकाबला करते हुए, स्तालिन ने किस तरह राष्ट्रनौका को आगे बढ़ाया था, इसे देखकर लोगों को आगे के लिए किसी भय की सम्भावना नहीं थी।

स्तालिन की अपने गुरु में अपार श्रद्धा थी, लेकिन उस श्रद्धा का कारण मूढ़ भक्ति नहीं थी, बल्कि लेनिन की चमत्कारपूर्ण प्रतिभा और अद्वितीय सूझ की करामात को बार-बार देखकर सच्चाई के सामने सिर झुकाने जैसी भावना थी। स्तालिन को इस बात का बहुत अभिमान और संतोष था कि वह ऐसे गुरु के शिष्य हैं। जब स्तालिन का स्वरूप आगे की सफलताओं के कारण विराट हो गया, तब भी वह अपने को लेनिन का विनम्र शिष्य समझने में गौरव का अनुभव करते थे। लेनिन के शव को 26 जनवरी को अंतिम विश्राम के लिए ले गये थे। उसी दिन, स्तालिन ने अपने गुरु की अर्थी के सामने पार्टी तथा राष्ट्र की ओर से शपथ ली थी।

4. स्तालिन की शपथ (26 जनवरी, 1924)

" हम कम्युनिस्ट एक विशेष साँचे में ढले हुए आदमी हैं; हम एक विशेष धातु के बने हैं। हम सर्वहारा युद्ध-विद्या-विशारद, महान् साथी लेनिन की सेना के सिपाही हैं। दुनिया में इस सेना के अंग होने से बढ़कर और कोई सम्मान नहीं है। उस पार्टी के सदस्य की उपाधि से बढ़कर कोई बड़ी चीज नहीं हो सकती, जिसके संस्थापक और नेता साथी लेनिन हैं।...

" हमसे विदा होते हुए, साथी लेनिन ने हमारे ऊपर जिम्मेवारी रखी है कि पार्टी के सदस्य की महान् उपाधि को ऊँचा, शुद्ध और सुरक्षित रखने के लिए प्रयत्न करें। साथी लेनिन, हम तुम्हारे सामने शपथ लेते हैं कि हम तुम्हारी इच्छा को भली भाँति पूरा करेंगे।...

" हमसे विदा होते हुए, साथी लेनिन ने हमारे ऊपर जिम्मेवारी रक्षी है कि हम अपनी पार्टी की एकता को अपनी आँखों की पुतली की तरह जोगा कर रखें। साथी लेनिन, हम तुम्हारे सामने शपथ लेते हैं कि हम तुम्हारी इच्छा को भली भाँति पूरा करेंगे।...

" हमसे विदा होते हुए, साथी लेनिन ने हमारे ऊपर जिम्मेवारी रखी है कि हम सर्वहारा के नेतृत्व को सुरक्षित और मजबूत करें। साथी लेनिन, हम तुम्हारे सामने शपथ लेते हैं कि हम तुम्हारी इच्छा को भली भाँति पूरा करेंगे।...

" हमसे विदा होते हुए, साथी लेनिन ने हमारे ऊपर जिम्मेवारी रखी है कि हम कमकरों और किसानों की दोस्ती को अपनी सारी शक्ति से मजबूत करें। साथी लेनिन, हम तुम्हारे सामने शपथ लेते हैं कि हम तुम्हारी इच्छा को भली भाँति पूरा करेंगे।...

" साथी लेनिन बराबर हम अपने देश की जातियों के स्वेच्छापूर्वक संघ को कायम रखने की आवश्यकता, गणसंघ के ढाँचे के भीतर उनमें भाईचारे के सहयोग की आवश्यकता पर जोर देते थे।

" हमसे विदा होते हुए, साथी लेनिन ने हमारे ऊपर जिम्मेवारी रखी है कि हम गणों के संघ को मजबूत और विस्तृत करें। साथी लेनिन, हम तुम्हारे सामने शपथ लेते हैं कि हम तुम्हारी इच्छा को भली भाँति पूरा करेंगे।...

" अनेक बार लेनिन ने हमको बतलाया था कि हम लाल सेना को मजबूत करें, और उसकी स्थिति में सुधार करना हमारी पार्टी का एक महत्त्वपूर्ण काम है।... साथियो, आओ हम शपथ लें कि अपनी लाल सेना और लाल नौसेना को मजबूत करने में किसी भी बात को उठा नहीं रखेंगे।...

" हमसे विदा होते हुए, साथी लेनिन ने हमारे ऊपर जिम्मेवारी रखी है कि हम कम्युनिस्ट इन्टर्नेशनल के सिद्धांतों के विश्वासपात्र रहें। साथी लेनिन, हम तुम्हारे सामने शपथ लेते हैं कि सारी दुनिया के मेहनतकशों के संघ–कम्युनिस्ट इन्टर्नेशनल–को मजबूत और विस्तृत करने में हम अपने प्राणों की भी परवाह नहीं करेंगे।... "

इस शपथ के बाद, स्तालिन उन्तीस वर्ष तक जिये और उन्होंने लेनिन के सामने ली हुई अपनी शपथ की एक-एक बात को किस तरह पूरा किया है, इसे सारी दुनिया जानती है।

लेनिन की अन्त्येष्टि-क्रिया के दो दिन बाद 28 जनवरी, 1924 को उस महान् नेता के प्रति श्रद्धांजलि भेंट करते हुए, उनके योग्य उत्तराधिकारी ने एक महत्त्वपूर्ण भाषण दिया था।

प्रथम बरसी के समय 'रबोचया गजेता' (मजदूर अखबार) में स्तालिन ने एक पत्र लिखा था, जिसके कुछ अंश हैं :

" अपने गुरु और नेता–लेनिन–का स्मरण रखो, उनसे प्रेम करो और उनका अध्ययन करो।

" हमें लेनिन ने जैसे सिखलाया है, वैसे ही भीतरी-घरेलू और विदेशी शत्रुओं के साथ लड़ो और उनको मार भगाओ।

" हमें लेनिन ने जैसे सिखलाया है, उसी तरह एक नये जीवन और अस्तित्व के एक नये रास्ते

और नई संस्कृति का निर्माण करो।

"छोटी-छोटी चीजों के करने से इन्कार न करो, क्योंकि छोटी-छोटी चीजों से ही मिलकर बड़ी चीजें बनती हैं–यह लेनिन की एक महत्त्वपूर्ण वसीयत है।"

त्रॉत्स्की व्यावहारिक राजनीति या अर्थनीति में चाहे कितना ही कच्चा हो, लेकिन उसकी महत्त्वाकांक्षाएँ बहुत बड़ी-चढ़ी थीं। लेनिन जानते थे कि वह कितना क्षुद्र अविश्वसनीय और निकम्मा आदमी है; इसीलिए उन्होंने त्रॉत्स्की को आगे नहीं बढ़ाया और पार्टी तथा सरकार की सारी जिम्मेवारी स्तालिन ही के ऊपर रखी। लेनिन के मरने के बाद, अब त्रॉत्स्की और उसके साथियों ने फिर सिर उठाया। स्तालिन अपने गुरु की बीज रूप में छोड़ी हुई योजनाओं को एक बड़े आकार में पूरा करने के लिए बहुत-सी कल्पनाएँ कर रहे थे, लेकिन वह देख रहे थे कि मुट्ठीभर त्रॉत्स्कीवादियों के विरोध के कारण एक मन से, दृढ़ संकल्प के साथ देश के लिए कुछ भी करना मुश्किल होगा। इसीलिए, उन्होंने घोषित किया : "जब तक त्रॉत्स्कीवाद को हराया नहीं जाता, तब तक नई अर्थनीति की स्थितियों में विजय प्राप्त करना और आज के रूस को एक समाजवादी रूस के रूप में परिवर्तित करना भी असम्भव होगा।"–त्रॉत्स्कीवादियों के कुतर्कों का जवाब देते हुए, उन्होंने पार्टी के मुख-पत्र 'प्राव्दा' में पहले कई लेख लिखे थे। इसी साल (अप्रैल सन् 1926) उन्होंने स्वेर्दलोफ युनिवर्सिटी में 'लेनिनग्राद की आधारशिलाएँ' के नाम से कई व्याख्यान दिए थे। यह भाषण तथा इस सम्बन्ध में लिखे हुए उनके दूसरे लेख 'लेनिनवाद की समस्याएँ' के नाम से प्रकाशित हुए थे। लेनिनवाद की व्याख्या करते हुए स्तालिन ने कहा :

"लेनिनवाद साम्राज्यवाद और सर्वहारा क्रांति के युग का मार्क्सवाद है। ठीक तौर से कहना होगा कि लेनिनवाद साधारण तौर से सर्वहारा क्रांति का सिद्धांत और दाव-पेंच, विशेष तौर से वह सर्वहारा अधिनायकत्व का सिद्धांत और दाव-पेंच है।"

7

पुनर्निर्माण (सन् 1924-27)

मार्क्स और एंगेल्स ने सन् 1848 में 'कम्युनिस्ट घोषणा' प्रकाशित करते हुए, बतलाया था कि सर्वहारा अपनी विजय के बाद किस प्रकार पूँजीवादी समाज को समाजवादी समाज के रूप में परिणत कर सकता है। 'कम्युनिस्ट घोषणा' के बाद, सन् 1873 में फ्रांस के मजूरों ने पेरिस कम्यून के रूप में सर्वहारा राज्य स्थापित करके, उसे थोड़े-से समय के लिए चलाया था। लेकिन, उसे गृह-युद्ध के बीच ही खतम हो जाना पड़ा था। जिसमें वह थोड़े-से ही मौलिक परिवर्तन, सो भी कुछ ही समय के लिए कर पाये थे। इसमें शक नहीं कि बोल्शेविकों ने पेरिस कम्यून के तजर्बों से काफी फायदा उठाया था और उन्होंने क्रांति के सफल होते ही कई कार्यक्रम कार्यरूप में परिणत कर दिए थे। भूमि का राष्ट्रीयकरण कर, जमींदार वर्ग को खतम कर–खेत किसानों के हाथों में दे दिए; पूँजीपतियों को खतम कर–मिलों, फैक्टरियों, रेलों तथा दूसरे यातायात के साधनों और खानों के साथ, बैंकों का भी राष्ट्रीयकरण कर दिया गया। उन्होंने यह कदम उठाकर, पूँजीवाद की दाढ़ों और विषदंतों को निकाल फेंका और देश के किसानों को सर्वहारों के साथ एक कर दिया। यदि गृह-युद्ध में न फँसना पड़ता, तो पुनर्निर्माण और नव-निर्माण का काम बहुत पहले से ही शुरू हो गया होता। बीमारी के समय ही, सन् 1923 की जनवरी और मार्च में लेनिन का दिमाग देश के पुनर्निर्माण और उद्योगीकरण पर ही केन्द्रित रहता था। चाहे अनुशासन को मानते हुए, उन्हें अखबार पढ़ने की इच्छा न होती हो, लेकिन उनका दिमाग (लेनिन का) कैसे मूर्छित रह सकता था। तीन महीनों में उन्होंने कई महत्त्वपूर्ण लेख लिखवाये थे, जिनमें उन्होंने सहयोगी-योजना, समाजवादी पुनर्निर्माण, देश के उद्योगीकरण तथा कृषि के सामूहीकरण के बारे में लिखा था। उन्होंने यह दिखलाया

था कि सर्वहारा के अधिनायकत्व के साथ, जब उत्पादन के सभी बड़े पैमाने के साधन सोवियत-राज्य के हाथ में हैं, जब सर्वहारा किसानों का पथ-प्रदर्शन कर रहे हैं, तब एक पूर्ण समाजवादी समाज के निर्माण करने के लिए सभी आवश्यक चीजें मौजूद हैं। उन्होंने लिखा था :

"हमें एक ऐसा राज्य बनाने की कोशिश करनी है, जिसमें किसानों का नेतृत्व कमकर अपने हाथ में रखें,; अपने में किसानों का विश्वास कायम रखते हुए, अत्यंत मितव्ययिता का परिचय दें और हमारे सामाजिक सम्बन्धों से हरएक तरह की फिजूलखर्ची के चिह्नों को भी मिटा दें। दुनिया में कहीं कोई ऐसा स्थान नहीं है, जहाँ से हमें मदद मिल सकेगी। देश के उद्योगीकरण और बिजलीकरण के लिए, सभी साधनों को देश के भीतर से ही बड़ी मितव्ययिता और खर्च की कमी करके जुटाना होगा। देखना होगा कि एक-एक पैसा जो हम बचाते हैं; वह हमारे बड़े पैमाने के मशीन-उद्योग, बिजलीकरण आदि के विकास, बोल्खोफ पन-बिजली स्टेशन आदि के निर्माण में ही लगे। इसी, और केवल इसी में हमारी आशा निहित है।"

ऊपर के उद्धरणों से मालूम होगा कि लेनिन ने उन सभी बातों पर संक्षेप में प्रकाश डाल दिया था, जिन पर ले जाकर देश को एक शक्तिशाली राष्ट्र में परिणत करना था। लेनिन की मृत्यु के समय तक, यह एक परिवर्तन अवश्य हुआ था कि अब साम्राज्यवादी सब कुछ करके हार चुके थे और उनमें से एक-एक करके कितनों ही ने बोल्शेविकों की सरकार को स्वीकार भी कर लिया था।

1. चौदहवीं पार्टी कांग्रेस (सन् 1925)

त्रॉत्स्की और उसके अनुयायी पहले ही, लेनिन के सामने से ही, हल्ला मचा रहे थे कि देश में तब तक समाजवादी समाज की स्थापना नहीं हो सकती, जब तक कि समाजवाद दूसरे देशों में भी विजयी न हो जाये। त्रॉत्स्की के अनुसार, सारे विश्व में क्रांति हो जाने पर ही समाजवाद कायम किया जा सकता था। वह एक देश में समाजवाद के विजयी होने की सम्भावना न समझकर, उसका विरोध करता था। स्तालिन ने त्रॉत्स्की की बड़ी-बड़ी बातों को कोरा गाल बजाना बतलाते हुए, कहा कि एक देश में भी समाजवाद का निर्माण हो सकता है; एक देश में वैसा प्रयत्न न करने का मतलब केवल हवाई किले बनाना है। उन्होंने साफ कहा कि समाजवाद की अंतिम विजय, साम्राज्यवादियों के सोवियत संघ में दखल देने तथा पूँजीवाद की पुनःस्थापना के प्रयत्नों को सर्वदा के लिए खतम करने के लिए यह जरूरी है कि दूसरे देशों में भी पूँजीवाद का खात्मा हो, अर्थात् पूँजीवादी घेरा टूट जाये। लेकिन, जहाँ तक भीतरी बातों का सवाल है, समाजवाद की विजय और वर्गहीन समाजवादी समाज के निर्माण के लिए आवश्यक सारी चीजें सोवियत समाजवादी गणसंघ में मौजूद हैं।

चौदहवीं पार्टी कांग्रेस (अप्रैल सन् 1925) ने स्तालिन के इन विचारों का समर्थन किया। इस कान्फरेंस ने सभी पार्टी सदस्यों के लिए अनिवार्य कर दिया कि वह सोवियत संघ में समाजवाद की विजय के लिए काम करें। फौरी काम की व्याख्या करते हुए, स्तालिन ने इसी कान्फरेंस में कहा था :

"आज हमारे सामने मुख्य काम है—मझोले किसानों को सर्वहारा के साथ करके, उन्हें अपने पक्ष में लाना। आज मुख्य काम है—किसानों के मुख्य समूह के साथ सम्बन्ध स्थापित करना, उनके भौतिक और सांस्कृतिक तल को ऊँचा करना और इन मुख्य समूहों के साथ मिलकर, समाजवाद के पथ पर आगे बढ़ना। मुख्य काम है—किसानों के साथ, और मजूर-वर्ग के पूर्ण नेतृत्व में समाजवाद का निर्माण करना। मजूर-वर्ग का नेतृत्व इस बात की मौलिक गारंटी है कि हमारा निर्माण का काम समाजवाद के पथ पर होते हुए आगे बढ़ेगा।

दिसम्बर सन् 1925 में पार्टी की यह कांग्रेस हुई, जिसके सामने स्तालिन ने केन्द्रीय कमिटी की ओर से राजनीतिक रिपोर्ट दी थी। तेरहवीं कांग्रेस के बाद देश में जो कुछ हुआ था, उसके बारे में बतलाते हुए उन्होंने कहा कि जो कुछ भी हम कर पाये हैं, वह एक पिछड़े हुए कृषि-प्रधान देश के लिए संतोषजनक नहीं है। साथ ही, यह भी बतलाया कि हमारा लक्ष्य है :

"अपने देश को एक किसानी देश से औद्योगिक देश के रूप में परिवर्तित करना, जिसमें वह अपने प्रयत्नों से सभी आवश्यक साधनों को पैदा कर सके।"

जिनोवियेफ और कामनेफ ने स्तालिन की योजना का विरोध किया और उसकी जगह ऐसी योजना रखी, जिसका मतलब था—देश को कृषि-प्रधान बनाये रखना। स्तालिन भारतीय नेताओं की तरह दुर्बल-बुद्धि, अदूरदर्शी या लोगों को धोखे में रखनेवाले नहीं थे, उन्हें जल्द से जल्द देश को स्वावलम्बी बनाकर राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और सैनिक दृष्टि से मजबूत बना डालना था; जो उद्योगीकरण के बिना हो ही नहीं सकता था। भारत में जो तथाकथित पंचवर्षीय योजना बनायी गयी है, उसमें उद्योगीकरण के लिए समुद्र में बूँद जितनी पूँजी भी सरकार ने नहीं रखी है। वह चाहती है, पूँजीपति घड़ियालों के बल पर देश का उद्योगीकरण करना ! लेनिन की मृत्यु के बाद, अब सारे ही ढुलमुल यकीन अवसरवादी एक होकर, विरोध पर तुले हुए थे। त्रॉत्स्की, जिनोवियेफ, बुखारिन, कामनेफ और उनके अनुयायी मिलकर, स्तालिन की योजना के विरुद्ध सारी शक्ति लगा रहे थे; लेकिन उनके अनुयायियों की संख्या बहुत कम थी। और, दूसरी ओर क्रांति तथा गृह-युद्ध की आग में तपे हुए मोलोतोफ, कालिनिन, बोरोशिलोफ, कुइबिशेफ, फुंजे, जैर्जिन्स्की, ओर्योनिकिद्जे, किरोफ़, यारोस्लाव्स्की, मिकोयान, अन्द्रेयेफ, श्वेर्निक, ज्दानोफ, शूकिर्यातोफ आदि स्तालिन के साथ थे। लेनिन ने पहले ही कह दिया था :

"अगर हम अपने देश में उद्योग-धंधे खड़े करके उसे मजबूत नहीं कर सकते, तो इसका मतलब होगा अपने देश को एक सभ्य देश, एक समाजवादी देश के रूप में खतम करना।"

लेनिन के इस वाक्य की सत्यता को स्तालिन अच्छी तरह से जानते थे। वह समझते थे कि देश की सुरक्षा उद्योग-धंधों पर ही निर्भर है। उद्योग-धन्धों की मजबूत नींव रखने के लिए, किसानों और मजदूरों के सहयोग की बड़ी जरूरत है। किसानों को शिक्षित करके समाजवाद के निर्माण में हाथ बँटाने के लिए, यह जरूरी है कि खेतों का सामूहीकरण हो, बड़े पैमाने पर उत्पादन का संगठन किया जाय। इन सबके लिए, नये उपायों और नये साधनों की आवश्यकता होगी, जिन्हें हम कल-कारखानों से ही पा सकते हैं।

स्तालिन के नेतृत्व में फिर बोल्शेविकों की विजय हुई और अवसरवादियों को हराकर, उन्होंने उद्योगीकरण के लिए पहला कदम उठाया।

2. समाजवादी उद्योगीकरण

देश का उद्योगीकरण अनिवार्यतया आवश्यक था। बाहर से पूँजी मिलने की कोई सँभावना नहीं थी और न इंग्लैंड की तरह, अपनी अधीन जातियों को लूट-खसोट कर ही पूँजी जमा की जा सकती थी। पूँजी के अतिरिक्त, आवश्यक विशेषज्ञों की भी बहुत कमी थी। जारशाही के समय में जो इंजीनियर, टेक्नीशियन आदि थे भी, उनमें से कितने ही क्रांति-विरोधियों के पक्ष में होकर बाद में देश से बाहर चले गये थे। लेकिन, स्तालिन ने अच्छी तरह समझ लिया था कि अपने ही बूते पर उद्योगीकरण करना असम्भव नहीं है। उन्होंने इस विषय पर अपने विचारों को प्रकट करते हुए, समाजवादी उद्योगीकरण के ये सिद्धांत बताए थे :

(1) उद्योगीकरण का अर्थ केवल औद्योगिक उपज का बढ़ाना ही नहीं है, बल्कि भारी उद्योग, और सबसे बढ़कर उसके मूल-स्रोत—मशीन-निर्माण का विकास करना है, क्योंकि मशीन-निर्माण-उद्योग के साथ स्वदेशी भारी उद्योग ही केवल वह चीज है, जो समाजवाद के लिए भौतिक आधार बन सकता है।

(2) अक्तूबर-समाजवादी-क्रांति के परिणामस्वरूप, हमारे देश में जमींदारों और पूँजीपतियों का उच्छेद, भूमि, कारखानों, बैंकों आदि में वैयक्तिक सम्पत्ति का खात्मा और इन सबका सारी जनता की सम्मिलित सम्पत्ति के रूप में परिणत होना—इन सबने उद्योगों के विकास के लिए, समाजवादी पूँजी-संचय के लिए एक बहुत जबर्दस्त स्रोत पैदा कर दिया है।

(3) समाजवादी उद्योगीकरण पूँजीवादी उद्योगीकरण से मौलिक भेद रखता है। पूँजीवादी उद्योगीकरण का आधार है—अधीन देशों की लूट-खसोट, सैनिक विजय और सूद पर लगाये भारी-भारी कर्ज तथा आधीनस्थ लोगों का निष्ठुर शोषण। समाजवादी उद्योगीकरण का आधार है—उत्पादन के साधनों का सामाजिक स्वामित्व, मजूरों

और किसानों के जांगर से उत्पादित धन का संचयन और प्रबन्ध, जिसके साथ कमकर-वर्ग के जीवन-तल का ऊपर उठना आवश्यक रूप से लगातार होता जाता है।

(4) इसलिए, उद्योगीकरण के संघर्ष के लिए मुख्य काम है—श्रम की उत्पादकता को बढ़ाना, उत्पादन के खर्च को कम करना, कमकरी अनुशासन तथा कड़ी मितव्ययिता आदि को आगे बढ़ाना।

(5) सोवियत संघ में समाजवाद के निर्माण के लिए जो स्थितियाँ मौजूद हैं और कमकर वर्ग में काम के लिए जो उत्साह है, उसके कारण उद्योगीकरण में तीव्र गति से सफलता प्राप्त करना बिलकुल सम्भव है।

(6) समाजवादी ढंग पर कृषि के पुनर्निर्माण करने के पहले, देश का उद्योगीकरण जरूरी है, जिसमें कृषि के पुनर्निर्माण के लिए आवश्यक यांत्रिक साधन तैयार हो जायें।

स्तालिन की सूझ के सुपरिणाम को हम पहले देख चुके हैं। स्तालिन के तिकड़म से नेता बन जाने की बात कहनेवाले केवल अपने को ही धोखा देते हैं, अथवा कम्युनिज्म के खिलाफ हर तरह की झूठ को पुण्य समझकर, वह दुनिया के सदिच्छुक सीधे-सादे आदमियों को सच्चाई के पास पहुँचने से रोकना चाहते हैं। सचमुच, अगर कोई समझदार आदमी भी इस तरह की ऊल-जलूल बातें करे, तो हमें समझ लेना चाहिए कि उस आदमी में कोई नैतिक बल नहीं है, वह गंदगी का कीड़ा है और वह अवसर मिलते ही, जघन्य से जघन्य काम कर सकता है। साथ ही, यह निश्चय है कि ऐसे पामर आदमी में इतिहास के प्रवाह को बदलने की क्षमता बिलकुल नहीं हो सकती। वस्तुतः क्लोरिन के अनुसार :

> "केवल सिद्धांतवादी और व्यावहारिक आदमी के तौर पर, अपनी श्रेष्ठता से ही स्तालिन हमारे नेता बन गये हैं।"

और, इन्हीं गुणों के न रहने के कारण त्रॉत्स्की सबसे निचले गड्ढे में गिरकर, अंत में क्रांति-विरोधी और आदर्श-द्रोही बन गया। उसके काले हृदय को परखने के बाद, उसे अपने चेले द्वारा ही प्राण गँवाने पड़े। स्तालिन ने नेता बनने की योग्यता के बारे में लिखा है :

> "बागडोर हाथ में लेकर आँखें बन्द करके तब तक आगे ताकना, जब तक कि दुर्घटना न घट जाये, यह नेतृत्व का अर्थ नहीं है। बोल्शेविक नेतृत्व के काम को इस तरह नहीं समझते। नेतृत्व करने के लिए, आदमी को दूरदर्शी होना चाहिए।··· तुम अगर अलग-थलग हो, चाहे दूसरे उन साथियों से भी जो कि नेतृत्व कर रहे हैं, तो तुम हरएक चीज को केवल ऐसे रूप में देखोगे, मानो एक ही समय लाखों-करोड़ों कमकर कमजोरियों को ढूँढ़ रहे हैं, गलतियों का पता लगा रहे हैं और सम्मिलित काम को पूरा करने में अपने को खपा रहे हैं।"

कल-कारखानों और बिजली—स्टेशनों के निर्माण का काम बड़े जोर-शोर से होने लगा। इसमें जो सफलता प्राप्त हुई, उसके कारण स्तालिन को विश्वासपूर्वक यह कहते हुए हिचकिचाहट नहीं हुई कि "हमें अत्यंत आगे बढ़े हुए पूँजीवादी देशों के स्तर तक पहुँचना और कम-से-कम समय में, उनसे आगे बढ़ना है।" लेकिन, हम दिसम्बर सन् 1925 की चौदहवीं कांग्रेस में देख चुके हैं कि जिनोवियेफ और कामनेफ के गुट ने एड़ी-चोटी का जोर लगाकर, किस तरह विरोध किया था। उन्होंने 'नवीन विरोधी दल' के नाम से अपना एक गुट कायम किया, जिसका अगुवा जिनोवियेफ था। इस गुट ने सन् 1926-27 में बड़ी तत्परता से काम किया। इस प्रकार समाजवादी निर्माण का काम, साथ ही इस गुट की साजिशों और तोड़-फोड़ की कार्रवाइयों के खिलाफ निर्मम संघर्ष चलाने का काम भी था। सन् 1926 की फरवरी में कम्युनिस्ट इन्टर्नेशनल की कार्यकारिणी कमिटी के छठे परिवर्धित प्लेनम में, स्तालिन ने 'दक्षिण पंथी' और 'चरम वामपंथी' विरोधियों की कड़ी आलोचना की और विरोध के कारण देश की प्रगति ही नहीं, उसके अस्तित्व के लिए भी जो खतरा पैदा हो गया था, उसको साफ शब्दों में बतलाया। उसके कारण, विरोधियों का प्रभाव और भी कम हो गया।

इसी साल (30 नवम्बर, 1928 में), स्तालिन ने 'चीनी क्रांति की समस्याएँ' नामक एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण निबन्ध लिखा था, जिसने आगे चलकर चीनी क्रांति की सफलता में भारी पथ-प्रदर्शन किया। अगले साल 13 मई, 1927 को उन्होंने सनप-यात्-सेन युनिवर्सिटी के विद्यार्थियों के सामने भाषण दिया और 24 मई, 1917

को चीनी क्रांति के सम्बन्ध में कम्युनिस्ट इन्टर्नेशनल के कर्तव्य का निर्देश किया। यह सब देखने से मालूम होता है कि देश के पुनर्निर्माण में लगे रहते हुए भी, दुनिया के दूसरे भागों के पथ-प्रदर्शन से स्तालिन ने आँखें नहीं मूँद ली थीं। उनकी नजर बराबर दूसरे देशों पर भी रहती थी। सन् 1926 में इंग्लैंड के मजदूरों ने जब सार्वजनिक हड़ताल की, तो उसी साल जून में तिफलिस के रेलवे कमकरों के सामने स्तालिन ने उसके महत्त्व पर भाषण दिया था।

नवम्बर सन् 1926 में पार्टी की पंद्रहवीं कान्फरेंस हुई। स्तालिन ने पुनर्निर्माण के तजर्बों के आधार पर बड़ी योजना की ओर बढ़ने की आवश्यकता समझकर, इसके बारे में कहा :

> "यह बिना जाने कि हमें किस दिशा में जाना चाहिए, बिना जाने कि हमारी गति का लक्ष्य क्या है, हम आगे नहीं बढ़ सकते। हम तब तक निर्माण नहीं कर सकते, जब तक कि इस बात की सम्भावना और निश्चय न हो कि हम समाजवादी आर्थिक व्यवस्था के निर्माण का आरम्भ करके उसे पूरा कर सकेंगे। पार्टी बिना स्पष्ट सम्भावना, बिना स्पष्ट लक्ष्य के निर्माण के काम का पथ-प्रदर्शन नहीं कर सकती। हम बर्नस्टाइन के विचारों के अनुसार नहीं कह सकते कि 'गति सब कुछ है, और लक्ष्य कुछ नहीं।' इसके विरुद्ध क्रांतिकारियों की तरह हमें अपनी प्रगति, अपने व्यावहारिक काम को सर्वहारा-निर्माण के मौलिक वर्ग-लक्ष्य के अधीन करना होगा। नहीं तो, निस्सन्देह और अवश्य ही हम अवसरवाद के दल-दल में जा गिरेंगे।" इसी कान्फरेंस ने बड़े पैमाने पर समाजवादी उद्योग के निर्माण करने के लिए, देशव्यापी योजना को कार्यरूप में परिणत करने का निश्चय किया।

सन् 1927 के दिसम्बर में जब पन्द्रहवीं पार्टी कांग्रेस हुई, तब तक पुनर्निर्माण का काम पूरा हो चुका था। प्रथम महायुद्ध और गृह-युद्ध के बाद, संपत्ति का भीषण ध्वंस हुआ था और कृषि तथा उद्योग के हर-एक क्षेत्र में उपज बहुत घट गई थी। सन् 1927 के खतम होते-होते, अब सोवियत रूस के उत्पादन के आँकड़े हर बात में सन् 1912 के रूस की अपेक्षा बहुत आगे बढ़ चुके थे। जारशाही रूस के उत्पादन का चरम विकास सन् 1913 में हुआ था, यह ध्यान रखना चाहिए। सन् 1927 में, 1913 की अपेक्षा कृषि की उपज 8 फी सैकड़ा अथवा एक अरब रूबल अधिक हुई। उद्योग-धंधों में यह वृद्धि 12 फी सैकड़ा या बीस करोड़ रूबल अधिक थी। जारशाही रूस में जहाँ उतने ही भूभाग में, सन् 1913 में साढ़े छत्तीस हजार मील रेलें थीं, अब वह बढ़कर अड़तालीस हजार दो सौ मील हो गई थीं, कमकरों के वेतन में भी 16 फी सैकड़ा की वृद्धि हुई थी। शिक्षा-क्षेत्र में तो यह वृद्धि और भी आश्चर्यजनक हुई थी। सन् 1913 में जितने विद्यार्थी प्राइमरी स्कूलों में पढ़ते थे, उनकी संख्या बढ़कर सन् 1925 में साढ़े बाईस लाख हो गई थी। टेक्नीकल स्कूलों में तो उनकी संख्या दूनी हो गई थी, शिक्षा पर दूना पैसा खर्च किया जा रहा था और वैज्ञानिक प्रतिष्ठानों पर तो वह दस गुना हो रहा था। राष्ट्रीय आय अब बढ़कर, साढ़े बाईस रूबल हो गई थी और सोवियत संघ का नम्बर अब इस क्षेत्र में कनाडा, इंग्लैंड, जर्मनी और फ्रांस के बराबर और केवल युक्त राष्ट्र अमरीका के पीछे था। अब 77 फी सैकड़ा उद्योग-धंधे सामूहिक थे, केवल 14 फी सैकड़ा निजी और एक सहकारी प्रबन्ध में थे। कृषि-उत्पादन में समाजवादी भाग अभी केवल 27 फी सैकड़ा था और निजी खेती 97.3 फी सैकड़ा। व्यापार में, समाजवादी कारबार 81.9 फी सैकड़ा और निजी 18.1 फी सैकड़ा रह गया था।

2. त्रॉत्स्की का पतन

इस प्रकार, इन सफलताओं के बाद अगला बड़ा कदम उठाना स्वाभाविक ही था। लेकिन, अब विरोधी अपने पैर के नीचे से धरती खिसकती देखकर जबर्दस्त संघर्ष के लिए तैयार थे। त्रॉत्स्की और उसके अनुयायी सन् 1927 की शरद में अब खुले आम प्रहार करके, पूँजीवाद की पुनः स्थापना में हाथ बँटाने के लिए एक स्वतंत्र दल बनाने का प्रयत्न करने लगे। सोवियत रूस की इस हालत को देखकर, पूँजीवादी देश बड़े प्रसन्न थे और वह इस दल को हर तरह की मदद देने के लिए तैयार थे। पंद्रहवीं कांग्रेस के बाद, त्रात्स्कीवादियों का विरोध अब पुराने मेन्शेविकों के रास्ते पर चलने लगा। विश्व के और बहुत-से देशों में क्रांति के हुए बिना किसी देश

में समाजवाद प्रतिष्ठापित नहीं किया जा सकता—वह इन बातों की आड़ में, देश में पूँजीवाद के लिए रास्ता साफ करना चाहते थे। त्रॉत्स्की और उसके अनुयायी पुनर्निर्माण के समय से ही जिस तरह का सक्रिय विरोध कर रहे थे, यदि उसमें सफलता होती, तो क्या सोवियत रूस कभी सबल हो सकता था ? और, उसे निर्बल रखना क्या शक्तिशाली साम्राज्यवादियों को फिर से आक्रमण के लिए निमंत्रण देना नहीं था ? पंद्रहवीं कांग्रेस के निश्चय के अनुसार प्रथम पंचवार्षिक योजना तैयार की गई। और, इसी कांग्रेस ने त्रॉत्स्की और उसके अनुयायियों को पार्टी से निकाल बाहर किया। त्रॉत्स्की के निकलने के बाद, अब वही हथियार इकोफ, बुखारिन, तोम्स्की आदि ने उठाया और अब वामपक्ष के स्थान पर दक्षिणपक्ष की ओर से प्रहार होने लगा। मई सन् 1928 में, इन अवसरवादियों की ओर ध्यान देना जरूरी हो गया। प्रथम पंचवार्षिक योजना का मुख्य उद्देश्य था—भारी उद्योग-धंधों को दृढ़ नींव पर स्थापित कर, देश को आर्थिक तौर से स्वावलम्बी और सामरिक तौर से मजबूत बनाना। लेकिन, दक्षिणपक्षी विरोधी यह कहकर उसका विरोध कर रहे थे कि इसके कारण जो भारी पूँजी की आवश्यकता होगी, उसे लगाने पर लोगों का जीवन-तल बहुत गिर जायेगा। इसमें शक नहीं कि अपने परिश्रम से ही बचाकर भारी परिमाण में पूँजी लगाने का प्रभाव लोगों के लिए कष्टदायक होता, लेकिन और क्या रास्ता था ? पूँजीवादी देश फिर सोवियत के विरुद्ध कड़ा रुख करने लगे थे और वह किसी वक्त भी आक्रमण कर सकते थे। इसीलिए, स्तालिन ने अपने भाषण में कहा कि "भारी उद्योगों के विकास को रोकने का मतलब हमारे देश के लिए आत्महत्या होगी"; और, "इसका मतलब होगा—देश के उद्योगीकरण के नारे को त्यागना तथा अपने देश को पूँजीवादी आर्थिक व्यवस्था की पूँछ बना देना।"

त्रॉत्स्की के निकाल बाहर किए जाने पर, वह दुनिया के पूँजीवादियों का एक बड़ा पैगम्बर बन गया। पूँजीवादी उसको क्रांति का अप्रतिम योद्धा और पारदर्शी राजनीतिक नेता कहकर, स्तालिन और सोवियत रूस के खिलाफ आग उगलने लगे। मालूम होता था कि यही थैलीशाह बोल्शेविक क्रांति के सबसे बड़े पक्षपाती हैं। त्रॉत्स्की के बारे में लेनिन पहले ही लिख चुके थे—"वह कभी अपनी महत्त्वाकांक्षा पर होने वाले किसी आक्रमण को क्षमा नहीं कर सकता।" और, वही महत्त्वाकांक्षा उसे डुबोने का कारण बनी। लेकिन, बोल्शेविकों को बदनाम करने के लिए उनके शत्रुओं को कोई बात तो मिलनी चाहिए थी। उन्होंने त्रॉत्स्की-कांड को खूब बढ़ा-चढ़ाकर फैलाया, और इसको लेकर तटस्थ लोगों में नवीन रूस के प्रति घृणा पैदा करने की पूरी कोशिश की। पूँजीवादियों ने वास्तविक स्थिति के साथ परिचय प्राप्त करने के सभी रास्ते भी बन्द कर दिये थे और सब जगह एकतरफा प्रचार हो रहा था। त्रॉत्स्की वर्षों से लेनिन का जबर्दस्त विरोधी रह चुका था; गृह-युद्ध में भी हम उसके रवैये को देख चुके हैं; सन् 1921 में लेनिन के समय भी उसने पार्टी का ज़बर्दस्त विरोध किया था; सन् 1922-23 में भी वह वैसी ही कोशिशें कर रहा था। लेनिन ने कहा था : "त्रॉत्स्की एक मानव गेंद है।" त्रॉत्स्की कभी किसी व्यावहारिक कार्य के लिए निर्णय करने की शक्ति नहीं रखता था; लेकिन शायद उसमें बातें बघारने का रोग भारत के हमारे महान् नेता जितना ही दिखाई देता था। अपनी आवाज को सुनकर, वह मस्त हो जाता था। उसके एक पुराने साथी ने लिखा है : "किसी अकेले आदमी से गुप्त रीति से बातें करते समय भी, वह वक्ता बन जाता था।"

फ्रेंच लेखक बारबूस के अनुसार : "त्रॉत्स्की के पास वकीलवादी कला—आलोचक और पत्रकार— के लिए आवश्यक बहुत ऊँचे दर्जे के गुण मौजूद थे, लेकिन उसमें नई भूमि तैयार करने के लिए एक राजनीतिज्ञ की योग्यता नहीं थी। उसमें वास्तविकता और जीवन के परखने-समझने की क्षमता बिलकुल नहीं थी। कर्मठ आदमी के लिए जो बड़ी लगन और निष्ठुरता की आवश्यकता होती है, उसमें उसका नितांत अभाव था। वस्तुतः, उसमें मार्क्सीय धारणाओं के प्रति दृढ़ विश्वास नहीं था। वह हमेशा से डरता आया था। वह इसी भय के कारण, मेन्शेविक रहा था और इस समय भय के कारण उसके भीतर संतुलन नहीं रह गया था। कोई भी आदमी तब तक त्रॉत्स्की को नहीं समझ सकता था, जब तक कि उसके क्रोध में पागल होते समय भीतर से उसकी कमजोरी को न पहचान ले। 'दूसरे देशों में क्रांति का विकास और समर्थन अपनी विजयी क्रांति के लिए अत्यन्त आवश्यक है !'—यह रटन लगाते हुए, वह चाहता था कि रूस की नवीन जनता को अनिश्चित काल तक अकर्मण्यता

की मरुभूमि में घुमाता रहे। यदि उसमें इतना धैर्य नहीं था, तो यह अच्छी ही बात थी।"

स्तालिन का जवाब बिल्कुल साफ था :

"क्रांति की विजय को सिर्फ एक देश में, एक शुद्ध राजनीतिक घटना नहीं समझना चाहिए। साथ ही, यह भी नहीं समझना चाहिए कि रूसी-क्रांति एक निष्क्रिय वस्तु है, जिसे बाहरी सहायता ही आगे बढ़ा सकती है।"

स्तालिन ने कहा था :

"साथी त्रॉत्स्की ने अपने व्याख्यान के दौरान में कहा था : 'हम वस्तुतः अपने को लगातार विश्व-अर्थनीति के नियंत्रण में पाते हैं।' लेकिन, क्या यह ठीक है ? नहीं। यह पूँजीवादी घड़ियालों का स्वप्न है, लेकिन सच नहीं है।"

बारबूस के अनुसार : "स्तालिन और त्रॉत्स्की एक-दूसरे के बिलकुल विपरीत हैं; मानवता के दो परस्पर विरोधी बिंदुओं पर विद्यमान, दो प्रकार के आदमी हैं। स्तालिन व्यावहारिक तर्क और व्यावहारिक बुद्धि पर विश्वास रखते हैं। पर निश्चल, अडिग और व्यवस्थित कार्य-प्रणाली को मानने वाले हैं। वह लेनिनवाद को अच्छी तरह समझते और जानते हैं और कमकर-वर्ग तथा पार्टी को सरकार में जो पार्ट अदा करना है, उसे भली भाँति जानते हैं। वह दिखावा पसन्द नहीं करते, न मौलिक होने की इच्छा उन्हें परेशान करती है। जो कुछ वह कर सकते हैं, उस सभी को करने की कोशिश करते हैं। वक्तृत्व कला पर, अथवा सनसनी पैदा करने पर उनका विश्वास नहीं है। जब वह बोलते हैं, तो उसमें सादगी के साथ स्पष्टता का समावेश करने की कोशिश करते हैं। लेनिन की तरह, सदा उन्हीं विषयों को हृदयंगत कराने की कोशिश करते हैं। वह बहुत प्रश्नों को उठाना चाहते हैं, क्योंकि उन प्रश्नों से सुननेवाली जनता के भावों का पता लगता है और पुराने युग के किसी बड़े उपदेशक की तरह, एक-से ही शब्दों में जवाब देते हैं। वह आपके सामने बिना भूल किए, सारे सबल और निर्बल पहलुओं को रखने का ढंग जानते हैं।"

पार्टी ने त्रॉत्स्की को बिना मौका दिए हुए ही निकाल बाहर नहीं किया था। दिसम्बर सन् 1927 में कांग्रेस के अधिवेशन से एक महीना पहले ही, केन्द्रीय कमिटी ने पोलित ब्यूरो से अपने पक्ष के कुछ समर्थन में वक्तव्य दिलवाया था। इस प्रकार विरोधियों को जवाब देने के लिए, एक महीने का समय दिया गया था। विरोधी पक्ष ने 3 सितम्बर, 1927 को ही 120 पृष्ठों का अपना वक्तव्य निकालकर जोर दिया था कि इसको तुरन्त छापा जाये और सभी स्थानीय कमिटियों और संगठनों के पास भेजा जाये। चार महीने पहले से दंगल खड़ा करने के लिए पार्टी तैयार नहीं थी, लेकिन एक महीने का समय उन्हें दिया गया था। पार्टी के लोगों ने बहुत कोशिश की कि त्रॉत्स्की और जिनोवियेफ अपने अड़ंगों को छोड़ दें और फिर साथ काम करने लगें। लेकिन, वह तो लड़ने के लिए तैयार थे। लेनिनग्राद में जिनोवियेफ का उस समय काफी प्रभाव था, वह वहाँ की सोवियतों की परिषद् का अध्यक्ष था। दोनों ने पार्टी के खिलाफ तरुण कम्युनिस्टों को भड़काने की कोशिश की; खूब उनकी गुप्त बैठकें होती रहीं; उन्होंने गुप्त छापखाना भी कायम कर लिया था। सभा-स्थानों पर भी जर्बदस्ती अधिकार किया था। उन्होंने 7 नवम्बर, 1927 को सड़कों पर प्रदर्शन कराया। केन्द्रीय कमिटी के मेम्बरों को मीटिंग में आने से जबर्दस्ती रोका। यारोस्लाव्स्की तथा दूसरों को मॉस्को की एक मीटिंग से जबर्दस्ती निकाल दिया। बोल्शेविकों के लिए, अब और बर्दाश्त करना असंभव था।

पन्द्रहवीं कांग्रेस ने कड़ा रुख अख्तियार किया और त्रॉत्स्की से कहा कि वह अपने संगठनों को बन्द करे, और मॉस्को में हुई हाल की हरकतों को छोड़े तथा पार्टी के बहुमत को स्वीकार करे। त्रॉत्स्की ने 121 आदमियों के हस्ताक्षरों से एक दूसरा प्रस्ताव रखा और किसी भी तरह अपने को समझौते के लिए तैयार नहीं किया। अब पंचवार्षिक योजनाओं का काल शुरू हो रहा था, इसलिए और अधिक सहन करने का मतलब था–लोगों में दुविधा पैदा करके, योजनाओं को कार्यरूप में परिणत करने में शिथिलता लाना। स्तालिन ने घोषित किया :

"यह विरोध हटाओ, क्रांतिकारी शब्दाडंबरों को दूर फेंकने पर देखोगे कि इन सबके नीचे आत्मसमर्पण की भावना काम कर रही है।..."

त्रॉत्स्कीवाद क्रांति की शक्तियों में अविश्वास पैदा करना चाहता था।

ओर्जोनिकिद्जे ने ठीक ही लिखा था :

"त्रात्स्कीवाद की विजय का अर्थ होता–सोवियत की सारी सृजनात्मक योजनाओं का विध्वंस। त्रॉत्स्की और दक्षिणपक्षियों पर स्तालिन की विजय, क्रांति की एक नई सफलता थी।"

3. कृषि की समस्या

कांग्रेस में स्तालिन ने औद्योगिक पुनर्निर्माण की सफलता का विवरण देते हुए, यह भी बतलाया कि खेती पिछड़ रही है; और :

"इससे निकलने का एक ही रास्ता है–छोटी-छोटी तथा बिखरी हुई किसान-खेतियों को विशाल संयुक्त फार्मों के रूप में साझे की खेती करते हुए, आधुनिक और उच्च टेक्नीक के अनुसार भूमि का सामूहीकरण। रास्ता यही है कि छोटे-छोटे बौने किसान-फार्मों को धीरे-धीरे किंतु दृढ़तापूर्वक, पर दबाव से नहीं, बल्कि उदाहरण देकर और समझा कर सम्मिलित, सहयोगी, सामूहिक खेती के आधार पर खेती की मशीनों, ट्रैक्टरों और वैज्ञानिक ढंग की खेती करने पर सहमत किया जाय। इसे छोड़कर और कोई रास्ता नहीं है।"

यद्यपि इस समय तक खेती की उपज महायुद्ध से पहले की स्थिति में पहुँच रही थी। लेकिन, जो अन्न बाजार के लिए प्राप्य था, वह युद्ध के पहले से एक तिहाई (37 फी सैकड़ा) ही था। देश में ढाई करोड़ के करीब छोटे-छोटे किसान थे। इन छोटे किसानों की स्थिति ऐसी नहीं थी, कि वह किसी भी आधुनिक खेती के तरीके का इस्तेमाल कर सकें। उनके छोटे-छोटे खेतों में ट्रैक्टर और खेती की दूसरी मशीनें नहीं चल सकती थीं। यह खेत और भी टुकड़ों में बँटते जा रहे थे। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अगर अनाज पैदा करने की यह अवस्था जारी रहती, तो सेना और नगर की जनता को बराबर अकाल का सामना करना पड़ता।

पूँजीवादी फार्मों के संगठित करने से भी उपज में वृद्धि की जा सकती थी, किन्तु उस समय भारी संख्या में बेकार हुए किसानों की क्या हालत होती ? पहले तो उनको समझा-बुझाकर नहीं, बल्कि उनसे जबर्दस्ती खेतों को छीनकर ऐसे फार्मों के रूप में परिणत करना पड़ता, फिर मशीनों के इस्तेमाल के कारण भारी संख्या में किसान बेकार हो जाते और कमकरों और किसानों की मैत्री, जो क्रांति की सफलता के लिए एक मात्र गारंटी थी, वह खतम हो जाती। कुलकों (धनी किसानों) को भी इससे सहायता मिलती। इन सबका नतीजा होता–देहात में समाजवाद की पूर्ण पराजय। यही योजना थी, जिसे दक्षिण-पंथी सामने रख रहे थे। स्तालिन के सुझाव पर, पार्टी ने दूसरे ही तरीके–समाजवादी खेती अर्थात् कोलखोजी (सामूहिक) खेती को अपनाया। इसमें बिखरे हुए खेतों को बड़े-बड़े फार्मों के रूप में परिणत करने की गुंजाइश थी और साथ ही हर एक गाँव के किसान अपनी खेती और उपज के मालिक तथा काम के साझीदार थे, इसलिए उनके बेकार होकर क्रांति-विरोधी बनने की सम्भावना नहीं थी। वैज्ञानिक ढंग की मशीनों से खेती करने के कारण उपज बढ़नी निश्चित थी, जिसका अर्थ था–किसानों के पास अधिक धन का आना और उसका मतलब समाजवाद और सर्वहारा के नेतृत्व में उनके विश्वास का अधिक बढ़ना था। लेनिन ने छोटे-छोटे किसानों की जगह, मशीनों द्वारा सामूहिक विशाल खेती का सुझाव रखते हुए कहा था : "छोटी-छोटी खेती करने पर, गरीबी से बचने का कोई उपाय नहीं है।"

पंद्रहवीं कांग्रेस ने सामूहिक (कोलखोजी) खेती के पूर्ण विकास के लिए प्रस्ताव पास किया था। इसी कांग्रेस ने प्रथम पंचवार्षिक योजना तैयार करने के लिए भी आदेश दिया था, यह हम बतला चुके हैं। इस प्रकार, हम यह भी देखते हैं कि स्तालिन अच्छी तरह समझते थे कि केवल उद्योग-धंधों के विकास पर जोर देना और खेती को छोड़ रखना ठीक नहीं है; भारतीय पंचवार्षिक योजना की तरह, केवल खेती की टुटपुँजिया योजना बनाना भी आगे बढ़ने का रास्ता नहीं है। योजना को कार्यरूप में परिणत करने के लिए जिन भौतिक और मानवी साधनों की आवश्यकता थी, उनके जुटाने की भी तैयारी की गई। पार्टी के सबसे योग्य सदस्यों और उत्साही कमकरों को सामूहिक खेती को बढ़ावा देने के लिए नियुक्त किया गया, जो कोलखोज पहले से

ही मौजूद थे, उन्हें मशीन, बीज और वैज्ञानिक परामर्शदाता जुटाकर मजबूत किया गया। मशीनों से सहायता देने के लिए मशीन-ट्रैक्टर-स्टेशन स्थापित किए गये। सारे देश में एक उत्साह आ गया, क्योंकि वहाँ जनता न चोर बाजारी पूँजीपति घड़ियालों को देखती थी, न घूस से नाक तक डूबे छोटे से बड़े तक सरकारी कर्मचारियों और उनके आकाओं को। वहाँ कामचोरी की कोई गुंजाइश नहीं थी। सभी कमकर कमर कसकर शारीरिक और बौद्धिक सभी तरह का श्रम करने को तैयार थे। अमरीकी संचालन में भारत की सामूहिक ग्राम-योजनाओं की तरह, बाबुओं की पलटन तैयार करके देश के रुपये को बरबाद करना और किसानों को भड़काना उनका ध्येय नहीं था और न कम्युनिस्ट वहाँ के गाँवों में कुर्सी पर बैठकर, कलम घिसाई करने गये थे। किसी हलवाहे को पीछे रहते देखकर, वह स्वयं हल की मुठिया अपने हाथ में पकड़ लेते; किसानों की तरह ही ऐड़ी से चोटी तक का पसीना एक करते। ऐसी अवस्था में, बोल्शेविकों की पंचवार्षिक योजना और उसके प्रणेता के प्रति लोगों की भारी आस्था क्यों न होती और वह सामने के प्रोग्राम को दिलोजान से पूरा करने के लिए तैयार क्यों न होते ?

सन् 1927 में, अमरीकी मजदूरों का एक प्रतिनिधि-मंडल रूस गया था। उन्होंने स्तालिन से मुलाकात की थी। पिछले दस वर्षों में अमरीकी पूँजीवादी पत्रों ने जिस झूठ का प्रचार किया था, यद्यपि उसका प्रभाव इन मजदूरों पर कम ही हो सकता था, तो भी उन्होंने स्तालिन से चार घंटे तक तरह-तरह के प्रश्न किये। स्तालिन ने सभी का जवाब मुँहजबानी दिया था, जो 11,800 शब्दों में समाप्त हुआ। सभी जवाब परस्पर संबद्ध थे। जब प्रतिनिधि-मंडल प्रश्न करते-करते थक गया, तो स्तालिन ने उनसे पूछा–"क्या मैं भी अमरीका के बारे में कुछ प्रश्न कर सकता हूँ ?" फिर, उन्होंने दो घंटे तक और वार्तालाप किया, जिससे पता लगा कि वह अमरीकी जीवन के हर एक पहलू का कितना ज्ञान रखते थे। स्तालिन ने अकेले ही जितनी खूबी के साथ चार घंटे तक जवाब दिए, प्रतिनिधि-मंडल वैसा करने में असमर्थ रहा। इस पूरे 6 घंटे की बातचीत में न कोई टेलीफोन की घंटी बजी और न बीच में कोई सेक्रेटरी आया। इससे मालूम होता है कि स्तालिन सामने आये काम पर कितनी एकाग्रता से जुट जाते थे।

8

पंचवार्षिक योजनाएँ (सन् 1927-41)

पंचवार्षिक योजनाओं के बारे में बारबूस ने लिखा है :

"योजनीकरण की प्रकांड प्रक्रिया, जिसका जाल सारे देश में एक लम्बे समय से बिछा हुआ है, सोवियत की बिलकुल अपनी कल्पना है। लेकिन, इसकी छाप सारी दुनिया पर भी पड़ी है। इसने सोवियत संघ में ठोस प्रगति की है। दूसरी जगहों में भी विचार और कल्पना के रूप में यह आगे बढ़ी है। सोवियत संघ बड़े राष्ट्रों से पैसा उधार लेने में कभी सफल नहीं हुआ, लेकिन बड़े राष्ट्रों ने सोवियत संघ से कुछ महत्त्वपूर्ण चीजें अवश्य उधार ली हैं। उन्होंने सोवियत से नियंत्रित आर्थिक व्यवस्था उधार ली है। 'नियंत्रित अर्थनीति' के रूप में, पूँजीवाद ने समाजवाद का झिझकते हुए अभिनंदन किया है।

" नियंत्रित अर्थनीति,–हाँ, कठिनाइयों से बाहर निकलने के लिए मानव जाति के सामने इसके अलावा दूसरा रास्ता नहीं है। सचमुच, हमारे सामने एक रामबाण औषधि मौजूद है। लेकिन, नियंत्रण का अर्थ है–एकीकरण; और पूँजीवाद का अर्थ है–अराजकता, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय दोनों ही दृष्टिकोणों से। अगर 'नियंत्रित' शब्द का अर्थ पूरा राष्ट्रीय नहीं है, और न वास्तविक अन्तर्राष्ट्रीय अर्थ ही है, तो देश में हो या बाहर, इसका कोई अर्थ नहीं, कोई भी मूल्य नहीं है।...

" आर्थिक योजना की कल्पना, यह केवल सोवियत-कल्पना इसलिए नहीं है कि इसमें किसी से बाजी

मारने का विचार नहीं था; सोवियत के लिए तो यह प्रकृत वस्तु थी। पूँजीवादी देशों में, जहाँ पर निजी व्यवसाय के कारण आर्थिक प्रश्नों में विशेष सुविधा, स्वार्थों की विभिन्नता और बहुतायत काम करती है, तत्परता के साथ कोई एक सामान्य आर्थिक योजना को कार्यरूप में परिणत करना असम्भव है··· । लेकिन, यह बात समाजवादी राज्य के लिए नहीं है, समाजवादी राज्य के लिए एक निश्चित, तर्कसम्मत, निर्माणात्मक योजना को जनता के हितों के लिए, गणित की तरह, बिलकुल नपे-तुले रूप में पूरा करना कठिन नहीं है; क्योंकि वहाँ संचालन-संस्था ही विधान-निर्मात्री, कार्यकारिणी, स्वामिनी और व्यय करने वाली संस्था भी है। "

पहिली पंचवार्षिक योजना (1928-32)

1. उद्योग-क्षेत्र : यह योजना 1 अक्तूबर, 1928 को शुरू हुई थी। 31 दिसम्बर, 1931 तक अर्थात् पाँच वर्षों का काम इसने चार वर्षों में पूरा कर लिया था। इसके कारण कितनी औद्योगिक उन्नति हुई, यह इसी से मालूम होगा कि जहाँ सन् 1928 में राष्ट्रीय आय 15.66 अरब रूबल थी, वहाँ सन् 1931 में 41.90 अरब हो गई। उससे पहले, रूस में न ट्रैक्टर बनते थे, न विमान। जारशाही रूस अपनी अधिकांश मशीनें यूरोप और अमरीका से मँगाता था, लेकिन प्रथम पंचवार्षिक योजना ने ही सोवियत को इन चीजों में स्वावलम्बी बना दिया। इसी समय, पेट्रोल और कोयले की उपज में सोवियत रूस दुनिया के दूसरे देशों को पीछे छोड़कर, प्रथम हो गया। मध्य एशिया और काकेशस में पहले कल-कारखाने नाम को थे, अब वहाँ उनकी दृढ़ नींव पड़ गई। कपास की उपज इन चार वर्षों में दूनी हो गई और कपड़े की बड़ी-बड़ी तेरह नई मीलें खुलीं। पहले, कारखानों में कुल मिलाकर 4.60 अरब रूबल पूँजी लगी हुई थी, किन्तु इन चार वर्षों के भीतर ही, अब 24 अरब रूबल की नई पूँजी लगाई गई। सन् 1928 में जहाँ 7.23 लाख आदमी कारखानों में काम करते थे, वहाँ सन् 1932 में उनकी संख्या सवा 31 लाख, अर्थात् चौगुने से भी अधिक हो गई। 1500 नये कल-कारखाने बने। इसी समय दो-तिहाई खेती पंचायती बन गई।

ये सफलताएँ वैसे ही आश्चर्यजनक थीं; तब भी पूँजीवादी दुनिया समाजवाद की किसी भी सफलता को स्वीकार करने के लिए तैयार ही नहीं थी। इसलिए, वह क्यों मानती ? जब सारे आँकड़ों और विवरणों के साथ प्रथम पंचवार्षिक योजना घोषित की गई, तो पश्चिमी साम्राज्यवादी देशों ने उसे देखकर मुसकरा दिया। वह तरह-तरह की भीषण भविष्यवाणियाँ करने लगे और योजना को बोल्शेविकों का स्वप्न या झूठा प्रोपेगेंडा कहने से भी बाज नहीं आये। किसी ने कहा—"इन आँकड़ों को मानने के लिए आदमी को अन्धविश्वासी होना चाहिए।"—दूसरे ने कहा : "पंचवार्षिक योजना के आँकड़े निश्चय ही गलत हैं, क्योंकि वह बहुत बड़े हैं। राष्ट्रीय सम्पत्ति-स्रोतों का इतने बड़े परिमाण में स्थानांतरित करना केवल युद्ध के समय, गोलों के डर के मारे ही सम्भव है।"

सन् 1928 में ही, बारबूस ने लिखा था :

"जो पंचवार्षिक योजना इस वक्त चल रही है, वह कोई नौकरशाहों और साहित्यिकों के आँकड़ों और शब्दों की कल्पनाओं का रूप नहीं है, बल्कि एक नपा-तुला कार्यक्रम है। राज्य-योजना के आँकड़ों को सूचनाओं के रूप में नहीं, बल्कि प्राप्त-विजयों के रूप में देखना चाहिए। हमसे जब बोल्शेविक कहते हैं कि सन् 1931 तक सोवियत-उद्योग में 8 फी सैकड़ा की वृद्धि होगी, आर्थिक पुनरुज्जीवन के काम में 7 अरब रुपया लगाया जायेगा और पन-बिजली स्टेशनों की शक्ति 35 लाख किलोवाट तक पहुँच जायेगी।··· तो हमें मानना चाहिए कि वस्तुतः वे चीजें अस्तित्व में भी आ चुकी हैं।"

"सोवियत योजना 109 फी सैकड़ा सफल हुई। पूँजीवादी दुनिया केवल पंचवार्षिक योजनाओं के आँकड़ों पर ही अविश्वास नहीं करती थी, बल्कि वह चाहती थी कि वह किसी भी तरह से सफल न हो। 'न्यूयार्क टाइम्स' (नवम्बर सन् 1932) ने लिखा था : "यह योजना नहीं है, मन के लड्डू हैं। घोर पराजय है !"—अंग्रेजी 'डेली टेलीग्राफ' ने घोषित किया था : "यह पूरा दिवालियापन है !"—पोलैण्ड का पूँजीवादी पत्र 'गजेता पोलस्का' कह रहा था : "गतिरोध, भारी गतिरोध !"—इटालियन 'पोलितिचा' का फतवा था : "सर्वनाश स्पष्ट है !"—लंदन

का बूढ़ा 'फाइनैन्शियल टाइम्स' गम्भीरतापूर्वक आगाही दे रहा था : "सारी व्यवस्था का विशृंखलन, खंड-खंड होना !"–अमरीकन 'करेंट हिस्ट्री' ने लिखा था : "अपने उद्देश्य में खंड-खंड अपने सिद्धांतों में खंड-खंड !"–पार्टी से निकाले गए एक रूसी ने लिखा था : "सोवियत समाजवादी गणसंघ में पंचवार्षिक योजना केवल कागज पर होती है, वह कभी सफल नहीं होती।" इसी लेखक ने सन् 1931 में अपनी पुस्तक में लिखा था : "सोवियत समाजवादी गणसंघ में जेल ही ऐसी जगह है, जहाँ पर आदमी भूख से नहीं मरता !··· हर एक सोवियत नागरिक के जूतों में छेद हैं और उसके चेहरे पर निराशा।"–एक ने तो यहाँ तक भी लिख दिया था : "मॉस्को के होटलों में वह बच्चों को पकाकर खाते हैं !"

लेकिन, प्रथम पंचवार्षिक योजना कितनी सफल रही, इसके आँकड़े हम बतला चुके हैं। न भीषण गतिरोध हुआ, न सर्वनाश; न दिवाला पिटा, न खंड-खंड हुआ। उपज और उद्योग-धंधों की वृद्धि के साथ-साथ, सोवियत में साक्षरों की संख्या जो सन् 1930 में 67 फी सैकड़ा थी, 1933 में 90 फी सैकड़ा हो गई। योजना की समाप्ति के समय, बारबूस ने रूस में जाकर देखा था : "एक विशाल हवाई-जहाज–जिसके भीतर जाने पर आदमी समझता था, मानो वह किसी कारखाने के मशीन-रूम में हो–जिसके निर्माण में कोई भी चीज बाहर से लाकर नहीं लगाई गई थी, सिवाय पहियों की रबर के टायरों के। द्रियेप्रोज, मग्नितोगोर्स्क, चेलियाबिन्स्क, बोगरिती, उरालूमाशस्त्रोय, क्रामाशस्त्रोय आदि नये औद्योगिक नगर पैदा हो गए। अंग्रेजी पत्र 'नेशन' ने लिखा था : "चार वर्षों में पृथ्वी पर पचास नये नगर उठ खड़े हुए, जिनमें से हर एक की जनसंख्या पचास हजार से ढाई लाख की है। कुजलनेत्स्क-उपत्यका में 6 नये शहर तैयार हुए, जिनकी जनसंख्या 6 लाख थी। ध्रुवकक्षीय प्रदेश में फासफेट निकल आने से, वहाँ 50 हजार की आबादी का एक नगर (किरोवग्राद) तैयार हो गया। स्तालिन ने जहाँ प्रथम पंचवार्षिक योजना में भारी उद्योगों की दृढ़ नींव रखकर, सोवियत भूमि को औद्योगिक तौर से स्वावलम्बी बनाने का निश्चय किया था, वहीं वह यह भी समझते थे कि पूँजीवादी शक्तियाँ एक अकेले समाजवादी राज्य के खिलाफ जिस महायुद्ध की साजिशें कर रही हैं, उसे छेड़कर ही रहेंगी और उसमें पड़ने के लिए सोवियत को मजबूर करेंगी ही। ऐसी अवस्था में, अपने बड़े-बड़े उद्योग-धंधों को मजबूत करना जरूरी है। इसीलिए, मग्नितोगोर्स्क, स्वेर्दलोव्स्क, चेलियाबिन्स्क, नवोसिबिर्स्क, कूजनेत्स्क, अंगरास्त्रोय आदि नये विशाल औद्योगिक-केन्द्र बनाये गए।

उद्योग-धंधों में जिस तरह काम हुआ, खेती में भी वही बात हुई। और इस प्रकार, स्तालिन की योजना ने सोवियत रूस को सर्वांगीण सफलता प्रदान की। साम्राज्यवादियों ने औद्योगिक योजनाओं का केवल उपहास करके ही संतोष नहीं किया, बल्कि उन्होंने तोड़-फोड़ के काम कराने की भी पूरी कोशिशें कीं–शाख्ती की खानों में ऐसा ही हुआ था। जहाँ भी अवसर मिला, पुराने मध्यवर्ग के प्रतिगामी विशेषज्ञ तोड़-फोड़ का काम किए बिना नहीं रहे। स्तालिन ने देखा कि देश जब तक विरोधी-वर्ग के विशेषज्ञों पर निर्भर रहेगा, तब तक इस तरह के खतरे बराबर बने ही रहेंगे। इसीलिए, योजना के दौरान में ही, उन्होंने मजदूरवर्गीय विशेषज्ञों, प्रबन्धकों, और बुद्धिजीवियों को भारी संख्या में शिक्षित करने की ओर ध्यान दिया। होनहार तरुणों को पाँच वर्ष की शिक्षा देने की जगह, उन्होंने डेढ़-डेढ़ वर्ष की फौरी तथा आंशिक शिक्षा देकर, काम पर लगाया और काम करते हुए उनकी शिक्षा और ज्ञान को बढ़ाने का भी प्रबन्ध किया। इसी वक्त, स्तालिन ने यह भी कहा था :

> "हमें अपने बारे में आत्म-आलोचना करते रहने की जरूरत है। इसके बिना, हम अपने व्यवसाय, मजूर-संघ और पार्टी संगठन को नहीं सुधार सकते। समाजवाद के निर्माण में बूर्ज्वा तोड़-फोड़ की कार्रवाई को तब तक कम नहीं कर सकते, जब तक कि हम आत्म-आलोचना को पूरी तौर से विकसित नहीं करते, जब तक कि हम अपने संगठनों के काम को जनता के नियंत्रण के अधीन नहीं रखते।"

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास के अनुसार : "नये विकास के लिए इतने विराट पैमाने पर, इतने उत्साह के साथ करोड़ों कमकरों द्वारा श्रम में वीरता दिखलाते हुए, यह विकास और औद्योगिक-निर्माण इतिहास में कभी नहीं देखा गया था।"–स्तालिन ने स्वयं निर्माण के स्थानों का दौरा किया था। वह सन् 1928 के जाड़ों में साइबेरिया के बरनोल आदि स्थानों तथा अलूताई के इलाके में गए थे। क्रांति के बारहवें वार्षिकोत्सव

के समय (सन् 1929), स्तालिन ने 'महान् परिवर्तन का एक वर्ष' के नाम से एक लेख में बतलाया था कि समाजवाद ने शहर और देहात में किस तरह पूँजीवादी तत्त्वों के खिलाफ जबर्दस्त आक्रमण किया था।

2. कोलखोज (सामूहिक खेती) : समाजवादी दृष्टि से सामूहिक खेती, कोलखोजी व्यवस्था पर पहुँचना बिलकुल स्वाभाविक है। सन् 1922-23 में, मुझे न मार्क्सवाद का उतना ज्ञान था और न सोवियत-भूमि में होने वाली बातों का परिचय ही था। जब मैंने हिन्दी में 'उटोपिया' (कल्पना) के रूप में अपनी 'बाईसवीं सदी' लिखनी शुरू की, तो सामुदायिक खेती के रूप में ही गाँव के जीवन को चित्रित करने का ख्याल आया था। इसलिए, यदि मार्क्स जैसे क्रांतिदर्शी ने इस तरह की खेती को पहले ही देख लिया, तो इसमें आश्चर्य की क्या बात थी ? मार्च सन् 1881 में, मार्क्स ने वेरा जासुलिच को एक चिट्ठी लिखते हुए कहा था कि रूस एक ऐसा देश है, जिसको प्रकृति ने वह सभी साधन प्रदान किए हैं, जो समाजवादी क्रांति हो जाने पर, समाजवादी यांत्रिक खेती के अनुकूल होंगे। उस वक्त, मार्क्स ने राय दी थी कि रूस सामूहिक-यांत्रिक खेती के लिए आवश्यक यंत्र-साधन पूँजीवादी देशों से प्राप्त कर सकता है। लेनिन भी लाखों ट्रैक्टर और ट्रैक्टर-ड्राइवरों वाली खेती का स्वप्न देख रहे थे। सामूहिक खेती के महत्त्व पर उनका बहुत जोर था। लेनिन का वह स्वप्न, उनके योग्य शिष्य ने सत्य करके दिखला दिया। स्तालिन ने ट्रैक्टरों और कृषि-मशीनों के लिए, बड़े-बड़े कारखाने बनाने की ओर पूरा ध्यान दिया। छोटी से छोटी बातों पर भी उन्होंने स्वयं विचार किया। नई मशीनों के परीक्षण में भाग लिया; कारखानों के मैनेजरों, आविष्कारकों और डिजाइनरों को स्वयं सलाह दी। इस प्रकार थोड़े ही दिनों में, यंत्र-निर्माण में बहुत पिछड़े हुए रूस ने ट्रैक्टरों, कटाई की कम्बाइनों, आलू बोनेवाले यंत्रों, मंगेला, चुकन्दर, कपास की फसलों के जमा करने की मशीनों को बड़े परिमाण में बनाना शुरू कर दिया।

कोलखोजीकरण का काम आसानी से आगे नहीं बढ़ा; क्योंकि जमींदारों के खतम हो जाने के बाद, कुलक (सूदखोर धनी किसान) कोलखोजों को बड़ी शनि-दृष्टि से देख रहे थे। जब तक किसान जनसाधारण भारी अभाव और गरीबी में रहें, तभी तक कुलकों की पाँचों घी में रहती हैं। सामूहिक खेती का मतलब था—किसानों का अभाव और गरीबी से मुक्त होकर, अपने पैरों पर खड़ा होना, जिसका अर्थ था—कुलकों के फलने-फूलने के रास्तों का रुक जाना। उन्होंने हर तरह से छोटे और मझोले किसानों को भड़काना शुरू किया। लेकिन, स्तालिन की आँखें सिर्फ कल-कारखानों को ही नहीं बल्कि रोटी के बारे में गाँवों में क्या हो रहा है, इसे भी देख रही थीं। एक साल के अन्दर, कोलखोजी आन्दोलन काफी आगे बढ़ा। स्तालिन ने लिखा था : "वर्तमान कोलखोजी आन्दोलन का नया और निर्णायक रूप यह है कि किसान कोलखोजों में अलग-अलग गुटों में आकर शामिल नहीं हो रहे हैं, जैसा कि उन्होंने पहले किया था, बल्कि अब गाँव के गाँव, तहसीलें की तहसीलें और जिले के जिले ही नहीं, सारे प्रदेश कोलखोज में शामिल हो रहे हैं। इसका क्या अर्थ है ? इसका अर्थ है—मझोले किसान कोलखोज-आन्दोलन में शामिल हो रहे हैं।"—लेकिन, जिस तरह कोलखोज में शामिल होने के लिए किसान जनसाधारण उत्साह दिखला रहा था, उसी तरह कुलक भी उसमें बाधा डालने के लिए तैयार थे। उन्होंने साधारण किसानों को भड़काया। कभी प्रलोभन देकर कोलखोज के जानवरों को मरवाया, कभी मशीनों को खराब किया और कभी मुल्लों और पादरियों से मिलकर धर्म के नाम पर सीधे-सादे किसानों को फुसलाया। यही समय था, जब बाहरी दुनिया में युद्ध का नया खतरा पैदा हो गया था। सन् 1921 में, जापान ने मंचूरिया पर अधिकार कर लिया और सामुराई पूर्वी साइबेरिया पर अपनी गृद्ध-दृष्टि डाल रहे थे। ऐसी व्यवस्था में, कुलकों के अस्तित्व को और बर्दाश्त करते रहना युक्तियुक्त न समझा गया। उन्हें गैरकानूनी बना दिया गया। 27 दिसम्बर, 1929 को कृषि के विद्यार्थियों की कान्फरेंस में भाषण देते हुए, स्तालिन ने बतलाया :

> "चाहे पूँजीवाद की ओर पीछे हटो, या आगे समाजवाद की ओर बढ़ो—दो ही रास्ते हैं। तीसरा रास्ता न है, न हो सकता है। जहाँ छोटे-छोटे किसानों की बहुतायत है, समाजवादी नगरों को देहातों का नेतृत्व करना होगा। देहाती इलाकों में कोलखोजी और सोविखोजी खेती कायम करो। देहाती इलाकों को एक नये समाजवादी आधार पर संगठित करना होगा।"

अभी तक, अधिक खेतों के मालिक और अधिक उपज हाथ में होने के कारण अनाज और पशुओं की

सम्पत्ति की कुंजी कुलकों के हाथ में ही थी, लेकिन अब पाँसा पलट गया। स्तालिन के कथनानुसार : "कुलकों के उत्पादन की जगह, कोलखोज और सोविखोज के उत्पादन के भौतिक आधार हमारे पास हैं। इसीलिए, हमने कुलकों के शोषण पर नियंत्रण करने की जगह, उन्हें एक वर्ग के तौर पर खतम कर देने की नीति अख्तियार की है।"

कोलखोज का प्रसार और भी जोरों से होने लगा। कितने ही अदूरदर्शी कार्यकर्ता उत्साह के मारे चरमपंथी बनकर, किसानों को भी कुलक बनाकर बाहर करने तथा दबाव डालकर सारे इलाके को कोलखोजों में परिवर्तित करने लगे, जिसके कारण देहातों में असंतोष बढ़ने लगा। समय रहते ही, स्तालिन की सावधान आँखों ने खतरे को देख लिया और उसी समय उन्होंने 'सफलता से चकाचौंध' के नाम से एक लेख लिखकर खूब फटकारते हुए, बतलाया कि कोलखोज (सामूहिक खेती) का निर्माण केवल किसानों की स्वेच्छा पर निर्भर होना चाहिए। और, यह भी कि सामूहिक खेती का रूप सहकारी (अर्तेल) होना चाहिए। स्तालिन ने इसी लेख में नेतृत्व के बारे में कहा था :

"नेतृत्व की कला एक गम्भीर विषय है। आदमी को आन्दोलन से पीछे नहीं रहना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने पर वह जनसाधारण से अलग हो जायेगा। लेकिन, साथ ही आदमी को आगे भी नहीं दौड़ जाना चाहिए, क्योंकि आगे दौड़ जाने का मतलब है–जनसाधारण के सम्पर्क से वंचित होना। जो भी आदमी किसी आन्दोलन का नेतृत्व करना चाहता है और साथ ही विशाल जनता के साथ सम्पर्क भी बनाये रखना चाहता है, उसे दो मोर्चों पर लड़ाई लड़नी होती है–उनके साथ भी, जो पीछे पड़ रहे हैं और उनके साथ भी जो आगे दौड़ जाना चाहते हैं। हमारी पार्टी इसीलिए मजबूत और अजेय है कि आन्दोलन का नेतृत्व करते समय, वह जानती है कि कैसे कमकरों और किसानों के विशाल समूह के साथ सम्पर्क स्थापित करके आगे बढ़ना चाहिए।"

15 मार्च, 1930 को स्तालिन के इसी लेख को केन्द्रीय कमिटी ने एक प्रस्ताव के रूप में स्वीकार किया। इसके बाद, किसानों ने स्तालिन को पत्र भेजने शुरू किए। इन प्रश्नों का उत्तर 'कोलखोजी साथियों को जवाब' 3 अप्रैल, 1930 को प्रकाशित हुआ, जिसमें स्तालिन ने बतलाया कि जो गलतियाँ कोलखोजों के बनाने में की गई थीं, उनका कारण था–मझोले किसानों के महत्त्व को न समझना और लेनिन के इस आदेश को भूल जाना था कि किसानों को कोलखोज में शामिल करने के लिए जबर्दस्ती नहीं करनी चाहिए, कोलखोजों का निर्माण स्वेच्छापूर्वक होना चाहिए। स्तालिन ने यह भी बतलाया था : "कोलखोजी खेत की अंतिम परिणति साम्यवादी खेती में होगी। किन्तु, ऐसा होना तभी सम्भव होगा, जब उपज इतनी अधिक हो कि कम्यून के सदस्यों की सभी आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। सहकारी (या अर्तेल) वह खेती है, जिसमें उत्पादन के मुख्य साधन समाजीकृत किए जाते हैं; लेकिन, घर, साग-सब्जी की क्यारियाँ, कुछ ढोर, भेड़-बकरियाँ, मुर्गियाँ आदि समाजीकृत नहीं होतीं। साम्यवादी (कम्यून) व्यवस्था में केवल उत्पादन ही नहीं, बल्कि वितरण भी समाजीकृत या सम्मिलित हो जाता है।"

कोलखोज-आंदोलन पूर्णतया सफल रहा। पार्टी इतिहास के शब्दों में :

"इस क्रांति की एक बड़ी विशेषता यह है कि यह ऊपर से, राज्य की प्रेरणा कैसे कार्य रूप में परिणत की गयी है, किंतु उसका समर्थन सीधे नीचे की ओर से उन करोड़ों किसानों द्वारा हुआ है, जो कुलकों की गुलामी को उखाड़ फेंकने के लिए लड़ते हुए कोलखोजों में स्वतंत्र जीवन बिताना चाहते थे।"

इस सफलता में जिस पुरुष का सबसे बड़ा हाथ था, उसे (स्तालिन को) फरवरी सन् 1930 में सोवियत संघ की केन्द्रीय कार्यकारिणी कमिटी ने 'लाल झंडे' का दूसरा तमगा प्रदान किया।

3. सोलहवीं कांग्रेस (सन् 1930) : 26 जून, 1930 को पार्टी की सोलहवीं कांग्रेस शुरू हुई। तब तक कृषि और उद्योग-धंधों–दोनों ही में भारी सफलता प्राप्त हो चुकी थी और समाजवाद चारों ओर विजयी हो रहा था। कुलक-वर्ग देहात से खतम कर दिया गया था और कोलखोजीकरण बड़े व्यापक और ठोस रूप से आगे बढ़ चुका था। इसी कांग्रेस में नारा बुलन्द किया गया–'पाँच वर्षों की योजना चार वर्षों में पूरी की जाये। उसके

बाद, द्वितीय पंचवार्षिक योजना की तैयारी हो।' उद्योग-धंधों और कोलखोजी खेती के इतने विशाल रूप में संगठित होने पर, उनके प्रबन्ध की ओर भी ध्यान जाना जरूरी था। इसके लिए, समाजवादी उद्योगों के प्रबंधकों की प्रथम कान्फरेंस हुई, जिसमें 4 फरवरी, 1931 को स्तालिन ने 'व्यवसाय-प्रबंधकों के कर्तव्य' के नाम से एक भाषण देते हुए कहा :

> "हम दुनिया के आगे बढ़े हुए देशों से पचास या सौ वर्ष पीछे हैं। हमें यह मंजिल दस वर्षों में पूरी करनी है। या तो हम इसे पूरा करें, या वह हमें पीस देंगे।"

इस प्रकार, स्तालिन ने व्यावसायिक प्रबन्ध की आवश्यकता को भी आँखों से ओझल नहीं होने दिया। उद्योग-धंधों की टेक्नीक पर तो उन्होंने और भी जोर दिया। साथ ही, सोवियत की नई जनता अन्तर्राष्ट्रीय कमकरों की मैत्री का मूल्य न भूल जाये, इसलिए उन्होंने कहा :

> "सोवियत समाजवादी गणसंघ दुनिया के मजूर-वर्ग का एक अंग है। हमें केवल सोवियत समाजवादी गणसंघ के मजूर-वर्ग के प्रयत्नों के कारण ही विजय नहीं मिली, बल्कि दुनिया के मजूर-वर्ग की सहायता भी उसमें सहायक हुई थी। बिना इस समर्थन के, बहुत पहले ही हमारे टुकड़े-टुकड़े कर दिए गए होते। कहा जाता है, हमारा देश सभी देशों के सर्वहारों का हरावल दस्ता है, जो ठीक ही कहा जाता है। लेकिन, इसमें हमारी जिम्मेवारियाँ बढ़ जाती हैं। अन्तर्राष्ट्रीय सर्वहारों ने क्यों हमारा समर्थन किया ? कैसे हम उस समर्थन के पात्र बने ? इसीलिए कि पूँजीवाद के खिलाफ लड़ी जानेवाली लड़ाई में हमने अपने आपको सबसे पहले झोंका; मजूर-वर्ग के राज्य की स्थापना करने में हम सबसे पहले आगे बढ़े और समाजवाद के प्रथम निर्माण के आरम्भ करने वाले भी हम ही हुए। इसी कारण, हम वह काम कर रहे हैं, जिसमें यदि सफलता मिली तो वह सारी दुनिया को बदल देगा और सम्पूर्ण मजूर-वर्ग को मुक्त करेगा। लेकिन, सफलता के लिए किस चीज की जरूरत है ? अपने पिछड़ेपन को हटाना और निर्माण के लिए बोल्शेविकों की जबर्दस्त कार्य-गति को विकसित करना। हमें इस तरह आगे बढ़ना चाहिए कि सारी दुनिया का मजूर-वर्ग हमारी ओर देखकर कहने लगे : 'यह हमारा हरावल है, यह हमारा तूफानी दस्ता है, यह हमारा मजूर-वर्ग का राज्य है, यह हमारी पितृभूमि है; यह जिस काम को आगे बढ़ा रहे हैं, वह हमारा काम है और यह उसे अच्छी तरह से कर रहे हैं। आओ, हम पूँजीपतियों के विरुद्ध उनका समर्थन करें और विश्व-क्रांति के काम को फैलाएँ।' "

इस भारी काम की जबर्दस्त कठिनाइयों की बात करनेवालों को स्तालिन का जवाब था :

> "दुनिया में कोई भी ऐसा किला नहीं है, जिस पर बोल्शेविक अधिकार नहीं कर सकते। हमने कितनी ही अत्यंत कठिन समस्याओं को हल किया है। हमने पूँजीवाद को उखाड़ फेंका है। हमने राज्य-शक्ति हाथ में ले ली है। हमने एक विशाल समाजवादी उद्योग का निर्माण किया है। हमने मझोले किसानों को समाजवाद के पथ पर चलाया है। निर्माण के दृष्टिकोण से बहुत ही महत्त्वपूर्ण कितने ही कामों को हम पूरा कर चुके हैं; अब जो करने को बाकी रह गया है, वह बहुत नहीं है। वह है—टेक्नीक का अध्ययन और विज्ञान पर अधिकार प्राप्त करना। जब हम इसको भी कर लेंगे, तो हमारे कार्य की गति इतनी विकसित हो जायेगी कि आज उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। और, हम यह कर सकते हैं, अगर वस्तुतः करना चाहें।"

जून सन् 1931 की व्यवसाय-प्रबन्धकों की सभा में 'नई स्थितियाँ, नये आर्थिक कर्तव्य' पर भाषण देते हुए, स्तालिन ने उद्योग के विकास के लिए आवश्यक 6 बातों पर जोर दिया था :

> (1) कोलखोजों के साथ संगठित ढंग से शर्तनामा करके, मजदूरों की भर्ती करना और नये कमकरों की मेहनत को यंत्रों द्वारा हल्का करना। (2) सब मजूरी को बराबर करने के खयाल को छोड़ना, ठीक तरह से मजूरी का नियमन करना और कमकरों की जीवन-स्थितियों को सुधारना। (3) वैयक्तिक जवाबदेही के अभाव को खतम करना, श्रम-संगठन को बेहतर बनाना और उद्योग-धंधों में श्रम की शक्तियों का ठीक तौर से वितरण करना। (4) ऐसा प्रबन्ध करना, जिसमें सोवियत समाजवादी गणसंघ के मजूर-वर्ग

के पास अपने निजी औद्योगिक और टेक्नीकल बुद्धिजीवी हों। (5) पुराने ढंग के इंजीनियरों और टेक्नीशियनों के प्रति अपने भाव को बदलना, उनकी ओर अधिक ध्यान और सहानुभूति रखना और उनका सहयोग प्राप्त करने के लिए अधिक निर्भीकता से काम लेना। (6) व्यवसाय के हिसाब-किताब को ठीक तरह से रखने का प्रबन्ध करना, प्रचार करना और उद्योग-धंधों में पूँजी जमा करने के काम को अधिक बढ़ाना।"

स्तालिन सन् 1929 में 50 वर्ष के हुए थे। उनकी महिमा सोवियत राष्ट्र के कोने-कोने में फैल चुकी थी। उसकी 50वीं वर्षगाँठ के दिन व्यक्तियों और संस्थाओं ने बहुत-से अभिनंदन भेजे थे, जिनका जवाब देते हुए स्तालिन ने कहा था : "मैं आपके अभिनंदनों और अभिवादनों को मजूर-वर्ग की महान् पार्टी के नाम पर मानता हूँ, जिसने मुझे पैदा किया और पाल-पोषकर इस रूप में बनाया है।"

स्तालिन यह भली प्रकार जानते थे कि उनकी सारी योजनाएँ केवल दिमागी कल्पना मात्र रह जातीं, यदि कमकर-वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी उन्हें कार्य-रूप में परिणत न करती।

4. स्त्रियाँ : समाजवादी उद्योग-धंधे और खेती ने स्त्रियों को आर्थिक स्वतंत्रता दी, जो सभी स्वतंत्रताओं की जननी है। वह आर्थिक तौर से अपने पैरों पर खड़ी हुईं। स्तालिन ने स्त्रियों की अतीत और वर्तमान की अवस्था के बारे में कहा था :

"इतिहास में उत्पीड़ितों का कोई भी ऐसा महान् आंदोलन नहीं है, जिसमें कमकर स्त्रियों ने भाग न लिया हो। कमकर स्त्रियाँ सभी उत्पीड़ितों में भी अत्यन्त उत्पीड़ित हैं, लेकिन तो भी वह कभी ऐसे समय में मुक्ति के महान् अभियान से अलग-थलग नहीं रहीं और न रह सकती थीं। हम जानते हैं, दास-मुक्ति-आन्दोलन में लाखों स्त्रियाँ शहीद हुई थीं, उन्होंने वीरतापूर्वक काम किया था। किसान अर्ध-दासों की मुक्ति के लिए जब लड़ाई हुई, तो हजारों की संख्या में स्त्रियों ने उसमें सीधे भाग लिया था। यह आश्चर्य की बात नहीं है कि मजूर-वर्ग के क्रांतिकारी-आंदोलन–पीड़ित जनता की मुक्ति के आंदोलनों में सबसे अधिक शक्तिशाली, मजूर-वर्ग के क्रांतिकारी आंदोलन में, उसके झंडे के नीचे करोड़ों कमकर स्त्रियाँ आकर खड़ी हुईं।··· कमकर स्त्रियाँ–औद्योगिक कमकर और किसान स्त्रियाँ–मजूर-वर्ग की सबसे बड़ी रिजर्व सेना है, ऐसी रिजर्व, जो कि संख्या में सारी जनता की आधी है। यह स्त्रियों की रिजर्व सेना मजूर-वर्ग के साथ होगी या उसके खिलाफ, इसी पर सर्वहारा आन्दोलन के भाग्य का सर्वहारा-क्रांति की विजय और पराजय, सर्वहारा सरकार की विजय या पराजय का निपटारा है। इसीलिए, सर्वहारा और उसकी हरावल कम्युनिस्ट पार्टी का यह प्रथम कर्तव्य है कि बूर्ज्वाओं के प्रभाव से कमकर और किसान स्त्रियों को निकालने के लिए, सर्वहारा के झंडे के नीचे कमकर-किसान स्त्रियों को राजनीतिक तौर से शिक्षित और संगठित करने के लिए जबर्दस्त संघर्ष करें।··· लेकिन, कमकर-स्त्रियाँ रिजर्व सेना ही नहीं, कुछ और अधिक भी हैं। यदि मजदूर वर्ग ठीक नीति अख्तियार करे, तो वह बूर्ज्वाओं के विरुद्ध लड़नेवाले मजदूर वर्ग की बाकायदा फौज बन सकती हैं। स्त्रियों की श्रम-सेना को सर्वहारा की महान सेना के साथ कंधे से कंधा मिलाकर, कमकर किसान स्त्री-सेना के रूप में ढालना मजूर-वर्ग का द्वितीय और निर्णायक कर्तव्य है।"

कोलखोजी-तूफानी-कमकरों की प्रथम कांग्रेस में, कोलखोजी औरतों के बारे में, स्तालिन ने कहा था :

" साथियो ! कोलखोजों में स्त्रियों का प्रश्न एक बड़ा प्रश्न है। मैं जानता हूँ, आपमें से बहुत-से लोग स्त्रियों के मूल्य को कम समझते या उनका उपहास भी करते हैं। यह गलत है। सवाल यही नहीं है कि स्त्रियाँ हमारी जनसंख्या की आधी हैं, बल्कि खास बात यह है कि कोलखोज-आंदोलन ने उल्लेखनीय तथा योग्य कितनी ही स्त्रियों को ऊँचे पदों पर पहुँचाया है। इसी कांग्रेस की प्रतिनिधियों की ओर देखो, तो तुम्हें मालूम होगा कि स्त्रियाँ पिछड़े हुओं की पंक्ति से आगे बढ़नेवालों की पंक्ति में काफी पहले पहुँच गई हैं। कोलखोजों में स्त्रियाँ एक भारी शक्ति हैं। इस शक्ति को दबा रखना भयंकर अपराध होगा। हमारा कर्तव्य है कि स्त्रियों को कोलखोज में लायें, आगे बढ़ायें और इस महान् शक्ति का उपयोग करें।

" और, जहाँ तक कोलखोजी स्त्रियों का अपना सम्बन्ध है, उन्हें कोलखोज के महत्त्व और शक्ति का ध्यान रखना चाहिए। उन्हें याद रखना चाहिए कि केवल कोलखोज में आकर ही उन्हें पुरुषों के बराबर होने का अवसर मिला है। बिना कोलखोज के असमानता है; और कोलखोज में समान अधिकार प्राप्त है। हमारी कोलखोजी स्त्री साथिनों को इसे याद रखना चाहिए और कोलखोजी व्यवस्था को अपनी आँखों की पुतली जैसा प्रिय मानना चाहिए। "

सोलहवीं कांग्रेस ने अपने एक प्रस्ताव में कहा : "जमींदारी जब्त करना देहात में अक्तूबर क्रांति का पहला कदम था, कोलखोजी खेती का स्वीकार करना दूसरा और अत्यंत निर्णायक कदम है, जिसका कि सोवियत समाजवादी गणसंघ में समाजवादी समाज की नींव रखने में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है।"

5. विज्ञान : स्तालिनग्राद (पुराने जारीत्सीन) में सोवियत का सबसे बड़ा ट्रैक्टर का कारखाना बना। उसके उद्घाटन के दिन (17 जून, 1930) स्तालिन ने कहा था :

"सोवियत समाजवादी गणसंघ के प्रथम विशाल 'लालध्वज ट्रैक्टर कारखाने' के कमकरों और प्रबन्धकों का, उनकी विजय के उपलक्ष्य में अभिवादन और अभिनंदन ! पचास हजार ट्रैक्टर, जो तुम हर साल हमारे देश के लिए पैदा करने वाले हो, वह पचास हजार भीषण गोले होकर पुराने व बूर्ज्वा जगत को चूर-चूर कर देंगे और देहात में नवीन समाजवादी व्यवस्था का रास्ता साफ करेंगे।"

स्तालिन वैयक्तिक तौर से, हर एक नये आविष्कर्ता को प्रोत्साहन और सम्मान प्रदान करते थे। वह विज्ञान और वैज्ञानिकों के हमेशा पृष्ठ-पोषक रहे और लेनिन की तरह ही, उनके सात खून माफ करने के लिए तैयार रहते थे। सोवियत-नेताओं और उनके कामों को गाली देते रहने पर भी, लेनिन और स्तालिन ने पावलोफ को अपनी खोजों में इतनी सहायता दी, जो जारशाही क्या किसी पूँजीवादी देश में भी सम्भव नहीं हो सकती। स्तालिन ने च्योल्कोव्स्की, पावलोफ, चीचिन, लीस्सेंको जैसे महान् वैज्ञानिकों का भारी सम्मान और समर्थन किया। कम्युनिस्ट एकेडमी का अलग रखना बेकार समझकर, उनकी सलाह से ही उसे विज्ञान एकेडमी में मिला दिया गया था।

द्वितीय पंचवार्षिक योजना (1933-37)

प्रथम पंचवार्षिक योजना की सफलताओं को देखते हुए, द्वितीय पंचवार्षिक योजना की तैयारी शुरू की गई—"सोवियत संघ छोटे-छोटे किसानों की खेती के देश से कोलखोज, सोविखोज के विकास और यंत्रों के अधिकाधिक उपयोग के आधार पर दुनिया के एक बड़े पैमाने के कृषि वाले देश के रूप में परिणत हो गया है।··· देश ने राष्ट्रीय आर्थिक जीवन के पुनर्निर्माण के काम को पूरा करने के लिए अपने सारे आधार तैयार कर लिये हैं।" ऐसी अवस्था में द्वितीय पंचवार्षिक योजना तैयार की गई।

इसी साल (सन् 1932 में), स्तालिन की पत्नी—नादेज्दा का देहान्त हुआ। उसकी अर्थी की यात्रा में स्तालिन उसके साथ-साथ रहे। उसे बड़े सम्मानपूर्वक दफनाया गया। वह अपने एक पुत्र वासिली और पुत्री स्वेतलाना को छोड़कर मरी थी, जिन्हें स्तालिन बहुत प्रेम करते थे।

प्रथम पंचवार्षिक योजना कितनी सफल हुई, इसके बारे में हम कह चुके हैं। सोवियत के साम्राज्यवादी शत्रुओं और उनके पत्रों को भारी सिर-दर्द पैदा हो गया, जब उन्होंने देखा कि समाजवाद की सार्वत्रिक और सार्वजनीन मुक्ति के वातावरण में कोई चीज असम्भव नहीं है। फ्रांस के साम्राज्यवादी पत्र 'लताँ" (27 जनवरी, 1932) ने स्वीकार किया : "सोवियत संघ ने बिना विदेशी पूँजी की सहायता के, अपने को उद्योग-प्रधान बनाकर पहली बाजी जीत ली।" कुछ ही महीनों बाद अप्रैल में, फिर उसी पत्र ने लिखा : "जान पड़ता है, साम्यवाद एक साँस में निर्माण की उन सारी अवस्थाओं को लाँघ गया है, जिनसे पूँजीवादी शासन को अत्यन्त धीरे-धीरे पार होना पड़ा था। सभी बात देखने पर यह साफ है कि बोल्शेविकों ने हमें इस सम्बन्ध में हरा दिया है।"—अंग्रेजी साम्राज्यवादी पत्रिका 'राउंड टेबिल' ने लिखा : "पंचवर्षीय योजना की सफलता एक आश्चर्यजनक घटना है।"—'फाइनैन्शियल टाइम्स' ने लिखा : "उनकी सफलता के बारे में कोई सन्देह नहीं किया जा सकता। अपने

पत्रों और व्याख्यानों में कम्युनिस्ट जो फूले नहीं समाते देखे जाते हैं, वह बेबुनियाद ही नहीं है।" —आस्ट्रियन पत्र 'नोये फ्राई प्रेस' ने लिखा था : "आधुनिक पंचवार्षिक योजना विराट है।" —यूनाइटेड डोमिनियन ट्रस्ट के प्रेसीडेंट गिब्सन जार्वी का विचार था : "रूस आगे बढ़ता जा रहा है, जबकि हम पीछे हट रहे हैं। पंचवार्षिक योजना ने हमें पीछे छोड़ दिया है !··· रूस के तरुणों और कमकरों के पास एक चीज है, जिसका हमारे पास अभाव है, वह है—आशा।" —संयुक्त राष्ट्र अमरीका के पत्र 'नेशन' ने लिखा था : "पंचवार्षिक योजना के पाँच वर्ष वस्तुतः उल्लेखनीय सफलताओं को दिखलाने में सफल हुए हैं। सोवियत संघ ने एक नवीन जीवन की नींव निर्माण करने में जिस त~ अपने को लगाया, वह युद्ध-काल के ज्यादा अनुरूप है।" स्काटलैण्ड के पत्र 'फार्वर्ड' का कहना था : "युद्ध के दर्मियान इंग्लैंड ने जो कुछ किया, वह इस पंचवार्षिक योजना के सामने नगण्य है। अमरीकन स्वीकार करते हैं कि पश्चिमी राज्यों में अत्यंत जोर के निर्माण का भूत सिर पर चढ़े होने के समय की भी, इससे कोई तुलना नहीं है।··· इतनी मात्रा में शक्ति लगाई गई है, जिसका दुनिया के इतिहास में उदाहरण नहीं मिलता। प्रतिद्वंद्वी पूँजीवादी जगत के लिए यह चमत्कारपूर्ण ललकार है।"

इन उदाहरणों से, इसका अंदाजा लगाया जा सकता है कि सोवियत संघ ने क्या किया था। प्रथम पंचवार्षिक योजना के द्वारा स्तालिन के नेतृत्व में सोवियत के लोग सर्वस्व की बाजी भी लगा सकते थे, क्योंकि उनके यहाँ न चोरबाजारी नफाखोर सेठों के हित का ख्याल करना था, न मुट्ठी-भर सामन्ती जमींदारों का; और न भाई-भतीजे-भांजों को नौकरियाँ बाँट-बाँटकर शासन के व्यय-भार को पाँच-छै गुना बढ़ाने और ऊपर से नीचे तक घूस-रिश्वत के बाजार को गरम करने की गुंजाइश थी। महीने में तीन-चौथाई दिनों में बेकार रहनेवाले करोड़ों नर-नारियों का श्रम निर्माण के काम में लगा दिया गया, प्रतिभाओं को ढूँढ़-ढूँढ़कर आगे बढ़ाया गया। वहाँ राष्ट्रीय धन की एक-एक कौड़ी को विदेशी दूतावासों, कमीशनों, मंत्रियों तथा उनके कृपापात्रों के सैर-सपाटे तथा ऐश में खर्च नहीं किया जा रहा था। उनको अपनी गरीब जनता के पसीने की कमाई की एक-एक कौड़ी के लिए दर्द था; स्तालिन से लेकर गाँव की साधारण किसान औरत तक ने दृढ़ संकल्प कर लिया था कि चाहे जो भी हो, अपनी योजना पूरी करनी है और इसमें कुलक, पुराने बूर्ज्वा वर्ग या किसी दूसरे की बाधा को सहन नहीं करना है। जहाँ इस तरह का दृढ़ संकल्प काम कर रहा हो, वहाँ क्यों न 'श्रीर्विजयो मूर्ति':' पैर तोड़कर बैठी रहे ?

जनवरी सन् 1933 में केन्द्रीय कमिटी और केन्द्रीय नियंत्रण-कमीशन का संयुक्त विशेष अधिवेशन (प्लेनम) हुआ, जिसमें प्रथम पंचवार्षिक योजना के परिणाम के बारे में स्तालिन ने रिपोर्ट दी और घोषित किया :

"प्रथम पंचवार्षिक योजना के तजर्बे से, हम इस निर्णय पर पहुँचे हैं कि एक देश के भीतर समाजवादी समाज का निर्माण करना बिलकुल सम्भव है और सोवियत संघ में ऐसे समाज की आर्थिक नींव डाली जा चुकी है। अब हमारे यहाँ राष्ट्रीय अर्थनीति का 70 फी सैकड़ा समाजवादी उद्योग पर निर्भर करता है। समाजवादी आर्थिक ढाँचा ही हमारे उद्योग का एक मात्र ढाँचा है। कृषि-क्षेत्र में कोलखोजी खेती ने अपना पक्का स्थान कायम कर लिया है। राष्ट्रीय अर्थनीति की सभी शाखाओं में समाजवादी विजय ने मनुष्य द्वारा मनुष्य के शोषण को समाप्त कर दिया है। पंचवार्षिक योजना की सफलताओं ने सभी देशों में मजदूर वर्ग की क्रांतिकारी शक्तियों को पूँजीवाद के खिलाफ सक्रिय कर दिया है।··· कोलखोजी खेती आर्थिक संगठन का एक समाजवादी रूप है; ठीक वैसे ही जैसे सोवियतें (पंचायतें) राजनीतिक संगठन के समाजवादी रूप हैं।"

6. कोलखोजी कांग्रेस (सन् 1933) : स्तालिन की प्रेरणा से फरवरी 1933 में कोलखोजी तूफानी दस्तों की प्रथम कांग्रेस हुई, जिसमें कोलखोज-आंदोलन के प्रथम परिणामों पर प्रकाश डालते हुए स्तालिन ने कहा :

"यह हमारी ऐसी सफलता है, जिसके द्वारा हमने करोड़ों गरीब किसानों को कोलखोजों में सम्मिलित होने में सहायता की है। यह हमारी ऐसी सफलता है कि कोलखोजी खेती में सम्मिलित होकर उनके पास सबसे अच्छी भूमि है, उत्पादन के सबसे अच्छे हथियार हैं, और जिसके द्वारा करोड़ों गरीब किसान उठकर मझोले दर्जे के किसानों के तल तक पहुँचे हैं। यह हमारी ऐसी सफलता है, जिससे कि पहले

के कौड़ी-कौड़ी के लिए मुहताज करोड़ों किसान अब कोलखोजी खेती से मध्यवित्त किसान बन गए हैं और उनके लिए आर्थिक सुरक्षा निश्चित हो गई है।··· अब हमें अगला दूसरा कदम उठाना है और सभी कोलखोजी किसानों–पुराने समय के गरीब और मध्यवित्त, दोनों ही प्रकार के किसानों–को समृद्ध किसानों के तल पर पहुँचाने में सहायता करनी है।"

प्रथम पंचवार्षिक योजना में देश की 70 फी सैकड़ा खेती कोलखोजी हो गई थी। कोलखोज और सोविखोज (सोवियत खेती) दोनों मिलकर देश के लिए 85 फी सैकड़ा अन्न पैदा करने लगे थे। कोलखोज का औसत आकार-प्रकार 1,070 एकड़ था और सोविखोज का 5,000 एकड़। कोलखोजी किसानों की मदद सरकार ने निम्न प्रकार से की थी :

(1) दो अरब रूबल खर्च करके 2.860 मशीन-ट्रैक्टर-स्टेशन कायम किए, जहाँ से कोलखोजों को ट्रैक्टर और दूसरी मशीनें सस्ते भाड़े पर मिलने लगीं।

(2) कोलखोजों को 1.60 अरब रूबल उधार दिया गया।

(3) 40 लाख टन बीज उधार दिया गया।

(4) करों की कमी और फसलों के बीमों के द्वारा 37 करोड़ रूबल की सहायता पहुँचाई गई।

और, इसके बदले में किसानों ने क्या किया ? राज्य को वैयक्तिक किसानों ने 78 करोड़ पूद (1 पूद=प्रायः आधा मन) और कोलखोजी किसानों ने 12 करोड़ पूद अनाज सन् 1929-30 में दिया था, जबकि सन् 1933 में कोलखोजों ने 1 अरब पूद और वैयक्तिक किसानों ने 13 करोड़ पूद अनाज प्रदान किया। यह देखने से स्पष्ट हो जाता है कि अब सोवियत संघ अन्न के बारे में उसी तरह निश्चिंत था, जिस तरह कि औद्योगिक उपजों में। सन् 1934 में मौसम अच्छा नहीं रहा, तब भी उपज सन् 1933 की अपेक्षा अच्छी हुई थी। बात यह थी कि भारत से सात गुने बड़े देश सोवियत रूस में सभी जगह तो एक साथ मौसम खराब नहीं होता। इसलिए, यदि आधुनिक ढंग से तत्परता के साथ खेती की जाये, तो जहाँ तक सारे देश का सम्बन्ध है, उपज की कमी नहीं हो सकती। यदि ऐसी निश्चिंतता न होती, तो दिसम्बर सन् 1934 में सोवियत सरकार अपने यहाँ राशन की व्यवस्था खतम करने की हिम्मत न करती। इसी सफलता को देखकर, मोलोतोफ ने अपने एक भाषण में कहा था : "तैयार माल और रोटी के सम्बन्ध में राज्य के प्रांत इतने बढ़ गए हैं, जितना कभी सुना नहीं गया था, जबकि सोवियत नीति की नयी महान् विजय के परिणामस्वरूप अब वह समय आ गया है कि रोटी और आटे को आम तौर से बिना दाम के बेचने के बारे में सोचा जा सकता है।"

हाँ, द्वितीय युद्ध के पहले अन्न की इतनी बहुतायत हो गई थी कि सोवियत नेता बड़ी गम्भीरतापूर्वक विचार करने लगे थे कि रोटी और अन्न की बिक्री तथा उसका हिसाब-किताब रखने में हजारों आदमियों और हजारों टन लिखने-पढ़ने के लिए कागज तथा दूसरे सामान के व्यय और परेशानी को हटाकर, हवा-पानी की तरह, रोटी और अनाज का वितरण भी बिना कीमत हो। आज भी सोवियत रूस इस स्थिति में है, लेकिन जब दुनिया के और देशों में अन्न का इतना अभाव है और अमरीकन साम्राज्यवादियों द्वारा अन्न जबर्दस्त राजनीतिक हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया जा रहा है, ऐसी अवस्था में वह इस शौकीनी को पूरा करने के लिए तैयार नहीं हैं और वह अपने साथी देशों और दुनिया के दूसरे लोगों को भी अनाज से मदद पहुँचाना चाहते हैं। प्रथम पंचवार्षिक योजना के समाप्त होने के साथ-साथ, उसी पहले की जारशाही की खेती की भूमि में 25 हजार कोलखोज और 5,000 सोविखोज तैयार हो गए थे, जिन्होंने पहले की जोती हुई जमीन में 80 हजार वर्ग मील खेतों की और वृद्धि की। जिस तरह कारखाने की मशीनें अपने वेग के कारण मजदूरों को शिथिल नहीं रहने देतीं, वही बात अब देहात में कोलखोजों और सोविखोजों ने किसानों के साथ कर दी थी, इसलिए वहाँ किसान सुस्त नहीं रह सकते थे। काम के अनुसार, ऊपर से उपज का हिस्सा तय होने का नियम होने के कारण शिथिल काम करनेवाला किसान फसल की बँटाई के समय अपने पैसों और अनाज की कमी को देखकर झींखने के लिए मजबूर था।

स्तालिन को हरएक काम सुव्यवस्थित रूप से करने की आदत है। यह हो ही नहीं सकता था कि वह

कोलखोजों की सुव्यवस्था के लिए स्पष्ट मार्ग-निर्देशन न करते। इसके लिए उन्होंने कृषि के 'कोलखोजीकरण का सिद्धांत' लिखा, जिसमें निम्न बातें बतलायीं :

(1) कोलखोजी खेती समाजवादी देहाती अर्थनीति का एक रूप है।

(2) उन्होंने बतलाया कि वर्तमान अवस्था में जिस कोलखोजी खेती का विकास करना है, उसका रूप खेती का अर्तेल (सहकारिता) है, क्योंकि यह किसानों के लिए समझने में बहुत आसान है, तथा कोलखोजी किसानों के वैयक्तिक और सामूहिक–दोनों प्रकार के स्वार्थ इससे पूरे होते हैं, जिसके कारण वह अपने वैयक्तिक स्वार्थों द्वारा सार्वजनिक स्वार्थों के लिए भी काम करने को तैयार होते हैं।

(3) उन्होंने अपनी इस कृति में यह भी बतलाया कि कुलकों के ऊपर नियंत्रण या उनके 'निचोड़ने की नीति' को छोड़कर ठोस कोलखोजीकरण के आधार पर, उन्हें एक वर्ग के तौर पर उखाड़ फेंकना ही अच्छा है।

(4) उन्होंने मशीन-ट्रैक्टर-स्टेशनों के महत्त्व को दिखलाते हुए कहा कि यह कृषि के समाजवादी पुनर्संगठन के सहायक तथा ऐसे साधन हैं, जिनके द्वारा समाजवादी राज्य कृषि और किसानों–दोनों को उचित सहायता दे सकता है।

स्तालिन ने पंचवार्षिक योजना की सफलता द्वारा अपने जिस विराट रूप को दिखलाया, उस पर गद्गद हो उनके शिष्य और सहकारी सेर्गेई किरोफ ने सत्रहवीं कांग्रेस से कुछ पहले, लेनिनग्राद में कहा था :

> " साथियो, जिस समय हम अपनी पार्टी की सेवाओं और उसकी सफलताओं के बारे में कहते हैं, उस समय जिस विराट विजय को हमने प्राप्त किया है, हम उसके महान् संगठक को नहीं भूल सकते–मेरा मतलब साथी स्तालिन से है। मुझे कहना होगा कि सचमुच ही वह हमारी पार्टी के महान् संस्थापक के–जिनसे कि हम दस वर्ष पहले वंचित हो गए–सच्चे तौर से योग्य और पूर्ण उत्तराधिकारी हैं।
>
> " स्तालिन को उनके विशाल रूप में हृदयंगत करना आसान नहीं है। इन पिछले वर्षों में, जबकि हमें लेनिन के बिना ही अपने काम को करना पड़ा, हमारे श्रम-मोर्चे पर, या नये कामों के सम्बन्ध में, किसी भी महत्त्वपूर्ण नीति का कोई भी नारा या झुकाव ऐसा नहीं आया, जिसके रचयिता साथी स्तालिन न रहे हों। पार्टी को यह जानना चाहिए कि सभी महत्त्वपूर्ण काम साथी स्तालिन की सम्मति, उनकी हिदायतों, उनकी प्रेरणा और उनके पथ-प्रदर्शन में होता है। उनकी सिफारिशों के अनुसार ही अन्तर्राष्ट्रीय नीति के महत्त्वपूर्ण प्रश्नों पर निर्णय किया जाता है। केवल महत्त्वपूर्ण ही नहीं, बल्कि तृतीय क्या दशम श्रेणी के भी जो प्रश्न हैं, यदि वह कमकरों, किसानों, हमारे देश की आम मेहनतकश जनता से सम्बन्ध रखते हैं, तो उनमें भी स्तालिन की दिलचस्पी रहती है।
>
> " मुझे यह भी कहना पड़ेगा कि यह बात समाजवाद के पूरी तौर से निर्माण के बारे में ही नहीं है, बल्कि हमारे काम के भिन्न-भिन्न पहलुओं के सम्बन्ध में भी है। उदाहरणार्थ, हमारे देश की प्रतिरक्षा को ले लीजिये। इसे स्पष्टता और जोर के साथ कहना पड़ेगा कि इस क्षेत्र की सभी सफलताएँ, जो हमें मिली हैं, उनका श्रेय स्तालिन को ही है; और इसके लिए हम स्तालिन के ऋणी हैं। "

7. स्तालिन का स्वभाव : जर्मन लेखक एमिल लुडविग ने सन् 1933 में स्तालिन से मुलाकात की थी। इस महान् लेखक द्वारा लिखे हुए, मुलाकात के वर्णन से स्तालिन व्यक्तित्व पर काफी प्रकाश पड़ता है। वह लिखता है :

" जैसी उनकी तसवीर मैंने कल्पित की थी, जो कहानियाँ मैंने सुनी और पढ़ी थीं और जैसा फौलादी उनका स्तालिन नाम है, वह सब उनके लिए उपयुक्त नहीं है। मैंने खयाल किया था कि मुझे पुरानी जारशाही का कोई रोबीला, गम्भीर, कठोर ग्रांड-ड्यूक मिलेगा, लेकिन उसकी जगह, मुझे एक ऐसा अधिनायक देखने को मिला, जिसके हाथ में मैं अपने बच्चों को खुशी से छोड़ सकता हूँ। मैंने पढ़ा था, वह जनता में नहीं आते, क्योंकि चेचक ने उनके चेहरे को बड़ा कुरूप बना दिया है। लेकिन, यहाँ उसका कोई चिह्न या दाग दिखना मुश्किल था। मैंने यह भी पढ़ा था कि जब वह शहर से अपने प्रासाद जैसे देहात के निवास-स्थान गोर्की–जिसमें

बीमारी के समय लेनिन रहे और मरे थे–को प्रतिदिन जाते हैं, तो उनके आसपास 5 मोटर कारें रहती हैं। गोर्की के बारे में कहा जाता था कि वहाँ रात-दिन हथियारबन्द कसाक पहरा देते हैं। यह भी कहा गया था कि स्तालिन प्रतिदिन कैमलिन के एक दरवाजे से भीतर जाते और दूसरे से बाहर आते हैं। खाने के वक्त जार के खाने के सोने के बर्तनों में भोजन परोसा जाता है। यहाँ तक कहा गया है कि वह अपनी तरुण स्त्री को तुर्की के सुलतान की तरह घर में ताला बन्द करके रखते हैं।

" लेकिन, सच्चाई इससे बिलकुल उल्टी है। लेनिन की मृत्यु के बाद, वह कभी गोर्की के प्रासाद में नहीं गए। जब मैं मॉस्को में उनसे मिला, उस वक्त वह अपनी स्त्री और बच्चों के साथ शहर के बाहर एक सीधे-सादे घर में रहते थे। वह अपने आफिस में अपनी अकेली कार में जाते हैं और प्रतिदिन उसी द्वार से जाते हैं। दरवाजे पर संतरी कोई विशेष सलाम नहीं देता। उनका खाना, रहन-सहन साधारण आदमी-सा है। वह सुव्यवस्था को बहुत पसन्द करते हैं और अपने काम के समय को ठीक से बाँटने में बड़ा ध्यान रखते हैं। उनकी रुचि बहुत सीधी-सादी है।···

" जब मैं स्तालिन से मिला, मैंने उन्हें एकान्तप्रिय आदमी पाया। धन, सुख और महत्त्वाकांक्षा का उन पर कोई प्रभाव नहीं है। यद्यपि उनके हाथों में अपार शक्ति है, लेकिन उन्हें उसके लिए अभिमान नहीं··मैं कहूँगा कि स्तालिन के स्वभाव में दो बातें अधिकता से पाई जाती हैं। पहली बात है–धैर्य, और इसको उन्होंने चरम सीमा तक पहुँचा दिया है, और दूसरी बात है–दूसरों पर बिना अवलम्ब किए, पूर्णतया आत्मावलंबी होना।···

" वह अब (सन् 1933 में) 50 के करीब पहुँच रहे हैं। एक वर्ष में यह 3-4 से अधिक यूरोपियनों से भेंट नहीं करते, इसलिए जब कोई पाश्चात्य आदमी पहले उनसे मिलने आता है, तो उन्हें 'अनूकुस'-सा मालूम होता है। मुझे इससे आश्चर्य हो रहा था, क्योंकि मैं अच्छी तरह जानता था कि मैं संसार के छठे हिस्से के वास्तविक शासक के सामने हूँ। अगर मेरा दिल ठीक कहता है, तो मैं कहूँगा कि स्तालिन स्वभाव से ही अच्छे दिल के आदमी हैं। उनमें कल्पना का अभाव नहीं है, लेकिन उसकी उड़ान की शौकीनी से वह इन्कार करते हैं। वह महत्त्वाकांक्षी नहीं हैं, लेकिन अपने प्रतिद्वंद्वियों से नर्मी नहीं बरतना चाहते हैं। पिछले 35 वर्षों से उनके दिमाग में सिर्फ एक ही बात है, जिसके लिए उन्होंने अपना यौवन, अपना स्वास्थ्य, अपनी सुरक्षा और जीवन के सभी दूसरे आनंद कुर्बान कर दिए हैं। इसलिए नहीं कि वह खुद शासन करें, बल्कि इसलिए कि शासन उन सिद्धान्तों के अनुसार हो, जिनके लिए उन्होंने शपथ ली थी। उन्होंने मुझसे कहा : 'मेरे जीवन का यही उद्देश्य है कि जांगर, चलानेवाली श्रेणी को और ऊपर उठाया जाय। मुझे जातीय राज्य बनाने का खयाल नहीं है, बल्कि मैं एक समाजवादी राज्य चाहता हूँ, जो संसार के सभी कमकरों के स्वार्थों की रक्षा करे। अगर मेरे जीवन का हरएक कदम उसी राज्य की स्थापना की ओर नहीं बढ़ा, तब मैं समझूँगा कि व्यर्थ ही किया।'–वह बड़ी नर्मी से बोल रहे थे। और, धीमी आवाज ऐसे निकल रही थी, मानो वह अपने आप से बात कर रहे हों।···

" मेरे एक प्रश्न के उत्तर में उन्होंने कहा–'मेरे माता-पिता अशिक्षित थे। लेकिन, उन्होंने मेरे लिए बहुत किया। मसारिक (चैकोस्लाविया के राष्ट्र-निर्माता) को जैसे धुन हुई थी, वैसे ही मैं 10 या 12 वर्ष में समाजवादी नहीं हो गया था। जब तक मैं पादरियों की पाठशाला में रहा, मैं समाजवादी नहीं बना था। फिर, प्रचलित शासन-प्रथा का विरोधी हुआ। शासन-प्रथा क्या थी ? खुफियों का पीछे पड़े रहना और धोखा देना। मैं 6 बजे सवेरे चाय के लिए बुलाया गया। जब कोठरी में लौटा, तो देखा कि सभी दराजों की एक-एक करके छान-बीन हुई है। वह हमारे कागजों की छान-बीन नहीं कर रहे थे, बल्कि हमारे दिलों के एक-एक कोने की छान-बीन कर रहे थे। यह असह्य था। मैं किसी भी हद तक और किसी भी प्रथा के पक्ष में जाने के लिए तैयार हो जाता, यदि समझता कि मैं उसके द्वारा उस शासन-व्यवस्था का विरोध कर सकता हूँ। उसी समय, रूसी समाजवादियों की एक कानून-विरोधी टोली काकेशस की पहाड़ी में आयी। उन्होंने मुझ पर बहुत प्रभाव डाला और उसी समय से मुझे निषिद्ध साहित्य का चस्का लगा।'

" स्तालिन और मुस्तफा कमाल–दो ही ऐसे आदमी हैं, जिनसे बातें करते समय मुझे दुभाषिया की जरूरत पड़ी। जिस कमरे में हम प्रविष्ट हुए, वह लम्बा था। उसके एक छोर पर, एक मझोले कद का आदमी भूरे रंग का बन्द गले का कोट पहिने कुर्सी के पास खड़ा था। उसकी पोशाक उतनी ही साफ थी, जैसा कि वह कमरा।···बीच में एक लम्बी मेज रखी थी, जिस पर पानी की झारी, गिलास और राखदानी पड़ी थी। हरएक चीज से सुव्यवस्था टपक रही थी। दीवारें गहरे हरे रंग से रँगी थीं; उन पर लेनिन, मार्क्स तथा कुछ मेरे अपरिचित व्यक्तियों के फोटो टँगे हुए थे। स्तालिन की लिखने की मेज भी सुव्यवस्थित तौर से रखी थी। उस पर लेनिन का एक फोटो था। बगल में 4-5 टेलीफोन के यंत्र वैसे ही रखे थे, जैसे कि सरकारी आफिसों में होते हैं। लड़खड़ाती रूसी में, मैंने कहा–'दोब्रे उत्रा' (सुप्रभातम्)। उन्होंने कुछ संकोच से मुसकरा दिया, लेकिन वह बड़े ही विनम्र थे। उन्होंने मुझे देने के लिए एक सिगरेट उठायी। उन्होंने विश्वास दिलाया कि मैं जो भी प्रश्न पूछना चाहूँ, पूछ सकता हूँ और मेरे पास डेढ़ घंटा समय है। जब समय खतम होते वक्त मैंने अपनी घड़ी निकाली, तो उन्होंने मना करने का संकेत किया और मुझे आधा घंटा और पास रखा। एक शक्तिशाली पुरुष के लिए कुछ मात्रा तक संकोच उतनी ही अच्छी बात है, जितनी कि एक सुन्दर स्त्री में।

" चूँकि वह दुभाषिया के सहारे मुझसे बातें कर रहे थे, इसलिए प्रायः बराबर उनका मुँह दूसरी ओर रहता था। वह दोनों घंटे कागज के टुकड़ों पर लकीरें खींचते रहे। एक लाल पेंसिल से वृत्त और दूसरी शकलें खींचते तथा अंक लिखते जाते थे। हमारे बात करने के समय, उन्होंने कागज के कई टुकड़े लाल रेखाओं से भरे और समय-समय पर उनको मोड़ कर फाड़ दिया।··· स्तालिन का स्वभाव है, बिना हिले-डुले बैठने का। वह बोलते वक्त किसी शब्द पर जोर देना या हाथ-मुँह हिलाना नहीं जानते।··· उनके बारे में यह मुख्य बात मेरे दिल में धँसी कि वह संयत हैं। स्तालिन वह आदमी हैं, जिनके नाम से कितने नर-नारी रोब में पड़ जाते हैं। लेकिन, एक बच्चा या पशु वैसा नहीं कर सकता। पुराने युग में ऐसे पुरुष को लोग देश का पिता कहते थे।···

" यद्यपि मेरे सभी प्रश्नों के लिए उन्होंने तैयारी नहीं की थी और उन्हें हमारी यूरोपीय सरकारों के मंत्रियों–जिनसे कि वही प्रश्न हफ्ता-दर-हफ्ता पूछे जाते हैं–जैसा अनुभव भी नहीं था। वह यह भी जानते थे कि यह उत्तर को सारे संसार के लिए प्रकाशित करेगा। सभी ऐतिहासिक घटनाएँ और नाम उनको कंठाग्र थे। मेरे दुभाषिया ने सारे वार्तालाप को लिखा था, लेकिन उन्होंने उसकी कापी नहीं माँगी और न किसी संशोधन की इच्छा प्रकट की। इस प्रकार का आत्मविश्वास मैंने कहीं नहीं देखा। दुनिया के और जितने नेताओं से मैंने वार्तालाप किया है, उनके कहने को मैंने उसी वक्त कागज पर नहीं उतारा, बल्कि पीछे उतार कर उनकी स्वीकृति के लिए भेजा है। लेकिन यहाँ मैंने दूसरे आदमी द्वारा त्वरित लिपि में लिखे हुए लेख को लिया और जब मैंने उसे गौर से मिलाया, तो उसमें जरा भी कोई बात छूटी नहीं देखी, तो भी वाक्यावलि बिलकुल दुरुस्त थी। जब मैं मन में अपने बेचारे मंत्रियों की आदत को खयाल में लाता हूँ, जो कि अपने पार्लियामेंट में देने वाले व्याख्यान या संवाद को देते वक्त अपने प्रेस-विभाग के अध्यक्ष द्वारा उसका संशोधन करा लेते हैं, तो इस काकेशस के चर्मकार के लड़के के लिए मेरा दिल सम्मान से भर जाता है।··· स्तालिन नियमपूर्वक 4 बजे भिनसारे चारपाई पर सोने जाते हैं। लायड जार्ज की तरह, उनके पास 32 सेक्रेटरी नहीं हैं; बल्कि सिर्फ एक साथी प्रोस्कोविचेफ हैं। दूसरों के लिखे हुए कागजों पर वह दस्तखत नहीं करते। उनके पास लेखन-सामग्री भेज दी जाती है और वह सब काम अपने-आप करते हैं। हर-एक चीज उनके हाथ से गुजरती है; लेकिन इससे क्या ? वह प्रत्येक पत्र का जवाब दिए या भेजे बिना नहीं रहते। मुलाकात के समय वह बड़े दिल खोलकर, बिना किसी नियंत्रण के मिलते हैं।···वह बच्चों की तरह ठठाकर हँसते हैं।

" मॉस्को के महान् ओपेरा भवन में गोर्की की जुबली हो रही थी। बीच के अवकाश में, पुराने सम्राट या सम्राटकुमारों के बैठने के स्थान के पीछे के कमरों में कुछ सरकारी अधिकारी जमा थे। आवाज कान के पर्दे फ़ाड़ रही थी और हरएक आदमी कहकहा लगाकर हँस रहा था। इनमें स्तालिन, ओर्योनीकिद्जे, रुइकोफ, बुगनोफ, मोलोतोफ, वोरोशिलोफ, कगानोविच और प्यातिन्स्की भी थे। गृह-युद्ध की घटनाओं की बातें बड़े मनोरंजक ढंग से कर रहे थे : 'तुम्हें याद है, जब तुम अपने घोड़े से लुढ़क पड़े थे ?'–'हाँ, गंदा पशु ! मुझे

नहीं मालूम हुआ, क्या बात थी···।' –लेनिन में भी जोर से ठठाकर हँसने की आदत थी। गोर्की ने कहा था : 'मैं ऐसे किसी भी आदमी से नहीं मिला, जिसकी हँसी ब्लादिमिर इलिच जैसी, छूत की बीमारी की तरह, लगती हो। गोर्की ने निष्कर्ष निकाला था : 'इस तरह की हँसी वाले आदमी के पास बड़ा ठोस मानसिक स्वास्थ्य होना आवश्यक है।' जो लोग इस तरह की हँसी हँसते हैं, वह बच्चों से बड़ा प्रेम करते हैं। स्तालिन के पास तीन बच्चे हैं–सबसे बड़ा यश्चेका और दो छोटे-छोटे–चौदह वर्ष का वासिली और आठ वर्ष की स्वेतलाना। उनकी बीवी नादेज्दा अलीलुइयेवा पिछले ही साल मरी है। उसका भौतिक शरीर अब नहीं है, लेकिन उसका एक सुन्दर सम्भ्रांत साधारण जन जैसा चेहरा और बड़ी कब्र के भीतर से निकलती सुन्दर संगमरमर की बाँह नवोदेवीची के कब्रिस्तान में देखी जा सकती है। स्तालिन ने अर्तियोम सेर्गियेफ को करीब-करीब अपना बेटा बना लिया है, जिसका बाप सन् 1921 की एक दुर्घटना में मारा गया था। बाकू में अंग्रेजों द्वारा गोली मारे गए–जापरित्जे की दो लड़कियों और कितनों ही दूसरों से भी स्तालिन का व्यवहार अपने बच्चों जैसा ही है। अर्नालूद कपलान और बोरिस गोलूदस्ताइन–पियानो और वाइलिन के अद्भुत प्रतिभाशाली बालकों का संगीत–समाज में उनकी विजय के बाद स्तालिन ने जिस तरह स्वागत किया, उसका वर्णन करते समय उनके चेहरे पर जो प्रसन्नता दीख पड़ती थी, वह मुझे अब भी याद है। स्तालिन ने उन्हें तीन हजार रूबल देते हुए, यह भी कहा था : 'अब तुम पूँजीपति हो गए, क्या सड़क में देखकर मुझे पहचानोगे ?' "

स्तालिन की मुक्त हँसी और उनके खुले दिल का परिचय बहुत कम लोगों को है। इसका एक कारण यह भी था कि उस पुरुष के कंधे पर जितनी अधिक जिम्मेवारी और काम थे, उतने शायद ही इतिहास में किसी पुरुष पर रहे होंगे। उन्होंने अपने 73 वर्ष के जीवन को, बचपन के थोड़े-से वर्षों को छोड़कर बाकी सारे समय के एक-एक क्षण को, किस तरह इस्तेमाल किया है, इसकी बानगी हमें मिल चुकी है। व्यंग्य और जिंदादिली में स्तालिन अद्वितीय थे। उनके पुराने सहकारी दामियन बेद्नी ने स्तालिन के जीवन की एक मनोरंजक कहानी बतलाई थी :

> "सन् 1927 की जुलाई के आरंभिक दिनों में, एक शाम को मैं और स्तालिन 'प्राव्दा' के सम्पादन के काम में लगे हुए थे। इसी समय टेलीफ़ोन की घंटी बजी। क्रौन्सतात के नौसैनिकों ने स्तालिन से पूछा–'प्रदर्शन में हमें अपनी राइफिलों के साथ आना चाहिए, या उनके बिना ही ?'–मैं सोच रहा था, देखूँ तो वह टेलीफोन पर क्या जवाब देते हैं ? और, जवाब सुनकर मुझे आश्चर्य हुआ–'राइफिलें ? साथियो, यह निश्चय करना तुम्हारा अपना काम है। साथियो ! हम लेखक तो अपनी पेंसिलें बराबर अपने साथ रखते हैं।' और, सचमुच ही, सभी नौसैनिक अपनी-अपनी पेंसिलें लिये हुए ही प्रदर्शन में आये थे।"

इतने महान् होने पर भी, स्तालिन कितने विनम्र थे ! लुडविग से बातें करते समय, उन्होंने अपने अन्तस्तल से कहा था : "मैं केवल लेनिन का एक शिष्य हूँ।"

8. सत्रहवीं कांग्रेस (सन् 1934) : यह कांग्रेस 'विजेताओं की कांग्रेस' के नाम से प्रसिद्ध है। पाँच वर्षों की योजनाओं को सन् 1934 तक, चार वर्षों के भीतर पूरा करके यदि सोवियत के नर-नारियों ने विजेता की उपाधि प्राप्त की, तो इसमें आश्चर्य ही क्या है ? इस कांग्रेस में भी उन्होंने, अपने जीवन के अंतिम वर्षों की तरह, सोवियत की वैदेशिक नीति के बारे में कहा था :

> "हमारी वैदेशिक नीति स्पष्ट है, वह है–शांति की रक्षा और सभी देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्धों को मजबूत करना। सोवियत समाजवादी गणसंघ आक्रमण करने की बात तो अलग,किसी को धमकाने की भी बात नहीं सोचता। हम शांति चाहते हैं और शांति के कामों के समर्थक हैं। लेकिन, हम धमकी से नहीं डरते और लड़ाई भड़काने वालों को मुक्के का जवाब मुक्के से देने के लिए तैयार हैं।···जो हमारे देश पर आक्रमण करने की कोशिश करेंगे, उन्हें हमारी ओर से चूर-चूर कर देने वाला जबर्दस्त प्रहार मिलेगा, जिससे वह सीख जायेंगे कि हमारे सोवियत के बगीचे में अपना थूथुन डालना ठीक नहीं है।"

इसी समय सन् 1934 में, स्तालिन ने अमरीकी संवाददाता वॉल्टर डुरेंटी से 4 जनवरी को मुलाकात की और 23 जुलाई को अंग्रेज ग्रंथकार एच. जी. वैल्स से भेंट की। एच. जी. वैल्स के साथ स्तालिन की मुलाकात

बड़ी मनोरंजक और ज्ञानवर्द्धक थी। इस वार्तालाप के बारे में टिप्पणी करते हुए, बर्नार्ड शा ने लिखा था :

> "इसे दो असाधारण पुरुषों के बीच वार्तालाप या भिड़न्त कह लीजिये, यद्यपि इसमें ऐसी कोई भी बात नहीं हुई, जिससे दोनों के विचारों के बारे में हम कोई नई जानकारी पायें।··· स्तालिन बड़े ही मजाकपसन्द आदमी हैं। हर वक्त कोमल हँसी उनके पास मौजूद रहती हैं··· वैल्स ने जो कुछ कहा, स्तालिन ने बड़े ध्यान से और गम्भीरतापूर्वक सुना और अपनी बारी में, उन्होंने जवाब के रूप में कांटी के बिलकुल सिर पर प्रहार किया। वैल्स स्तालिन की बातें नहीं सुनते थे, वह बड़ी अधीरतापूर्वक फिर से बात आरम्भ करने के लिए, स्तालिन के चुप होने की प्रतीक्षा करते रहते थे। वह समझते थे कि वह उससे कहीं ज्यादा जानते हैं, जितना कि स्तालिन जानते हैं। वह स्तालिन से शिक्षा लेने नहीं गए थे, बल्कि उन्हें शिक्षा देने गए थे।"

वैल्स और स्तालिन के वार्तालाप के मनोरंजक पहलुओं को देने के लिए यहाँ स्थान नहीं है, लेकिन इस वार्तालाप में स्तालिन ने कितने ही गम्भीर तत्त्वों का प्रकाशन और स्पष्टीकरण किया था।

9. किरोफ की हत्या (सन् 1934) : दिसम्बर सन् 1934 में लेनिनग्राद में त्रॉत्स्कीवादियों का मनोरथ सफल हुआ, जबकि लेनिनग्राद में उनके एक आदमी ने सेर्गेई किरोफ को गोली मार दी। किरोफ स्तालिन का बहुत ही योग्य शिष्य और सहायक था। राजधानी के मॉस्को में पहुँच जाने पर, स्तालिन-विरोधियों ने लेनिनग्राद में अपना मजबूत अड्डा जमा लिया था। वहाँ जिनोवियेफ और कामनेफ की बहुत चलती थी। ऐसे समय, किरोफ ने लेनिनग्राद को ठीक करने का बीड़ा उठाया था और उसने अपने काम को बड़ी सफलता के साथ पूरा किया था। वह स्तालिन का दाहिना हाथ था और आम तौर से आशा की जाती थी कि वही स्तालिन का उत्तराधिकारी होगा। लेकिन, देश के भाग्य का संचालन अभी स्तालिन को ही करना था। किरोफ की हत्या के बाद भी वह उन्नीस वर्षों तक काम करके, द्वितीय महायुद्ध और उसके बाद के जबर्दस्त पुनर्निर्माण के काम को समाप्त करके ही, दुनिया से विदा हुए हैं। सोवियत के लोगों के दिलों में इतनी अधिक शंका क्यों रहती है, इसका एक जबर्दस्त कारण किरोफ की हत्या भी है। लेकिन किरोफ पर गोली मारकर, क्रांति-विरोधियों ने अपनी अंतिम गोली खतम कर दी; उनके साथ ही उंनका भी खात्मा हो गया। अब त्रॉत्स्कीवादी और दूसरे क्रांति-विरोधियों का नाम अपार घृणा के साथ लेने के लिए ही सोवियत-भूमि में शेष रह गया है। किरोफ की हत्या लेनिनग्राद के स्मोल्नी प्रतिष्ठान में हुई थी, जहाँ रहकर लेनिन ने अक्तूबर-क्रांति का सफलतापूर्वक संचालन किया था।

सत्रहवीं पार्टी कांग्रेस की रिपोर्ट से पता लगा कि द्वितीय पंचवार्षिक योजना में भी उसी तरह की सफलता मिल रही थी, जिस तरह कि प्रथम पंचवार्षिक योजना में मिली थी। और, आशा बँधने लगी कि इसको भी समय से पहले पूरा कर लिया जायगा। स्तालिन ने इसी समय कहा था :

> "हम विघ्न-बाधाओं को हटाकर, लेनिनवादी मार्ग पर आगे बढ़ रहे हैं।··· पार्टी के भीतर केन्द्रीय कमिटी के विरुद्ध, विरोधी विद्रोह खड़ा करना चाहते हैं। इतना ही नहीं, वह हम में से कुछ को गोलियों की धमकी भी दे रहे हैं। शायद वह इस तरह हमें डराकर, लेनिनवादी पथ से विमुख करना चाहते हैं। इन लोगों को पता नहीं, यह लोग भूल जाते हैं कि हम बोल्शेविक एक खास धातु के आदमी हैं। वह भूल जांते हैं कि न कठिनाइयाँ और न धमकियाँ ही, बोल्शेविकों को भयभीत कर सकती हैं। वह भूल जाते हैं कि हम उस महान् लेनिन–हमारे नेता, हमारे गुरु, हमारे पिता–द्वारा शिक्षित और फौलादी बनाये गए हैं, जो लड़ाई में न भय को जानता, न उसे मानता था।"

इसी भाषण में स्तालिन ने जोर देकर कहा था : "टेक्नीक (तैयार यंत्र तथा वैज्ञानिक कौशल) सब चीजों का फैसला करती है। जब टेक्नीक तैयार कर ली गई, तो हमें ऐसे आदमियों की आवश्यकता पड़ती है, जो उस टेक्नीक पर पूरा अधिकार रखते हैं, हमें ऐसे 'कादर' (कर्मियों) की आवश्यकता होती है, जो कला के सभी नियमों के अनुसार टेक्नीक में दक्ष हों और उसको काम में लायें। ऐसे अधिकार-प्राप्त आदमियों के बिना, टेक्नीक मरी हुई है। अधिकार-प्राप्त आदमियों के हाथ में पड़कर टेक्नीक जादू-सा काम कर सकती हैं··· इसीलिए, अब हमें उन आदमियों, कर्मियों, कमकरों पर जोर देना है, जो टेक्नीक के आचार्य हैं। इसीलिए, पुराने नारे 'टेक्नीक

हर बात का फैसला करती है'–की जगह, हमें नारा देना चाहिए–'कर्मी सब चीजों का फैसला करते हैं।' "–स्तालिन ने यह भाषण मई सन् 1935 में लाल सैनिक एकेडमी के ग्रेज्युएटों के सामने दिया था।

और सचमुच ही, उस समय टेक्नीक के आचार्य आश्चर्यजनक गति से पैदा हुए। जब माध्यमिक शिक्षा अनिवार्य हो, और शिक्षा भी जीवन के हर पहलू के उपयोग की दृष्टि से दी जाती हो; जब सरकार कमकरों की हर तरह से सहायता करने तथा प्रोत्साहन देने के लिए तैयार हो और शोषण तथा भ्रष्टाचार रहित देश दिलोजान से नव-निर्माण में लगा हो; तो फिर क्यों न अपना चमत्कार दिखलाने के लिए नई-नई प्रतिभाएँ कार्य-क्षेत्र में उतरें। ऐसी ही बात हुई, जब कोयले की खान के एक साधारण कमकर–स्ताखानोफ ने अपनी पारी में तीन गुने से अधिक कोयला निकाल दिया। उसने यह काम काम के बँटवारे तथा खनन-यंत्र के अच्छे उपयोग की क्रिया के द्वारा किया था। स्तालिन को इस तरह की असाधारण घटना का पता लगने में देर नहीं लगी। यह खबर जैसे ही दोनबास से मॉस्को पहुँची, स्तालिन ने उसका अभिनंदन किया। स्ताखानोफ का सम्मान बढ़ाया गया। उसे खान-इंजीनियर बनकर और बड़ा काम करने, तथा महासोवियत के सदस्य बनने का सौभाग्य प्राप्त हुआ; साथ ही, स्ताखानोफ के नाम से एक विशाल आन्दोलन चल पड़ा। नवम्बर सन् 1935 में प्रथम स्ताखानोफी कान्फरेंस हुई, जिसमें स्तालिन ने कहा था : "यह आन्दोलन समाजवादी प्रेरणा की एक नई लहर तथा समाजवादी विकास की एक नई और ऊँची सीढ़ी है।··· स्ताखानोफ-आंदोलन की विशेषता इस बात में है कि यह टेक्नीक के पुराने मान को अपर्याप्त समझकर, उसे तोड़ रहा है।"

स्तालिन का ध्यान टेक्नीक के विकास के साथ, सांस्कृतिक विकास की ओर भी बराबर था। शिक्षा, कला, साहित्य सभी क्षेत्रों में वह प्रोत्साहन देते थे। स्तालिन जिनसे बड़े-बड़े विदेशी राजदूत भी वर्षों तक मिलने में सफल नहीं होते थे, वह इन अद्‌भुत कर्मियों, कमकरों और किसानों के लिए बिलकुल सुलभ थे। उनसे मिलने तथा उनकी बातें समझने और पथ-प्रदर्शन करने के लिए बराबर उनकी कान्फरेंसें कराते रहते थे। क्रैमलिन में स्ताखानोफी कान्फरेंस हुई। उसी साल, 4 दिसम्बर को ताजिकिस्तान और तुर्कमानिस्तान के प्रमुख कोलखोजी किसानों की कान्फरेंस हुई। इसी समय के आसपास, उज्बेकिस्तान, कजाकस्तान और कराकल्पक के कोलखोजी किसानों ने भी क्रैमलिन में अपनी कान्फरेंस करके, स्तालिन के दर्शन और प्रेरणादायक सीखों से लाभ उठाया। केवल दर्शन के लिए एक-एक आदमी को समय देना, स्तालिन जैसे सदा व्यस्त रहनेवाले पुरुष के लिए मुश्किल था; लेकिन जनता के नवीन नायकों के घनिष्ठ सम्पर्क में आने की आवश्यकता वह अच्छी तरह महसूस करते थे, इसलिए ऐसी कान्फरेंसों में वह बराबर हिस्सा लेते थे और उनके सुभीते का ख्याल करके यह कान्फरेंसें क्रैमलिन में ही हुआ करती थीं। स्तालिन ने सन् 1935 के नवम्बर में, चुकन्दर की खेती वाले कोलखाजों की अग्रणी स्त्रियों का स्वागत किया और उन्हें बतलाया कि स्ताखानोफी आन्दोलन मानवता के सबसे पिछड़े हुए अंग–स्त्रियों को आगे बढ़ाने में कितना सहायक हो सकता है।

जिस तरह उद्योग-धंधों और खेती में सोवियत रूस बहुत तेजी से आगे बढ़ रहा था, उसी तरह यातायात और संचार के नये-नये साधन भी विशाल रूप में प्रस्तुत किए जा रहे थे। इसका एक उदाहरण इसी साल श्वेत सागर की नहर का बनना है, जिसके द्वारा बालूतिक समुद्र को ध्रुवीय समुद्र से मिला दिया गया है। यह मानव-निर्मित नवीन जल-पथ केवल सस्ते यातयात के लिए ही उपयोगी नहीं है, बल्कि देश की सुरक्षा के लिए इसका सैनिक महत्त्व भी बहुत जबर्दस्त था। इन पंचवार्षिक योजनाओं के समय, देश की सामरिक शक्ति को बढ़ाने में भी उतना ही काम हुआ था; यद्यपि आँकड़ों को गुप्त रखने के कारण, बाहर वालों को तब तक उसका पता नहीं लगा, लब तक लाल सेना ने द्वितीय महायुद्ध में हिटलरियों को भगाना शुरू नहीं किया।

सन् 1936 में, स्तालिन का दिमग्ग फिर एक बार कलम की ओर गया और उन्होंने अपने सम्पादकत्व में सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास तैयार किया। अधिकांशतः स्तालिन द्वारा लिखी गई, इस पुस्तक में सोवियत और उसके बाहर घटने वाली भिन्न-भिन्न महत्त्वपूर्ण घटनाओं का गहरा विवेचन और विश्लेषण है। यद्यपि इसके सम्पादक-मंडल में और भी कितने ही योग्य व्यक्ति थे, लेकिन उसके एक-एक शब्द का मूल्यांकन स्तालिन ने स्वयं किया था। इसीलिए, यह एक अमर कृति है। जब तक सारे विश्व में समाजवाद की विजय

नहीं हो जाती, तब तक यह बराबर हर समय हमारा पथ-प्रदर्शन करती रहेगी।

स्तालिन सन् 1936 में भी कितनी ही कान्फरेंसों में भाग लेते रहे। इसी साल, उन्होंने अमरीकन संवाददाता राय होवार्ड से 1 मार्च, 1936 को भेंट की थी। पूँजीवादी पत्र सोवियत को गाली देने और झूठे लांछन लगाने में ही व्यस्त थे, सोवियत की क्षमताओं और सफलताओं की वह मौन रहकर उपेक्षा किया करते थे। स्तालिन अब अत्यंत मितभाषी हो गए थे, इसका अर्थ यह नहीं था कि वह विशाल निर्माण के काम में लगे हुए लोगों के साथ भी मौन-व्रत रखते थे। जो भी हो, जब भी वर्षों बाद कोई विदेशी संवाददाता उनसे बातचीत करने में सफल होता, अथवा वह स्वयं किसी वैदेशिक या गृह-नीति पर कोई संक्षिप्त-सा भी भाषण देते, तो उसे प्रकाशित करने के लिए विदेशी पत्रों में होड़ लग जाती थी।

10. स्तालिनीय संविधान : सन् 1936 की एक असाधारण घटना थी—नये संविधान की स्वीकृति। स्वीकृत करने से पहले, इसके मसौदे को एक साल तक आलोचना और राय देने के लिए प्रकाशित कर दिया गया था और संविधान के बारे में जो भी आवश्यक सुझाव आये थे उनको सम्मिलित करके, संविधान को स्वीकृत किया गया था। नये संविधान ने सन् 1924 में स्वीकृत सोवियत संघ के संविधान का स्थान लिया। संविधान को पास कराने के समय, स्तालिन ने एक बहुत महत्त्वपूर्ण भाषण दिया था, जिसके उपसंहार में उन्होंने कहा था :

" सन् 1919 में लेनिन ने कहा था : 'वह समय दूर नहीं है, जबकि सोवियत सरकार इसे लाभदायक समझेगी कि वह बिना प्रतिबन्ध के सार्वजनिक मताधिकार का आरम्भ करे।' इस वाक्य पर कृपया ध्यान दीजिए—'बिना किसी प्रतिबन्ध के !' लेनिन ने यह ऐसे समय कहा थी, जबकि विदेशी सेना का नाजायज दखल अभी बन्द नहीं हुआ था और जब हमारे उद्योग और हमारी कृषि बहुत ही शोचनीय दशा में थी। तब से 17 वर्ष बीत चुके हैं। साथियो, क्या अब वह समय नहीं है कि हम लेनिन के वचन को पूरा करें ? मैं समझता हूँ कि समय आ गया है।

" यह एक ऐसा दस्तावेज होगा, जो उस घटना को सिद्ध करेगा, जिसका पूँजीवादी देशों के लाखों ईमानदार आदमी स्वप्न देखते थे और अब भी देख रहे हैं; जो सो. स. गणसंघ में प्राप्त भी किया जा चुका है। यह एक ऐसा दस्तावेज होगा, जो इस बात को सिद्ध करेगा कि जो बात सो. स. गणसंघ में प्राप्त की जा चुकी है, दूसरे देशों में भी उसका प्राप्त करना बिलकुल सम्भव है।

" इससे मालूम होगा कि सो. स. गणसंघ के नये विधान का अन्तर्राष्ट्रीय महत्त्व कितना अधिक है।

" आज, जबकि फासिज्म की भयंकर लहर श्रमिक श्रेणी के समाजवादी आंदोलन को छिन्न-भिन्न कर रही है, सभ्य जगत के श्रेष्ठ पुरुषों के जनतांत्रिक प्रयत्नों को विफल कर रही है, सो. स. गणसंघ का नया संविधान फासिज्म के विरुद्ध 'समाजवाद और जनतांत्रिकता का अटूट सम्बन्ध है'—इसे घोषित करते हुए, एक जबर्दस्त विरोधी आवाज उठा रहा है। सो. स. गणसंघ का नया विधान उन सभी लोगों की नैतिक सहायता और वास्तविक मदद का काम करेगा, जो आज फासिस्ट बर्बरों से लड़ रहे हैं।

" यह जानकर आनंन्द और खुशी होती है कि किसलिए हमारे लोग लड़े और किस तरह उन्होंने सारे संसार के इतिहास के लिए महत्त्वपूर्ण इस विजय को प्राप्त किया है। यह जानकर आनन्द और खुशी होती है कि हमारे लोगों का खून, जो इतनी अधिकता से बहा है, वह व्यर्थ नहीं गया, उसने सुन्दर फल दिए हैं। "

सोवियत संविधान 5 दिसम्बर, 1936 को पास हुआ।

सोवियत को बालपन से ही पूतनाओं का सामना करना पड़ा था, यह हम अनेक बार देख चुके हैं। पुरानी व्यवस्था के समर्थकों ने बराबर यह कोशिश की थी कि हरएक काम में रोड़े अटकाये जायें और नेताओं को खतम कर दिया जाय। उन्होंने इसी उद्देश्य से लेनिन पर गोली चलाई थी, इसी उद्देश्य से किरोफ को मारा था और फिर भी जब कभी मौका मिला, वह षड्यंत्र करने से बाज नहीं आये। फिर, एक बड़े षड्यंत्र का भंडाफोड़ सन् 1937 में हुआ। मुकदमे की कार्रवाइयों से पता लगा कि इस षड्यंत्र में सिर्फ देश और विदेश

के प्रतिगामी ही शामिल नहीं थे, बल्कि उसमें जापान और जर्मनी की फासिस्ट सरकारों का भी हाथ था। ये प्रतिगामी समझते थे कि उनकी ही तरह, सोवियत रूस के भीतर भी सब कुछ एक ही आदमी का तमाशा है। उन्हें पता नहीं था कि व्यक्ति और नेता का महत्त्व सोवियत-व्यवस्था में भी है, लेकिन सोवियत नेतृत्व एक दूसरे ही प्रकार का है। स्तालिन ने इसके बारे में कहा था : "लेनिन ने हमें सिखाया है कि केवल ऐसे ही नेता वास्तविक बोल्शेविक नेता हो सकते हैं, जो कमकरों और किसानों को सिखाना ही नहीं जानते, बल्कि यह भी जानते हैं कि उनसे कैसे सीखना चाहिए।"–लेनिन को खोकर भी, सोवियत व्यवस्था किस तरह आगे बढ़ी, इसको दुनिया ने देखा है। स्तालिन के महान् नेतृत्व को देखकर भी, साम्राज्यवादी फिर समझने में गलती करने लगे, तभी तो वह आशा कर रहे थे कि स्तालिन के बाद फिर वहाँ गड़बड़ी होगी और उन्हें साजिशें करने का मौका मिलेगा; लेकिन उन्हें निराश होना पड़ा।

सन् 1937 में, द्वितीय पंचवार्षिक योजना की पहली योजना भी तरह ही सफलता के साथ और समय से नौ मास पहले पूर्ण हुई। इसी साल, तृतीय पंचवार्षिक योजना भी अगले साल से चालू करने के लिए तैयार की गई। वर्ष के अन्त में नये संविधान के अनुसार, 12 दिसम्बर, 1937 को महासोवियत का नया चुनाव हुआ। एक दिन पहले स्तालिन ने मॉस्को में चुनाव-भाषण करते हुए बतलाया था कि हमारे पालीमेंट के सदस्यों को लेनिन की तरह योग्य और निर्भीक होना चाहिए।

तृतीय पंचवार्षिक योजना (1938-41) : 1 जनवरी, 1938 को यह योजना शुरू हुई और 31 दिसम्बर, 1942 को समाप्त होने वाली थी, लेकिन इसके पहले ही हिटलर ने सोवियत-भूमि पर आक्रमण कर दिया, जिसके कारण यह योजना खटाई में पड़ गई। इसके आरम्भ होने के एक साल बाद ही, द्वितीय महायुद्ध के छिड़ जाने से सोवियत की अधिक शक्ति अपनी सैनिक-सुरक्षा में लगने लगी। तब भी उसमें कितनी सफलता हुई, यह इसी से पता लगेगा कि सन् 1938 में पिछले साल की अपेक्षा कल-कारखानों की उपज में 10 फी सैकड़ा, लकड़ी की उपज में 9 फी सैकड़ा और रेलवे में साढ़े 5 फी सैकड़ा की वृद्धि हुई।

11. अठारहवीं पार्टी कांग्रेस (सन् 1939) : यह महत्त्वपूर्ण कांग्रेस मार्च महीने में हुई। इसी कांग्रेस के आदेशानुसार, सोवियत राष्ट्र ने द्वितीय महायुद्ध में महान् विजय प्राप्त की और फिर युद्धोपरान्त प्रथम पंचवार्षिक योजना (चतुर्थ पंचवार्षिक योजना) को सफलतापूर्वक समाप्त किया।

अभी द्वितीय महायुद्ध घोषित होने में 6 महीने की देर थी। इसी समय यूरोप, अफ्रीका और एशिया में इटली, जर्मनी और जापान के फासिस्टों का जबर्दस्त हस्तक्षेप शुरू हो गया था; और महायुद्ध केवल इसीलिए रुका हुआ था कि प्रतिद्वंद्वी साम्राज्यवादी उनके विरोध में उठने के लिए अपने को समर्थ नहीं पाते थे। इसी बीच में द्वितीय पंचवार्षिक योजना सफलतापूर्वक हुई थी। कांग्रेस में स्तालिन ने देश-विदेश की सारी परिस्थिति पर प्रकाश डालते हुए, बतलाया कि जर्मनी और जापान जैसे जबर्दस्त आक्रमणकारी नया साम्राज्यवादी युद्ध छेड़ चुके हैं। इस युद्ध में 50 करोड़ जनसंख्या वाले भूभाग पड़ भी चुके हैं, जिसका विस्तार तियान्-चिन्, शंघाई और कैन्टन होते हुए अबीसीनिया से जिब्राल्टर तक फैला हुआ है। युद्ध की भावना इंग्लैंड, फ्रांस और अमरीका के साम्राज्यवादी हितों को अधिकाधिक दबाये जा रही है, लेकिन तब भी यह देश प्रतिरोध के लिए कोई प्रयत्न नहीं करते। साम्राज्यवादी समझते थे कि वह हिटलर को सोवियत की विशाल भूमि की तरफ बढ़वाने में सफल होंगे। प्रथम युद्ध के बाद से ही, बोल्शेविक हौवा उनके सिर पर इतना सवार था कि वह दूसरी सभी सम्भावनाओं को छोड़कर, केवल इसी का स्वप्न देखा करते थे कि कोई ऐसा शक्तिशाली नेतृत्व पैदा हो, जिसे सोवियत को धर-दबाने के लिए उकसाया जा सके। वस्तुतः, इटली और जर्मनी में मुसोलिनी और हिटलर के फासिस्तवाद को पैदा करके मजबूत करने में सबसे बड़ा हाथ इन्हीं साम्राज्यवादियों का था। उन्होंने जर्मनी के सैनिक तौर से मजबूत हो जाने के बाद, चैकोस्लोवाकिया को ही खतम करवाने का निश्चय नहीं कर लिया, बल्कि इसी समय चैम्बरलेन और दलादिये ने समझा कि अब हिटलर को सोवियत की तरफ निश्चित तौर से फेर दिया गया है। सोवियत के नेताओं ने बहुत कहा कि मिलकर फासिस्त शक्तियों से मुकाबला किया जाय, लेकिन इंग्लैंड और फ्रांस के साम्राज्यवादी भला इसे मानने के लिए क्यों तैयार होते, जबकि वह जानते थे कि हिटलरी अभियान

की कुंजी उन्हीं के हाथों में है। लेकिन, उनका समझना गलत था। हिटलर उनके हाथ की कठपुतली नहीं था। हिटलर को पूर्व की ओर अभियान करने से पहले, यह देख लेना जरूरी था कि उसका मुकाबला वहाँ कैसी शक्ति से पड़ेगा। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद, सोवियत सेना के शिक्षण में जर्मन सैनिक विशेषज्ञों से भी सहायता ली गई थी, जिन्हें पता था कि नये रूस की सामरिक शक्ति क्या है। इसीलिए हिटलर मुसकरा रहा था, जबकि पश्चिमी साम्राज्यवादी म्यूनिक की सफलता पर फूले नहीं समा रहे थे।

कांग्रेस में सोवियत की वैदेशिक नीति के सिद्धांतों को बतलाते हुए, स्तालिन ने कहा था :

" वैदेशिक नीति के क्षेत्र में, पार्टी को ये काम करना हैं :

" (1) शांति की नीति को जारी रखना और सभी देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध मजबूत करना;

" (2) सावधान रहना और जंगबाजों को हमारे देश को युद्ध में न खींचने देना। जंगबाजों की यह आदत है कि वह अपने लिए दूसरों से आग में से होलों को उठवाना चाहते हैं;

" (3) लाल सेना और लाल नौसेना की शक्ति को चरम रूप में मजबूत करना;

" (4) राष्ट्रों के बीच शांति और मित्रता की पक्षपातिनी–सभी देशों की कमकर जनता के साथ मित्रता के अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों को मजबूत करना। "

स्तालिन ने इसी साल अपना साठवाँ वर्ष पूरा किया। अपने महान् नेता की इस महत्त्वपूर्ण वर्षगाँठ को सारी जनता ने बड़े उत्साह के साथ मनाया और हृदय से कामना की कि स्तालिन दीर्घजीवी हों; देश और मानवता के ऊपर घिर आई भयंकर काली घटाओं को चीरते हुए, हमारा पथ-प्रदर्शन करें।

इसी साल, मध्य एशिया में सोवियत की जनता ने एक बड़ी सफलता प्राप्त की, जब उज्बेकिस्तान के लोगों ने 45 दिनों में 270 किलोमीटर लम्बी फर्गाना की विशाल नहर बना डाली। स्तालिन जानते थे कि जब फासिस्टों के आक्रमण से अन्न की कठिनाई होगी, उस समय इस सुरक्षित स्थान से लाखों मन अनाज की आमदनी होगी। उज्बेक कोलखोजियों की इंजीनियरों और सामग्री से पूरी मदद की गई। उन्होंने सफल होकर, स्तालिन के नाम एक पद्य-बद्ध अभिनंदन भेजा और अपनी नहर का नाम भी 'स्तालिन फर्गाना महानहर' रखा।

कामों में व्यस्त रहते हुए भी इसी साल (सन् 1936), स्तालिन ने अपना एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ, 'समाजवादी राज्य का अखंड और पूर्ण सिद्धांत' लिखा। लेनिन ने 'राज्य और क्रांति' नामक पुस्तक सन् 1917 के अगस्त में बोल्शेविक-क्रांति से कुछ ही महीने पहले लिखी थी, जिसके द्वारा क्रांति के समय भारी पथ-प्रदर्शन प्राप्त हुआ था। क्रांति के बाद जिस रास्ते से सोवियत रूस को गुजरना पड़ा, पुनर्निर्माण और पंचवार्षिक योजनाओं द्वारा जिस तरह उसमें महान् परिवर्तन किए तथा जिस तरह भीतरी और बाहरी शत्रुओं से उसे मुकाबला करना पड़ा–इस तरह के महत्त्वपूर्ण और विशाल तजर्बों का वर्णन करना स्तालिन ही के बस का था; स्तालिन ने ही उसे किया भी। स्तालिन का यह ग्रंथ पार्टी, तरुण-कम्युनिस्ट-लीग, मजूर-सभा, सहयोग संस्थाएँ, आर्थिक संगठन, शिक्षा-सेना आदि सभी संगठनों के और उनमें काम करने वालों के प्रथ-प्रदर्शन के लिए बहुत मूल्यवान साबित हुआ।

उन्होंने अठारहवीं कांग्रेस की रिपोर्ट में बतलाया था :

> "अगर मार्क्सवादी-लेनिनवादी शिक्षा हमारे कर्मियों में ढीली पड़ने लगी और इन कर्मियों के राजनीतिक और सैद्धांतिक ज्ञान के तल को ऊपर उठाने में हमने गफलत की; कर्मी स्वयं इसके कारण हमारी और आगे की प्रगति की सम्भावनाओं में कम दिलचस्पी लेने लगे और बिना व्यापक दृष्टिकोण के, संकीर्णतापूर्वक, अन्धे होकर, यांत्रिक तौर से ऊपर की हिदायतों को पूरा करने की कोशिश करने लगे; तो हमारा सम्पूर्ण राज्य और पार्टी का काम जरूर खटाई में पड़ जायेगा।"

फासिस्तों के खिलाफ मिलकर मुकाबला करने के लिए, पश्चिमी साम्राज्यवादियों के सामने सोवियत का जोर देना बेकार ही गया। वह बराबर यही सोचते रहे कि हिटलर किस तरह पूर्व की ओर बढ़े। ऊपर से वह मीठी-मीठी बातें करके, सोवियत के नेताओं को गफलत में रखना चाहते थे, लेकिन सोवियत राजनीतिज्ञ और उनके नेता–स्तालिन कच्चे गोइयाँ नहीं थे। वह साम्राज्यवादियों की बात को नहीं, बल्कि उनके काम को

देखते थे। मार्च सन् 1939 में, फ्रांस और इंग्लैंड ने चैकोस्लोवाकिया को हिटलर के लिए बलिदान कर दिया। उसके बाद, एक ओर जर्मनी ने पूर्वी यूरोप में बढ़ना शुरू कर दिया और दूसरी ओर, उसके सहकारी फासिस्त जापान ने चीन में मनमानी शुरू करके, मई 1939 में मंगोलीय लोक गणराज्य की सीमा पार करके आगे बढ़ना चाहा, तो सोवियत के नेताओं को मालूम हो गया कि खतरा बिलकुल सिर पर आ गया है। लेकिन, क्रांति के बाद के बाईस वर्षों के एक-एक क्षण को सोवियत रूस ने पूरी तौर से इस्तेमाल किया था और स्वतंत्र मंगोल जनता को अपनी देख-रेख में इतना मजबूत कर दिया था कि खलखिनगोल के किनारे जापानी सेना को मंगोलों के हाथों जबर्दस्त हार खानी पड़ी। इस हार ने पूर्वी और पश्चिमी फासिस्तों को बतला दिया कि सोवियत गणसंघ की शक्ति की तो बात ही क्या, उसके एक छोटे-से राज्य के पास भी इतनी शक्ति और दाव-पेंच हैं कि सामुराई पहलवान को चारों खाने चित होना पड़ा।

पश्चिमी साम्राज्यवादी सोवियत के साथ मिलकर कोई भी कार्रवाई करने के लिए तैयार नहीं थे, बल्कि उलटा उसे धोखा देना चाहते थे। पश्चिमी शक्तियों के साथ, समझौते की बातचीत महीनों चलती रही। स्तालिन देख रहे थे कि किस तरह छोटे-छोटे अधिकारियों को भेजकर सुलह की बातचीत में उलझाये रखना ही फ्रांस और इंग्लैंड की नीति है। इसी समय हिटलर ने सोवियत की शक्ति को समझकर चाहा कि उसको पूर्व से खतरा न रहे। उसने अपने विदेश-मंत्री रिबेन्ट्राप को तुरन्त मॉस्को भेजकर अनाक्रमण संधि करने का प्रस्ताव रखा। स्तालिन उसे कैसे ठुकरा सकते थे ? इस प्रकार, सोवियत ने अगस्त सन् 1936 में जर्मनी के साथ अनाक्रमणात्मक संधि कर ली। पश्चिमी साम्राज्यवादी इस संधि को सोवियत का फासिस्तवाद का समर्थन कहकर तरह-तरह से बदनाम करते रहे, लेकिन यह झूठा प्रचार भर था। वह भली भाँति जानते थे कि सोवियत का वैसा करना उन्हीं के रवैये के कारण हुआ था।

साठवीं वर्षगाँठ के समय, सोवियत सरकार ने 20 दिसम्बर, 1936 को स्तालिन को 'समाजवादी श्रम-वीर' की उपाधि प्रदान की और दो दिन बाद विज्ञान एकेडमी ने उन्हें अपना सम्माननीय सदस्य निर्वाचित किया।

12. स्तालिन की सादगी : स्तालिन का जीवन बहुत सीधा-सादा रहा है। यद्यपि विरोधियों के षड्यंत्रों के लम्बे तजर्बे के कारण, उनकी सुरक्षा के हित में यह पसन्द नहीं किया जाता था कि वह ऐसे स्थानों में बहुत अधिक जाया-आया करें, जहाँ शत्रुओं को अपना मंसूबा पूरा करने का मौका मिल सके। इसीलिए, उनके जीवन को नजदीक से देखने का मौका बहुत ही कम लोगों को मिल पाता था। अ. स. याकोब्लेफ टेक्नीक के विशेषज्ञ तथा डिजाइनर हैं, जिन्होंने अपनी अविस्मरणीय मुलाकातों के वर्णन में स्तालिन के चरित्र पर इस प्रकार प्रकाश डाला है :

" साथी स्तालिन से अपनी पहली मुलाकात के बाद भी, मुझे एकाधिक बार अपने काम के सम्बन्ध में उनसे मिलने का मौका मिला और मेरे सामने उस महापुरुष की तसवीर और भी साफ होती गई।

" हर उस चीज में जो उनके व्यक्तिगत जीवन से सम्बन्ध रखती है, स्तालिन बिलकुल ही आडम्बरहीन थे। वह सादी पोशाक पहनते थे। युद्ध से पहले, वह बहुधा धूसर वर्ण की विशेष किस्म की सैनिक जाकिट पहिनते थे। वस्तुतः, सैनिक जाकिट की बजाय उसे एक आरामदेह, ढीली-ढाली जाकिट कहना ज्यादा उपयुक्त होगा। वह उनके पतलून की ही तरह, धूसर रंग के कपड़े की बनी होती थी। इसके साथ ही, वह मुलायम चमड़े के बने हुए आरामदेह ऊँचे बूट पहिनते थे।

" बातचीत करते समय, स्तालिन अपने आफिस में धीरे-धीरे चहल-कदमी करने लगते थे। वह जिससे बातें करते, उसको बातचीत के दौरान में बहुत ही कम टोकते थे; जब तक वह अपनी बात पूरी तरह न कह ले, तब तक इन्तजार करते थे।

" मैंने देखा, उनके पास सरकारी संस्थाओं की सभा द्वारा बहुधा नोट भेजे जाते थे। वह हमेशा उन्हें पढ़ते और फिर मोड़कर सफाई के साथ अपनी जेब में रख लेते थे। वह उनमें से एक की भी उपेक्षा नहीं करते थे।

" स्तालिन अपने प्रश्नों के संक्षिप्त, सीधे और स्पष्ट उत्तर पसन्द करते थे। जब कोई पहली बार साथी

स्तालिन से बातें करता, तो बहुधा गलती के डर से उनके प्रश्न का उत्तर देने में देर तक हिचकिचाता। साथी स्तालिन से पहली बार बातें करते समय मैं भी ऐसा ही करता था, खिड़की के बाहर एक टक देखने लगता और कभी छत की ओर ताकने लगता था। स्तालिन ने हँसकर टीका की : 'छत की ओर ताकने की कोई जरूरत नहीं है। वहाँ आपको कुछ भी लिखा हुआ नहीं मिलेगा। बेहतर यह है कि आप मेरी ओर देखें और जो कुछ सोचते हैं, साफ-साफ कहें। आप से सिर्फ यही आशा की जाती है।'

" एक बार जब उन्होंने मुझसे सीधे एक प्रश्न पूछा, तो मैं किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। मैं नहीं जानता था कि वह मेरा उत्तर किस रूप में लेंगे, जो कुछ मैं कहना चाहता था उसे पसन्द करेंगे या नहीं।

" वह इस बात को ताड़ गये और गम्भीरतापूर्वक बोले : 'बिलकुल वही उत्तर दीजिए, जो आप सोच रहे हैं। आप वह सब कहने की कोशिश न कीजिये, जिनसे आप सोचते हैं कि मैं खुश होऊँगा। हमारी बातचीत से कुछ भी फायदा नहीं होगा, यदि आप मेरी मर्जी के बारे में अनुमान लगाने की कोशिश करेंगे। आप यह न सोचें कि यदि आप कुछ ऐसी बात कहेंगे, जिससे मैं असहमत हूँ, तो उसका बुरा असर होगा। आप एक विशेषज्ञ हैं। आप और मैं इसीलिए बातें कर रहे हैं कि मैं आपसे कुछ सीखूँ, सिर्फ इसलिए नहीं कि मैं आपको सिखाऊँ।'

" एक बार स्तालिन ने कहा : 'यदि आपका दृढ़ विश्वास है कि आप जो कह रहे हैं, वह सही है और आप उसे सिद्ध कर सकते हैं, तो आप इनकी परवाह न करें कि अमुक-अमुक व्यक्ति इसके विषय में क्या सोचते हैं; आप अपनी बुद्धि और विवेक के अनुसार काम कीजिए।'

" एक राजनीतिक की हैसियत से, साथी स्तालिन को अनिवार्यतः बहुत लोगों से मिलना पड़ता था। वह नये लोगों को प्यार करते थे, उनका अध्ययन करते थे, पता लगाते थे कि वह व्यक्ति कैसा है, उसे कौन-सा काम सौंपा जा सकता है, उसकी क्षमता क्या है। बहुधा, व्यावहारिक विषयों की बातचीत के दौरान में वह विनोदपूर्ण टिप्पणी कर देते थे।

" एक बार हम किसी समस्या को लेकर, स्तालिन से मिलने गये। बातचीत के दौरान में, हमने कुछ कर्मचारियों का जिक्र किया, जिन्होंने संतोषजनक प्रगति नहीं की थी। स्तालिन ने एकाएक टीका कर दी : 'ये हैं जामोस्कवोरेची (मॉस्को के निकट एक जिला) के मिलशियादीज और थेमिस्तोक्लीज (जनरल और सिपहसालार) !'

" यह कहने के बाद, उन्होंने हमारी ओर यह देखने के लिए ताका कि मैंने उनका मजाक समझा या नहीं और पूछा : 'जामोस्कवोरेची के क्यों ? आप जानते हैं, मिलशियादीज और थेमिस्तोक्लीज कौन थे ?'

" 'पुराने जमाने में यूनान के सिपहसालार थे।'

" 'और, उन्होंने किस तरह ख्याति प्राप्त की थी ?'

" 'किसी न किसी लड़ाई में, ठीक-ठीक नहीं जानता किस तरह।'

" मुझे यूनान के प्राचीन इतिहास की अपनी अनभिज्ञता पर अत्यंत लज्जा आई।

" एक बार किसी कर्मचारी के विषय में बातें करते हुए, स्तालिन ने उसकी तुलना चेखोफ की 'ब्याह' नामक कहानी के एक पात्र से की। इसके बाद, उन्होंने मुझसे पूछा : 'आपको वह कहानी याद है ?'

" मैंने उत्तर दिया : 'नहीं, मुझे याद नहीं है साथी स्तालिन।'

" 'आपने चेखोफ को क्यों नहीं पढ़ा है ?'

" 'मैंने चेखोफ की समस्त कृतियाँ कई बार पढ़ी हैं, लेकिन मुझे वह कहानी याद नहीं है।'

" 'कोई-कोई ऐसी चीज़ें है, जो दिमाग में घर कर लेती हैं।'

" मैं पुनः लज्जित हुआ, मैं अपने को एक सुशिक्षित एवं सुसंस्कृत व्यक्ति समझता था।

" बातचीत चाहे टेक्निकल विषय पर हो रही हो या राजनीतिक पर, स्तालिन इतिहास, पौराणिक कथा अथवा क्लासिकल साहित्य से उपयुक्त उदाहरण देना पसन्द करते थे।

" वह 'एक शहर के इतिहास'—से आश्चर्यजनक ढंग से, बड़े विनोदपूर्वक लम्बे-चौड़े उद्धरण देते और उन लोगों पर निर्मम व्यंग्य कसते थे, जिनमें शेद्रिन के पात्रों की कुछ चारित्रिक विशेषताएँ अभी पाई जाती थीं।

" एक नये विमान की अविलम्ब जाँच-परख की जाने को थी। कुछ लोगों ने वायुयान को फैक्टरी से कुछ दूर, उस जगह ले जाने का सुझाव दिया, जहाँ हवाबाज रहते थे।

" स्तालिन ने कहा : 'वायुयान क्यों ले जाओ। हवाबाजों का यहीं आ जाना कहीं अधिक आसान है। दुनिया में कौन इस ढंग से काम करता है ? तुम अपने दिमाग से काम क्यों नहीं लेते ? तुम ग्लुपोफ के निवासियों के दृष्टान्त का अनुसरण कर रहे हो; शेद्रिन की 'शहर का इतिहास'-शीर्षक कहानी में शहर का नाम ! तुम्हें याद है, वे किस तरह बछड़े को स्नानागार में ले गये थे और उन्होंने किस तरह वोल्गा में जौ का आटा मिलाया था ?'

" एक दिन काफी रात गये उनके आफिस में देर तक काम सम्बन्धी बातचीत करने के बाद, स्तालिन ने हम सभी को अपने यहाँ भोजन के लिए निमंत्रित किया।

" उन्होंने कहा : 'आज के लिए इतना काफी है। मुझे आप लोगों के विषय में तो पता नहीं है, लेकिन मैं भूखों मरा जा रहा हूँ। मैं आप लोगों में से किसी को विशेष रूप से निमंत्रित नहीं कर रहा हूँ, जो आप अपने को कृतज्ञता के बोझ से दबा हुआ अनुभव करें। हाँ, जो कोई भोजन करना चाहे, उसे हार्दिक निमंत्रण है।'

" इसे कौन अस्वीकार करता ? ऐसा निमंत्रण बार-बार नहीं मिला करता।

" अतः हम सब उनके साथ, उनके निवास-स्थान पर गये। हमारे पहुँचने तक भोजन-कक्ष में मेज लगाई जा चुकी थी। साथी स्तालिन का कक्ष निहायत सादे ढंग से सुसज्जित था। वहाँ बड़ी संख्या में रखी पुस्तकें किसी का भी ध्यान आकृष्ट कर लेतीं। खाने के कमरे में भी दीवार के साथ, एक सिरे से दूसरे सिरे तक पुस्तकों से ठसाठस भरी अलमारियों की कतार चली गई थी।

" भोजन के समय राजनीतिक, अंतर्राष्ट्रीय, टेक्निकल, साहित्यिक एवं कला सम्बन्धी विषयों पर बातचीत होती थी। हम सब इतमीनान के साथ, खुलकर बातें करते थे। ऊँच-नीच अथवा दबने-दबाने का भाव बिलकुल नहीं था। हम सब बराबरी का अनुभव करते थे।

" स्तालिन किसी चीज के विषय में जानकारी प्राप्त करने के लिए, बहुधा पुस्तकों का सहारा लेते थे। किसी मसले के बारे में सोचते हुए, वह किताबों की अलमारी के सामने खड़े हो जाते और उसमें से आवश्यक पुस्तक निकाल लेते थे। यदि बातचीत भौगोलिक विषय से सम्बन्धित होती, तो वह यह कहते हुए अपना फटा-पुराना मानचित्र ले आते थे : 'इसको मेरे मानचित्र में देखिये। बेशक, यह बहुत जीर्ण-शीर्ण है, लेकिन फिर भी काम देता है।'

" स्तालिन की उक्तियों में साहित्य के उद्धरणों का प्राचुर्य पाया जाता था। उनकी स्मरणशक्ति असाधारण थी और वह कई कृतियों से लम्बे-चौड़े उद्धरण, प्रायः अक्षरशः, देते थे। वह प्रायः गोर्की, चेखोफ तथा साल्तिकोफ शेद्रिन का जिक्र किया करते थे। वह आधुनिक साहित्य के विकास का ध्यानपूर्वक अध्ययन करते तथा हमेशा नवीनतम पुस्तकों की जानकारी रखते थे।

" एक बार साहसिक कहानियों—मेनेरिंग और जेम्स फेनीमोर कूपर की कृतियों—के विषय में प्रसंग छिड़ गया। स्तालिन ने कहा कि बचपन में, वह इन लेखकों के उपन्यासों के प्रवाह में बह जाते थे।

" स्तालिन लोगों के साथ अपने व्यवहार में असाधारण कौशल का परिचय देते थे। वह जिससे बातें करते, उसका बहुत ध्यान रखते और बड़ी शिष्टता दिखाते थे। जब वे किसी को अपने आफिस में बुलाते, तो उससे हमेशा पूछते थे : 'अपने कार्य में व्यस्त रहने के कारण, आपको यहाँ आने में असुविधा तो नहीं हुई ?' अथवा, 'इस समय मुझसे मिलने के लिए आने में आपके काम में हर्ज तो नहीं हुआ ?'

" 'क्यों, साथी स्तालिन ?'

" 'तो यथाशीघ्र आइए।'

" स्तालिन बहुधा, ब्लादिमिर इलिच लेनिन के जीवन और कृत्यों को दृष्टान्त के रूप से पेश करते थे। वह प्रेमपूर्वक लेनिन की याद करते थे। एक बार उन्होंने हमें बताया था : 'सन् 1918 में, सोवियत सरकार

ने राजधानी पेत्रोग्राद से मॉस्को स्थानान्तरित करने का निर्णय किया था। वह उथल-पुथल का जमाना था। मॉस्को में समाजवादी क्रांतिकारी और मेन्शेविकों का विद्रोह अभी-अभी दबाया गया था। मॉस्को की यात्रा में, हम ब्लादिमिर इलिच के साथ थे। उनकी रक्षा के लिए हमें बड़ी चिन्ता हुई। जब हमने देखा कि हमें खुली गाड़ी में जाना होगा, तो हमने लेनिन को गाड़ी के अन्दर बिठा दिया और खुद उनके चारों ओर खड़े हो गये, ताकि उन्हें कोई देखे नहीं और यदि उन पर हमला भी हो, तो उससे उनका बाल भी बाँका न हो। ब्लादिमिर इलिच इस चीज के खिलाफ थे। उन्होंने हमें अपनी बगल में बैठने को कहा, लेकिन हमने आग्रह किया और हम रास्ते-भर खड़े रहे।'

" अपने काम के दौरान में जिस किसी को भी, साथी स्तालिन से मिलने का मौका मिलता, उसके लिए यह सुअवसर एक अद्भुत शिक्षालय में शिक्षा प्राप्त करने के समान होता था। उनसे हुई, हर बातचीत की गहरी छाप पड़ जाती थी। हर बार उनसे मिलने के बाद, अनुभव होता था कि हमने राजनीतिक तथा व्यावसायिक दोनों ही दृष्टियों से तरक्की की है।...

" अपने समस्त कार्यों में, साथी स्तालिन सोवियत संघ के लाखों-लाख लोगों के साथ अदृश्य सूत्रों द्वारा बँधे थे। हमारी विशाल मातृभूमि के कोने-कोने से उनके पास हर रोज हजारों पत्र आते थे। वह व्यक्तिगत रूप में सोवियत संघ के स्त्री-पुरुषों से परिचित थे। वह जानते थे कि उनसे किस तरह की बातें करनी चाहिए, तथा यह भी कि उनकी बातें कैसे सुननी चाहिए, जो कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। स्तालिन के विचार एवं भाव जनता के विचार एवं भाव हैं।—मॉस्को, सन् 1950 "

13. महायुद्ध की घटाएँ : सन् 1940 में सोवियत की आर्थिक स्थिति कितनी आगे बढ़ी थी, इसका पता निम्न आँकड़ों से लगेगा—

उत्पादन	**1940 में (करोड़ टन)**	**1933 से**
कच्चा लोहा	1.50	प्रायः 4 गुना
फौलाद	1.83	साढ़े 4 गुना
कोयला	16.60	साढ़े 5 गुना
तेल-पेट्रोल	3.10	साढ़े 3 गुना
कपास	.27	प्रायः 3 गुना
अनाज	3.83	1.70

साथी स्तालिन ने 11 दिसम्बर, 1937 को पार्लामेंट के निर्वाचन-भाषण में ठीक ही कहा था : "उत्पादन की यह अद्वितीय वृद्धि, देश के पिछड़ेपन से प्रगति की ओर बढ़ने के मामूली साधारण से विकास के तौर पर नहीं मानी जा सकती। यह वस्तुतः छलाँग मारना है, जिसके द्वारा हमारी मातृभूमि एक पिछड़े देश से अग्रगामी देश और कृषि-प्रधान देश से उद्योग-प्रधान देश के रूप में परिवर्तित हो गई है।"

द्वितीय महायुद्ध में पड़ने से पहले, सोवियत-भूमि की आर्थिक अवस्था जहाँ इतनी अच्छी थी, वहाँ सुरक्षा के बारे में भी वह गाफिल नहीं थी। हिटलर के पूर्व की ओर के बढ़ाव ने यह भी मौका दे दिया कि सन् 1939 की शरद में, बीस वर्षों से जबर्दस्ती पोलैंड के दखल में चले गये, पश्चिमी उक्रइन और पश्चिमी बेलोरुसिया मुक्त होकर फिर अपने जातीय गणराज्यों में मिल जायें। अगले साल (अगस्त सन् 1940 में) बालूतिक के गणराज्य लिथुवानिया, लत्विया और एस्तोनिया भी पश्चिमी साम्राज्यवादियों के जाल से निकलकर अपने कम्युनिस्ट परिवार में आ मिले। इस प्रकार, पंचवार्षिक योजनाओं से समृद्ध सोवियत-भूमि और फासिस्त जर्मनी के बीच का फासला, इन राजनीतिक परिवर्तनों के कारण, और भी चौड़ा हो गया।

अठारहवीं पार्टी कांग्रेस मार्च सन् 1939 में हुई, जिसमें तृतीय पंचवार्षिक योजना की सफलताओं और वैदेशिक सम्बन्धों तथा सुरक्षा के बारे में विचार किया गया। इसी में, राज्य-योजना-कमीशन को चौथी पंचवार्षिक योजना बनाने का काम सुपुर्द किया गया और लक्ष्य रखा गया था—कच्चा लोहा, फौलाद, तेल-कोयला,

बिजली-शक्ति, मशीनें, तथा उपभोग की चीजों के उत्पादन की प्रति पुरुष मात्रा मुख्य पूँजीवादी देशों के स्तर से अधिक बढ़ाना।

लेकिन, शांतिपूर्वक निर्माण का समय समाप्ति पर पहुँच रहा था। अब जर्मनी सारे यूरोप पर अधिकार करके, पागल सियार की तरह हो रहा था। स्तालिन की सूक्ष्म बुद्धि बतला रही थी कि वह समय दूर नहीं था, जब ब्रिटिश चैनल तक पहुँचकर रुका हुआ, हिटलर पूर्व को रुख करेगा।

स्तालिन लेनिन के निर्विवाद उत्तराधिकारी और सोवियत राष्ट्र के सर्वश्रेष्ठ नेता थे, लेकिन वह अब तक केवल कम्युनिस्ट पार्टी के प्रधानमंत्री के पद पर थे। इस स्थिति में परिवर्तन करते हुए 6 मई, 1941 को महासोवियत के अध्यक्ष-मंडल ने उन्हें लोक-कमीसार-परिषद् का अध्यक्ष अर्थात् सोवियत संघ का प्रधानमंत्री चुना। अब आर्थिक क्षेत्र की विजयों के सेनानी, 62 वर्ष की उम्र में मानवता के लिए ऐतिहासिक युद्ध-विजय के सेनानी बने।

9

मानवता का त्राता (सन् 1941-45)

युद्ध-काल में स्तालिन के कामों का उल्लेख करते हुए, आज (सन् 1953) के सोवियत प्रतिरक्षा-मंत्री, न. बुलगानिन ने महान् नेता की 70वीं वर्षगाँठ पर कहा था :

" मॉस्को-युद्ध के समय, साथी स्तालिन ने अपनी असाधारण बुद्धि और हिम्मत का परिचय दिया था। युद्ध-क्षेत्र की स्थिति बड़ी भयंकर होते हुए भी, साथी स्तालिन ने रिजर्व सेना को समय से पहले युद्ध में नहीं उतरने दिया। पश्चिमी मोर्चे के मुख्य सेनापति को मालूम था कि मॉस्को के करीब जनरल हेडक्वार्टर के पास भारी रिजर्व सेना मौजूद है। इसलिए, उसने कुमक माँगी, लेकिन साथी स्तालिन ने उसे हुक्म दिया कि अपने पास की फौजों द्वारा ही शत्रु को रोक रखो। जल्दी ही, साथी स्तालिन के निर्णय की दूरदर्शिता का पता लगा। साथी स्तालिन ने उन रिजर्व सेनाओं को एक निर्णायक प्रत्याक्रमण करने के उद्देश्य से बचा रखा था। ठीक समय पर, मोर्चे को ये रिजर्व सेनाएँ उपयुक्त परिमाण में मिलीं, जिसने मॉस्को के पास शत्रु (जर्मनी) की पराजय में मुख्य काम किया।···

" महान् मुक्ति-युद्ध की सभी सैनिक कार्रवाइयों की योजना साथी स्तालिन ने ही बनाई थी और उनके पथ-प्रदर्शन में ही, उन्हें कार्यरूप में परिणत किया गया था। कोई भी सैनिक कार्रवाई ऐसी नहीं थी, जिसकी योजना में उन्होंने भाग न लिया हो। किसी भी सैनिक कार्रवाई को मंजूर करने से पहले, वह अपने नजदीकी सैनिक अफसरों से बहुत बारीकी के साथ बहस और विश्लेषण करते थे। उन्होंने नौसेना और सेना के कमांडरों की सम्मतियों और सुझावों को सुनने का नियम बना लिया था। वह सभी टिप्पणियों और प्रस्तावों को बड़े ध्यान से सुनते थे।

" किसी निश्चित सैनिक कार्रवाई के पहले, मौके पर जाकर सेनाओं की तैयारी की जाँच-पड़ताल के लिए वह स्वयं युद्ध-मोर्चे पर जाते थे। स्मोलेन्स्क में सैनिक कार्रवाई आरम्भ करने से पहले, वह पश्चिमी मोर्चे पर गये थे।···

" स्तालिन की युद्ध-कला की एक विशेषता यह है कि वह शत्रु के साथ लड़ने के तरीके और रूप को अपनाने में अपने दृष्टिकोण को बिलकुल मुक्त रखती है। वह बूर्ज्वा युद्ध-कला की रूढ़ियों और पुरानी मान्यताओं का अन्धानुसरण पसन्द नहीं करती।···

" साथी स्तालिन ने सोवियत सैनिक नेताओं के नये कर्मियों को चुनकर, उन्हें शिक्षित करके आगे बढ़ाया, जिन्होंने स्तालिन की प्रतिभा द्वारा बनाई गई योजनाओं को कार्यरूप में परिणत करने में अद्भुत कौशल का परिचय दिया है। उन्होंने हमारे सैनिक कर्मियों को नजदीक से परखकर चुना है। वह हमारे जनरलों, एडमिरलों

और बहुसंख्यक सैनिक अफसरों को व्यक्तिगत तौर से जानते हैं। "

जर्मन आक्रमण

1. धोखे से हिटलर का आक्रमण : 22 जून, 1941 को हिटलर ने बिना चेतावनी दिये हुए, अनाक्रमणात्मक संधि तोड़कर सोवियत संघ पर आक्रमण कर दिया, जो सचमुच में उसका पागल सियार की भाँति गाँव की ओर भागना ही सिद्ध हुआ। सारे यूरोप की सेनाओं और सैनिक उत्पादन के साथ, हिटलर ने अचानक आक्रमण करके उस समय कुछ आरंभिक सफलता जरूर पाई। लेकिन, स्तालिन की नीति बड़ी गम्भीर थी, जिसको समझने में फासिस्त बिलकुल असमर्थ रहे। स्तालिन ने अपनी सारी शक्ति को पहले ही मुकाबले में दाँव पर लगा देना पसन्द नहीं किया और उसी सैनिक दाँव-पेंच को काम में लाना अच्छा समझा, जिसके द्वारा रूस में सवा सौ वर्ष पहले नेपोलियन को हराया गया था। सोवियत सेनाएँ मुकाबला करते हुए, पीछे हटने लगीं। वह चाहती थीं कि फासिस्त सेनाओं को काफी हानि पहुँचाकर, उनके बढ़ाव की गति मन्द कर दें। हमला होने के आठ दिन बाद (30 जून, 1941), राज्य-सुरक्षा समिति की स्थापना करके उसके हाथ में सारी शक्ति दे दी गई। स्तालिन इस समिति के अध्यक्ष हुए। अंगद की तरह, उन्होंने अपने पैर मॉस्को में रोप दिए और राजधानी पर भयंकर खतरा होने तथा अंधाधुंध हवाई हमलों के समय भी, वहाँ से हटने का नाम नहीं लिया। हिटलर के पास हजारों टैंकों और हवाई जहाजों के साथ 170 डिवीजन सेना थी। सारे यूरोप के कारखाने उसके लिए गोला-बारूद, टैंक, विमान और दूसरे हथियार बना रहे थे। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं थी, यदि फासिस्त सेनाओं ने जल्दी ही लिथुवानिया, लतविया के काफी भाग, पश्चिमी बेलोरुसिया तथा पश्चिमी उक्रइन के भाग को अपने अधिकार में कर लिया था। 3 जुलाई, 1941 को साथी स्तालिन ने अपने रेडियो-भाषण में सोवियत जनता और सेना को देश की नाजुक स्थिति का परिचय दिया। उन्होंने खतरे को कम करके नहीं बतलाया और न शत्रु की सफलताओं को छिपाना ही चाहा। साथ ही, सोवियत जनता को बतलाया कि उन्हें सर्वस्व की बाजी लगाकर, शत्रु से मुकाबला करना है। इस भाषण की कुछ पंक्तियाँ थीं :

> " शत्रु क्रूर और पकड़ाई आने में कठिन है। वह हमारी उस भूमि को छीनने पर उतारू है, जिसको हमने अपने ललाट के पसीने से सींचा है। वह हमारे अन्न और तेल को छीनना चाहता है, जिन्हें हमारे हाथों के श्रम ने प्राप्त किया है। वह जमींदारों के शासन और जारशाही को पुनः स्थापित करने पर उतारू है और रूसियों के राष्ट्रीय अस्तित्व और राष्ट्रीय संस्कृति को एक राज्य के रूप में नष्ट कर देने की नीयत रखता है। वह रूसियों, उक्रइनियों, बेलोरुसियों, लिथुवानियों, लतवियों, एस्तोनियों, उज्बेकों, तातारों, मोलदावियों, गुर्जियों, आर्मनियों, आजुर्बाइजानियों तथा सोवियत संघ की दूसरी स्वतंत्र जातियों की राष्ट्रीय संस्कृति और उनके राष्ट्रीय अस्तित्व को एक राज्य के रूप में खतम करने पर उतारू है।
>
> "वह हमें जर्मन रंग में ढालकर, जर्मन राजुलों और लार्डों के दासों के रूप में परिणत करना चाहता है। इस प्रकार सोवियत राज्य के लिए, यह जन्म-मरण का प्रश्न है। सोवियत समाजवादी गणसंघ के लोगों के लिए, जन्म-मरण का प्रश्न है। सोवियत संघ के लोग स्वतंत्र रहेंगे, या जर्मन-दासता में पड़ेंगे ?"

स्तालिन ने फासिस्त जर्मनी के विरुद्ध युद्ध में, सोवियत संघ के लक्ष्य को बतलाते हुए कहा कि वह जर्मन फासिस्त सेना के विरुद्ध सारी सोवियत जनता का महान् युद्ध है। जनता के मुक्ति-युद्ध का लक्ष्य केवल देश पर आये खतरे को दूर करना ही नहीं, बल्कि जर्मन फासिस्तवाद के जुए के नीचे कराहती सारी यूरोपीय जातियों को मुक्त करने में सहायता देना भी है। उन्होंने यह भी कहा था कि मुक्ति-युद्ध में सोवियत जनता अकेली नहीं है :

> "अपनी मातृभूमि की मुक्ति के लिए की जानेवाली यह लड़ाई यूरोप और अमरीका की जनता की अपनी स्वतंत्रता तथा जनतांत्रिक मुक्ति के संघर्ष से मिलकर रहेगी। हिटलरी फासिस्त सेना के दास बनने के खतरे के विरुद्ध स्वतंत्रता की पक्षपाती, दासीकरण की विरोधी जातियों का यह संयुक्त मोर्चा होगा।"

पश्चिमी शक्तियों ने फासिस्तों के खतरे को सिर पर देखते हुए भी, सोवियत संघ की बात मानकर, एक होकर मुकाबला करने में बहुत हीला-हवाला किया था। अब उन हीला-हवाला करने वालों में, इंग्लैंड ही बचा हुआ था और वह भी हिटलरी आक्रमण के भय के मारे काँप रहा था। हिटलर को शह देने वाला चैम्बरलेन रंगमंच छोड़ चुका था और चर्चिल इंग्लैंड का प्रधानमंत्री था। उसने 12 जुलाई, 1941 को जर्मनी के विरुद्ध रूस से समझौता कर लिया। जून, सन् 1942 में संयुक्त राष्ट्र अमरीका ने भी सोवियत संघ के साथ समझौता करके, आक्रमण के विरुद्ध युद्ध करने में पारस्परिक सहायता के सिद्धांत को स्वीकार कर लिया। इस प्रकार, अब इंग्लैंड-सोवियत-अमरीका की संयुक्त शक्ति फासिस्ट गुट को नष्ट करने के लिए एकजुट हो गई। थी। इस प्रकार अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति अनुकूल बनाकर, स्तालिन ने सोवियत जनता का आह्वान किया कि अब से सारा जीवन युद्ध के लिए संगठित करना चाहिए; शत्रु को हराने के लिए सेना की सारी आवश्यकताओं को पहले पूरा करना चाहिए। केवल लाल सेना और लाल नौसेना ही नहीं, बल्कि सारे सोवियत नागरिकों को अपने खून की एक-एक बूँद से सोवियत की एक-एक इंच जमीन की, प्रत्येक गाँव और नगर की रक्षा के लिए लड़ना होगा। उन्होंने सेना और जनता को यह भी आदेश दिया कि अगर पीछे हटने के लिए मजबूर होना पड़े, तो शत्रु के हाथ में एक रेल का इंजन या डिब्बा ही नहीं, बल्कि कल-कारखानों, एक सेर अन्न और एक गैलन तेल भी नहीं छोड़ना चाहिए। लाखों की तादाद में बूढ़े-बच्चों और स्त्री-पुरुषों को अपने ग्राम छोड़कर पूर्व की ओर भागना पड़ा था। उस समय, सोवियत सरकार ने फासिस्तों के खतरे में तुरन्त पड़नेवाले कल-कारखानों की मशीनों को बहुत भारी परिमाण में ले जाकर, पूर्व में स्थापित करवाया। पंचवार्षिक योजनाओं के कारण, थोड़े ही समय में बड़े-बड़े काम करने के आदी हो जाने से सोवियत कमकरों और विशेषज्ञों ने तीन-तीन वर्षों में खड़े होने वाले कारखानों को छ-छ, आठ-आठ महीनों में ही नई जगहों पर ले जाकर, खड़ा कर दिया। हजारों की संख्या में अनाथ बच्चे किसी भी पूँजीवादी देश के लिए भारी समस्या बन सकते थे, लेकिन अपने नेता के परामर्श को सुनते ही मध्य एशिया तथा दूसरे भागों के सोवियत नागरिकों ने अपने-अपने घरों में एक-एक, दो-दो बच्चे धर्म-पुत्रों की तौर पर पालना शुरू किए, जिसके कारण बच्चों के पालन-पोषण ही नहीं, बल्कि उनकी शिक्षा-दीक्षा की समस्या भी हल हो गई। साथी स्तालिन के प्रथम भाषण को सोवियत जनता ने हृदयंगम कर लिया था :

"शत्रु का ध्वंस करने के लिए, जनता की सारी शक्तियो, विजय के लिए आगे बढ़ो !"

और सचमुच, सोवियत के एशियाई यूरोपीय तथा अनेक जातियों के गणराज्यों ने अपनी अद्भुत एकता का परिचय दिया। उनके भीतर कहीं भी दरार नहीं दीख पड़ी।

19 जुलाई, 1941 को युद्ध शुरू होने के दूसरे महीने, महासोवियत के प्रेसीडियम (अध्यक्ष-मंडल) ने स्तालिन को प्रतिरक्षा-जन-कमीसार नियुक्त किया। अभी भी जर्मन सेनाओं के बढ़ाव का वेग कम होता नहीं दिखाई पड़ रहा था। अक्तूबर में बहुत भारी संख्या में अपनी सेनाओं को कटवाकर, फासिस्त सेनाएँ मॉस्को प्रदेश में घुसने में सफल हो गईं। इस प्रकार सोवियत सेना को पीछे हटते देखकर, पश्चिमी सहयोगियों को यह विश्वास हो गया था कि फ्रांस की तरह, रूस भी कुछ ही दिनों में घुटने टेक देगा। लेकिन, सोवियत जनता और उसके अदम्य नेता को कभी क्षण-भर के लिए भी अपने भविष्य पर संदेह नहीं हुआ; क्योंकि उसे अपनी शक्ति पर पूरा विश्वास था। तो भी, मॉस्को प्रदेश में फासिस्तों के घुस आने पर राजधानी के लिए भयंकर खतरा पैदा हो गया है—इसे वह भी समझते थे। 19 अक्तूबर, 1941 को राज्य-प्रतिरक्षा-कमिटी के अध्यक्ष के तौर पर, स्तालिन ने मॉस्को के घेरे में पड़ने की घोषणा कर दी। राजधानी से बहुत-से मंत्रालय अन्यत्र भेज दिए गये। कुइविशेफ युद्धकालीन राजधानी बन गई। लेकिन, अंगद मॉस्को से अपने पैर हटाने के लिए तैयार नहीं थे। उन्होंने अपने सेनापतियों के साथ मिलकर मॉस्को के बचाने की ही नहीं, बल्कि जर्मन फासिस्तों को सबसे बड़ा सबक सिखाने की योजना भी तैयार की। शत्रु मॉस्को के दरवाजे पर आकर ललकार रहा था, तो भी क्रांति के चौबीसवें वार्षिकोत्सव को लोगों ने उसके अनुरूप ही मनाया। एक दिन पहले, 6 नवम्बर को स्तालिन ने हमेशा की तरह, एक सभा में भाषण भी दिया, जिसमें उन्होंने चार महीने के युद्ध का सिंहावलोकन करते हुए

बतलाया कि सेना, सैनिक नेता और जनता–सभी बड़ी बहादुरी और अद्भुत उत्साह के साथ अपने कर्तव्य का पालन कर रहे हैं। साथ ही, यह भी बतलाया कि किसी भी तरह की गफलत करना शत्रु के हाथ मजबूत करना होगा। और, अन्त में घोषित किया : "जर्मन फासिस्तों और उनकी सेना का नाश होकर रहेगा।"

हिटलर ने डेढ़-दो महीनों में सोवियत संघ को खतम कर देने के लिए गाल बजाया था, लेकिन चार महीने हो गये; पर फासिस्त सेना अगम दलदल में फँसी दिखाई पड़ती थी। फासिस्तों ने अपने गुरुओं–पश्चिमी साम्राज्यवादियों–की तरह, गलत अंदाजा लगाया था कि सोवियत-व्यवस्था वहाँ की जनता पर जर्बदस्ती लादी गई है, वहाँ के लोग उसके साथ नहीं हैं और युद्ध के अवसर से फायदा उठाकर वह विद्रोह कर देंगे। सोवियत सैनिक शक्ति के बारे में भी, उनका ख्याल उसी तरह गलत था। और, उन्होंने कभी नहीं सोचा था कि शकों, मंगोलों तथा इतिहास में अपनी वीरता के लिए प्रसिद्ध दूसरी जातियों के इन वंशजों की वीरता को सोवियत-व्यवस्था ने कम करने की जगह कई गुना बढ़ा दिया है। और, हरएक पिछड़ी हुई जाति को अपने बराबर लाने के लिए प्राण-पण से प्रयत्न करके, पिछले चौबीस वर्षों में रूसी जाति ने अपने स्वाभाविक भाईचारे का एक ऊँचा आदर्श रखा है। वहाँ तो युद्ध के खतरे ने उन्हें कवच की कड़ियों की तरह, एक-दूसरे के साथ और भी घनिष्ठ बना दिया था।

फासिस्तों को इतनी सफलता भी निश्चय ही नहीं मिलती, यदि इसी समय पश्चिमी सहयोगियों ने 'मुँह में राम, बग़ल में छुरी' की नीति को न अपनाया होता। स्तालिन ने वार्षिकोत्सव के समय, अपने भाषण में इस बात को स्पष्ट कहा था कि द्वितीय मोर्चे के न खोले जाने के कारण ही फासिस्तों को इतनी सफलता मिली। उन्होंने यह भी बतलाया था कि उनके कारखानों के विमान और टैंक फासिस्तों की अपेक्षा बहुत अच्छे और अधिक शक्तिशाली हैं, परन्तु सेना के पास उनकी पर्याप्त संख्या नहीं है। साथी स्तालिन ने सबसे ज्यादा जोर इस बात पर दिया कि टैंकों और विमानों का उत्पादन बढ़ाने की ओर सबसे अधिक ध्यान देना होगा।

तरुणाई का शास्त्रार्थी और भारी वक्ता, अब सोवियत राष्ट्र का संचालक बनकर मितभाषी हो गया था। स्तालिन के भाषण भी छोटे-छोटे होते थे, लेकिन उनके एक-एक शब्द में अणु बम की शक्ति थी। स्तालिन ने फासिस्टों के आततायीपन को बतलाते हुए, अपनी जनता से कहा था :

> "ये आदमी न इज्जत रखते हैं, न मानवीय हृदय; इनका व्यवहार पशुओं जैसा है, तो भी ये नीच यह कहने की धृष्टता करते हैं कि वे महान् रूसी राष्ट्र को–प्लेखानोफ और लेनिन, बेलिन्स्की और चेर्नीशेव्स्की, पुश्किन और तालस्ताय, ग्लिका और चेकोव्स्की, गोर्की और चेखोफ, सेचेनोफ और पावलोफ, रेपिन और सुरिकोफ, सुबारोफ और कतुजोफ की जाति को–नामशेष कर देंगे !..."

स्तालिन ने अपने भाषण में जिन महापुरुषों का नाम लिया था, वह दुनिया के राजनीति और आदर्शवाद के विशारद, साहित्य, संगीत, कविता, विज्ञान, ललितकला और युद्ध-विद्या में अद्वितीय थे। और सचमुच ही, लोगों ने अपने पूर्वजों के खून को एक बार फिर बड़ी तेजी के साथ अपनी नसों में दौड़ते हुए पाया; और पिछले ढाई हजार वर्षों से चली आने वाली अपनी वीरता के नये-नये उदाहरण युद्ध-क्षेत्र में प्रदर्शित किए। स्तालिन ने कहा :

> " अगर आक्रमणकारी जर्मन सोवियत समाजवादी गणसंघ के लोगों के विरुद्ध सर्वसंचारी युद्ध चाहते हैं, अगर जर्मन सर्वनाशी लड़ाई पसन्द करते हैं; तो वह उन्हें दी जायगी।
>
> " हमारा उद्देश्य न्यायोचित है, हमारी विजय होकर रहेगी ! "

2. मॉस्को के लोहे के चने : अगले दिन, 7 नवम्बर को लाल मैदान में लाल सेना की सालाना परेड हुई। और हर साल की तरह, स्तालिन ने लेनिन-समाधि-मंदिर पर खड़े होकर भाषण दिया। उन्होंने अपनी सेना और जनता के हर क्षेत्र में वीरतापूर्ण युद्ध की प्रशंसा करते हुए कहा :

> "इस युद्ध में हमें आज अलेक्सान्द्र, नेवस्की, दिमित्री दोन्स्की, कुज्मा मीनिन, दिमित्री पझास्की, अलेक्सान्द्र सुवारोफ और मिखाइल कतुजोफ जैसे महान् पूर्वजों की वीर मूर्तियाँ प्रेरणा दें। महान् लेनिन का विजय-ध्वज हमारे हृदयों में शक्ति भर दे।"

साथी स्तालिन ने स्वयं मॉस्को की रक्षा का संचालन किया, उन्होंने लाल सेना की सैनिक कार्रवाइयों की बागडोर अपने हाथ में ली; राजधानी में आने वाले रास्तों की मोर्चेबंदी की देख-रेख भी उन्होंने स्वयं ही की। उनकी इस निर्भीकता, अदम्य उत्साह और दूरदर्शिता ने हरएक सैनिक और सेनापति में जान फूँक दी थी।

स्तालिन का हरएक काम गणित की तरह, बिलकुल नपा-तुला होता था। वह अपने गुरु की तरह ही, परिस्थिति को तौलने में सेर-छटाँक नहीं, बल्कि रत्ती-माशे का भी अन्तर नहीं रहने देते थे। इसीलिए तो कमांडरों की माँग आने पर भी, उन्होंने बिना रिजर्व सेना के ही मुकाबला करने की आज्ञा दी थी। 6 दिसम्बर, 1941 को आखिर वह समय आ गया, जब अपार क्षति उठाकर थकी-माँदी जर्मन सेनाएँ मॉस्को के पड़ोस में आईं और उसी समय, पहले से ही तैयार रिजर्व सेना उस पर बिजली की तरह टूट पड़ी।

मॉस्को की विजय ने ढुलमुलयकीनों को भी यह मानने के लिए मजबूर कर दिया कि हिटलरी सेना अजेय नहीं है। हिटलर के ढलवाये हुए ढेर के ढेर विजय के तमगे बेकार गये। 23 फरवरी, 1949 में अपने 55वें दैनिक आदेश में, स्तालिन ने आठ महीनों के युद्ध के परिणामों का विश्लेषण करते हुए बतलाया :

> "जर्मन फासिस्त सेना के लिए अचानक और एकाएक आक्रमण करने से जो अपने अनुकूल सैनिक स्थिति प्राप्त हुई थी, वह अब खतम हो गई है। अब युद्ध का फैसला अचानक आक्रमण के सुभीते के बल पर नहीं, बल्कि लगातार की जाने वाली सैनिक कार्रवाइयों पर ही निर्भर करेगा, जो मोर्चे के पीछे की दृढ़ता, सेना का नैतिक बल, सैनिक डिवीजनों का परिमाण और योग्यता, सेना के हथियार और साधन तथा सेना के कमांडरों की संगठन की योग्यता ही है।"

स्तालिन ने द्वितीय विश्वयुद्ध में अपने को एक श्रेष्ठ सैनिक कमांडर और सैनिक प्रतिभा के धनी के रूप में साबित किया। सैनिक विज्ञान भी अब उनके लिए हस्तामलक हो गया था और वह अपने प्रतिभाशाली तरुण सेनानायकों को आगे बढ़ाते हुए, उसमें नई सूझें निकाल रहे थे। उन्होंने इस युद्ध में अचानक आक्रमण का सुभीता और लगातार सैनिक कार्रवाई के उपयोग को दिखलाते हुए, लकीर पीटनेवाले सैनिक विज्ञानियों की कितनी ही धारणाओं को झूठा साबित कर दिया।

अजेय स्तालिन के वचन और उदाहरण से उत्साहित होकर सारी सोवियत जनता ने युद्ध के लिए हर-एक क्षेत्र में काम करना शुरू किया, जिसका फल भी जल्दी ही दिखाई पड़ा। मॉस्को में फासिस्तों को हराने के बाद, सन् 1942 के मई दिवस के महोत्सव के सम्बन्ध में आदेश देते हुए, स्तालिन ने बतलाया कि लाल सेना के पास अब वह सारी चीजें मौजूद हैं, जिनसे वह दुश्मन को हराकर सोवियत-भूमि से बाहर खदेड़ सकती है। उसके पास "केवल एक चीज की कमी है, वह है–जिन प्रथम श्रेणी के सैनिक साधनों को हमारा देश तैयार कर रहा है, शत्रु के विरुद्ध उनको पूरी तौर से काम में लाने की क्षमता। इसलिए लाल सेना, उसके आदमियों, उसके मशीनगनधारियों, उसके तोपचियों, उसके मॉर्टरचियों, उसके टैंकचियों, उसके वैमानिकों और उसके सवारों के सामने युद्ध की कला को सीखना, मेहनत के साथ सीखना पहला काम है। अपने हथियारों के कल-पुर्जों को पूर्णतया समझना और इस प्रकार सीखकर, अपने काम में विशेषज्ञ बनकर शत्रु के ऊपर अचूक प्रहार करना है। केवल यही रास्ता, यही तरीका है, जिससे शत्रु को हराने की कला सीखी जा सकती है।"

स्तालिन ने अफसरों को भी एक नये प्रकार के अफसर बनने की बात बतलाते हुए, कहा था कि लाल सेना के अफसरों को ऐसा होना चाहिए कि वह अपने साधारण सैनिक के हरएक काम को खुद कर सकें। जो चीज, जो काम तुम खुद नहीं कर सकते, तुम अपने सिपाही से भी उसको करने की आशा नहीं रख सकते। युद्ध के दिनों में इसका उदाहरण एक अमरीकी पत्र-संवाददाता को मिला था। वह मोटर में बैठा मोर्चे के पास की भूमि में घूम रहा था; किसी जगह गाड़ी का पहिया कीचड़ में धँस गया और ड्राइवर ने निकालने की पूरी कोशिश की, किन्तु वह नहीं निकला। इसी समय एक रूसी सैनिक ने आकर कीचड़ को हटाकर गाड़ी को बाहर ढकेल दिया। जब संवाददाता ने उसे ठीक से देखा, तो मालूम हुआ कि वह लाल सेना का मेजर था। उसको कभी आशा नहीं हो सकती थी कि पश्चिमी राज्यों का कोई सैनिक अफसर इस तरह के काम के लिए तैयार हो सकता है और सो भी जब वह गोला-गोली की वर्षा से दूर हो !

3. स्तालिनग्राद की विजय : सन् 1942 की बसंत बीत गई, गर्मी भी आ गई, लेकिन अभी भी पश्चिमी सहयोगी द्वितीय मोर्चा खोलने के लिए तैयार नहीं थे। यद्यपि उन्होंने देख लिया था कि उनकी इच्छा के अनुसार, फासिस्तों द्वारा सोवियत खतम होने की सम्भावना नहीं है। उनको इस तरह रोड़ा अटकाते देखकर, हिटलर ने निश्चिंत होकर पश्चिमी मोर्चे की सेनाओं तथा अपनी सारी रिजर्व सेना को लाकर सोवियत के खिलाफ पूर्वी मोर्चे पर लगा दिया। अब हिटलर के सेनापतियों ने सीधे राजधानी तथा रूस के मर्म पर प्रहार करने का ख्याल हटाकर, अपनी सेनाओं को काकेशस की ओर बढ़ाया। वस्तुतः, यह उनकी चाल थी, जिसे भाँपने में स्तालिन को देर नहीं लगी। उस समय हल्ला मचा हुआ था कि जर्मन सेनाएँ अब बाकू और ग्रोज्नी के महान् तेल-क्षेत्रों को दखल करने के लिए बढ़ रही हैं। आगे उनका लक्ष्य ईरान से भारत पहुँचकर, जापानियों से मिलने का है। लेकिन, स्तालिन ने समझ लिया था कि फासिस्त पश्चिम और दक्षिण से राजधानी को घेरने में असफल होकर, अब अपने घेरे को लम्बा करके वही काम पूर्व से करना चाहते हैं और इस प्रकार, उनकी मन्शा है कि वोल्गा और उराल के औद्योगिक क्षेत्रों से सोवियत को वंचित करके मॉस्को पर आक्रमण कर, इसी साल लड़ाई को विजयपूर्वक समाप्त कर दें। इस चाल के बारे में स्तालिन ने सोवियत कमांडरों को हिदायत कर दी। जुलाई के मध्य में, सचमुच ही जर्मन ईरान और हिन्दुस्तान जाने का रास्ता छोड़कर वोल्गा की ओर मुड़ गये और स्तालिनग्राद पर आक्रमण कर दिया। लेकिन, स्तालिन ने कच्चा दूध नहीं पिया था। स्तालिनग्राद की रक्षा के लिए, वहाँ पहले से ही सेनाएँ तैयार थीं। स्तालिन पहले से ही जान लेते थे कि मोर्चे के किस भाग को मुख्य और किसको गौण मानना चाहिए। स्तालिनग्राद पर आक्रमण होते ही, क्रांति-विरोधियों से भूतपूर्व जारित्सीन की रक्षा करनेवाले, स्तालिन ने आदेश दिया कि जो भी हो स्तालिनग्राद की, वोल्गा के इस महत्त्वपूर्ण नगर की रक्षा करनी होगी। 5 अक्तूबर, 1942 को वहाँ के कमांडर को उन्होंने जो आदेश दिया था, उसकी कुछ पंक्तियाँ थीं; "मैं माँग करता हूँ कि तुम स्तालिनग्राद की प्रतिरक्षा के लिए सभी उपाय करो। स्तालिनग्राद को शत्रु के हाथों में समर्पण नहीं करना होगा।"

स्तालिनग्राद का ऐतिहासिक युद्ध शुरू हुआ। यह जिस तरह इतिहास की सबसे महत्त्वपूर्ण और बड़ी विजय है, वैसे ही यहाँ की लड़ाई भी संसार की सबसे भयंकर लड़ाई थी। लाल सेना ने बड़ी बहादुरी के साथ अपने नेता के नाम की नगरी की रक्षा की। सन् 1918 की जारित्सीन वाली युद्ध-परम्परा फिर दोहराई गई। सोवियत सैनिकों को अपनी विजय पर पूरा विश्वास था। लड़ाई जब अपनी चरम सीमा पर पहुँची हुई थी, उसी समय स्तालिनग्राद के मोर्चे के सैनिकों, सेनापतियों और राजनीतिक अफसरों ने अपने महान् नेता के पास एक चिट्ठी भेजकर प्रतिज्ञा की थी :

> "... अपनी युद्ध-ध्वजाओं और सारे सोवियत देश के सामने, हम शपथ लेते हैं कि हम रूसी बाहुबल की कीर्ति को धब्बा नहीं लगायेंगे और अन्तिम क्षण तक लड़ते रहेंगे। आपके नेतृत्व में हमारे पिताओं ने जारित्सीन की लड़ाई को जीता था और अब हम भी आपके नेतृत्व में स्तालिनग्राद के महान् युद्ध को जीतकर रहेंगे।"

यह शपथ उस समय ली जा रही थी, जबकि फासिस्ट सेनाएँ स्तालिनग्राद और काकेशस के पर्वतसानुओं में घुस आई थीं। इसी समय, सोवियत संघ क्रांति का पच्चीसवाँ वार्षिकोत्सव मना रहा था। हमेशा की तरह, अब भी उस दिन (6 नवम्बर, 1942) स्तालिन ने अपनी जनता के लिए भाषण दिया था। पिछले साल के कामों की चर्चा की और विजय में पूरा विश्वास प्रकट करते हुए, आगे के कार्य को बताया था। मोर्चे के पीछे जनता कितनी दृढ़ है और वह किस तरह सैनिक कारखानों, कोलखोजों और दूसरे स्थानों में अदम्य उत्साह के साथ काम कर रही है इसे बतलाते हुए, उन्होंने कहा था : "यह मानना पड़ेगा कि हमारे देश में इतना मजबूत और इतना संगठित पृष्ठ-भाग पहले कभी नहीं था।" उन्होंने फिर इसे दोहराया कि इन गर्मियों में हिटलरियों को जो सफलता हुई, उसका कारण है–यूरोप में दूसरे मोर्चे का अभाव। आँकड़े बताते हुए, उन्होंने कहा था कि प्रथम महायुद्ध में जब जर्मनी दोनों मोर्चों पर लड़ रहा था; जर्मनी ने अपने मित्रों के डिवीजनों को लेकर कुल 127 डिवीजन रूस के विरुद्ध भेजे थे। लेकिन आज की लड़ाई में, जबकि हिटलर को केवल एक मोर्चे

पर लड़ना पड़ रहा है, उसने प्रथम महायुद्ध से करीब-करीब दूने–240 डिवीजनों से सोवियत पर हमला किया है। पश्चिमी साम्राज्यवादियों की नियत स्पष्ट थी। उनके पास एक मित्र की साफ नियत नहीं थी, बल्कि वह मित्र बनकर पीठ में छुरी घुसेड़ने का उपक्रम कर रहे थे। स्तालिन और सोवियत की जनता को मालूम हो गया कि इस लड़ाई को केवल अपने ही बल पर जीतना है। स्तालिन ने अपनी वीर जनता के कार्यों की प्रशंसा करते हुए, उस वक्त कहा था :

"मैं समझता हूँ कि कोई भी दूसरा देश या दूसरी सेना जर्मन फासिस्त लुटेरों और उसके सहयोगी बर्बर गुंडों के इस आक्रमण से अपने को नहीं बचा सकती थी। केवल हमारा सोवियत देश और केवल हमारी लाल सेना ही है, जो ऐसे प्रहार को रोककर उसके प्रहार के सामने खड़ी ही नहीं रह सकती, बल्कि शत्रु को दबोच भी सकती है।"

अगले दिन 7 नवम्बर, 1942 के दैनिक आदेश में प्रतिरक्षा-जन-कमीसार (स्तालिन) ने कहा था :

"रोस्तोफ, मॉस्को और तिखविन में लाल सेना के प्रहार के बल को शत्रु पहले ही चख चुका है। वह दिन दूर नहीं है, जब लाल सेना के प्रहार के बल को शत्रु फिर से अनुभव करेगा। हमारी बारी भी आकर रहेगी।"

यह भविष्यवाणी जल्दी ही पूरी होने जा रही थी। ठीक समय पर, 19 नवम्बर, 1942 को स्तालिनग्राद के बाहरी हिस्सों में लाल सेना ने प्रतिरक्षा के तरीके को छोड़कर आक्रमण की नीति अपनाते हुए, शत्रु के दोनों पक्षों पर पहले आक्रमण किया–इतना जबर्दस्त आक्रमण कि आग पर जलते रेशम के धागे की तरह, वह सिमटकर, अस्त-व्यस्त होकर पीछे की ओर हटा। इसी समय, लाल सेना ने पीछे से भी आक्रमण कर दिया। यह व्यूह रचना और आक्रमण का दाव-पेंच स्तालिन ने स्वयं निश्चित किया था और उन्हीं के संचालन में उसे कार्यरूप में परिणत किया गया था। जर्मन भी जानते थे कि स्तालिनग्राद के युद्ध का फैसला उनके भाग्य का फैसला होगा, इसलिए वह भी सर्वस्व की बाजी लगाये हुए थे। लेकिन, उससे कोई फायदा नहीं हुआ। तीन लाख फासिस्त सेनाओं को एक जगह घेरना मामूली बात नहीं थी, लेकिन लाल सेना ने सिर्फ घेरा ही नहीं डाला, बल्कि उसने कितने ही भाग को नष्ट भी कर दिया और बाकी को बन्दी बनाकर, स्तालिनग्राद की जबर्दस्त विजय प्राप्त की। स्तालिनग्राद की सफलता के महत्त्व के बारे में, बाद में (सन् 1946 में) स्तालिन ने कहा था : "स्तालिनग्राद से जर्मन फासिस्त सेना के पतन का आरम्भ होता है। यह सभी लोग जानते हैं कि स्तालिनग्राद की घोर मारकाट के बाद जर्मन फिर प्रकृतिस्थ नहीं हो सके।" स्तालिनग्राद की विजय के बाद तो सचमुच ही हिटलरी सेना में भगदड़ मच गई थी; और वह आगे-आगे भागी जा रही थी, पीछे-पीछे लाल सैनिक उनको खदेड़ते हुए, अपने देश को स्वतंत्र करते जा रहे थे।

फासिस्तों की पराजय

आगे की सफलताओं का जिक्र करते हुए, स्तालिन ने 23 फरवरी, 1943 के दैनिक आदेश में सोवियत सेना और सोवियत जनता की वीरता और सफलता के बारे में कहा था : "हमारे लोग सैवस्तॉपोल और ओदेसा की वीरतापूर्ण प्रतिरक्षा, मॉस्को के नजदीक की जबर्दस्त लड़ाई, काकेशस के पर्वतों, र्झेफ इलाके और लेनिनग्राद के समीप के युद्धों एवं हमेशा के इतिहास में सबसे बड़े युद्ध–स्तालिनग्राद के सबसे बड़े युद्ध–को हमेशा याद रखेंगे। इन महान् युद्धों में हमारे वीर योद्धा, सेनापति और राजनीतिक शिक्षकों ने लाल सेना की पताकाओं को अचल कीर्ति से शोभित कर दिया है और जर्मन फासिस्त सेना पर विजय प्राप्त करने की सुदृढ़ नींव रख दी है।"–यह कहते हुए, स्तालिन ने बेकार के अभिमान के खतरे से भी सावधान करते हुए और लेनिन की सूक्ति का स्मरण दिलाते हुए कहा था :

"पहली मुख्य चीज यह है कि विजय से मतवाला नहीं होना चाहिए और न घमंड से गाल बजाना चाहिए। दूसरी चीज यह है कि विजय को सुप्रतिष्ठित करना; और तीसरी चीज है–शत्रु पर उसे समाप्त करने वाला प्रहार करना।"

4. मातृभूमि की मुक्ति : सन् 1942-43 के जाड़ों में लाल सेना का अभियान जर्मनों के हाथ से सोवियत के उन इलाकों को भी छीनने में सफल हुआ, जिन्हें युद्ध के आरम्भ में ही उन्होंने ले लिया था। इस सफलता के लिए, सोवियत राज्य ने अपने कमांडर-इन-चीफ (मुख्य सेनापति) को 6 मार्च, 1943 को 'सोवियत संघ के मार्शल' की उपाधि प्रदान की।

अभी भी, चर्चिल और उसके साथियों ने द्वितीय मोर्चा खोलने का इरादा नहीं किया था, यद्यपि वह हिटलरी सेना की भीषण पराजय देख चुके थे। यह हिटलर को सीधी मदद देना था, इसमें सन्देह नहीं। सोवियत के कर्णधार उनकी इस हरकत को खून का घूँट पीकर बर्दाश्त कर रहे थे। इससे हिटलर को फिर हिम्मत हुई और सन् 1943 की गर्मियों में उसने ओरेल और बेलगोरद से कुर्स्क के क्षेत्र में सोवियत की सेनाओं पर भीषण प्रत्याक्रमण किया। उनके ख्याल में यह मॉस्को पर आक्रमण का श्रीगणेश था। इससे पहले ही, 2 जुलाई को स्तालिन ने इस क्षेत्र के कमांडरों को सूचित कर दिया था कि जर्मन 3 और 6 जुलाई के बीच उन पर आक्रमण करने वाले हैं। शत्रु की गतिविधि जानकर, लाल सेना पहले से ही तैयार थी। जब 5 जुलाई को नाजियों ने ओरेल-कुर्स्क और बेलगोरद के क्षेत्र पर आक्रमण किया, तो सोवियत सेना के सामने उनकी एक न चली और हिटलरी योजना व्यर्थ गई। इसके बाद तो अब सारे युद्ध-क्षेत्र में लाल सेना ने प्रतिरक्षा छोड़कर, आक्रमण की नीति अख्तियार कर ली। जर्मनों के इस आक्रमण के विफल होने के बाद, 24 जुलाई को स्तालिन ने घोषित किया : "इस फासिस्ती टॉय-टॉय-फिस्स ने उस पोवाड़े को झूठा साबित कर दिया है जिसमें कहा जाता था कि गर्मियों में जर्मन हमेशा आक्रमणात्मक सैनिक कार्रवाई में सफल होते हैं और सोवियत सेनाएँ पीछे हटने के लिए मजबूर होती हैं।" सफलता के बाद, लाल सेना शत्रुओं को नष्ट करती-भगाती बराबर आगे बढ़ती रही। 5 अगस्त को उसने अपने हाथ में ओरेल और बेलगोरद ले लिये, जिसके सम्मान में राजधानी में बहादुर सेना को तोपों की सलामी दी गई। इसके बाद तो हरएक महत्त्वपूर्ण विजय पर राजधानी में तोपें दगने लगीं, जिसे सुन-सुनकर राजधानी की जनता फूली नहीं समाती थी। स्तालिन ने कहा था : "अगर स्तालिनग्राद का युद्ध जर्मन फासिस्त सेना के पतन की भविष्यवाणी करता है, तो कुर्स्क के युद्ध ने फासिस्तों को सर्वनाश के मुँह पर पहुँचा दिया है।"

नवम्बर सन् 1943 तक, जर्मनों के हाथों से दो-तिहाई सोवियत को फिर से मुक्त कर दिया गया। स्तालिन अच्छी प्रकार जानते थे कि यह मुक्ति अस्थायी नहीं है। इसीलिए, लाल सेना एक तरफ नये भू-भागों को जर्मनों से मुक्त करती जा रही थी और दूसरी तरफ साधारण जनता एक निश्चित योजना के अनुसार, पुनर्वास और पुनर्निर्माण के काम में लगी थी। 19वीं सदी के आरम्भ में, रूस ने सुवारोफ जैसे महान् सेनापति को जन्म दिया था, जिसकी विजयवाहिनी के घोड़ों की टापें इटली और आल्प्स पर भी सुनाई दी थीं। उसके युद्ध-विज्ञान का सोवियत-काल में पूरी तौर से सम्मान हुआ और, अंग्रेजों के विक्टोरिया क्रास की तरह, 'सुवारोफ तमग़े' को वीरता का भारी पारितोषिक बनाया गया। 6 नवम्बर, 1943 को यह तमगा बड़े सम्मानपूर्वक स्तालिन को प्रदान किया गया।

शत्रु भाग रहे थे, लेकिन वह भागकर फिर संगठित होने का मौका न पायें इसलिए जगह-जगह गोरिल्ला उन पर भीषण प्रहार करके, उनकी अपार क्षति कर रहे थे। स्तालिन ने उन्हें आदेश दिया था कि शत्रु की पाँतों में गोरिल्ला-युद्ध की आग भड़का देनी चाहिए, उसके सैनिक अड्डों को नष्ट करके, जर्मन फासिस्त गुंडों का सर्वनाश कर देना चाहिए। गोरिल्ला-युद्ध अब और भी प्रचंड हो उठा, जिसके कारण फासिस्त सेना किंकर्तव्यविमूढ़ हो गई। उसको हर जगह अपने शत्रुओं का खतरा दिखाई पड़ता था।

अब इसमें जरा भी शुबहा नहीं रह गया था कि इंग्लैंड और अमरीका चाहे द्वितीय मोर्चा न भी खोलें, सोवियत सेना अकेली ही यूरोप से फासिस्तों को खतम करने के लिए पर्याप्त है। साम्राज्यवादी उसकी इस तरह की पराजय को कभी पसन्द नहीं कर सकते थे, क्योंकि यदि लाल सेना सारे यूरोप को फासिस्तों से मुक्त करती, तो उसके साथ-साथ रोम, पेरिस, बर्लिन और दूसरी राजधानियों में भी जनवादी मुक्ति के झंडे फहर जाते। इसीलिए 1943 में, अब पश्चिमी सहयोगियों ने भी तत्परता दिखानी शुरू की। उन्होंने उत्तरी अफ्रीका और इटली

के खिलाफ जोर की लड़ाई लड़नी शुरू की। और साथ ही, उनके बमवर्षकों ने जर्मनी के युद्ध-सम्बन्धी औद्योगिक केन्द्रों पर आक्रमण करने शुरू कर दिये। फासिस्त शक्ति के ध्वंस का पहला जबर्दस्त परिचय उस समय देखने को मिला, जबकि सितम्बर सन् 1943 में इटली ने बिना शर्त आत्मसमर्पण कर दिया। अब हिटलरी सेना पश्चिम में अकेली रह गई। पूर्व में अपने फासिस्त-बन्धुओं की सहायता के नाम पर, अपने चिरपोषित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जापान अब भी बड़े जोर-शोर के साथ लड़ रहा था। भारत अब भी उसके खतरे से बाहर नहीं था। बर्मा, इण्डोनेशिया तक ही नहीं, बल्कि चीन का भी अधिकांश भाग उसके हाथ में था।

5. तेहरान कान्फरेन्स और पुनर्निर्माण का आरम्भ (1943) : लाल सेना की सफलताओं ने पश्चिमी साम्राज्यवादियों के सिर से एक भय के भूत को दूर कर दिया था, लेकिन साथ ही दूसरा भूत उनके सिर पर सवार हो गया—कहीं बोल्शेविज्म सारे यूरेशिया को उदरसात् न कर ले ! इससे बचने के लिए, उन्होंने नवम्बर सन् 1943 में तेहरान में कान्फरेंस की, जहाँ स्तालिन, अमरीका के प्रेसीडेंट रूजवेल्ट और इंग्लैंड के महामंत्री चर्चिल ने मिलकर, आपस में बातचीत की और जर्मनी के विरुद्ध लड़ने तथा युद्धोपरान्त सहयोग के सम्बन्ध में तीनों शक्तियों ने एक समझौता किया।

हम यह बतला चुके हैं कि सोवियत राष्ट्र युद्ध के आखिरी वर्षों में केवल लड़ाइयाँ लड़कर विजय ही प्राप्त नहीं कर रहा था, बल्कि इसी समय फासिस्तों द्वारा ध्वस्त कल-कारखानों, लोहे के भट्टों, पनबिजली-स्टेशनों की लगातार मरम्मत करके उनको फिर से चालू करने में भी लगा था। इसी लड़ाई के समय, चेलियाबिन्स्क और उज्बेकिस्तान में नये फौलाद के कारखाने तथा तगिल, मगनितोगोर्स्क और दूसरे स्थानों में नये धौंकू भट्टे अधिक लौह-उत्पादन के लिए खड़े किये गये। स्तालिन्स्क में अल्मोनियम का नया कारखाना स्थापित होकर, काम करने लगा। स्तालिन्स्क, चेलियाबिन्स्क आदि में नये पनबिजली-स्टेशन काम करने लगे। स्तालिन जिस तरह सम्मान और बढ़ावा देकर सैनिकों में नई रूह फूँक रहे थे, उसी तरह उद्योग-क्षेत्र के कर्मठ सैनिकों को भी वह परम सम्मान का पात्र समझते थे। युद्ध की कठिन परिस्थिति में भी एक विशाल धौंकू भट्टे को मगनितोगोर्स्क के कमकरों ने बहुत जल्दी खड़ा कर दिया था, उसके लिए भी उन्होंने दिसम्बर सन् 1943 में उन्हें बधाई भेजी थी। उन्होंने येनाकियेवो के लौह-फौलाद के कारखाने के मजदूरों को भी इसी तरह का अभिनंदन भेजा। स्तालिन ने मुक्त होने वाले भू-भागों का आर्थिक तौर से, फिर से निर्माण करने की ओर खास ध्यान दिया। उनकी प्रेरणा से, पार्टी की केन्द्रीय कमिटी और राज्य की जन-कमीसार-परिषद् ने अगस्त सन् 1943 में जर्मन-अधिकार से मुक्त किए गये इलाकों के आर्थिक पुनर्वास के लिए आवश्यक उपायों को अख्तियार करने का निश्चय किया, जिससे पुनर्निर्माण और पुनर्वास का काम बहुत तेजी से बढ़ा। सोवियत जनता हर तरह से सहयोग करने के लिए तैयार थी। जिस तरह प्रतिरक्षा के उद्योग को उसने आगे बढ़ाया, उसी तरह अब साथ-साथ पुनर्वास के काम को भी हाथ में लिया। पुनर्वास का काम समाजवादी व्यवस्था में जितनी आसानी से किया जा सकता है, उतना पूँजीवादी व्यवस्था में करना सम्भव नहीं है। भारत इसका अच्छा उदाहरण है। आज 6 वर्ष बाद भी, पाकिस्तान से आये हुए अपने विस्थापितों का हम ठीक से प्रबन्ध नहीं कर पाये हैं, जबकि हमारे देश ने युद्ध की ध्वंसलीला भी नहीं देखी और हमारे सभी आर्थिक साधन सुरक्षित रहे हैं। तो भी देश-विभाजन के कारण, सन् 1947 के अन्त में भीषण समस्या उठ खड़ी हुई। सोवियत जनता का सामूहिक स्वार्थ वैयक्तिक स्वार्थ से अलग नहीं, बल्कि सामूहिक स्वार्थ का अभिन्न अंग होने से व्यक्ति समाज के हितों में ही अपने हितों को मानता है। यही कारण था कि वहाँ के लोग सामूहिक स्वार्थों की रक्षा के लिए ढिलाई नहीं दिखा सकते थे। हिटलर ने जिन इलाकों पर अधिकार किया था, वहाँ पर उसने चाहा था कि किसान कोलखोजों की जगह फिर वैयक्तिक तौर से अपनी खेती करें, इसी तरह दूसरे व्यवसायों में भी वैयक्तिक स्वार्थों को उसने पुनः स्थापित करने की कोशिश की थी। जब उसमें उसे सफलता नहीं हुई, तो उसने लोमड़ी के खट्टे अंगूर की तरह, यह कहना शुरू किया कि इन लोगों में आंतरिक बढ़ावा और अध्यवसाय की भावना ही नहीं है। वैयक्तिक बढ़ावा और अध्यवसाय से सामाजिक बढ़ावा और अध्यवसाय व्यक्ति के लिए भी सबसे अधिक हित की बात है, यह सोवियत के नागरिक अपने सत्ताईस वर्षों के जीवन से अच्छी तरह समझ गये थे। कोलखोजों का समृद्ध जीवन

क्या वैयक्तिक किसानी से कभी प्राप्य हो सकता था ? क्या वैयक्तिक किसान गाँवों में बिजली की रोशनी और जीवन के आधुनिक सुभीतों के पाने का स्वप्न भी देख सकते थे ?

स्तालिनी संविधान ने सोवियत गणसंघ को सर्वतंत्र-स्वतंत्र गणों का संघ मानते हुए, उन्हें अधिकार दे रखा था कि वह स्वेच्छापूर्वक संघ से सम्बद्ध हैं और जब चाहें तब उनको संघ से अलग होने का अधिकार है; लेकिन सोवियत आर्थिक ढाँचे, सांस्कृतिक नवनिर्माण तथा जातियों के प्रति स्तालिन की दूरदर्शितापूर्ण नीति ने उनके दिल से अलग होने के ख्याल को ही निकाल दिया था। मार्च सन् 1944 में सोवियत सरकार ने एक और बड़ा कदम उठाया, जबकि संघ के सोलहों गणराज्यों को प्रतिरक्षा और वैदेशिक विभाग के अपने-अपने मंत्रालय रखने की इजाजत दे दी। युद्ध ने सोवियत की भिन्न-भिन्न जातियों को और भी घनिष्ठता से एक-दूसरे के साथ सम्बद्ध कर दिया। पिछड़ी हुई जातियों में पंचवार्षिक योजनाओं ने जिस तरह हजारों की तादाद में इंजीनियर, विशेषज्ञ आदि पैदा कर दिय थे, वहाँ अब इन जातियों के सैकड़ों जवान 'सोवियत-संघ-वीर' के सर्वोच्च वीरतासूचक सोने के पचकोने तारे वाले तमगों को अभिमान के साथ धारण कर रहे थे, उनमें कितने ही ऊँचे-ऊँचे अफसरों के पदों पर पहुँचे थे।

6. बर्लिन की ओर : सन् 1944 के नवम्बर में, जब सोवियत की जनता अपनी महान् क्रांति का 27वाँ वार्षिकोत्सव मना रही थी, स्तालिन ने अपने भाषण में बतलाया कि सोवियत की सारी भूमि जर्मन फासिस्तों से मुक्त की जा चुकी है। यही नहीं, बल्कि सोवियत सेना अब जर्मनी और उसके सहयोगियों के देश में घुसकर दुश्मनों का सफाया कर रही है। इससे पहले, 20 जून (सन् 1944) को 'मॉस्को प्रतिरक्षा-तमगा' सबसे पहले मार्शल स्तालिन को प्रदान किया गया। 26 जुलाई, 1944 को 'विजय-तमगा' भी स्तालिन को दिया गया। स्तालिन की नीति ने सोवियत को अमर विजय प्रदान की थी, क्या यह कहने की आवश्यकता है ? सन् 1944 में फासिस्तों के सहयोगी देशों रूमानिया, फिनलैंड और बल्गेरिया ने आत्मसमर्पण करके ही संतोष नहीं किया, बल्कि उन्होंने अपनी बन्दूकों की नलियों को हिटलरी सेनाओं की ओर फेर दिया। इसी साल, हंगरी भी अब-तब कर रहा था। सोवियत सेना, जर्मनी को एक धक्के में गिराकर के फ्रांस तक के देशों को मुक्त कर, अतलान्तिक के तट पर पहुँचने के लिए बिलकुल सक्षम थी। अब चर्चिल को दूसरे मोर्चे को और अधिक रोके रखना भारी खतरे की बात मालूम होने लगी। इस प्रकार, जून सन् 1944 में दूसरा मोर्चा खोलते हुए, अमरीकी और अंग्रेज सेनाएँ उत्तरी फ्रांस के तट पर उतरीं। जर्मन फासिस्त अब दोनों ओर से पिटने लगे। स्तालिन ने 6 नवम्बर, 1944 के क्रांति-महोत्सव-सम्बन्धी अपने भाषण में ही पुकार की—"बर्लिन की ओर !" लाल सेना ने अब बड़ी तेजी के साथ बर्लिन का रास्ता पकड़ा; पोलैंड की राजधानी (वारसा) को मुक्त कर दिया। सेना लाल पूर्वी प्रशिया के भीतर घुसी। सारे मोर्चे पर जर्मन फासिस्त बुरी तौर से पिटने लगे। अन्तिम विजय नजदीक दीख पड़ रही थी। इसी समय फरवरी सन् 1945 में, तीनों देशों के प्रमुख नेता याल्टा (क्रीमिया) में मिले, जिसमें हिटलरी जर्मनी को शीघ्रातिशीघ्र पराजित करने के लिए सैनिक तरीकों की योजना के बारे में विस्तृत विचार हुआ। इसी सम्मेलन में यह भी निश्चय हुआ कि सोवियत संघ जापान के विरुद्ध भी युद्ध में सम्मिलित होगा।

23 फरवरी, 1945 को जिस वक्त लाल सेना का 27वाँ जन्मोत्सव मनाया जा रहा था, उस वक्त तक उसने बड़ी-बड़ी विजएँ प्राप्त की थीं। जनवरी और फरवरी के चालीस दिनों में, बिजली की चाल से चलने वाले अपने आक्रमणों द्वारा सोवियत सेना ने सारे पोलैंड को मुक्त कर दिया; चैकोस्लोवाकिया का अधिकांश भाग भी मुक्त हो गया और जर्मन सिलेसिया के अतिरिक्त, पूर्वी प्रशिया का भी बहुत-सा भाग लाल सेना के हाथों में था। हंगरी के रूप में, हिटलर का अन्तिम यूरोपीय साथी भी अब आत्मसमर्पण कर चुका था। 23 फरवरी, 1945 के दैनिक आदेश में साथी स्तालिन ने कहा था : "जर्मनों पर पूर्ण विजय की प्राप्ति अब बिलकुल नजदीक है।" लाल सेना ने वियना (आस्ट्रिया) पर अधिकार करके जर्मनी के दक्षिणी दुर्ग को खतम कर दिया। इसी समय ओडर पार करती हुई, लाल सेना बर्लिन के पास पहुँचने लगी। स्तालिन ने कहा :

"अपने विजय-ध्वज को बर्लिन पर फहराओ !"

आखिरी प्रहार होने ही वाला था। इसी समय 21 अप्रैल, 1945 को पोलैंड-सोवियत मित्रता-संधि पर स्तालिन

ने हस्ताक्षर किए। पश्चिमी साम्राज्यवादी पोलैंड को अब भी पिछले महायुद्ध की तरह, अपने हाथ की कठपुतली बनाकर सोवियत-विरोधी अड्डे के रूप में इस्तेमाल करना चाहते थे और उन्होंने कितने ही समय तक इस मित्रता को न होने देने के लिए कोशिश भी की। प्रतिगामियों की भगोड़ी सरकार को लन्दन में शरण देकर, चर्चिल उनकी पीठ ठोकता रहा; लेकिन अन्त में उसे सफलता नहीं मिली। सोवियत के लिए यह संधि एक बड़ी जबर्दस्त राजनीतिक विजय थी। इसी समय भाषण देते हुए, साथी स्तालिन ने कहा था :

"स्वतंत्रताप्रेमी जातियाँ, खास कर स्लाव जातियाँ बहुत समय से अधीरतापूर्वक इस संधि की प्रतीक्षा कर रही थीं। यह संधि यूरोप में समान शत्रु के विरुद्ध संयुक्त मोर्चे के दृढ़ होने की सूचना देती है।'

महान् विजय

7. हिटलर का अंत : 2 मई, 1945 को महान् कमांडर-इन-चीफ के दैनिक आदेश को प्रसारित करते हुए, मॉस्को रेडियो ने कहा था कि सोवियत सेना ने "बर्लिन की जर्मन सेनाओं को पूर्ण तौर से पराजित कर दिया है और आज 2 मई को जर्मन साम्राज्यवाद के केन्द्र और जर्मन आक्रमण की पीठ–जर्मनी की राजधानी बर्लिन–पर अधिकार कर लिया है।" लाल सेना ने स्तालिन की आज्ञा को पूरा किया। बर्लिन पर अपनी विजय-ध्वजा फहरा दी। इस समय तक हिटलर अपने गिने-चुने अनुयायियों के साथ अपने तहखाने में आत्महत्या कर चुका था। जर्मनी के लिए अब दूसरा रास्ता नहीं था, इसलिए 8 मई, 1945 को जर्मन सेना के उच्च प्रतिनिधियों ने बिना शर्त आत्मसमर्पण कर दिया। 9 मई के दिन को स्तालिन ने विजय-दिवस घोषित किया। उस दिन स्तालिन ने अपने लोगों को सम्बोधित करके, कहा था :

" जर्मनी पर विजय का महान् दिवस आ गया है। लाल सेना और हमारे सहयोगियों की सेनाओं के प्रहार से मजबूर होकर, फासिस्त जर्मनी ने घुटने टेककर बिना शर्त के आत्मसमर्पण कर दिया है। ··· अब यह कहने के लिए पूरा कारण है कि जर्मनी की अन्तिम पराजय का ऐतिहासिक दिन, जर्मन साम्राज्यवाद पर हमारी जनता की महान् विजय का दिन आ गया है।

" मेरे प्यारे देशबन्धुओ और देशबहिनो ! विजय के लिए अभिनंदन ! "

सोवियत जनता ही नहीं, बल्कि सारी मानवता ने उस दिन सुख की साँस ली, जब दुनिया के रेडियो-स्टेशनों ने जर्मनी की पूर्ण पराजय को घोषित किया। इस पराजय का सबसे अधिक श्रेय स्तालिन और उनकी जनता को ही है। उन्होंने इस युद्ध के समय अपनी सर्वांगीण प्रतिभा का पूर्ण उपयोग किया था। पंचवार्षिक योजनाओं की तरह, इस समय भी कितनी ही नई-नई सैनिक प्रतिभाओं को खोज निकालना स्तालिन का ही काम था। इस युद्ध से पहले बुल्गानिन, वासीलेव्स्की, कोनेफ, गवरोफ, जुकोफ, वतूनिन, चेर्न्याखोव्स्की, अन्तोनोफ, सोकोलोव्स्की, मेरेत्स्तोफ, मालिनोव्स्की, वरोनोफ़, तोल्बुखिन, याकोव्लेफ़, मालिनिन, गलित्स्की, त्रोफिमेन्को, गोर्बातोफ, श्तेमेन्को, कुरासोफ, वेरशिनिन, गलोवानोफ, फदोरेंको, रिबालँको, बगदानोफ, कतुकोफ, लेल्युशेंको आदि अनेक प्रतिभाशाली सेनापतियों को कौन जानता था ? उन्हें अपना जौहर दिखलाने का मौका स्तालिन ने जितनी आसानी से दिया, क्या पूँजीवादी राष्ट्र वैसा कर सकते थे ? उनके यहाँ तो ये पैंतीस-चालीस वर्ष के छोकरे अभी मेजर और कर्नल तक ही पहुँचने के अधिकारी थे; जनरल और मार्शल होने के लिए तो साठ के नजदीक होना जरूरी था।

स्तालिन के आदेश के अनुसार 24 जून, 1943 को मॉस्को के लाल-मैदान में विजय-परेड हुई। इस समय लाल सेना के विजय-ध्वजों और पराजित फासिस्तों की पताकाओं के साथ जो विशाल सैनिक प्रदर्शन हुआ, वह मेरे और सभी दर्शकों के लिए अद्वितीय था। लेनिन-समाधि-मंदिर पर खड़े, इस प्रदर्शन को देखते हुए स्तालिन कितने मुग्ध हुए होंगे, इसे आसानी से समझा जा सकता है। सोवियत जनता और उसका एक-एक बच्चा जानता था कि इस विजय-प्रदर्शन को रूप देने में सबसे बढ़कर जिनका हाथ है, वह महान् स्तालिन ही हैं। सोवियत-जनता और सरकार अपने महान् नेता का सम्मान करते नहीं थकती थी। परेड के दो दिन बाद, 26 जून को राज्य ने मार्शल स्तालिन को एक और 'विजय-तमगा' प्रदान किया और अगले दिन (27 जून को) उन्हें 'जनरलस्सिमो'

(परम सेनापति) की उपाधि दी।

8. जापान हारा : फासिस्त जर्मनी की पूर्ण पराजय हुई। जापान अब भी अमरीका और इंग्लैंड को परेशान किए हुए था। उन्हें दिखाई नहीं पड़ रहा था कि कैसे भारत की सीमा तक डटी जापानी सेना को हटाया जाय। इसी समय (जुलाई सन् 1945) त्रिदली सम्मेलन हुआ। ट्रूमैन, चर्चिल और स्तालिन की बातचीत हुई। अमरीकी प्रेसीडेंट रूजवेल्ट के अकस्मात् मर जाने से उनके सहकारी ट्रूमैन अब अमरीका के राष्ट्रपति थे। अमरीका और इंग्लैंड ने जापान से बिना शर्त हथियार रखने की माँग पेश की थी, लेकिन उसने ऐसा करने से इन्कार कर दिया था। दोनों राष्ट्र समझने लगे थे कि यदि सोवियत ने हस्तावलम्ब न दिया, तो जापान अभी भी टेढ़ी खीर बना रहेगा। सोवियत ने जापान के विरुद्ध युद्ध में शामिल होना स्वीकार किया और उसके साथ साम्राज्यवादियों ने भी लम्बी बाँहों को समेटने का वचन दिया।

9 अगस्त, 1945 के सवेरे सोवियत स्थल और नौसेना ने जापान के साथ लड़ाई छेड़ दी। सोवियत के मुकाबले के लिए ही लड़ाई के भी पहले से जापान की मशहूर 'क्वान्तुङ' सेना मंचूरिया में रखी गई थी। उसकी भी वही हालत हुई जो लाल सेना के सामने पश्चिम में हिटलरी सेना की हुई थी। सोवियत सेना ने मंचूरिया, दक्षिणी सखालिन, उत्तरी कोरिया और कुरिल द्वीपपुंजों से जापानी सेना को मार भगाया। जापान के लिए बिना शर्त आत्मसमर्पण के सिवा और कोई रास्ता नहीं रह गया। वह वैसा करने ही जा रहा था कि इससे पहले चर्चिल के समर्थन से ट्रूमैन ने सोवियत से बिना पूछे ही हिरोशिमा (6 अगस्त) और नागासाकी (9 अगस्त) पर अणुबम गिरा दिया। जब जापान की पराजय निश्चित थी, तो ऐसे नरसंहारी अस्त्र का दो बड़े-बड़े नगरों की साधारण जनता पर गिराना यही बतलाता है कि साम्राज्यवाद कहाँ तक आततायी बन सकता है। साथ ही, जनता के हितों की परवाह न करते हुए, उसने सोवियत के विरुद्ध शीत-युद्ध आरंभ भी कर दिया। उसी समय दोनों शहरों में स्त्री-बच्चों-बूढ़ों सहित पचास-पचास हजार आदमी काल के गाल में चले गये और कुछ ही महीनों बाद उतनी ही संख्या में और भी आदमी बुरी तौर पर मरे। इस आततायीपन को मानवता और जापानी भी कभी नहीं भूल सकते। क्या ट्रूमैन और चर्चिल हिटलर के विरुद्ध भी अणुबम का प्रयोग कर सकते थे ? हरगिज नहीं; क्योंकि वह जानते थे कि ऐसा करने पर हिटलर के उड़न्तू बम भारी परिमाण में विषैली गैसों और कीटाणुओं को इंग्लैंड पर गिरायेंगे, जिससे लन्दन जैसे शहरों में कोई रोने वाला भी नहीं बच पायेगा।

अन्त में 2 सितम्बर, 1945 को जापानी सेना ने भी बिना शर्त के आत्म-समर्पण कर दिया।

इस समय भी स्तालिन ने शांति पर ही जोर दिया और रेडियो द्वारा घोषित किया :

> "अब से हम अपने देश को पश्चिम में जर्मन और पूर्व में जापान के आक्रमण के भय से मुक्त समझ सकते हैं। सारी दुनिया के लोगों के लिए चिरप्रतीक्षित विजय आज आ गई है !"

10

महामानव (सन् 1945-53)

1. पुनर्निर्माण : युद्ध के समय सोवियत समाजवादी व्यवस्था ने अपने को पूँजीवादी व्यवस्था से कहीं श्रेष्ठ साबित कर दिया था। स्तालिन के शब्दों में :

> "युद्ध के तजर्बे ने सिद्ध कर दिया है कि सोवियत व्यवस्था केवल शांतिपूर्ण निर्माण के समय ही देश के आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के संगठन के लिए सर्वश्रेष्ठ व्यवस्था नहीं है, बल्कि युद्ध के समय शत्रु के साथ प्रतिरोध करने के लिए, जनता की सारी शक्ति को संचालित करने के लिए भी यही सर्वश्रेष्ठ व्यवस्था है।··· अक्तूबर-क्रांति से उत्पन्न समाजवादी व्यवस्था ने हमारे लोगों और हमारी सेनाओं को बल प्रदान कर महान् और अजेय बना दिया है।"

कृषि के हथियारों, उपयोगी पशुओं तथा दूसरे साधनों का इतने भारी परिमाण में नष्ट होना और 70 लाख नर-नारियों का युद्ध में मारा जाना तथा 2 करोड़ का हताहत होना बतलाता है कि सोवियत भूमि को यह विजय कितनी महँगी पड़ी थी। युद्ध के कारण, परती पड़ गई करोड़ों एकड़ जमीन जोतने के लिए आदमियों का अकाल था। अगर वैयक्तिक खेती का बोलबाला होता तो देहात के पुनर्वास में एक युग लग जाता, लेकिन सोवियत में पंचायती खेती की व्यवस्था थी। नई मशीनों की सहायता से उजड़े गाँवों को आबाद करने के लिए सामूहिक श्रम तैयार था। जैसे-जैसे युद्ध की आवश्यकताएँ कम हुईं, वैसे ही वैसे युद्ध के लिए माल तैयार करनेवाले कारखाने अब शान्ति के समय के उपयोग की चीजों को पैदा करने में लग गये और पुनर्निर्माण का काम और जोरों से चल पड़ा।

इसके लिए चतुर्थ पंचवार्षिक योजना तैयार की गई, जिसके बारे में स्तालिन ने 9 फरवरी, 1946 को अपने निर्वाचन-क्षेत्र मॉस्को के वोटरों के सामने भाषण करते हुए कहा था कि इसका लक्ष्य टूटे-फूटे की मरम्मत करना ही नहीं, बल्कि अपने देश के उद्योग तथा कृषि-सम्बन्धी उपज को युद्धपूर्व के तल से भी आगे बढ़ाना है। अन्त में 18 मार्च, 1946 को महासोवियत (पार्लामेण्ट) ने चतुर्थ पंचवार्षिक योजना (सन् 1946-50) को स्वीकृति दी। इसके सम्बन्ध में पार्लामेन्ट में भाषण देते हुए, योजना-कमीशन के अध्यक्ष ने कहा था :

> "... हमारी पंचवार्षिक योजना का लक्ष्य है—वर्गहीन समाजवादी समाज का निर्माण और देश को क्रमशः आर्थिक समाजवाद में परिवर्तित करना। उसका लक्ष्य है—सोवियत संघ के मूलभूत आर्थिक कर्तव्य को पूरा करना, यानी प्रधान पूँजीवादी देशों के, वहाँ की जनसंख्या के प्रतिपुरुष औद्योगिक उत्पादन के, तल पर पहुँचना ही नहीं बल्कि आगे बढ़ जाना। सोवियत संघ की कृषि और कल-कारखानों—राष्ट्रीय अर्थनीति—की पुनःस्थापना की यह पंचवार्षिक योजना उक्त दिशा में एक और कदम है। हमारा झंडा मार्क्स-एंगेल्स-लेनिन-स्तालिन के वैज्ञानिक साम्यवाद का झंडा है। इस झंडे के नीचे साम्यवाद की ओर बढ़ते हुए, हम नई विजय प्राप्त करेंगे।"

प्रकृति का कायाकल्प

लेकिन, युद्धोत्तर पंचवार्षिक योजना के चार वर्षों और तीन महीनों में ही पूरी हो जाने से, युद्ध से विध्वस्त सोवियत के पश्चिमी भाग के पुनर्निर्माण से ही स्तालिन संतुष्ट नहीं थे। उनकी निगाहें समय के क्षितिज पर दूर कम्युनिस्ट समाज के उदय पर लगी हुई थीं, उनका मस्तिष्क कम्युनिस्ट समाज की स्थापना की मंजिलें पूरी करने का पथ निश्चित करने में और उसकी नींवें मजबूत करने में व्यस्त था। उसके लिए उत्पादन-शक्तियों और साधनों के विशालतम प्रसार की आवश्यकता थी और इस विशालतम प्रसार के लिए जरूरी था कि उत्पादन और उत्पादन के साधनों के विकास के आड़े आने वाली प्राकृतिक बाधाओं पर विजय प्राप्त की जाये, प्रकृति के नियमों का मानवता के हित में उपयोग किया जाये और उनसे शक्ति हासिल की जाये, इसी शक्ति से प्रकृति का कायाकल्प किया जाये।

यह विचार एकदम नया नहीं था। विज्ञान की प्रगति के साथ-साथ, जैसे-जैसे मानव कुदरत के नियमों से परिचित होता आया है, वैसे-वैसे इन्हीं नियमों के उपयोग के द्वारा प्रकृति का कायाकल्प करने की उसकी कल्पनाओं में रंग भरते चले गये हैं, उनमें वास्तविकता आती गई है। लेकिन सदैव ही, समाज की वर्ग-व्यवस्था और शासक-वर्गों के यथार्थ उनके विकास पर एक बेड़ी बनते रहे हैं। आज अमरीका का शासक वर्ग जैसे वैज्ञानिकों को मौत की कुर्सियों पर बैठा रहा है, बुद्धिजीवियों और लेखकों को अपना शिकार बना रहा है और समाज के निर्माण की जगह विश्व-संहार की योजनाएँ बनाकर मानव सभ्यता और संस्कृति का दुश्मन बन गया है, इसी प्रकार हर एक शासक-वर्ग एक समय मौत के पंजे की तरह अपने समकालीन समाज पर जकड़ता रहा है। इसीलिए, मानवता के इन संपनों को मूर्त रूप देने के लिए सबसे पहला महान् काम था—वर्ग-शोषणहीन समाजवादी राज्य की स्थापना। लेनिन और स्तालिन के नेतृत्व में इसे सम्पन्न किया जा चुका था। स्तालिन के नेतृत्व में इस समाजवादी राज्य को सुदृढ़ बना लिया गया था। वह जमीन तैयार हो चुकी थी और अब

प्रश्न था—मानवता के उन चिरपोषित सपनों को मूर्त रूप देने का। यह एक नया और युगान्तरकारी कदम था। स्तालिन इसी की योजना बनाने में व्यस्त थे।

2. युगान्तरकारी महान् निर्माण-योजनाएँ : अठारहवीं सदी के अन्त में, एक रूसी इंजीनियर ग्लूखोवस्की ने जार के सामने दो योजनाएँ रखी थीं। पहली योजना थी—आमूदर्या नदी को उजबोई नदी की नहर से मिलाकर, कास्पियन सागर की ओर मोड़ देने की। दूसरी योजना थी—बालतिक, कास्पियन और अरल सागरों को एक-दूसरे से सम्बद्ध कर देने की। अलेक्सान्द्र बोईकोफ ने कहा था कि रेगिस्तानों की सिंचाई करके मनुष्य पेड़-पौधे उगा सकता है, फसलों की पैदावार बढ़ा सकता है। वासिली दोकुचायेफ ने नदियों के बहाव की दिशा बदलकर, उसकी नमी का उपयोग करने की योजना रखी थी। जनता की उन दिनों यह धारणा बन गई थी कि हर तीन सालों के बाद एक सूखा पड़ता ही है। इसके विरुद्ध, क्लीमैंत तिमिरियाजेफ ने गेहूँ की एक बाल की जगह दो बालें उपजाने की एक योजना रखी थी। इवान मिचूरिन ने कहा था : "हम प्रकृति की कृपा पर निर्भर नहीं रह सकते, उसे हमें प्रकृति के हाथों से छीन लेना चाहिए।"—और, जार ने इन सबको 'पागल स्वप्नवादी' घोषित कर दिया था, उनकी योजनाओं पर अमल करने का तो कोई प्रश्न ही नहीं था।

पर, स्तालिन उनके महत्त्व को जानते थे और उनको सम्पन्न करने के लिए आवश्यक परिस्थितियाँ भी समाजवादी समाज के रूप में उनके नेतृत्व में तैयार हो चुकी थीं। स्तालिन ने इन योजनाओं और योजनाकारों को उचित सम्मान दिया और उनके आधार पर वैसी ही और नई योजनाओं को प्रस्तावित किया। सन् 1924 में ही, स्तालिन ने स्टेपीज के अर्द्ध-रेगिस्तानों और दक्षिण-पूर्व के रेगिस्तानों के सूखे प्रदेश की सिंचाई की योजना रखते हुए, कहा था :

> "वोल्गा प्रदेश में बिलकुल स्थायी अन्नभंडार के एक ऐसे आधार के बिना हम कुछ नहीं कर सकते, जो मौसमों की निरंकुशता से कतई स्वतंत्र हो और बाजार के लिए लगभग 3,60,00,00,000 सेर अनाज की पूर्ति कर सके।"

लेनिन ने कहा था : "सोवियत शासन+सारे देश का विद्युतीकरण=कम्युनिज्म।"

सोवियत सरकार का सारा निर्माण-कार्य इसी राह पर चलकर हुआ है। सन् 1950 में, मंत्रियों की कौन्सिल ने पाँच विशालतम पन-बिजली के केन्द्र बनाने का फैसला लिया था। इन केन्द्रों का निर्माण सन् '57 तक पूरा होने की योजना है। इनके अलावा, प्रकृति के कायाकल्प के लिए सिंचाई और कृत्रिम वनों की पेटियों की योजनाएँ भी बनाई गईं।

वोल्गा पन-बिजली-शक्ति केन्द्र

वोल्गा यूरोप की सबसे बड़ी नदी है। उसका महत्त्व सोवियत संघ के लिए उतना ही है, जितना कि हमारी सभ्यता के विकास में गंगा का। सदियों से वहाँ की जनता वोल्गा का पूरा-पूरा उपयोग करने का स्वप्न देख रही थी। पर, वह समाजवादी समाज में ही, स्तालिन के नेतृत्व में ही सम्भव हो सका है।

इस योजना के अन्तर्गत दो पन-बिजली-शक्ति केन्द्र बनेंगे। पहला—कुई विशेफ पन-बिजली-केन्द्र और दूसरा, स्तालिनग्राद केन्द्र होगा। इन दोनों के फलस्वरूप, मॉस्को को लगभग 10 अरब किलोवाट बिजली मिलेगी और मॉस्को संसार का सबसे बड़ा बिजली-शक्ति का केन्द्र बन जायेगा। दोनों केन्द्रों में लगभग 20 अरब किलोवाट बिजली बनेगी, जिसमें से बाकी 10 अरब कुई विशेफ प्रदेश के औद्योगीकरण तथा मध्य वोल्गा प्रदेश की सिंचाई के काम आयेगी। इसी योजना के अन्तर्गत वोल्गा और उराल पर्वत के बीच 508 मील लम्बी मुख्य नहर और 2,812 मील लम्बी एक-दूसरे को मिलानेवाली अगल-बगल की छोटी-छोटी नहरें बनेंगी।

इसके फलस्वरूप, अर्द्ध-रेगिस्तानी और रेगिस्तानी सूखे प्रदेशों की जलवायु ही बदल जायेगी। लगभग 40,00,000 एकड़ खेतों और 3,00,00,000 एकड़ चरागाहों को पानी मिलेगा। इस सिंचाई के द्वारा अस्त्राखान प्रदेश में लगभग 56 लाख मन कपास, 16 करोड़ 80 लाख मन गेहूँ और 22 करोड़ 40 लाख मन भूसा उपजेगा। स्टेपीज में 20-25 गुनी अधिक घास पैदा होने लगेगी। कास्पियन सागर के उत्तरी भाग में रेगिस्तानी रेत का

हमला रुक जायेगा। इसका असर पूरी अर्थ-व्यवस्था और भौगोलिक परिस्थिति पर पड़ेगा। आज रेलों के यातायात से जितना माल एक जगह से दूसरी जगह जा पाता है, उसका लगभग 40 गुना माल इन जलमार्गों से आ-जा सकेगा। अकूत श्रमशक्ति, कोयले और यातायात पर होनेवाले खर्च की बचत होगी।

तुर्कमान नहर

आमू दर्या मध्य एशिया की सबसे बड़ी नदी है। यह पामीर और हिन्दूकुश की पर्वत-श्रेणियों में बहती है। सदियों से यहाँ के लोग इस नदी का उपयोग करने की सोचते थे, परन्तु यह एक बड़ी अनियंत्रित और वेगमती नदी है। यदि मोटे तौर पर हिसाब लगाया जाये तो इसका लगभग 80 लाख वर्गगज जल व्यर्थ ही समुद्र में पहुँच गया है और उसी के किनारे सदियों से लोग सूखे और अनावृष्टि के कारण भूखों मरते रहे हैं।

स्तालिन की प्रेरणा और नेतृत्व के कारण, इस पर नहर बनाने की योजना कार्यान्वित की गई है। यह नहरें लगभग 467 से 533 वर्गगज जल काराकुम और तुर्कमान के दक्षिणी रेगिस्तानों में ले जायेंगी। इनके कारण, रेगिस्तानों में नखलिस्तान बनने लगेंगे और लगभग 30,00,000 एकड़ की फसलों को पानी मिल सकेगा। कपास की पैदावार 7-8 गुनी बढ़ जायेगी। वहीं फलों की पैदावार होने लगेगी। रेशम के कीड़े पाले जा सकेंगे। लगभग 1,70,00,000 एकड़ चरागाहों की सिंचाई हो सकेंगी। खेतिहर जानवरों की संख्या दुगुनी हो जायेगी। लगभग 13,00,000 एकड़ के क्षेत्र में हरियाली की ऐसी पेटियाँ बन जायेंगी, जो रेगिस्तानों से आनेवाली गर्म हवाओं और रेत को रोककर खेती की रक्षा करेंगी। सूती कपड़े की मिलों की सालाना पैदावार लगभग 5 करोड़ 60 लाख मन हो जायेगी। वनस्पतियों के तेल का परिमाण 11-12 गुना बढ़ जायेगा। यातयात की सुविधा हो जायेगी।

लम्बाई में इस नहर की तुलना, चीन की विशालतम नहर को छोड़कर, संसार की और किसी नहर से नहीं की जा सकती।

उक्रइन और क्रीमिया में स्तालिनी योजनाएँ

बोरिस मार्गुनेंकोफ ने लगभग चालीस वर्षों पहले जार के सामने नीपर नदी के पानी को सिंचाई के काम में लाने की योजना रखी थी। लेकिन, उसे स्तालिन के नेतृत्व में ही कार्यरूप में परिणत किया जा सका है। इसका निर्माण-कार्य सन् 1951 में शुरू हुआ है और 1956 में समाप्त होगा।

इस योजना के अन्तर्गत दो विशाल बाँध, पानी के नियंत्रण के लिए दो 'लॉक' और एक पन-बिजली-शक्ति-केन्द्र बनेगा। बाँधों में क्रमशः 19,00,00,00,000 और 8,00,00,00,000 वर्गगज पानी जमा रखने का इन्तिजाम होगा। पन-बिजली-केन्द्र से लगभग 1 अरब 20 करोड़ किलोवाट विद्युत-शक्ति उपलब्ध होगी। लगभग 40 लाख एकड़ जमीन की सिंचाई हो सकेगी। कपास की पैदावार 5-6 गुनी बढ़ जायेगी। उक्रइन और क्रीमिया दोनों मिलाकर कुल 22 करोड़ 40 लाख मन कपास, 5 करोड़ 60 लाख मन गेहूँ और लगभग 11 करोड़ 20 लाख मन भूसा आज से अधिक पैदा कर सकेंगे। खेतों की रेगिस्तानों की रेतों से रक्षा करके, काली भूमि की उपज-शक्ति बढ़ाई जा सकेगी।

इनके बनाने में स्वेज नहर से लगभग 4 गुनी अधिक भूमि को खोदना पड़ेगा।

जहाजरानी का वोल्गा-दोन जल-मार्ग

इसका निर्माण-कार्य युद्ध से पहले ही आरम्भ कर दिया गया था। फिर युद्ध के बाद सन् 1947 से शुरू कर दिया गया था। सन् 1952 की बसंत में नियत अवधि से दो वर्षों पहले ही वह पूरी हो चुकी है।

इसके अन्तर्गत सोवियत की दो सबसे बड़ी नदियों–वोल्गा और दोन–को एक विशाल नहर के जरिये मिलाया गया है। इसके द्वारा सोवियत संघ के यूरोपीय हिस्से के सभी समुद्र–श्वेत, बाल्तिक, कास्पियन, अजोव और काला सागर–एक-दूसरे से सम्बन्धित हो गये हैं। यह एक इतना बड़ा जल-मार्ग बन गया है कि 'कृत्रिम

समुद्र' कहा जाने लगा है। इसमें बड़े-बड़े जहाज चल सकते हैं और इसी को सुगम बनाने के लिए, इसमें 13 लॉक और 3 बाँध बाँधे गये हैं।

सोवियत संघ के यूरोपीय हिस्से के यातायात की ये सभी समस्याएँ सुलझा देता है। इसके द्वारा लगभग 15,00,000 एकड़ अर्द्ध-रेगिस्तानी खित्तों की सिंचाई होगी, लगभग 40,00,000 एकड़ चरागाहों को पानी पहुँचेगा। सभी ओर यथेष्ट मात्रा में पानी उपलब्ध होगा। सभी को सस्ती बिजली मिल सकेगी।

यह आधुनिक युग का विशालतम निर्माण है। यह वोल्गा प्रदेश की प्राकृतिक-भौगोलिक परिस्थिति में एक आधारभूत परिवर्तन ला देगा। वहाँ की जलवायु बदल देगा।

वृहत्तम वनीय क्षेत्रों की योजना

स्तालिन की यह महानतम योजना सुनने में ऐसी लगती है, जैसे कोई दंतकथा हो !—सचमुच महान् स्तालिन ने मानव जाति के सामने कितनी विशाल सम्भावनाओं के द्वार खोल दिए हैं, उन्हें कार्यरूप में परिणत भी कर दिया है। स्तालिन की यह योजना है : राज्य की ओर से कृत्रिम जंगलों की आठ अत्यंत विशाल पेटियाँ उगाई जायें, जिनका प्रसार पूरे देश में हजारों मीलों तक आर-पार फैला हुआ हो।

इनमें से प्रत्येक पेटी 22 गज चौड़ी और 12½ लाख मील लम्बी होगी। इनका कुल क्षेत्रफल 1,20,00,000 एकड़ से भी ज्यादा होगा। इन पेटियों में पानी इकट्ठा रखने के लिए बड़ी-बड़ी नहरें बनाई जायेंगी। यह नहरें इतनी बड़ी होंगी कि इनके द्वारा यातायात भी हो सके। प्रदेशों की आवश्यकता के अनुसार ही, इन जंगलों में बोने के लिए पेड़ों की किस्मों का चुनाव किया जायेगा।

इनसे कल्पनातीत लाभ होंगे। फसलें बोने के त्रावोपोलीय नियम के अनुसार एक निश्चित क्रम में फसलें बोने के कारण, जमीन की ऊपरी परत अधिक उर्वर हो जायेगी। जमीन में नमी भी बढ़ जायेगी। रेगिस्तानों से आनेवाली गर्म हवा और रेत से जमीन की रक्षा हो सकेगी। हवा की निचली पर्तों की शुष्कता कम हो जायेगी और उसका तापक्रम कभी भी 60 या 70 अंश सेंटीग्रेड से ज्यादा नहीं हो सकेगा। हवा की नमी में रहनेवाली ऑक्सीजन और कार्बन डाई-ऑक्साईड के वर्तमान अनुपात में अन्तर आ जायेगा। ऑक्सीजन का अंश बढ़ जायेगा, मतलब यह कि जलवायु अधिक स्वास्थ्यकर हो जायेगी और साथ ही, कार्बन डाई-ऑक्साईड भी अधिक बनने लगेगी; क्योंकि हम सभी जानते हैं कि पेड़-पौधों के हरे पत्ते ही उसका निर्माण करते हैं।

और, इसकी सबसे प्रमुख बात यह है कि स्तालिन की यह योजना उस समस्या का भी समाधान करती है जिसका हल ढूँढ़ने में आज संसार के वैज्ञानिक जुटे हुए हैं। वह समस्या है—सूर्य के अकूत भंडार से धरती को नित्य मिलनेवाली सौर-शक्ति का उपयोग। स्तालिन की योजना के अन्तर्गत उगाये गये इन विशालतम जंगलों के हरियाले प्रसार में, हरे-हरे पौधों में यह सौर-शक्ति अर्जित की जायेगी और फिर, जहाँ भी आवश्यकता होगी, उसे खाद्य, ईंधन, औद्योगिक कच्चे माल आदि के रूप में प्रयुक्त किया जायेगा। इस सौर-शक्ति का सबसे महत्त्वपूर्ण उपयोग हम जान ही चुके हैं—पन-बिजली-शक्ति के केन्द्रों के रूप में। पानी से उत्पन्न की जानेवाली पन-बिजली-शक्ति और कुछ नहीं है, प्रकृति के द्वारा तब्दील कर दी गई सौर-शक्ति ही है, जिसका अर्जन जल कर लेता है।

इस प्रकार, महान् स्तालिन ने वह राह दिखाई है जिस पर चलकर समूची मानवता सभी प्राकृतिक शक्तियों का उपयोग अपने हित में कर सकेगी, प्रकृति का कायाकल्प कर सकेगी।

महान् योजनाओं पर एक तुलनात्मक दृष्टिपात

इन योजनाओं और इनके निर्माण-काल के ऐतिहासिक महत्त्व को, महान् स्तालिन के महामानव कहलाने के औचित्य को हम तब तक पूरी तौर पर नहीं समझ सकते, जब तक पूँजीवादी व्यवस्था के निर्माणों की तसवीर भी हमारे सामने न हो।

संक्षेप में, मानवता ने अपने पूरे इतिहास में समूची धरती के रेगिस्तानों का सिर्फ दो फीसदी भाग

ही–3,65,00,000 वर्गमील ही–खेती के काम में लगा पाया है। युद्ध, फसाद, भूमि के प्रबंध की शोषक व्यवस्थाएँ औपनिवेशिक प्रथा, दास-प्रथा आदि के फलस्वरूप हरे-भरे विशाल जनसंख्याओं वाले प्रदेश भी उजड़ गये हैं, बंजर पड़ गये हैं, रेगिस्तानी बनते जा रहे हैं। पूँजीवादी अर्थशास्त्री चीख रहे हैं किं रेगिस्तान एक दिन समूची धरती को लील लेगा, लीलता जा रहा है। सचमुच पूँजीवाद उसके आगे असमर्थ ही है। नतीजा सामने है कि अपने देश में जोतने योग्य जमीन का 70 फीसदी भाग बेकार पड़ा है। पिछले बीस सालों में, हमारी प्रति एकड़ जमीन की गेहूँ की पैदावार .8 से लेकर .9 तक गिर गई है। जोत की जमीन का रकवा लगभग 50,00,000 एकड़ कम हो गया है। प्रति वर्ष लगभग 6,00,000 आदमी भूख से मरते हैं। अकाल कभी देश से विदा नहीं होता; आज बंगाल में है, तो कल मद्रास, फिर महाराष्ट्र, फिर गुजरात में।

इसी प्रकार, नील की घाटी की संसार-प्रसिद्ध कपास की पैदावार और किस्म भी उजाड़ मिश्र में दिन-दिन गिरती ही जा रही है। अफ्रीका में कई परित्यक्त उजाड़ प्रदेश पड़े हुए हैं। स्वयं अमरीका में 80,00,00,000 एकड़ से अधिक जमीन सूखे की शिकार हो गई है। इसमें से 4,00,00,000 एकड़ तो पूरी तौर से बेकार हो चुकी है। उपजाऊ शक्ति 30-40 फीसदी घट गई है। लगभग 5,00,000 किसान स्वयं अपने लिए भरपेट खाना जुटा सकने में असमर्थ हैं। और, बूढ़े पूँजीवादी इंग्लैण्ड में ? टेम्स नदी की बाढ़ों से नगरों की रक्षा नहीं की जा सकती। इसलिए कि बाँधों की मरम्मत नहीं की जा सकती, क्योंकि कोष ही नहीं है; सब युद्ध की तैयारी पर खर्च हो जाता है !

इतना ही नहीं पूँजीवाद ने जो थोड़ा-बहुत निर्माण-कार्य कभी किया भी था उसकी रफ्तार की जरा समाजवादी निर्माण से तुलना कीजिए। नीपर पन-बिजली-केन्द्र 1,500 दिनों में, कुई विशेफ केन्द्र 5 सालों में, स्तालिनग्राद केन्द्र 5 सालों में, 1,400 मील लम्बी तुर्कमान नहर 7 सालों में, वोल्गा-दोन नहर–एक कृत्रिम समुद्र–6-7 सालों में; जबकि नील नदी पर एक बाँध बाँधने में 68 वर्ष, टैनेन्सी नदी की अमरीकी योजना में 35 वर्ष, 103 मील लम्बी स्वेज नहर में 10 वर्ष और 516 मील लम्बी पनामा नहर के बनाने में 35 वर्ष लगे थे ! समूची मानवता के इतिहास में, जहाँ अब तक कुल लगभग 16,00,00,000 एकड़ भूमि की सिंचाई का प्रबंध किया जा सकता था, वहाँ सोवियत संघ में महान् स्तालिन के नेतृत्व में, 5-6 वर्षों के दौरान में ही लगभग 5,60,00,000 एकड़ की सिंचाई हो सकेगी !

लेकिन, इन महान् निर्माणों के लिए सबसे पहले शर्त क्या है ? विश्व शांति। अपने अन्तिम क्षणों तक महामानव स्तालिन ने शान्ति का पथ प्रकीर्ण किया और हर मौके पर जंगखोरों को धूल चटाई है।

स्थायी शान्ति के अग्रदूत

साम्राज्यवादी जंगबाज और उनके टुकड़खोर पत्रकार, आज से नहीं सोवियत के जन्मकाल से ही, महान् लेनिन और स्तालिन को 'खूँखार', 'साम्राज्यवादी', 'निरंकुश' आदि कहकर कीचड़ उछालते रहे हैं। आज जब युद्ध ही साम्राज्यवादियों को 'अधिकतम' मुनाफा कमाने का एकमात्र जरिया नजर आ रहा है, तब वह और भी बौखला उठे हैं और सोवियत संघ तथा महान् स्तालिन पर लांछन लगाने की सिरतोड़ कोशिशें कर रहे हैं। परन्तु उनका प्रचार सूर्य पर थूकने के समान ही होता जा रहा है। हर मोर्चे पर वह चारों खाने चित पड़ते जा रहे हैं। सारे संसार की जनता दिन-ब-दिन समझती जा रही है कि महान् स्तालिन ने द्वितीय विश्व-युद्ध के बाद से ही नहीं, सदैव से ही जनता के लिए एक निर्माणशीला शान्ति का नारा बुलन्द किया है।

3. शान्ति का स्तालिनीय पथ : 8 नवम्बर, 1917 को सत्ता हाथ में लेते ही, सोवियत सरकार ने जो पहला आदेश निकाला था वह शान्ति की स्थापना का ही था। सन् 1919 में, सोवियतों की कांग्रेस में लेनिन ने घोषणा की थी : "सोवियत प्रजातंत्र सभी देशों के साथ शान्तिपूर्वक रहकर अपनी सारी शक्ति घरू निर्माण पर केन्द्रित कर देना चाहता है।" एक मुलाकात के दौरान में, उन्होंने कहा था –"हम निश्चयपूर्वक अमरीका, सभी देशों, पर खास तौर पर अमरीका, के साथ आर्थिक समझदारी बढ़ाने के पक्षपाती हैं।" दिसम्बर सन् 1922 में सोवियत के वैदेशिक मन्त्री–श्चेरिन–ने कहा था : "··· आज के इस ऐतिहासिक युग में, पूँजी की पुरानी और नवजात

व्यवस्थाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले राष्ट्रों में परस्पर आर्थिक सहयोग होना, संसारव्यापी आर्थिक निर्माण के लिए, सबसे आवश्यक है।"

महान् स्तालिन का नेतृत्व शान्ति के इसी पथ पर आगे बढ़ता रहा है। इसी पथ को प्रकीर्ण करता रहा है। देखिये, किस तरह उन्होंने इसका क्रमशः विकास किया है।

दिसम्बर सन् 1927 में, पार्टी की पंद्रहवीं कांग्रेस में स्तालिन ने इसी का समर्थन करते हुए कहा था : "पूँजीवादी देशों के साथ हमारे सम्बन्धों का आधार है–दो विरोधी व्यवस्थाओं के एक साथ रहने की सहमति। अमल ने इसे पक्की तौर पर सही सिद्ध कर दिया है।"

सन् 1936 में, राय होवार्ड से भेंट करते हुए, स्तालिन ने कहा था : "अमरीकी प्रजातंत्र और सोवियत व्यवस्था एक-दूसरे के साथ शान्तिपूर्वक रह सकते और होड़ कर सकते हैं।"

सन् 1938-39 के अरीब-करीब, जब युद्ध की अफवाहें गर्म होने लगीं, धमकियाँ दी जाने लगीं और सारे वातावरण में तनातनी आ गई थी, तब स्तालिन ने संसार के सामने 'शान्ति अविभाज्य है' और 'सामूहिक सुरक्षा' की घोषणा की थी। सन् 1938 में, पार्टी की अठारहवीं कांग्रेस में उन्होंने सोवियत की शान्तिपूर्ण नीति की घोषणा इस प्रकार की थी : "हम शान्ति के हामी हैं। हम सभी देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध दृढ़ करने के हामी हैं। हमारी यही नीति है और हम इसी नीति पर तब तक दृढ़ रहेंगे जब तक सोवियत संघ के साथ दूसरे देश इसी तरह के सम्बन्ध बनाये रखेंगे और जब तक वह हमारे देश के हितों का उल्लंघन नहीं करेंगे।"

9 फरवरी, 1946 को अपने निर्वाचकों के समक्ष बोलते हुए, उन्होंने कहा था : "यह सोचना गलत होगा कि दूसरा विश्व-युद्ध एक आकस्मिक घटना या किसी खास राजनीतिज्ञ की गलतियों का परिणाम था। निःसंदेह, गलतियाँ तो तमाम की गई थीं। पर वास्तव में, युद्ध उन संसारव्यापी और आर्थिक और राजनीतिक शक्तियों के विकास का ही लाजिमी नतीजा था, जो आधुनिक एकाधिकारवादी पूँजीवाद के आधार पर विकसित हो रही थीं।··· असलियत यह है कि पूँजीवादी देशों के असमान विकास के फलस्वरूप समय-समय पर, बहुधा पूँजीवादी संसार की व्यवस्था के संतुलन में हिंसापूर्ण गड़बड़ियाँ होने लगती हैं।··· इसका नतीजा होता है–पूँजीवादी संसार का दो शत्रु खेमों में बँट जाना और उनके बीच युद्ध !··· इस प्रकार, पहला विश्व-युद्ध (सन् 1914-18) संसारव्यापी पूँजीवादी व्यवस्था के पहले आर्थिक संकट का परिणाम था और दूसरा विश्व-युद्ध (सन् 1939-45) उसके एक दूसरे आर्थिक संकट का।··इसका यह अर्थ नहीं है कि दूसरा विश्व-युद्ध पहले युद्ध की बिलकुल एक कापी ही था।···"

हर कदम पर वह साम्राज्यवादी युद्धखोरों का पर्दाफाश करते गये। 13 मार्च, 1946 को चर्चिल की फुल्टन स्पीच के बारे में, स्तालिन ने 'प्राव्दा' के प्रतिनिधि के उत्तर में कहा था : "मैं उसे एक खतरनाक कारनामा मानता हूँ, जिसका नियोजित अर्थ है–मित्र शक्तियों में फूट के बीज बोना और उनके साहकार्य को रोकना। ··· ध्यान देने की एक बात यह है कि इस सिलसिले में मि. चर्चिल और उनके दोस्तों तथा हिटलर और उसके दोस्तों में बड़ी समानता है !··· लेकिन, भीषण युद्ध के पाँच सालों के दौरान में, राष्ट्रों ने अपनी आजादी और अपनी स्वतंत्रता की खातिर ही अपना खून बहाया था, इसलिए नहीं कि हिटलरों के बजाय चर्चिलों का आधिपत्य कायम हो जाये। इसलिए, यह कतई मुमकिन है कि गैरअंग्रेजी भाषा-भाषी राष्ट्र, जो दुनिया की जनसंख्या के बहुमत में हैं, एक नई गुलामी के सामने सिर नवाने को राजी नहीं होंगे।··· यह बिलकुल साफ है कि मि. चर्चिल की यह स्थिति ब्रिटेन और सोवियत संघ के बीच हुई मैत्रीपूर्ण संधि से मेल नहीं रखती।··· संधि के अवधि काल के बढ़ाये जाने का कोई मतलब नहीं होता, यदि दोनों में से एक संधि का उल्लंघन करता है और उसे कोई मान्यता ही नहीं देता।··· मैं नहीं समझता कि दूसरे विश्व-युद्ध के बाद चर्चिल और उसके दोस्त लोग पूर्वी यूरोप के खिलाफ एक नया सशस्त्र प्रयाण संगठित करने में सफल हो सकेंगे या नहीं। लेकिन, यदि वह सफल भी हो गये, हालाँकि उसकी अधिक संभावना नहीं है क्योंकि लाखों-लाख साधारण मनुष्य शान्ति के हितों की रक्षा के लिए कटिबद्ध हैं, तो यह विश्वासपूर्वक कहा जा सकता है कि वह कुचल दिये जायेंगे, ठीक उसी तरह जैसे वह 26 वर्षों पहले एक बार कुचल दिये गये थे।

22 मार्च, 1946 को एडी गिलमोर–एसोसियेटेड प्रेस के प्रतिनिधि–से मुलाकात करते समय राष्ट्र संघ के बारे में उसके एक प्रश्न के उत्तर में, स्तालिन ने कहा था : "मैं संयुक्त राष्ट्र संघ को बड़ा महत्त्व देता हूँ, इसलिए कि वह शान्ति और अन्तर्राष्ट्रीय सुरक्षा कायम रखने का एक गम्भीर साधन है।...यदि संयुक्त राष्ट्र संघ भविष्य में भी समानता के अधिकार को कायम रखने में सफल रहा, तो निःसंदेह ही वह विश्वव्यापी शान्ति और सुरक्षा की गारंटी करने में एक बड़ी क्रियात्मक भूमिका अदा कर सकेगा।...यह जरूरी है कि जनता और राज्यों के शासक नये युद्ध के प्रचारकों के खिलाफ बड़े पैमाने पर एक विरोधी प्रचार का संगठन करें, साथ ही शान्ति कायम रखने के लिए प्रयास करें...।"

एक बार फिर सोवियत संघ की वैदेशिक नीति को स्पष्ट करते हुए लाल सेना के नाम अपने 1 मई सन् 1946 के आदेश में, स्तालिन ने कहा था : "समूचे संसार को न सिर्फ सोवियत संघ की शक्ति, बल्कि सभी जगहों की जनता की समानता की मान्यता और उनकी आजादी तथा स्वतंत्र सत्ता की भावना के आदर पर आधारित सोवियत संघ की नीति की विशेषता देखने और समझने का एक मौका मिल चुका है। अब इसमें संदेह करने की कोई गुंजाइश ही नहीं है कि भविष्य में भी सोवियत संघ अपनी नीति–शान्ति और सुरक्षा की नीति, तमाम जनता की समानता और मित्रता की नीति–के प्रति वफादार रहेगा।"

24 सितम्बर, 1946 को 'लंदन संडे टाइम्स' के सम्वाददाता एलेक्जेण्डर बर्थ ने उनसे 'नये युद्ध' के खतरे के बारे में कुछ सवाल किए थे। स्तालिन ने परिस्थिति का गहरा विवेचन करते हुए, पूरी समस्या का एक-एक धागा अलग-अलग निकालकर रख दिया था : "मैं एक 'नये युद्ध' के वास्तविक खतरे में यकीन नहीं करता। जो भी 'नये युद्ध' के बारे में शोरगुल मचा रहे हैं, उनमें कुछ सैनिक-राजनीतिक गुप्तचर और नागरिकों में से कुछ उनके पिछलग्गू हैं।..." उनको इस शोरगुल की जरूरत इसलिए थी कि कुछ अपने दलाल दूसरे देशों के शासकों को भड़काकर अपने देश के शासकों के लिए भारी सुविधाएँ प्राप्त करने, युद्धकालीन बजट को कायम रखने और फौजों को भंग न करके बेकारी न फैलने देने में उन्हें इससे सहायता मिलती है। आगे चलकर, स्तालिन ने और भी स्पष्टतया कहा था कि आज जो युद्ध के बारे में शोरगुल हो रहा है, उसमें और 'नये युद्ध' के एक वास्तविक खतरे में, जो आज नहीं है, साफ फर्क करना चाहिए। उसी मुलाकात में, उन्होंने एटम बम के बारे में कहा था : "कुछ राजनीतिज्ञ जानबूझकर भी एटम बम को जितनी अहम् शक्ति सोचते हैं, मैं उसमें यकीन नहीं करता। एटम बम दुर्बल हृदयों को धमकाने के मतलब के हैं, लेकिन वे युद्ध का परिणाम निश्चित नहीं कर सकते। एटम बम इसके लिए नाकाफी हैं। हाँ, एटम बम के रहस्य का एकाधिकारी स्वामित्व एक धमकी अवश्य पैदा करता है, लेकिन उसके खिलाफ भी दो इलाज मौजूद हैं–(अ) एटम बम का एकाधिकारी स्वामित्व अधिक दिनों तक नहीं रह सकता; (ब) एटम बम का प्रयोग निषिद्ध कर दिया जायेगा।"

और, महान् स्तालिन ने फिर दृढ़ विश्वास से घोषित किया था : "मैं सहयोग की शान्तिपूर्ण सम्भावनाओं में संदेह नहीं करता। कम होने के बजाय, वह बढ़ भी सकती है। 'एक देश में कम्युनिज्म' कतई मुमकिन है, खास तौर पर सोवियत संघ जैसे देश में।"

28 अक्तूबर, 1946 को 'यूनाइटेड प्रेस' के अध्यक्ष ह्यू बैली से स्तालिन ने कहा था कि अणु-शक्ति को नियंत्रित करने का सबसे अच्छा तरीका है–"अन्तर्राष्ट्रीय नियंत्रण और यह जरूरी भी है।"

21 दिसम्बर, 1946 को अमरीकी प्रेसीडेण्ट रूजवेल्ट के पुत्र इलियट रूजवेल्ट के प्रश्नों के उत्तर में, कहा था : "हाँ, कतई। यह (दोनों व्यवस्थाओं का शान्तिपूर्वक रहना) सम्भव ही नहीं है, बुद्धिमत्तापूर्ण भी है और हासिल भी किया जा सकता है। युद्ध के कड़े दिनों में सरकारों के बीच के भेदों ने हमारे दोनों राष्ट्रों के एक-दूसरे से मिलकर अपने दुश्मन को शिकस्त देने में कोई रुकावट नहीं डाली। इसलिए, अब...मैं सोचता हूँ कि एक ही नहीं, कई मीटिंगें (तीन बड़ों की) होनी चाहिए। उनसे बड़ा लाभ होगा।... विश्व के व्यापार का प्रसार हमारे दोनों देशों के बीच अच्छे सम्बन्धों के विकास के लिए कई क्षेत्रों में हितकारक होगा।..."

9 अप्रैल, 1947 को हैरोल्ड स्टासेन से मुलाकात के दौरान में, स्तालिन ने कहा था : "जहाँ तक सहयोग का सवाल है, उनके (दोनों व्यवस्थाओं के) बीच का फर्क महत्त्वपूर्ण नहीं है। जर्मनी और अमरीका की आर्थिक

व्यवस्थाएँ समान ही थीं, फिर भी दोनों में लड़ाई ठन गई थी। अमरीका और सोवियत संघ की व्यवस्थाएँ भिन्न-भिन्न हैं, फिर भी दोनों ने एक-दूसरे के खिलाफ लड़ाई नहीं छेड़ी; और सोवियत संघ उसका कोई इरादा भी नहीं रखता।··· सहयोग की संभावना तो हमेशा ही रहती है, लेकिन सहयोग करने की इच्छा हमेशा मौजूद नहीं रहती। यदि एक पक्ष सहयोग करने की इच्छा नहीं रखता तो नतीजा होगा—टकराव, युद्ध।··· हम अपनी व्यवस्थाओं की परस्पर आलोचना न करें। प्रत्येक को यह अधिकार है कि वह जो भी व्यवस्था चाहे, कायम रखे। कौन-सी अच्छी है, यह इतिहास बता देगा। हमें जनता द्वारा चुनी हुई व्यवस्थाओं की इज्जत करनी चाहिए। ··· हमें इस ऐतिहासिक सत्य से बात शुरू करनी चाहिए कि संसार में जनता द्वारा समर्थित दो व्यवस्थाएँ हैं। सिर्फ इसी बिना पर सहयोग सम्भव है।"

17 मई, 1948 को हैनरी वालेस की खुली चिट्ठी के जवाब में, उन्होंने फिर घोषित किया : "सोवियत संघ की सरकार का यह यकीन है कि आर्थिक व्यवस्थाओं और सैद्धान्तिक फर्कों के बावजूद इन दोनों व्यवस्थाओं का एक साथ रहना और सोवियत संघ तथा अमरीका के बीच के मतभेदों का शान्तिपूर्वक निपटारा करना सम्भव ही नहीं, बल्कि विश्वव्यापी शान्ति के हित में परम आवश्यक भी है।"

27 जनवरी, 1949 को 'इंटरनेशनल न्यूज सर्विस' के प्रतिनिधि किंगसूबरी स्मिथ के साथ मुलाकात में, कहा था : "सोवियत सरकार एक ऐसी घोषणा निकालने के बारे में विचार करने को तैयार है (कि अमरीका और सोवियत संघ दोनों एक-दूसरे के खिलाफ युद्ध नहीं छेड़ना चाहते)··· स्वभावतः, सोवियत संघ की सरकार ऐसे शान्ति समझौते को कार्यान्वित करने के लिए कदम उठाने में अमरीकी सरकार के साथ सहयोग कर सकती है, जिसके द्वारा धीरे-धीरे निशस्त्रीकरण हो सके।···(तीन बड़ों की) मीटिंग के लिए, मैं पहले ही कह चुका हूँ, कोई आपत्ति नहीं है।"

इस प्रकार, स्तालिन सदैव ही शान्ति का हाथ बढ़ाते रहे, पर साम्राज्यवादियों ने तीसरा विश्व-युद्ध छेड़ने के लिए सोवियत संघ के सामने हर प्रकार के उकसावे पेश किये, मैत्रीपूर्ण संधियों को तोड़ा, गन्दा और भ्रामक विचार किया, शान्ति को खतरे में डालने के लिए ही शान्ति की बातें चलाने का पाखंड किया। पर स्तालिनीय पथ, चाहे वह समाजवाद के निर्माण का हो या विश्व-शान्ति का, सदैव ही आम जनता के लिए, आम जनता को ध्यान में रखकर ही तय किया जाता है; चन्द सिरफिरे निहित स्वार्थों के दलाल शासकों या बुद्धिजीवियों के कुछ करने या न करने पर इसका दारोमदार नहीं रहता। वह किसी राज्य के चन्द शासकों के चेहरों और उनकी वक्तृताओं में उस राज्य की नीति नहीं ढूँढ़ा करते थे। उनकी अद्वितीय मार्क्सवादी दृष्टि से कुछ भी छिपा नहीं रहता था। वह सिखाते थे कि जनता की शक्ति अजेय है और जिस काम को जनता अपने हाथों में ले लेती है उसे सम्भव होने से ब्रह्मा भी नहीं रोक सकता।

इसीलिए 16 फरवरी, 1951 को 'प्राव्दा' के प्रतिनिधि के प्रश्नों का उत्तर देते हुए, उन्होंने कहा था : " नहीं ! कम-से-कम मौजूदा समय के लिए तो नया विश्व-युद्ध अवश्यम्भावी नहीं माना जा सकता।···यह सही है कि अमरीका में, ब्रिटेन में और फ्रांस में भी आक्रमणकारी शक्तियाँ हैं, जो नये युद्ध की पिपासित हैं। उनको अतिरिक्त मुनाफों के लिए, दूसरे देशों को लूटने-खसोटने के लिए युद्ध की जरूरत है।··· वे, यही आक्रमणकारी शक्तियाँ, प्रतिक्रियावादी सरकारों पर कब्जा ज़माये रहती हैं और उनको चलाती हैं। पर साथ ही, वे अपनी उस जनता से खौफ खाती हैं, जो एक नया युद्ध नहीं चाहती और शान्ति की रक्षा के पक्ष में है। इसीलिए, जनता को झूठ में जकड़ देने के लिए, वे उसको धोखा देने के लिए और नये युद्ध को रक्षणात्मक तथा शान्ति-प्रेमी देशों की शान्तिपूर्ण नीति को आक्रमणकारी बताने के लिए, प्रतिक्रियावादी सरकारों का उपयोग करने की कोशिश कर रहे हैं।···

" इन आक्रमणकारी और शान्ति-प्रेमी शक्तियों के बीच चलनेवाले इस संघर्ष का फल क्या होगा ? यदि तमाम जनता शान्ति की रक्षा के ध्येय को अपने हाथों में ले लेगी और अन्त तक उसकी रक्षा करेगी, तो शान्ति कायम रहेगी और सुदृढ़ होगी। यदि जंगबाज आम जनता को झुठलाने, धोखा देने और नये युद्ध में खींच लाने में सफल हो जाते हैं तभी युद्ध अवश्यम्भावी बन सकता है।

" इसीलिए, जंगबाजों की मुजरिमाना साजिशों का भंडाफोड़ करने तथा शान्ति की रक्षा करने के लिए, आज एक विशाल आन्दोलन की परम आवश्यकता है। "

यही नहीं, शान्ति आन्दोलन के बीच उठनेवाली भ्रान्तियों को भी स्तालिन ने नजरअन्दाज नहीं किया। 1 फरवरी, 1952 को उन्होंने अपनी अन्तिम महान् पुस्तक 'सोवियत संघ में समाजवाद की आर्थिक समस्याएँ' (पृष्ठ 39) में शान्ति आन्दोलन के क्षेत्र और ध्येय को पूरी तौर से स्पष्ट कर दिया था : "··· इससे नतीजा निकलता है कि पूँजीवादी देशों के बीच युद्धों की अनिवार्यता कायम रहती है। कहा जाता है कि लेनिन की इस स्थापना को, कि साम्राज्यवाद लाजिमी तौर से युद्ध को जन्म देता है, अब पुरानी पड़ चुकी समझना चाहिए; क्योंकि शान्ति की रक्षा के लिए और नये विश्वयुद्ध के खिलाफ ताकतवर जन-शक्तियाँ सामने आ चुकी हैं। यह सत्य नहीं है।

" मौजूदा शान्ति-आन्दोलन का उद्देश्य है कि शान्ति की हिफाजत के लिए नये विश्व-युद्ध को रोकने के लिए, आम जनता को जगाया जाये। इसलिए, इस आन्दोलन का उद्देश्य पूँजीवाद को खत्म करना नहीं है–वह अपने को शान्ति कायम रखने के जनवादी लक्ष्य तक सीमित रखता है। इस लिहाज़ से मौजूदा शान्ति आन्दोलन पहले महायुद्ध के वक्त साम्राज्यवादी युद्ध को गृह-युद्ध में बदलने के लिए चलाये गये आन्दोलन से भिन्न है, क्योंकि वह आन्दोलन और आगे बढ़ा था और समाजवादी उद्देश्यों को लेकर चला था।

" यह मुमकिन है कि परिस्थितियों के किसी निश्चित योग में, शान्ति के लिए संघर्ष जहाँ-तहाँ समाजवाद के लिए संघर्ष में विकसित हो जाय। लेकिन, तब वह आज का शान्ति-आन्दोलन न रह जायगा; वह पूँजीवाद को परास्त करने का आन्दोलन होगा। जिस बात की सबसे ज्यादा सम्भावना है, वह यह है कि मौजूदा शान्ति-आन्दोलन, शान्ति की रक्षा के लिए एक आन्दोलन की हैसियत से, अगर वह कामयाब होगा, तो किसी **खास** लड़ाई को रोक लेगा, उसे अस्थायी रूप से मुल्तवी करा देगा, अस्थायी रूप से किसी **खास** शान्ति को कायम रखेगा, किसी जंगबाज सरकार को पदच्युत कराके उसकी जगह दूसरी सरकार बिठा देगा, जो अस्थायी रूप से शान्ति कायम रखने के लिए तैयार हो। अवश्य ही, यह अच्छा होगा। बल्कि बहुत अच्छा होगा। लेकिन तो भी, आम तौर से पूँजीवादी देशों के बीच युद्धों की अनिवार्यता खत्म करने के लिए वह काफी न होगा। वह इसलिए काफी न होगा कि शान्ति आन्दोलन की तमाम सफलताओं के बावजूद साम्राज्यवाद कायम रहेगा, चालू रहेगा–और फलतः युद्धों की अनिवार्यता भी बनी रहेगी।

" युद्ध की अनिवार्यता को खत्म करने के लिए, यह जरूरी है कि साम्राज्यवाद को ही खत्म कर दिया जाय। "

इस तरह महान् स्तालिन ने शान्ति के विरुद्ध चलनेवाले साम्राज्यवादी जंगखोरों के कुत्सित प्रचार का सदैव के लिए क्रियाकर्म कर दिया। इस तरह महान् स्तालिन ने नेक इरादोंवाले समूचे मानवों के लिए शान्ति-आन्दोलन के द्वार खोल दिये और शान्ति-आन्दोलन की सम्भावना तथा उसकी व्यापकता का अधिकतम विकास कर दिया है। यह बिलकुल स्पष्ट कर दिया है कि दोनों व्यवस्थाओं का शान्तिपूर्वक एक साथ रहना मानवता के हित में है।

शान्ति-प्रयत्नों का समर्थन

इतना ही नहीं, समूची मानव जाति के लिए शान्ति के सिद्धान्तों का विकास करने और उसको सुदृढ़ बनाने के लिए अनथक प्रयास करने के साथ ही साथ, जहाँ-जहाँ, जब-जब भी शान्ति की स्थापना के लिए किसी ने प्रयत्न किया, तो उसे महान् स्तालिन ने आगे बढ़कर अपना समर्थन भी दिया।

13 अक्तूबर, 1949 को उन्होंने जर्मन जनतांत्रिक प्रजातंत्र के अध्यक्ष और प्रधानमंत्री को बधाई भेजते हुए, कहा था : "··· इस प्रकार एक संयुक्त, जनतांत्रिक और शान्ति-प्रेमी जर्मनी की नींव डाल कर, आप साथ ही साथ सारे यूरोप के लिए एक बड़ा कार्य कर रहे हैं–उसकी स्थायी शान्ति की गारंटी कर रहे हैं। इस नये और वैभवशाली पथ पर, मैं आपकी सफलता की कामना करता हूँ।"

15 जुलाई, 1950 को उन्होंने अपने देश के प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू को कोरिया में शान्ति की स्थापना के लिए उनके प्रयत्नों पर बधाई भेजी थी : "शान्ति के लिए आपकी पहल का मैं स्वागत करता हूँ।..."

1 अक्तूबर, 1951 को उन्होंने अध्यक्ष माओ त्से-तुंग को चीनी जनतंत्र की वर्षगाँठ पर अभिनन्दन भेजते हुए, कहा था : "...चीन के जनवादी जनतंत्र और सोवियत संघ की महान् मित्रता एक ऐसी मित्रता हो जो सुदूर पूर्व में शान्ति और सुरक्षा की सुदृढ़ गारंटी बने; और यह दृढ़तर ही होती जाय !"

शान्ति पुरस्कार

इस समर्थन के साथ ही साथ महान् स्तालिन के शान्ति-प्रयत्नों के सम्मान में उनकी 70वीं वर्षगाँठ से, सोवियत संघ की सुप्रीम सोवियत के अध्यक्ष-मंडल ने 20 दिसम्बर, 1949 को "राज्यों के बीच शान्ति सुदृढ़ करने के लिए, अन्तर्राष्ट्रीय शान्ति पुरस्कार" देना शुरू किए हैं।

हर साल 5 से लेकर 10 तक पुरस्कार दिए जाते हैं। यह बिना किसी भेदभाव के, संसार के किसी भी नागरिक को मिल सकते हैं, जिसने भी संसार में शान्ति की सुरक्षा और स्थापना के लिए बहुमूल्य काम किया हो। पुरस्कार-विजेता को एक उपाधि-पत्र स्तालिन के चित्र से अंकित एक स्वर्ण का तमगा और एक लाख रूबल का नकद इनाम दिया जाता है।

अभी तक जिनको यह पुरस्कार मिल चुके हैं, उनके नाम इस प्रकार हैं : सन् 1950 में–फ्रेडरिक जोलियो कूयरी (वैज्ञानिक, फ्रांस), मादाम सन यात सेन (चीन), ह्यूलेट जॉनसन्–डीन ऑफ कैन्टरबरी (इंग्लैंड), यूजेन कॉटन (फ्रांस) विशप आर्थर मोल्टन (अमरीका), पाक देन एइ (कोरिया) और हैरीबेरितो जारा (मैक्सिको); सन् 1951 में–को मोजो (चीन), पेट्रो नैनी (इटली), याकू ओयामा (जापान), मोनिका फैल्टन (ब्रिटेन), अन्ना सेवर्स (जर्मनी), जार्ज एमाडो (ब्राजील); सन् 1952 में–डा. सैफुद्दीन किचलू (भारत), वेइस फार्ज (फ्रांस), पॉल राबसन (अमरीका), एलिसा ब्रॉको (ब्राजील), जॉनेन्स बेचर (जर्मन जनतंत्र), जेम्स एन्डी कॉट (कनाडा) और इलिया इहरेनबुर्ग (सोवियत संघ)।

शान्ति का कानून

महान् स्तालिन की प्रेरणा से, सोवियत संघ की सुप्रीम सोवियत ने 12 मार्च, 1951 को शान्ति की रक्षा के लिए यह कानून जारी किया था :

"1. युद्ध के लिए प्रचार, वह चाहे किसी भी रूप में किया जाय, शान्ति के ध्येय को हानि पहुँचाता है और एक नये युद्ध का खतरा पैदा करता है और इसी कारण व मानवता के प्रति एक भयंकरतम अपराध है।

"2. युद्ध के लिए प्रचार करने के दोषी लोगों पर जघन्यतम अपराधी की तरह मुकदमा चलाया जायगा।"

यह है–शान्ति और निर्माण का स्तालिनीय पथ !

मानवता के भावी पथ की रूपरेखा

कम्युनिज्म के प्रगति-पथ पर बढ़ती हुई समूची मानवता के सामने जो-जो मुख्य समस्याएँ उठती जाती थीं, उन्हें महान् स्तालिन हल करते जाते थे। अद्वितीय सेनानी की भाँति, वह हर मोर्चे पर सफलता प्राप्त करते जाते थे।

सन् 1899 में लेनिन ने कहा था : "हम कभी भी मार्क्स के सिद्धान्त को अपने-आप में पूर्ण और अनुल्लंघनीय नहीं मानते। इसके विपरीत, हमारा विश्वास है कि इस सिद्धान्त ने उस विज्ञान की नींव डाल दी है जिसके आधार पर समाजवादियों को, यदि वह जिन्दगी से पिछड़ना नहीं चाहते तो, हर दिशा में अनवरत रचना करते जाना चाहिए।"

"हर दिशा में अनवरत रचना करना"–ठीक यही है जो महान् स्तालिन ने किया है और इसीलिए वह सदैव जिन्दगी की राह का निर्देशन ही करते रहे, कभी भी पिछड़े नहीं थे। 65 वर्षों की आयु होने पर भी, उनका अदम्य उत्साह वैसा ही था। वह विश्व की हर महत्त्वपूर्ण समस्या पर सोचते थे।

4. भाषाशास्त्र का प्रश्न : भाषाशास्त्र राजनीति और अर्थनीति से अलग विषय समझा जाता है और उसकी तरफ स्तालिन का ध्यान जाना उतना स्वाभाविक न था। लेकिन क्रांति के बाद, इस क्षेत्र में इतनी धाँधली चली कि प्रथम श्रेणी के भाषाविदों और भाषाशास्त्रियों को पैदा करने का श्रेय होने पर भी, रूस में इसके विषय में एक तरह का गतिरोध-सा आ गया था। न. ई. मार एक बहुत उच्चकोटि के भाषाशास्त्री थे, जो जन्मना गुर्जी थे। और योग्यताओं के रहते हुए भी, प्रतिभाशाली पुरुषों में पाई जानेवाली एक सनक उनके सिर पर भी सवार थी। वह चाहते थे कि भाषाशास्त्र के क्षेत्र में द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद का प्रयोग करके एक नई खोज और देन का श्रेय लें। भाषाशास्त्र के क्षेत्र में वह किस तरह द्वन्द्वात्मक भौतिक दर्शन का प्रयोग कर रहे हैं, इसे ऊपर के नेताओं ने नहीं देखा और टुटपुँजिये भाषाशास्त्री–मार–की जयजयकार करके मनमानी करते रहे। इन पंक्तियों के लेखक का अपना अनुभव है कि डाक्टर श्चेर्वात्स्की पश्चिम में संस्कृत और भारतीय दर्शन के 'न भूतो न भविष्यति' जैसे अद्वितीय विद्वान् थे; लेकिन वह भी मार के विरुद्ध एक शब्द भी बोलने का साहस नहीं रखते थे। वस्तुतः वह अपने विषय में लीन रहनेवाले विद्वान थे। राजनीति में वह कोई दखल नहीं देना चाहते थे। मार की महिमा सुनकर, इन पंक्तियों के लेखक ने अपने सहयोगियों द्वारा प्रस्तुत साहित्य पढ़ने के बाद अपने विचारों को स्पष्ट प्रकट किया कि यह कोई विज्ञान नहीं है, बल्कि रहस्यवाद है। इस पर मेरे सहयोग्यिों ने "चुप-चुप !" कहा। इसी से मालूम होगा कि भाषा-'विज्ञान के क्षेत्र में कितनी लबड़धोंधों चल रही थी और लोगों को खुलकर बहस करने का भी साहस नहीं होता था।

देर से ही सही, किन्तु अन्त में, सन् 1950 में इस ओर स्तालिन का ध्यान खींचा गया। और, उन्होंने अपनी स्वाभाविक नम्रता प्रदर्शित करते हुए, इस विषय में जो बातें कहीं और मार के जाल से भाषा-विज्ञान को बाहर निकाला, वह इस क्षेत्र की एक बहुत महत्त्वपूर्ण घटना है। स्तालिन के इस विषय के कुछ विचारों को उन्हीं के शब्दों में पढ़िये :

" नौजवान साथियों के एक दल ने मेरे सामने यह प्रस्ताव रखा है कि भाषाशास्त्र से सम्बन्धित बातों–खास कर भाषाशास्त्र से सम्बन्धित मार्क्सवाद की समस्याओं–के बारे में मैं अपनी राय पत्रों में प्रकट करूँ। मैं भाषाशास्त्री नहीं हूँ, इसलिए मैं साथियों को पूर्ण रूप से संतुष्ट नहीं कर सकता। लेकिन, जहाँ तक भाषाशास्त्र के सम्बन्ध में मार्क्सवाद की बात है, उससे भी दूसरे समाज-विज्ञानों की तरह मेरा सीधा सम्बन्ध है। यही वजह है कि मैं साथियों के पूछे हुए कई प्रश्नों का जवाब देने के लिए राजी हो गया हूँ।···

" समाज के विकास की निश्चित मंजिलों में, उसकी आर्थिक व्यवस्था उसकी नींव का काम देती है। उसका ऊपरी ढाँचा समाज के कानून, राजनीति, धर्म, दर्शन-सम्बन्धी विचारों और उनके अनुरूप राजनीतिक, कानूनी और दूसरी संस्थाओं का होता है। हर नींव का उसके अनुरूप ही अपना ऊपरी ढाँचा होता है।··· आधार को बदल या खतम कर दिया जाय तो उसके बाद, उसका ऊपरी ढाँचा भी बदल या खतम हो जाता है। इस मामले में भाषा ऊपरी ढाँचे से मौलिक रूप में भिन्नता रखती है; उदाहरणार्थ रूसी समाज और रूसी भाषा को ले लीजिये। पिछले तीस वर्षों के भीतर, पुरानी पूँजीवादी नींव मिटा दी गई और उसकी जगह एक नई समाजवादी नींव तैयार की गई है। इसी के अनुसार, पूँजीवादी आधार के ऊपरी ढाँचे को मिटाकर समाजवादी आधार के अनुसार, एक नये ऊपरी ढाँचे की सृष्टि की गई है। फलतः पुरानी राजनीतिक, कानून-सम्बन्धी तथा दूसरी संस्थाओं का स्थान नई समाजवादी संस्थाओं ने लिया है। लेकिन इसके होते हुए भी, रूसी भाषा मूलतः वैसी ही बनी रही जैसी कि वह अक्तूबर की उथल-पुथल के पहले थी।··· इस काल में, रूसी भाषा में क्या परिवर्तन हुआ है ? एक हद तक रूसी भाषा का शब्दकोश बदल गया है;··· जहाँ तक रूसी भाषा के बुनियादी शब्दकोश और भाषा के आधारभूत व्याकरण के ढाँचे का सम्बन्ध है, पूँजीवादी नींव के नष्ट हो जाने के बाद, उनकी जगह एक नये आधारभूत शब्दकोश और व्याकरण के नये ढाँचे के आ जाने की बात तो दूर रही,

बिना किसी गम्भीर परिवर्तन के आधुनिक रूसी भाषा के आधार ज्यो- के-त्यों बने रहे हैं।..."

उन्होंने आगे कहा : "... उसकी (भाषा की) उत्पत्ति समाज के सदियों के इतिहास के पूरे युग से पैदा होती है। उसकी सृष्टि किसी अकेले वर्ग द्वारा नहीं बल्कि पूरे समाज द्वारा, समाज के सारे वर्गों द्वारा, सैकड़ों पीढ़ियों की कोशिशों द्वारा होती है...इस बात को देखते हुए, भाषा का काम जनता के बीच बातचीत और सम्बन्ध स्थापित करने के साधन के रूप में दूसरे वर्गों को नुकसान पहुँचाकर किसी एक वर्ग की सेवा करना नहीं, बल्कि उसे समान रूप से सारे समाज और उसके सारे वर्गों की सेवा करनी होती है।...(जीवन की) आवश्यकताओं को प्रत्यक्षतः प्रतिबिम्बित करनेवाली भाषा अपने शब्दकोश में नये शब्दों को जोड़ती तथा अपने व्याकरण के ढंग को सुधारती जाती है। इस तरह : (1) कोई भी मार्क्सवादी भाषा को नींव के ऊपर का ऊपरी ढाँचा नहीं मान सकता, और (2) भाषा का ऊपरी ढाँचे के साथ घपला करना एक भारी गलती है।

"... वह (कुछ साथी) कहते हैं कि समाज बँटा हुआ है, अब एक संयुक्त समाज नहीं, बल्कि सिर्फ वर्ग हैं। इसलिए समाज के लिए एक सम्मिलित भाषा, एक जातीय भाषा की जरूरत नहीं है। समाज बँटा होने से अब जनता की कोई जातीय भाषा नहीं रह गई है। तो फिर रह क्या जाता है ? वर्ग और वर्ग-भाषाएँ ही रह जाती हैं। यह स्पष्ट है कि प्रत्येक वर्ग-भाषा का अपना वर्ग-व्याकरण होगा—अर्थात् एक सर्वहारा व्याकरण और दूसरा पूँजीवादी व्याकरण। पर, दुनिया में ऐसे व्याकरणों का कहीं भी कोई अस्तित्व नहीं देखा गया। तो भी, इन साथियों को कोई परेशानी नहीं होती। वह विश्वास रखते हैं कि ऐसे व्याकरण पैदा होंगे। एक समय हमारे भीतर ऐसे मार्क्सवादी भी थे, जो जोर देकर कहते थे कि अक्तूबर क्रांति के बाद जो रेलें रह गई थीं वह पूँजीवादी थीं जिनका इस्तेमाल करना हम मार्क्सवादियों के लिए अच्छा नहीं। उन्हें खतम करके, हमें नई सर्वहारा-रेलों का निर्माण करना चाहिए।... हमारे साथी यहाँ गलती करते हैं। वह संस्कृति और भाषा के भेदों को नहीं देखते और न इस बात को समझते हैं कि समाज के विकास के हर नये काल के साथ विषय-वस्तु की दृष्टि से संस्कृति बदलती है, लेकिन भाषा बहुत-से कालों तक मौलिक आधार के रूप में वही बनी रहती है तथा नई और पुरानी दोनों संस्कृतियों की समान रूप से सेवा करती है। इस प्रकार (1) बातचीत और सामाजिक सम्बन्ध के रूप में, भाषा सदा ही समाज के लिए एक जैसी और उसके व्यक्तियों की सम्मिलित भाषा रहती आई है और अब भी है। (2) बोलियाँ और लोकोक्तियाँ एक निश्चित प्रकार के सभी लोगों की सम्मिलित भाषा के अस्तित्व से इन्कार नहीं, बल्कि उसे स्वीकार करती हैं कि वे किस भाषा की शाखाएँ हैं और किसके अधीन हैं। (3) वर्ग-स्वभाव वाला भाषा का सूत्र गलत और अमार्क्सवादी है।..."

भाषा की कुछ विशेषताओं के बारे में बताते हुए, स्तालिन ने आगे कहा : "भाषा एक ऐसी सामाजिक वस्तु है, जो समाज के अस्तित्व के सम्पूर्ण काल में बराबर (एक-सा) काम करती रहती है। समाज के ज़न्म के साथ उसका जन्म और विकास के साथ उसका विकास होता रहता है। समाज की मौत के साथ, वह भी खतम हो जाती है। समाज के बाहर भाषा का कोई अस्तित्व नहीं है। यही कारण है, जो एक भाषा और उसके नियमों को केवल तभी समझा जा सकता है जब कि उसका अध्ययन समाज के इतिहास के साथ, उस जनता के इतिहास से उसके अटूट सम्बन्ध को देखते हुए ही किया जाय, जिस जनता की कि वह भाषा है और जो जनता उस भाषा की संस्थापक और उसे आगे ले जाने वाली है।..."

विरोधी-समागम द्वारा एक बिलकुल नई भाषा के पैदा होने के मार के मत का खंडन करते हुए, स्तालिन ने आगे कहा : "...कहा जाता है कि इतिहास में भाषाओं के जो पारस्परिक समागम हुए हैं, उनसे हमें यह मान लेना पड़ता है कि इस समागम की क्रिया में एक नई भाषा एकाएक फूट निकली और पुराने गुणों से एक नये गुण का अचानक आ जाना एक नई भाषा के जन्म का कारण बना। यह बात बिलकुल गलत है। भाषाओं के समागम को एक निर्णायक प्रभाव डालनेवाला ऐसा अकेला काम नहीं माना जा सकता जिसका फल चन्द ही वर्षों में देखा जा सके। भाषाओं का समागम एक लम्बी क्रिया है, जो सैकड़ों वर्षों तक चलती है। इस प्रकार, यहाँ पर विस्फोटों की कोई बात नहीं की जा सकती। इसके अतिरिक्त, यह सोचना बिलकुल ही गलत होगा कि दो भाषाओं के समागम के फलस्वरूप एक नई, तीसरी भाषा पैदा हो जाती है—ऐसी भाषा

जो समागम में आई दोनों भाषाओं के साथ कुछ भी मेल नहीं खाती, अर्थात् जो अपने गुण में उनमें से हर एक से भिन्न है। वस्तुतः समागम होने पर, हमेशा उन दोनों में से ही एक भाषा विजयी हो जाती है। वह अपने व्याकरण-सम्बन्धी ढाँचे और आधारभूत शब्दकोश को बनाये रखती है, अपने विकास के आन्तरिक नियमों के अनुसार आगे बढ़ती जाती है, जबकि दूसरी भाषा धीरे-धीरे अपना गुण खोती हुई कालांतर में लुप्त हो जाती है। इसलिए समागम किसी प्रकार की एक नई तीसरी भाषा को पैदा नहीं करता बल्कि दोनों भाषाओं में से एक को ही बनाये रखता है, उसके व्याकरण-सम्बन्धी ढाँचे और शब्दकोश को कायम रखता है और उस भाषा को अपने विकास के आन्तरिक नियमों के अनुसार विकसित होने में समर्थ बनाता है। यह सच है कि इस प्रक्रिया के समय पराजित भाषा को नुकसान पहुँचकर विजयी भाषा के शब्द-भंडार की कुछ पूति होती है। लेकिन, ऐसा होने से भाषा कमजोर नहीं बल्कि उलटे मजबूत होती है।"

भाषाशास्त्र के सम्बन्ध में विचारों को खुलकर प्रकट करने में जो रुकावटें मार के हौवे ने पैदा कर दी थीं उनको हटाते हुए, स्तालिन ने कहा : "इस बहस से जिस बात का खास तौर से पता चला है, वह है केन्द्र और प्रजातंत्र–दोनों में भाषाशास्त्र की कमिटियों में जिस तरह का शासन चल रहा था, वह विज्ञान और वैज्ञानिकों के अनुकूल नहीं था। सोवियत भाषाशास्त्र की स्थिति के बारे में जरा-सी भी आलोचना··· करने की हलकी से हलकी कोशिश को भी प्रमुख भाषाशास्त्री मंडलियाँ दमन करतीं, रोक देती थीं।··· यह बात सभी मानते हैं कि विचारों के संघर्ष के बिना, स्वतंत्र आलोचना के अभाव में कोई भी विज्ञान न विकसित हो सकता, न फूल-फल सकता है। लेकिन, यहाँ इस सर्वमान्य नियम को सबसे ज्यादा बेपर्वाही के साथ उपेक्षित करके पैरों तले कुचला गया।··· मार ने वर्ग-भाषा के बारे में एक ओर मिथ्या तथा अमार्क्सवादी विचार का सूत्रपात किया, जिसके द्वारा उसने अपने को भी गड़बड़ घोटाले में डाला और भाषाशास्त्र को भी। सोवियत भाषाओं को ऐसे मिथ्या सूत्र के आधार पर विकसित नहीं किया जा सकता, जो जनता और भाषाओं के इतिहास के पूरे युग के विरुद्ध है। न. ई. मार ने तुलनात्मक ऐतिहासिक शैली को आदर्शवादी बताकर, लम्बे-चौड़े शब्दाडम्बर के साथ दूषित ठहराया। किन्तु, यह कहना पड़ेगा कि तुलनात्मक ऐतिहासिक शैली अपनी कितनी ही गम्भीर कमजोरियों के होते हुए भी··· मार के··· तत्त्व-विश्लेषण से कहीं बेहतर है।··· "

भाषा और भाषाशास्त्र के सम्बन्ध में जिस तरह महान् स्तालिन ने पथ-प्रदर्शन किया है, उससे यह भी मालूम हो जाता है कि हर विषय में उनका कितना वैज्ञानिक दृष्टिकोण रहता था। वह किसी भी बात में 'बाबा-वाक्यं प्रमाणं' के मानने के विरोधी थे और चाहते थे कि लोग 'वादे वादे जायते तत्त्वबोधः' की सूक्ति पर ही अमल करें।

5. "सोवियत संघ में समाजवाद की आर्थिक समस्याएँ" : इस महान् पुस्तक का प्रकाशन सितम्बर, सन् 1952 में, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की ऐतिहासिक 19वीं कांग्रेस के एक माह पहले हुआ था। अर्थशास्त्र पर एक पाठ्य-पुस्तक के मसौदे और उसके बारे में होनेवाली बहस के सिलसिले में, एक आलोचनात्मक टिप्पणी के रूप में स्तालिन ने इसकी रचना की थी।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और सारी दुनिया की प्रगतिशील मानवता के सैद्धान्तिक विकास में इसका प्रकाशन एक महानतम महत्त्व की घटना है। यह सारी दुनिया की मेहनतकश जनता को समाज के विकास के नियमों के ज्ञान से लैस करती है; कम्युनिज्म के निर्माण के पथ को प्रकाशित करती है। यह मार्क्सवाद के खजाने को एक महान् देन है।

इस पुस्तक के प्रत्येक शब्द के पीछे पूँजीवाद शोषण के खिलाफ रूस के प्रारम्भिक मजदूर आंदोलन से लेकर सोवियतों के रूप में मजदूर-किसानों-सैनिकों की पंचायतें बनाने तक, गृह-युद्ध की काली घटाओं से लेकर फासिस्टी दरिंदों की पराजय तक और गृह-युद्ध के काल के अकाल से भूखों मरती हुई जनता के लिए अनाज हासिल करने से लेकर पाँच पंचवार्षिक योजनाओं के जरिये देश में समाजवाद के निर्माण करने तक का अतुलनीय अनुभव है। इस पुस्तक के प्रत्येक शब्द के पीछे संसार की समूची मेहनतकश जनता के आन्दोलन के नेतृत्व करने का अनुभव है। इस अनुभव को इस पुस्तक से जुदा नहीं किया जा सकता; उसी प्रकर जैसे इस पुस्तक

को इस महान् अनुभव से अलग करके नहीं देखा जा सकता। सोवियत संघ में समाजवाद के निर्माण के काम से यह अविभाज्य रूप में जुड़ी हुई है। यह बहुत महत्त्व की बात है। इसीलिए, स्तालिन की यह पुस्तक रचनात्मक मार्क्सवाद की श्रेष्ठतम मिसाल है।

प्राकृतिक और आर्थिक नियमों का फर्क

सोवियत संघ के विद्यार्थियों के लिए अर्थशास्त्र पर जो पुस्तक तैयार की जा रही थी, उसके मसौदे और उस मसौदे पर होने वाली बहस के दौरान में लोगों ने कुछ ऐसी दलीलें दीं जैसे कि सोवियत संघ में आर्थिक नियमों को तबियत के मुताबिक बदला जा सकता है, ठीक उसी तरह जैसे एक सरकार अपने बनाये हुए कानूनों को जब चाहे रद्द करके नये कानून बना सकती है। जाहिर है कि इस समझ का नतीजा यही निकल सकता था कि सोवियत संघ में आर्थिक नियमों की कोई खास अहमियत नहीं है और उनका गहराई से अध्ययन करना भी जरूरी नहीं है। यह भी स्पष्ट है कि ऐसी समझ के लोग आर्थिक योजनाएँ बनाने के समय भी मनमाने ढंग से, अपनी कल्पना के आधार पर, योजनाएँ बनायेंगे और गलतियाँ करेंगे, जिनसे गड़बड़ी पैदा होगी। इसीलिए, स्तालिन ने आर्थिक नियमों की समझदारी ठीक कर देना जरूरी समझा।

स्तालिन ने दिखाया है कि जैसे कुदरत के नियम होते हैं, वैसे ही समाज के भी नियम हुआ करते हैं; जैसे कि प्रकृति में हर काम उसके निश्चित नियमों के मुताबिक ही हुआ करता है (हम उन नियमों को समझते हैं या नहीं, यह दूसरी बात है), उसी तरह समाज में भी हर घटना सामाजिक नियमों के अनुसार ही हुआ करती है। जिस तरह प्रकृति में हर मौसम के आने का समय, सूरज के निकलने-डूबने आदि का समय निश्चित होता है, इसी तरह समाज में भी सब कुछ निश्चित नियमों के अनुसार ही हुआ करता है। न तो समाज में और न प्रकृति में ही, घटनाएँ या परिवर्तन एक मनमाने ढंग से, संयोगवश हुआ करते हैं।

हम सभी समझते हैं कि मनुष्य कुदरत के नियमों को गढ़ नहीं सकता, रच नहीं सकता। यह नियम मनुष्य की चाह से, हमारी अपनी आंतरिक इच्छा से बनते-बिगड़ते नहीं हैं। उनकी मौजूदगी हमारे मन के अलावा है; उनका अस्तित्व हमारे मन से स्वतंत्र है। इसी तरह हमारी अपनी चाह और अपनी इच्छा से अलग, सामाजिक नियम भी स्वतंत्र रूप में काम करते हैं। हम उन्हें गढ़ नहीं सकते। दोनों ही वस्तुगत होते हैं। हाँ, हम उन्हें जान सकते हैं, उनकी खोज कर सकते हैं वह किस प्रकार काम करते हैं, यह समझ सकते हैं।

प्रकृति के तमाम नियमों की खोज करके, उनको समझकर, हमने तमाम विज्ञानों का विकास किया है—जैसे जीव विज्ञाल, रासायनिक विज्ञान, भूगर्भ विज्ञान, भौतिक विज्ञान आदि। और इन विज्ञानों के सहारे, हम बिलकुल नपे-तुले तौर पर परिवर्तनों, घटनाओं के घटने के समय तथा किन-किन चीजों के योग से क्या नई चीज बनेगी या क्या होगा बता सकते हैं। अभी चन्द्र-ग्रहण पड़ा था, तो उसके महीनों पहले अखबारों में आ गया था कि ग्रहण कितने बजकर कितने मिनट पर कहाँ दिखाई देगा। दिन के मौसम की भविष्यवाणी हम रोज ही अखबारों में पढ़ते हैं। इसी प्रकार, हम समाज के आर्थिक नियमों को भी जान सकते हैं, खोज सकते हैं और उनके एक-दूसरे से सम्बन्ध को समझकर समाज के आर्थिक विज्ञान की रचना कर सकते हैं। ठीक भौतिक, रासायनिक या जीव विज्ञान की तरह ही, समाज के अर्थविज्ञान के द्वारा भी हम आर्थिक घटनाओं और व्यवस्थाओं के नियमों की ठीक-ठीक जानकारी के आधार पर, उनका विश्लेषण कर सकते हैं और उनके बारे में भविष्यवाणी भी कर सकते हैं, जैसे हम मौसमों और चन्द्र-ग्रहणों आदि के बारे में किया करते हैं।

प्राकृतिक नियमों को अपने हित में उपयोग करने के हम आदी हैं, अभ्यस्त हैं। खेती के बोने, काटने और निराई करने के समय हमने मौसमों के आने-जाने के नियम के अनुसार ही तय किए हैं। इसी प्रकार, अपने रोजाना के जीवन में हम अपने हित में प्रकृति के नियमों का उपयोग करते हैं। हम उन नियमों को बदलते नहीं हैं, बदल नहीं सकते। उनकी जानकारी हासिल करके, उनका उपयोग करते हैं। ठीक इसी तरह आर्थिक नियमों की जानकारी हासिल करके भी, हम उन्हें अपने हित के लिए उपयोग में ला सकते हैं, बदल नहीं सकते, रद्द नहीं कर सकते।

कुछ लोग यह तर्क दे सकते हैं कि 'हम नियमों को बदल नहीं सकते'—यह जानकारी मनुष्य को भाग्यवादी बना देगी, वह अपने-आपको नियमों का दास समझने लगेंगे। लोग इसके लिए हिन्दुस्तान के गरीब किसानों की भाग्यवादिता का उदाहरण भी पेश कर सकते हैं। पर, महान् स्तालिन हमें सिखाते हैं कि असलियत ऐसी नहीं है। अपने यहाँ के किसानों की भाग्यवादिता के उदाहरण को ही अगर हम गौर से जाँचें तो दृष्टिकोण साफ हो जायेगा। हिन्दुस्तानी किसान में जो भाग्यवादिता आई है, वह इसलिए नहीं कि वह प्रकृति के नियमों को समझता है, बल्कि इसलिए कि वह उन्हें समझते हुए भी उन नियमों का पूरा उपयोग नहीं कर पाता। समाज की जोंकें, सामंती शक्तियाँ उसे जकड़े हुए हैं और उसे उन नियमों का पूरा उपयोग नहीं करने देतीं। वह जानता है कि खाद देने से धरती की उपजाऊ शक्ति बढ़ सकती है, वह जानता है सिंचाई से अच्छी फसल तैयार की जा सकती है; लेकिन उसके पास यह छोटे-से प्रारम्भिक साधन जुटाने के लिए भी पैसे नहीं हैं। दूसरी ओर, उसी के भाई किसानों ने चीन में—जहाँ सामंती जोंकों का क्रियाकर्म कर दिया है, वे भाग्यवादिता को पास फटकने भी नहीं देते; उनका भविष्य उज्ज्वल से उज्ज्वलतर होता जा रहा है। यह तब इसीलिए कि वह प्रकृति के नियमों का अधिक उपयोग करने में समर्थ हैं। सोवियत संघ के किसानों के लिए हम जिस वृहत् वनीय क्षेत्रों की योजना का जिक्र कर चुके हैं, वह भी प्रकृति के नियमों का उपयोग ही करना है, उन्हें रद्द करना नहीं है। इसी प्रकार, हम समाज के आर्थिक नियमों का भी समाज के हित में उपयोग कर सकते हैं। संसार के मेहनतकश वर्ग ने, मार्क्स-ऐंगिल्स-लेनिन और स्तालिन के द्वारा, पूँजीवादी समाज के आर्थिक नियमों को जानकर ही संसार के एक-तिहाई भाग से पूँजीवादी शोषण की प्रणाली को खतम किया है। इन सिद्धान्तों की समझ ने किसी भी प्रकार से उनमें अपने को पूँजीवादी नियमों का गुलाम समझने की भावना पैदा नहीं की। इसीलिए, स्तालिन हमें सिखाते हैं कि समाज के नियमों की समझ हमें यह अवसर देती है कि हम समाज की हालतों को बदल सकें और नियमों का समाज के हित में प्रयोग कर सकें।

यह कोई बिलकुल नई चीज नहीं है। इतिहास के आरम्भ से ही, इस समाज के नियमों को जानने की कोशिश करते रहे हैं और उनका समाज के हित में उपयोग करने की चेष्टा करते रहे हैं। इसमें जो नया तत्त्व है वह यही कि अब तक के इतिहास में वर्ग रहे हैं और इसीलिए इन नियमों का उपयोग समाज का शोषक वर्ग अपने हित के लिए करता रहा है, परन्तु समाजवादी या जनवादी राज्य बनाने के बाद इन नियमों का उपयोग समाज की समूची जनता के लिए किया जाता है। और, इन नियमों का समाज के हित में उपयोग करने के लिए उन नियमों का समझना सबसे पहली शर्त है।

इस प्रकार, समाज के नियम प्राकृतिक नियमों की तरह ही वस्तुगत होते हैं, जो हमारी चाह या इच्छा से स्वतंत्र होते हैं, उनको समझा जा सकता है, खोजा जा सकता है और उनके आधार पर समाज का एक विज्ञान, रसायन विज्ञान या जीव विज्ञान की तरह ही, बनाया जा सकता है। उनको समझकर, उनका उपयोग समाज के हित में किया जा सकता है।

परन्तु, स्तालिन हमें सिखाते हैं कि समाज के नियम बिलकुल प्राकृतिक नियमों की तरह ही नहीं होते। इन समानताओं के साथ-साथ उनमें भेद भी हैं।

पहला भेद यह है कि प्राकृतिक नियम स्थायी होते हैं। सामाजिक नियम बदलते रहते हैं। सामाजिक नियम एक ऐतिहासिक युग के लिए ही होते हैं और दूसरे ऐतिहासिक युग के आने के साथ-साथ, दूसरे सामाजिक नियम लागू हो जाते हैं। दास-प्रथा की सामाजिक व्यवस्था के नियम सामंती, पूँजीवादी या समाजवादी व्यवस्था में लागू नहीं हो सकते।

सिर्फ कुछ ही सामाजिक नियम हैं जो सभी समाज-व्यवस्थाओं में समान रूप से लागू हो सकते हैं—जैसे यह सिद्धान्त कि पैदावार के सम्बन्धों को उत्पादन-शक्तियों के लक्षणों से (तरीके से) मेल खाना ही चाहिए।

दूसरा भेद यह है कि प्राकृतिक नियमों को खोजने और उनको लागू करने का काम बहुत कुछ सीधे-सीधे हो जाता है। परन्तु, सामाजिक नियमों को खोजकर उनको लागू करने का काम धीरे-धीरे नहीं होता; क्योंकि समाज में जो शक्तियाँ सत्तारूढ़ होती हैं, जिनके हाथों में शक्ति होती है, वह नये नियमों के लागू करने का

विरोध करती हैं क्योंकि उनसे उनके हितों को धक्का लगता है। इसलिए, समाज के नये नियमों को लागू करने में पूरी एक सशक्त, सत्तारूढ़ शक्ति का विरोध सामने आता है। उसको पराजित करके ही, नये नियमों को लागू किया जा सकता है। इसीलिए, उनको लागू करने के लिए एक सशक्त-संगठित ताकत की, संगठन की जरूरत पड़ती है। इसीलिए, हमें जनवादी हिन्दुस्तान के नये सामाजिक नियम लागू होने की परिस्थिति पैदा करने के लिए मेहनतकशों, किसानों और सारी जनता के संगठनों तथा एक कम्युनिस्ट पार्टी की जरूरत पड़ती है।

सामाजिक नियम बदले नहीं जाते, रद्द नहीं किए जाते। नये ऐतिहासिक युग की परिस्थितियों में, पुराने सामाजिक नियम लागू नहीं होते और वह अपनी शक्ति तथा सार्थकता खो बैठते हैं। नये ऐतिहासिक युग में, नये नियम उनकी जगह ले लेते हैं। वह लागू होते हैं, उनकी अपनी शक्ति तथा सार्थकता होती है। पुराने नियम निरर्थक हो जाते हैं।

इस प्रकार महान स्तालिन ने सामाजिक नियमों के सही लक्षणों को समझाकर, हमें सही मायनों में सामाजिक विज्ञान बताकर, उसके स्वरूप और कार्यक्षेत्र को समझाकर अपनी नीति को बिल्कुल वैज्ञानिक आधार पर रखने की राह बताई है। इस महान् पुस्तक की रोशनी में, वैज्ञानिक भौतिकवाद की सही समझ के द्वारा अपनी नीति निर्धारित करने में हमें बड़ी मदद मिलेगी। इसीलिए, मालेन्कोफ ने कहा है :

> "का. स्तालिन की सैद्धान्तिक रचनाओं का बहुत बड़ा महत्त्व यह है कि वह हमें सतह पर ही रह जाने के खिलाफ आगाह करती हैं और घटना के मर्म तक गहरे जाकर, समाज के विकास की प्रक्रिया के सार तक पहुँचकर, विकास के गर्भ में ही उस घटना को समझ लेना सिखाती हैं, जो कि आगे आनेवाली सभी घटनाओं का स्वरूप निश्चित करेगी। और इस प्रकार, उनकी सीखें मार्क्सवादी पूर्वाभास को सम्भव बना देती हैं।"

समाजवाद में बिकाऊ माल की पैदावार और मूल्य का नियम

इस प्रकार सामाजिक आर्थिक विज्ञान का आधार बनाकर, महान् स्तालिन ने बताया कि मार्क्स ने जिस आर्थिक विज्ञान के मूल नियम का पता लगाया था वह समाजवादी समाज पर भी उतना ही लागू होता है, जितना कि किसी दूसरी सामाजिक व्यवस्था पर। सोवियत संघ में भी उत्पादन के सम्बन्धों को उत्पादक-शक्तियों के लक्षणों के अनुकूल ही होना चाहिए। यह नियम कैसे लागू होता है ?

गल्ले के रूप में टैक्स और **सहकारी योजना** नामक अपनी रचनाओं में लेनिन ने बताया था कि सोवियत राज्य में गाँवों में छोटे-छोटे उत्पादक थें, जिनको अक्तूबर क्रांति के समय तक पूँजीवादी प्रतियोगिता नेस्तनाबूद नहीं कर पाई थी। गाँवों के छोटे-छोटे उत्पादक बिकाऊ माल की पैदावार करते थे। वह अपने पैदा किए हुए माल को शहरों में बेचते थे और उन्हें शहरों के साथ अपना केवल वही सम्बन्ध मंजूर था। इसलिए, दो ही रास्ते थे–या तो उनहें समाजवादी राज्य का दुश्मन बनाकर क्रांति की सफलता पर पानी फेर दिया जाता, या फिर एक निश्चित अवधि के लिए बिकाऊ माल के उत्पादन को कायम रहने दिया जाता और क्रमशः परिस्थितियाँ बदलकर उन्हें अपनी इच्छा से ही नये सम्बन्धों को अपनाने दिया जाता। लेनिन ने बताया था कि दूसरा रास्ता सही होगा और परिस्थितियों में क्रमशः परिवर्तन लाने के लिए उन छोटे-छोटे उत्पादकों को सहकारी उत्पादक-संस्थाओं में संगठित किया जाय। यही सही साबित हुआ। सोवियत संघ में बिकाऊ माल की पैदावार को सुरक्षित रहने दिया गया था।

इस प्रकार, आज भी सोवियत संघ में समाजवादी उत्पादन के दो क्षेत्र बने हैं–राज्य या सामाजिक सम्पत्ति का उत्पादन क्षेत्र और सहकारी खेती के उत्पादन का क्षेत्र। इन दो क्षेत्रों के होने से व्यक्तिगत जरूरत की चीजों को बिकाऊ माल के रूप में पैदा करना आवश्यक हो जाता है।

इस सामाजिक परिस्थिति में, स्तालिन हमें सिखाते हैं कि उन सभी आर्थिक नियमों का चलन भी रहेगा जो इनके अनुकूल हैं। उन नियमों को मंसूख नहीं किया जा सकता। परिस्थितियों में परिवर्तन लाकर ही, नये आर्थिक नियमों को जन्म दिया जा सकता है। पूँजीवादी सामाजिक व्यवस्था से पहले, दास-प्रथा में भी बिकाऊ

माल की पैदावार का प्रचलन था। तभी इस पैदावार के तरीके के साथ ही, मूल्य का नियम भी जन्मा था। माल का बेचा जाना तब तक सम्भव नहीं हो सकता था जब तक कि माल का मूल्य निश्चित न होता। बाजार के लिए माल के उत्पादन के साथ ही, समाज में मूल्य के निर्धारण की आवश्यकता पूरे तौर पर उभरकर सामने आ गई। मूल्य का नियम बना कि हर चीज का मूल्य उसके बनाने में खर्च हुए समय के हिसाब से तय किया जायेगा। इस समय का लेखा-जोखा करने के लिए वही समय का माप माना जायेगा जो उस समाज में आम तौर से उस चीज के बनाने पर खर्च करना जरूरी होगा। यही मूल्य का नियम है और बिकाऊ माल की पैदावार के साथ-साथ, स्वाभाविक रूप से चालू रहता है। सोवियत संघ में बिकाऊ माल की पैदावार को एक निश्चित अवधि तक के लिए सुरक्षित करने के कारण, यह मूल्य का नियम भी चालू है।

बिकाऊ माल की पैदावार के साथ जन्मने वाला, यह मूल्य का सिद्धान्त पूँजीवादी समाज-व्यवस्था में ही अपने चरम विकास पर पहुँचा और यही पूँजीवादी उत्पादन का नियंत्रण करने लगा। व्यक्तिगत पूँजीपतियों में यह होड़, यह प्रतियोगिता चल पड़ी कि हर तरह से बिकाऊ माल को कम-से-कम लागत मूल्य में तैयार करें और बाजार पर आधिपत्य कायम करके, दूसरे पूँजीपतियों से ज्यादा मुनाफा कमा लें। यह लागत मूल्य कैसे कम किया जा सकता है ? लागत मूल्य का अर्थ, जैसाकि हम देख चुके हैं, किसी भी माल के तैयार करने में लगनेवाला सामाजिक रूप से आवश्यक श्रम-समय ही है। इसे कैसे कम किया जा सकता है ? नई से नई और अधिक विकसित मशीनें लगाकर—जिनसे कि कम समय में अधिक माल पैदा हो सके, मजदूरों की श्रम-शक्ति को कम-से-कम दामों पर खरीदकर—जिससे कि अतिरिक्त मूल्य की मात्रा बढ़ जाए। सारे पूँजीपतियों में इसी के लिए होड़ लग गई और जिस भी माल के उत्पादन में कम-से-कम लागत मूल्य लगाकर, अतिरिक्त मूल्य की मात्रा अधिक-से-अधिक बढ़ाकर सबसे ज्यादा मुनाफा कमाने की गुंजाइश दिखती थी, सारे पूँजीपति उसी के उत्पादन में अपनी पूँजी लगाने लगते। इस ओर तो उत्पादन खपत की सम्भावना से कहीं अधिक तैयार हो जाता और दूसरी ओर कम-से-कम दामों में श्रम-शक्ति खरीदने की होड़ के कारण, कम-से-कम तनखा देकर मजदूरों की खरीदने की शक्ति कम-से-कम कर दी जाती। उत्पादित माल और जनता की क्रय-शक्ति में इस चौड़ी खाई के बन जाने का नतीजा होता—मंदी, आर्थिक संकट, गला-काट प्रतियोगिता और युद्ध। चूँकि पूँजीवादी व्यवस्था में यह चीजें आज भी हो रही हैं, दो युद्धों की विभीषिका हमारे दिमागों में इतनी ताजी है और हम जानते हैं कि इन सबकी जड़ में पूँजीवादी उत्पादन का नियंत्रण करनेवाला, बिकाऊ माल के साथ पैदा हुआ, मूल्य का नियम ही है। इसलिए, हम यह सोचकर शंकित हो उठते हैं कि सोवियत संघ में इन दोनों के मौजूद रहने से क्या पूँजीवाद का पुनर्जन्म नहीं हो जायेगा ?

महान स्तालिन ने अपनी पुस्तिका में इसका जवाब देते हुए, हमें फिर सीख दी है कि किसी भी आर्थिक नियम के काम करने के तरीके को उसकी वस्तुगत परिस्थितियों से अलग करके नहीं देखना चाहिए, वरना हम हमेशा ही गलतियाँ करेंगे। बिकाऊ माल की पैदावार और मूल्य का नियम दासप्रथा, सामंती, पूँजीवादी और समाजवादी—चारों सामाजिक व्यवस्थाओं में पाया जाता है। परन्तु, हर व्यवस्था में उसका अमल भिन्न-भिन्न है; क्योंकि हर व्यवस्था की अपनी वस्तुगत परिस्थितियाँ—उत्पादन के लक्षण (तरीके)—भिन्न-भिन्न हैं।

उन्होंने समाजवादी समाज की व्यवस्था का गहरा विश्लेषण करके, बताया है कि सोवियत संघ में मूल्य के नियम के जारी रहने से पूँजीवाद नहीं पैदा हो सकता। क्यों ? इसलिए कि सोवियत संघ की व्यवस्था में उत्पादन के साधनों पर एक व्यक्ति का नहीं, समाज का अधिकार है। किस चीज का उत्पादन कितना हो, इसका निर्धारण मुनाफे की गुंजाइश—मूल्य का नियम—नहीं, बल्कि जनता की जरूरत करती है। सोवियत संघ में समाजवादी उत्पादन के दो क्षेत्र हैं। मूल्य का नियम केवल गाँवों में सहकारी खेती और शहरों में रोजाना की जरूरत की चीजों के उत्पादन के क्षेत्र और निर्यात के माल पर ही लागू होता है; क्योंकि सिर्फ यहीं बिकाऊ माल की पैदावार होती है। इस क्षेत्र में भी मूल्य का सिद्धान्त एक सीमित रूप में ही लागू है क्योंकि वह उत्पादन का नियंत्रण नहीं करता, सिर्फ सामूहिक खेती की पैदावार और रोजाना की जरूरत की चीजों की खरीद-बेच पर लागू होता है। उसके द्वारा इनकी कीमत तय की जाती है। इस तरह बिकाऊ माल के सीमित क्षेत्र के

साथ ही साथ, मूल्य के नियम का काम भी सोवियत संघ में सीमित है। वह उत्पादन का नियंत्रण नहीं करता। पैदावार के साधन—मशीनें, जमीन और श्रम-शक्ति आदि—सोवियत संघ में एक बिकाऊ माल नहीं है। साथ ही मजदूरों की तनखा श्रमशक्ति की कीमत के आधार पर नहीं, बल्कि मजदूरों की आवश्यकताओं के अनुसार—कि वह कितना हिस्सा सीधे-सीधे तनखा के रूप में चाहते हैं, कितना उत्पादन के साधनों को और बढ़ाने का खर्च करना चाहते हैं और कितना अपनी राज्य-व्यवस्था आदि की मद में लगाना चाहते हैं—उनकी योजना के अनुसार ही तय होती है। इसलिए, सोवियत संघ में पूँजीवाद का पुनर्जन्म नहीं हो सकता। वहाँ आर्थिक संकट, बेकारी और युद्ध की चाह नहीं भड़क सकती।

सोवियत संघ में मूल्य के नियम का क्षेत्र दिन-दिन सीमित ही नहीं हुआ है, नई परिस्थितियों के पैदा होने में समाजवादी समाज के संतुलित उत्पादन के विकास का नया आर्थिक नियम भी पैदा हुआ है, जो उत्तरोत्तर व्यापक होता जा रहा है।

महान स्तालिन हमें सिखाते हैं कि दूसरे आर्थिक नियमों की तरह, मूल्य का नियम भी अस्थायी है। कम्युनिस्ट समाज के बिकाऊ माल की पैदावार खतम होने के साथ-साथ, यह नियम भी नहीं रहेगा। और वह परिस्थिति जल्दी से जल्दी पैदा हो सके, इसके लिए जरूरी है कि मूल्य के नियम को अमली तौर पर पूरी गहराई के साथ समझा जाय, जिससे योजनाओं में कोई भी गलती न आ सके और जल्दी से जल्दी उनको सम्पन्न किया जा सके।

इस पूरी विवेचना के साथ, उन्होंने बताया है कि सोवियत के समाजवादी समाज में बिकाऊ माल की पैदावार और मूल्य के सिद्धान्त का मौजूद होना बताता है कि उत्पादन की शक्तियों के लक्षण और उत्पादन-सम्बन्धों में असंगति है। दोनों में विरोध है, परन्तु दोनों में टकराव नहीं है। दोनों ही समाजवादी व्यवस्था के समाजवादी उत्पादन के अधीन हैं; इसलिए दूसरे वर्ग-समाजों की भाँति, सोवियत संघ में नये आर्थिक नियमों को सत्तारूढ़ वर्ग की शक्ति का प्रतिरोध नहीं करना पड़ता; क्योंकि वहाँ दो विरोधी हितों वाले वर्ग नहीं हैं। वहाँ सोच-समझकर दोनों के बीच की खाई को पूरने के लिए सारे समाज द्वारा सचेतन प्रयास किया जाता है। पूर्व नियोजित पंच-वार्षिक योजनाओं द्वारा इस काम को सम्पन्न किया जाता है। वहाँ नये आर्थिक नियम प्राकृतिक नियमों की सरलता से ही लागू हो जाते हैं। उत्पादन बढ़ने की एक निश्चित अवस्था तक पहुँचने पर, यह खाई पूर दी जायेगी और फिर कम्युनिस्ट समाज में दोनों में कोई भी असंगति नहीं रहेगी।

महान् स्तालिन की यह विवेचना बताती है कि हमें अपने देश के आर्थिक ढाँचे और आर्थिक नियमों के स्वरूप को किस प्रकार समझने की कोशिश करनी चाहिए कि हमारे देश में क्यों इतनी तबाही मची हुई है। अपने देश ही क्यों, वह हर समाज-व्यवस्था के अध्ययन करने का तरीका बताती है।

आधुनिक पूँजीवादी व्यवस्था के आंतरिक टकराव

मौजूदा समाजवादी समाज की आर्थिक विवेचना के बाद, उन्होंने आधुनिक पूँजीवादी व्यवस्था के आंतरिक टकरावों की विवेचना की है; क्योंकि दो-तिहाई संसार जिसके जुए के नीचे कराह रहा है उसकी साफ और सही समझ के बिना कोई सही नीति निर्धारित नहीं की जा सकती।

उन्होंने द्वितीय महायुद्ध के बाद के पूँजीवादी संसार की मुख्य प्रकृतियों का विवेचन करके, बताया कि उसकी सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह हुई है कि पूरा संसार पहले की तरह एक मिला-जुला बाज़ार नहीं रह गया है। वह दो भागों में बँट गया है। एक ओर तो पूँजीवादी देशों का बाजार है और दूसरी ओर जनवादी देशों का। इसने पूँजीवादी व्यवस्था के आम संकट को और भी गहरा बना दिया है। संसार के इस एक मिले-जुले बाजार का छिन्न-भिन्न होना असल में उसके गहरे आम संकट का ही फल है। किस प्रकार ?

उन्होंने बताया है कि इस आम संकट को हमें शुरू से, उसके ऐतिहासिक रूप में ही देखना चाहिए। उसके पूरे विकास को समझे बिना, हम न तो उसकी गहराई का पूरा अंदाजा लगा सकेंगे और न उससे सही नतीजे ही निकाल सकेंगे।

इस शताब्दी से पहले भी पूँजीवादी व्यवस्था में आर्थिक संकट, मंदी आदि के चक्र चलते रहते थे, पर वह आम संकट का रूप धारण नहीं कर पाते थे। वह नियमित रूप से आते रहते थे। यह सही है कि वह सभी आंशिक रूप में इसी विश्वव्यापी आम संकट का रास्ता साफ कर रहे थे, पर पूँजीवाद उन पर काबू पा लेता था। वह नये उपनिवेशों के नये बाजारों को खोज कर, उनका समाधान कर लेता था। परन्तु इस सदी की पहली दशाब्दी तक, सारे संसार के बाजार इन साम्राज्यवादी शक्तियों ने आपस में बाँट लिये थे। नये बाजार नहीं रह गये थे। जर्मनी जैसे नये पूँजीवादी देश के विकास के लिए, नये बाजारों की जरूरत थी। पूँजीवादी व्यवस्था के आंतरिक विरोधाभासों के कारण, निरन्तर आनेवाले आर्थिक संकटों के लिए भी निरन्तर नये बाजारों की जरूरत बनी ही रहती थी। पर, नये बाजार थे ही नहीं। और, नये बाजार नहीं तो पूँजीवादी देशों में मंदी, बेकारी और आर्थिक संकटों का दौर शुरू हो जायेगा। नये बाजारों का सवाल पूँजीवादी देशों की व्यवस्था की मौत और जिन्दगी का सवाल था। इसीलिए, मौजूदा बाजारों के ही पुनर्विभाजन के लिए युद्ध छेड़ना जरूरी हो गया और सन् 1914 में शुरू होने वाला विश्व-युद्ध इस पूँजीवादी आम संकट का प्रारम्भ था।

चले थे छब्बे बनने और दुबे ही रह गये—वाली मसल चरितार्थ हुई। पूँजीवादी व्यवस्था के चौधरियों ने मिलकर नये पूँजीवादी प्रतियोगी देश जर्मनी को दबा लिया, परन्तु दुनिया का एक-छठा भाग पूँजीवादी व्यवस्था के घेरे से बाहर निकल गया। रूस में अक्तूबर की महान् क्रान्ति हुई और लेनिन तथा स्तालिन के नेतृत्व में मजदूरों, किसानों और सैनिकों की सोवियतों के समाजवादी राज्य की नींव पड़ गई। दूसरे शब्दों में, पूँजीवादी बाजार के बन्धन से दुनिया का एक-छठा भाग मुक्त हो गया। वह चले थे बाजारों का पुनर्विभाजन करने और वहाँ उनका बाजार बढ़ना तो दूर और भी सिकुड़ गया। इसने उनके आम संकट को और भी उभार दिया। यह आम संकट की पहली मंजिल थी।

अपने एक सबसे बड़े प्रतिद्वन्द्वी को हराकर, पूँजीवादी गुट ने जो नया बँटवारा किया, उससे कुछ दिनों बड़ी तेजी के साथ, जोर-शोर से चारों ओर फैलना शुरू किया। सन् 1916 में, लेनिन ने कहा था कि पूँजीवाद बड़ी तेज रफ्तार से बढ़ रहा है। सन् 1927 में, स्तालिन ने भी बताया था कि पूँजीवाद में 'क्षणिक स्थायित्व' का दौर है। लेकिन, मूल समस्या तो बाजारों की थी और उसमें कुल मिलाकर एक-छठे भाग की कमी और भी जुड़ गई थी। इस बार आम आर्थिक संकट ने और गहरा रूप प्रकट किया। सन् 1930 में, स्तालिन ने इस आम संकट की विशेषताएँ बताते हुए, कहा था कि संसार में पूँजीवादी व्यवस्था ही एकमात्र आर्थिक व्यवस्था नहीं रह गई है, अक्तूबर क्रांति की जीत ने उसकी जड़ें हिला दी हैं, पिछड़े हुए देशों में भी नई पूँजीवादी शक्तियाँ तेजी से प्रतिद्वन्द्विता के मैदान में उतर रही हैं और प्रमुख पूँजीवादी देशों में स्थायी रूप से बेरोजगारी बढ़ती जा रही है। प्रमुख पूँजीवादी शक्तियों ने सोवियत संघ को गुलाम बनाकर फिर इस संकट को टालना चाहा और उसे नेस्तनाबूद करने के लिए साजिशें करने लगे। फिर लगभग बीस वर्षों के अन्दर ही, दूसरा महायुद्ध छिड़ गया। इस बार फिर, पूँजीवादी बाजारों के घेरे को तोड़कर संसार का एक बहुत बड़ा भाग मुक्त हो गया; उसमें जनवादी राज्य कायम हो गये। यह पूँजीवाद के आम संकट की दूसरी मंजिल थी।

जनवाद की बढ़ी हुई ताकत देखकर, पूँजीवादी गुट के पाँवों के नीचे से धरती खिसक गई। वह एक ओर एटम बम की धमकी दिखाकर धमकाने लगा और दूसरी ओर सारे जनवादी देशों से व्यापार बन्द करके उनकी व्यापारिक नाकेबन्दी शुरू कर दी। इस प्रकार, पहले जहाँ समूचे संसार का एक मिला-जुला बाजार था वहाँ अब दो समानान्तर बाजार बन गये। इसका नतीजा क्या हुआ ? 'विनाश काले विपरीत बुद्धि'—वाली मसल हुई। पूँजीवाद की सारी समस्या ही बाजारों की समस्या थी। इस नाकेबन्दी के कारण, उसने और भी अधिक बाजारों से अपने को वंचित कर लिया। परिणाम ठीक उलटा ही हुआ। उसका आम संकट और तीव्रतर हो गया है।

एक ओर जनवादी बाजार बन गया, जो जनवादी देशों के पारस्परिक सहयोग के आधार पर दृढ़ता से खड़ा है और जो एक-दूसरे की मदद करते हुए, समानता की बिना पर अपनी सारी जरूरतें पूरी करता है। इतना ही नहीं, अब वह परिस्थिति भी पैदा हो गई है कि यह जनवादी बाजार अपनी जरूरतों से भी ज्यादा

उत्पादन करने लगा है।

दूसरी ओर पूँजीवादी बाजार है, जो एक-दूसरे की लूट-खसोट के आधार पर खड़ा है और जो एक-दूसरे का गला काटते हुए, प्रतियोगिता और मुनाफे की बिना पर एक-दूसरे के आर्थिक जीवन पर कब्जा जमाने की कोशिश में अपने आंतरिक विरोधाभासों को और तीव्रतम बनाता जा रहा है। उसका उत्पादन गिरता जा रहा है। निर्यात कम होता जा रहा है। जनता में बेरोजगारी फैली हुई है और उसकी खरीदने की शक्ति गिरती ही जा रही है। साथ ही, पिछड़े हुए देशों की जनता स्वतन्त्रता के लिए संघर्ष करके अपनी मुक्ति के द्वारा उसे और भी संकुचित बनाती जा रही है।

दो समानान्तर बाजारों के बनने से पैदा होने वाला, पूँजीवाद का यह आम संकट उसकी पूरी गहराई के साथ समझा जाना चाहिए। यह आम संकट पिछले आर्थिक संकटों और मंदी के नियमित रूप से आने वाले चक्रों की तरह नहीं है। आम संकट का अर्थ है–हर दिशा में, हर क्षेत्र में संकट होना और सिवाय आत्मविनाश के उससे उबरने का और कोई भी रास्ता न होना। यदि हम पिछली शताब्दी के अन्तिम चरण से पूँजीवादी उद्योग के विकास की गति का अध्ययन करें, तो इस आम संकट का अर्थ और भी स्पष्ट हो जायेगा।

इससे बिलकुल स्पष्ट हो जाता है कि सन् 1913 से शुरू हुए आम संकट के काल से पूँजीवादी उद्योगों के विकास की रफ्तार उत्तरोत्तर कम ही होती जा रही है।

विश्व में पूँजीवादी उद्योग के विकास की वार्षिक गति

काल	प्रतिशत गति
सन् 1860 से 1880 तक	3.1%
सन् 1890 से 1913 तक	3.7%
सन् 1913 से 1929 तक	2.4%
सन् 1929 से 1949 तक	1.3%

साथ ही, मौजूदा पूँजीवादी बाजार को लीजिये। पूँजीवादी देशों का सरगना अमरीका ही है। अमरीका का व्यापार संकुचित होता जा रहा है। आज अमरीका से निर्यात होनेवाले गैरफौजी माल में 30 प्रतिशत कमी हो गई है। पहले सभी पूँजीवादी देश इन देशों के साथ व्यापार किया करते थे। पर आज सन् 1937 के मुकाबले में, उनके साथ होनेवाला अमरीका का व्यापार लगभग 1/10, इंग्लैंड का 1/6 और फ्रांस का 1/4 ही रह गया है। यह पूँजीवादी बाजार की तसवीर का एक पहलू हुआ।

संकुचित होते हुए बाजार की इसी तसवीर का दूसरा पहलू यह है कि एक ओर तो अमरीका, इंग्लैंड और फ्रांस ने अपने रहे-सहे बाजारों–उपनिवेशों और अर्द्ध-उपनिवेशों–का शोषण और भी तीव्र कर दिया है और अमरीकी थैलीशाह दूसरों के बाजारों को छीनने के लिए हर किस्म की साजिशें और खून-खराबी कर रहे हैं; और दूसरी ओर अमरीका इंग्लैंड, फ्रांस और इटली की घरू अर्थ-व्यवस्था का गला भी घोंटता जा रहा है, वहाँ की जनता पर शोषण का बोझ बढ़ाता जा रहा है।

इन सबका लाजिमी नतीजा यही हो रहा है कि एक ओर तो अर्द्ध-उपनिवेशों और उपनिवेशों की जनता का मुक्ति-संग्राम तेज हो रहा है और दूसरी ओर इंग्लैंड, फ्रांस, इटली, पश्चिमी जर्मनी, जापान आदि की जनता अमरीकी डॉलरशाही से मुक्ति पाने के लिए छटपटा रही है और अपनी सरकारों पर दबाव डाल रही है कि वे अमरीकी प्रभाव से मुक्त होने के लिए कदम उठाएँ।

इस प्रकार, पूँजीवादी अर्थ-व्यवस्था का आम आर्थिक संकट अधिकाधिक गहरा हो चुका है। उनकी व्यवस्था के विरोधाभास ही एक-दूसरे में टकराव पैदा कर रहे हैं। सिवा एक-दूसरे के रहे-सहे बाजारों की छीना-झपट और दूसरे के गला घोंटने के, उनके सामने कोई रास्ता नजर नहीं आ रहा है। जनवादी देशों को नेस्तनाबूद करने के लिए, तीसरा विश्व-युद्ध छेड़ने का एक रास्ता उनके लिए हो सकता था और इस प्रकार वहाँ की

जनता को गुलाम बनाकर, नये बाजार पाकर वह कुछ दिनों के लिए अपनी समस्या सुलझा सकते थे। परन्तु द्वितीय विश्व-युद्ध में, उन्होंने सोवियत की अपार शक्ति को जान लिया था। वह यह भी जानते हैं कि उसके बाद जनवादी खेमे की शक्ति दुगुनी और तिगुनी बढ़ गई है—आधे यूरोप और चीन की महान वीर जनता की शक्ति भी उसमें जुड़ गई है। फिर, शान्ति आन्दोलन की शक्ति ने उन्हें यह भी बता दिया है कि दुनिया की जनता युद्ध के खिलाफ है। इसीलिए, वह समझ गये हैं कि जनवादी खेमे के खिलाफ युद्ध छेड़ने का अर्थ होगा—संसार में पूँजीवाद का खात्मा। इससे उनके आपसी टकराव और भी बढ़ गये हैं; और बढ़ते ही जायेंगे।

परिस्थिति के इस विश्लेषण के बाद, महान् स्तालिन ने नतीजा निकाला है कि आज सैद्धान्तिक रूप से तो आधुनिक पूँजीवादी खेमे और जनवादी खेमे के विरोध ही सबसे महत्त्वपूर्ण हैं; लेकिन अमली तौर से पूँजीवादी खेमे के अपने आंतरिक टकराव अधिक महत्त्वपूर्ण होते जा रहे हैं। और, यह सोचना गलत होगा कि पूँजीवादी देश जनवादी खेमे के खिलाफ एक हो ही जायेंगे और उनके बीच आपस में युद्ध नहीं छिड़ सकता। उन्होंने बताया है कि पूँजीवादी देशों के बीच युद्ध की अनिवार्यता का लेनिनवादी सिद्धान्त आज भी उतना ही लागू होता है, जितना कि पहले। द्वितीय महायुद्ध के समय भी, पूँजीवादी खेमे और समाजवादी खेमे का विरोधाभास ही सैद्धान्तिक रूप से सबसे प्रमुख था। पूँजीवादी देशों ने उसकी शुरुआत भी समाजवादी खेमे के खिलाफ साजिशों से की थी। परन्तु, अमली तौर पर उनके अपने विरोधाभास इतने तीव्र हो गये थे कि उनमें आपस में ही युद्ध ठन गया था। आज भी वही हो सकता है। महान् स्तालिन ने कहा है कि इन आंतरिक टकरावों की वजह से, शायद पहले इंग्लैंड तथा फ्रांस और बाद में जापान तथा पश्चिमी जर्मनी अमरीका के प्रभाव से मुक्त होने के लिए कदम उठायेंगे।

महान् स्तालिन के इस विश्लेषण ने शांति-आन्दोलन के लिए और भी व्यापक सम्भावनाओं के द्वार खोल दिए हैं, जैसा कि हम देख चुके हैं। उनका यह विश्लेषण हमें अपने देश की सही वैदेशिक नीति निर्धारित करने में मदद दे सकता है कि हम अमरीकी और अंग्रेजी पूँजी के प्रभाव से अपने देश को मुक्त करने की नीति अपनाएँ और जनवादी खेमे के बाजार के साथ अपने व्यापारिक सम्बन्धों को बढ़ायें, नहीं तो हमारे देश की जनता युद्ध, भुखमरी और बेकारी की शिकार होती जायेगी; क्योंकि हमेशा की तरह आज भी आधुनिक पूँजीवादी देश अपने आर्थिक संकट का सारा बोझ अर्द्ध-उपनिवेशों, उपनिवेशों और उन पर निर्भर रहनेवाले देशों पर ही डालने की सिरतोड़ कोशिशें कर रहे हैं।

आधुनिक पूँजीवाद का बुनियादी नियम

उपर्युक्त विश्लेषण से, यह स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक पूँजीवाद वह पूँजीवाद नहीं है जो मार्क्स के काल में था। वह भी नहीं है जो लेनिन के काल में था। तब, उसका बुनियादी नियम क्या है ?

किसी भी आर्थिक व्यवस्था का बुनियादी नियम वही होता है जो उस अर्थ-व्यवस्था के अन्तर्गत होनेवाले उत्पादन की शक्ति के लक्षणों के सार को व्यक्त कर दे; ऐसा सार जिससे उसकी सभी विशेषताएँ निश्चित होती हैं और उत्पादन के विकास की प्रक्रिया के पूरे गुण पता लग जाते हैं। आधुनिक पूँजीवाद का ऐसा बुनियादी नियम क्या है ?

मूल्य का नियम वह बुनियादी नियम नहीं हो सकता; क्योंकि वह पूँजीवादी व्यवस्था से पहले ही दास और सामंती व्यवस्थाओं में भी मौजूद था।

मार्क्स ने अपने काल के पूँजीवाद का बुनियादी नियम अतिरिक्त मूल्य का नियम बताया था। तब वह सोलहों आने सही था। यह अतिरिक्त मूल्य का नियम औसत मुनाफे की दर के नियम से सम्बन्धित था। औसत मुनाफे की दर के नियम के अनुसार, पूँजीवादी उत्पादन के सभी क्षेत्रों के मुनाफों में दूसरे क्षेत्रों के मुनाफों के बराबर होने की प्रवृत्ति होती है। इस प्रकार, सभी क्षेत्रों के मुनाफों की एक औसत दर बन जाती है। जिस क्षेत्र में भी मुनाफा उस औसत दर से नीचे होता है, पूँजीपति उत्पादन के उस क्षेत्र को छोड़कर दूसरे क्षेत्र में पूँजी लगाने जाता है। इस प्रकार, सारे क्षेत्रों की पूँजी में उत्पादन के कुछ ही क्षेत्रों में केन्द्रित होते जाने की

प्रवृत्ति बनने लगती है और नतीजा होता है—अति-उत्पादन, मंदी, आर्थिक संकट आदि का पूरा चक्र। यह औसत मुनाफे की दर कम होती जाती है। परन्तु, आज की पूँजीवादी व्यवस्था में पूँजीपति आपस में व्यक्तिगत तौर से प्रतियोगिता नहीं करते; आज उनमें एकाधिकारी कम्पनियों, कार्पोरेशनों, कर्टेलों, सिन्डीकेटों और विशालतम एकाधिकारी कम्पनियों की संस्थाएँ मिलकर सारे बाजार पर अधिकार जमा लेती हैं।

मुनाफे की औसत दर के अलावा, अति-मुनाफा भी आज के एकाधिकारी पूँजीवादी के लिए पूरा नहीं पड़ता। उपनिवेशों से सस्ते दामों में कच्चा माल तथा श्रम-शक्ति खरीदकर और औसत मूल्य से अधिक कीमत पर पक्का माल बेचकर जो अति-मुनाफा पूँजीवादी देश कमाते हैं, वह भी उनकी सर्वभक्षिणी भूख को शांत नहीं कर पाता।

तब, आधुनिक पूँजीवाद का बुनियादी नियम क्या होना चाहिए ? महान् स्तालिन ने बताया है कि यह बुनियादी नियम है—अधिकतम मुनाफा प्राप्त करना। "...अतिरिक्त मूल्य के नियम को और ठोस बनाना चाहिए और इजारेदार पूँजीवाद की परिस्थितियों के अनुसार, उसे और विकसित करना चाहिए। साथ ही, यह ध्यान रखना चाहिए कि इजारेदार पूँजीवाद को हर किसी तरह के मुनाफे की चाह नहीं है। उसे अधिकतम मुनाफा ही चाहिए। आधुनिक पूँजीवाद का वह बुनियादी आर्थिक नियम होगा।" (पृष्ठ 42)

यह सवाल उठ सकता है कि पूँजीपति तो हमेशा से ही अधिकतम मुनाफा प्राप्त करने की चेष्टा करते रहे हैं, तब इसमें नई बात क्या है ? इसको हमें बारीकी से समझना चाहिए। एक पूँजीपति की अधिकतम मुनाफा बटोरने की आंतरिक इच्छा और अधिकतम मुनाफा चूसने की वस्तुगत आवश्यकता में बहुत बड़ा फर्क है। पहले, पूँजीपति उसी क्षेत्र में पूँजी लगाते थे जिसमें अधिक मुनाफा मिलता था और उस पर मुनाफे की औसत दर के हिसाब से अधिक मुनाफा कमा लेते थे। इनमें से कुछ पूँजीपति तमाम तिकड़में करके, इस औसत दर से कुछ अधिक मुनाफा भी जुटाने में समर्थ हो जाते थे, परन्तु अधिकांश पूँजीपति इस औसत दर से नीचे ही रहते थे। पर दोनों ही तरह से पूँजीपति कायम रहते थे, हालाँकि और अधिक मुनाफा कमाने की उनकी इच्छा बनी ही रहती थी। परन्तु, आधुनिक पूँजीवाद की वह हालत नहीं रही है। आज के जमाने में अधिकतम मुनाफा कमाने की वस्तुगत आवश्यकता का मतलब है कि यदि वह अधिकतम मुनाफा प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं तो वह अपनी पूँजी सुरक्षित नहीं रख सकते। एक पूँजीपति के रूप में उनकी मौत हो जायेगी। वही कार्पोरेशन या विशाल कार्पोरेशनों की संस्था जिन्दा रह सकेगी, जो अधिकतम मुनाफा कमा सकती है। दूसरी छोटी-मोटी एकाधिकारी कम्पनियाँ मुनाफा कमा ही नहीं सकतीं, उन्हें अपने उद्योग-धन्धे बेच देने पड़ेंगे। वस्तुगत आवश्यकता का अर्थ है—अधिकतम मुनाफा या मौत; तीसरा कोई रास्ता नहीं। यही आधुनिक पूँजीवाद का बुनियादी नियम है।

अधिकतम मुनाफा कमाने के लिए, प्रमुख पूँजीवादी देशों में एकाधिकारी पूँजीपतियों के कुछ मुट्ठीभर विशालतम संगठन ही सारा व्यापार हथियाकर, अपने ही देश के छोटे-मोटे पूँजीपतियों तथा उनकी संस्थाओं के मुनाफे की औसत दर कम कर देते हैं; क्योंकि बाजारों पर उनका एकाधिकार कायम हो जाता है और दूसरे उनसे प्रतियोगिता नहीं कर सकते। सन् 1948 और '49 के दौरान में अमरीका के 25 विशालतम एकाधिकारी संगठनों ने 13 प्रतिशत अधिक मुनाफा कमाया, जब कि सभी दूसरे पूँजीपति और उनकी छोटी संस्थाओं को 20 प्रतिशत का घाटा रहा था। सन् 1933 से '52 तक के बीस वर्षों में, अमरीकी कार्पोरेशन ने 380 अरब डॉलर का मुनाफा कमाया है जो सन् '33 में अमरीका में लगी हुई कुल पूँजी के बराबर था।

> "आधुनिक पूँजीवाद के बुनियादी आर्थिक नियम की मुख्य विशेषताएँ और जरूरतें मोटे तौर से यों रखी जा सकती हैं : किसी देश की बहुसंख्यक जनता के शोषण, तबाही और गरीबी के जरिये; दूसरे देशों की जनता, खासकर पिछड़े हुए देशों की जनता, की गुलामी और उसकी बाकायदा लूट के जरिये—और अन्त में, युद्ध और राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था की फौजबन्दी के जरिये—जिससे अधिकतम मुनाफा हासिल किया जाता है—अधिकतम पूँजीवादी मुनाफा प्राप्त करना।" (पृष्ठ 42)

फिर उपनिवेशों, अर्द्ध-उपनिवेशों तथा कम विकसित पूँजीवादी देशों के बाजारों के पुनर्विभाजन के लिए,

वह युद्ध की तैयारियाँ करते हैं, फौजबन्दी करते हैं, राष्ट्रीय बजट का अधिकांश भाग युद्ध के लिए शस्त्रों और फौजों पर खर्च करते हैं और इसके लिए अपने यहाँ की जनता पर टैक्सों की भरमार करते जाते हैं। कुछ मुट्ठीभर एकाधिकारी विशालतम संगठनों को, जनता की कीमत पर, टैक्सों में भारी सुविधाएँ देते हैं और युद्ध का सामान आदि बनाने के लिए मनमाने ठेके दिया करते हैं। युद्ध के जमाने में, इन मुट्ठीभर एकाधिकारी महाप्रभुओं को 175 अरब डॉलर के और सन् '52 में, 73 अरब डॉलर के ठेके मिले थे। इन ठेकों में अमरीकी एकाधिकारी महाप्रभुओं ने पहले विश्व-युद्ध से 25 अरब, दूसरे विश्व-युद्ध से 100 अरब और कोरिया के युद्ध से 123 अरब डॉलर मुनाफे के रूप में कमाये थे। ब्रिटेन के बजट का एक-तिहाई भाग युद्ध की तैयारी पर खर्च होता है।

यही एकाधिकारी पूँजी के महाप्रभु उपनिवेशों, अर्द्ध-उपनिवेशों और कम विकसित देशों के बाजारों पर कब्जा जमा लेते हैं। उनकी लूट-खसोट, तबाही-बर्बादी और शोषण करते हैं। उनकी जनता के साथ ही साथ, अपने घर की जनता का शोषण भी अधिकतम कर देते हैं। आज अमरीका की जनता पर सन् 1937-38 की तुलना में, 12 गुना टैक्स और बढ़ गया है। अमरीकी मजदूर अपनी तनखा का एक-तिहाई टैक्सों में दे देता है। रोजाना की जरूरत की चीजों की कीमतें जो सन् '39 में सिर्फ 99.4 थीं, सन् '52 में आसमान पर चढ़कर 189.6 तक पहुँच गई हैं। सारे संसार के बचे-खुचे बाजारों पर, खास तौर पर अर्द्ध-औपनिवेशिक और कम विकसित देशों के बाजारों पर, छा जाने की प्रवृत्ति के लिए अमरीका द्वारा तमाम बाजारों पर खर्च की जाने वाली पूँजी का अनुपात देखना ही काफी होगा–

मार्शल योजना के बाहर रहनेवाले यूरोपीय देशों पर	7.6%
कनाडा पर	14.0%
मार्शल योजना के अन्तर्गत आनेवाले देशों पर	14.5%
अमरीकी प्रजातंत्रों पर	17.4%
मार्शल योजना के अन्तर्गत उपनिवेशों पर	20.0%
मध्यपूर्व के देशों पर	31.3%

आधुनिक पूँजीवाद का अधिकतम मुनाफा प्राप्त करने का यही तरीका है। इस अधिकतम मुनाफे के बिना वह पनप नहीं सकता और अधिकतम मुनाफा प्राप्त करने का इसके सिवा दूसरा रास्ता नहीं है। इस रास्ते पर चलने से उसके आंतरिक टकराव और तीव्रतर होते जाते हैं, उनका आम आर्थिक संकट और भी गहरा होता जाता है। उसका पूरा अस्तित्व खतरे में है। इसलिए, आधुनिक पूँजीवाद आज खतरे-भरे कदम उठाने का दुःसाहस भी कर बैठता है। परन्तु, उससे उसके आंतरिक विरोधों में और भी विस्फोट होने लगता है।

इस प्रकार, महान् स्तालिन द्वारा प्रतिपादित आधुनिक पूँजीवाद का अधिकतम मुनाफे का बुनियादी नियम हमें आधुनिक पूँजीवाद के आम संकट की गहराई और सभी क्षेत्रों पर पड़नेवाले उसके असर की व्यापकता को समझने में मदद देता है। और, यह समझ भारत को आर्थिक सहायता देने के अमरीकी ढोंग का पर्दाफाश कर देती है। हमें अपने राष्ट्रीय हितों के लिए पैदा होनेवाले खतरों के खिलाफ आगाह करती है। यह समझ हमें रास्ता दिखाती है कि अधिकतम मुनाफे के भूखे आधुनिक पूँजीवाद के खिलाफ सभी अर्द्ध-औपनिवेशिक और कम विकसित देशों का एक संयुक्त मोर्चा बनाकर, अपने राष्ट्रीय प्रभुत्व और हितों की रक्षा की जाय, युद्ध छेड़ने की उसकी दुःसाहसिक चेष्टाओं को दफना दिया जाय।

समाजवाद का बुनियादी नियम

दूसरी ओर समाजवाद का बुनियादी आर्थिक नियम क्या है ? सोवियत संघ में अर्थ-व्यवस्था के संतुलित विकास का नियम भी काम करता है। यह हम देख चुके हैं। पर, क्या वह समाजवाद का बुनियादी आर्थिक नियम बन सकता है ? महान् स्तालिन ने बताया है कि नहीं; क्योंकि यह संतुलित विकास किस दिशा में, किस उद्देश्य से होता है उसे यह नियम नहीं बताता। असल में यह बुनियादी आर्थिक नियम का प्रतिफल या प्रतिबिम्ब ही हो सकता है। स्वयं बुनियादी नियम नहीं बन सकता। तब वह बुनियादी नियम क्या है ?

उन्होंने समाजवादी अर्थ-व्यवस्था की विवेचना करके, बताया है कि वह बुनियादी आर्थिक नियम है—समाज की लगातार बढ़ती हुई भौतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं की अधिकतम पूर्ति करना। समाज की आवश्यकताओं की यह अधिकतम पूर्ति उच्चतर कौशल के आधार पर, समाजवादी पैदावार के निरंतर प्रसार और पूर्णता के जरिये की जाती है। समाजवादी पैदावार के संतुलित विकास का नियम इसी बुनियादी आर्थिक नियम पर आश्रित होकर, इसी के अन्तर्गत काम करता है।

एक ओर जहाँ आधुनिक पूँजीवाद का बुनियादी आर्थिक नियम अधिकतम मुनाफों के लिए समूची मानवता पर आम आर्थिक संकट, बेरोजगारी, भुखमरी, बेशुमार टैक्स, शोषण और युद्ध की बलाएँ थोपता है; दूसरी ओर वहीं समाजवाद का बुनियादी आर्थिक नियम समाज की बढ़ती हुई भौतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं की अधिकतम पूर्ति करके जनता की खुशहाली, तनखाहों में बढ़ती, चीजों की कीमतों में आम कमी, समृद्धि तथा समानता के आधार पर सभी देशों के साथ सहयोग और शांति को बढ़ावा देता है। सोवियत संघ की चौथी पंचवार्षिक योजना सन् 1951 में पूरी हुई है। इसके फलस्वरूप, उसकी राष्ट्रीय आय 83 प्रतिशत और बढ़ गई है। इसका तीन-चौथाई भाग मजदूर वर्ग में तनख्वाहों, फंडों, बोनसों और राज्य द्वारा प्रस्तुत की हुई सेवाओं के द्वारा बाँट दिया जायेगा; बाकी एक-चौथाई उत्पादन के साधनों को और भी विकसित करने में लगा दिया जायगा। पाँचवीं पंचवार्षिक योजना आजकल चल रही है। इसके द्वारा सन् 1955 तक राष्ट्रीय आय में 60 प्रतिशत वृद्धि और हो जायेगी। दूसरे विश्वयुद्ध के पहले की पैदावार के मुकाबले में, सारी पैदावार तिगुनी हो जायेगी।

यह दोनों बुनियादी आर्थिक नियम बताकर, महान् स्तालिन ने स्पष्ट कर दिया है कि किस ओर नाश, शोषण तथा मृत्यु है और किस ओर समृद्धि, समानता तथा जीवन है। यह मानवता की सबसे बड़ी सेवा है।

कम्युनिज़्म तक संक्रमण की प्राथमिक शर्तें

लेनिन ने अपनी महान् रचना **राज्य और क्रांति** में 'कम्युनिज़्म की आर्थिक परिपक्वता की विभिन्न मंजिलों' के मार्क्स के विश्लेषण की इस विशेषता पर सबसे अधिक जोर दिया है कि वह गैर-स्वप्नवादी है, कि उस विश्लेषण और विभिन्न मंजिलों के निर्देशन का आधार ठोस आर्थिक परिस्थितियाँ ही हैं; मार्क्स की अपनी आंतरिक इच्छा या स्वप्नवादिता नहीं है। मार्क्स ने विभिन्न वस्तुगत आर्थिक नियमों को समझने के बाद, उनसे पैदा होनेवाली परिस्थितियों के लेखे-जोखे के बाद ही उन मंजिलों का निर्देशन किया है।

महान् स्तालिन ने भी हमें इस पुस्तिका में यही मार्क्सवादी सत्य सिखाया है कि कम्युनिज्म की स्थापना सरकारी कानून पास कर देने से नहीं, बल्कि उसके लिए आर्थिक नियमों की वस्तुगत समझ के आधार पर सचेतन और नियोजित कदम उठाकर, उस संक्रमण के लिए ठोस परिस्थितियाँ तैयार कर देने पर ही होगी। वह परिस्थितियाँ क्या हैं ?

महान् स्तालिन ने सोवियत संघ के समाजवादी अर्थतंत्र से उसके उच्चतर रूप कम्युनिस्ट अर्थतंत्र तक संक्रमण की तीन बुनियादी शर्तें बताई हैं :

1. पैदावार के साधनों के उत्पादन का प्रसार और भी तेज रफ्तार से होता जाये।
2. पंचायती खेतों की सम्पत्ति को सार्वजनिक सम्पत्ति की सतह तक ले जाकर, समाजवादी पैदावार का एक ही क्षेत्र बनाया जाये।
3. चौमुखी सांस्कृतिक विकास की बढ़ती पक्की हो जाय।

ये शर्तें कैसे पूरी की जायेंगी ? इनके द्वारा किस प्रकार समाज में यह परिवर्तन आयेगा ?

पहली शर्त को लीजिए। पैदावार के साधनों का और भी तेज रफ्तार से प्रसार होते जाने का साफ मतलब है कि समाज की पुनरुत्पादन करने की शक्ति लगातार बढ़ती रहे। यदि यह शक्ति लगातार बढ़ती न रहे, एक सतह पर जाकर उत्पादन के साधनों का प्रसार यदि रुक जाय तो जाहिर है कि उसका उत्पादन भी एक निश्चित सतह तक ही रह जायेगा। इससे समाज का विकास भी रुक जायेगा। इसीलिए, यह जरूरी है कि उत्पादन

करने के साधनों–जैसे भारी मशीनें, कारखाने, भूमि, कौशल यानी श्रम-शक्ति की पैदा करने की क्षमता आदि–में लगातार वृद्धि होती रहे; तभी इनसे होनेवाला पुनरुत्पादन भी बढ़ता रहेगा और समाज की सभी शाखाओं को साज-सामान मिलता रहेगा। रोजाना की जरूरत की चीजों का उत्पादन भी बढ़ते रहने की गारंटी रहेगी और उनके उत्पादन पर होनेवाला खर्च भी कम होता रहेगा, उनकी कीमतें भी घटती ही जायेंगी। समाज की सम्पन्नता बढ़ती जायेगी। सोवियत संघ में सन् 1953 के अन्त तक, द्वितीय विश्वयुद्ध के पहले की अपेक्षा, उत्पादन के साधनों में 170 प्रतिशत की वृद्धि हो जायेगी। इसी के आधार पर, सन् 1955 तक कुल उत्पादन तिगुना हो सकेगा। हम इसी से समझ सकते हैं कि कम्युनिज़्म तक पहुँचने के लिए यह प्रसार कितना आवश्यक है।

दूसरी शर्त है–पंचायती खेती की सम्पत्ति को सार्वजनिक सम्पत्ति की सतह तक ले जाना। दूसरे शब्दों में, इसका अर्थ है–समाजवादी उत्पादन का एक ही राज्य-क्षेत्र बनाना। हम देख चुके हैं कि वर्तमान सोवियत समाज में समाजवादी उत्पादन के दो क्षेत्र हैं–राज्य या सामाजिक सम्पत्ति का उत्पादन-क्षेत्र और सहकारी खेती के उत्पादन का क्षेत्र। इन दोनों का एक ही राज्य या सामाजिक सम्पत्ति का उत्पादन-क्षेत्र बनाना पड़ेगा। इन दोनों क्षेत्रों के कायम रहने की वजह भी हम जान चुके हैं। हमने यह भी देख लिया है कि समाज में उत्तरोत्तर विकास होने की सबसे बड़ी शर्त मार्क्स का यही आर्थिक सिद्धान्त है कि समाज की उत्पादक शक्तियों का लक्षण सामाजिक सम्बन्धों के साथ मेल खाना चाहिए। एक मंजिल पर आकर, समाज की उत्पादक शक्तियों का विकास आगे बढ़ जाया करता है और हमेशा समाज के उत्पादन-सम्बन्ध पीछे पड़ जाते हैं। तब उन सम्बन्धों में परिवर्तन करना आवश्यक हो जाता है। उदाहरण के लिए, हम आज के पूँजीवादी समाज को देखें। सारे पूँजीवादी समाज में उत्पादन की शक्तियों का लक्षण (तरीका) सामाजिक यानी सामूहिक है, यानी आगे बढ़ गया है। किसी भी बिकाऊ माल का उत्पादन आज सामंती काल के तरीके से, व्यक्तिगत तौर पर करके, मुनाफे के साथ नहीं बेचा जा सकता; क्योंकि मशीनें कम समय और अधिक मात्रा में उसे तैयार करके सस्ते दामों में बेच सकती हैं। परन्तु दूसरी ओर, उत्पादन के सम्बन्ध पीछे पड़ गये हैं, यानी उत्पादन के साधनों पर समाज का नहीं, व्यक्तियों का अधिकार है। आज आधुनिक पूँजीवाद में आर्थिक संकटों और तबाही का यही मूल कारण है। जहाँ-जहाँ मानवता ने इस मूल विरोधाभास को दूर कर दिया है, वहाँ हम देख रहे हैं कि उत्पादन का चौमुखी विकास हो रहा है।

इसी को समझाते हुए, महान् स्तालिन ने इस पुस्तिका में बताया है कि समाजवादी उत्पादन में यह क्षेत्र सुरक्षित रखने की वजह उस समय की आर्थिक परिस्थिति थी। जाहिर है कि पूँजीवादी उत्पादन के तरीके से यह सामूहिक खेती के द्वारा उत्पादन करने का तरीका एक और ऊँची समाजवादी मंजिल थी और इसीलिए, समाज के विकास में इसने एक बड़ा भारी योग दिया था और अभी काफी समय तक देती भी रहेगी। पर, इसके कारण यह भूल जाना घातक होगा कि इन दो क्षेत्रों के उत्पादन के तरीकों में असंगति है, जो यदि आगे चलकर दूर न की गई तो समाज के विकास में एक रोड़ा बन जायेगी। जब सोवियत की उत्पादक शक्तियों का विकास एक निश्चित सतह तक पहुँच जायेगा, तब शहर के सामाजिक सम्पत्ति वाले क्षेत्र और सामूहिक खेती के उत्पादन के क्षेत्र का आपस में बिकाऊ माल के आधार पर खड़ा रहनेवाला सम्बन्ध पिछड़ जायेगा और उसे बदलना ही पड़ेगा। तभी कम्युनिस्ट अर्थतंत्र तक पहुँचा जा सकेगा।

यह कैसे किया जा सकेगा ? आज दोनों क्षेत्रों का सम्बन्ध बिकाऊ माल के उत्पादन पर निर्भर है, यानी सहकारी खेतों में जितना उत्पादन होता है उसमें से अपनी जरूरत या गाँवों में रखकर, बाकी शहर में बेच दिया जाता है और उससे मिली हुई रकम से अपनी रोजाना की जरूरत की चीजें शहर से खरीद ली जाती हैं। इससे मूल्य का नियम इस सीमित क्षेत्र में लागू होने लगता है। यह हम देख चुके हैं। अब इस सम्बन्ध को मिटाने का तरीका क्या है ? तरीका यह है कि सहकारी खेती से होनेवाली पैदावार के गाँवों की जरूरत से बचे हुए हिस्से को बिकाऊ माल के चलन से अलग कर दिया जाय। गाँवों की सामूहिक संस्थाएँ शहरों की उत्पादक संस्थाओं को अपनी अतिरिक्त पैदावार बेचकर उनसे अपनी जरूरत की चीजें हासिल न करें, बल्कि वे एक-दूसरे की उपज को आपस में विनिमय कर लें। सामूहिक खेतों की संस्थाएँ और राज्य-उद्योगों की संस्थाएँ

अपनी-अपनी जरूरत के मुताबिक अपनी-अपनी उपज की अदला-बदली कर लें।

लेकिन, यह सरकार की ओर से कानून बना देने से नहीं हो जायगा। इसके लिए दो चीजें जरूरी हैं—पहली तो यह कि राज्य के उद्योग-क्षेत्र का उत्पादन इतना अधिक बढ़ जाय कि वह गाँवों की जनता की जरूरत की चीजें काफी तादाद में और कम कीमत पर पैदा करने लगे; दूसरी यह कि सामूहिक खेती का क्षेत्र भी इतना अधिक अनाज और खेतिहर कच्चा माल पैदा करने लगे कि वह शहर की जनता और कारखानों की जरूरत पूरी कर सके। दोनों से ही एक-दूसरे का फायदा होगा। दोनों में से एक न होने से जरूरत के मुताबिक पैदावार की अदला-बदली, उपज-विनिमय का ढंग चल ही नहीं सकता।

उपज-विनिमय से क्या होगा ? बिकाऊ माल की पैदावार और इसीलिए मूल्य के नियम का क्षेत्र दिन-दिन सिकुड़ता जायेगा। समाज में जरूरतों की चीजें कम होने पर ही, यह जरूरत खड़ी होती है कि चीजों का मूल्य उनमें लगे हुए सामाजिक रूप से आवश्यक श्रम-समय के आधार पर तय किया जाय। जब उत्पादन इतना बढ़ जायगा कि सभी की जरूरतें पूरी हो सकती हैं; तो यह मूल्य का नियम बेमतलब हो जायेगा। हम अपनी-अपनी जरूरतों के आधार पर ही चीजों का महत्त्व आँकेंगे। फिर, आज़ जो राष्ट्रीय योजना बनाई जाती है उसमें सहकारी खेतों की मूल सम्पत्ति का शुमार नहीं किया जा सकता। उस समय इसका शुमार भी किया जा सकेगा। यह अड़चन मिट जायेगी और अधिक व्यापक योजना बनाई जा सकेगी। इसके फलस्वरूप, गाँवों और शहरों के बीच का भेद मिट जायेगा; क्योंकि एक ओर तो अधिकाधिक रूप में गाँवों के रहन-सहन का स्तर शहरों के बराबर होता जायेगा और दूसरी ओर तमाम बड़े-बड़े नये शहर उठ खड़े होंगे।

सहकारी खेती की सम्पत्ति का राष्ट्रीयकरण करना, सिर्फ एक आरम्भिक कदम होगा। सोवियत के समाजवादी समाज में राज्य तभी तक रहेगा जब तक वह चारों ओर से पूँजीवादी संसार से घिरा रहता है। जब सारे संसार में समाजवाद कायम हो जायगा, तब वहाँ राज्य जैसी संस्था बेमतलब हो जायेगी और सारी सम्पत्ति सार्वजनिक संस्थाओं के हाथों में दे दी जायेगी। वही कम्युनिज़्म का पूर्ण रूप होगा।

इस उपज-विनिमय के लिए, आज के सोवियत समाज में प्राथमिक संगठन मौजूद हैं। वहाँ आज भी खेतिहर उपज की 'सौदागरी' होती है। यह उपज-विनिमय ही है। इसी को सारे उत्पादन के क्षेत्र में फैलाने की आवश्यकता है।

इस प्रकार, दूसरी शर्त को तब तक पूरा नहीं किया जा सकता। जब तक कि पहली शर्त—पैदावार के साधनों के उत्पादन का तेज होती हुई रफ्तार से प्रसार—पूरी नहीं हो जाती। तब तक उपज-विनिमय और सरकारी खेतों की सम्पत्ति को सामाजिक सम्पत्ति के स्तर तक ऊँचा उठाने का आर्थिक आधार तैयार नहीं हो सकता।

तीसरी शर्त है—चौमुखी सांस्कृतिक विकास की गारंटी। इस सांस्कृतिक विकास के लिए, समाज के सभी सदस्यों की शारीरिक और मानसिक शक्तियों का चौमुखी विकास होना आवश्यक है। यह तभी हो सकता है जब उन्हें इतनी शिक्षा मिल जाये कि वे 'सामाजिक विकास के सक्रिय कार्यकर्ता' बन सकें, यानी समाज के उत्पादन के विकास में पूरी समझदारी से और क्रियात्मक ढंग से योग देने लगें। इसके लिए, यह भी जरूरी है कि वे अपने पेशे अपनी ही इच्छा से चुन सकें और जब किसी दूसरे पेशे को भी अपनाना चाहें तो अपने पहले पेशे को छोड़कर, उसे अपना सकें। यानी जिन्दगी-भर एक ही पेशे से बँधे रहने की अनिवार्यता न हो। यह कैसे हो सकता है ?

यह तभी हो सकता है जब काम करने के घंटे 5 या 6 से ज्यादा न हों। दूसरे शब्दों में, उत्पादन के साधनों का इतना विकास हो जाय कि समाज के हर सदस्य के द्वारा पाँच या छह घण्टे रोज काम करने से ही सारे समाज की आवश्यकताओं को पूरा करने लायक उत्पादन हो सके। समाज के सभी सदस्य अपना बाकी फुर्सत—लगभग दस या ग्यारह घण्टे रोज—का काम अपने सांस्कृतिक विकास में लगा सकें; अपनी रुचि के विषयों और पेशों का अध्ययन करने में लगा सकें। उसके लिए सार्वर्जानक लाजिमी 'पोलीटेकनिकल' (बहुकौशली) शिक्षा चालू की जाय और वह उससे फायदा उठाने के योग्य हों। यह भी जरूरी है कि उनकी तनखा कम-से-कम दुगुनी कर दी जाय और मकानों की व्यवस्था में बुनियादी सुधार हो सकें।

तभी सांस्कृतिक विकास सम्भव होगा और समाज के प्रत्येक सदस्य के लिए उच्चतर कौशल प्राप्त करना सम्भव हो सकेगा। मानसिक और शारीरिक श्रम का भेद भी तभी मिट सकेगा।

ड्यूरिंग मत-खंडन में एंगेल्स ने बताया था कि श्रम को एक बोझ के रूप में खतम करने और उसे जिन्दगी की एक प्रथम आवश्यकता बनाने के लिए, समाज को मनुष्य की श्रम के विभाजन से बँधे रहने की गुलामी मिटानी पड़ेगी। मार्क्स ने कहा था कि यह तभी हो सकेगा जबकि व्यक्तियों के चौमुखी विकास के साथ-साथ, सामाजिक उत्पादन की शक्तियाँ भी विकसित हो जायेंगी और सामाजिक सम्पदा के सारे स्रोत सवतंत्रता से प्रवाहित होंगे। महान् स्तालिन की इन तीनों शर्तों में यह सभी उपकरण आ जाते हैं। इन तीनों शर्तों के पूरा होने पर ही, यह मुमकिन होगा कि 'हरएक से उसकी योग्यता के अनुसार और हरएक को उसके काम के अनुसार' के इस समाजवादी सूत्र से आगे बढ़कर, 'हरएक से उसकी योग्यता के अनुसार और हरएक को उसकी जरूरत के अनुसार' के कम्युनिस्ट सूत्र तक पहुँचा जा सकेगा। तभी यह बुनियादी संक्रमण सम्भव होगा।

और, सोवियत संघ तेजी से इस ओर बढ़ा जा रहा है। युद्ध के पहले के काल की अपेक्षा, वहाँ रोजाना की जरूरत की चीजों का उत्पादन 60 फीसदी, असल तनखा 35 फीसदी, सहकारी खेतों के सदस्यों की आदमनी 40 फीसदी और श्रम-शक्ति की उत्पादक शक्ति 50 फीसदी बढ़ चुकी है। युद्ध के बाद से आज तक कीमतों में पाँच कटौतियाँ हो चुकी हैं।

इसी साल, 1 ली सितम्बर को मॉस्को विश्वविद्यालय की 32 मंजिली इमारत का उद्घाटन-समारोह हुआ है। इसमें 57 जातियों के लगभग 17,000 विद्यार्थी शिक्षा पा रहे हैं। इस इमारत के हॉल में 1,500 लोगों के बैठने लायक स्थान है। 148 शिक्षाभवनों, विज्ञान की शिक्षा के लिए 1,000 शिक्षाभवनों और विद्यार्थियों के निवास के लिए 5,754 कमरों के साथ-साथ एक विशाल पुस्तकालय भी है, जिसमें 12,00,000 ग्रंथ हैं।

इस प्रकार ठोस आर्थिक आधार बनाकर, समाज की परिस्थिति में बुनियादी परिवर्तन करने और नये उच्चतर समाज के निर्माण करने के महान् स्तालिन के इस मार्क्सवादी तरीके से हमें काफी शिक्षा मिलती है। हमें वह सही तरीका मिलता है जिसके द्वारा हम अपने देश की हालतों में भी बुनियादी आर्थिक और सांस्कृतिक परिवर्तन करने का काम शुरू कर सकते हैं। इससे हमारी सरकार की उस पंचसाला योजना की निस्सारिता समझ में आ जाती है, जो सामंतवाद का खात्मा किए बिना, बुनियादी आर्थिक परिवर्तन करके किसानों को जमीन दिए बिना ही देश की कृषि में युगान्तरकारी विकास करने की डींग मारती है; जो मजदूरों और किसानों की आमदनी और रहन-सहन में कोई परिवर्तन किए बिना ही, उनको अध्ययन के लिए अवकाश दिए बिना ही सार्वजनिक शिक्षा और संस्कृति में व्यापक प्रसार की बातें करके जनता को धोखे में डालती है। महान् स्तालिन की यह पुस्तिका हमें सीख देती है कि जब तक हम अपने देश की उत्पादन की शक्तियों के लक्षण और उत्पादन के पिछड़े हुए सम्बन्धों के टकराव को खतम नहीं कर देते, तब तक कोई भी सांस्कृतिक या आर्थिक विकास असम्भव है। सबसे पहले हमें सामंतवादी सम्बन्धों का क्रियाकरम करके, जमीन किसानों को देनी चाहिए; विदेशी और अपने देश की एकाधिकारी पूँजी को राज्य की सम्पत्ति बनाकर, कृषि और भारी उद्योग-धंधों के विकास की योजना बनानी चाहिए।

पुस्तिका की देन

महान् स्तालिन की यह पुस्तिका मार्क्सवादी-लेनिनवादी विज्ञान को एक और ऊँची सतह पर ले जाती है। संसार के मजदूर वर्ग के हाथों में एक अमोघ सैद्धान्तिक अस्त्र देती है। यह आज के काल का—समाजवादी अर्थ-व्यवस्था से कम्युनिस्ट अर्थ-व्यवस्था की उच्चतर मंजिल तक संक्रमण के काल का—मार्क्सवाद है।

इस पुस्तिका में महान् स्तालिन ने तमाम कठिनतम सामाजिक समस्याओं का वैज्ञानिक समाधान पेश किया है, जैसे शहरों तथा गाँवों, मानसिक तथा शारीरिक श्रम और उद्योग-धंधे तथा कृषि के विरोध की समस्याएँ। उन्होंने इनके आपसी टकरावों को मिटाने की राह बताई है। इस तरह, यह पुस्तिका मार्क्सवादी विज्ञान में एक नया और शानदार अध्याय जोड़ती है।

इस पुस्तिका में महान् स्तालिन ने मार्क्स और एंगेल्स की कई धारणाओं का संशोधन किया है और कई नई धारणाएँ प्रस्तावित की हैं। समाजवादी उत्पादन के दो क्षेत्रों की समस्या पर मार्क्स और एंगेल्स ने विचार नहीं किया था।

इस पुस्तिका में वर्तमान युग की सभी मूलभूत समस्याओं का समाधान किया गया है। और, जब-जब मार्क्सवाद ने किसी नये युग की मूल सैद्धान्तिक समस्याओं का समाधान किया है, तब-तब सामाजिक विकास को एक नई स्फूर्ति मिली है; क्योंकि जब सैद्धान्तिक समस्याएँ उलझी रहती हैं तब वह सामाजिक विकास में एक रोड़ा बन जाती हैं। इसीलिए, यह पुस्तिका जहाँ एक ओर सोवियत संघ और जनवादी शांतिप्रिय देशों के निर्माण-कार्य को एक नई स्फूर्ति देती है, वहीं दूसरी ओर सारे संसार के मजदूरों को शांति, जनवाद और समाजवाद के अपने संघर्ष में एक नया बल और विश्वास देती है। यह हमें बताती है कि भावी संसार की संभावित रूपरेखा कैसी होगी।

महान स्तालिन की पुस्तिका के बिना, इसके वैज्ञानिक ज्ञान के बिना, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की 19वीं कांग्रेस पूरे सोवियत संघ को कम्युनिज्म की उच्चतर मंजिल पर ले जाने के कार्यक्रम को इतने वैज्ञानिक तरीके पर नहीं बना सकती थी।

6. उन्नीसवीं कांग्रेस और अन्तिम सन्देश : महान् स्तालिन ने 28 सितम्बर, 1952 को अपनी पुस्तिका पूरी की थी। उसके लगभग एक सप्ताह बाद ही, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की कांग्रेस अक्तूबर के दूसरे सप्ताह में हुई। इस कांग्रेस में 44 दूसरे देशों की बिरादर कम्युनिस्ट पार्टियों के प्रतिनिधि भी मौजूद थे। इस प्रकार, यह कांग्रेस संसार के मजदूरों की एकता और उनकी बढ़ती हुई शक्ति की प्रतीक बन गई थी।

इस कांग्रेस में कॉ. मालेन्कोफ ने अपनी रिपोर्ट पेश की थी। इस रिपोर्ट में महान् स्तालिन की पुस्तक के द्वारा प्रस्तुत किये गये वैज्ञानिक मार्क्सवाद की रोशनी में अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति का विवेचन किया गया था। उसमें बताया गया था कि कैसे फासिस्टों की हार के कारण, साम्राज्यवादियों की सारी योजनाएँ धूल में मिल गई हैं और समाजवाद तथा जनवाद के खेमे की शक्ति और अधिक बढ़ गई है; किस प्रकार उपनिवेशों और अर्द्ध-उपनिवेशों की जनता में जनवाद की स्थापना और मुक्ति के लिए एक नया उभार आया है। चीन में जनवाद की जीत के साथ-साथ, दुनिया की एक-तिहाई जनता जनवाद और शान्ति के खेमे में आ गई है। साम्राज्यवादियों का खेमा आम संकट के भँवर में फँसकर नाश की ओर बढ़ रहा है और जनवाद का खेमा महान् निर्माणकारी योजनााएँ कार्यान्वित कर रहा है। सोवियत संघ की जनता कम्युनिज्म के निर्माण की ओर अग्रसर हो रही है। उन्होंने सारी दुनिया के सामने युद्धखोरों को बेनकाब करके, सारे संसार के जनसाधारण को शान्ति के लिए क्रियाशील बनाने का काम रखा।

इस कांग्रेस ने सोवियत की जनता के सामने कम्युनिज्म की उच्चतर मंजिल तक पहुँचने की परिस्थितियाँ पैदा करने के लिए अगली पंचसाला योजना का मसविदा भी पेश किया।

इस कांग्रेस ने शान्ति और मुक्ति के मानवता के भावी पथ को प्रकाशित किया।

अन्तिम सन्देश

इसी कांग्रेस के अन्त में 14 अक्तूबर, 1952 को हमारे युग के सबसे बड़े महापुरुष स्तालिन ने मानवता को अपना यह अन्तिम संदेश दिया :

" साथियो ! मुझे इजाजत दीजिए कि मैं अपनी कांग्रेस की तरफ से उन सभी बिरादराना पार्टियों और दलों के प्रति उनके मित्रतापूर्ण अभिनन्दन के लिए, सफलता की उनकी कामनाओं के लिए और उनके विश्वास के लिए आभार प्रदर्शित करूँ, जिनके प्रतिनिधियों ने अपनी उपस्थिति से हमारी कांग्रेस की इज्जत बढ़ायी है या जिन्होंने कांग्रेस के लिए अभिनन्दन के सन्देश भेजे हैं।

" उनका यह विश्वास हमारे लिए विशेष रूप से मूल्यवान है। यह इस बात का प्रतीक है कि जनता के उज्ज्वल भविष्य के लिए हमारी पार्टी के संघर्ष में, जंग के खिलाफ संघर्ष में और शान्ति कायम रखने

के संघर्ष में वे हमारी पार्टी का समर्थन करने को तैयार हैं।

" यह सोचना गलत होगा कि चूँकि हमारी पार्टी अब एक शक्तिशाली ताकत बन गयी है, इसलिए उसे समर्थन की जरूरत नहीं रही। यह बात सही नहीं है। बाहरी देशों की बिरादराना जनता के विश्वास, सहानुभूति और समर्थन की हमारे देश को हमेशा जरूरत रही है और जरूरत रहेगी।

" इस समर्थन की विशेषता यह है कि जब कभी कोई बिरादराना पार्टी हमारी पार्टी की शान्तिमय आकांक्षाओं का समर्थन करती है, तो साथ ही साथ यह, शान्ति कायम रखने के संघर्ष में स्वयं उसकी जनता का समर्थन भी हो जाता है। सन् 1918-19 में, जब ब्रिटेन के पूँजीपति वर्ग ने सोवियत संघ पर हथियारबन्द हमला किया था, तो ब्रिटेन के मजदूरों ने 'रूस में दखलन्दाजी बन्द करो' का नारा बुलन्द करके, उस जंग के खिलाफ संघर्ष का संगठन किया था। उनका यह समर्थन, सबसे पहले शांति के लिए ब्रिटेन की जनता के संघर्ष का समर्थन था और साथ ही, वह सोवियत संघ का समर्थन भी था। कामरेड थोरे या कामरेड तोगलियाती जब ऐलान करते हैं कि उनके देशों की जनता सोवियत संघ की जनता के खिलाफ लड़ाई न लड़ेगी तो, यह ऐलान सबसे पहले शांति के लिए संघर्ष करनेवाले फ्रांस और इटली के मजदूरों और किसानों का समर्थन करना होता है और साथ ही, वह सोवियत संघ की शांतिमय आकांक्षाओं का समर्थन भी होता है। पारस्परिक समर्थन की इस विशेषता का कारण यह है कि हमारी पार्टी के हित, न सिर्फ शांति-प्रेमी जनता के हितों के खिलाफ नहीं जाते, बल्कि उसके विपरीत, उनके हितों के साथ एक रूप हो जाते हैं। जहाँ तक सोवियत संघ का सवाल है, उसके हित विश्व-शांति के ध्येय से एकदम ही अभिन्न हैं।

" स्वाभाविक है कि हमारी पार्टी बिरादराना पार्टियों की ऋणी नहीं रह सकती और उसे अपनी ओर से उनका और स्वतंत्रता के उनके संघर्ष में, शान्ति कायम रखने के उनके संघर्ष में, उनके देशों की जनता का भी समर्थन करना ही चाहिए। सन् 1917 में, जब हमारी पार्टी ने राज्यसत्ता पर कब्जा कर लिया और जब पूँजीपतियों व जमींदारों के उत्पीड़न के खात्मे के लिए कारगर कदम उठा लिया था, तो बिरादराना पार्टियों के प्रतिनिधियों ने हमारी पार्टी के साहस और कामयाबियों की प्रशंसा में उसे दुनिया के क्रांतिकारी आंदोलन और मजदूर आंदोलन की 'तूफानी पलटन' की उपाधि दी। इस तरह उन्होंने यह आशा प्रकट की कि 'तूफानी पलटन' की सफलताओं से, पूँजीवादी जुए के नीचे कराह रही जनता को राहत पाने में मदद मिलेगी। मेरे विचार में हमारी पार्टी ने इन आशाओं को पूरा किया है, खास तौर से दूसरे विश्व-युद्ध के दौरान में जब जर्मन और जापानी फासिस्टी आतंक का अंत करके, सोवियत संघ ने यूरोप और एशिया की जनता को फासिस्टी गुलामी के खतरे से मुक्त किया।

" जब हमारी यह 'तूफानी पलटन' एकमात्र और अकेली थी, जब उसे इस नेतृत्व की भूमिका को करीब-करीब अकेला ही पूरा करना पड़ रहा था, तब बेशक इस गौरवशाली उद्देश्य को पूरा करना बहुत ही मुश्किल काम था। लेकिन, यह तो बीते जमाने की बात है। आज हालात बिलकुल ही भिन्न हैं। आज जब चीन और कोरिया से लेकर चैकोस्लोवाकिया और हंगरी तक जनता के जनवादी देशों के रूप में नयी 'तूफानी पलटनें' सामने आ गयी हैं–तो अब हमारी पार्टी के लिए संघर्ष करना ज्यादा आसान हो गया है और सचमुच में काम बड़े मजे में आगे बढ़ रहा है।

" वे कम्युनिस्ट, जनवादी, मजदूर और किसान पार्टियाँ जिनके हाथों में अब तक भी सत्ता की बागडोर नहीं आयी है और जो अभी भी पूँजीपति वर्ग के तानाशाही कानूनों के बूटों के नीचे काम कर रही हैं, उनकी ओर खास ध्यान देने की जरूरत है। बेशक, उनके लिए काम करना ज्यादा मुश्किल है। फिर भी, उनके लिए काम करना उतना कठिन नहीं है जितना कि वह हमारे रूसी कम्युनिस्टों के लिए जारशाही जमाने में था, जब थोड़े आगे बढ़े हुए आंदोलन को भी भयानक अपराध करार दे दिया जाता था। फिर भी, रूसी कम्युनिस्ट दृढ़तापूर्वक डटे रहे, वे मुश्किलों से नहीं डरे और उन्होंने विजय हासिल की। इन पार्टियों के बारे में भी ऐसा ही होगा।

" आखिर इन पार्टियों के लिए काम करना उतना ही कठिन क्यों नहीं रहा है, जितना कि वह जारशाही जमाने में रूसी कम्युनिस्टों के लिए था ?

" एक तो इसलिए कि उनके सामने संघर्ष और सफलताओं की वे मिसालें मौजूद हैं, जिन्हें सोवियत संघ और जनता के जनवादी देशों ने पेश किया है। इस कारण, वे इन देशों की गलतियों व सफलताओं से सीख सकती हैं और इस तरह अपना काम आसान बना सकती हैं।

" और, दूसरे इसलिए कि स्वाधीनता आन्दोलन का खास दुश्मन–पूँजीपति वर्ग–स्वयं बदल गया है, बहुत काफी बदल गया है। वह और ज्यादा प्रतिक्रियावादी हो गया है। वह जनता से अलग हो गया है और इस तरह उसने अपने को कमजोर बना लिया है। स्वाभाविक है कि यह परिस्थिति भी, क्रांतिकारी और जनवादी पार्टियों के काम को आसान बनायेगी ही।

" पहले पूँजीपति वर्ग उदारवादी होने का शौक कर सकता था, पूँजीवादी-जनवादी स्वतंत्रताओं का समर्थन कर सकता था और ऐसा करके वह जनता के बीच लोकप्रियता हासिल कर सकता था। अब तो उस उदारवाद का एक चिह्न भी बाकी नहीं रह गया है। तथाकथित 'व्यक्ति की आजादी' अब नहीं रह गयी है। अब व्यक्ति के अधिकार सिर्फ उन्हीं के लिए माने जाते हैं जिनके पास पूँजी है; दूसरी ओर बाकी तमाम नागरिकों को सिर्फ शोषण के योग्य इन्सानी कच्चा माल माना जाता है। मनुष्यों और देशों के समान अधिकारों के सिद्धान्त को पैरों तले रौंदा गया है। उसकी जगह, यह सिद्धान्त कायम किया गया है कि अल्पमत शोषकों को तो तमाम अधिकार हैं और बहुमत शोषितों को कोई अधिकार नहीं है। पूँजीवादी-जनवादी स्वतंत्रताओं के झंडे को उठाकर फेंक दिया गया है। यदि आप जनता की बहुसंख्या को अपने इर्द-गर्द संगठित करना चाहते हैं तो मेरे विचार से आपको ही, कम्युनिस्ट और जनवादी पार्टियों के प्रतिनिधियों को ही, इस झंडे को उठाना होगा और आगे ले चलना होगा। दूसरा और कोई नहीं है जो इसे उठा सके।

" पहले पूँजीपति वर्ग को राष्ट्र का अगुआ माना जाता था। उसने राष्ट्र के अधिकारों और आजादी को 'सबसे ऊपर' मानकर उनका समर्थन किया था। अब 'राष्ट्रीय सिद्धान्त' का एक भी चिह्न बाकी नहीं रह गया है। अब पूँजीपति वर्ग डॉलरों के लिए राष्ट्र के अधिकारों और आजादी को बेच देता है। राष्ट्रीय आजादी और राष्ट्रीय स्वाधीनता का झंडा उठाकर फेंक दिया गया है। यदि आप अपने देश के देशभक्त होना चाहते हैं, यदि आप राष्ट्र की अगुआ शक्ति बनना चाहते हैं, तो इस बात में जरा भी शक नहीं है कि आपको ही, कम्युनिस्ट और जनवादी पार्टियों के प्रतिनिधियों को ही, इस झंडे को उठाना होगा और आगे ले चलना होगा। दूसरा और कोई नहीं है जो उसे उठा सके।

" आज की स्थिति ऐसी ही है। स्वाभाविक है कि इन तमाम परिस्थितियों से उन कम्युनिस्ट और जनवादी पार्टियों के काम में आसानी होगी, जिनके हाथों में अभी तक भी सत्ता की बागडोर नहीं आयी है।

" फलस्वरूप, जहाँ अभी भी पूँजी का बोलबाला है, उन देशों की हमारी बिरादर पार्टियों की सफलता और विजय पर भरोसा करने का हर कारण मौजूद है।

" हमारी बिरादर पार्टियाँ जिन्दाबाद !

" बिरादर पार्टियों के नेता दीर्घजीवी हों और स्वस्थ रहें !

" राष्ट्रों के बीच शांति जिन्दाबाद !

" जंगबाजों का नाश हो ! "

महान् स्तालिन का यह अन्तिम सन्देश हमारे देश के लिए विशेष महत्त्व का है। हमारे देश में हर मनुष्य कहता है कि राष्ट्रीय कांग्रेस पार्टी ने पन्द्रह अगस्त के अपने सभी वायदों को तोड़ दिया है, और उन सभी सिद्धान्तों के खिलाफ खड़ी हो रही है, जिनके लिए एक जमाने में वह साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ा करती थी। महान् स्तालिन ने बताया है कि अब उन सिद्धान्तों की रक्षा करने का काम भारतीय मजदूरों और किसानों की कम्युनिस्ट और दूसरी जनवादी पार्टियों को ही करना पड़ेगा। यह सीख हमें अपने देश की स्वतंत्रता, प्रभुता और नागरिक अधिकारों की रक्षा के लिए सभी जनवादी पार्टियों का एक संयुक्त मोर्चा बनाने की राह बताती है।

11

महाप्रयाण (सन् 1953)

19वीं कांग्रेस ने नई पंचवार्षिक योजना तथा दूसरी बातों पर अपने निर्णय करते समय, नहीं सोचा था कि पार्टी-कांग्रेस में महान् नेता की यह अन्तिम उपस्थिति है।

आखिर क्रांति का पैंतीसवाँ वार्षिकोत्सव आया। 6 नवम्बर को बोल्शोई नाट्यशाला की बैठक में, स्तालिन मार्शल की वर्दी में स्वस्थ दीख पड़ते थे। उन्होंने दृढ़तापूर्वक कदम बढ़ाते हुए, दूसरी पंक्ति के बीच में अपना स्थान ग्रहण किया। उनके साथ पोलिट ब्यूरो के सदस्य और दूसरे नेता भी थे। अगले दिन हर साल की तरह लाल मैदान में अक्तूबर क्रांति का महान् महोत्सव बड़े जोश-खरोश के साथ मनाया गया। उस समय भी स्तालिन मार्शल की वर्दी में आकर, लेनिन-समाधि की छत पर खड़े हुए। लोगों ने अपने प्रिय नेता के दर्शन से गद्गद हो, हर्षध्वनि की। प्रधान भाषण मार्शल तिमोशेंको ने किया। कोई दुःशंका नहीं थी। यद्यपि समय-समय पर उनके स्वास्थ्य के सम्बन्ध में चिन्ताजनक खबरें भी उड़ा करती थीं, लेकिन साम्राज्यवादियों की झूठ से अघाये हुए लोग उन्हें कोई महत्त्व नहीं देते थे।

अन्त में, 1953 का सन् आया। 7 फरवरी को अर्जेन्तीन के राजदूत ब्रावो ने स्तालिन से मुलाकात करने का सौभाग्य प्राप्त किया। उसने 24 मिनटों तक मुलाकात की और उत्सुक जनता ने बहुत संतोष की साँस ली, जबकि ब्रावो ने बतलाया : "वह शारीरिक तौर से बहुत ही स्वस्थ और बातचीत में असाधारण तौर से सजग दिखाई पड़े।" 17 फरवरी की रात को भारतीय राजदूत क. प. स. मैनन ने भी स्तालिन से क्रैमलिन में आध घंटे तक मुलाकात की। उन्होंने भी अर्जेन्तीन के राजदूत की तरह ही उनके स्वास्थ्य के बारे में खुशखबरी दी। लेकिन, 73 वर्षों का कर्मठ शरीर कितने दिनों तक साथ देता ?

1. निधन

आखिर 1 मार्च का वह शोचनीय दिन आ गया, जब हृदय के धड़कते रहते भी मस्तिष्क ने विश्राम लेना शुरू किया। उस दिन रात को वह बेहोश हुए, तो फिर होश में नहीं आये। 5 मार्च को उन्होंने अपनी जीवन-यात्रा समाप्त की। महान् स्तालिन की बीमारी और मृत्यु के बारे में सूचना देते हुए, डाक्टरों ने निम्न बुलेटिन निकाला :

" 1 मार्च की रात को खून का दबाब बढ़ जाने तथा रक्त की नालियों की दीवारों के मोटे और कड़े पड़ जाने के कारण, यो. वि. स्तालिन के मस्तिष्क के अन्दर बायें अर्द्धवृत्त में रक्तस्राव हो गया। फलस्वरूप, शरीर के दाहिने हिस्से में लकवा मार गया और उनकी चेतना-शक्ति का लगातार ह्रास शुरू हो गया। बीमारी के ठीक पहले दिन ही, स्नायु-केन्द्रों की क्रियाओं में गड़बड़ी के लक्षण पाये गये। दिन-प्रतिदिन यह गड़बड़ी बढ़ती ही गई। लम्बे विराम के साथ, रुक-रुककर आनेवाली साँसों के रूप में यह गड़बड़ी प्रकट हुई। 2 मार्च की रात को साँस लेने की क्रिया में गड़बड़ी जब-तब भयानक रूप धारण करने लगी। बीमारी शुरू होने के समय से ही, हृदय और रक्त-संचार-प्रणाली में भारी विकार पाये गये—खून का ऊँचा दबाव, नाड़ी की निरन्तर असमान धड़कन तथा दिल का फैल जाना। साँस लेने की क्रिया तथा रक्त-संचार में गड़बड़ी के बढ़ते जाने के कारण, 3 मार्च के दिन से ऑक्सीजन की कमी शुरू हो गई थी। बीमारी के पहले दिन से तापमान अत्यन्त बढ़ गया था और रक्त के श्वेतकणों में वृद्धि हो गई थी, जो फेफड़ों में सूजन की बढ़ती की सूचक हो सकती थी।

" बीमारी के आखिरी दिन शरीर की सामान्य स्थिति तेजी से बिगड़ गई, दिल और रक्त-संचार-प्रणाली में गहरे और भीषण ह्रास (शरीर-पात) के बार-बार आक्रमण होने लगे। बिजली के जरिये दिल की धड़कनों का चार्ट लेने से पता चला कि हृदय की मांसल दीवारों के और कड़े हो जाने से, वर्तुलाकार धमनियों के अन्दर

रक्त-संचार में भारी गड़बड़ी आ गई।

"5 मार्च को दोपहर के बाद, रोगी की हालत तेजी से बेहद बिगड़ गई : साँस उखड़ गई, उसकी गति अत्यन्त विकृत हो गई, नाड़ी की धड़कन प्रति मिनट 140-150 तक पहुँच गई, नाड़ी का फैलाव गिर गया।

"हृदय, रक्त-संचार-क्रिया तथा साँस के ह्रास में उत्तरोत्तर बढ़ती के साथ नौ बजकर पचास मिनट (भारतीय समय—रात के एक बजकर बीस मिनट) पर यो. वि. स्तालिन की मृत्यु हो गई।"

सोवियत की जनता अपने महान् नेता को कितना प्यार करती थी, किस तरह उन्हें पिता, त्राता और महामानव के रूप में देखती थी, इसका पता उनके सम्मान में की गई परेड, अर्थी की यात्रा और उनके जन्म-स्थान गोरी में व्यक्त हुए जनता के उद्‌गारों से लगता है। इसीलिए, हम यहाँ अलेक्सेह सुरिकोफ द्वारा लिखित वर्णन और 'प्राव्दा' के लेखों से उद्धरण दे रहे हैं।

2. सम्मान-गारद

रात और दिन, बिना किसी विराम के, लगातार तीन दिनों तक मॉस्को के बाजारों में लोगों के प्रेम और शोक का सजीव सागर उमड़-उमड़कर स्तम्भ-सदन की ओर प्रवाहित होता रहा। जिसके भी वक्ष में सोवियत देशभक्त का हृदय धड़का है, ऐसा हरएक व्यक्ति इन दिनों नेता और शिक्षक की अर्थी के पास तक पहुँचने की कोशिश कर रहा था, ताकि वह अपनी श्रद्धांजलि अर्पित कर सके, स्तालिन के प्रति अपनी पितृभक्ति को व्यक्त कर सके। उनके लक्ष्य के प्रति, उनकी पार्टी के प्रति वफादारी की शपथ ले सके। नेता को अन्तिम श्रद्धांजलि देने का यह क्रम अगर सालभर तक चलता रहता, तब भी यह सजीव मानव-सागर इसी प्रकार अन्तहीन बना रहता, जिस प्रकार कि इन उन्तीस सालों से वह अनंत सजीव सागर ग्रेनाइट पत्थर से बनी लेनिन की समाधि के सामने उमड़ता रहा है।

हर कोने से स्तम्भ-सदन में लाये गये फूलों और हारों का ढेर लोगों के प्रेम की अभिव्यक्ति का केवल एक ही रूप है। लेकिन, इन फूलों की मूक भाषा कितनी अर्थपूर्ण है ! हारों के साथ लगे स्याह हाशिये वाले लाल फीतों पर सुनहरी अक्षरों में रूसी और बन्धु-जातियों की भाषाओं में शुभ्रतम, अत्यन्त सच्चे, कोमलतम और साहस से पूर्ण शब्द अंकित हैं।

सोवियत जनता के प्रेम और शोक को मुखर करनेवाले हारों के साथ-साथ, हमारे देश की सीमाओं से बाहर शान्ति और समाजवाद के संघर्ष में योग देनेवाले हमारे मित्रों के हार भी शामिल हैं। महान चीन, संघर्षरत कोरिया, जनता के जनतंत्रों और पूँजीवादी देशों की बिरादराना कम्युनिस्ट तथा मजदूर पार्टियों के एक के बाद एक प्रतिनिधि-मंडलों ने शव-शय्या के चरणों में अपने हार अर्पित किए। इनमें से एक पर, ये शब्द अंकित हैं : 'एक कृतज्ञ और निस्सीम परमभक्त शिष्य मौरिस थोरेज की ओर से !'

इन तीन दिनों में कई-कई घंटों तक, दिन और रात उमड़ते-बढ़ते अबाध मानव-सागर के तटों पर मैं खड़ा रहा। लगता था, जैसे सामने से गुजरनेवाले हरएक भाई और हरएक बहिन के हृदय की धड़कन सुनाई दे रही हो। मेरे कानों ने सुना उन शब्दों को, जो मुँह से प्रकट हुए थे; और हृदय ने आँखों की चमक से अनुभव किया अन्तर से निकले उन शब्दों की सच्चाई को—वे शब्द जो मेरे देशवासियों के मुँह से महान् विदाई के इन क्षणों में प्रकट हुए हैं।

मॉस्को-निवासी इस किशोर को देखिये, जिसके सिर पर घने लाल बाल छाये हैं। अनायास ही उसके पाँव धीमे पड़ जाते हैं और वह एक लम्बी गहरी नजर से स्तालिन के रूप को देखता है—ठीक बड़े लोगों की भाँति। अपने ऊर्ध्वमुखी और उज्ज्वल समूचे भावी जीवन के लिए, वह महान् स्तालिन की छवि को, उनकी अमिट स्मृति को अपने हृदय में उतार लेना चाहता है।

सोवियत अफसरों और तोपखाना एकेदमी के छात्रों की पाँतें, एक के बाद एक महान जनरलस्सिमो के सामने से गुजरती हैं। चौड़े कंधों के ये प्रतापी युवक, मालूम होता है, खास तौर के मजबूत इस्पात से ढाले गये हैं। आकृति-सम्बन्धी कुछ अलक्षित चिह्नों से उनमें रूसियों, उक्रेनियों और उजबेकों को और हमारी शानदार

मातृभूमि में बसनेवाली अन्य जातियों की सन्तानों को पहचाना जा सकता है। हमारे देश की जनता की शानदार स्तालिन-पीढ़ी के इन किशोर-प्रतिनिधियों की प्रतिभापूर्ण आँखों में कितना अक्षय पितृप्रेम और सैनिकों जैसी वफादारी हिलोरें ले रही है।

नेता की अर्थी के निकट अभी-अभी दो सामूहिक-किसान महिलाओं ने 'सम्मान-गारद' में स्थान ग्रहण किया है–इनमें एक बुजुर्ग महिला है और दूसरी फुर्तीली तपे चेहरे की एक किशोरी। दोनों के वक्षों पर 'समाजवादी-श्रम-वीर' के सोने के तारे दिखाई दे रहे हैं। साम्यवाद के प्रतिभाशाली शिल्पकार की महान् विदाई के इन क्षणों में, सोवियत जनता की सभी पीढ़ियों की स्तालिनी एकता के ये मूर्तिमान रूप हैं।

तीन दिनों तक महान् और बुद्धिमान स्तालिन की अर्थी के सामने जनता के प्रेम और शोक का अक्षय और अनन्त जीवित सागर उमड़ता रहा। तीन दिनों तक सभी कालों और सभी लोगों के महानतम सेनानी की अर्थी के चरणों के पास सैनिक गारद बदलते रहे। स्तालिनी सैनिकों के वीरतापूर्ण खिले हुए किशोर चेहरे, 'प्रोजेक्टरों' के प्रकाश में चमकती हुई संगीनों की इस्पाती नोकें, दुनिया की परम विजयिनी सेना और शान्ति तथा निर्माण सम्बन्धी श्रम के निःस्वार्थ रखवारों की सेना, अपनी शक्ति और अमर गौरव के रचयिता की अर्थी के सामने शोकपूर्ण सम्मान में खड़ी थी।

तीन दिनों तक अर्थी के 'सम्मान-गारद' बदलते रहे।

पार्टी कर्मियों, मंत्रियों, सोवियत सेना के प्रसिद्ध मार्शलों और जनरलों, नौसेना के एडमिरलों–सभी ने बारी-बारी से अर्थी के निकट 'सम्मान-गारद' में अपना स्थान ग्रहण किया।

मेहनतकश लोगों के लक्ष्य के प्रति असीम भक्ति की भावना में साथी स्तालिन द्वारा पाले-पोसे गये, सोवियत देश के प्रसिद्ध वैज्ञानिकों, जन-कलाकारों और साहित्यकारों, श्रेष्ठतम शिक्षकों, डाक्टरों, इंजीनियरों, डिजाइनरों, आविष्कारकों, समाजवादी सोवियत के बुद्धिजीवियों के प्रतिनिधियों ने बारी-बारी से विज्ञान के महान् प्रकाशपुंज की अर्थी के निकट 'सम्मान-गारद' में अपना स्थान ग्रहण किया।

करोड़ों सोवियत जवानों की सशक्त सेना के नेताओं और सामान्य सैनिकों ने, मजदूर सभाओं के नेताओं और सामान्य कार्यकर्ताओं ने, उद्योग की अग्रणी विभूतियों और नये समाजवादी देहातों के निर्माताओं ने, एक के बाद एक 'सम्मान-गारद' में स्थान ग्रहण किया।

जनता के इन सन्देश-वाहकों ने नेता की अर्थी के सम्मुख केवल भारी शोक और दुःख ही प्रकट नहीं किया, बल्कि सबसे बढ़कर यह कि उन्होंने लेनिन और स्तालिन के लक्ष्य के प्रति वफादार रहने की, कम्युनिस्ट पार्टी और उसकी केन्द्रीय कमिटी के प्रति वफादार रहने की अटूट शपथ ग्रहण की।

'सम्मान-गारद' में दुनिया के पहले समाजवादी राज्य के मेहनतकश लोगों के साथ-साथ जनता के जनतंत्रों की सरकारों के अध्यक्षों, प्रतिनिधि-मंडलों के सदस्यों, अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट और मजदूर आन्दोलन के प्रमुख नेताओं ने बारी-बारी से स्थान ग्रहण किया।

चैकोस्लोवाकिया जनतंत्र के अध्यक्ष क्लीमन्त गोतवाल्द, पोल जनता के जनतंत्र की मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष बोलेस्लवि बीरूत, पोलैंड के मार्शल रोकोस्सोवस्की, चीनी जनता के जनतंत्र की राजकीय प्रशासन-परिषद् के महामंत्री और पर-राष्ट्र-मंत्री चाउ-एन्-लाई, रूमानियन जनता के जनतंत्र की मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष गेओर्गे गेओर्गीयू देज, बुल्गारी जनता के जनतंत्र की मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष विल्को चेर्वेन्कोफ़, मगयार जनता के जनतंत्र की मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष मथाइअस राकोसी, जर्मन समाजवादी एकता पार्टी के प्रधानमंत्री वाल्टर उलब्रिख्त, जर्मन जनवादी जनतंत्र के प्रधानमंत्री ओटो ग्रोटवाल्ड, मंगोल जनता के जनतंत्र के प्रधानमंत्री चेदेन्बल ने बारी-बारी से 'सम्मान-गारद' में स्थान ग्रहण किया।

'सम्मान-गारद' में स्थान ग्रहण करनेवालों में इटली की जनता के नेता पाल मीरो तोगलियात्ती, स्पेन की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी की प्रधान मंत्रिणी दोलोर इबारुरी, ब्रिटेन की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रधान मंत्री हैरी पौलिट, आस्ट्रिया की कम्युनिस्ट पार्टी के अध्यक्ष को प्लेनिंग, फिनलैंड की कम्युनिस्ट पार्टी के अध्यक्ष विल्ले पेस्सी और इटली की सोशलिस्ट पार्टी के मंत्री पिएत्रो नेन्नी भी थे।

सुबह के दो बजे महान् स्तालिन के वफादार शिष्यों और सहकर्मियों–साथी ग. म. मालेन्कोफ, व. म. मोलोतोफ, क. य. वोरोशिलोफ, न. स. बुल्गानिन, ल. म. कंगानोविच, अ. ई. मिकोयान, म. ज. साबुरोफ और म. ग. पेर्बुखिन–ने 'सम्मान-गारद' में स्थान ग्रहण किया।

इसके बाद, 'सम्मान-गारद' में न. म. श्वेर्तिक, म. अ. मुस्लोफ, प. क. पोनोमरेन्को, न. अ. मिखाइलोफ, अ. अ. अन्द्रेयेफ अ. म. वसीलेव्स्की और ग. क. झुकोफ ने स्थान ग्रहण किया।

सुबह के ढाई बजे मजदूर सभा-सदन के स्तम्भ-भवन में प्रवेश बन्द कर दिया गया।

महान् नेता के प्रति अन्तिम श्रद्धांजलि देते हुए, सोवियतों के देश के लोगों ने साथी स्तालिन द्वारा लिखित 'सोवियत संघ में समाजवाद की आर्थिक समस्याएँ' और सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की उन्नीसवीं कांग्रेस में दिए गये उनके भाषण–'अन्तिम संदेश'–में वर्णित साम्यवाद के पथ के प्रति वफादार रहने की शपथ ग्रहण की।

स्तालिन हम सोवियत लोगों के लिए, हमारे नेताओं–अपने शिष्यों और सहकर्मियों–के लिए, एक समृद्ध और गौरवपूर्ण दायभाग छोड़ गये हैं। पार्टी की उन्नीसवीं कांग्रेस में कहे गये, ग. म. मालेन्कोफ के ये शब्द सोवियत जनता में गहरे देशभक्तिपूर्ण गर्व का संचार करते हैं :

"हमारा शक्तिशाली देश अपनी शक्ति के शिखर पर पहुँच, सफलता पर सफलताएँ पाता हुआ आगे बढ़ रहा है। हमारे पास पूर्ण साम्यवादी समाज के निर्माण के लिए आवश्यक प्रत्येक चीज है। सोवियत संघ प्राकृतिक निधियों का अक्षय भंडार है। हमारा राज्य इन व्यापक निधियों को मेहनतकशों के काम में लाने की अपनी योग्यता को प्रदर्शित कर चुका है। सोवियत जन एक नये समाज का निर्माण करने और विश्वास के साथ सामने भविष्य की ओर देखने की अपनी क्षमता को प्रदर्शित कर चुके हैं।

"लड़ाइयों में परखी, कसौटी पर खरी उतरी, फौलादी बनी हुई तथा लेनिन-स्तालिन की नीति का अडिग अनुसरण करनेवाली हमारी पार्टी सोवियत संघ की जनता की अगुआ है।"

इसी में हमारी शक्ति निहित है। इसी में आने वाली सुबह में हमारे विश्वास का अक्षय स्रोत निहित है। इसी में यह गारंटी निहित है कि दुनिया के मेहनतकश मानव-सुख के निर्माण में हमारे अनुभवों से सीखते हुए, प्रतिदिनि अधिकाधिक संख्या में उसी पथ को ग्रहण करेंगे, जिस पर कि हम लेनिन और स्तालिन के विजयी झंडे के नीचे आगे बढ़ रहे हैं।

3. स्तालिन की जन्मभूमि–गोरी

उस रात को लोग कभी नहीं भूलेंगे। गोरी कस्बे की आँखें जरा भी नहीं झपकीं। पौ फटते ही हजारों लोग स्तालिन-प्रांगण में जमा हो गये। उनकी आँखों में अकथनीय शोक और दुःख भरा था। योसेफ विस्सारियोनोविच के निधन का समाचार मुँह-मुँह सारे कस्बे में फैल गया था।

"हमारी कितनी इच्छा थी कि साथी स्तालिन अपने जन्मस्थल–गोरी में एक बार और आते और देखते कि यहाँ की प्रत्येक चीज में कितना अद्भुत परिवर्तन हो गया है। हम चाहते थे कि हमारे साथ वह हमारी खुशी में शामिल होते। और, अब···।"–स्कूल के एक बहत्तरवर्षीय वृद्ध शिक्षक के मुँह से ये शब्द निकले थे। उनके इन शब्दों में गोरी के प्रत्येक निवासी की आकांक्षा व्यक्त हुई थी।

स्तालिन-प्रांगण उस मामूली घर के पास पहुँचा देता है, जिसमें नेता ने जन्म लिया था। दुनिया के सभी हिस्सों से आये हुए, अनगिनत लोग इस घर की यात्रा कर चुके हैं और आगे भी स्तालिन की प्रतिभा के अमर गौरव के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करने के लिए, अनगिनत लोग इस घर की यात्रा करेंगे। उस दिन यहाँ शोक से पूर्ण लोगों की एक अनन्त धारा उमड़ पड़ी। इस घर के सामने, जहाँ महान् जीवन का उदय हुआ था–एक ऐसे जीवन का जिसने अपने रक्त की आखिरी बूँद तक मेहनतकश लोगों की सेवा की–वे नंगे सिर, निस्तब्ध और निश्चल खड़े थे। गोरी के निवासियों के साथ आसपास के खिदिस्तावी, तिनिखिदी, स्वेनेती, खेल्तूबानी और दूसरे गाँवों के सामूहिक किसान भी यहाँ आये थे। छोटे घर के ऊपर बने संगमरमरी पंडाल के खम्भों

पर काले हाशियों से युक्त, आधे झुके हुए फरहरे फहरा रहे थे।

स्मारक-म्यूजियम में उन्नीस बड़ी जिल्दें रखी हैं, जिनमें आगन्तुकों की भावनाएँ दर्ज हैं। ये योसेफ विस्सारियोनोविच स्तालिन के प्रति समूची प्रगतिशील मानव जाति के असीम प्रेम, भक्ति और कृतज्ञता का हृदयस्पर्शी चित्र पेश करती हैं।

आइये, आखिरी पलों को पलटकर एक नजर देखें, जिन पर मार्च सन् 1953 की तारीखें पड़ी हैं। यहाँ पर आखाल्त्सीने जिले के सामूहिक-किसान बगरात दव्नोसादर्जे के, महान् कौमी युद्ध के एक सैनिक के–जिसने अपने दो बेटों के साथ तुआप्से से बर्लिन तक अभियान किया था–शब्द अंकित हैं : "प्रिय साथी स्तालिन, एक सैनिक के रूप में, एक जनसेवक के रूप में, एक से अधिक बार मैंने आपकी सराहना प्राप्त की थी। आज शान्तिपूर्ण नागरिक जीवन में, मैं इस तरह काम कर रहा हूँ कि अब भी आपके सन्तोष का पात्र बन सकूँ। मैं आपको अपना वचन देता हूँ कि भविष्य में भी साम्यवाद की जीत के लक्ष्य के लिए अपनी शक्तियों को लगाने में, मैं उसी प्रकार कोई कसर नहीं उठा रखूँगा, जिस प्रकार कि जनता की खुशहाली के लिए अपनी शक्तियाँ लगाने में आप कोई कसर नहीं उठा रखते।"

इस लिखावट पर 2 मार्च की तारीख पड़ी है। नेता की खतरनाक बीमारी की खबर मिलने से पहले की यह आखिरी लिखावट है। इसके बाद की लिखावटें साथी स्तालिन के जीवन के प्रति आशंकाओं से भरी हैं और उस आह्वान का देशभक्तिपूर्ण जवाब हैं, जो पार्टी तथा सरकार ने साम्यवाद के निर्माण के लिए अपनी पाँतों को और भी ज्यादा एकजुट बनाने के लिए किया था।

"आज 4 मार्च को, इस महान् पवित्र स्थल में, कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार से प्रतिज्ञा करते हैं कि हम और भी ज्यादा निःस्वार्थ भाव से काम करेंगे, हम और भी ज्यादा सतर्क रहेंगे और हम स्तालिन द्वारा निर्धारित कामों को सम्मान के साथ पूरा करेंगे।"–इस लिखावट के नीचे दस्तखत हैं : 'शोतादूजे, चगुरिया।'

मार्च के इन दिनों में बाहर से आए हुए अतिथियों की अनेक लिखावटें भी इसमें मौजूद हैं : "फ्रान्स के सूती कपड़ा-मजदूरों का प्रतिनिधि-मंडल–जिसने इस घर के दर्शन किए हैं, जहाँ कि साथी स्तालिन ने जन्म लिया था–अन्तर्राष्ट्रीय सर्वहारा के प्रिय नेता की अडिग इच्छा और साहस की सराहना में अपना मस्तक झुकाता है।"

6 मार्च को नई पंक्तियाँ, मेहनतकश लोगों के दुःख और शोक से पूर्ण पंक्तियाँ, आगन्तुकों के इस रजिस्टर में दर्ज हुई हैं : "यहाँ, जहाँ नेता ने पालने में जीवन बिताया है, मैं उनके निधन का शोक मनाता हूँ।"–कवि इराकली अबाशिदजे ने लिखा।

"मुझे यकीन नहीं होता कि हमारे प्यारे स्तालिन की छवि को काले हाशिये ने घेर लिया है।"–एक सैनिक अफसर की पत्नी ओल्गा तिनियाकोवा ने लिखा।

बावजूद इसके कि उनका शोक गहरा था, सोवियत नर-नारियों ने साहस, दृढ़ता और अपनी ताकत में विश्वास से भरपूर पंक्तियाँ लिखीं। इस साहस, दृढ़ता और विश्वास का स्रोत सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के प्रति उनके गहरे प्रेम में, पार्टी की बुद्धिमत्तापूर्ण नीति में, उनके असीम भरोसे में निहित है।

"साथी स्तालिन की सीख के मुताबिक, हम जियेंगे और काम करेंगे। पार्टी के नेतृत्व में, हम स्तालिन द्वारा निर्देशित पथ पर, साम्यवाद के पथ पर आगे बढ़ना जारी रखेंगे।"–यही वह शपथ है, जो इस घर के दर्शन करने वाले तमाम सोवियत नर-नारियों ने ग्रहण की। यही शपथ अत्यधिक शक्तिशाली रूप में, गोरी की फैक्टरियों, दफ्तरों और स्कूलों में हुई शोक-सभाओं में गूँजी।

युद्ध के बाद की पहली पंचवार्षिक योजना के काल में स्थापित सूती कपड़ा मिल–जिसने अब मजदूरों की बड़ी बस्ती से युक्त भारी-भरकम कारखाने का रूप धारण कर लिया है–के भीमाकार बुनकर-विभाग के शान्त साँचों पर मिल के तमाम मजदूर और कर्मचारी जमा हुए। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी और सोवियत सरकार को भेजे गये, अपने तार में उन्होंने अपने विचारों और भावनाओं को व्यक्त करते हुए, लिखा है : "हम अपनी प्रिय कम्युनिस्ट पार्टी के चारों ओर पाँतों को और भी ज्यादा घनिष्ठ रूप में एकजुट

करेंगे, अपनी समाजवादी मातृभूमि की महान विजयों की हम सदा से और भी ज्यादा जागरूकता के साथ रक्षा करेंगे; उसकी ताकत को मजबूत बनाने के लिए हम सदा से और भी ज्यादा निःस्वार्थ भाव से काम करेंगे, ताकि साम्यवाद विजयी हो।"

4. अर्थी की अंतिम यात्रा

9 मार्च को, लेनिन के संघर्षों के साथी और उनके लक्ष्य को आगे ले जानेवाले महापुरुष, दुनिया के बुद्धिमान नेता और शिक्षक, योसेफ विस्सारियोनोविच स्तालिन की अन्तिम यात्रा के समय सोवियत जनता और सारी प्रगतिशील मानवजाति उनका साथ दे रही थी।

मजदूर संघ-सदन का स्तम्भ-भवन। विदा की अन्तिम घड़ियाँ। वातावरण मातमी संगीत की उदास धुन में डूबा हुआ है। नेता की अर्थी के समीप केवल उनके सम्बन्धी और मित्र, पार्टी और सरकार के प्रमुख सदस्य, मंत्री और दूसरे देशों की बिरादर कम्युनिस्ट मजदूर पार्टियों के नेता खड़े हैं। योसेफ विस्सारियोनोविच स्तालिन के अन्तिम संस्कार में शामिल होने के लिए आये हुए विदेशी सरकारों के प्रतिनिधि-मंडल और दूतावासों तथा विदेशी मिशनों के प्रमुख–जिन्हें उनकी सरकारों ने अन्तिम संस्कार के समय मौजूद रहने का आदेश दिया है,–सब अर्थी के समीप शोक से खड़े हैं। हर दो-दो, तीन-तीन मिनटों बाद 'सम्मान-गारद' बदल रहे हैं।

सुबह के दस बजे। अर्थी के सम्मुख गारद के रूप में महान् स्तालिन के वफादार शिष्य और उनके सहकर्मी साथी, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार के नेता शोक में खड़े होते हैं।

दस बजकर पाँच मिनट। साथी ग. म. मालेन्कोफ, व. म. मोलोतोफ, न. स. खुरुश्चेफ, न अ. बुलगानिन, ल. म. कगानोविच और अ. ई. मिकोयान योसेफ विस्सारियोनोविच स्तालिन की अर्थी को सावधानी से उठाये, धीरे-धीरे बाहर के दरवाजे की ओर बढ़ते हैं। मजदूर-संघ-सदन से शोक-मालाएँ उठा ली गईं। सोवियत संघ के मार्शल और जनरल लाल मखमल के कुशनों पर रखे हुए स्तालिन के उपाधि-चिह्न और तमगे हाथों पर उठाये, आगे बढ़ने लगे। ओखेतूनीर्याद और मानेझनया चौक के किनारे-किनारे फौजी सन्तरी पाँव बाँधे खड़े हैं।

साथी स्तालिन की अर्थी धीरे से तोप-गाड़ी पर रख दी गई। अर्थी के ऊपर सिर की तरफ, सोवियत संघ के परम सेनापति (जनरलस्सिमो) की टोपी रखी है।

दिवंगत पुरुष के परिवार के सदस्य, महान् नेता के संघर्षों के निकटतम साथी, पार्टी और सोवियत सरकार के नेता, सोवियत सेना के मार्शल, जनरल, दूसरे देशों और उनकी सरकारों के प्रतिनिधि-मंडलों के नेता, कूटनीतिक दलों और दूतावासों के वे सब प्रमुख, जिन्हें उनकी सरकारों ने योसेफ विस्सारियोनोविच स्तालिन के अन्तिम संस्कार में भाग लेने का आदेश दिया था तथा बाहरी देशों के दूसरे प्रतिनिधि अर्थी के साथ-साथ चल रहे हैं।

मातमी संगीत की उदास धुन बज रही है। संघीय गणतन्त्रों, स्वायत्त गणतन्त्रों, क्षेत्रों और प्रदेशों के प्रतिनिधि-मंडल मौजूद हैं। महान चीनी जनता और जनता के जनतंत्रों के प्रतिनिधि, दूसरे देशों के प्रतिनिधि-मंडल और प्रतिनिधि भी मौजूद हैं।

दूतावासों के सदस्य लाल मैदान के चबूतरे पर निस्तब्ध मुद्रा में खड़े हैं। लाल मैदान में मॉस्को के सैनिक रक्षक पाँत बाँधे मूर्तिवत् निश्चल खड़े हैं।

दस बजकर पैंतालीस मिनट। अर्थी समाधि के सामने आकर रुकती है। सैनिक झंडे झुका दिए जाते हैं–झंडे जो महान् राष्ट्रीय युद्ध में सोवियत सेना की अमर जीतों के गौरव से मंडित हैं, उन जीतों के गौरव से जिन्हें सोवियत सेना ने सभी कालों और सभी राष्ट्रों के महानतम सेनापति, साथी यो. वि. स्तालिन के नेतृत्व में प्राप्त किया था। तोप-गाड़ी से उठाकर, अर्थी को एक ऊँचे चबूतरे पर रख दिया जाता है। चबूतरा लाल और काले कपड़ों से ढँका है। पार्टी और सोवियत सरकार के नेता, दूसरे देशों और उनकी सरकारों के प्रतिनिधि-मंडलों के नेता, कूटनीतिक दलों और दूतावासों के प्रमुख, बाहरी देशों की बंधु कम्युनिस्ट और मजदूर

पार्टियों के नेता–सब समाधि के चबूतरे पर खड़े हैं।

दस बजकर बावन मिनट। अन्त्येष्टि कमीशन के अध्यक्ष, साथी न. स. खुरुश्चेफ सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी और मंत्रिमंडल की ओर से शोक-सभा को शुरू करते हैं। सोवियत संघ के मंत्रिमंडल के अध्यक्ष, सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी के मंत्री और सोवियत संघ के जनरलस्सिमो योसेफ विस्सारियोनोविच स्तालिन के शोक में सभा शुरू होती है।

ग्यारह बजकर चौवन मिनट। साथी न. स. खुरुश्चेफ सभा समाप्त करते हैं।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार के नेता और बाहर के देशों की बंधु कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों के नेता समाधि से नीचे उतर आते हैं। अर्थी को उठाकर धीरे-धीरे समाधि के भीतर ले जाया जाता है–उस समाधि के भीतर, जिसके द्वार पर दो अत्यंत ही प्रिय नाम अंकित हैं : 'लेनिन, स्तालिन।'

तोपें तीस गोलों की सलामी देती हैं। उनकी गरज से जमीन काँप उठती है। क्रैमलिन के स्पास्की घंटाघर में बारह बजता है। तीन मिनटों के लिए मॉस्को और समस्त सोवियत भूमि का वातावरण कारखानों, इंजनों और जहाजों की सीटियों और भौंपुओं की आवाजों से गूँज उठता है,–महान् पिता और जनता के शिक्षक को मातृभूमि सलामी देती है। बाल्तिक के तट से लेकर कुरील द्वीपसमूह तक, सारी सोवियत भूमि में तमाम कल-कारखाने पाँच मिनटों के लिए काम रोककर निस्तब्ध हो जाते हैं। चलती हुई रेलें, जहाज और मोटर–सब जहाँ-के-तहाँ खड़े हो जाते हैं।…

देश महान् क्षति पर शोक प्रकट कर रहा है, किन्तु स्तालिन का नाम और उनका उद्देश्य अमर है। जनता के हृदयों में और कम्युनिज्म के लिए किए जानेवाले उनके कामों में स्तालिन हमेशा के लिए जीवित रहेंगे।

अन्तिम संस्कार के बाद, सोवियत संघ के राष्ट्र-गीत के राजसी गम्भीर स्वर वायु में गूँज उठते हैं।

पार्टी और सरकार के नेता फिर समाधि के चबूतरे पर खड़े हो जाते हैं। समाधि के सामने से दृढ़तापूर्वक मार्च करती हुई फौज की टुकड़ियाँ गुजरती हैं। बहुत ऊँचे, आकाश में, चौक के ऊपर सुव्यवस्थित आकार में वायुयान उड़ रहे हैं। महान् नेता और सेनानायक योसेफ विस्सारियोनोविच को अन्तिम सैनिक श्रद्धांजलि अर्पित की जा रही है।

5. कुछ श्रद्धांजलियाँ

सोवियत सरकार और केन्द्रीय कमिटी की श्रद्धांजलि : प्यारे साथियो और दोस्तो ! सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी, सोवियत संघ की मन्त्रिपरिषद् और सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत का अध्यक्ष-मंडल गहनतम शोक के साथ, सोवियत संघ की पार्टी के सदस्यों और तमाम मेहनतकश जनता को सूचित करता है कि 5 मार्च की रात को 6 बजकर 50 मिनट (भारतीय समय–रात के 1 बजकर 20 मिनट) पर खतरनाक बीमारी के बाद, सोवियत संघ की मन्त्रिपरिषद् के अध्यक्ष और सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी के महामन्त्री योसेफ विस्सारियोनोविच स्तालिन का देहान्त हो गया है।

लेनिन के सहकर्मी, उनके उद्देश्यों को आगे ले जानेवाले, प्रतिभा-पुंज, कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत जनता के बुद्धिमान नेता और शिक्षक, योसेफ विस्सारियोनोविच स्तालिन के हृदय की धड़कन बन्द हो गई है।

स्तालिन का नाम हमारी पार्टी के लिए, सोवियत जनता के लिए, तमाम दुनिया के मेहनतकशों के लिए, अत्यन्त प्यारा नाम है। लेनिन के साथ मिलकर, साथी स्तालिन ने कम्युनिस्टों की शक्तिशाली पार्टी खड़ी की, उसे पाला-पोसा और फौलादी बनाया। लेनिन के साथ-साथ, साथी स्तालिन ने अक्तूबर की महान् समाजवादी क्रांति को प्रेरणा दी, उसका नेतृत्व किया, दुनिया में सबसे पहले समाजवादी राज्य की स्थापना की। लेनिन के अमर उद्देश्य को आगे बढ़ाते हुए, साथी स्तालिन ने हमारे देश में समाजवाद को युगान्तरकारी जीतें हासिल करने में सोवियत जनता की अगुआई की। साथी स्तालिन ने दूसरे महायुद्ध में फासिज्म के खिलाफ विजय पाने में हमारे देश का नेतृत्व किया, जिसने समूची अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में आमूल परिवर्तन कर दिया। साथी

स्तालिन ने सोवियत संघ में कम्युनिज्म के निर्माण के महान और स्पष्ट कार्यक्रम से पार्टी और समूची जनता को लैस किया।

साथी स्तालिन–जिन्होंने कि अपना सारा जीवन कम्युनिज्म की निःस्वार्थ सेवा के महान् उद्देश्य में अर्पित कर दिया था–की मृत्यु पार्टी के, सोवियत संघ और सारी दुनिया की मेहनतकश जनता के लिए एक अत्यन्त गम्भीर क्षति है।

हमारे देश के मजदूरों, कलखोजी किसानों, बुद्धिजीवियों और तमाम मेहनतकशों के दिलों में, हमारी बहादुर सेना और नौसेना के वीरों के दिलों में, दुनिया के सभी देशों की करोड़ों मेहनतकश जनता के दिलों में साथी स्तालिन की मृत्यु की खबर गहरी पीड़ा का संचार करेगी।

शोक में डूबे हुए इन दिनों में हमारे देश में बसी सभी जातियों के लोग, लेनिन और स्तालिन की जन्माई तथा बड़ी की हुई, कम्युनिस्ट पार्टी के परखे और कुन्दन बने नेतृत्व में अपने महान भ्रातृत्वपूर्ण परिवार के अन्दर और भी घनिष्ठता के साथ एकजुट हो रहे हैं।

सोवियत जन खुद अपनी कम्युनिस्ट पार्टी में अटूट विश्वास रखते हैं और उसके प्रति उनमें ज्वलंत प्रेम के भाव हैं; क्योंकि वे जानते हैं कि पार्टी की सारी कार्रवाइयों का सर्वोच्च उद्देश्य जनता के हितों की सेवा करना ही है।

मजदूर, कलखोजी किसान, सोवियत बुद्धिजीवी, हमारे देश की समूची मेहनतकश जनता, अविचल रूप से हमारी पार्टी द्वारा बताई हुई नीति पर चलती है। यह नीति मेहनतकश जनता के बुनियादी हितों के अनुकूल है और इसका उद्देश्य हमारी समाजवादी जन्मभूमि की शक्ति को और मजबूत बनाना है। कम्युनिस्ट पार्टी की नीति की सच्चाई दसियों सालों के संघर्ष में परखी हुई सच्चाई है। उसने सोवियत देश की जनता का समाजवाद की ऐतिहासिक विजयों के पथ पर नेतृत्व किया है। इस नीति से अनुप्राणित हो, सोवियत संघ की सारी जनता के नेतृत्व में अपने देश में कम्युनिज्म के निर्माण में नई से नई सफलताएँ प्राप्त करने के लिए विश्वासपूर्ण आगे बढ़ रही है।

हमारे देश की जनता जानती है कि आजादी के सभी अंशों–मजदूरों, कलखोजी किसानों, बुद्धिजीवियों की भौतिक समृद्धि और समुन्नति, सारे समाज की बराबर बढ़ती हुई भौतिक और सांस्कृतिक आवश्यकताओं की पूर्णतम पूर्ति कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार के विशेष ध्यान का केन्द्र रही है, और है।

सोवियत जनता जानती है कि सोवियत राज्य की रक्षा की क्षमता और शक्ति बढ़ती और बराबर मजबूत होती जा रही है। सोवियत सेना, नौसेना और अंतरंग सुरक्षा-संगठनों को पार्टी हर तरह से मजबूत बना रही है, ताकि किसी भी हमलावर को मुँहतोड़ जवाब देने की हमारी तैयारी में निरतन्तर वृद्धि होती रहे।

कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत संघ की सरकार की परराष्ट्र नीति हमेशा से शांति की रक्षा तथा मजबूती की, दूसरे युद्ध की तैयारी और उसे छेड़ने के खिलाफ संघर्ष की, अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और सभी देशों से व्यापारिक सम्बन्धों के विकास की अंतिम नीति रही है, और है।

सर्वहारा अन्तर्राष्ट्रवाद के झंडे की वफादार, सोवियत संघ की जनता महान चीनी जनता तथा सभी जनवादी देशों की मेहनतकश जनता के साथ बन्धुतापूर्ण दोस्ती को और शांति, जनतंत्र और समाजवाद के लिए लड़ती हुई पूँजीवादी तथा औपनिवेशिक देशों की मेहनतकश जनता के साथ मित्रता के सम्बन्धों को मजबूत बनाती हुई आगे बढ़ी है।

प्यारे साथियो और दोस्तो ! दूसरी कम्युनिस्ट पार्टी कम्युनिज्म के निर्माण में सोवियत जनता के संघर्ष का पथ-प्रदर्शन और निर्देशन करनेवाली महान् शक्ति है। पार्टी के पाँतों की वज्र एकता और अखण्ड एकबद्धता पार्टी की शक्ति और बल का मुख्य आधार हैं। हमारा कर्तव्य है कि पार्टी की एकता की आँख की पुतली की भाँति रक्षा करें, पार्टी की नीति और फैसलों को अमल में लाने के लिए कम्युनिस्टों को सक्रिय राजनीतिक योद्धाओं के रूप में तैयार करें, तमाम मेहनतकश जनता के साथ मजदूरों, कलखोजी किसानों, बुद्धिजीवियों के साथ पार्टी के सम्बन्ध को और भी ज्यादा मजबूत बनाएँ; क्योंकि जनता के साथ इसी अटूट सम्बन्ध में हमारी

पार्टी की अजेयता और शक्ति निहित है।

ऊँची राजनीतिक जागरूकता की भावना में, भीतरी तथा बाहरी दुश्मनों के खिलाफ़ संघर्ष में निर्ममता और अंगद की भाँति डटे रहने की भावना में, कम्युनिस्टों और तमाम मेहनतकश जनता को दीक्षित करना पार्टी अपना एक कर्तव्य मानती है।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी, सोवियत संघ की मंत्रिपरिषद् और सोवियत संघ की सर्वोच्च सोवियत का अध्यक्ष-मंडल शोक से भरे इन दिनों में पार्टी और जनता को संदेश देता हुआ, अपना यह दृढ़ विश्वास प्रकट करता है कि हमारे देश की पार्टी और जनता केन्द्रीय कमिटी और सोवियत सरकार के चारों तरफ और भी घनिष्ठता से एकजुट होगी और हमारे देश में कम्युनिज्म के निर्माण के महान् उद्देश्य में अपनी सारी ताकतें और रचनात्मक सामर्थ्य लगा देगी।

स्तालिन का अमर नाम सोवियत जनता तथा सारी प्रगतिशील मानवता के दिलों में सदा जीवित रहेगा।

मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन की महान् और सर्वजयी शिक्षा–जिन्दाबाद !

हमारी शक्तिशाली समाजवादी मातृभूमि–जिन्दाबाद !

हमारी बहादुर सोवियत जनता–जिन्दाबाद !

सोवियत संघ की महान कम्युनिस्ट पार्टी–जिन्दाबाद !

5 मार्च, 1953.

ग. म. मालेन्कोफ की श्रद्धांजलि : प्रिय देशवासियो, साथियो और मित्रो ! दूसरे देशों के प्रिय भाइयो, हमारी पार्टी, सोवियत जनता और समूची मानव जाति को गम्भीरतम, कभी न पूरी होनेवाली क्षति सहनी पड़ी है। हमारे शिक्षक और नेता, मानव जाति की महानतम प्रतिभा, योसेफ विस्सारियोनोविच स्तालिन की गौरवमय जीवन-यात्रा का अन्त हो गया है।

इन कठिन दिनों में, समूची उन्नत और प्रगतिशील मानव जाति ने सोवियत जनता के गहरे शोक में उसका साथ दिया है। स्तालिन का नाम सोवियत पुरुषों और स्त्रियों को, दुनिया के सभी हिस्सों की व्यापकतम जनता को इतना प्यारा है कि उसकी कोई सीमा नहीं। सोवियत जनता और सभी देशों के मेहनतकश लोगों के लिए साथी स्तालिन ने जो काम किए हैं, उनकी महानता और महत्त्व अकूत है। स्तालिन का लक्ष्य युग-युग तक जीवित रहेगा और आनेवाली कृतज्ञ पीढ़ियाँ, ठीक हम सब लोगों की भाँति, स्तालिन के नाम का गौरव-गान करेंगी।

साथी स्तालिन ने अपना जीवन शोषकों के उत्पीड़न और गुलामी से मेहनतकश वर्ग तथा तमाम मेहतनतकश लोगों को मुक्त करने, विनाशकारी युद्धों से मानव जाति को उबारने, मेहनत करनेवाले लोगों के वास्ते धरती पर आजाद और खुशहाल जीवन का निर्माण करने के संघर्ष के लिए अर्पित कर दिया है। साथी स्तालिन ने, हमारे युग के इस महान विचारक ने नई ऐतिहासिक परिस्थितियों में मार्क्सवाद-लेनिनवाद की सीख का रचनात्मक विकास किया है। मानवता के समूचे इतिहास की महानतम विभूतियों के साथ–मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन के साथ–स्तालिन का नाम लिया जाना सर्वथा उचित है।

हमारी पार्टी मार्क्सवाद-लेनिनवाद की महान् सीख पर चलती है, जो कि पार्टी और जनता को अजेय शक्ति तथा इतिहास में नई लीकें डालने की योग्यता प्रदान करती है।

फरारी (अण्डरग्राउण्ड) जीवन की कठिन परिस्थितियों में, लेनिन और स्तालिन ने रूस के लोगों को निरंकुश शासन के जुए से, जमींदारों और पूँजीपतियों के उत्पीड़न से मुक्त करने के लिए अनेक लम्बे सालों तक संघर्ष किया था। लेनिन और स्तालिन की अगुआई में सोवियत जनता ने मानव-जाति के इतिहास में महानतम मोड़ लिया था; पूँजीवादी व्यवस्था को हमारे देश से खतम कर, एक नये पथ पर–समाजवाद के पथ पर–पाँव रखा था।

लेनिन के लक्ष्य को आगे बढ़ाते हुए, पार्टी तथा सोवियत राज्य के अग्रिम पथ को आलोकित करनेवाली लेनिनवादी सीख को बराबर विकसित करते हुए, स्तालिन ने समाजवाद की युगांतरकारी जीतें हासिल करने

में देश की अगुवाई की है। इससे, मानव जाति के हजारों वर्षों के जीवन में पहली बार मानव द्वारा मानव के शोषण का खात्मा सुनिश्चित हो गया है।

लेनिन और स्तालिन ने दुनिया में मजदूरों और किसानों के पहले राज्य की, हमारे सोवियत राज्य की नींव रखी थी। साथी स्तालिन ने सोवियत राज्य को मजबूत बनाने के लिए अनथक काम किया है। हमारे राज्य का ठोसपन और ताकत ही हमारे देश में साम्यवाद के सफल निर्माण का बुनियादी आधार है।

यह हमारा पवित्र कर्तव्य है कि अनथक और हर प्रकार से अपने समाजवादी राज्य को, राष्ट्रों की सुरक्षा और शान्ति के दुर्ग को मजबूत बनाना जारी रखें।

साथी स्तालिन का नाम समाज के इतिहास की एक अत्यन्त पेचीदा समस्या–जातियों के सवाल–के हल के साथ जुड़ा हुआ है। जातियों के सवाल के महानतम सिद्धान्तविद्, साथी स्तालिन ने इतिहास में पहली बार एक सुविस्तृत बहुजातीय राज्य के भीतर युगों के पुराने जातीय वैमनस्यों का पक्की तौर से खात्मा कर दिया है। साथी स्तालिन के निर्देशन में, हमारी पार्टी ने पहले की उत्पीड़ित जातियों के आर्थिक और सांस्कृतिक पिछड़ेपन को काबू में किया, सोवियत संघ की तमाम जातियों को एक बंधुता के परिवार में संयुक्त किया और जातियों की मित्रता को ढाला है।

हमारा यह पवित्र कर्तव्य है कि सोवियत देश में बसी हुई जातियों की एकता और मित्रता की मजबूती को, बहुजातीय सोवियत राज्य की दृढ़ता को और भी ज्यादा पक्की करें। हमारे देश की जातियों के बीच मित्रता के कायम रहते हुए, हमें भीतरी या बाहरी किन्हीं भी दुश्मनों से डरने की जरूरत नहीं।

साथी स्तालिन के प्रत्यक्ष निर्देशन में ही सोवियत सेना जन्मी, बढ़ी और शक्तिशाली बनी है। साथी स्तालिन की निरन्तर लगन का लक्ष्य देश की रक्षात्मक क्षमता और सोवियत सैन्य बल को मजबूत बनाना था। महान् सेनानी, जनरलस्सिमो स्तालिन की ही अगुआई में सोवियत सैन्यबल ने दूसरे विश्वयुद्ध में इतिहास-निर्माणकारी जीत हासिल की और यूरोप तथा एशिया के लोगों को फासिस्टी गुलामी के खतरे से मुक्त किया है।

हमारा यह पवित्र कर्तव्य है कि शक्तिशाली सोवियत सैन्यबल को हर प्रकार से मजबूत बनायें। दुश्मन के किसी भी आक्रमण का मुँहतोड़ जवाब देने के लिए जरूरी है कि उन्हें युद्ध-तत्परता की स्थिति में रखा जाये।

साथी स्तालिन की अनथक कोशिशों के फलस्वरूप, उन योजनाओं के मुताबिक जो कि उन्होंने बनाई थीं, हमारी पार्टी ने पहले के एक पिछड़े हुए देश को एक शक्तिशाली उद्योग और कलखोजी (सामूहिक) कृषि का राज्य बना दिया है, संकटों और बेकारी से मुक्त एक नई आर्थिक व्यवस्था का निर्माण किया है।

हमारा यह पवित्र कर्तव्य है कि समाजवादी मातृभूमि की निर्बाध प्रगति को और भी ज्यादा सुनिश्चित बनाएँ। जरूरी है कि हम हर प्रकार से अपने देश की ताकत और ठोसपन के मुख्य आधार–समाजवादी उद्योग–को विकसित करें। जरूरी है कि हम सामूहिक खेती की व्यवस्था को मजबूत बनाएँ, सोवियत देश के तमाम कलखोजों की बेरोक उन्नति और खुशहाली के लिए और भी ज्यादा कोशिश करें, मेहनतकश वर्ग और सामूहिक किसानवर्ग के गठबन्धन को पक्का बनाएँ।

गृह-नीति में मजदूरों, सामूहिक किसानों, बुद्धिजीवियों–सारे सोवियत जनों की आर्थिक खुशहाली में और भी ज्यादा सुधार के लिए निश्चित गति से कोशिश करना हमारा मुख्य काम है। लोगों की खुशहाली का ध्यान रखना, उनकी आर्थिक और सांस्कृतिक जरूरतों की पूर्णतम पूर्ति करना, हमारी पार्टी और सरकार का कानून है।

लेनिन और स्तालिन ने हमारी पार्टी को कायापलट करनेवाली एक महान शक्ति के रूप में रचा और ढाला था। जीवन-पर्यन्त साथी स्तालिन ने हमें सिखाया है कि कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य की उपाधि से ऊँची और कोई भी चीज नहीं है। दुश्मनों के खिलाफ अनवरत संघर्ष में, साथी स्तालिन ने पार्टी की एकता और अखंड एकबद्धता को ऊँचा उठाया था।

हमारा यह कर्तव्य है कि हम महान् कम्युनिस्ट पार्टी को मजबूत बनाने का काम जारी रखें। हमारी पार्टी

की ताकत और अजेयता उसकी पाँतों की एकता और जुड़ाव में, संकल्प और क्रियात्मक एकता में, पार्टी के संकल्प और इच्छाओं के साथ अपने संकल्प और इच्छाओं का विलय करने की पार्टी-सदस्यों की योग्यता में निहित है। हमारी पार्टी की ताकत और अजेयता आम जनता के साथ उसके अटूट नाते में निहित है। पार्टी द्वारा जनता के हितों की निरन्तर सेवा की नींव पर पार्टी और जनता की एकता टिकी है। जरूरी है कि हम पार्टी की एकता की आँख की पुतली की भाँति रक्षा करें, जनता के साथ पार्टी के अटूट नाते को और भी ज्यादा पक्का बनाएँ, कम्युनिस्टों और तमाम मेहनतकश लोगों को ऊँची राजनीतिक जागरूकता की भावना में, भीतरी और बाहरी दुश्मनों के खिलाफ संघर्ष में दृढ़ता और कभी न झुकने की भावना में शिक्षित करें।

महान् स्तालिन के निर्देशन में शांति, जनतंत्र और समाजवाद के एक शक्तिशाली खेमे का निर्माण हो गया है। इस खेमे में सोवियत जनता के साथ-साथ, घनिष्ठ बंधुतापूर्ण एकता में, चीन की महान् जनता, पोलैण्ड, चैकोस्लोवाकिया, बुलगारिया, हंगरी, रूमानिया, अलबानिया, जर्मन जनवादी जनतन्त्र, मंगोलिया–जनता के सभी गणतन्त्रों के भाईचारे पूर्ण लोग आगे बढ़ रहे हैं। कोरिया की वीर जनता जुझारू लड़ाइयों में अपनी मातृभूमि की आजादी की रक्षा कर रही है। वियतनाम के लोग अपनी आजादी और राष्ट्रीय स्वतन्त्रता के लिए साहस के साथ संघर्ष कर रहे हैं।

हमारा यह पवित्र कर्तव्य है कि लोगों के–शान्ति, जनतंत्र और समाजवाद के खेमे के–महानतम लाभ की रक्षा करें और उसे मजबूत बनायें, जनवादी खेमे के देशों के लोगों की मित्रता और एकजुटता के नातों को दृढ़ करें। जरूरी है कि हम हर प्रकार से महान् चीनी जनता के साथ, जनता के सारे गणतंत्रों के मेहनतकश लोगों के साथ, सोवियत संघ की चिरंतन और अनुल्लंघनीय बन्धुत्वपूर्ण मित्रता के नाते को सुदृढ़ बनाएँ।

सभी देशों के लोग जानते हैं कि साथी स्तालिन शान्ति के महान् अलमबरदार थे। साथी स्तालिन ने सभी देशों के लोगों को ऊँचा उठाने में अपनी प्रतिभा की महानतम कोशिशों को लगाया था। सोवियत राज्य की परराष्ट्र नीति, राष्ट्रों के बीच शान्ति और मित्रता की नीति, एक दूसरे युद्ध के फूट पड़ने के रास्ते में एक निर्णायक रुकावट है और सभी राष्ट्रों के बुनियादी हितों के साथ मेल खाती है। सोवियत संघ ने शान्ति के लक्ष्य की पूरी हिमायत की है और करता है; क्योंकि उसके हित विश्व-शान्ति के लक्ष्य से अभिन्न हैं। सोवियत संघ ने शान्ति को कायम रखने और मजबूत बनाने की अडिग नीति का, अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग और सभी देशों के साथ व्यापारिक सम्बन्ध विकसित करने की नीति का–एक ऐसी नीति का, जो लेनिन-स्तालिन की इस स्थापना से निकली है कि दो भिन्न व्यवस्थाओं (पूँजीवादी और समाजवादी व्यवस्थाओं) के लम्बे अर्से तक एक साथ बने रहने और शांतिपूर्ण प्रतियोगिता करने की सम्भावना है–अनुसरण किया है और करता है।

महान् स्तालिन ने हमें जनता के हितों की सेवा के प्रति असीम भक्ति की भावना में बड़ा किया है। हम जनता के सच्चे सेवक हैं, जनता शान्ति चाहती है, युद्ध से घृणा करती है। करोड़ों के रक्त की होली को रोकने और खुशहाल जीवन के शांतिपूर्ण निर्माण की गारंटी करने की लोगों की इच्छा, हम सबकी पवित्र इच्छा हो !

परराष्ट्र नीति में, एक दूसरे युद्ध को रोकना और तमाम देशों के साथ शान्ति से रहना हमारा मुख्य काम है। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार की नजर में परस्पर विश्वास पर आधारित सभी राष्ट्रों के बीच की शान्ति–जो कि तथ्यों पर आधारित और तथ्यों से पुष्ट एक कारगर नीति है–अत्यन्त सही, जरूरी और न्यायपूर्ण परराष्ट्र नीति है। जरूरी है कि सरकारें सच्चाई के साथ अपने लोगों की सेवा करें। लोग शान्ति के प्यासे हैं, युद्ध को कोसते हैं। वे सरकारें जो लोगों को धोखा देना चाहेंगी और शांति को कायम रखने तथा एक दूसरे विनाश को रोकने की पवित्र इच्छा के खिलाफ जायेंगी, अपराधी होंगी। कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सरकार मानती है कि राष्ट्रों के बीच शांति की नीति ही एकमात्र सही नीति है, जो तमाम लोगों के बुनियादी हितों के साथ मेल खाती है।

साथियो, हमारे नेता और शिक्षक महान् स्तालिन की विदाई तमाम सोवियत नर-नारियों को कर्तव्यबद्ध करती है कि वे सोवियत जनता के सामने प्रस्तुत शानदार कामों की पूर्ति में अपनी कोशिशों को दुगुना-चौगुना

बढ़ाएँ, साम्यवादी समाज के निर्माण के सामूहिक लक्ष्य में और भी ज्यादा भारी योग दें, हमारी समाजवादी मातृभूमि की ताकत और प्रतिरक्षा की क्षमता और भी ज्यादा मजबूत बनाएँ।

सोवियत संघ के मेहनतकश लोग देखते और समझते हैं कि हमारी शक्तिशाली मातृभूमि नई से नई सफलताओं की ओर बढ़ रही है। पूर्ण साम्यवादी समाज के निर्माण के लिए जरूरी हर चीज हमारे पास है।

अपनी अक्षय ताकतों और क्षमताओं में दृढ़ विश्वास के साथ, सोवियत जनता साम्यवाद के निर्माण के महान् लक्ष्य को कार्य में उतार रही है। दुनिया में ऐसी कोई ताकत नहीं है, जो सोवियत समाज की साम्यवाद की ओर प्रगति को रोक सके।

विदा, हमारे शिक्षक और नेता, हमारे प्रिय मित्र, हमारे अपने साथी स्तालिन, विदा !

लेनिन और स्तालिन के महान लक्ष्य की पूर्ण विजय के पथ पर आगे बढ़ो !

माओ त्से-तुंग की श्रद्धांजलि : हमारे युग के महानतम प्रतिभाशाली व्यक्ति साथी योसेफ विस्सारियोनोविच स्तालिन, जो दुनिया के कम्युनिस्ट आन्दोलन के महान् शिक्षक और अमर लेनिन के सहयोगी थे, हमसे सदा के लिए बिछुड़ गये हैं।

सिद्धांत और अमल दोनों ही के क्षेत्रों में उनके कार्यों के जरिये हमारे युग को साथी स्तालिन की जो देन रही है, वह अकूत है। स्तालिन हमारे इस पूरे नये युग के प्रतिनिधि हैं। यह उनके कार्यों का ही परिणाम है कि सोवियत जनता और सभी देशों की मेहनतकश जनता ने समूची दुनिया की परिस्थिति बदल दी है। इसका मतलब है कि न्याय, जनवादी लोकतंत्र और समाजवाद के ध्येय ने दुनिया के एक विशाल भूभाग पर—जिस पर पृथ्वी की एक-तिहाई से ज्यादा आबादी, 80 करोड़ जनता बसती है—विजय प्राप्त कर ली है। जैसे-जैसे दिन गुजरते जाते हैं, वैसे ही वैसे इस विजय का असर पृथ्वी के हर कोने में फैलता जा रहा है।

साथी स्तालिन की मृत्यु से सारी दुनिया की मेहनतकश जनता अथाह शोक में डूब गई है। सारे संसार के ईमानदार लोगों के दिल दर्द से भर गये हैं। यह बात बताती है कि साथी स्तालिन के ध्येय और उनके विचारों ने सारी दुनिया की विशाल जनता को अत्यधिक प्रभावित किया है और वे एक अजेय शक्ति बन गई है, जो विजयी देशों की जनता को नई से नई विजयों की तरफ ले जा रही है और जिन देशों की जनता अभी भी पुरानी, कुत्सित पूँजीवादी दुनिया के उत्पीड़न के नीचे कराह रही है उसे वह इतनी सामर्थ्य देगी कि वह भी अपने दुश्मनों पर हिम्मत के साथ प्रहार कर सके।

लेनिन के निधन के बाद, स्तालिन ने जनता का पथ-प्रदर्शन किया। जिस पहले समाजवादी राज्य को अक्तूबर-क्रांति के दिनों में उन्होंने अमर लेनिन के साथ मिल कर जन्म दिया था, उन्होंने उसका निर्माण किया और उसे एक शानदार समाजवादी समाज बना दिया।

सोवियत समाजवादी निर्माण की विजय अकेली सोवियत जनता की विजय नहीं है, वह सारी दुनिया की जनता की भी विजय है। एक तो इस विजय ने जिन्दगी में मार्क्सवाद-लेनिनवाद की पूर्ण सच्चाई को साबित कर दिया है, सारी दुनिया की मेहनतकश जनता को प्रत्यक्ष रूप से सिखा दिया है कि वह सुखी जीवन की तरफ कैसे बढ़े। दूसरे, इस विजय ने मानव जाति को दूसरे विश्व-युद्ध में फासिस्ट राक्षसों पर विजय प्राप्त करने की शक्ति दी है। सोवियत समाजवादी निर्माण की इस विजय के बिना, फासिस्ट-विरोधी युद्ध में विजय प्राप्त की जा सकती थी, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती। सोवियत संघ में समाजवादी निर्माण की विजय का और फासिस्ट-विरोधी युद्ध में विजय का मानव जाति के भविष्य से सीधा सम्बन्ध है। और, इन विजयों का श्रेय सचमुच ही महान् स्तालिन को है।

साथी स्तालिन ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तों का अधिकारपूर्वक और सांगोपांग विकास किया। उन्होंने मार्क्सवाद को एक नई मंजिल पर पहुँचाया। पूँजीवाद के असमान विकास और एक देश में समाजवाद की विजय की सम्भावना के लेनिनवादी सिद्धान्तों का साथी स्तालिन ने रचनात्मक रूप से विकास किया। पूँजीवादी व्यवस्था के आम संकट के सिद्धान्त को और सोवियत संघ में कम्युनिज्म के निर्माण के सिद्धान्त को साथी स्तालिन ने रचनात्मक रूप से सम्पन्न बनाया। आधुनिक पूँजीवाद के बुनियादी आर्थिक नियम की और समाजवाद

के बुनियादी आर्थिक नियम की उन्होंने खोज की और उसे साबित किया। उपनिवेशों की क्रांति के सिद्धान्त को उन्होंने समृद्ध बनाया। साथी स्तालिन ने पार्टी के निर्माण के लेनिनवादी सिद्धान्त का भी रचनात्मक तरीके से विकास किया। साथी स्तालिन के इन सब कामों ने सारी दुनिया के मजदूरों को और भी ज्यादा एकजुट किया, सारी दुनिया की सारी उत्पीड़ित जनता को और भी ज्यादा एकजुट किया। इस तरह, उन्होंने दुनिया के मजदूरवर्ग और तमाम उत्पीड़ित जनता को मुक्ति और खुशहाली के संघर्ष के लिए समर्थ बनाया और संघर्ष में उसे अभूतपूर्व विजएँ प्राप्त हुईं।

साथी स्तालिन की सभी रचनाएँ मार्क्सवाद को उनकी अमर देने हैं। 'लेनिनवाद के मूल सिद्धान्त', 'सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास' और उनकी अन्तिम महान रचना 'सोवियत संघ में समाजवाद की आर्थिक समस्याएँ'—सभी मार्क्सवाद-लेनिनवाद के ज्ञान-कोष हैं। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की 19वीं कांग्रेस में उनका भाषण दुनिया के सभी देशों के कम्युनिस्टों के लिए अमूल्य, पवित्र आदेश है। दुनिया के सभी देशों के कम्युनिस्टों की तरह, हम चीनी कम्युनिस्ट भी साथी स्तालिन की महान रचनाओं के प्रकाश में अपनी विजय का मार्ग पाते हैं।

लेनिन के निधन के बाद से, साथी स्तालिन ही हमेशा दुनिया के कम्युनिस्ट आन्दोलन के मुख्य व्यक्ति रहे हैं। हम उनके इर्द-गर्द एकजुट हुए। हमने निरन्तर उनकी सलाह ली और बराबर उनकी रचनाओं से सैद्धान्तिक शक्ति प्राप्त की।

साथी स्तालिन के हृदय में पूर्व की उत्पीड़ित जनता के लिए अगाध स्नेह था। 'पूर्व को मत भूलो'—अक्तूबर-क्रांति के बाद, साथी स्तालिन का यही महान् आह्वान था।

सभी लोग जानते हैं कि चीनी जनता के लिए साथी स्तालिन के दिल में गहरा प्रेम था और वह चीनी क्रांति की शक्ति को अकूत मानते थे। उन्होंने अपनी महान् बुद्धिमता से चीनी क्रांति की समस्याओं को सुलझाने में मदद की। लेनिन तथा स्तालिन के सिद्धान्तों पर अमल करके और महान् सोवियत संघ तथा दूसरे सभी देशों की सभी क्रांतिकारी शक्तियों की मदद से ही, कुछ बरसों पहले चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी जनता ने ऐतिहासिक विजय प्राप्त की है।

अब हमारे महान् शिक्षक, हमारे सबसे सच्चे दोस्त साथी स्तालिन हमारे बीच में नहीं रहे। यह कैसा वज्रपात हुआ है ! दुर्भाग्य के इस तरह फट पड़ने से, हमें जो दुःख हुआ है उसे व्यक्त करने के लिए शब्द नहीं हैं।

हमारा कर्तव्य है कि हम इस दुख को शक्ति में बदल दें। अपने महान् शिक्षक स्तालिन की स्मृति में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और चीनी जनता तथा सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत जनता के बीच साथी स्तालिन के नाम पर जो महान् मित्रता मौजूद है, उसे हम असीम रूप से शक्तिशाली बनायेंगे। अपने देश का निर्माण करने के लिए, चीनी कम्युनिस्ट और चीनी जनता स्तालिन के सिद्धान्तों का और सोवियत विज्ञान तथा कौशल का और भी जोरों से अध्ययन करेगी।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी, जिसे खुद लेनिन और स्तालिन ने बड़ा किया, दुनिया की सबसे आगे बढ़ी हुई, सबसे ज्यादा अनुभवशील और सैद्धान्तिक दृष्टि से सबसे ज्यादा लैस पार्टी हैं। यह पार्टी हमारे लिए आदर्श थी, अब भी है, भविष्य में भी बनी रहेगी। हमें पूरा विश्वास है कि सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमिटी और सोवियत सरकार, जिसके नेता साथी मालेन्कोफ हैं, कम्युनिज्म के महान् ध्येय को आगे बढ़ाने और अधिक शानदार कामयाबियाँ हासिल करने के सम्बन्ध में साथी स्तालिन के आदेशों को पूरा करने में अवश्य सफल होगी।

इस बात में कोई भी सन्देह नहीं है कि सोवियत संघ के नेतृत्व में चलनेवाला शान्ति, जनवाद और समाजवाद का विश्व-पक्ष और भी अधिक एकजुट तथा और भी अधिक शक्तिशाली होगा।

पिछले 30 बरसों में, साथी स्तालिन के सिद्धान्तों और सोवियत समाजवादी निर्माण के उदाहरण की बदौलत दुनिया ने जबर्दस्त प्रगति की है। आज सोवियत संघ इतना शक्तिशाली हो गया है, चीनी जन-क्रांति ने ऐसी

महान् विजय हासिल कर ली है, जनता के विभिन्न लोकतन्त्रों ने अपने निर्माण-कार्य में ऐसी महान् सफलताएँ प्राप्त कर ली हैं, उत्पीड़न तथा आक्रमण के खिलाफ सारी दुनिया की जनता का आन्दोलन इतनी बुलन्दियों पर पहुँच गया है और मित्रता तथा सहयोग का हमारा मोर्चा इतना शक्तिशाली बन गया है कि हम पूरे विश्वास के साथ कह सकते हैं कि हम किसी भी साम्राज्यवादी हमले से नहीं डरते। हम किसी भी साम्राज्यी हमले को धूल में मिला देंगे, तमाम घृणित उकसावे एकदम असफल साबित होंगे।

चीन और सोवियत संघ की जनता की महान मित्रता अटूट है; क्योंकि उसका आधार मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन के अन्तर्राष्ट्रीयता के महान् सिद्धान्त हैं। चीनी जनता, सोवियत जनता, विभिन्न जन-लोकतन्त्रों की जनता और दुनिया के सभी देशों में शान्ति, जनवाद तथा न्याय को प्यार करनेवाली तमाम जनता की दोस्ती का आधार भी अन्तर्राष्ट्रीयता का यही महान् सिद्धान्त है। इसलिए, वह अटूट है।

साफ जाहिर है कि इस मित्रता से जन्मी हुई शक्तियाँ असीम, सक्षम और वास्तव में अजेय हैं।

तमाम साम्राज्यी हमलेवर और जंगबाज हमारी महान् मित्रता के आगे थर-थर काँप रहे हैं।

मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन की शिक्षाएँ जिन्दाबाद !

महान स्तालिन का अमर नाम युग-युग तक चिरंजीवी हो !

श्रीमती सनयात् सेन की श्रद्धांजलि : हम उसे खो बैठे हैं, जो महान् प्रतिभाशाली क्रान्तिकारी रचयिता था, लम्बे संघर्ष की आग में इस्पात बना था, जिसमें अदम्य भावना-शक्ति थी और जो ऊँचे सिद्धान्तोंवाला तथा तमाम उत्पीड़कों का कट्टर दुश्मन था। स्तालिन के भीतर जलनेवाली क्रान्ति की लौ इतनी प्रखर थी कि उनके लिए जिन्दगी का बस एक ही कानून था—जनता की सेवा करना। इतने बरसों तक क्रैमलिन के अपने कमरे से, उन्होंने न सिर्फ निर्माण करने और सारी मानव जाति के भविष्य की गारंटी करने में सोवियत जनता का नेतृत्व किया, बल्कि सभी उत्पीड़ितों के लिए भी—फिर वे चाहे कितनी ही दूर क्यों न बसते हों—गहरी सहानुभूति दिखाई है।

हम उसे खो बैठे हैं, जो शान्ति का सबसे बड़ा झंडाबरदार था। स्तालिन ने दुनिया को एक नई जिन्दगी का रास्ता दिखाया—सचाई और ईमानदारी की जिन्दगी का, जो सीधी और स्पष्ट है, आदमियों और औरतों के लिए, तमाम जनता के लिए और तमाम राज्यों के लिए समान है और जो ऐसी जिन्दगी है जिसने राष्ट्रों के बीच के सम्बन्धों को ऐसी मित्रता के आधार पर कायम किया है, जैसी इतिहास में पहले कभी भी मौजूद न थी।

सचमुच हमने बहुत कुछ खो दिया है। मगर, आगे हमारी प्रगति के लिए स्तालिन ने हमें निःशस्त्र नहीं छोड़ा है। उनकी समूची जिन्दगी और काम ने हमें इतना लैस कर दिया है कि उनके पूर्वगामियों और खुद उनकी उच्चतम आशाओं को हम पूरा करें।

उनके ध्येय को आगे बढ़ाना हमारा कर्तव्य है। तमाम प्रगतिशील मानव जाति को जागरूक होना चाहिए। स्तालिन की पार्टी और महान् सोवियत जनता के चौगिर्द हमें एकजुट होना चाहिए।

'स्तालिन के लिए'—यही वह झंडा है, जिसके तले अन्तर्राष्ट्रीय मजदूर वर्ग की विजय हासिल करनी है।

पंडित जवाहरलाल नेहरू की श्रद्धांजलि : मार्शल स्तालिन अब नहीं रहे। अभी दो दिन पहले ही, हमने उनकी सख्त बीमारी की खबर सुनी थी। सिर्फ दो या तीन हफ्ते पहले ही, हमारे मॉस्को-स्थित राजदूत ने उनसे मुलाकात की थी और जब हमारे राजदूत द्वारा भेजी हुई इस मुलाकात की रिपोर्ट मैं पढ़ ही रहा था, तो मुझे मार्शल स्तालिन की सख्त बीमारी की सूचना मिली। हमारे राजदूत के मिलने पर, उन्होंने अपने-आपको शान्ति का हामी बतलाते हुए यह ख्वाहिश जाहिर की थी कि दुनिया की शान्ति भंग नहीं होनी चाहिए। उन्होंने हिन्दुस्तान के लिए अपनी सद्भावना प्रकट की थी और हमारे मुल्क तथा हममें से कुछ लोगों के लिए अपनी शुभकामनाएँ भी भेजी थीं। यह बात और भी दिलचस्प है कि उन्होंने हमारी बहुत-सी सांस्कृतिक समस्याओं के बारे में भी बातचीत की थी। इस बारे में उनकी काफी जानकारी है, यह देखकर हमारे राजदूत को थोड़ा ताज्जुब भी हुआ। उन्होंने हिन्दुस्तान की भिन्न-भिन्न भाषाओं, उनकी उत्पत्ति, उनके पारस्परिक सम्बन्धों और उनके बोले

जाने के क्षेत्रों के बारे में बातचीत की थी।

जब हम मार्शल स्तालिन के बारे में सोचते हैं, तो हमारे–कम-से-कम मेरे–दिमाग के सामने कई विचार आ जाते हैं और पिछले पैंतीस वर्षों के इतिहास की घटनावली जैसे आँखों के सामने आ जाती है। हम सब इसी युग की सन्तान हैं और हम पर अनेक प्रकार से इसका असर भी पड़ा है। इस दौरान में हम न सिर्फ अपने देश में ही संघर्ष करके बड़े हुए हैं, दुनिया के दूसरे हिस्सों में होनेवाले ताकतवर संघर्षों ने भी हम पर अपना असर डाला है। इन पैंतीस वर्षों की घटनाओं पर नजर डालने से कई उल्लेखनीय व्यक्तित्व सामने आते हैं। पर, शायद कोई भी ऐसा दूसरा व्यक्तित्व नजर नहीं आता, जिसने मार्शल स्तालिन की तरह इन वर्षों के इतिहास को इतना प्रभावित किया और बनाया हो। धीरे-धीरे वे कथा-कहानियों के नायक की तरह बन गये। कभी एक रहस्यमय व्यक्ति के रूप में और कभी असंख्य लोगों के साथ घनिष्ठ संबंध रखनेवाले व्यक्ति के रूप में वे सामने आये। शान्ति और युद्ध दोनों में ही, उन्होंने अपने-आपको महान साबित किया। उन्होंने जिस दुर्गम इच्छा-शक्ति और असाधारण साहस का परिचय दिया, कम ही लोगों में होते हैं। जब इस काल का इतिहास लिखा जायगा, तो उनके बारे में तरह-तरह की बातें कही जायेंगी और पता नहीं, आनेवाली पीढ़ियाँ क्या राय कायम करेंगी; पर इस बात से तो सभी सहमत होंगे कि मार्शल स्तालिन एक बहुत बड़े व्यक्तित्व वाले आदमी थे, जिन्होंने अपने युग के भाग्य का निर्माण किया। यद्यपि उन्हें लड़ाई में ही काफी सफलता मिली, पर उन्हें सबसे ज्यादा तो इसलिए याद किया जायगा कि उन्होंने अपने देश को महान् बनाया है।

उन्होंने जो कुछ कहा या किया, उसकी इस सचाई से कोई इन्कार नहीं कर सकता कि उन्होंने रूस को महान् बनाया, जो कि एक बहुत बड़ी कामयाबी है। इसके अलावा, वे न सिर्फ अपने मुल्क की मौजूदा पीढ़ी में ही काफी प्रसिद्ध और लोकप्रिय थे, बल्कि वे काफी बड़ी तादाद में दुनिया के इन्सानों के साथ घनिष्ठ सम्पर्क भी रखते थे। यह बात बहुत ही कम लोगों के बारे में कही जा सकती है। देश और विदेश के बहुसंख्यक लोग उनसे बड़े ही घनिष्ठ और मैत्रीपूर्ण भाव से सम्बद्ध थे। मैं ऐसे लोगों को भी जानता हूँ जो मार्शल स्तालिन से इस घनिष्ठ सम्बन्ध के बावजूद, बहुत-सी बातों और कार्यों में सहमत नहीं थे। उन्होंने मुझे बताया कि जिस घनिष्ठ मैत्री-भाव से वे मार्शल स्तालिन के साथ सम्बद्ध थे, उसके साथ इस तरह का मतभेद बड़ा अरुचिकर लगता था। ऐसे लोगों में रूस और बाहरी देशों के वे लोग भी हैं, जिन्होंने स्तालिन को सिर्फ देखा-भर था और उनके बहुत नजदीक नहीं गये थे। इस तरह स्तालिन एक ऐसे व्यक्ति थे, जिन्होंने एक तरफ इतिहास के इस अशान्त समय में से सफलतापूर्वक गुजरने की चेष्टा की और दूसरी तरफ, अगणित मनुष्यों की मुहब्बत और तारीफ भी हासिल की। वे अपने किन कामों में सफल हुए और किन में उन्होंने गलतियाँ कीं, इस बारे में मुख्तलिफ लोगों की मुख्तलिफ रायें हो सकती हैं, मगर यह तो सभी मंजूर करेंगे कि उनका व्यक्तित्व महान् था और वैसी ही बुलंद उनकी कामयाबियाँ भी थीं।

आज उनके निधन पर, हम उनके प्रति अपनी श्रद्धा का इजहार कर रहे हैं, यह न सिर्फ एक महान् व्यक्ति की जिन्दगी के खतम होने का मौका है, बल्कि एक तरह से इतिहास के एक युग की समाप्ति भी है। वैसे इतिहास का काम तो जारी ही है और उसे मुख्तलिफ टुकड़ों में बाँटना गलत होगा–जैसा कि हमारे इतिहासकार और दूसरे लोग किया करते हैं। इतिहास तो बराबर ही आगे बढ़ता है, पर उसके कुछ खास युग खतम हो जाते हैं और फिर नये रूप में नये सिरे से जिन्दगी शुरू होती है। पर, जो अत्यन्त महान् व्यक्ति अपने-आपको युग-विशेष का प्रतीक बना लेता है, उसके निधन से ऐसा मालूम होता है, मानो वह युग ही खतम हो गया है। मैं नहीं कह सकता कि भविष्य का फैसला क्या होगा, पर इस बात में कोई शक नहीं कि जो जबर्दस्त असर लोगों के दिलों और दिमागों पर मार्शल स्तालिन का है, वह उनकी मौत के बाद भी कायम रहेगा और लोग उनसे प्रेरणा लेते रहेंगे।

बहुत-से लोगों ने–जिनमें से कई ऐसे भी हैं, जो दुनिया में उनके बड़े विरोधियों के रूप में मशहूर हो चुके हैं–भिन्न-भिन्न ढंग से स्तालिन के बारे में अपना मत जाहिर किया है। अक्सर ये बातें परस्पर विरोधी भी होती हैं। कुछ लोगों ने उन्हें बड़ा ही बेतकल्लुफ़ और भला आदमी बतलाया है, जबकि दूसरों ने बड़ा ही

सख्त और बेरहम। हो सकता है, ये सारी बातें उनमें रही हों, पर इनके बावजूद इसमें कोई शक नहीं कि वे एक महान् व्यक्ति थे।

हालाँकि संविधान की रू से मार्शल स्तालिन सोवियत राष्ट्र के मुखिया नहीं थे, लेकिन वैसे वे राष्ट्र के मुखिया से कहीं अधिक थे। वे अपने अधिकार से ही महान् थे, भले ही वे किसी ओहदे पर हों या न हों। मेरा विश्वास है कि उन्होंने अपने असर का इस्तेमाल हमेशा शान्ति के हक में ही किया है। पर जब जंग छिड़ी, तो उसमें भी वे एक महान् योद्धा साबित हुए। लेकिन, जहाँ तक मेरी जानकारी है उसके आधार पर, मैं यही कह सकता हूँ कि अशांति और संघर्ष की इस दुनिया में उन्होंने अपने प्रभाव का इस्तेमाल हमेशा शान्ति के पक्ष में ही किया। मुझे यह पक्की उम्मीद है कि जिस प्रभाव का इस्तेमाल उन्होंने शान्ति-रक्षा के लिए किया, वह उनकी मृत्यु के बाद भी शान्ति के लिए ही काम में लाया जायेगा। ऐसा करने से, मुझे उम्मीद है कि मुख्तलिफ मुल्कों के लोगों के दिमागों में आज जो एक दिमागी तनहाई की हालत पैदा हो रही है, वह कम होगी। जिस तनाव के साथ आज के मसलों को हल करने की कोशिश की जा रही है, लम्बी-लम्बी बहसें होती हैं, उन मसलों के हल की दिशा में ज्यादा समझदारी और सहयोग की भावना से काम होगा, ताकि मार्शल स्तालिन की मौत हमें इस बात की और ज्यादा प्रेरणा दे सके कि आज की अशांत दुनिया को पहले से भी कहीं ज्यादा शान्ति की जरूरत है और हम सबको मिलकर, उसे नई दुर्घटनाओं से बचाना चाहिए।

डा. सर्वपल्ली राधाकृष्ण की श्रद्धांजलि : स्तालिन की यह हार्दिक आकांक्षा थी कि मृत्यु के रूप में वे अपने देश से उसी समय विदा लें, जबकि उनका देश किसी खतरे में नहीं, बल्कि पूर्ण शान्ति की अवस्था में हो। कहना न होगा कि उनकी इच्छा सचमुच परिपूर्ण हुई है। मुझे आशा है, स्तालिन के उत्तराधिकारी भी शान्ति-रक्षा के लिए भरसक चेष्टा करेंगे और राष्ट्रों के आपसी सम्बन्धों को अधिकाधिक मैत्रीपूर्ण बनाएँगे। अपने ढाई वर्ष के राजदूत-काल में, भारत के राजदूत की हैसियत से मॉस्को में मार्शल स्तालिन से भेंट करने पर, उन्होंने प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कभी भी यह संकेत नहीं किया कि मौजूदा संघर्ष में भारत सोवियत संघ का साथ दे।

तेहरान में हुई चार महान् राष्ट्रों के नेताओं की कान्फरेंस में, चर्चिल ने कहा था कि रूस के इतिहास की महानतम विभूतियों के समकक्ष होने के नाते स्तालिन को महान् कहना सर्वथा उपयुक्त ही है। भले या बुरे जिस रूप में भी हो, उनके कार्य ने विश्व-इतिहास पर अपनी गहरी छाप डाली है, जिसका प्रभाव हर राष्ट्र महसूस करता है।

मैं यह स्पष्ट कह देता हूँ कि जिन्हें हम नागरिक स्वतंत्रताएँ कहते हैं, रूस में उनके अभाव की बात से स्तालिन अनभिज्ञ नहीं थे। जब इस बारे में उनसे कोई कुछ पूछता, तो वे यही कहते थे कि उनके देश के वैविध्यपूर्ण इतिहास को देखिए और जिन ऐतिहासिक परिस्थितियों में से उन्हें गुजरना पड़ा है, उन्हें भी देखिए। उन्हीं से इस बात का जवाब मिल जायेगा कि रूस में नागरिक स्वतंत्रताओं का अभाव क्यों है। फिर, जब पहले शान्ति, समृद्धि और सुरक्षा हो जायेगी, तब नागरिक स्वतंत्रताएँ तो बाद में भी प्राप्त की जा सकती हैं। जब मैंने उनसे कहा कि यह तो मार्क्सवाद के सिद्धान्तानुसार नहीं है; तो उन्होंने सिर्फ यही कहा कि वे कोई मौखिक कट्टरतावाले मार्क्सवादी नहीं, बल्कि क्रियात्मक मार्क्सवादी हैं।

यदि युद्ध-काल में मित्र-राष्ट्रों में जो सहयोग-सम्बन्ध था, वह युद्ध के बाद भी बना रहता तो आज दुनिया का मानस अधिक स्वस्थ होता। जहाँ तक रूस का सम्बन्ध है, जिस देश के दो करोड़ व्यक्ति हताहत हुए हों और समूचे देश का एक-तिहाई भाग शत्रुओं द्वारा नष्ट कर दिया गया हो, वह आसानी से युद्ध की बात नहीं सोचेगा।

स्तालिन का निधन रूस के लिए एक बहुत बड़ी दुर्घटना है। अक्सर दुर्घटनाएँ एक बहुत बड़ा परिवर्तन लाती हैं और मुझे आशा है, यह दुर्घटना भी रूसियों में वह बड़ा परिवर्तन लायेगी, जिससे कि वे दुनिया के विभिन्न राष्ट्रों के साथ भाईचारे और मित्रता का सम्बन्ध स्थापित कर सकेंगे। इस देशव्यापी दुःख, चिन्ता और संकट के समय हम रूसवासियों के साथ हार्दिक समवेदना और सहानुभूति प्रकट करते हैं और यह आशा करते

हैं कि वे अपने देश को सुसंगठित रखते हुए, दूसरे राष्ट्रों से अपने सम्बन्ध सुधारने और शान्ति को कायम रखने की भरसक चेष्टा करेंगे।

हिन्दुस्तानी कम्युनिस्ट पार्टी की श्रद्धांजलि : गहरे शोक के साथ, जिसे आँसू नहीं बता सकते, हम कामरेड स्तालिन की याद को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं। मानव-जाति ने अपना सबसे महान प्रतिनिधि खो दिया। मानव-मुक्ति के आन्दोलन ने अपना सबसे बड़ा रहनुमा खो दिया। और, शान्ति के ध्येय ने अपना अथक सूरमा खो दिया।

करोड़ों घरों में मातम छा गया है। सभी देशों के पचासों करोड़ आदमियों और औरतों के दिल दुख से भर गये हैं। जिसके लिए वे सबसे ज्यादा लालायित हैं, जिसे वे सबसे ज्यादा प्यार करते हैं, स्तालिन उसी सब के प्रतीक थे। वे उन सबकी आशाओं और आकांक्षाओं के मूर्त रूप थे।

मानव इतिहास में आज तक दूसरा कोई ऐसा व्यक्ति नहीं हुआ, जिसके हर शब्द का दुनिया के हर देश में ऐसा व्यापक स्वागत हुआ हो, जिसके नाम का इतनी भारी बहुसंख्या के लिए इतना भारी महत्त्व रहा हो।

सोवियत जनता और सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के लिए, हमारे दिल में गहरी सहानुभूति है। हम उन्हें विश्वास दिलाते हैं कि उनका शोक हिन्दुस्तान की तमाम जनता का शोक है, हर देश के हर नेकनीयत आदमी और औरत का शोक है।

कामरेड स्तालिन मार्क्स, एंगेल्स और लेनिन के वफादार शिष्य थे। उनके वैज्ञानिक और क्रांतिकारी काम को उन्होंने जारी रखा, आगे बढ़ाया और नई बुलन्दियों पर पहुँचाया। कम्युनिज्म में संक्रमण करनेवाले समाज के वह मेमार और निर्माता थे और वह उस विजय के संगठनकर्ता और प्रेरणा-स्रोत थे, जिसने मानव-जाति को बर्बर फास्स्टिों की यंत्रणाओं से बचाया। कामरेड स्तालिन दुनिया के क्रान्तिकारी आन्दोलन के सेनानी थे। उनके ही नेतृत्व में उसने विजय पर विजय प्राप्त की।

औपनिवेशिक और गुलाम देशों की जनता के ध्येय को उन्होंने हमेशा आगे बढ़ाया। आजादी और जनवाद के लिए, उसके संघर्ष में वह अविचल पथ-प्रदर्शक और मित्र थे।

एक-तिहाई मानव-जाति गौरवपूर्ण मुक्त दुनिया में रह रही है। समाजवाद, जनवाद और शान्ति का बराबर बढ़ता हुआ आन्दोलन पुरानी दुनिया की नींव हिला रहा है और तमाम देशों की जनता के लिए एक नयी और खुशहाल जिन्दगी के द्वार खोल रहा है। ये उनकी याद के जीवित स्मारक हैं। उनके ऐतिहासिक नेतृत्व के महान् सबूत हैं।

मानव सिद्धान्त और कार्यनीति के इस महापुरुष की मृत्यु से दुखी, हम मौजूदा पीढ़ी के कम्युनिस्ट इस बात को हमेशा गर्व के साथ याद करेंगे कि हम कामरेड स्तालिन के ही युग में रहे हैं, उन्होंने हमारा पथ-प्रदर्शन और नेतृत्व किया और उन्होंने हमें सिखाया कि कैसे अपने खून की आखिरी बूँद तक मजदूर वर्ग और जनता की सेवा करनी चाहिए।

मुश्किलों के दिन, कठिन परीक्षा के दिन, इम्तहानों और कठिनाइयों के दिन आगे आनेवाले हैं। उनमें कामरेड स्तालिन की बुद्धिमत्तापूर्ण सलाह, उनका प्रेरणादायक नेतृत्व अब हमें न मिल सकेगा। उनकी मृत्यु से हुई भारी क्षति हर घड़ी खटकेगी। मगर, इस बात में हमें जरा भी सन्देह नहीं है कि स्तालिन के साँचे में ढले हुए व्यक्तियों के नेतृत्व में और स्तालिन द्वारा निर्मित पार्टी के पथ-प्रदर्शन में कम्युनिस्ट आन्दोलन और शक्तिशाली तथा एकजुट होगा; मानव-प्रगति के शत्रुओं की साजिशों को खतम करेगा और हमारे महान शिक्षक और नेता द्वारा निर्धारित रास्ते पर दुनिया के मजदूर वर्ग और आम जनता की रहनुमाई करता रहेगा।

जिस फरहरे को स्तालिन ने ऊँचा उठाया, उसके नीचे दृढ़तापूर्वक एकजुट होकर; जिस ध्येय के लिए स्तालिन जिये और जिसके लिए उन्होंने वीरगति पाई, उसके प्रति अडिग रूप से वफादार रहकर और स्तालिन द्वारा हमारे लिए छोड़ी गई सबसे कीमती विरासत के रूप में कम्युनिस्ट पार्टी और अन्तर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आन्दोलन के एके को सुरक्षित रखकर, हम विजय-पथ पर आगे बढ़ेंगे।

कामरेड स्तालिन का अमर नाम हमारे हृदय में अंकित है। अपने ध्येय को प्राप्त करने के लिए, वह

हमेशा हमें प्रेरणा देते रहेंगे। इस गम्भीर घड़ी में, हम एक बार फिर प्रतिज्ञा करते हैं कि उन ध्येयों को हासिल करने के लिए हम अपने प्राण तक निछावर कर देंगे।

इलिया एरेनबुर्ग की श्रद्धांजलि : इन कठिन दिनों में, स्तालिन अपनी पूर्णतम महानता के साथ हमारी आँखों के सामने उभरकर आये—हमने देखा उन्हें अखिल विश्व के मार्गों पर लम्बे डग भरते हुए, हमारे संकटपूर्ण जमाने की हिलोरों पर शिखर की भाँति छाते हुए। अपनी जन्मभूमि गुर्जी के पहाड़ों को वह लाँघते हैं, दोन और वोल्गा के बीच के युद्ध-क्षेत्र को वह पार करते हैं, निर्माण-रत नये मॉस्को के चौड़े पथों से वह गुजरते हैं, जनरव से पूर्ण शंघाई के बाजारों में वह दिखाई देते हैं, फ्रांस की पहाड़ियों को वह पार करते हैं, ब्राजील के जंगलों से गुजरते हैं, रोम के प्रांगण में पहुँचते हैं, भारत के गाँवों को पार करते हैं—शिखरों को अपने चरणों से नापते हुए।

स्तालिन की अन्त्येष्टि का समय जब हो आया, तो पेरिस में एक बेरोजगार आदमी गुलाब के हारों से सजे उनके चित्र के पास पहुँचा और वायलेट के फूलों का एक छोटा-सा गुलदस्ता उसने अपनी ओर से अर्पित किया—"बजाय रोटी खरीदने के, मैंने उनके लिए फूल खरीदे।…" तूरिन में मशीनी औजारों का चलना बन्द हो गया, सिसली के कृषि-मजदूर खामोशी में निस्तब्ध खड़े हो गये, गेनोआ के घाट-मजदूरों ने काम बन्द कर दिया। ये सब भी स्तालिन की अर्थी का साथ दे रहे थे। प्राचीन पीकिंग में युवक, बूढ़े लोग और अपने बच्चों को साथ लिए स्त्रियाँ, सँकरे बाजारों को लाँघती हुई मैदान की ओर तेजी से बढ़ रही थीं, जहाँ चीन अपने मित्र के प्रति शोक प्रकट कर रहा था। अर्जेन्तीना की चरागाहों में एक गड़ेरिये ने किसी राह चलते यात्री को 'शोक !' शब्द कहकर रोका और दोनों ने मिलकर स्तालिन के निधन का शोक मनाया। कोरिया के खंडहरों के बीच उन माताओं ने, जो मानव के दुर्भाग्य के लबालब प्याले चख चुकी हैं, अपनी आँखें झुका लीं और स्तालिन के निधन का शोक मनाया। पुलिस, मुखबिरों और दमनकारियों से घिरे हुए न्युयॉर्क के ईमानदार लोगों ने शोक में भरकर कहा—"शान्ति का मित्र जाता रहा।"

हमारे दुश्मनों ने सोचा था कि इस महान् शोक में हमारा कोई साथी नहीं रहेगा। निस्सन्देह, हमारा शोक ऐसा है कि उसे शब्दों में नहीं बताया जा सकता। कमीने लोग, जो हर चीज का मूल्य डॉलरों और सैन्टों में आँकते हैं, कभी नहीं समझ सकते कि ऐसे आदमी को खोने के क्या अर्थ होते हैं। लेकिन इन कठिन दिनों में ही सम्भवतः पहली बार, हमने देखा कि हमारे मित्र कितने हैं, कि हमारा शोक मानव-जाति का शोक बन गया है।

ब्राजील का खेत-मजदूर, जो सपने में भी नहीं सोच सकता था कि मॉस्को के बाजारों की शकल कैसी है या गाँवों में लोग किस प्रकार जीवन बिताते हैं, रूसियों से वह कभी नहीं मिला है, उसने कभी बर्फ नहीं देखी है, वह नहीं जानता कि छुट्टियों का विश्राम-घर कैसा होता है। अनेक सदियों पहले की भाँति, वह सुबह से साँझ तक हाड़ तोड़ता है और उसकी खुशी के दुर्लभ क्षण बहुत ही नगण्य होते हैं। लेकिन हर मेहनत करने वाले की भाँति, उसका हृदय बड़ा है और उसके हृदय पर उस आदमी के बारे में शब्द अंकित हैं, जो दुनिया के दूसरे हिस्से में रहता है और जो सब लोगों के लिए खुशहाली चाहता है। दुबला-पतला, काले रंग का यह खेत-मज़दूर जानता है कि मॉस्को नाम का एक नगर है और मॉस्को में स्तालिन रहते थे। उससे उसे जीवित रहने में मदद मिली। उससे उसे अपने कंधों को सीधा करने में सहारा मिला।

ऐसी पुस्तकें हैं जो हृदय को हिला देती हैं : इटली और फ्रांस के फाँसी पाये हुए कम्युनिस्टों के पत्र फासिज्म के खिलाफ संघर्ष के दिनों में जल्लादों के हाथों पड़ने वाले वीर, जिन्होंने साहस के साथ मौत को गले लगाया था। उनमें से कई अपने जीवन की आखिरी घड़ियों में अपनी पत्नियों, अपनी माताओं या अपने मित्रों के नाम कुछ शब्द भेजने में सफल हो गये थे। किन चीजों के बारे में उन्होंने लिखा था ? उन्होंने लिखा था अपने प्रियजनों के बारे में, अपने बच्चों के बारे में और उस आदमी के बारे में, जिसने उन्हें उनकी मृत्यु से पहले की घड़ियों में सहारा दिया था—उन्होंने लिखा था स्तालिन के बारे में। फाँसी पर चढ़ाये जाने से एक घंटा पहले, रेबेर, जो गेस्टापो की यंत्रणाओं के कारण हिल तक नहीं सकता था, ने स्तालिन का नाम लिखा

था। स्तालिन के नाम को अपने होंठों पर धारण किए, गैब्रील पेरी और दनियल केसानोबा ने बहादुरी के साथ अपनी मौत को गले लगाया था। स्तालिन का नाम था—चीन के उन वीरों की जबान पर जिन्होंने महान् अभियान में हिस्सा लिया था, कैन्टन के उन शहीदों की जबान पर जिन्होंने अपने देश की आजादी के लिए अपने प्राणों की बलि दी थी। स्तालिन का नाम लेकर ही, स्पेन के लोगों ने फासिज्म के खिलाफ संघर्ष में कूदने की शपथ ली थी। थेलमॉन को जब यंत्रणाएँ दी जा रही थीं, तब स्तालिन के नाम ने ही उन्हें बल दिया था और स्तालिन ही थे जिन्होंने वियतनाम के हृदय में आशाओं को जगाये रखा था।

उनकी बातों को केवल सुना ही नहीं जाता था, केवल दोहराया ही नहीं जाता था, उन्हें प्यार किया जाता था, एक महान् मानवीय प्रेम के साथ प्यार किया जाता था; क्योंकि वह जनता को प्यार करते थे, उनकी कमजोरियों और उनकी ताकत को पहचानते थे, क्योंकि वह उस माँ के आँसुओं का मर्म समझते थे जो युद्ध में अपने बेटे को खो चुकी है, क्योंकि वह खान-मजदूर और ईंटसाज के श्रम की कद्र करते थे। उनके शब्दों को सभी समझते थे—मॉस्को में और कैन्टन में, पेरिस में और रियो-द-जनेरो में। उनकी जड़ें हमारे इतिहास में, हमारी जन्मभूमि में गहरी जमी थीं, लेकिन वह वास करते थे हमारे देश की सीमाओं से परे, बहुत दूर-दूर के लोगों के हृदयों में।

उन दिनों जब फासिज्म संस्कृति के अस्तित्व मात्र को आतंकित कर रहा था, मानव की प्रतिष्ठा और जीवन के लिए खतरा बन गया था—स्तालिन ने मुक्ति-सेना को युद्ध में उतारा। उन्होंने यूरोप और एशिया के लोगों को रक्षा करनेवाली सेनाओं का नेतृत्व किया। गुलाम देशों के वीरों को—लीमूसीन, पिएमौन्त, पोलैंड और स्लोवाकिया के गुरिल्ला सैनिकों को प्राग और ओसलों की, एथेन्स और तिराना की बहादुर सन्तानों को—उन्होंने आगे बढ़ाया। विजय के गौरव को लोगों ने पहचाना। इसका कारण यह था कि खुद स्तालिन ने युद्ध में उनकी अगुआई की थी। और, जब फासिस्टी कैदखानों और कन्सैन्ट्रेशन कैम्पों के दरवाजे खोले गये तो यूरोप के सभी देशों के पुरुषों और स्त्रियों ने खुशी के आँसू बहाते हुए, स्तालिन के नाम को दोहराया। योसेफ विस्सारियोनोविच के जन्म की सत्तरवीं वर्षगाँठ के अवसर पर, उनके पास बहुमूल्य उपहार भेजे गये—युद्ध में काम आये सैनिकों की माताओं ने पारिवारिक स्मृति-चिह्न भेजे : यंत्रणाएँ देकर गेस्टापो द्वारा मारी गई लड़की का हैट, लड़ाई में मारे गये बेटे को मिला युद्ध का पदक। फ्रांस के लोगों ने स्तालिन को एक कलश भेजा, जिसमें बलेरिएन के उस किले की मिट्टी रखी थी जहाँ देशभक्तों को गोलियों से उड़ा दिया गया था और जहाँ वीरों ने अपने देश की जय के साथ, जीवन की जय के साथ, स्तालिन की जय के साथ अपनी मौत को गले लगाया था।

वह महान् सेनापति थे, जो युद्ध से घृणा करते थे। वह उस शोक से अच्छी तरह परिचित थे, जो युद्ध में आम लोगों के सिर पर फूटता है। वह सेनापति थे एक ऐसी सेना के, जो युद्ध के वर्षों में शान्ति के लिए लड़ी, जिसने स्तालिनग्राद के खंडहरों में शपथ ली कि भयानक कत्लेआम की आग लगानेवालों का अन्त करके ही वह दम लेगी। सभी जानते हैं कि वह कौन था, जिसने लोगों की विजय को कलंकित किया, वह कौन था जिसने फिर से युद्ध का हल्ला शुरू किया। उस छाया को हम कभी नहीं भूलेंगे, जो स्तालिन के चेहरे पर उस समय पड़ गई थी, जबकि समुद्र के उस पार से नये रक्तपात के पहले आह्वान हम तक पहुँचे थे।

स्तालिन ने कहा कि लोग, सभी देशों के साधारण पुरुष और स्त्रियाँ, युद्ध को रोक सकते हैं और इसके जवाब में शान्ति की एक अभूतपूर्व सेना का उदय हो गया। एक मामूली-सी स्त्री फौजी गाड़ी को रोकने के लिए रेल की पटरी पर लेट गई। एक अन्य स्त्री दौड़कर परेड के मैदान में पहुँची और उसने सैनिकों का आह्वान किया कि वे अपने भाइयों के खिलाफ हाथ न उठाएँ। घाट-मजदूरों ने अपनी बाँहों को समेट लिया और हमलावरों के हथियारों को लादने या उतारने से इन्कार कर दिया। अपने खेतों को विदेशी हवाई अड्डों के रूप में परिवर्तित करने के खिलाफ, किसान अपने खेतों के लिए लड़े। शान्ति की माँग करते हुए, लोग बाजारों में निकल आये। विराट कांग्रेस का आह्वान किया गया, जिनमें सभी देशों के प्रतिनिधि पुरुषों और स्त्रियों ने, सभी विचारों और सभी धर्मों के लोगों ने शान्ति के झंडे को ऊँचा उठाने की शपथ ली। करोड़ों लोगों ने अपीलों पर अपने हस्ताक्षर किये। ये अपीलें नहीं, बल्कि वचन-पत्र थे। इतिहास में पहले कभी लोगों की चेतना इतनी जाग्रत् नहीं हुई

थी, पहले कभी इतनी आशा का संचार नहीं हुआ था।

आज, इन दुःखपूर्ण दिनों में, शान्ति के सारे समर्थकों ने—वे चाहे जिस देश के भी रहनेवाले हों, वे चाहे जैसे भी विचार रखते हों—देखा है कि वे स्तालिन के कितने ऋणी हैं। वही है जिसने लोगों को एक दूसरे युद्ध को रोकने में मदद दी, वही है जिसने करोड़ों बच्चों और हजारों नगरों की रक्षा की।

लोगों से इस छोर से उस छोर तक भरे, रोम के प्रांगण में टार्चों के प्रकाश से आलोकित स्तालिन का चित्र लगाया गया। और, देर तक जोरों से ये शब्द गूँजते रहे : "स्तालिन ही शांति हैं।" मिसीसीपी राज्य के एक छोटे-से कस्बे में एक नीग्रो मजदूर ने मुझे बताया—"वे हमें कत्ल करने के लिए ले जाना चाहते हैं, लेकिन स्तालिन यह नहीं होने देंगे।" डेनमार्क में एक सीधी-सादी, पाँच बच्चों की माँ ने कहा—"मुझे अपने बच्चों के लिए डर नहीं है। स्तालिन उनकी रक्षा करेंगे।"

चीन के गाँवों में मैंने स्तालिन के चित्रों को देखा और इन चित्रों की ओर इशारा करते हुए, चीन के पुरुषों और स्त्रियों ने कहा—"वह हमारे घर की रक्षा कर रहे हैं।" पेरिस में घरों की दीवारों पर दो शब्द अंकित थे, जो लोगों के मस्तिष्क में एक-दूसरे से मिलकर एक हो गये हैं : 'स्तालिन' और 'शान्ति'।

स्वभावतः शान्ति की सेना में अनेक, बहुत-से कम्युनिस्ट हैं। ठीक वैसे ही जैसे कि फासिज्म से मानव जाति को मुक्त करनेवाली सेना में कितने ही, बहुत-से कम्युनिस्ट थे। लेकिन, अकेले कम्युनिस्ट ही शान्ति को ऊँचा नहीं उठा रहे हैं। सभाओं में, सम्मेलनों और कांग्रेसों में कितने ही विश्वासों के लोगों ने—कैण्टर्बरी के डीन ह्यूलेट जॉन्सन, एबौट बौलियर, रीख के भूतपूर्व चान्सलर बर्थ और इटली के उदारदली नेता नित्ति ने—स्तालिन की बुद्धिमत्ता और शांति-प्रेम का जिक्र किया है। शांति के महान् रखवारे की अन्त्येष्टि में भारत की राष्ट्रीय कांग्रेस के सदस्य डाक्टर किचलू ने हिस्सा लिया, फ्रांस के प्रगतिशील नेताओं—येव फार्ज और पिथरे कोत ने हिस्सा लिया। मानव-जाति के दुश्मन शान्ति के अन्य समर्थकों से कम्युनिस्टों को अलग करने के लिए व्यर्थ ही जोड़-तोड़ लगा रहे हैं। व्यर्थ ही वे सोवियत संघ, चीन और जनता के जनतंत्रों को शांति के लक्ष्य की रक्षा करनेवाली पश्चिमी यूरोप, अमरीका और एशिया की जनप्रिय ताकतों से अलग करने की सोचते हैं। स्तालिन के ये शब्द कि भिन्न व्यवस्थाएँ, भिन्न दुनियाएँ एक साथ रह सकती हैं और शांतिपूर्ण प्रतियोगिता कर सकती हैं, मानव जाति की चेतना में समा गये हैं। इन शब्दों ने लोगों को संयुक्त बनाया है, उन्होंने एक ऐसी ताकत को जन्म दिया है, जिसे कुत्सित युद्ध-प्रेमी कुचल नहीं सकते।

स्तालिन ने एक से अधिक बार राष्ट्रों के आजादी के अधिकार के पक्ष में आवाज उठाई है। अब राष्ट्र समझ गये हैं कि अगर आजादी नहीं, तो सुरक्षा भी नहीं। गुप्त या खुले आधिपत्य के खिलाफ, विदेशी अड्डों के खिलाफ और नये हमलावर कृत्यों के लिए सभी प्रकार के 'विदेशी सैनिक दलों' के खिलाफ संघर्ष में स्तालिन के शब्द उन्हें प्रेरणा देते हैं।

दिसम्बर के अन्त में, एक अमरीकी पत्रकार को स्तालिन ने जवाब देते हुए कहा था कि संयुक्त राज्य अमरीका और सोवियत संघ के बीच युद्ध को अनिवार्य नहीं माना जा सकता और यह कि दोनों देश आगे भी शान्ति के साथ रह सकते हैं। ये स्तालिन के आखिरी शब्द थे, जो समूचे भूमण्डल में व्याप्त हुए थे। ये दुनिया में सबसे ज्यादा मजबूत और सबसे ज्यादा शान्तिप्रिय राज्य के अध्यक्ष के शब्द थे। सारी दुनिया के आम लोगों की रक्षा के लिए, रक्तपात के खिलाफ, स्तालिन ने शान्ति के पक्ष में आवाज उठाई थी।

शान्ति के महान् रखवारे के निधन का समाचार सुनकर, हर जगह के लोगों पर छा जानेवाला शोक कितना स्वाभाविक है। लेकिन, हर कोई जानता है कि स्तालिन मर नहीं सकते। वह केवल अपनी कृतियों में ही जीवित नहीं हैं, केवल सोवियत राज्य की शक्ति और बढ़ती में ही जीवित नहीं हैं, बल्कि वह करोड़ों लोगों के मस्तिष्क में जीवित हैं—रूसियों और चीनियों के पोलों, और जर्मनों के, फ्रांसीसियों और विएतनामियों के, इटालियनों और ब्राजीलियनों के, कोरियनों और अमरीकियों के। जब स्तालिन का हृदय धड़कना बन्द हुआ, तो मानव जाति का शोक सन्तप्त हृदय और भी ज्यादा जोरों से धड़कने लगा। साधारण पुरुषों और स्त्रियों ने अनुभव किया कि स्तालिन की स्मृति ने, स्तालिन के आदेशों ने, शान्ति और मानव जाति की खुशहाली के लिए संघर्ष ने,

उन्हें और भी ज्यादा घनिष्ठ सूत्र में बाँध दिया है।

स्तालिन की अर्थी पर, ये शब्द गूँजकर चारों ओर फैल गये : "हम जनता के सच्चे सेवक हैं और जनता शान्ति चाहती है, युद्ध से घृणा करती है। करोड़ों के रक्त की होली को रोकने और खुशहाल जीवन के निर्माण की गारंटी करने की लोगों की इच्छा, हम सबकी पवित्र इच्छा हो !" ये शब्द साथी स्तालिन के विचारों, चिन्ताओं और उनके इरादों के मूर्त रूप थे और इन शब्दों को उनके सहकर्मी, सोवियत सरकार के अध्यक्ष ने उच्चारित किया था। ये शब्द हर कहीं और हर जगह सर्वसाधारण पुरुषों और स्त्रियों के पास पहुँचेंगे और हमारे साथ मिलकर, वे कहेंगे—"स्तालिन जीवित हैं !"

6. स्तालिन सम्बन्धी कविताएँ

चिरकाल से जनगण अपने वीरों की गाथाएँ गाता आया है, लेकिन स्तालिन तो सोवियत की जनता के लिए गाथाओं के वीरों से बहुत विलक्षण थे। उन्होंने अपने कार्यों से उनके जीवन में अद्‌भुत परिवर्तन किया है। स्तालिन ने उन्हें अत्याचारों और भूख से मुक्त किया, अगाध अन्धकार से निकालकर प्रकाश में रखा, उनकी सभी तरह की बेड़ियाँ काट फेंकीं और कुछ ही वर्षों में उनके सामने ऐसा सुखमय संसार ला दिया, जिसकी वह कल्पना भी नहीं कर सकते थे। स्तालिन के बारे में, जनसाधारण ने अपनी-अपनी भाषाओं में अनेक गीत बनाये और उन्हें गाकर साइबेरिया के तेगा, तुंद्रा, पामीर और काकेशस के हिमाच्छादित शिखरों, किजिलकुम और कराकुम के रेगिस्तानों, उक्रइन और रूस की शस्यश्यामला भूमि को प्रतिध्वनित किया है। इन गीतों में बहुतों के रचयिताओं का भी पता नहीं है। हम यहाँ सोवियत में जन-प्रसिद्ध ऐसे पाँच गीतों को ही दे रहे हैं। अंत में, हिन्दी और उूर्द की भी एक-एक कविता है।

अज्ञात कवि

यदि होते दो हृदय मेरे सीने में,
चढ़ घोड़े पर मैं,
ले आता उन्हें मॉस्को।
    पुर-द्वार उतरता अदब से,
    लेता निकाल कटिबन्द रेशमी,
    रखता उस पर दो ज्वलित हृदय।
देता रख सुघड़ पॉवड़ों पर,
कहता पुकार दरबानों से :
"उपहार स्तालिन के लिए एक रेशमी पोटलि का।"
    पोटलि से हृदय द्वय जल उठते;
    जल उठते, जैसे महाहृदय
    जगमग करता क्रैमलिन में।

अज्ञात कवि

ऊपर-ऊपर घाटी के
गिरि-शिखर तुंग।
ऊपर-ऊपर शिखरों के
है नभ महान्।
किन्तु स्तालिन के आगे,
है खर्व गगन।

सम हैं, तेरे सम केवल
वे उच्च विचार।
ऊँचे उगते हैं नभ में
तारे और रजनीपति।
तेरे सन्मुख तारे होते मलिन, किन्तु
वह रवि भी होता मलिन,

चमक तेरे सन्मुख।
रवि-किरण लुप्त होती,
रजनी के सन्मुख,
पर बुद्धि पार कर उसे चमकती।
यह लौह कठिन,
पर धातु कल्पना की तेरी
है कठिन, कठिनतर।
तू है नभ से अतिमहान्,
सम्मानित है इससे ही
तू इन सभी पर्वतों से भी।
औरों के ऊँचे-ऊँचे
नभचुम्बी सुविचारों को,
ऊँचे पर्वत के वासी,
लाते मन में नहीं।
जन-नेत्र चमत्कृत होते उन
गिरिबाजों से,

जब शब्द पहुँचते तेरे,
आदेश हमें देने को।
शब्द जो तेरे सुनता है,
नहीं उसे बिसर वह सकता।
जो कोई अवगम करता
तेरी उस हित-शिक्षा को,
जय-शिक्षा पाता है, वह
हारेगा कभी न रण में।
उत्सुक हैं सारे जनगण
ऊँचे पर्वत-पुंजों में दे दें दिल
हृदय अपने
तेरी सच्ची शिक्षा में।
मुँह फेर, जरा तो देखो,
शत-शत हैं पीछे तेरे
अनुयायी वे हैं तेरे,
क्योंकि सत्पथ है तेरा।
बनता जो अनुचर तेरा,
नहीं वह मरने से डरता—स्तालिन !

दागिस्तानी कवि सुलेमान स्तालस्की

जीवन बढ़ता है आगे,
दल करता है नेतृत्व।
श्रमिकों का महाप्रयाण,
साथ तुम्हारे उनका ध्वज।
—स्तालिन !।। 1।।
नव तरुणायी में चमकी,
ज्योति दिखाती पथ श्रमिकों को,
नेतृत्व जहाँ, तब शोक नहीं,
जीवन है सुखमय
—स्तालिन !।। 2।।
वर्षों बीते और कभी नहीं
आया दुर्भग वत्सर कोई,
जब से हमको त्राण दिया।
उत्तुंग शिखर से तुमको,
हैं साफ दीखते दूर क्षितिज
—स्तालिन !।। 3।।
अरिभुज को तुमने भग्न किया,
दृढ़ किया हमारी भुज को
और पूर्ण विजय-माला को
रख दिया शीश दुर्बल के।
एक कुंजी नव जीवन की।
—स्तालिन !।। 4।।
तेरा ओ मेरे युग-प्रसिद्ध !
जिसका है नाम,
है सुन्दर कृतियों की संज्ञा,
तेरा कि जिसने शब्द सुने,
औ' समझे मन दुखियों के;
तेरा गाता हूँ मैं यश
—स्तालिन !।। 5।।

मिखाइल इन्युश्किन

भू-सीमा से सीमा तक, घाटी, वन और पर्वत में–
जहाँ बाज परम अभिमानी मँडराता केवल ऊपर।
अति प्रेम-पात्र स्तालिन सुचतुर के गुण-गौरव को लेकर,
जनता के हृदयों से उठता संगीत।
द्रुततर बाजों की गति से, यह गीत उड़ रहा है नभ में,
कम्पित हैं अत्याचारी सब इसके भय-भैरव से।
कंटकित-तार-संरक्षित औ' दुर्ग-गुप्त सीमाएँ,
अवरुद्ध न कर सकती हैं संगीत सतत-प्रसरण को।
नहिं गोली और न कोड़ा चुप रह सकता है इसको,
यह साभिमान लाँघ जाता खाई औ' मोर्चा-बन्दी।
रिक्शों के चलते पहियों और ओठों से कुलियों के,
हलवाहों के हल से भी है गीत निकलता इसका।
जयकर्ता-ध्वज-सा इसको ऊँचे स्वर से वह गाते,
जनता का संयुत-संगर बढ़ रहा प्रबल पाँती में।
ऊँचे और ऊँचे स्वर में साहस और ताप बढ़ाता,
बढ़ रहा, हटाता अत्याचारी को अपने मग से।
कर प्राप्त विजय हम यों सब, अब साभिमान हैं गाते,
स्तालिन के युग को मिल कर हम सम्मानित हैं करते।
सुखमय अद्भुत नवजीवन को गाते हैं हम अपने,
अपनी पाई विजयों के गाते सुख के गीतों को।
भू-सीमा से सीमा तक, घाटी, वन औ' पर्वत में,
घहराता यान गगन का, मोटर गर्जन करती जहाँ,
जनता के अतिशय प्रेम का भाजन जो है स्तालिन,
यह विजयी जनता सारी उस सुचतुर के यश गाती।

चेरकास स्वायत्त प्रजातंत्र की जुरियत् शकोवा रचित–लोरी

लाउ-लाउ-लाउ-ला।
रात आई मेरे बच्चे सो जा।
सो जा मेरे छोटे, भूरी आँखों वाले
मैं गाती हूँ तेरे लिए।
बड़े दिन होंगे।
तेरा भाग्य, ओ मेरे प्रसिद्ध !
खेत और जंगल, सरिता और गिरिवर,
जो कुछ देखता है मेरे धनी, सब तेरे।
मेरे छोटे, भूरी आँखों वाले !
रात आई,
हो गये राजपथ सूने,
खेतों का काम बन्द हुआ,
सुनता है घर आंने के गीत,
दूर से ट्रैक्टर-ड्राइवरों के।
जल्दी ही मेरे बच्चे तू होगा बड़ा,
जब बढ़ के तू युवा होगा,
तू भी पुत्र, कम्बाइन चलायेगा,
हाँ, मेरे छोटे, भूरी आँखोंवाले !
तू सिद्ध करेगा अपने को मेरा पुत्र,
बढ़ने को हैं तेरे समाजवादी सम्वत्सर।
तेरे सीने पर अच्छे कामों के लिए,
चमकेंगे रंग पदक के।

तू होगा सम्मानित अपने कामों में,
तू पिछड़ेगा नहीं संगर में।
कौन तुझसे हाथ मिलाएगा ?
हमारे स्तालिन !
मिलाएँगे वह छोटे हाथों से।

लाउ-लाउ-लाउ-ला।
सो जा कोमल औ' गहरी नींद,
ओह ! कैसा चमकीला यश
तेरे लिए रक्खा है,
कैसा सुन्दर और यशस्वी जीवन !

श्री नरेन्द्र शर्मा

जागरूक प्रहरी धरती का, जनता का अभिभावक !
लौह और हिम का तन धर कर आया था ज्यों पावक !
हिटलर-से हिरनाकुस मारे बन-बन कर नर-नाहर,
खेल सके फिर धरती की फुलवारी में मनु-शावक !

निर्भर अभय-स्वरूप कि जिससे जन का भय भगता था,
गहन मौन जिसका रिपु को हुंकार सदृश लगता था !
नपी-तुली संयत वाणी में उत्स नए जन-मन का,
उसके दो नयनों में शतमुख स्वप्न-दीप जगता था !

उसकी अँगुली के इंगित पर स्वयम् काल भी नाचा,
रक्त-मांस का मनुज बना दुर्दान्त क्रान्ति का ढाँचा !
अंतर में करुणा, कराल कर स्वार्थों के संहारक,
कोमल मोम लिये सीने में वह इस्पाती साँचा !

पूँजीवादी चक्रव्यूह का द्वार तोड़ने वाला,
अधोगामिनी सरिताओं की धार मोड़ने वाला,
सदियों के भूखे बंजर को दिया बीज का दाना—
नित्य नए नौतोड़ जोत कर भूमि गोड़ने वाला !

निश्चित नियत योजनाओं से नियति प्रकृति को कीला,
क्रांति विपथगा उसके बल-कौशल से बनी सुशीला !
सबल राष्ट्र का सार्थवाह वह पहुँच चुका मंजिल तक,
उसके लिए सोच क्योंकर हो ? क्यों हो आँचल गीला !

अपने लिए न जीने वाले मर कर भी कब मरते ?
हर घर में वह दीपक बनते, हर दिल में घर करते !
सौ-सौ भाग्य बिगड़ते जग में एक स्वार्थ के कारण,
एक अमर निस्स्वार्थ भाव से सौ-सौ भाग्य सँवरते !

अमर हो गया है मर कर भी वह अरुणध्वज-धारी !
लड़ा सर्वहारा के हित में, कभी न हिम्मत हारी !
आशा का उद्धार किया युग-युग के अंधकूप से,
अर्थपिशाचों से स्वतंत्र की मानवता सुकुमारी !

वह सुकुमारी, थी जो कामुक सामन्तों की दासी,
जिसकी सुंदरता ही जिसको बनी गले की फाँसी !
वह सुकुमारी, जो अब भी क्रय-विक्रय की सामग्री,
जो बल-सम्बल की भूखी है और शांति की प्यासी !

मुक्त किया उस सुकुमारी को, दिया शान्ति-शीतल जल !
जन-बल धन-बल की भूखी को दिया श्रमिक का संबल !
अब न बवंडर उड़ा सकेंगे धरती को अम्बर में,
भँवर धरा को दिखा सकेगी अब न दिनांध रसातल !
जन-नेता के चरण-चिह्न अब दीपस्तम्भ बनेंगे,
चरण-चरण पर मुक्तचरण यश के कवि गीत रचेंगे !
उसके सुफल मनोरथ सब के सम्बल बन जाएँगे,
उसकी सुध को हम भी धुँधली होने कभी न देंगे !

श्री जाँ निसार अख़्तर

उफ़के[1]-वक्त से ख़ुर्शीदे-दुरख़्शाँ[2] टूटा,
कौन ख़ुर्शीदे-दुरख़्शाँ वो मेरा स्तालिन !
दफ़अतन[3] चीख़-सी एक सीनए-गेती[4] से उठी
दफ़अतन दिल की पुकारों से जहाँ गूँज उठा
नालए-दर्द से काशानए[5]-जाँ गूँज उठा।
दश्तो-दर[6] गूँज उठे—कौन मेरा स्तालिन !
बहरो-बर[7] गूँज उठे—कौन मेरा स्तालिन !
क़ल्बे[8]-गुलशन से जुनूख़ेज़ पुकारें निकलीं
चाक करती हुई दामन को बहारें निकलीं
बाल खोले हुए खेतों से हवाएँ लपकीं
कारखानों से दिल-अफ़गार[9] सदाएँ लपकीं
बादबानों[10] से लरज़ती हुई आहें दौड़ीं
थरथराती हुई तारों की निगाहें दौड़ीं
एक लमहे के लिए छा-सी गई दहर[11] पै रात
रौशनी चीख़ उठी—कौन मेरा स्तालिन !
एक लमहे के लिए रुक-सी गई नब्ज़े-हयात[12]
ज़िन्दगी चीख़ उठी—कौन मेरा स्तालिन !
साथियो, जादए[13]-मंज़िल पै हमारा रहबर
ज़िन्दगी भर की मशक़्क़त से थका सोता है
ज़र्रे-ज़र्रे को फ़रोग़े-महो-अन्जुम[14] देकर
आसमाँ सीनए-गेती से लगा सोता है
दोस्तो, बारगहे[15]-अज़मते-आदम है यही
पाये-रफ़्तार[16] को आदाब[17] सिखा दो, ठहरो
दिल हमारे हैं उसी के तो खिलाये हुए फूल
उसके कदमों पै यही फूल चढ़ा दो, ठहरो

1. काल का क्षितिज, 2. चमकीला सूरज, 3. एकदम, 4. धरती का सीना, 5. प्राण का प्रासाद, 6. जंगल और घर, 7. भूमि और समुद्र, 8. उपवन का हृदय, 9. दिल चीरनेवाली, 10. पालों, 11. दुनिया, 12. जिन्दगी की नब्ज, 13. मंज़िल की देहरी, 14. चाँद-तारों की चमक, 15. मनुष्यता का महानतम स्थान, 16. गति के पैरों को, 17. आचार।

सरबख़म[1] अज़मते-कौनेन[2] हुई जाती है
साथियो, परचमे-गुलरंग[3] झुका दो, ठहरो
तुझमें ये परचमे-गुलरंग अदा किसकी है ?
सुर्ख़ तारे तेरे सीने में ज़िया[4] किसकी है ?
चीन किस अब्र[5] का परतौ[6] तेरे गुलज़ार[7] पै है ?
रंग किसका ये तेरे बाग की दीवार पै है ?
तेरे झूमे हुए धानों में लहक है किसकी ?
माओ के नर्म तबस्सुम[8] में झलक है किसकी ?
कोरिया अज़्म[9] है किसका तेरे जाँबाज़ों में ?
किसकी ललकार छुपी है तेरी आवाज़ों में ?
वीतमिन्ह ये तेरे शोले में लपक किसकी है ?
तेरे बढ़ते हुए कदमों में धमक किसकी है ?
आग ये किसकी मलाया तेरे बाग़ात में है ?
कौन-सा सुर्ख़ निशाँ देख तेरे हाथ में है ?
मिश्र, ये धूम है क्या तेरे ख़रीदारों में ?
आ गया कौन-सा यूसुफ* तेरे बाज़ारों में ?
वादिए-नील पे है लालाफ़िशानी[10] किसकी ?
छा गई अर्ज़े[11]-ज़ुलेख़ा पे जवानी किसकी ?
ख़ाके-ईरान तेरे दिल में लगी है किसकी ?
आग ये तेल के सीने में दबी है किसकी ?
हिन्द, ऐ मेरे वतन, मेरे हिमाला की ज़मीं
मेरे फ़िरदौस[12], मेरे ताजो-अजन्ता की ज़मीं
ज़ुल्फ़े-बंगाल में ये ख़म, ये अदा किसकी है ?
ये दकन पर तेरे गुलनार[13] घटा किसकी है ?
सुर्ख़ है किससे जबीं तेरे तेलंगाने की ?
किसकी ममनून[14] है सुर्ख़ी[15] तेरे अफ़साने[16] की ?
एशिया, तेरे गुलिस्ताँ को सजानेवाला
इक नई आबोहवा देके गया है तुझको
अर्ज़े-मशरिक़ तेरी ज़ीनत[17] का बढ़ानेवाला
सुर्ख फूलों की क़बा[18] देके गया है तुझको
उम्र-भर तेरे लिए जान खपानेवाला
अपनी मेहनत का सिला देके गया है तुझको
जाते-जाते भी तेरा नाज़ उठानेवाला
तोहफ़ए-अमनो-बक़ा[19] देके गया है तुझको

---

1. नतमस्तक, 2. सृष्टि की महत्ता, 3. लाल गुलाब जैसे रंग का, 4. रोशनी, 5. बादल, 6. छाया, 7. बाग़, 8. मुस्कराहट, 9. निश्चय, 10. लाले के फूलों की बारिश, 11. जुलेखा का देश, 12. स्वर्ग, 13. सुर्ख़, 14. कृतज्ञ, 15. शीर्षक, 16. कथा, 17. सजावट, 18. लिबास, 19. शान्ति और जीवन।

* यूसुफ का सौन्दर्य अद्वितीय था और उन्हें मिस्र के बाज़ार में एक दास की तरह बेचा गया था। उनके सौन्दर्य के कारण, मिस्र के प्रभु वर्ग का हर आदमी उन्हें खरीदने को लालायित था। मिस्र की रानी ज़ुलेख़ा ने उन्हें सबसे अधिक दाम देकर खरीद लिया था।

हाँ, बढ़े चल कि तेरा राह बतानेवाला
तेरी मंज़िल का पता देके गया है तुझको
स्तालिन, तेरी साहब-नज़री[1] बाक़ी है
दीदावर देख तेरी दीदावरी[2] बाक़ी है
राहबर अब भी तेरी राहबरी बाक़ी है
अज़्मे-मोहकम[3] है तेरा नाम ज़माने के लिए
जेहदे-पैहम[4] है तेरा नाम ज़माने के लिए
एक परचम है तेरा नाम ज़माने के लिए
साथियो दोश[5] पै गुलरंग निशाँ[6] लेके चलो
इक जहाँ लेके उठो, एक जहाँ लेके चलो
स्तालिन अभी ज़िन्दा है हमारे दिल में
हर क़दम एक नया अज़्मे-जवाँ[7] लेके चलो
ज़िन्दगानी के ख़ज़ाने कहीं लुट सकते हैं ?
ज़िन्दगानी से नई ताबो-तबाँ[8] लेके चलो
सैले-रफ़्तार में दरिया की रवानी खो जाय
अपनी ठोकर में हर इक कोहे-गराँ[9] लेके चलो
जगमगा जाय सितारों से ज़मीं दूर नहीं
अपने क़दमों में कोई काहकशाँ[10] लेके चलो
ज़ुल्मते[11]-आखिरे-शब भी न रहेगी बाक़ी
और दो-चार क़दम मिशअले[12]-जाँ लेके चलो
साथियो, हौसलए-शौक़ को महमेज़[13] करो
हाँ, क़दम तेज़ करो, तेज़ करो, तेज़ करो
इर्तिक़ा[14] वक़्त का फ़र्मान सुनाता है चलो
हर क़दम माओ हमें राह दिखाता है चलो
स्तालिन हमें मंज़िल पै बुलाता है चलो।

---

1. दार्शनिक दृष्टि, 2. व्यापक दृष्टि, 3. दृढ़ निश्चय, 4. निरंतर संघर्ष, 5. कंधा, 6. ध्वजा, 7. जवान निश्चय, 8. शक्ति, 9. भारी पहाड़, 10. आकाश गंगा, 11. रात के पिछले पहर का अँधेरा, 12. जीवन ज्योति, 13. ऐड़ लगाओ, 14. विकास।

परिशिष्ट

स्तालिन का वर्ष-पत्र

सन्	स्थान	घटना विवरण
1879, दिसम्बर, 21	गोरी	स्तालिन का जन्म
1888, सितम्बर	गोरी	पुरोहित स्कूल में प्रवेश
1894, सितम्बर, 2	तिफ़लिस	अर्थोडक्स धर्मशास्त्रीय सेमिनरी में प्रवेश
1895	तिफ़लिस	स्तालिन की कविता छपी
1896-98	तिफ़लिस	मार्क्सीय अध्ययन-चक्र स्थापित किया
1898, अगस्त	तिफ़लिस	क्रान्तिकारी संस्था के सदस्य बने
अगस्त	तिफ़लिस	हड़ताल का संगठन
1899, मई, 29	तिफ़लिस	स्तालिन सेमिनरी से निकाले गये
1900, अप्रैल, 23	तिफ़लिस	मई दिवस पर भाषण
1901, नवम्बर, 11	तिफ़लिस	समाजवादी कमिटी के सदस्य
नवम्बर	बातूम	मजदूरों में काम आरम्भ
दिसम्बर, 31	बातूम	अध्ययन-चक्र-कान्फरेंस
1902, मार्च, 8	बातूम	मजदूर-प्रदर्शन का संगठन
मार्च, 9	बातूम	मजदूरों के प्रदर्शन पर गोली चली
अप्रैल, 5	बातूम	स्तालिन की प्रथम गिरफ्तारी
1903, फरवरी	बातूम	काकेशीय पार्टी कांग्रेस
जुलाई, 9	कुतैस	साइबेरिया में तीन वर्ष का निर्वासन-दंड
नवम्बर, 27	कुतैस	साइबेरिया पहुँचे
दिसम्बर	कुतैस	लेनिन का प्रथम पत्र
1904, जनवरी, 5	कुतैस	स्तालिन साइबेरिया से गायब
जनवरी, 6	काकेशिया	स्तालिन का प्रथम विवाह
दिसम्बर, 13-31	बाकू	हड़ताल का नेतृत्व
1905, फरवरी, 13	बाकू	खूनी रविवार के विरुद्ध पर्चा
जुलाई, 15	बाकू	'हथियारबंद विद्रोह और हमारे दाँव-पेच' लेख प्रकाशित
अक्तूबर, 18	बाकू	जार की सुधार-घोषणा पर भाषण

नवम्बर	बाकू	काकेशीय चतुर्थ सम्मेलन का संचालन
दिसम्बर	मॉस्को	प्रथम रूसी क्रान्ति
1905, दिसम्बर 12-17	तमरफोर्स	लेनिन से प्रथम मुलाकात
1906, अप्रैल, 15	तिफलिस	गुप्त छापाखाना पकड़ा गया
अप्रैल, 10-25	स्टॉकहोम	पार्टी की चौथी कांग्रेस में
जून, 21	तिफलिस	'अराजकतावाद या समाजवाद ?' लेख छपा
1907, अप्रैल, 30	लन्दन	पंचम पार्टी कांग्रेस में
अगस्त, 12	बाकू	'गुदांक' का प्रकाशन
सितम्बर, 29	बाकू	'ख़ानलार की घटना' लेख छपा
अक्तूबर, 25	बाकू	बाकू पार्टी कमिटी के सदस्य चुने गये
1908, मार्च, 9	बाकू	'तेल के मालिक' लेख छपा
मार्च, 25	बाकू	स्तालिन गिरफ्तार
नवम्बर, 9	वलोग्दा	निर्वासन-दंड
1909, जून, 24	वलोग्दा	भाग निकले
1910, मार्च, 23	वलोग्दा	स्तालिन तीसरी बार गिरफ्तार
अगस्त, 27	वलोग्दा	काकेशिया से पाँच साल के लिए निष्कासित
सितम्बर, 23	वलोग्दा	निर्वासित, नजरबन्द
1911, जून, 1	वलोग्दा	अनुपस्थिति में केंद्रीय कांफ्रेंस की संगठन-कमिटी के सदस्य चुने गये
सितम्बर, 6	वलोग्दा	निर्वासन से निकल भागे
सितम्बर, 9	पीतरबुर्ग	चौथी गिरफ्तारी
दिसम्बर, 14	वलोग्दा	तीन वर्ष के लिए निर्वासित
1912, फरवरी, 29	वलोग्दा	नजरबन्दी से भागे
अप्रैल, 22	पीतरबुर्ग	पाँचवीं गिरफ्तारी
जुलाई, 2	नारिम	साइबेरिया में निर्वासित
सितम्बर, 1	नारिम	निर्वासन से भागे
1913, फरवरी, 23	पीतरबुर्ग	छठी गिरफ्तारी
1914, सितम्बर	यूरोप	प्रथम विश्व-युद्ध घोषित
1915, ग्रीष्म	साइबेरिया	बोल्शेविकों की सभा में
1917, फरवरी	साइबेरिया	बूर्ज्वा-क्रान्ति
मार्च, 12	पीतरबुर्ग	स्तालिन पहुँचे
मई	पीतरबुर्ग	पोलित ब्यूरो के सदस्य चुने गये
जुलाई, 26	पीतरबुर्ग	छठी पार्टी कांग्रेस का संचालन
1917, अगस्त-अक्तूबर	पीतरबुर्ग	केन्द्रीय पत्रों 'प्रॉलितारी' और 'रबोची' का सम्पादन
अक्तूबर, 24 (6 नवम्बर)	पीतरबुर्ग	अस्थायी सरकार को उलटने का आह्वान
अक्तूबर, 25 (7 नवम्बर)	पीतरबुर्ग	महाक्रान्ति
1918, मार्च	पीतरबुर्ग	ब्रेस्तलितोवस्क-सन्धि
मई, 26	पीतरबुर्ग	खाद्य-विभाग के प्रधान संचालक
अगस्त	मॉस्को	समाजवादी-क्रान्तिकारियों का विद्रोह

अगस्त	मॉस्को	स्तालिन वारित्सीन में
1919, मार्च	पीतरबुर्ग	राजनियंत्रण लोककमीसार नियुक्त
जून-जुलाई	पीतरबुर्ग	पेत्रोग्राद की रक्षा
मई-अक्तूबर	उक्रइन	दक्षिणी मोर्चे पर
1920, नवम्बर	उक्रइन	पोल और रेंगल की पराजय
1921, मार्च	मॉस्को	मॉस्को दसवीं पार्टी-कांग्रेस
मार्च	मॉस्को	नवीन आर्थिक नीति
1922, मार्च-अप्रैल	मॉस्को	11वीं पार्टी-कांग्रेस—स्तालिन पार्टी के महामंत्री चुने गये
दिसम्बर, 30	मॉस्को	सोवियत समाजवादी गण संघ की स्थापना
1923, अप्रैल	मॉस्को	12वीं पार्टी-कांग्रेस
1924, जनवरी, 21	गोर्की	लेनिन का निधन
मई	गोर्की	13वीं पार्टी-कांग्रेस
1925, दिसम्बर	मॉस्को	14वीं पार्टी-कांग्रेस
1927, दिसम्बर,	मॉस्को	15वीं पार्टी-कांग्रेस
1929, दिसम्बर, 21	मॉस्को	स्तालिन की 50वीं वर्षगाँठ
1930, मार्च, 15	मॉस्को	'सफलता से चकाचौंध' लेख
अप्रैल, 3	मॉस्को	'कलखोजी साथियों को जवाब' लेख
1930, जून	मॉस्को	16वीं पार्टी कांग्रेस
1933, दिसम्बर, 11	मॉस्को	निर्वाचन-भाषण
नवम्बर, 3	मॉस्को	पत्नी नादेज्दा का देहांत
1934, जनवरी	मॉस्को	17वीं पार्टी-कांग्रेस
जनवरी, 28	मॉस्को	लेनिन संस्मरण सभा में भाषण
दिसम्बर, 1	मॉस्को	किरोफ की हत्या
1936, मार्च, 1	मॉस्को	राय होवार्ड से मुलाकात
1936, दिसम्बर, 5	मॉस्को	सोवियत-संविधान स्वीकृत
1937, दिसम्बर, 12	मॉस्को	महासोवियत का चुनाव
1939, मार्च	मॉस्को	18वीं पार्टी-कांग्रेस
1941, जून, 22	मॉस्को	हिटलर का सोवियत पर आक्रमण
जुलाई, 3	मॉस्को	देश की नाजुक स्थिति पर भाषण
जुलाई	मॉस्को	प्रतिरक्षा-जनकमीसार नियुक्त
दिसम्बर, 19	मॉस्को	राजधानी के घिरावे की घोषणा
1942, फरवरी, 23	मॉस्को	आठ महीनों के युद्ध का विश्लेषण
दिसम्बर	स्तालिनग्राद	जर्मनों की पराजय का आरम्भ
1943, मार्च, 6	मॉस्को	'मार्शल' की उपाधि
नवम्बर	मॉस्को	दो-तिहाई
नवम्बर	मॉस्को	भूमि की मुक्ति तेहरान कान्फरेंस में
1944, जुलाई, 26	मॉस्को	विजय-तमगा-प्राप्ति
1945, जनवरी-फरवरी	मॉस्को	सारे पोलैंड की मुक्ति
मई, 2	बर्लिन	जमीन राजधानी पर अधिकार
मई, 8	बर्लिन	जर्मनी का बिना शर्त आत्मसमर्पण

मई, 9	मॉस्को	विजय-दिवस
जुलाई, 17	मॉस्को	बर्लिन-कान्फरेंस
अगस्त, 9	मॉस्को	जापान के विरुद्ध युद्ध-घोषणा
सितम्बर, 2	मॉस्को	जापान का आत्मसमर्पण
1946, सितम्बर	मॉस्को	संवाददाता अलैक्जेंडर वर्थ से मुलाकात
1947, अप्रैल		अमरीकन स्टासेन से मुलाकात
1948	मॉस्को	वॉलेस को जवाब
1950	मॉस्को	भाषा का प्रश्न
1951, दिसम्बर, 31	मॉस्को	जापानी जनता के नाम संदेश
1952, अक्तूबर, 5	मॉस्को	19वीं पार्टी-कांग्रेस
1953, फरवरी, 7	मॉस्को	अर्जन्तीन के राजदूत से मुलाकात
फरवरी, 17	मॉस्को	भारतीय राजदूत से मुलाकात
मार्च, 1	मॉस्को	स्तालिन बेहोश हुए
मार्च, 5	मॉस्को	स्तालिन का निधन
मार्च, 9	मॉस्को	अन्त्येष्टि, 'सम्मान-गारद'

माओ चे-तुंग

भारतीय कम्युनिस्ट शहीदों को समर्पित

भूमिका

'माओ चे-तुंग' इस माला की चौथी और अंतिम पुस्तक है। 'स्तालिन' से शुरू करके 'कार्ल मार्क्स' और 'लेनिन' को लिख डालने के बाद मैंने इस पुस्तक में हाथ लगाया। पुस्तक जैसी भी है, पाठकों के सामने है। गुण-दोष के बारे में वही कहने के अधिकारी हैं। मैंने आधुनिक जगत् के महान् निर्माताओं की जीवनियों, सिद्धांतों और कार्यों के बारे में हिंदी में कमी अनुभव की, जिसकी ही पूर्ति के लिए इन चारों पुस्तकों को लिखा। माओ एसिया के हैं, और एसिया में भी चीन के, जिसका भारत के साथ सांस्कृतिक दानादान और घनिष्ठता बहुत पुरानी है। यह कह सकते हैं, कि दोनों की विचारधारा और जीवन में प्राचीन काल से ही बहुत घनिष्ठता रही है। यद्यपि मार्क्सवाद का प्रयोग (व्यवहार) हरेक देश में उसकी परिस्थिति के अनुसार करना पड़ता है, जो सबसे मुश्किल काम है, बल्कि कहना चाहिए कि मार्क्सवाद को अपने देश में व्यवहृत करने के मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन, स्तालिन और माओ चे-तुंग जैसी प्रतिभाओं की आवश्यकता लिये हैं। हर देश में क्रांति और नव-निर्माण की शक्तियाँ मौजूद हैं, समय भी कभी-कभी मिलता है, लेकिन क्रांति की सफलता के लिए वहाँ ऐसी ही महान् प्रतिभाओं की आवश्यकता है। आवश्यकता है, तो प्रतिभा जरूर पैदा होकर रहेगी। हमारे देश के लिए तो माओ की जीवनी बड़ी ही लाभदायक है।

पुस्तक लिखने में मेरे मित्र डा. महादेव साहा ने बड़ी सहायता की है। उन्होंने पुस्तकों को जमा करने में इतनी तत्परता न दिखलाई होती, तो शायद यह लिखी भी न जाती। इसी तरह साथी सच्चिदानन्द शर्मा, ओमप्रकाश शर्मा और शिव वर्मा का भी मैं बहुत कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने सामग्री जुटाने में बड़ी सहायता पहुँचाई।

पुस्तक के टाइप करने में श्री मंगलसिंह परियार की सहायता का भी मैं कृतज्ञ हूँ।

मसूरी, 16-7-'56

–राहुल सांकृत्यायन

1
पृष्ठभूमि

माओ चे-तुंग चीनी इतिहास के सबसे बड़े नेता हैं। महान् नेता आकाश से नहीं टपकता, वह अपनी भूमि और समाज की उपज होता है। इसलिए माओ चे-तुंग की जीवनी, उनके सिद्धांत, और प्रयोग के बारे में कहने से पहले उस पृष्ठभूमिका के बारे में कहना जरूरी है, जिसमें पैदा हो माओ चे-तुंग बढ़े और बड़े हुए।

1. चीन देश

चीन को ई. पू. दूसरी शताब्दी के राजवंश चिन् (छिन्) के कारण, यद्यपि इसी नाम से अधिकतर पुकारा जाता है, लेकिन स्वयं चीनी लोग अपने देश को चुङ्ह्वा और अपनी जाति को हान् कहते हैं।

चीन की प्राकृतिक स्थिति को देखने पर वह पर्वतों और नदियों द्वारा सीमित एक महान् देश है। वह पश्चिम में पामीर, तियान्शान् और अल्ताई से शुरू होकर पूर्व में कोरिया और प्रशान्त सागर तक फैला हुआ है। उत्तर की ओर त्यान्शान् (देवगिरि)-अल्ताई (सुवर्णगिरि) की श्रेणियाँ आगे बढ़ते बीच में कुछ टूटी-सी मंचूरिया तक चली जाती हैं। दूसरी पर्वतश्रेणी पामीर से खुन्-लुन् (कुइनलेन) होती चीन के मैदानों तक पहुँच गई है। दक्षिण में फिर पामीर से ही हिमालय (शी-मा-ला-या) को लेते दक्षिणी चीन में चुङ्-नान् (पान-ताओ) तक समाप्त होती है। इन्हीं पर्वतश्रेणियों के बीच से ह्वांग-हो (पीत नदी), हाइ-लुंग-चियांग (हाइ-लुंग नदी), ह्वै हो, छांग-चियांग (यांग-ची-कियांग) और चू-चियांग (मोती नदी) बहती है।

चीन गणराज्य का क्षेत्रफल 95 लाख 96 हजार वर्गकिलोमीटर है, जो कि करीब-करीब सारे यूरोप के बराबर है, और 1953 ई. में उसकी जनसंख्या 50 करोड़ आँकी जाती रही है।

2. प्रदेश

चीन-गणराज्य में 32 प्रदेश तथा भीतरी मंगोलिया और तिब्बत के स्वायत्त शासित क्षेत्र हैं। 32 प्रदेशों में ताइवान (फारमूसा) भी है, जिसे अभी तक अमेरिका ने जर्बदस्ती दखल कर रक्खा है। इन प्रदेशों का विवरण निम्न प्रकार है :

क्षेत्र	प्रदेश या नगरपालिका	राजधानी
1. उत्तर चीन		पेकिंग
	1. होपेइ	पाउतिंग
	2. शान्सी	ताइयुवान्
	3. चहार	वन्चुआन्

	4. पिंग युआन्	
	5. सुइ युआन्	क्वेइशुइ
	पेकिंग	नगरपालिका
	तियानचिन	नगरपालिका
2. उत्तर-पूर्व चीन		मुकदेन
	6. सुंग कियांग	
	7. किरिन	किग्नि
	8. हेइलुंग कियांग	चीचीहार
	9. ल्याउ तुंग	मुकदेन
	10. ल्याउ सी	
	11. जैहोल	चेंग तेंग
	पोर्त आर्थर-देरेन इलाका	
	मुकदेन न	
	पेकिंग न	
	अनशन (अनशांग) न	
	फूशुन न	
3. पूर्व चीन		शांघाई
	12. कियांग सू	चेंग कियांग
	13. चैकियांग	हांग चाउ
	14. अन्हवेइ	अनकिंग
	15. फूकियेन	फूचाउ
	16. शान्तुंग	चिनान
	17. ताइवान	तेपे
	शांघाई न	(नगरपालिका)
	नानकिंग न	(नगरपालिका)
4. केन्द्रीय दक्षिणी चीन		हान् काउ
	18. हूपे	हान् काउ
	19. हूनान्	चांग सा
	20. होनान्	काइफेंग
	21. क्यांग सी	नान्चांग
	22. क्वान्तुंग	कान्तन
	23. क्वांग सी	क्वेइलिन
	कान्तन न	
	हान्काउ न	
5. पश्चिमोत्तर चीन		सियान्
	24. शेन्सी	सियान्
	25. कान्सू	लानचाउ
	26. निंग स्या	निंग स्या
	27. चिंघई	सिननिंग
	28. सिंग कियांग	तिहुआ (उरूम्ची)

	सियान न	
6. दक्षिण-पश्चिम चीन		चुंग किंग
	29. जेचुआन	चुंग तू
	30. कवेइचाउ	क्वेइयांग
	31. युन्नान	कुनूमिन
	32. सीकांग	कांग तिंग
	चुंग किंग न	
7. भीतरी मंगोलिया स्वायत्त भू-प्रदेश		कलगन
8. तिब्बत स्वायत्त भू-प्रदेश		ल्हासा

चीन के ये प्रदेश भारत की तरह ही बड़े-बड़े हैं, उदाहरणार्थ जेचुआन की आबादी 4 करोड़ 70 लाख और हूनान की 4 करोड़ है। गणराज्य के बहुत-से भागों में हान् (चीनी) लोग रहते हैं, लेकिन उसके अनेक प्रदेशों में 60 जातियों के लोग बसते हैं, जिनमें शताब्दियों से वैमनस्य और खूनी झगड़े हुआ करते थे। अध्यक्ष माओ के नेतृत्व में अब वह अतीत की बातें रह गई हैं। सिंग कियांग (चीनी तुर्किस्तान) इंग्लैण्ड से सात गुना बड़ा देश है, लेकिन वहाँ की आबादी सिर्फ 35 लाख है, जिसमें भी 13 जातियों के लोग हैं।

3. जातियाँ

चीन में मुख्यतः पाँच बड़ी-बड़ी जातियाँ हैं : चीनी (हान्), मंचू (मान्), मंगोल (मंग), मुसलमान या तुर्क (हुइ) और तिब्बत (छांग)। इनमें मंचू अब बहुत कुछ चीनियों में मिल गये हैं। तो भी चीन गणराज्य के राष्ट्रीय ध्वज में लाल जमीन के ऊपर एक बड़ा और चार छोटे-छोटे पँचकोने तारे इन्हीं पाँचों जातियों के संकेत के रूप में रक्खे गये हैं। इन जातियों के बारे में निम्न बातें उल्लेखनीय हैं :

(1) तुर्क (हुइ) –इनकी भूमिका कम से कम ई. पू. तृतीय शताब्दी में भारत के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध रहा, यद्यपि पिछली सात शताब्दियों में भारत का सम्बन्ध वहाँ के लोगों से बहुत शिथिल होते-होते अन्त में वहाँ कुछ थोड़े-से भारतीय सौदागर और सूदखोर (महाजन) भारत का प्रतिनिधित्व करते रहे। इतिहास के विस्मृत पन्नों में भारत और सिंग क्यांग के प्राचीन सम्बन्धों को मुश्किल से पाया जा सकता था, लेकिन वर्तमान शताब्दी के आरम्भ में वह पुराना सम्बन्ध फिर बड़े जोर के साथ प्रकाशमान हो गया, जबकि वहाँ के रेगिस्तानों के उजड़े नगरों ने भारतीय और तरिम-उपत्यका की पुरानी भाषाओं की अनेक बहुमूल्य पुस्तकों को प्रकट करके दुनिया के सामने रक्खा। किसी समय तरिम-उपत्यका (खोतन-यारकन्द-काशगर-कूचा) के रहनेवाले वही लोग थे, जो कि ई. पू. द्वितीय सहस्राब्दी से चलकर पहाड़ों-पहाड़ों गिलगित (दरद), कश्मीर होते दार्जिलिंग तक सारे पहाड़ में फैल गये और जिन्हें हम खस (कश) के नाम से जानते हैं। इसी कश शब्द की छाप कश्मीर पर है, और इसी को हम कशगर (काशगर, कशगिरि, खशगिरि) के नाम में देखते हैं। कश्मीर और काशगर का घनिष्ठ सम्बन्ध अभी हाल तक रहा है। किसी देश में भी कोई शुद्ध जाति नहीं रह सकती, क्योंकि मनुष्य स्वभाव से जंगम प्रगतिशील है, जातियों का सम्मिश्रण बराबर होता रहता है। तरिम-उपत्यका में किसी समय खस (शक, तुखार) लोग रहते थे, फिर वहाँ हूण, तुर्क और उइगुर जातियाँ भारी संख्या में आईं। आज उनकी ही सम्मिलित संतानें वहाँ बसती हैं। शताब्दियों तक धर्मान्धता और पिछड़ेपन ने वहाँ के निवासियों की अवस्था बड़ी हीन बना रक्खी, उनके भव्य नगर ध्वस्त हो बालू के नीचे दब गये, और कितनी ही बातों में वह पीछे जा पड़े। लेकिन अब लाल चीन के अभिन्न अंग होने के बाद वह सभी क्षेत्रों में बड़ी तेजी से बढ़ने लगे हैं–एक ही दशाब्दी में पहचाना नहीं जा सकेगा, कि यह वही मध्य-एशियाई तुर्क हैं, जो हजारों प्रकार के मिथ्या विश्वासों में गले तक डूबे अपने भविष्य के पथ को खो चुके थे।

तरिम-उपत्यका की एक-एक जाति अपना बड़ा ही मधुर तथा सुन्दर इतिहास रखती है। खोतन प्रदेश के साथ भारत का कितना घनिष्ठ सम्बन्ध रहा, यह इसी से मालूम होगा कि एक समय वहाँ पर भारतीय लिपि ही नहीं, बल्कि उत्तरी भारत की तत्कालीन प्राकृत भाषा भी प्रचलित थी।

कूचा के लोग बड़े वीर, संस्कृत और विनोदप्रिय थे। उनकी भाषा का सम्बन्ध हिन्दी-यूरोपीय भाषाओं के पूर्वी वंश की अपेक्षा पश्चिमी वंश से अधिक था। नाच, अभिनय और संगीत की इतनी प्रेमी जाति ईसा की पहली सात शताब्दियों में शायद ही कोई रही हो। आज इस भाषा के बोलनेवाले वहाँ नहीं हैं, लेकिन वहाँ की बालुकाभूमि ने 'मैत्रेय समिति' नाटक, 'उदानवर्ग', 'अवदान' आदि कितने ही ग्रन्थों और सुन्दर चित्रों को प्रदान करके अतीत की स्मृति दिलाते हुए भारत के साथ पुराने घनिष्ठ सम्बन्ध को जीवित किया है। आर्यचन्द्र ने जिस विशाल 'मैत्रेय-समिति' नाटक को कूची भाषा में लिखा था, वह सत्ताईस अंकों में समाप्त हुआ था और कूचा के सुमुक्त नर-नारी सप्ताहों तक इसका अभिनय करते थे। वहाँ जो पंचवार्षिक मेला होता था, उसमें दस दिन तक लोग नाच-रंग और विनोद में अपना मनोविनोद करते थे। 'मैत्रेय समिति' का अनुवाद उइगुर (तुर्क) भाषा में भी हुआ था, जिसमें भी कितने ही अंश मिले हैं। उइगुर भाषा तुर्की भाषा की वह शाखा है, जिसमें तुर्क जाति का सबसे पुराना साहित्य प्राप्य है, और जिस साहित्य का भारतीय साहित्य से बहुत सम्बन्ध है।

(2) मंगोल (मंग) –मंगोल जाति का भारत के साथ सम्बन्ध कभी भी विस्मृत नहीं हुआ, और हजार बन्धनों के बाद अब भी जब-तब मंगोल यात्री भारतभूमि के दर्शन के लिए आ जाते हैं। बुर्यत मंगोल साइबेरिया में बैकाल सरोवर के पास सोवियत् की एक स्वायत्त शासित जाति के रूप में रहते हैं। खलखा मंगोल (बाह्य मंगोलिया के लोग) एक स्वतन्त्र जनगणराज्य के रूप में तीन दशाब्दियों से साम्यवाद के मार्ग पर अग्रसर हो रहे हैं। अन्तर्-मंगोलिया चीन के सामन्तों और उनके अन्तिम प्रतिनिधि च्यांग काइ-शेक (चि आंग चिए-ख) के जूये के नीचे कराह रहे थे, लेकिन अब उनकी काल-रात्रि खतम हो चुकी है, नवीन उषा ने उन्हें उद्बुद्ध करके चीनी गणराज्य की और जातियों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर आगे बढ़ने के लिए तैयार कर दिया है। बुर्यत और खलखा पहले ही से शत-प्रतिशत शिक्षित और नवीन आर्थिक ढाँचे का निर्माण कर अपने जीवन को समृद्ध कर चुके हैं, अन्तर्-मंगोलिया के मंगोल अब माओ चे-तुंग के नेतृत्व में उसी काम को तेजी से कर रहे हैं। मंगोल भाषा का विशाल प्राचीन साहित्य अधिकांशतः हमारे संस्कृत साहित्य का रूपान्तर है, जिसमें अश्वघोष, आर्यशूर, कालिदास जैसे महान् कवियों, बसुबन्धु, दिग्नाग, धर्मकीर्ति जैसे महान् दार्शनिकों की कृतियाँ मौजूद हैं। अलंकार और साहित्य के गम्भीर तत्त्वों का पंहला पाठ हमारे दण्डी ने उन्हें दिया। तूलिका चलाने में मंगोल जातियाँ दुनिया में बहुत निपुण हैं, लेकिन उस तूलिका को मंगोल हाथों में पकड़ाकर उनकी जातीय चित्रकला और ललितकला के निर्माण करने में हमारे लोगों ने बहुत काम किया। इसलिए यदि बैकाल के तट से ह्वांग-हो तक और खिंग गन पर्वतश्रृंखला से अल्ताई तक फैले मंगोल लोग भारतभूमि को बड़े प्रेम और श्रद्धा से याद करते हैं, तो कोई आश्चर्य नहीं।

(3) तिब्बती, भोट (छांग) –तिब्बती अभी हाल तक पुराणपंथिता का अन्तिम गढ़ समझा जाता रहा। दिव्य 'महात्माओं' और उनकी अद्भुत शक्तियों की सैकड़ों झूठी-झूठी कथाएँ तिब्बत के नाम पर दुनिया-भर में फैलाई जाती थीं, लेकिन शताब्दियों तक सोया तिब्बत (भोट) देश भी अब जाग उठा है। वह समय बड़ी जल्दी आ रहा है, जब कि वह हमारे सारे उत्तरी सीमान्त को नये आलोक से आलोकित कर देगा। आसाम से लद्दाख तक चीन गणराज्य की सीमा हमारी सीमा से मिलती है, और वहाँ पर हमारे तिब्बती पड़ोसी अब नव-निर्माण में लगे हुए हैं। साम्राज्यवादी अंग्रेज और अमेरिकन वहाँ के पिछड़ेपन से फायदा उठाकर चीन के साथ उसका झगड़ा खड़ा करने की हर तरह से कोशिश करते रहे। हिमालय के सत्रह हजार फीट ऊँचे डाँड़ों द्वारा वह भारी सैनिक सहायता नहीं पहुँचा सकते थे, इसलिए इस काम के लिए उन्होंने भारत को ढकेलना चाहा; लेकिन उसमें उन्हें सफलता नहीं हुई। तिब्बत के प्रतिगामियों ने सब जगह हाथ-पैर मार के देख लिया, कि उनके सबसे पिछड़े तथा निरंकुश शासन को अक्षुण्ण रखने के वास्ते कोई आकर सहायता देने के लिए तैयार नहीं है, तो

अन्त में जनतांत्रिक भावनाओं की विजय हुई और बिना एक बूँद भी खून गिराये तिब्बत विशाल चीनी जनगणराज्य की सहोदर जातियों में सम्मिलित हो गया। अब भी दुनिया के प्रतिगामी झूठे-झूठे प्रचार से बाज नहीं आते, यद्यपि वह 'खिसियानी बिल्ली खम्भा नोचे' जैसी ही बात है। कभी वह कहते हैं कि वहाँ धर्म और धार्मिक व्यक्तियों पर भारी अत्याचार हो रहा है। लेकिन तिब्बत के धर्म के ठेकेदार अंग्रेज और अमेरिकन साम्राज्यवादी नहीं, बल्कि तिब्बत के धार्मिक नेता दलाई लामा और पण्-छेन् लामा हैं, जो पूरी तौर से नवीन चीन के साथ सहयोग कर रहे हैं। कहा जाता है, चीनी गणराज्य की सीमा पास आ जाने पर फौलादी परदा अब आसाम से लद्दाख की सीमा तक हमारे सारे उत्तरी सीमांत पर पहुँच गया है। लेकिन, परदा किधर है, इसका अच्छा अनुभव मानसरोवर और कैलाश जानेवाले हमारे तीर्थ-यात्रियों को हो रहा है। हिमालय के तिब्बत जानेवाले हरेक दरवाजे (घाटा) पर हमारी पुलिस चौकियाँ बैठ गई हैं जिनका काम है कम्युनिज्म के विरोध के नाम पर हर तरह से यात्रियों को आगे जाने में बाधा डालना। परले पार चौकियाँ बहुत जगह अस्तित्व ही नहीं रखतीं, और जहाँ पर हैं भी, वह तीर्थयात्रियों की यात्रा में बाधा डालने की जगह सहायता करना अपना कर्तव्य समझती हैं। 1953 ई. की जुलाई में कैलाश-मानसरोवर के एक तीर्थयात्री को जहाँ हमारी चौकियों की आँख बचाकर मुश्किल से सीमा पार करना पड़ा, वहाँ उसे सतलज के किनारे अवस्थित थोलिंग मठ, नुबरा और ग्यानिमा जैसी बड़ी-बड़ी मंडियों में कहीं भी कम्युनिस्ट सिपाही और पुलिस के दर्शन नहीं हुए—मानसरोवर और कैलाश की सारी परिक्रमा में उन्हें एक भी कम्युनिस्ट पुलिस से भेंट करने का अवसर नहीं मिला, यद्यपि कम्युनिस्ट पुलिस या सैनिकों के दर्शन न होने का यह मतलब नहीं था कि वहाँ की शान्ति-व्यवस्था में कोई कमी थी। अब तो पुराने अधिकारियों की लूट-खसोट और लुटेरों की खून-खराबी अतीत की बात हो चुकी।

यदि उक्त सज्जन अपने गये हुए रास्ते से ही कैलाश-मानसरोवर का दर्शन करके लौट आना चाहते, तो शायद उन्हें एक भी कम्युनिस्ट सिपाही को देखे बिना ही लौट आना पड़ता। ज . वह अलमोड़ा की सीमा के पास तकलाकोट (पुरङ्) पहुँचे, तो वहाँ उन्हें कम्युनिस्ट सैनिकों को देखने का मौका मिला, और उनके व्यवहार से वह प्रभावित हुए बिना न रह सके। तिब्बत के साथ सदा व्यापार करनेवाले अलमोड़ा के व्यापारियों ने उन्हें जौ-मटर-गेहूँ आदि के लहलहाते हुए विशाल खेतों को दिखलाकर बतलाया कि पहले यहाँ भूमि उजाड़ पड़ी हुई थी, हरियाली का कहीं नाम नहीं था। कम्युनिस्ट सैनिकों ने इन खेतों को आबाद किया, खोदकर इनके लिए नहरें ही नहीं तैयार कीं, बल्कि पहले के आबाद खेतों के लिए भी पानी की सुविधा पैदा कर दी। थोड़े-से समय के भीतर ही कम्युनिस्ट वहाँ एक नये गाँव को बसा चुके हैं, सैकड़ों आदमी मकानों और खेतों के तैयार करने में लगे हुए हैं, जिनमें कम्युनिस्ट सैनिक स्वयं हाथ बँटा रहे हैं। कैलाश-मानसरोवर की यात्रा अब तक बेरोकटोक होती रही है, अब भी चीनी गणराज्य उसमें कोई बाधा नहीं उपस्थित कर रहा है, लेकिन हमारे शासक कम्युनिज्म के हौवे से इतने परेशान हैं कि वह तब तक किसी को सीमा पार होने देना नहीं चाहते, जब तक मालूम न हो जाय कि वह कम्युनिज्म का नाम नहीं जानता, या उसका विरोधी है। इससे मालूम होगा कि फौलादी परदा किस तरफ से खड़ा किया जा रहा है।

तिब्बत के साथ भारत का पिछली तेरह शताब्दियों का बहुत घनिष्ठ सांस्कृतिक सम्बन्ध है। तिब्बती लिपि हमारी लिपि से निकली है; तिब्बती साहित्य का विशाल भाग या तो हमारे साहित्य का सुन्दर अनुवाद है, या उससे अनुप्राणित होकर बना है। तिब्बती लोक-जीवन के हर एक अंग पर हमारे देश की छाप है। हमारी बहुत-सी सांस्कृतिक और ऐतिहासिक निधियों को हमारे देश से विलुप्त हो जाने के बाद तिब्बतियों ने अपने यहाँ सुरक्षित रक्खा है। यदि अजन्ता के बाद अपनी चित्रकला के विकास के नमूनों को देखना हो, तो उसे हम तिब्बत में देख सकते हैं। यदि गुप्तकाल की भव्य मूर्तिकला के मूल नमूनों और उसके बाद विकसित होती मूर्तिकला को देखना हो, तो हमें तिब्बत के विहारों की यात्रा करनी होगी। हमारी अनमोल साहित्यिक निधियों में से कितनी ही वहाँ तालपत्र पर संस्कृत में लिखी मुझे मिलीं, जिनके बारे में दुनिया के विद्वान समझते थे कि वह नालन्दा और विक्रमशिला के ध्वंस के साथ हमेशा के लिए मूल रूप में नष्ट हो चुकी हैं, और उन्हें हम तिब्बती और चीनी अनुवादों में ही पढ़ सकते हैं। आज भी तिब्बत के पुराने विहारों, स्तूपों तथा मूर्तियों

के भीतर तालपत्र पर लिखे कितने ही संस्कृत के अनमोल ग्रन्थों के प्राप्त होने की सम्भावना है। अभी इसी साल मानसरोवर की यात्रा से लौटे एक तरुण ने बतलाया कि वहाँ के दो मठों में मैंने स्याही से तालपत्र पर लिखी पुस्तकों के पन्ने देखे। भारतीय और चीनी-तिब्बती विद्वानों के सहयोग से हम ऐसी अनेक सांस्कृतिक निधियों का उद्धार कर सकते हैं। ल्हासा में अब हमारे प्रतिनिधि को कौंसिल जेनरलों के तौर पर स्वीकार कर लिया गया है, लेकिन ऐसे कौंसिल-जेनरलों से क्या आशा हो सकती है, जो कि अंग्रेजों के फौलादी ढाँचे से चुने जाते हैं और जिनके लिए अपने और अपने पड़ोसी के हजारों वर्ष के सांस्कृतिक सम्बन्धों से अपरिचित होना योग्यता का प्रमाणपत्र माना जाता है। यह निश्चित है कि हमारे दोनों महान् देशों की शताब्दियों से अवरुद्ध सांस्कृतिक सम्बन्ध-धारा को मुक्त-प्रवाह हो बहने का अवसर, अपनी संस्कृति से बिल्कुल अपरिचित आज के दिल्ली के देवता, नहीं देंगे, लेकिन अब जो नई शक्तियाँ उद्भूत हुई हैं, उनका सामना वह नहीं कर सकते।

(4) चीनी (हान्)—उत्तर-पश्चिम में मंगोलिया, और तुर्किस्तान, पश्चिम में तिब्बत छोड़ बाकी चीनी गणराज्य में चीन जाति का निवास है। चीन के साथ हमारा घनिष्ठ सांस्कृतिक सम्बन्ध निश्चित तौर से ईसा की प्रथम शताब्दी से तो जरूर है। यह भी निश्चित है कि ई. पू. की शताब्दियों में भी बर्मा की पूर्वोत्तरीय सीमा पर अवस्थित युन्नान् प्रदेश से भारत का घनिष्ठ सम्बन्ध था। कितना घनिष्ठ सम्बन्ध था, इसका परिचय इसी से मिलेगा कि युन्नान् प्रदेश का नाम उस समय गन्धार था, और वहाँ के कितने ही दूसरे नगरों के नाम थे आलवी, सुवर्णग्राम, उन्मार्गशिला, हरिपुंजय। इसी गन्धार के लोग पीछे स्याम, बर्मा और आसाम में आकर थाई, म्रम्म (शान्) और अहोम् के नाम से विख्यात हुए। आज भी युन्नान् के लोगों की वेशभूषा और कितने ही रीति-रिवाजों और सांस्कृतिक रूपों पर भारत की छाप स्पष्ट है। चीन की विशाल जाति के साथ भारत का मुक्त सांस्कृतिक आदान-प्रदान बराबर होता रहा। चीन ने हमें रेशम दिया, चाय दी, सैकड़ों प्रकार की कला-कौशल की चीजें सिखलाईं। भारत ने भी अपनी सुन्दर कला, गम्भीर दर्शन और अनमोल साहित्यिक कृतियों को देकर चीन के साथ अपना बन्धुत्व स्थापित किया। आज हजार से अधिक हमारे ऐसे संस्कृत के ग्रन्थ हैं जो मूल में लुप्त हो चुके हैं और उनका अनुवाद चीनी भाषा में अब भी मौजूद है, जिससे हम अपने साहित्य का उद्धार कर सकते हैं। एक समय था, जबकि सैकड़ों भारतीय और चीनी पंडितों ने मिलकर उन ग्रन्थों का हमारी भाषा से चीनी भाषा में अनुवाद किया। अब उन डेढ़ हजार ग्रन्थों में से सैकड़ों को फिर से भारतीयों के लिए सुलभ करने के वास्ते दोनों देशों के विद्वानों के सहयोग की आवश्यकता होगी।

(5) मंचू (मंग) —चीन की यह पाँचवीं जाति थी, जो यद्यपि वंश में मंगोलों के नजदीक थी, लेकिन चीन के आखिरी राजवंश को स्थापित करके वह बहुत कुछ चीनी बन गई।

4. चीनी संस्कृति

चीनी संस्कृति दुनिया की भव्य संस्कृतियों में है। इसका इतिहास ही लम्बा नहीं है, बल्कि इसने दुनिया को बहुत-से आविष्कार दिये हैं। 3000 वर्ष पहले चीनी लोगों ने दिग्दर्शन यन्त्र निकाला, 1700 वर्ष पहले इन्होंने ही पहले-पहल कागज बनाया, 1200 वर्ष पहले छापे का आविष्कार किया और 800 वर्ष पहले खुदे हुए अक्षरों की जगह अलग-अलग बने हुए टाइपों से छपाई भी शुरू की। इसी समय बारूद का आविष्कार किया। रेशम तो चीन की खास चीज थी, इसीलिए संस्कृत में उसे चीनां-शुक (चीनी वस्त्र) कहा जाने लगा। चश्मे का आविष्कार, खाने के चम्मच का आविष्कार, अण्डों के खाने का प्रयोग आदि बहुत-सी देनें चीनियों की हैं। चीन ने कनफूशी (कनफूजू), लाउ जू, मोजू जैसे गम्भीर दार्शनिक पैदा किये। लाउजू ने वेदान्त की तरह का एक रहस्यवादी दर्शन उसी समय आविष्कार किया, जिस समय कि भारत में गौतम बुद्ध थे। कनफूजू (कुङ् फूजू), कश्चित् भद्रपुरुष कुङ् (551-478 ई. पू.) को तो चीन का अफलातून समझना चाहिए। वह सामन्तवादी राजनीतिक दर्शन का बड़ा आचार्य था, जिसकी पुस्तकें साहित्य की निधि समझ करके सदा पढ़ी जाती रहेंगी, च्यांग काइ-शेक तक के सभी सामन्तों के लिए तो वह आदर्श ग्रन्थ है। कनफूजू ने राजभक्ति का पाठ उसी तरह खूब पढ़ाया, जैसे भारत के ब्राह्मण धर्मशास्त्रियों ने। मौजू भी इसी काल में पैदा हुआ था, जो अपने दोनों समसामयिक आचार्यों

से कहीं अधिक बढ़ा हुआ था। उसका उत्तराधिकार आदर्शवादी विचारक के रूप में है, किन्तु बहुत ऊँचे रूप में माओ चे-तुंग को मिला। वह जनता को भूलभुलैया में डालकर उसके हित की बातें चाहता था और कहता था :

"नावें जल में यात्रा करने के लिए उपयोगी हैं, और गाड़ियाँ स्थल में।··· जनता के खर्च पर वह बनाई जायँ, इसमें मुझे कोई आपत्ति नहीं है।··· लेकिन लोग तीन महान् विपत्तियों में पड़े हुए हैं : बिना अन्न के भूखे मरते हैं, बिना कपड़ों के जाड़ों में ठिठुरते हैं और मेहनत की मार के कारण विश्राम नहीं पाते। क्या तुम उन्हें अन्न-वस्त्र वीणा बजाकर, ढोल पीटकर या वंशी अलाप कर दे सकते हो ? अथवा जब बड़ा शक्तिवाला निर्बल को मारता है, बड़ा परिवार छोटे को आक्रांत करता है, जब बलवान निर्बल को लूटता है और बहुत-से मिलकर कुछ को उत्पीड़ित करते हैं, जब चालाक भोले-भाले श्रद्धालु को ठगता है और सामन्त अपनी रैयतों के साथ क्रूरता का बर्ताव करता है, जब कि चोर और लुटेरे भरे पड़े हैं और कानून द्वारा उनका नियंत्रण नहीं हो सकता, तो क्या तुम वंशी बजा या भाला का नृत्य करके उन्हें बचा सकते हो ? तुम ऐसा नहीं कर सकते।"

मौजू (575-525 ई. पू.) कनफूजू से पहले हुआ था। वह सामन्तवादी वर्ग स्वार्थ के खिलाफ था और उनके शोषणों को कला और अध्यात्मवाद के परदे से ढँकना नहीं चाहता था। वह मानव-समाज के दुःखों को हटाने के लिए कहता था, और युद्ध, लोभ, उत्पीड़न और दुराचार का विरोधी था। कनफूजू की तरह वह सामाजिक व्यवस्थाओं और रूढ़ियों को सनातन और पवित्र नहीं मानता था, बल्कि कहता था कि वे मनुष्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए हैं, और बाधा पहुँचाने पर उन्हें हटा देना चाहिए।

आनफेई नामक एक विधानवादी विचारक भी इसी काल में पैदा हुआ था, जो कानून के पालन करने का जबर्दस्त समर्थक था। आनफेई और कनफूजू सामन्तों के बड़े काम के थे, इसे कहने की आवश्यकता नहीं।

5. चीन का पतन

(1) युद्ध और संधियाँ—सहस्राब्दियों तक चीन एक महान राष्ट्र रहा, जिसका लोहा सारी दुनिया मानती रही। लेकिन 19वीं शताब्दी के आरम्भ में पहुँचकर उसका पतन शुरू हुआ। अन्तिम राजवंश खोखला हो गया था, और सामन्तों के मनमानी करने को कोई रोकनेवाला नहीं था। इस अवस्था से फायदा उठाने के लिए पश्चिमी शक्तियाँ तैयार थीं। उन्होंने चीन के विशाल कार्य को हर तरह से दबाना चाहा। अंग्रेजों के हाथ में हिन्दुस्तान आ गया था, जहाँ खूब अफीम की खेती होती, जिसे चीनियों को खिलाकर अंग्रेजी बनिये मालामाल हो रहे थे। चीनियों के लिए अफीमची नाम मशहूर हो गया था। अपनी प्रजा का इतना पतन देखकर बिगड़े मंचू शासक भी चुप नहीं रह सकते थे। अफीम के बदले रेशम और दूसरे रूप में अंग्रेज वहाँ से अपार सम्पत्ति लूट रहे थे। केवल कान्तन के बन्दरगाह में तीन करोड़ तेल (चाँदी का सिक्का) प्रतिवर्ष अफीम खरीदने में उड़ जाता था। 1838 ई. में मंचू-सम्राट से उसके एक मंत्री ने प्रार्थना की कि अफीम का प्रचार बन्द करना चाहिए, नहीं तो हमारी प्रजा नष्ट हो जायगी। अफीम पर रोकथाम लगाई गई। लेकिन, अंग्रेज बनिये जबर्दस्ती चीनियों को अफीम खिलाना चाहते थे। उन्होंने 1844 ई. की गर्मियों में अफ़ीम के व्यापार को मनवाने के लिए युद्ध छेड़ दिया। वाष्पचालित लोहे के जहाजों और शक्तिशाली तोपों के सामने पुरानपन्थी चीनी सामन्त कैसे ठहर सकते थे ? अन्त में चीन को परास्त हो, हांगकांग को सदा के लिए अंग्रेजों के हाथ में दे, अफीम के व्यापार के लिए रास्ता खोल देना पड़ा। यह सन्धि नानकिंग की सन्धि के नाम से मशहूर है, जिसके द्वारा अमोय, फूचाउ, निंगको, शँघाई और काँतन के पाँच बन्दरगाहों में अंग्रेज मुक्त व्यापार करने लगे। लेकिन चीन ने प्रथम हार से हथियार रख नहीं दिया। जैसे :

सन्	युद्ध	प्रतिपक्षी	सन्धि
1840-42	प्रथम अफीम-युद्ध	अंग्रेज	नानकिंग

1857	द्वितीय अफीम-युद्ध	अंग्रेज-फ्रेंच-अमेरिका	तियेनचिंग
1884		फ्रांस	
1894-95		जापान	सिमोनोसकी
1900	बाकसर	अंग्रेज, फ्रेंच, रूसी, जर्मन, अमेरिकन इतालियन, आस्ट्रियन, जापानी	हेया (शान्ति)

इन युद्धों और युद्ध के डर के मारे चीन को विदेशी शक्तियों के साथ बहुत ही दबकर अनेक सन्धियाँ करनी पड़ीं, जिनके कारण चीन पश्चिमी लुटेरों की कृपा पर ही जीता रहा। ये मनमानी सन्धियाँ 1842 ई. से शुरू हुईं; तो 1922 ई. तक वह होती ही रहीं। उनके बोझ से दबी चीनी जनता को उबारने का काम माओ चे-तुंग और कम्युनिस्ट पार्टी ने किया। इन संधियों की सूची निम्न प्रकार है :

सन्	नाम	प्रतिपक्षी	परिणाम
1840-42	नानकिंग	अंग्रेज	हांगकांग छीनना
1843	हूमन	अंग्रेज	पाँच बन्दर खुले
1858	तियेनचिन्	अंग्रेज, फ्रेंच, अमेरिकन, रूसी	
1860		रूसी	
1861	तियेनचिन्	जर्मन	
1862	तियेनचिन्	पोर्तगीज	
1863	तियेनचिन्	डेन, डच	
1864	तियेनचिन्	स्पेन	
1865	पेकिंग	बेल्जियन	
1866	पेकिंग	इताली	
1869	पेकिंग	आस्ट्रिया	
1874	तियेनचिन्	पेरू	
1876	येनूतइ	अंग्रेज	
1880	येनूतइ	अमेरिका	
1895	सिमोनोसकी	जापान	
1901	हेयो (शान्ति)	आठ राज्य	
1902	माखाई	अंग्रेज	
1903		अमेरिका	
1905	मंचूरिया	जापान	
1908		स्वीडन	
1921	21 माँगें	जापान	
1922	नवशक्ति-सन्धि	नवराज्य	'खुला दरवाजा'

(2) सन्धियों के फल–चीन को हर लड़ाई में हारकर और हर धमकी से डरकर विदेशी शक्तियों के सामने घुटने टेक तरह-तरह की रियायतें देनी पड़ीं। ये रियायतें चीन की स्वतंत्रता को खतम कर देती थीं। यह इनमें से कुछ का विवरण है–

(क) बहिर्देशीय अधिकार–इसके अनुसार रियायत पानेवाले विदेशी राज्यों के नागरिकों को अधिकार था, (1) कि वादी-प्रतिवादी दोनों के विदेशी होने पर उनके मुकदमे का फैसला चीनी अधिकारी नहीं कर सकते थे,

(2) यदि दोनों में से एक चीनी हो, तो विदेशी और चीनी अफसर दोनों मिलकर उसके मुकदमे को देखेंगे, (3) यदि फौजदारी मुकदमे में चीनी और विदेशी दोनों हों, तो भी विदेशी प्रतिवादी की सुनवाई उसके अपने देश के अधिकारी द्वारा तथा अपने कानून के अनुसार होगी।

मुकदमे की सुनवाई में नानकिंग की सन्धि के बाद की होनेवाली सन्धियों में 'हुइ-थुंग-शन्-सिन्' वाक्य था, जिसका अर्थ दीवानी मुकदमा ही था, किन्तु अनुवाद की गलती से उसमें फौजदारी मुकदमा भी शामिल कर लिया गया। इस अधिकार ने चीन के शासन-अधिकार पर अनधिकार हस्तक्षेप किया, जिसके फलस्वरूप चीन की प्रभुसत्ता खतम हो गई। एक तरफ तो विदेशी नागरिक इसके कारण चीन के कानून के अधिकार में नहीं आते थे, और दूसरी तरफ वे चीन के न्याय-प्रबन्ध में हस्तक्षेप कर सकते थे। विदेशी नागरिक चीन के अदालत के अधिकार क्षेत्र से बाहर थे, पर विदेशियों को चीनी नागरिकों के मुकदमे सुनने का अधिकार था।

(ख) **रियायती क्षेत्र**—विभिन्न सन्धियों से खोले गये बन्दरगाहों पर विदेशियों के लिए रियायती क्षेत्र दिये गये। पहले केवल शांघाई के 'अन्तर्राष्ट्रीय निवास-क्षेत्र' की सीमा सन् 1845 में और फ्रांसीसी रियायती क्षेत्र की सन् 1849 में निर्धारित हुई थी। सन् 1861 में तियेनचिंग के ब्रिटिश रियायती क्षेत्र और फ्रांसीसी रियायती क्षेत्र की सीमा निर्धारित हुई, इसी साल हान्काउ, चिउचियांग, चैन् चियांग और श्यामिन् (अमोय) के ब्रिटिश रियायती क्षेत्रों की सीमा तथा कान्तन (क्वांग चाउ) में अवस्थित शामियन के ब्रिटिश रियायती क्षेत्र और फ्रांसीसी रियायती क्षेत्र की सीमा निर्धारित हुई। इस अधिकार के अनुसार 1895 ई. में हान्काउ जर्मन रियायती क्षेत्र और तियेनचिन जर्मन रियायती क्षेत्र, 1896 ई. में हान्काउ रूसी रियायती क्षेत्र और फ्रांसीसी रियायती क्षेत्र एवं हांग चाउ जापानी रियायती क्षेत्र, 1897 ई. में सूचाउ जापानी रियायती-क्षेत्र, 1898 ई. में तियेनचिन् जापानी रियायती क्षेत्र, हान्काउ रियायती क्षेत्र, शा-श जापानी रियायती क्षेत्र और 1899 ई. में शिया-मन् तथा फूचाउ के जापानी रियायती क्षेत्र स्थापित हुए।

बहिर्देशीय अधिकार भूभाग पर नहीं, बल्कि केवल व्यक्तियों पर लागू होता था, किन्तु रियायती क्षेत्र का अधिकार हर रियायती क्षेत्र के सारे भूभाग पर लागू हो गया, जिसका अर्थ था चीनी भूभाग के भीतर अनेक विदेशी राज्य स्थापित हो गये।

(ग) **विदेशी चुंगी जहाज-अधिकार**—इसके अनुसार विदेशी जंगी जहाज चीन के समुद्र के किनारे-किनारे तथा देश की भीतरी नदियों में चल सकते और लंगर डाल सकते थे। इसके कारण चीन के पास नाममात्र की सामुद्रिक रक्षा भी नहीं रह गई, और विदेशियों के जंगी जहाज चीन के प्रायः सभी प्रधान नगरों में इच्छा होने पर पहुँच सकते थे।

(घ) **चुंगी-नियंत्रण**—तियेनचिन् की सन्धि के पूर्व से ही शांघाई के चुंगी (आयात-कर) के प्रबन्ध में विदेशी भाग लेते थे। 1856 ई. की 'व्यापारिक नियम-सम्बन्धी चीन ब्रिटिश करारनामा' में एक शर्त यह भी थी, कि चीन के आयात-कर के प्रबन्ध में सहायता करने के लिए एक अंग्रेज अधिकारी की नियुक्ति होगी। तब से चीन के आयात-कर का इन्सपेक्टर जेनरल बराबर अंग्रेज होने लगा, और उसका अधिकार भी बढ़ता ही गया। विदेशियों के साथ चीन की जो सन्धियाँ हुई थीं, उनके अनुसार कर की दर निश्चित कर दी गई थी। अब चीन के आयात-कर पर विदेशियों का प्रत्यक्ष नियंत्रण हो जाने से राज्य की आय पर भी उनका नियंत्रण हो गया।

(ङ) **एकतरफा व्यापार-रियायत**—सन्धियों के अनुसार व्यापार-कर मूल्यानुसार 5 प्रतिशत निर्धारित किया गया। देश के भीतर लगनेवाले कर की दर नियमित जकात (आयात-कर) से आधी निर्धारित हुई, अर्थात् मूल्य के अनुसार ढाई सैकड़ा, जहाजी महसूल घटाकर केवल 0.4 तेल प्रतिटन कर दिया गया, और हर दसवें वर्ष चुंगी के करारनामों में संशोधन होने लगा। इस रियायत के अनुसार विदेशी माल किसी दूसरे प्रकार का कर दिये बिना चीन के भीतर एक स्थान से दूसरे स्थान में बिना रोक-टोक भेजा जाने लगा, और उसे संशोधनों द्वारा अधिकाधिक संरक्षण दिया जाने लगा।

(च) व्यापारिक जहाज चालन–इसके सम्बन्ध के विशेष अधिकार प्राप्त कर लेने पर अब चीनी समुद्रतट और देश की नदियों के भीतर अपने व्यापार के लिए विदेशी जहाजों को चलाने की छूट हो गई। फलस्वरूप केवल विदेशी माल से चीन के सभी भागों के बाजार ही नहीं भर गये, बल्कि चीन का जहाजी धन्धा भी विदेशियों के हाथ में चला गया। विदेशी माल नहीं, बल्कि चीनी माल भी अब विदेशी जहाजों द्वारा ही हर जगह जाता-आता था।

(छ) प्रभाव क्षेत्र-अधिकार–इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, जारशाही रूस और जापान ने इस अधिकार द्वारा चीन के अपने प्रभाव-क्षेत्रों में रेल बनाने, खान खोदने आदि के अधिकार प्राप्त किये, जिसके द्वारा विदेशियों ने चीन को विभाजित करने की ओर कदम बढ़ाया। रेल, खान, उद्योग-धन्धे और वाणिज्य-व्यापार आदि सारे आर्थिक जीवन पर विदेशियों का अधिकार हो गया।

चीन में विदेशी सैनिक रखने, चीन के डाक-विभाग में विदेशी कर्मचारी की नियुक्ति और विदेशी डाकखानों की स्थापना, कल-कारखाने स्थापित करने के अधिकार आदि द्वारा विदेशियों ने चीन को पंगु कर दिया था। अब चीन सैनिक, आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से विदेशी शक्तियों के हाथ की कठपुतली-भर था। अगर विदेशी चीन पर सीधे शासन नहीं कर रहे थे, तो उसका कारण यही था कि लुटेरों में लूट के माल को बाँटने के लिए भारी मतभेद था। यह अवस्था थी, जब कि चीन के उद्धारक माओ चे-तुंग ने जन्म लिया।

2

बाल्य (1893-1901 ई.)

ह्वांग-हो और यांग-ची-क्यांग चीन की दोनों महान नदियों के बीच में होनान प्रदेश में श्यांग-तान् जिले के शाउ शांग-चुंग गाँव को माओ चे-तुंग को जन्म देने का सौभाग्य प्राप्त है। शाउ-शांग गाँव पहाड़ के किनारे-किनारे प्रायः तीन मील (10 ली) लम्बा चला गया है। चारों तरफ पहाड़ों की सुषमा और जलाशय की नयनाभिराम छवि देखने में आती है। गाँव में बहुत अधिक घर नहीं थे, और जो थे भी, वह एक-दूसरे से काफी दूर-दूर बसे हुए थे। किसानों का गाँव था, जिनकी जीविका का अवलम्ब खेती थी। इसी गाँव में माओ-परिवार रहा करता था। गाँव दो भागों में विभक्त था–'ऊपरी दक्षिणतट' और 'निचला दक्षिणतट'। निचले दक्षिणतट से श्यांग-तान कस्बे को सड़क जाती थी, जो कि जिले (शियान्) का सदरमुकाम था। ऊपरी दक्षिणतट के पास एक पत्थर का पुल था, जिसके किनारे गाँव का छोटा-सा बाजार अर्थात् थोड़ी-सी दुकानें थीं, जिनमें मांस, नमक, तथा किसानों की आवश्यकता की दूसरी चीजें बिका करती थीं। पुल के नीचे एक छोटी-सी नदी बहती थी। वह बहुत सीधी-सादी नदी थी, यह इसी से मालूम होगा कि उसकी धारा के पास ही समतल भूमि में खपड़ैल की छतोंवाला एक घर बना था, जिसके दो खण्डों में से एक में माओ-परिवार रहता था और दूसरे में चाओ। दोनों परिवार एक कुल के न होते हुए भी एक ही घर के आधे-आधे में रहा करते थे, जिसकी सीमा रहने के कमरे के बीच से जाती थी।

1. किसान-पुत्र का जन्म

शाओ-शान् के इसी घर में 1893 ई. में चीनी ग्यारहवें महीने की 19वीं तारीख को एक बालक पैदा हुआ, जिसका नाम चे-तुंग रक्खा गया। परिवार की उपाधि माओ से मिलकर चीनी परम्परा के अनुसार जाति उपाधि को पहले रख बालक को माओ चे-तुंग कहा जाने लगा।

2. माता-पिता

चे-तुंग के पिता का नाम माओ जेन्-शेंग (शुन्-शेन) था। वह बहुत गरीब, लेकिन शरीर से लम्बे और बहुत हट्टे-कट्टे थे। चीनी लोगों को मूँछ-दाढ़ी बहुत कम होती है, शायद उसी के कारण वहाँ दाढ़ी का मूल्य अधिक है, और कम-से-कम प्रौढ़ा या वृद्धावस्था में अपनी लम्बी बकर-दाढ़ी को बढ़ाकर रखना संभ्रान्त पुरुष का चिह्न माना जाता है। माओ शुन-शेन ने भी पिछली अवस्था में दाढ़ी पाल ली थी। जवानी में उन्हें गरीबी से मुकाबला करना था। भारी सूद पर कर्जा ले रक्खा था, जिसमें उनका खेत बन्धक लग गया था। कर्जा चुकाकर खेत वापस करके फिर से किसानी जीवन शुरू करने के लिए उन्हें कई साल सिपाही की नौकरी करनी पड़ी थी। पैसा कमाकर लौटने के बाद शुन्-शेन ने बन्धक रक्खी अपनी पन्द्रह मू* (7-1/2 एकड़) जमीन लौटा ली और उसमें खेती करना शुरू किया। उस समय माओ-परिवार में दादा भी मौजूद थे, जिनके अतिरिक्त पिता, माता, दस वर्ष के चे-तुंग और छोटा भाई चे-मन् पाँच व्यक्ति थे। माओ चे-तुंग ने आत्मकथा में परिवार का लेखा-जोखा देते हुए लिखा है : "हर साल इस जमीन से 60 तान+ (100 मन) अन्न पैदा होता, जिसमें से 35 तान घर के पाँचों व्यक्तियों पर प्रति व्यक्ति 7 तान के हिसाब से खर्च होता, बाकी बचे 25 तान (41-2/3 मन) से पैसा जमा करके पिता ने 7 मू (3-1/2 एकड़) और खरीद ली। अब माओ-परिवार के पास 22 मू (11 एकड़) जमीन थी, अर्थात् परिवार मध्यमवित्त किसान था।

जब परिवार में 7 मू (3-1/2 एकड़) जमीन और आ गई, उस समय तक दादा संसार छोड़ गये थे, लेकिन उनकी जगह एक तीसरा भाई चे-तान् पैदा हो गया, इस प्रकार 7 मू जमीन के हाथ में आने के समय एक खानेवाला दूसरा तैयार हो गया। शुन्-शेन बड़े चतुर और व्यवहार-दक्ष पुरुष थे। घर के खाने से जो अन्न बचता, उससे पूँजी जमा करते। कुछ ही दिनों बाद उन्होंने छोटे-मोटे बनिये का रूप धारण कर लिया, और किसानों से अनाज तथा सूअर-मांस खरीदकर शहरों में ले जाकर बेचने लगे।

माओ की माता तंग-चिया-तो गाँव (जिला शियांग-शियांग) के वेन् परिवार की लड़की थीं। उनके गुणों के बारे में यही कहना काफी है कि माओ चे-तुंग अपनी माँ के साथ बहुत प्रेम रखते थे। उन्होंने लिखा है : "मेरी माँ प्रेमल, उदार हृदयवाली महिला थीं। अपने पास से दूसरों को देने के लिए वह सदा तैयार रहती थीं। अकाल के वक्त लोग चावल माँगने आते तो वह उन्हें कुछ दिये बिना नहीं रहतीं।" पिता को दान-धर्म पसन्द नहीं था, लेकिन माँ इससे बिलकुल उलटी थीं। बुद्ध-धर्म में उनकी बड़ी भक्ति थी। किसान स्त्री की तरह खेतों और घर में काम करना, रसोई पकाना, ईंधन जमा करना, चर्खा चलाना, कपड़े धोना, मरम्मत करना आदि में लगे रहते भी वह बुद्ध की पूजा के लिए समय निकाल लेतीं। चे-तुंग का अपनी माँ के साथ असाधारण प्रेम था। जब तक वह जीवित रहीं, तब तक वह अपनी माँ के परम आज्ञाकारी पुत्र रहे। इसे कहने की आवश्यकता नहीं कि भावी माओ चू-शी (माओ-अध्यक्ष) के चरित्र-निर्माण पर माता का बहुत गहरा प्रभाव पड़ा। आज भी विश्व का यह महान् नेता अपनी माता का नाम बड़ी श्रद्धा और प्रेम से लेता है। माँ के संसर्ग में आकर चे-तुंग भी बुद्ध की पूजा किया करते, और पढ़-लिख जाने के बाद बौद्ध ग्रन्थों का बड़ी श्रद्धा और सम्मान के साथ पाठ करते, लेकिन पिता शुन् शेन के विचार धर्म-विरोधी थे। घर एक तरह से विचार और स्वभाव में दो पक्ष में बँटा हुआ था, जिनमें एक पक्ष पिता का था, दूसरा माता का। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि चे-तुंग अपनी माँ के साथ था।

3. बाल्य से मेहनत

चे-तुंग अभी मुश्किल से सात वर्ष का हो पाया था कि उसे खेतों में काम करने के लिए जाना पड़ा। पिता का अधिक समय अपने अनाज और मांस के व्यापार में लगता। वह इन चीजों को गाँव में खरीदकर

---

*1 मू = 1/2 एकड़

+1 तान = 66-2/3 सेर

श्यांग-तान्-नींग-श्यान् और चांग शाके नगरों में ले जाकर बेचा करते। इस प्रकार खेत का सारा काम चे-तुंग और उसकी मां एक नौकर के सहारे किया करते। धान रोपते, बोने या खेत काटने के समय कुछ और भी मजूर रख लिये जाते। जाड़े के दिनों में चावल कूटने के लिए भी मजूर रखे जाते, और घर में सात आदमी खानेवाले हो जाते। पिता माओ खर्च करने में बहुत किफायत से काम लेते थे। घर में खाली सागभाजी और चावल खाने के लिए पकता। चीनी प्रथा के अनुसार चान्द्रमास की पहली और पंद्रहवीं तिथि को विशेष भोजन बनाया जाता, जिसमें अंडा, मछली और कभी-कभी मांस भी शामिल कर लिया जाता। यद्यपि यह तो नहीं कहा जा सकता कि चे-तुंग ने कभी भूख और भीषण गरीबी का सामना किया हो, लेकिन पिता पैसे जोड़ने के लिए इतने उतारू थे, कि परिवार को बिलकुल मामूली भोजन पर गुजारा करना पड़ता। और चे-तुंग ने बचपन से ही गरीबों के जीवन को बहुत नजदीक से देखा। उससे द्रवित होकर उसकी माँ अपने पति के पीठ-पीछे दान-धर्म करके गरीबों को सहायता कर आत्मसंतोष प्राप्त करतीं।

4. माओ की बचपन-सम्बन्धी कथाएँ

चे-तुंग के बाल्य-जीवन की कितनी ही कथाएँ उसी तरह प्रसिद्ध हैं, जिस तरह किसी भी महापुरुष की होती हैं :

1. एक साल फसल के समय एकाएक वर्षा आ गई। किसान अपने कटे हुए धान को खलिहान में सुखा रहे थे। चे-तुंग अभी बालक ही था। वह जाकर दूसरे किसान के धान को बटोरने में सहायता करने लगा। बाप ने बुरा-भला कहा, इस पर लड़के ने उत्तर दिया : "उनका परिवार बहुत गरीब है, ऊपर से उन्हें मालगुजारी भी देनी है। थोड़ा भी नुकसान उनके लिए बहुत असह्य होगा। जहाँ तक हमारे नाज का सवाल है, यदि नुकसान भी हो जाय, तो कोई बात नहीं।"

2. जाड़े के दिनों में एक बार जब चे-तुंग स्कूल जा रहा था, तो उसे पतला कपड़ा पहने काँपता हुआ एक तरुण बर्फ में जाता मिला। चे-तुंग ने उससे पूछा, और फिर अपने रुईदार कुरते को निकालकर उसे दे दिया। घर जाने पर उसे पिता की झिड़कियाँ सुननी पड़ीं।

3. चीनी नव-वर्ष के त्योहार के एक दिन पहले पिता ने सूअर के मांस के लिए चे-तुंग को एक घर में भेजा, जिसने माओ-परिवार के हाथ सूअर बेचना तै किया था। चे-तुंग की जेब में उगाहे पैसे पड़े थे। रास्ते में उसे फटे-चीथड़ों में लिपटे कुछ बहुत गरीब आदमी मिले। चे-तुंग का दिल पिघल गया, और उसने जो पैसा उगाहा था, उसे उन लोगों में बाँट दिया।

4. एक दिन पिता ने चे-तुंग और उसके भाई को खेत में मटर तोड़कर लाने के लिए भेजा। भाई ने खेत की ऐसी जगह पसन्द की, जहाँ मटर दूर-दूर खड़ी थी, और जल्दी फलियाँ चुनकर खतम कर सकता था। चे-तुंग ने खेत की ऐसी जगह चुनी, जहाँ कि मटर बहुत घनी उगी हुई थी। वहाँ वह फलियाँ तोड़ने लगा और थोड़ी ही जगह में देर तक फँसा रहा। बाप ने आकर देखा, कि छोटे भाई ने बहुत-सी जगह की मटर तोड़ ली है। वह उस पर बहुत प्रसन्न हुआ, और बड़े लड़के को एक ही जगह बैठे रहने के लिए बहुत बुरा-भला कहा। इस पर चे-तुंग ने अपनी टोकरी दिखला दी। उसमें छोटे भाई से बहुत अधिक फलियाँ मौजूद थीं। बाप अब क्या कहता ?

5. परिवार के पड़ोसी–जिसका भी कुलनाम माओ था–ने एक बार चे-तुंग के पिता के हाथ एक सूअर बेचा। दाम भी दे दिया गया, लेकिन बड़े माओ ने उसी समय सूअर को अपने यहाँ नहीं मँगा लिया। दो-तीन हफ्ते बीत गये, इसी बीच सूअर के मास का दाम बढ़ गया। बाप ने जल्दी चे-तुंग को सूअर लाने के लिए भेजा। पड़ोसी ने कहा : "सूअर के मांस का दाम बढ़ गया है न, और मैंने इतने दिनों तक इसे खिलाया-पिलाया है, इसलिए मैं उसी दाम पर सूअर नहीं बेचूँगा।" चे-तुंग ने उसकी दलील को मंजूर किया : "उसने दस दिन से अधिक सूअर को खिलाया है, भला वह कैसे उसी दाम पर बेच सकता है ?" चे-तुंग खाली हाथ घर लौट आया, और उसने पिता को भी समझाने की कोशिश की।

3
शिक्षा और मेहनतकशी (1901-11)

1. शिक्षा

आठ वर्ष की उम्र में पिता ने चे-तुंग को गाँव के गुरुजी के पास पढ़ने के लिए बैठा दिया। गुरुजी ने अपने घर पर ही स्कूल खोल रक्खा था। कुछ फीस लेकर वह लड़कों को पढ़ाया करते थे। यह 20वीं शताब्दी का आरम्भ–1901 ई. का साल था। तब से 13 वर्ष की उम्र (1906 ई.) तक चे-तुंग इसी पाठशाला में पढ़ता रहा। पढ़ने के अतिरिक्त उसे खेतों में भी काम करने के लिए शाम-सबेरे जाना पड़ता। चीनी भाषा में हमारी वर्णमाला की तरह कुछ दर्जन अक्षर नहीं हैं, बल्कि प्रत्येक शब्द के लिए अलग संकेत या अक्षर होने से वर्ण-परिचय के लिए कई हजार अक्षरों को बड़ी मेहनत से सीखना और लिखना पड़ता है। चे-तुंग भी ब्रुश और पत्थर पर रगड़ी काली स्याही से कागज पर इन अक्षरों को लिखता और सीखता रहा। पुरानी परिपाटी के अनुसार पुस्तकों का घोखना शिक्षा का मुख्य तरीका था। गुरुजी इसी परिपाटी से अपने छात्रों को पढ़ाया करते। चे-तुंग बहुत मेधावी छात्र था, उसने कनफूजू के चारों मूल ग्रन्थों को कंठस्थ कर लिया। ये ग्रन्थ अपनी भाषा की दृष्टि से भी भारी साहित्यिक मूल्य रखते थे, और उनमें बहुत तरह की नैतिक शिक्षाएँ भी थीं। लेकिन पढ़ाते वक्त उनके भावों को समझाने की जरूरत नहीं समझी जाती थी। जिस तरह हमारे यहाँ संस्कृत के विद्यार्थियों के लिए बिना समझे व्याकरण के सूत्रों को रटा दिया जाता है, वही बात चीन में भी थी। चे-तुंग को यह ढंग पसन्द नहीं था–बिना समझे तोतारटन ! किन्तु उसने रट जरूर लिया था। जब उसे पर्याप्त अक्षरों का परिचय हो गया, तो उसका मन समझने लायक दूसरी पुस्तकों के पढ़ने में खूब लगने लगा। कनफूजू ढाई हजार वर्ष पहले पैदा हुए थे, उनकी भाषा-शैली बहुत पुरानी थी, किन्तु अब नई कहानियाँ और उपन्यास निकलने लगे थे। चे-तुंग ने यूये-फे (ईमानदार खरगोश), थांग-वंश की कहानियाँ 'पश्चिम का तीर्थयात्री' जैसी पुस्तकें पढ़ डालीं, फिर 'जलतट' और 'तीन राज्य' जैसी पुस्तकें भी पढ़ीं। आगे उसे पुरानी पुस्तकों में भी रस आने लगा। स्मृति तेज होने से चे-तुंग को उनके बहुत-से वाक्य याद हो जाते थे। पुस्तक समाप्त करने के बाद कहानियों के व्यक्तियों और कथानकों को वह सुना सकता था। कहानी कहने का ढंग भी उसे बहुत अच्छा आता था। प्राचीन इतिहास के वीर पुरुषों की कथाएँ चे-तुंग को बहुत प्रिय थीं। 'यो फेइ चुवान' (चिन-चुंग-चुवान), 'शुई-हू-चुवान', 'फान-तान', 'सान-कुओ' (तीन राज्य), 'शी-यू-ची' पुस्तकों के पढ़ने का उल्लेख माओ चे-तुंग ने अपने आत्मचरित में भी किया है। गुरुजी जिन पुस्तकों का पढ़ना व्यर्थ या हानिकारक समझते थे, उन्हें चे-तुंग जरूर पढ़ता था, और आगे उसने स्वीकार किया कि "ऐसी पुस्तकों की छाप मेरे ऊपर बहुत पड़ी।"

पुराने अध्यापकों की तरह इस गाँव के गुरुजी भी विद्या को दिमाग में घुसेड़ने के लिए छड़ी की सहायता अत्यावश्यक समझते थे। लड़कों को कभी छड़ी से हाथ पर मारते, कभी सिर पर, कभी पैरों के तले में और कभी जाँघ पर। कान पकड़कर बैठाना और कितने ही दूसरे प्रकार की भी ताड़ना देते थे। कान पकड़कर, सिर झुकाकर बैठने की सजा तब तक चलती थी, जब तक कि एक धूपबत्ती जल न जाती। गुरुजी चे-तुंग पर भी दण्ड के प्रयोग से बाज नहीं आ सकते थे, लेकिन उसे यह पसन्द नहीं था। उसने विरोध का कोई फायदा न देखकर यही निश्चय किया कि गाँव छोड़कर कहीं दूसरी जगह भाग चलें। एक दिन वह भाग चला, तीन दिन तक चलता रहा, किन्तु आसपास में चक्कर काटता तीन मील (10 ली) के घेरे में ही रहा, यद्यपि वह समझ रहा था कि मैं शहर जा रहा हूँ। घरवाले परेशान थे। आखिर में उन्होंने लड़के को ढूँढ़ पाया। इस समय 1903 ई. थी और चे-तुंग की उम्र दस साल की थी। पिता का गुस्सा ठंडा हो चुका था। वह समझते थे, यदि फिर कुछ कहा, तो बेटा तीन मील के भीतर ही चक्कर काटता नहीं रहेगा। मास्टर के ऊपर भी इस सत्याग्रह का प्रभाव पड़ा। चे-तुंग की पहली हड़ताल सफल रही।

चे-तुंग जब कुछ लिखना-पढ़ना सीख गया, तो पिता ने उसे हिसाब लिखने-पढ़ने तथा हिसाब-यन्त्र को सिखला दिया। अब बहीखाते का काम उसे ही करने को मिल गया और इस प्रकार रात के लिए भी काम बढ़ गया। बाप इस सिद्धांत के माननेवाले थे कि लड़के को कभी बेकार नहीं छोड़ना चाहिए, इसलिए वह बाकी समय चे-तुंग को खेत में काम करने के लिए भेज देते।

2. गरीबों से सहानुभूति

13 वर्ष की उम्र (1906 ई.) तक चे-तुंग की गाँव की पढ़ाई खतम हो गई। बाप ने अब लड़के को काम में लगाना ज्यादा लाभदायक समझा। इसी समय उन्होंने अपने चौदह वर्ष के ज्येष्ठ पुत्र का ब्याह एक बीस वर्ष की कन्या से कर दिया, लेकिन यह नाममात्र का ही ब्याह था, जैसा कि माओ चे-तुंग ने स्वयं लिखा है : "किन्तु मैं उसके साथ कभी नहीं रहा। मैं उसे अपनी पत्नी नहीं समझता था।" यद्यपि पढ़ाई अब बन्द हो गई थी, लेकिन चे-तुंग का पढ़ने का शौक बढ़ता ही जा रहा था। वह पुस्तकों को बराबर पढ़ता रहता। पुरानी पुस्तकों के अतिरिक्त नये तरह की पुस्तकें उसके लिए अधिक आकर्षण रखती थीं, विशेषकर ऐसी पुस्तकों को, जिनमें शासकों और उत्पीड़कों के विद्रोह और बगावती कथाएँ रहतीं। एक दिन स्वयं चे-तुंग के दिमाग में खयाल उठा : "इन उपन्यासों और कथानकों में केवल राजाओं, मंत्रियों, सेनापतियों, ऋषि-मुनियों और योद्धाओं की ही गाथाएँ क्यों मिलती हैं, क्यों नहीं उनमें हमारे जैसे किसानों की कथाएँ आतीं ?" अन्त में वह अपने ही आप इस निष्कर्ष पर पहुँचा : "पुराने कथानकों के अधिकतर नायक शासक, शोषक और उत्पीड़क इसलिए होते हैं, कि वह बहुत भारी जमीन के मालिक होते हैं, जिसमें वह मजूरों से खेती करवाते हैं। लेकिन जो सूर्योदय से सूर्यास्त तक ही नहीं, बल्कि रात तक मर-पचकर काम करते हैं, इतने कष्ट सहते हैं, वह क्यों नहीं इन कथानकों के नायक बनते ?" अभी इसका जवाब मिलने के लिए काफी देर थी। तो भी माओ चे-तुंग ने ताइपिंग की क्रान्ति की बातें सुन रक्खी थीं। ताइपिंग-विद्रोह वस्तुतः एक असाधारण—वस्तुतः किसानों की क्रान्ति थी।

3. ताइपिंग का पँवाड़ा

हम देख चुके हैं, किस तरह पश्चिमी शक्तियों ने चीन में लूट-खसोट मचानी शुरू की और किस तरह विशाल चीन देश बेबस होने के लिए मजबूर हुआ। उस समय और पीछे भी एक ओर विदेशी बनिये चीन की जनता के ऊपर गिद्ध की तरह लगे हुए थे, और दूसरी तरफ चीन के राजा और सामन्त जनता का खून चूस रहे थे। इसी समय 1851-65 ई. में चीनी जनता उठ खड़ी हुई—1951 में ताइपिंग शताब्दी को बड़े उत्साह के साथ स्वतन्त्र चीन ने मनाया। क्यांग सू प्रदेश में सूचाउ पुराना नगर है, जहाँ पर यह नाटक आरम्भ हुआ था। सूचाउ के लोग अपनी वंश-परम्परा से ताइपिंग वीरों की कहानियाँ याद रखते आये हैं। सूचाउ के वृद्ध प्रपितामह वू-हू बड़े गर्व से कहते हैं : "हमारे नगर के इतिहास में ताइपिंग क्रान्तिकारी सेना के हितकारी शासन से बढ़कर कोई दूसरा नहीं।" यह सेना जून 1860 से दिसम्बर 1863 तक इस नगर में रही। बूढ़े को अब भी याद है, किस तरह सूचाउ के आसपास के इलाके में उस समय पहले की मालगुजारी और कर कम कर दिये गये, फिर जमींदारों से जमीन छीनकर बेखेतवाले मजूरों और गरीब किसानों में बाँट दिया गया। नगर में शासन ने बेकारों को काम देने तथा शरीर से काम न कर सकनेवाले लोगों को सरकारी कोष से सहायता देने का प्रबन्ध किया था। चोरों और भिखमंगों को काम सिखलाया जाता था, जिसमें वह ईमानदारी से अपनी जीविका कमा सकें। प्रपितामह वू को अब भी जनता के इस विद्रोह के जनगीत की कुछ पंक्तियाँ याद हैं :

"सूर्य की किरणें चमक रहीं ऊँचे आकाश में,
सभी जा रहे मंचूराज्य से लड़ने,
पाशविक अत्याचार को परास्त करने,
चिरशान्ति और सुख के लिए।"

1860 के जून महीने के आरम्भिक दिनों में मंकू सेना ने परास्त होकर नगर छोड़ने के लिए मजबूर होने

से पहले सूचाउ को लूटा, और नगर में आग लगा दी। नागरिक ताइपिंग सेना के स्वागत के लिए क्यों न तैयार होते ? 12 जून, 1860 को विद्रोही वीर-सेनापति ली श्यू-चेंग जिसे चुन वांग (भला राजा) भी कहा जाता है—अपने आदमियों के साथ सूचाउ में दाखिल हुआ। यह सेना जिस तरह लड़ने में बहादुर थी, वैसे ही जनता के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध और मधुर बर्ताव के कारण बहुत जनप्रिय भी थी। उसने नगर में बहुत जल्दी शान्ति ही नहीं, बल्कि आर्थिक जीवन को भी अच्छे ढंग से स्थापित करके रोटी और काम देने का प्रबन्ध किया। व्यापारियों को कर्ज दिया गया, बेचने के बाद जिसका 70 सैकड़ा लौटाना पड़ता और 30 सैकड़ा आगे की पूँजी के रूप में रक्खा जाता। गाँव से नगर में निर्बाध माल जिससे आता रहे, इसके लिए सूचाउ के चुंग मेन् दरवाजे के करीब ली श्यू-चेंग ने एक बाजार कायम किया। नफाखोरी और जखीरा जमा करके रखना सख्त मना था। ताइपिंग शासन तीन साल तक इस इलाके में रहा। इस सारे समय में लोगों का जीवन बहुत सुखमय रहा। विद्रोही शासन ने साधारण जनता के लड़के-लकड़ियों के पढ़ने के लिए स्कूल खोले थे, पुराने अमीरों के घरों और दूसरी इमारतों को स्कूलों के रूप में परिणत कर दिया था। उसने सड़कों को पक्का किया, पुलों की मरम्मत की। सूचाउ में आज भी ताइपिंग क्रान्ति के चिह्नस्वरूप कितने ही मकान और कितने ही अभिलेख मौजूद हैं, जिनको कम्युनिस्ट शासन ने अब सुन्दर स्मारकों का रूप दे दिया है।

अंग्रेज और अमेरिकन उस वक्त मंचू शासन के पृष्ठपोषक थे। अमेरिकन फ्रेडरिक टौनसेंड वार्ड और अंग्रेज गॉर्डन मंचू सेना के संचालक और परामर्शदाता थे। वार्ड को लड़ाई में अपने प्राणों से हाथ धोना पड़ा। ताइपिंग विद्रोही जनता के सबसे उत्पीड़ित भाग के हितों के समर्थक थे, इसलिए उन्हें जनता की सहायता सुलभ थी। ताइपिंग महान् नेता हुंग श्यू-चुवान (दिव्य राजा) बड़ा ही जनप्रिय था। उसने क्रान्ति का बड़ा सुन्दर संगठन किया था। उसे सहायक भी ली श्यू-चेंग जैसे योग्य सेनानायक मिले थे। 'दिव्य राजा' की राजमोहर अब भी मिलती है, जिस पर और बातों के साथ 'ज्येष्ठ भाई ईसू ख्रीष्ठ' का नाम भी अंकित है। इससे पता लगेगा, कि ताइपिंग यूरोपियों के अन्धे शत्रु नहीं थे। लेकिन क्रान्ति की सफलता के लिए किसान पर्याप्त नहीं थे, विशेषकर ऐसी क्रान्ति के लिए जिसमें उत्पीड़ित वर्ग के स्वार्थों को प्रमुखता देने का प्रयत्न किया गया था। जनता ने ताइपिंग के स्मारक के तौर पर चुंग मेन् के दरवाजे के बाहर एक तोरण स्थापित किया था, जिस पर लिखा था : "जनता नहीं भूल सकती।" 2 दिसम्बर, 1863 को क्रान्तिकारियों को सूचाउ छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ा, मंचू शासक फिर नगर में आ गये और उन्होंने जनता के विजय-तोरण को ध्वस्त कर दिया, लेकिन जनता उसे कैसे भूल सकती थी ? उसने हमेशा उसे याद रक्खा और क्रान्तिकारी चीन ने तो अब ताइपिंग की कीर्ति को अमर कर दिया है।

चे-तुंग ताइपिंग की कहानियों को बड़े चाव और श्रद्धा के साथ सुनता था, जब उसके दादा उन वीरों की गाथाओं को दोहराते। विद्रोह को दबाने में कसाई विश्वासघाती चेंग कुओ-फान का खास हाथ था, जो कि चे-तुंग के अपने प्रदेश होनान के शियांग-शियांग का निवासी था। चेंग ने शियांग (होनान) सेना संगठित करके विद्रोहियों से लड़ाई की थी, और हराने के बाद उसने बड़ी भारी संख्या में अपने ही लोगों को निर्दयतापूर्वक कतल करवाया। ताइपिंग की परम्परा को चे-तुंग के प्रदेश के किसानों ने कभी नहीं भुलाया, और जब-जब भी अत्याचार ने सीमा पार की, वह विद्रोह करने से बाज नहीं आये।

एक बार भारी अकाल पड़ा। चे-तुंग अपने दूसरे लड़कों के साथ पाठशाला के बाहर खेल रहा था; उसी समय उसने चांग-शा से आये कितने ही चावल के व्यापारियों को देखा। चांग-शा बहुत बड़ा नगर है, जो होनान से दक्षिण हूनान प्रदेश में पड़ता है। लड़कों ने पूछा, "तुम क्यों बड़े नगर से भाग आये ?" बनियों ने जवाब दिया, "वहाँ बलवा हो गया है, और अकाल के मारे हजारों आदमी मर गये हैं।" जब भूखे शरणार्थियों ने प्रतिनिधियों को भेजकर राज्यपाल से सहायता माँगी, तो उसने जवाब दिया : "क्यों, तुम्हारे पास खाने के लिए कुछ नहीं है ! नगर में बहुत चावल है। मुझे ही देखो, खाने की बहुत-सी चीजें मेरे पास हैं।" शरणार्थी 'भूखा मरता क्या न करता' के रास्ते पर चले, और उन्होंने बलवा कर दिया। यामेन (राज्यपाल भवन और कार्यालय) को तोड़ दिया, दरवाजे के ध्वज-स्तम्भ को काटकर गिरा दिया। राज्यपाल जान लेकर भागा। अंत में एक

अफसर च्वांग-केंग-लियांग घोड़े पर सवार हो दौड़कर आया, उसने लोगों को यह कहकर शान्त किया कि सरकार सहायता का प्रबन्ध कर रही है। पीछे मंचू राजा ने च्वांग को यह कहकर नौकरी से निकाल दिया कि वह 'बलवाइयों का पक्षपाती' था। एक नया राज्यपाल आया, जिसने बलवाइयों के सभी नेताओं को पकड़कर कितनों को कतल करवा दिया।

चे-तुंग और उसके साथी शरणार्थियों की बुरी हालत को अपनी आँखों देख चुके थे। उनकी कथाओं को सुनकर लड़कों में से अधिकांश की सहानुभूति बलवाइयों के साथ थी। चे-तुंग के लिए तो वह और भी अधिक सहानुभूति के पात्र थे। इस घटना ने चे-तुंग के जीवन पर एक अमिट छाप छोड़ी, जिसने माओ चे-तुंग बनने के लिए उसका पथ-प्रदर्शन किया।

बालपन की एक और घटना भी चे-तुंग के लिए स्मरणीय रह गई। अत्याचारियों से मुकाबला करने तथा दूसरे कामों के लिए भी गुप्त सभाएँ चीन में अक्सर काम करती थीं। शाउशान् चुंग में भी के लाउ-हुइ नाम की ऐसी ही एक किसान गुप्त सभा थी। सभा के मेम्बर का जमींदार से झगड़ा हो गया। जमींदार ने किसान के ऊपर मुकदमा कर दिया। पैसा और प्रभाव उसके पास था, इसलिए उसके मुकाबले में किसान भला न्याय कैसे प्राप्त कर सकता था ? के लाउ-हुइ ने इस फैसले को बिलकुल अन्याय समझा और सभी लोग गाँव छोड़ ल्यूशान पहाड़ में मोर्चाबन्दी करके जा बसे। सरकार ने उनके खिलाफ सैनिक भेजे। जमींदार ने सरकार को प्रभावित करने के लिए यह अफवाह फैला दी कि किसानों ने हथियारबन्द विद्रोह किया है, और अपने झंडे के लिए उन्होंने एक बच्चे को मारकर 'खून की बलि' भी चढ़ाई है। भला सरकारी सेना के सामने मुट्ठीभर किसान क्या करते ? हारने के बाद उनका नेता के-फान् (एक लोहार) किसी तरह से भाग निकला। पीछे उसे पकड़कर कतल कर दिया गया। अपने गाँव के वीर लोहार के प्रति चे-तुंग और उसके साथियों का अपार सम्मान था। वह दूर-दूर के देश-काल के वीरों की उपासना करते थे। फिर अपने गाँव के वीर की उपासना क्यों न करते, जो कि अत्याचारी शासन के सामने अभी-अभी बलिदान हुआ था।

अगले साल इस इलाके में भी अकाल पड़ गया। गरीब भूखों मरने लगे, और धनी महँगा बेचने के लिए अनाज को बखारों में भर भारी महँगे दाम पर ही चावल बेचने लगे। अब भूखी देहाती जनता ने 'बड़े घर में भोज' आन्दोलन शुरू किया। सैकड़ों की संख्या में भूखे लोग धनियों के घरों में घुस जाते, उनके कोठारों में से अनाज निकाल लाते, वहीं उन्हें पीसते-कूटते और धनी के बड़े हंडे में पकाकर खा डालते। इसी तरह वह एक बड़े घर से दूसरे बड़े घर में भोज रचाया करते। चे-तुंग इस भोज को बहुत पसन्द करता था। उसे गरीबों का यह विद्रोह किसी भी पुरानी वीरगाथा से कम प्रिय नहीं मालूम होता।

चे-तुंग के पिता की सहानुभूति 'बड़े घरों' की तरफ थीं, क्योंकि वह भी उन्हीं की तरह का होना चाहता था। वह घर के लोगों को अच्छा खाना न दे, हर तरह के पैसे को जमा कर धन बढ़ाना चाहता था। पत्नी की उदारहृदयता पति को पसन्द नहीं थी। पत्नी खुलकर पति का सामना नहीं कर सकती थी, तो भी कभी-कभी पति के अतिलोभ और नफाखोरी की निन्दा करती, पर उसका कोई प्रभाव नहीं पड़ता था। चीनी पति को अधिकार था कि वह पत्नी को चुपचाप अपनी आज्ञा स्वीकार करने के लिए मजबूर करे। ऐसे समय चे-तुंग, उसका भाई और घर का नौकर माँ के पक्ष में होते। चे-तुंग इस बात का पूरा ध्यान रखता कि हिसाब-किताब या खेत के काम में ऐसा मौका न दे, जिसमें पिता बुरा-भला कहें।

4. घर और बाहर

अपने घर के भीतर ही चे-तुंग को उत्पीड़क और उत्पीड़ित दो पक्ष दिखलाई पड़ते थे, और बाहर कितने ही विद्रोहों को वह अपनी आँखों देख चुका था और उनसे भी अधिक को पँवाड़ों के रूप में बड़े चाव से सुन चुका था, इसलिए अपने विशाल देश पर बीतती बातों के लिए अब उसके कान खुल चुके थे। मंचू-शासन के भ्रष्टाचार और अत्याचार के कारण जनता उससे घृणा करती थी। वह अत्याचारों को चुपचाप सहने के लिए तैयार नहीं थी। जनता यह भी देखती थी कि हमारे ऊपर जुल्म का पहाड़ ढाने के लिए तो मंचू-शासन

शेर है, लेकिन विदेशी गोरों के सामने वह भीगी बिल्ली बन जाता है। दोनों के विरुद्ध किसानों ने ई-हो-त्वान् (बाक्सर-आन्दोलन) 1900 ई. में शुरू किया, जिसका नारा था : "मंचुओं को हटाओ और मिंग वंश को बैठाओ।" मंचू चीन भिन्न जाति के थे, और जिस राजवंश का स्थान उन्होंने लिया था, वह मिंग वंश चीनी था। बाक्सर विद्रोही समझते थे, स्वदेशी वंश के आ जाने से सब काम ठीक हो जायगा। ई-हो-त्वान् का रुख विदेशियों के विरुद्ध बड़ा उग्र था, इसलिए मंचू-सरकार ने नारे को 'मंचुओं की सहायता करो और विदेशियों का सर्वनाश करो' के रूप में बदल अपने को जनता का कोपभाजन बनने से बचा लिया। जब पश्चिमी साम्राज्यवादियों की बन्दूकें और तोपें पहुँचीं, तो मंचू-शासन ने ई-दो-त्वान् के दबाने में विदेशियों की सहायता की। 1900 ई. में विद्रोह के शुरू होते समय चे-तुंग की उम्र केवल सात साल की थी। आठ राष्ट्रों ने अपनी सेनाएँ भेजकर विद्रोह को दबाते हुए राजधानी पेकिंग को खूब लूटा-पाटा और 'पेकिंग सन्धि' के नाम से 1901 ई. में अपने जूए को और मजबूती के साथ चीन के ऊपर लाद दिया।

1894 ई. में चीन-जापान-युद्ध के समय ही यूरोपियन शक्तियों ने चीन का बँटवारा करना चाहा था, लेकिन उनके आपसी स्वार्थ इसकी इजाजत नहीं देते थे। इसलिए, बाँटकर शोषण करने की जगह, उन्होंने साझे में शोषण करना ही अच्छा समझा।

5. देश का ख्याल

13 वर्ष की अवस्था (1906 ई.) में पढ़ाई छोड़ने के बाद 16 वर्ष की उम्र (1909 ई.) तक चे-तुंग बाप के हिसाब-किताब और खेती के काम में लगा रहा, लेकिन इस समय भी वह पुस्तकों को पढ़ा करता था। बाप उसे पसन्द नहीं करता था, इसलिए उसे रात के वक्त खिड़की के सामने पर्दा लगाकर अपने छोटे-से दीये की रोशनी को ढाँकना पड़ता था। इसी समय एक बार चे-तुंग के हाथ में 'विदेशी राज्यों द्वारा बाँट लेने का चीन पर खतरा' नामक पुस्तिका आई। चे-तुंग के हृदय पर सदा के लिए इस पुस्तिका के पहले पृष्ठ का पहला वाक्य अंकित हो गया : "हाय, चीन सर्वनाश के तट पर है!" इस पुस्तिका के पढ़ने के बाद चे-तुंग के मन में मातृभूमि की असहाय अवस्था को देख छटपटाहट पैदा हो गई, और उसने उसी समय संकल्प किया कि मैं अपने देश को बचाने के काम में अपना जीवन दे दूँगा। इसी समय से अपनी उस धुन का पुजारी हो गया, जिसने उसके जीवन को बदल दिया।

घर में पिता अब दो-तीन हजार डालर के पूँजीवाले व्यापारी हो गये थे। उनकी इच्छा यही थी, कि उनका ज्येष्ठ पुत्र भी मेरे कदमों पर चले। लेकिन पिता की बात पुत्र को पसन्द नहीं थी। पिता साक्षर थे, लेकिन अब बड़ा लड़का उनसे बड़ा पंडित था, यह पिता भी मान चुके थे। माँ निरक्षर थी, लेकिन पंडित-पुत्र उसकी आज्ञा को अधिक शिरोधार्य मान उसी के रास्ते पर चलना चाहता था, यद्यपि नई पुस्तकें और उनके द्वारा नया जगत् जो दिन-पर-दिन उसके सामने प्रकट होता जा रहा था, उसने चे-तुंग की माता को पहले की तरह बुद्ध का अनन्य भक्त आगे नहीं रहने दिया। पहले पिता की नास्तिकता को वह नापसन्द करता था, किन्तु पीछे वही नास्तिकता उसे ज्यादा पसन्द आने लगी और पूजापाठ से उसका मन हटने लगा। पिता किसी दिन अपना कर्ज वसूल करने के लिए कहीं जा रहे थे। रास्ते में उन्हें बाघ मिला। बाघ रास्ता छोड़कर चला गया। इस पर बूढ़े माओ का धर्म पर विश्वास हो चला और उन्होंने नास्तिकता के रास्ते को छोड़ बुद्ध-धर्म के प्रति अधिक आदर-भाव दिखलाना शुरू किया। एक पीढ़ी पीछे लौट रही थी, लेकिन अगली पीढ़ी वैसा करने के लिए तैयार नहीं थी।

चे-तुंग को इसी समय एक पुस्तक 'चेतावनी के शब्द' (शेन्-शी-विएन) पढ़ने को मिली, जिसको रात में पढ़ने के लिए चे-तुंग ने खिड़की पर पर्दा डाल दिया। इस पुस्तक के विद्वान लेखकों ने बतलाया था कि जब तक चीन में रेल, तार, टेलीफोन, अगिनबोट जैसे आधुनिक साधन नहीं होते, तब तक चीन दुर्बल ही बना रहेगा और 'दुर्बल की बहू सारे गाँव की भाभी' बनकर रहेगी। चे-तुंग को यह विचार पसन्द आया और वह भी स्वप्न देखने लगा कि हमारा देश भी किसी समय आधुनिक यन्त्रों से सम्पन्न होगा।

6. शिक्षा के लिए घर से बाहर

16 वर्ष की उम्र में चे-तुंग अब गाँव में रहते हुए भी पुस्तकों द्वारा कुछ विस्तृत दुनिया देखने लगा था। बाप को भी मालूम होने लगा कि बेटे को जबर्दस्ती रोकना मुश्किल होगा, इसलिए उसे किसी काम में लगाना चाहिए। चावल की खरीद-फरोख्त और लेन-देन का काम कुछ हो ही रहा था। उन्होंने प्रस्ताव रक्खा, कि बेटा किसी चावल के व्यापारी के पास रहकर उसका काम सीखे, लेकिन चे-तुंग को यह पसन्द नहीं आया। उसे पढ़ने की बड़ी भूख थी। परन्तु अब पुरानी पुस्तकों और पुरानी तरह की पढ़ाई में उसका मन नहीं लगता था। उसे आधुनिक ढंग की शिक्षा पसन्द आने लगी थी, इसलिए वह ऐसे ही किसी स्कूल की तलाश में था। माँ उदार थी, उस उदारता को पुत्र ने और अधिक मात्रा में पाया था। लोग भूखे मर रहे थे, तो भी वृद्ध माओ शाओ शान गाँव के चावल को ढोकर बाजार में पहुँचाते ही रहते थे। एक बार बूढ़े माओ हाँफते-हाँफते आकर माओ के पास बैठ गये और कहा, "गाड़ी लुट गई।"

"कौन चीज की गाड़ी ?"

"चावल की गाड़ी। रास्ते में गाड़ी लुट गई, अब साहु बड़ा नाराज होगा।"

भूखे गाँववालों ने चावल लूट लिया। यह तो चे-तुंग को बुरा नहीं लगा।

चे-तुंग ने बनिये का काम सीखने से इन्कार कर दिया। इसी समय उसका मामा आया। उसने अपने गाँव में नये तरह के स्कूल के खुलने की बात कही। माओ को उसी स्कूल में भर्ती होने का खयाल आया। बाप इसके लिए राजी नहीं था, किन्तु माँ ने बेटे का समर्थन किया, जिस पर बाप ने ताना मारते हुए कहा—"तूने ही छोकरे को खराब कर दिया है।" अगले दिन मामा ने जब कहा कि चे-तुंग को मेरे साथ ननिहाल जाने दो, तो फिर बूढ़े माओ ने जवाब दिया : "इसे पीछे शियांग-तान जाना है। यदि जगह भर गई, तो फिर काम सीखने का मौका नहीं मिलेगा।"

मामा ने इस पर कहा—"लड़का पढ़ने-लिखने में होशियार है। इसको चावल की बनीजी में सड़ाना अच्छा नहीं है।"

बूढ़े का जवाब था—"अरे पढ़े-लिखे तो दर-दर ठोकरें खाते फिरते हैं।"

मामा ने कहा—"नये तरह का स्कूल है, वहाँ से पढ़कर निकले लड़के चौगुनी कमाई करेंगे।" बेचारे माओ जेन-शेंग अकेले पड़ गये, सारे घर के लोग विपक्ष में थे। चे-तुंग स्वयं ननिहाल के स्कूल में जाकर पढ़ने के लिए व्यग्र था। जबर्दस्ती करने का मतलब होता, चे-तुंग का कहीं भाग जाना, इसलिए बूढ़े ने ननिहाल जाने की इजाजत दे दी, और चे-तुंग 16 वर्ष की अवस्था में शाउशान से 16-17 मील दूर पढ़ने के लिए चला गया।

ननिहाल तुंग तैशान शाउशान से 50 ली (16-17 मील) दूर था। श्यांग-श्यांग नगर के वांगचुन् द्वार से निकलकर बाहर जाने पर लियान्‌शुइ नदी आती है, जिसे पार करने के लिए वहाँ घाट पर नावें रहती हैं। दूसरे तट पर छोटे-छोटे कंकड़-पत्थर से ढँके रास्ते से थोड़ा जाने पर तुंग तैशान का हरे-भरे जंगलों से आच्छादित सुन्दर पहाड़ दिखाई पड़ता है। नागनगर (श्यांग-श्यांग) से तीन-साढ़े तीन मील (6-7 ली) के करीब दूर तुंग-पिंग नामक जगह है। यहीं ईंटों की ऊँची चौकोर दीवालों तथा काले लाख की बार्निशवाला दोहरा द्वार है, जिसके पीछे एक अच्छा-सा घर है। इसी में पहले तुंग शान् स्कूल चलता था, जिसको आजकल श्यांग-श्यांग का तुंग शान हाई स्कूल कहा जाता है। स्कूल के पास एक गोल-सा तालाब है। उसका सात तलों का एक सफेद बौद्ध-स्तूप और तुंग तैशान पर्वत बड़े सुन्दर दिखाई पड़ते हैं। तुंग शान् स्कूल में पढ़ते समय चे-तुंग अक्सर अपने मित्रों के साथ इस नयनाभिराम दृश्य को देखने आया करता था। पुल की पत्थरवाली बँधनी पर झुककर तरुण कितनी ही बार जल में क्रीड़ा करती मछलियों की ओर देखते आपस में बातचीत किया करते थे।

स्कूल में संगीत और अंग्रेजी का अध्यापक जापान से पढ़ करके आया था। मंचू गुलामी का चिह्न—लम्बी चोटी उस समय सभी चीनियों के सिर पर रहा करती थी। स्कूल के लड़के भी चोटीवाले थे, चे-तुंग भी चोटी का बड़ा पक्षपाती था। जापान से पढ़कर आये अध्यापक ने अपनी चोटी कटवा ली थी। चोटी बिना लड़कों

में इज्जत न होती, इसलिए वह नकली चोटी लगाये रहता। लड़के उसका मजाक करते, उसे 'नकली परदेसी राक्षस' कहा करते। यद्यपि चे-तुंग भी जानता था, कि चोटी मंचू-सम्राटों ने रखवाया है, लेकिन अभी कन्फूजू और दूसरे पुराने विचारों का प्रभाव उसके ऊपर बहुत था, और समझता था कि देवपुत्र सम्राट कोई अन्याय नहीं कर सकते। देश में यदि अन्याय है तो मन्त्रियों और क्षत्रपों के कारण। इसीलिए चोटी में दोष देखना तो अलग, उसे वह अभिमान की बात समझता था।

नये तरह का स्कूल था, तो वहाँ नई हवा भी बहनी ही चाहिए। वहाँ के विद्यार्थी भी नई किताबें पढ़ा करते थे। ननिहाल में आने पर मामा के लड़के ने एक लेख-संग्रह 'नई जनता' लाकर दी। इसमें लियांग ची-चाओ और कांग युवाइ के लेख थे, जिन्होंने उनमें राजनीतिक सुधारों की आवश्यकता के बारे में लिखा था। तरुण चे-तुंग के ऊपर इन लेखों का बहुत प्रभाव पड़ा, और वह इन दोनों लेखकों का भक्त बन गया। यह आसानी से समझा जा सकता है कि यद्यपि शब्द-संकेत चीनी भाषा में अब भी वही थे, जो कि दो-ढाई हजार वर्ष पहले, लेकिन जिस तरह ढाई हजार वर्ष पहले की भाषा हमारे यहाँ आज की भाषा से भिन्न है, उसी तरह चीन में भी है। इसके कारण पुराने ढंग से लिखी पुस्तक चाहे समझने में बहुत कठिन न हो, किन्तु दोनों की शैली में बहुत भेद था। लियांग बोलचाल की भाषा का पक्षपाती था। उसका प्रभाव चे-तुंग पर इतना पड़ा, कि वह भी उसी की शैली की नकल करने लगा। यद्यपि संगीत-अध्यापक चोटीकटा था, लेकिन वह दूसरे देश में सालों रहकर आया था, इसलिए जब वहाँ की बातें कहता, तो चे-तुंग उसे बड़ी खुशी के साथ सुनता। जापानी और चीनी भाषा एक-दूसरे से अत्यन्त भेद रखती हैं, लेकिन लिखने में वह एक ही तरह के शब्द-संकेत या चित्रलिपि का प्रयोग करती हैं। चीनी में विभक्तियों का प्रायः बिलकुल अभाव है, जापानी में वह है, लेकिन उनके लिखने के लिए जापानी लोग उच्चारणानुसार वर्णमाला (कितकना और हिराकना) का इस्तेमाल करते हैं। चीनी पाठक भिन्न लिपि में लिखी इन विभक्तियों को छोड़कर जापानी पुस्तक को अपनी भाषा में पढ़ और समझ भी सकते हैं। इसलिए जब अध्यापक ने जापान में छपी जापानी पुस्तकों को दिया, तो उन्हें चे-तुंग पढ़ गया, और कुछ जापानी कविताएँ तो उसे इतनी पसन्द आईं, कि उन्हें उसने याद कर लिया और आज भी उनमें से कुछ को अध्यक्ष माओ चे-तुंग दोहरा सकते हैं—यद्यपि जापानी नहीं, चीनी भाषा में।

ननिहाल में स्कूल में पढ़ते समय चे-तुंग ने जार्ज वाशिंगटन, नेपोलियन आदि भिन्न-भिन्न देशों के महान् नेताओं और वीरों के जीवन पढ़े, लेकिन अभी उसे अपने देश के नये नेताओं का ज्ञान नाम मात्र ही था।

स्कूल की इमारत में एक हाल था, जिसमें ही लड़के पढ़ते, स्वाध्याय करते और सो जाते थे। चे-तुंग जैसा, असाधारण लड़का आसानी से दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट कर सकता था। प्रतिभा उसके चेहरे और आँखों से झलकती थी। शरीर से पतला और कपड़े उसके मामूली नीलाकोट और पायजामा थे, तो भी यह सादगी तरुण को छिपा नहीं सकती। इस नये स्कूल के अधिकांश विद्यार्थी जमींदारों के लड़के थे। उनके बदन पर नफीस रेशमी कपड़े हुआ करते थे। उनके लम्बे चोगे के ऊपर रंग-बिरंगा कमरबन्द बँधा रहता था। जूते भी उसी के अनुसार होते थे। कोई-कोई लड़के पुरानी पोशाक छोड़ छात्रों की वर्दी भी पहनते थे। लेकिन चे-तुंग के शरीर पर वह मोटी-झोटी नीली खद्दर की पोशाक होती। श्यांग-श्यांग नगर था और शाउशान् गाँव। यद्यपि दोनों के बीच में सोलह-सत्रह मील का अन्तर था, लेकिन ग्रामीण और नागरिक में फर्क होता है, जो चे-तुंग के शब्दों के उच्चारण के स्वर से भी मालूम हो जाता था। लड़के इसका मजाक उड़ाते, कभी पूछते तो चे-तुंग कह देता—"मेरा घर श्यांग तान में है, लेकिन मेरी माँ म्यांग के वेन् परिवार की हैं।" वेन परिवार का मामा का लड़का भी इसी स्कूल में एक साल पहले से पढ़ रहा था, इसलिए दूसरे लड़के उसे जानते थे। चे-तुंग फैशनेबुल धनी लड़कों के बीच अपने को अकेला पाता था, लेकिन वहाँ कुछ लड़के अपने जैसे घरों के भी थे, जिनकी मित्रता ने चे-तुंग के मन के सूनेपन को दूर करने में बड़ी सहायता की। अमीरों के लड़के जहाँ पढ़ने की ओर ध्यान नहीं देते थे, वहाँ गरीब परिवारों के लड़के भद्दे भेस में रहते हुए भी पढ़ने में बहुत मेहनती थे। गरीबों और अमीरों के भाषा-उच्चारण में जो अन्तर था, वह चे-तुंग को गरीबों के लड़कों के नजदीक कर देता था, और श्यांग-श्यांग के उच्चारण से थोड़ा-सा अन्तर रखता था। श्यांग-श्यांग की भाषा में 'मैं' के

लिए 'ङ' जहाँ कहा जाता, वहाँ ये लड़के 'वो' कहा करते थे। चे-तुंग धीरे-धीरे बोलता था, उसके बात करने का ढंग भी धीरे-धीरे का था, लेकिन उसमें दिखावा नहीं था। पढ़ने में भी वह बहुत तेज था, इसलिए अध्यापक बड़ी जल्दी उसके साथ स्नेह करने लगे। प्राचीन साहित्य का उसे पहले ही से काफी परिचय था, इसलिए साहित्य के अध्यापक उसे बहुत मानते थे, और पुरानी शैली में लिखे उसके सुन्दर निबन्धों को देखकर बहुत साधुवाद देते थे।

स्कूल में यह आम तरीका था कि सबेरे के वक्त, जब लड़के हाजिरी देने के लिए इकट्ठा होते, तो अध्यापक छोटा-सा भाषण देता। चीन जापान जैसे एक छोटे देश से हार चुका था। जापान ने चार ही पाँच वर्ष पहले रूस को हरा दिया था। विदेशी शक्तियाँ और उनके लोग चीन में अपने को स्वामी समझते थे। चीनी तरुणों का देशाभिमान इसे सहन नहीं करता था, इसलिए नवशिक्षित चीनियों का ख्याल देश की दुर्दशा की ओर जाना स्वाभाविक था। अध्यापकों के इन छोटे-छोटे भाषणों में भी इसका जिक्र आता, वह विदेशी राक्षसों के प्रति घृणा प्रकट करते। जापान से लौटे अध्यापक यही बतलाते थे कि मेइजी सुधार (1868 ई.) के बाद पिछले चालीस वर्षों में ही जापान किस तरह इतना शक्तिशाली राष्ट्र हो गया, कि उसके सामने चीन ही नहीं, रूस को भी चारों खाने चित होना पड़ा।

तुंग-शान् स्कूल में पाठ्य-पुस्तकों के पढ़ने के अतिरिक्त स्वाध्याय का अत्यन्त प्रेमी होने के कारण चे-तुंग का समय कितनी ही दूसरी पुस्तकों के पढ़ने में लगा करता। चीनी प्राचीन साहित्य के साथ चीन का इतिहास चे-तुंग का प्रिय विषय था। अब वह दूसरे देशों के इतिहास और भूगोल को भी बड़े ध्यान से पढ़ने लगा। इस समय की पढ़ी हुई पुस्तकों में से जिन्होंने उसके ऊपर अधिक प्रभाव डाला, उनमें एक थी कान यू-वेइ के सुधार-आन्दोलन (1898 ई.) और दूसरी लियांग ची-चाउ द्वारा सम्पादित 'नवीन जनता संग्रह'। इन पुस्तकों का चे-तुंग ने कई बार पारायण किया, जिससे वह करीब-करीब उसे कंठस्थ हो गई। पढ़ने के बाद वह कांग और लियांग का परम भक्त बन गया।

शाम को लड़के जब खेल में थे, फिर घंटा बजने पर वह पढ़ने के कमरे में आये। उस समय स्कूल के दूसरे दरवाजे को जाते समय चे-तुंग के साथ जानेवाले एक लड़के के हाथ में कोई पुस्तक थी। पुस्तक के बारे में चे-तुंग की जिज्ञासा क्यों न होती ? उसने पूछ लिया :

"यह क्या पुस्तक है ?"

"दुनिया के वीर और महापुरुष।"

"क्या मैं इसे देख सकता हूँ ?"

लड़के ने बड़ी खुशी से पुस्तक दे दी। पढ़कर कुछ दिनों बाद चे-तुंग ने पुस्तक को लौटाते हुए, मैली कर देने के लिए अपने साथी से क्षमा माँगी। लड़के ने पुस्तक खोली, तो देखा कि उसमें कई जगहों पर निशान पड़े हुए हैं। सबसे ज्यादा निशान थे, वाशिंगटन, नेपोलियन, पीतर महान्, महाएकातेरिना, वेलिंगटन, ग्लैड्स्टन, रूसो, मोन्तेस्कू और लिंकन के ऊपर। चे-तुंग ने अपने साथी से कहा :

"हमें अपने देश को सबल और समृद्ध बनाने की कोशिश करनी होगी, जिसमें कि हमारी गत वही न हो, जो कि हिन्दुस्तान, इन्दो-चीन और कोरिया की है। तुम जानते हो न पुरानी चीनी कहावत : 'एक उलट पड़ा रथ दूसरे को सावधान करता है।' हम सबको मिलकर जोर लगाना चाहिए। कूयेन-वू ने ठीक ही कहा है : 'हरेक साधारण आदमी अपने राष्ट्र के भाग्य का फैसला करने में हाथ रखता है'।" थोड़ा रुककर चे-तुंग ने फिर कहा : "चीन का पतन कल से नहीं शुरू हुआ, इसलिए उसे सबल, समृद्ध और स्वतन्त्र बनाने में भी लम्बा समय लगेगा। पर हमें समय की लम्बाई से घबराना नहीं चाहिए।" चे-तुंग ने पुस्तक खोलकर एक पृष्ठ पर पढ़ा : "संयुक्त राष्ट्र को वाशिंगटन के नेतृत्व में आठ लम्बे तथा कड़वे वर्षों तक लड़ते रहने के बाद ही विजय और स्वतन्त्रता का मुँह देखने को मिला।"

चे-तुंग ने तुंग-शान् स्कूल में केवल एक साल पढ़ा। पढ़ने के साथ-साथ घुमक्कड़ी भी चे-तुंग को प्रिय थी, इसलिए भी उसका मन देर तक एक जगह लग नहीं सकता था। अब उसने दूसरी जगह जाने का निश्चय किया।

4
बड़ी दुनिया (1910-11 ई.)

1. चांगशा में

1911 का सन् था, अर्थात् चीनी-क्रान्ति का वर्ष, जब कि मंचू-वंश को चीन से खतम कर दिया गया। चे-तुंग अब सत्रह साल पूरा कर चुका था। उसने तुंग शान से जाने का विचार प्रकट किया। इस समय उसके एक अध्यापक ने उसके लिए परिचय-पत्र लिख दिया। पहले वह शियांग तान् शहर के मिडिल स्कूल में गया, लेकिन अपने लम्बे कद के कारण वहाँ उसको प्रवेश नहीं मिला। अब उसने हूनान की राजधानी चांगशा की ओर मुँह मोड़ा और शियांग नदी के एक छोटे-से स्टीमर में तीसरे दर्जे का टिकट लेकर बैठ गया। चांगशा में श्यांग-श्यांग के लड़कों के लिए एक हाई स्कूल था। स्टीमर ने तरुण चे-तुंग को चांगशा नगरी में पहुँचा दिया। चांगशा के बारे में चे-तुंग पहले ही से बहुत सुन चुका था कि वह बहुत बड़ा नगर है, वहाँ लाखों आदमी बसते हैं, बहुत-से स्कूल हैं, मंचू-सम्राट का प्रतिनिधि राज्यपाल वहाँ अपने भव्य प्रासादों में रहता है। ऐसे शहर में एक गँवार तरुण का जाकर खो जाना आसान था। लेकिन जिस समय वह चांगशा पहुँचा, उस वक्त चे-तुंग की अवस्था दूसरी ही थी। चारों ओर सारे चीन में राजनीतिक आन्दोलन जोर-शोर से चल रहा था, जिसका प्रभाव दक्षिणी चीन के इस महानगर पर भी पड़ा था। शहर के चारों तरफ लोगों की भीड़ थी, लेकिन अभी इस बारे में जानने से पहले चे-तुंग को प्रादेशिक श्यांग-श्यांग हाई स्कूल में दाखिल होना था। उसे भय था कि इतने बड़े स्कूल में उसको प्रवेश करने की शायद इजाजत न मिले। लेकिन, देखने में सीधा-सादा होने पर भी उसका ज्ञान इतना था, कि प्रिंसिपल ने बिना कठिनाई के ही उसे स्कूल में दाखिल कर लिया।

पहले-पहल चे-तुंग ने चांगशा में अखबार देखा। उस अखबार का नाम था 'जनशक्ति' जिसका संचालन वही तुंग-मेन्-हुई संस्था करती थी, जिसने आगे चलकर कुवो-मिन् तांग का नाम लिया। उसमें चे-तुंग ने मंचू-शासन के विरुद्ध विद्रोह करने के अपराध में कान्तन में शहीद होनेवाले बहत्तर पुरुषों के सम्बन्ध में एक लेख पढ़ा जिससे वह बहुत प्रभावित हुआ। यहीं पहले-पहल उसे तुंग-मेन् हुई और उसके संस्थापक डा. सुन् यात्-सेन् का नाम पढ़ने को मिला।

2. डा. सुन् यात्-सेन्

चीन के राष्ट्रपिता सुन् यात्-सेन् उस समय तक काफी प्रसिद्ध हो चुके थे, और यदि चे-तुंग उनके नाम से परिचित नहीं था, तो वह यही बतलाता है कि चीन के सुदूरवर्ती गाँव नये संसार से कितने दूर थे। डा. सुन् ने अमेरिका में जाकर अध्ययन कर देश के उद्धार के लिए व्रत लिया था। इसी उद्देश्य से उन्होंने 1894 ई. में—जब कि चे-तुंग अभी एक साल का ही था—शिंग-चुन्-वाइ (चीनी पुनरुज्जीवन संघ) के नाम से एक सभा अमेरिका के अधीन हवाई द्वीप के होनोलुलू में स्थापित की। सभा का उद्देश्य था : 'देशभक्त चीनियों को एकताबद्ध करना, उन्हें शक्ति और समृद्धि प्राप्त करने की कला सिखाना और चीन को पुनरुज्जीवित करना।' पहले इस संस्था में अधिकतर विदेश में गये विद्यार्थी तथा तरुण फौजी अफसर शामिल हुए थे। उन्होंने स्थापना के एक साल बाद ही कान्तन में असफल विद्रोह किया, लेकिन उससे देशभक्ति की आग दबी नहीं। संस्था के सदस्यों की संख्या बढ़ती ही गई। सन् 1905 ई. में संस्था का नाम बदलकर 'क्रांतिकारी साथी दल'* रख दिया। जब अमेरिका ने चीनियों का आना बन्द कर दिया, तो संस्था ने अमेरिकन माल के बायकाट का आन्दोलन छेड़ दिया। 1908 ई. में जापानी माल का भी बायकाट शुरू किया। अमेरिका इस बायकाट से इतना डरा कि उसने बाक्सर-विद्रोह के लिए क्षतिपूर्ति के रूप में चीन से मिलनेवाले धन को चीन में शिक्षा-प्रचार में खर्च करने को

* 1914 ई. में सुन् यात्-सेन् ने कुओमिन्तांग (जनता पार्टी) का नाम बदलकर चुंगाह्वा-क मिन्-तांग रक्खा। 1919 ई. में, पुनर्गठन के बाद उसका नाम बदलकर चुंग-कुओ कुओ-मिन्तांग रख उसका घोषणापत्र जनवरी 1923 ई. में प्रकाशित हुआ।

दे दिया। संस्था की यह पहली जीत थी। 1907 ई. से विदेशियों ने रेल बनाने का अधिकार देने के लिए मंचू-सरकार पर दबाव डालना शुरू किया था। उधर मंचू-शासन की अयोग्यता और उसके अधिकारियों के अत्याचारों को दूर करने के लिए पार्लियामेण्ट की स्थापना की माँग हो रही थी। सरकार ने पार्लियामेण्ट स्थापित करके अधिकांश सदस्यों को सम्राट की ओर से नामजद करने तथा पार्लियामेण्ट को केवल सलाहकार संस्था के तौर पर मानने का ही वचन दिया। 1910 ई. में एक राष्ट्रीय सभा मिली जिसमें आधे सदस्य सम्राट द्वारा नामजद थे। राष्ट्रीय सभा ने तुरन्त पार्लियामेण्ट बुलाने की माँग रक्खी। 1911 ई. में एक और सवाल उठ खड़ा हुआ। मध्य-चीन के कितने ही करोड़पतियों ने जेचुआन से हांग-काउ तक रेल बनाने की योजना सरकार के सामने रखकर उसके लिए आज्ञा माँगी, लेकिन मंचू-वंश तो अब पश्चिमी साम्राज्यवादियों के हाथ का खिलौना था। उसने स्वदेशी करोड़पतियों को निराश करते हुए विदेशी पूँजीपतियों को रेल बनाने का अधिकार दे दिया।

जब साधारण जनता से लेकर बड़े-बड़े सेठों तक को मंचू-वंश ने नाराज कर दिया था, तो फिर देश में विद्रोह की प्रचंड आग क्यों न भड़कती ? 10 अक्टूबर को हांग-काउ में विद्रोह हो गया। जंगल की आग की तरह वह बड़ी जल्दी कान्तन और शांघाइ जैसे बड़े-बड़े शहरों तक फैल गया। उस वक्त डा. सुन् यात्-सेन् अमेरिका में थे। व्यापारियों, विद्यार्थियों और फौजी अफसरों की कांग्रेस हुई, जिसने डा. सुन् को स्वदेश लौटने के लिए निमन्त्रण भेजा।

यह स्थिति थी, जब कि अठारह वर्ष के चे-तुंग ने चांग-शा में पहले-पहल डा. सुन् का नाम पढ़ा। वह इतना प्रभावित हुआ कि उसने तुरन्त एक लेख लिखकर स्कूल की दीवाल पर चिपका दिया। लेख में उसने प्रस्ताव किया था कि डा. सुन् को जापान से बुलाकर नई सरकार का राष्ट्रपति बनाया जाय और थांग-यांग-वेइ को प्रधानमन्त्री तथा लियांग सी-चाओ को विदेश-मन्त्री। अभी चे-तुंग का राजनीतिक ज्ञान इतना आगे नहीं बढ़ा था कि वह उनकी विचारधाराओं के बारे में फर्क कर सकता।

माओ चे-तुंग का यह पहला राजनीतिक लेख था। उसे यह जानने की बड़ी इच्छा थी कि उसके विचारों के बारे में दूसरों की क्या राय है। तरुण विद्यार्थी लेख को पढ़ रहे थे और टिप्पणी कर रहे थे। कोई कहता—यह प्रस्ताव ठीक है। कोई कहता—यह ठीक नहीं है। चे-तुंग पास में खड़ा उनकी टिप्पणियों को सुन रहा था। उसी समय अगले दर्जे में पढ़नेवाले एक विद्यार्थी ने आकर लेख को पढ़ना शुरू किया। विद्यार्थी चांगशा नगर का रहनेवाला और विद्यालय के छात्रों का नेता था। माओ चे-तुंग कान लगाकर उसकी राय सुनने का इन्तजार करने लगा। तरुण ने 'धूल-पत्थर' कहकर पहले नाक-भौं सिकोड़ा, फिर पूछने पर इस बात के लिए सहमति प्रकट की कि डा. सुन् को राष्ट्रपति बनाना चाहिए, "लेकिन इन दोनों विदूषकों को उनके अगल-बगल में खड़ा करने की क्या जरूरत ?" लड़के ने बतलाया कि डा. सुन् क्रांति चाहते हैं, मंचू-राजतंत्र को खतम करना चाहते हैं, जब कि ये दोनों विदूषक मंचू-शासन में थोड़े-से सुधार करने से संतुष्ट हो सकते हैं। माओ चे-तुंग इसका क्या जवाब देता ? उसे अपने लिखने के प्रथम प्रयास से निराशा होने लगी। इस पर उसके तरुण साथी ने कहा—"किंतु, तुम्हारी कितनी ही बातें मुझे अच्छी लगती हैं। आज छुट्टी के बाद शाम को मेरे पास आना, मैं तुम्हें डा. सुन् के लेखों को पढ़ने के लिए दूँगा।" उस समय से दोनों तरुणों में मित्रता स्थापित हो गई।

राष्ट्रीय आन्दोलन की बाढ़ सारे देश में आ गई थी। देश-भर में विदेशियों की गुलामी के प्रति घृणा और विदेशी माल के बायकाट का जबर्दस्त प्रचार हो रहा था। कितनी ही जगहों में सेनाएँ राष्ट्रवादियों की तरफ होकर सरकारी सेना से लड़ रही थीं। स्कूलों और कालेजों के विद्यार्थी तथा दूसरे बुद्धिजीवी देश के कोने-कोने में मंचू-शासन के खिलाफ विद्रोह की आग भड़का रहे थे। नौजवान करोड़ों की संख्या में अपनी चोटियाँ काट-काटकर फेंक रहे थे। माओ ने स्वयं अपनी चोटी काटी, और दसियों दूसरों की चोटी काट डाली। अब उसे अपने पुराने अध्यापक को 'नकली परदेशी राक्षस' कहकर मजाक करने का अफसोस हो रहा था, लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि अब भी वहाँ ऐसों का अभाव था, जो कहते थे : "शरीर, चमड़ा, बाल और नख माँ-बाप की ओर से मिले हैं, उनके नष्ट करने का हमको कोई अधिकार नहीं।"

हूनान प्रदेश सदा से विद्रोह का पक्षपाती रहा है, इसलिए वहाँ क्रान्ति की लपट इस समय सबसे अधिक

दिखाई दे रही थी। सुधार-आन्दोलन के कितने ही उग्र सदस्य हूनान-निवासी थे। यहाँ यातायात के सुधार, खानों में काम, सैनिक अकादमी की स्थापना और सैनिक शिक्षा देने की योजना बनी। 'दक्षिणी पंडित सभा' के नाम से यहाँ एक संस्था कायम हुई, जिसके हजार से अधिक सदस्य थे, और जिसका उद्देश्य था : दक्षिण के सभी देशभक्तों को हूनान से आरम्भ कर एकताबद्ध करके देशभक्ति के लिए विचार-विनिमय तथा देशरक्षा के लिए नीति तैयार करना। इस समय राजनीतिक आन्दोलन के समर्थन में 'शियांग शूये शिन् पाओ' (दशाहिक) और 'शियांग' पाउ (दैनिक, पीछे मासिक) निकला करते थे।

तुंग-मेंग हुइ की एक शाखा हुआ-शिंग सभा थी, जिसका नेता चांगशा-निवासी ह्वांग शिंग था। वह कान्तन के उन विद्रोहियों का भी नेता था, जिनके 72 आदमी शहीद हुए थे। इनके अतिरिक्त आन्-ह्वेइ में काम करनेवाले शू सी-लेन और चिउ-चिन इन दो क्रान्तिकारियों के मृत्युदण्ड ने हूनान के लोगों को भड़काने में भारी काम किया। लोग रेलों के राष्ट्रीकरण, संविधान और पार्लियामेण्ट की स्थापना की जबर्दस्त माँग कर रहे थे। एक बड़े क्रान्तिकारी नेता शू ते-ली ने उँगली काटकर अपने खून से पार्लियामेण्ट स्थापित करने के लिए आवेदन लिखा था।

शांघाई में 1903 ई. में वहाँ की देशभक्ति क्लब ने 'देशभक्ति विद्रोह' किया था, जिसके बाद वह मंचू-विरोधी प्रचार का गढ़ बनती चली गई। देश में अध्यापकों और विद्यार्थियों ने आन्दोलन करते सर्वत्र रात्रि-पाठशालाएँ खोलीं। भाषणों के अतिरिक्त वह छोटी-छोटी पुस्तिकाओं द्वारा जनता में प्रचार करती थी। चोटी काटने का जोर तो सभी जगह था। चारों तरफ नारे सुनाई दे रहे थे : 'मंचुओं को मार भगाओ !' 'स्वतन्त्र चीन !' 'गणराज्य कायम करो !' और 'भूमि में समानाधिकार !' माओ चे-तुंग भी अब इस तूफान के बीच में था।

माओ चे-तुंग ने अपनी आत्मकथा में स्वयं इस समय के बारे में लिखा है :

"चांगशा जाने की मुझे बड़ी इच्छा थी। वह हमारे प्रदेश की राजधानी तथा बड़ी नगरी और मेरे गाँव से 120 ली (40 मील) पर अवस्थित थी। यह शहर बहुत बड़ा था। वहाँ बहुत लोग रहते थे। मेरे एक शिक्षक ने मुझे परिचय-पत्र दिया था, जिससे मेरे मन में बड़ी खलबली मच रही थी, यदि मुझे न लिया तो।··चांगशा में पहुँचकर अपने उम्र में पहली बार मैंने अखबार पढ़ा। 'मिन्-ली-पाओ' (जनशक्ति) इस पत्र का नाम था। वह राष्ट्रीय क्रांति का पक्षपाती था।··· उसने मुझ पर बहुत प्रभाव डाला। "मिन्-ली-पाओ' में मुझे बहुत-से जोशीले लेख पढ़ने को मिले। उसका सम्पादक यू यू-जेन था, जोकि कुओ-मिन्-तांग का एक प्रसिद्ध नेता था। इस पत्र के द्वारा मुझे सुन् यात्-सेन् के बारे में मालूम हुआ और 'तुंग-मेंग-हुई' संस्था के कार्यक्रम का भी ज्ञान प्राप्त हुआ।··· "

3. माओ का सैनिक जीवन (1911 ई.)

10 अक्टूबर, 1911 को वूचांग में नगर विद्रोह उठ खड़ा हुआ, यद्यपि विधवा सम्राज्ञी के जन्म-दिवस पर शुरू करने का निश्चय किया गया था, लेकिन कारणोंवश वह चालीस दिन पहले शुरू हो गया। क्रान्तिकारी पार्टी के मेम्बरों की एक सूची मंचू गुप्तचरों के हाथ लग गई और उन्होंने बहुतों को पकड़कर मरवा दिया। इसी कारण समय से पहले विद्रोह को शुरू करना पड़ा। चांगशा की अवस्था बहुत खतरनाक हो गई। हूनान के राज्यपाल ने मार्शल-लॉ की घोषणा कर दी, लेकिन क्रान्तिकारी तब भी नगर की दीवालों के भीतर और बाहर अपने काम को गुप्त रूप से जारी रखे रहे। स्कूलों में मंचू-विरोधी और हान्-पक्षपाती भाषण दिए जाते। कितने ही तरुण नगर से बाहर छावनी डाले पड़ी नवीन सेना में काम करते सैनिकों को विद्रोह करने के लिए उत्तेजित करते।

एक दिन प्रादेशिक (श्यांग-श्यांग) विद्यालय में एक क्रान्तिकारी आया। प्रिंसिपल ने आज्ञा दे दी और उसने छात्रों के सामने बड़ा ही जोशीला भाषण दिया। कितने ही विद्यार्थियों ने उसका समर्थन करते हुए मंचुओं को बुरा-भला कहा और गणराज्य स्थापित करने की माँग की। श्रोतृमंडली में भारी जोश और उत्तेजना फैली हुई थी। माओ चे-तुंग भी जोश में बह गया। वह क्रान्ति में सम्मिलित होने के बारे में पाँच दिनों तक सोचने के

बाद इस निश्चय पर पहुँचा कि क्रान्ति की सेवा के लिए सैनिक काम सबसे अधिक लाभदायक है। हूपे के राज्यपाल ली युवान-हुंग द्वारा संचालित क्रान्तिकारी सेना में नाम लिखाने का संकल्प कर अपने छात्र साथियों से उसने कुछ पैसा उधार लिया और कितने ही मित्र के साथ वूचांग पहुँचा। किसी ने बतलाया कि वूचांग की सड़कों में बहुत कीचड़ होती है, इसलिए चमड़े का जूता पहनना अच्छा होगा। माओ चे-तुंग को इस समय याद आया, कि उसके एक किसान मित्र के पास उसी तरह का एक जूता है। किसान-मित्र उसका अपने गाँव का आदमी और उसी नवीन सेना में उस समय सिपाही था, जो कि चांगशा के नगर-प्राकार के बाहर पड़ी हुई थी। वह उसके पास जाने लगा। संतरी ने उसे रोक दिया।

तुंग-मेंग-हुइ और के-लाऊ-हुइ जैसे क्रान्तिकारी दलों के आदमी नवीन सेना के 39वें और 50वें ब्रिगेडों के बारकों में घुस चुके थे। हवांग-शिंग उस समय हूनान में नहीं था। के लाउ-हुइ दल उस वक्त सबसे आगे बढ़ा हुआ था। उसने दोनों ब्रिगेडों में सम्मिलित हो उन्हें वूचांग-हांग काओ के क्रान्तिकारियों से मिलाने में सफलता प्राप्त की। जिस वक्त माओ चे-तुंग वहाँ पहुँचा, उसी समय नवीन-सेना को गोली-बारूद मिली थी, और वह चांगशा की ओर मार्च करनेवाली थी। माओ चे-तुंग तुरन्त नगर की ओर लौटा। उसके फाटक बन्द थे, लेकिन भीतर से सिटकनी नहीं लगी थी।

इतवार का सबेरा था। नई सेना बाहर के परेड-मैदान से मार्च करके चांगशा के एक फाटक की ओर बढ़ी। कुछ गोलियाँ चलाने के बाद उसकी एक टुकड़ी 'पद्म-सरोवर' में हथियारखाने पर अधिकार करने गई, और सेना का मुख्य भाग राज्यपाल भवन की ओर बढ़ते हुए एक दरवाजे से नगर के भीतर घुसा। गारद ने कोई प्रतिरोध नहीं किया और राज्यपाल आत्मसमर्पण करने के लिए मजबूर हुआ। राज्यपाल-भवन पर एक विशाल सफेद झंडा गाड़ दिया गया। इसके बाद ही सभी स्कूलों, सरकारी दफ्तरों, दुकानों आदि में छोटे-बड़े बहुतेरे सफेद झंडे फहराने लगे। माओ चे-तुंग स्कूल की ओर लौटा। उस समय उसके दरवाजों पर सफेद झंडे लग चुके थे और बाहर कुछ सिपाही पहरा दे रहे थे। हूनान प्रदेश ने अपने को मंचू-सरकार से स्वतन्त्र घोषित किया।

अपराह्न में खबर मिली कि हूनान के-लाऊ-हुइ (क्रान्तिकारी दल) के दो नेता प्रदेश के राज्यपाल और उपराज्यपाल निर्वाचित हुए। उस दिन आसमान में बादल छाये हुए थे, और विद्रोह से लोगों में सनसनी फैली हुई थी। इतनी आसानी से विद्रोह को सफल होते देखकर सभी के चेहरे खिल उठे थे। यद्यपि मंचू-शासन की इमारत ढह रही थी, लेकिन अभी वह बिल्कुल नष्ट नहीं हुई थी। लड़ाई जगह-जगह जारी थी। चांगशा पर क्रान्तिकारियों का अधिकार हो गया था, लेकिन अब ऊपर दूसरी जगहों में कुमुक भेजने की जिम्मेवारी आ गई थी। वूचांग-हांगकाउ के क्रान्तिकारियों के पास सेना भेजी जा रही थी, और साथ ही नये सैनिकों के भरती करने का काम जारी था। कुछ उत्साही तरुणों ने एक छात्र-सेना तैयार की। माओ चे-तुंग छात्र-सेना को खिलवाड़ समझता था, इसलिए वह क्रान्तिकारी सेना में शामिल होना चाहता था, जहाँ कि बाकायदा सैनिक-शिक्षा प्राप्त करके लड़ने का मौका मिल सकता था। वह सोचता था : 'सफल क्रान्ति के लिए लड़ना आवश्यक है, इसलिए क्रान्ति की अच्छी तरह सेवा करने के लिए बाकायदा सिपाही बनना चाहिए।'

माओ चे-तुंग इस समय अठारह साल का था और अपनी आयु की अपेक्षा अधिक लम्बा भी था। अपनी ऊँचाई के कारण श्यांग-श्यांग विद्यालय का प्रिंसिपल उसे अपने यहाँ दाखिल नहीं करना चाहता था, लेकिन यहाँ सेना में लम्बे आदमियों की बड़ी माँग थी। वह जल्दी ही सेना में भरती कर लिया गया। उसकी कम्पनी न्यायालय के भीतर डेरा डाले पड़ी थी। बाकायदा कवायद-परेड के अतिरिक्त रँगरूटों को और कितने ही काम करने पड़ते थे। अपने अफसरों की चारपाई, बिस्तरा, पोशाक, टोकरी आदि ढोकर वही एक जगह से दूसरी जगह ले जाते थे। कुछ को प्रतिदिन नगर से बाहर श्वेत-बालुका-कूप पर अपनी रसोई और अफसरों की चाय के लिए पानी लाने के लिए जाना पड़ता था। माओ चे-तुंग सिपाही था, और सुशिक्षित भी। अपने साथी सिपाहियों के साथ जल्दी ही उसकी घनिष्ठता बढ़ गई, और अफसर भी उसे पसन्द करने लगे। सिपाही माओ के पास चिट्ठी पढ़ाने-लिखाने के लिए आते। वह कभी उनके काम से इन्कार नहीं करता था। सिपाहियों के साथ बात

करते वक्त वह उनकी पारिवारिक पृष्ठभूमि के अध्ययन करने की कोशिश करता। उसे मालूम हो गया कि उनमें से अधिकांश भले और ईमानदार किसान हैं, कुछ थोड़े-से खान-मजदूर, लोहार तथा दूसरे शिल्पकार हैं। चे-तुंग का उनके साथ बड़ा अच्छा बर्ताव था और वे भी उसे अपना निजी मित्र समझते थे। एक सिपाही कुछ बदमाश-सा था, जिससे सभी घृणा करते भी भय खाते थे। उसका सामना एक दिन माओ चे-तुंग से पड़ा। उसने उसे ऐसा पाठ पढ़ाया कि फिर उसे माओ के सामने ढिठाई करने की हिम्मत नहीं पड़ी।

माओ चे-तुंग ने अपने आत्मचरित्र में लिखा है : "मेरी तनखाह प्रतिमास 7 डालर थी—जोकि आजकल फौज को मिलनेवाली तनखाह से अधिक ही थी। इस तनखाह में से दो डालर मैं भोजन पर खर्च करता। मुझे पानी के लिए भी पैसा खर्च करना पड़ता। सैनिकों को शहर से बाहर पानी लाने जाना पड़ता, किन्तु मैं विद्यार्थी था, पानी भरना मेरी शान के खिलाफ था, यह समझ कर मैं पैसा देकर पानी मँगवाता। मेरी बाकी बची तनखाह अखबारों पर खर्च होती। मैं अखबारों को बड़े चाव से पढ़ता। उस समय क्रान्ति-सम्बन्धी लेखों के लिखने में 'शी आंग कीआंग एर्पाउ' (एक दैनिक पत्र) की बड़ी प्रसिद्धि थी। उसमें समाजवाद की भी चर्चा होती थी। (समाजवाद) शब्द पहले-पहल मुझे इसी अखबार में पढ़ने को मिला। मैं दूसरे विद्यार्थियों तथा सैनिकों के साथ बराबर समाजवाद की चर्चा करने लगा, किन्तु वस्तुतः वह समाजवाद नहीं बल्कि वह सामाजिक सुधारवाद था। समाजवाद और समाजवादी तत्त्वों के ऊपर क्यांग-क्यांग-हू द्वारा लिखी किसी पुस्तक को भी मैंने पढ़ा।··· मेरी सैनिक टुकड़ी में हूनान का एक खनक और एक लोहार भी थे, जिनके साथ मेरी बड़ी घनिष्ठता थी।"

1911 ई. की क्रान्ति का अन्त मंचू-शासन के पतन के साथ हुआ। उस समय बहुत-सी राजनीतिक विचारधाराएँ फैली हुई थीं। तुंग-मेंग-हुइ (पीछे कुओ-मिन् तांग) के अतिरिक्त स्वतन्त्रता पार्टी, प्रगतिशील पार्टी, समाजवादी पार्टी इत्यादि कितनी ही पार्टियाँ दिखाई पड़ने लगी थीं, जिनमें से कुछ अचिरस्थायी तथा बहुत छोटे हलके तक ही सीमित थीं। समाजवाद के ऊपर छपे लेखों को पढ़ने के बाद, उस माओ चे-तुंग को कुछ छोटी-छोटी पुस्तिकाएँ भी मिलीं, किन्तु उनमें स्पष्टता और गम्भीरता की कमी थी। मालूम होता था, लिखनेवालों ने मूल पुस्तकों को बिना देखे सुन-सुनाकर लिखा था। माओ चे-तुंग तो भी उन पुस्तकों में से समाजवाद के तत्त्वों को समझने की कोशिश करने लगा और उससे उसको बहुत प्रेरणा और संतोष भी मिला। तुरन्त ही वह बड़े उत्साह के साथ अपने सैनिकों में समाजवाद को दुनिया और मानवता के लिए एकमात्र मुक्ति-पथ कहकर बातचीत करने लगा। तुंग-शान्-विद्यालय से आये उसे एक साल से अधिक हो गया था, लेकिन अब भी उसका अपने पुराने मित्रों से पत्र-व्यवहार था। उसने नये मुक्ति-पथ के बारे में जानकारी प्राप्त करके बड़े उत्साह के साथ अपने मित्रों को भी उसके सिद्धान्तों के बारे में लिखा।

चांगशा और वूचांग के सफल विद्रोह के बाद क्यांग-सी, शेन्-सी, शान्-सी, युन्न्, क्यांग-सू, चे-क्यांग, क्वांग-तुंग, क्वांग-सी, फूकियेन, शान् तुंग, जेचुआन, क्वेइ चाउ, कानसू और सिंग-क्वांग के प्रदेशों ने भी एक के बाद एक अपने को मंचू-शासन से स्वतंत्र घोषित किया। 260 वर्ष के शासन के बाद मंचू-राजवंश चीन से खत्म हुआ, लेकिन मरने से पहले उसने क्रान्ति की बाढ़ को रोकने के लिए काफी हाथ-पैर मारते, 19 सूत्री संविधान, सम्राट् के अधिकारों को बहुत सीमित करना, युवान् शि-काइ को प्रधानमंत्री बना, नये मंत्रिमंडल का निर्माण करना आदि के नाटक खेले। मंचुओं ने समझा था, युवान शि-काइ बड़े सामन्ती जमींदारों का नेता होने से हमारे साथ रहेगा। युवान शि-काइ की उत्तरी सेना ने सभी राजकीय अधिकारों को अपने हाथ में कर लिया। इसके बाद अब उसने क्रान्ति के साथ भुगतने का निश्चय किया। उसने बूचांग-हांग पर आक्रमण किया और हांग-काउ के सामने यांग-ची-क्यांग के दूसरे तट पर अवस्थित हान्-यांग पर अधिकार कर लिया। चांग-शुन् (1855-1923 ई. युवान शि-काइ के उत्तरी युद्धपति ने) नानकिंग की रक्षा करने का बहुत प्रयत्न किया, किन्तु उसे हार खानी पड़ी। पहले नवीन-सेना के नाम से प्रसिद्ध लोक-सेना नानकिंग पर चढ़ दौड़ी। क्रान्तिकारी नेताओं ने समस्त प्रादेशिक राज्यपालों के प्रतिनिधियों की एक संयुक्त बैठक उस समय शांघाइ में कर रक्खी थी। वह वूचांग-हांग-काउ में थोड़ा ठहरने के बाद नानकिंग गये। यहीं पर 'अस्थायी चीन गणराजय सरकार' कायम हुई,

जिसके संभापति डा. सुन् यात्-सेन् बनाये गये और साथ ही एक 'अस्थायी संविधान' तैयार करके जारी किया गया।

इस समय (1911-12 ई.) तक पश्चिमी देशों में कमकर-आन्दोलन और सर्वहारा-संगठन काफी मजबूत हो रहा था। 1845 ई. में ही मार्क्सवाद अस्तित्व में आया था। 1848 ई. में मार्क्स-ऐंगेल्स ने 'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' प्रकाशित किया। 1864 ई. में उन्होंने प्रथम इण्टर्नेशनल की स्थापना करके पश्चिमी देशों के कमकरों में राजनीतिक चेतना और एकता पैदा करने की कोशिश भी की। चीनी पूँजीवाद के उदय के साथ-साथ चीन में भी सर्वहारा (कारखानों के मजदूर) पैदा हो गये, लेकिन अभी उनमें न कोई वर्ग-चेतना थी, न उनका कोई मजबूत संगठन था। किसान, दस्तकार, निम्न-मध्यमवर्ग, बूजुर्आ-बुद्धिवादी तथा दूसरे क्रान्तिकारी अभी अपना कोई संगठन नहीं रखते थे, इनमें से कुछ में ही मामूली-सी राजनीतिक चेतना आई थी। क्रान्ति में सम्मिलित लोगों के अपने उसी तरह के भिन्न-भिन्न विचार थे, जिस तरह के भिन्न-भिन्न स्वार्थों और स्तरों के समाज से वे ले आये थे। अगर सब किसी एक बात पर एकमत थे, तो वह है 'मंचू-विरोध'। मंचुओं के खतम होते ही अब उनके स्वार्थ परस्पर टकराने लगे। क्रान्तिकारी शक्तियाँ अभी इतनी संगठित या सबल नहीं थीं कि वह कोई नया रास्ता निकालकर प्रवाह को उधर ले चलने में समर्थ होतीं। मंचू-शासन के नाश से क्रान्ति द्वारा जो फल मिला, उसे जमींदारों और सेठों, युद्धपतियों और नौकरशाहों ने अपने हाथ में कर लिया। भारत की स्वतन्त्रता का फल भी हम देख रहे हैं, सेठों और नौकरशाहों के हाथ में चला गया है। चीन के इसी वर्ग का मुख्य प्रतिनिधि और नेता युवान शि-काइ था।

माओ चे-तुंग के अपने प्रदेश हूनान की स्थिति में भी अब परिवर्तन हो गया था। तान येन्-काइ (1876-1903 ई., कुओ-मिन्-तांग शासन में ऊँचे पदस्थ) राज्यपाल होकर आया था। के-लाउ-हुइ के दोनों प्रमुख नेता च्याउ ता-फेंग और केन चो-शिन् विद्रोह के सफल संगठन करने के बाद मार डाले गये। क्रान्ति के कितने ही बड़े-बड़े नेता और समर्थक युवान शि-काइ से समझौता करने के लिए तैयार हो गए। उनको डर लगा कि कहीं चीन उत्तर और दक्षिण के दो भागों में बँट न जाय; इसलिए उन्होंने शान्ति से काम लेने की नीति बरतनी चाही। लेकिन उनमें कोई दम नहीं था, इसलिए युवान शि-काइ के सामने वह हर बात में दबने लगे। उन्होंने युवान की माँगों के अनुसार निम्न बातें स्वीकार कर लीं : मंचू-सम्राट के सिंहासन-च्युत् होने पर अब सुन् यात-सेन् राष्ट्रपति के पद को युवान शि-काइ के लिए खाली करें, नानकिंग सरकार तोड़ दी जाय, चीनी गणराज्य की राजधानी पेकिंग में रहे।

सुन् यात-सेन इस शर्त को पसन्द नहीं करते थे, लेकिन उनके साथियों में से अधिकांश ने उनका साथ छोड़ दिया, फिर वह अकेले क्या कर सकते थे ?

सुन् यात्-सेन ने पीछे स्वीकार किया, कि 1911 ई. की क्रान्ति असफल रही; लेकिन, तो भी उसे बिलकुल असफल नहीं कहा जा सकता, क्योंकि दुनिया के सबसे पुराने राजतन्त्र को खतम कर देवपुत्र सम्राट् की प्रतिष्ठा को धूल में मिला चीनी जनता ने एक जर्बदस्त बेड़ी को तोड़ दिया। चीन के इतिहास में क्रान्ति का बड़ा स्थान है, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता।

माओ चे-तुंग वाली पल्टन में उस वक्त किसी बड़े धावे या कूच की आपस में बड़ी चर्चा थी। माओ चे-तुंग के लोहार मित्र ने जब कहा :

"भाई, आजकल में हमारा कूच होगा। मेरे मन में हो रहा है, दो अक्षर घरवालों को लिख दूँ।"

माओ चे-तुंग उस वक्त बैठा अखबार पढ़ रहा था। उसने जब 'जल्दी की आवश्यकता नहीं है' कहा तो लोमार मित्र ने अपने आग्रह को फिर दोहराया। इस पर माओ चे-तुंग ने कहा—"हमारा कूच रद्द समझो। डा. सुन् और युवान शि-काइ में समझौता हो गया है।"

1911 के दिसम्बर में डा. सुन यात्-सेन चीन लौटे थे। उस समय उत्तरी और दक्षिणी चीन में दो सरकारें थीं, जिनके बारे में अभी हम बतला चुके हैं। युवान शि-काइ एक बड़ा सामन्त तथा शान्-तुंग प्रदेश का राज्यपाल रह चुका था। दरबार में चुगली लग जाने से उसे अपने पद से हाथ धोना पड़ा, लेकिन जब 1911 ई. में क्रान्ति

की लपटें चारों ओर दिखलाई देने लगीं, तो मंचुओं ने फिर उसे दरबार में बुलाकर प्रधानमंत्री का पद दिया था।

डा. सुन् ने राष्ट्रपति पद स्वीकार करते ही जनता के हित के लिए तीन सिद्धान्तों—जनतन्त्रता, राष्ट्रीयता और लोक-समृद्धि—के अनुसार शासन चलाने का निश्चय किया था। उन्होंने क्रान्ति के तीन उद्देश्य रक्खे : राजतन्त्र नष्ट करके पाश्चात्य ढंग की जनसत्ता स्थापित करना और विदेशी साम्राज्यवाद का मुकाबला करना। डा. सुन् में प्रचार और संगठन दोनों की अद्भुत शक्ति थी, लेकिन उनकी अपनी कोई मजबूत संगठित संस्था अभी मौजूद नहीं थी। तुंग-मेंग हुइ (क्रान्तिकारी साथी दल) की शक्ति और प्रभाव सीमित था, जिसे उन्होंने अब कुओ-मिन्-तांग (राष्ट्रीय लोक पार्टी) बना दिया था। पर उसमें अभी न कोई कड़ा अनुशासन था, न अच्छा संगठन। तरह-तरह के अवसरवादी उसके भीतर घुस आये थे। एक तरह से कह सकते हैं कि वह एक मंचू-विरोधी सम्मिलित संस्था थी। क्रान्तिकारी सेना और प्रचार आदि के खर्च के लिए मंचू-विरोधी सेठों की थैली की प्रतीक्षा करनी पड़ती थी। मंचू-वंश के खतम होने के बाद अब वह अपने लाभ के फिकर में थे। अब तक पश्चिमी साम्राज्यवादी उसी तरह मंचू-वंश के संरक्षक थे, जैसे अंग्रेज भारत में देशी रियासतों के। वह मंचू-सम्राट को शिखंडी बनाकर अपनी मनमानी जारी रखना चाहते थे। उन्होंने जब देखा कि मंचू-वंश की रक्षा करना अब हमारी शक्ति के बाहर की बात है, और उसकी आवश्यकता भी नहीं है, क्योंकि युवान शि-काइ जैसा खिलौना उनके हाथ में आ गया है तो युवान का समर्थन करना शुरू किया। दक्षिण के सेठ हमारे 'विरुद्ध नहीं जायँगे', इसका भी उन्हें विश्वास था, इसलिए अंग्रेज परराष्ट्र सचिव सर गडवर्ड ग्रेने, युवान शि-काइ और दक्षिण के क्रान्तिकारियों में समझौता कराने का प्रयत्न किया। उन्होंने साफ बतलाया कि मंचू-वंश के नष्ट होने का हमें कोई खयाल नहीं है, लेकिन नई सरकार का मुखिया युवान शि-काइ को होना चाहिए, नहीं तो पश्चिमी शक्तियों से दुश्मनी मोल लेनी पड़ेगी।

कुओ-मिन-तांग के उग्र नेता युवान शि-काइ का विरोध करने के लिए डा. सुन् पर जोर दे रहे थे, हूनानी-सेना उत्तरी चीन पर कूच करने के लिए तैयार थी, लेकिन जैसा कि अभी बतलाया, वह हो नहीं सका। 12 फरवरी 1912 को मंचू सम्राट को सिंहासन से हटा दिया गया। 14 फरवरी को डा. सुन्-यात्-सेन ने शि-काइ के लिए राष्ट्रपति के पद को खाली कर दिया। पश्चिमी साम्राज्यवादियों के घर घी के चिराग जलने लगे। 17 फरवरी को चार विदेशी राज्यों ने गणराज्य को भारी रकम कर्ज में दी।

माओ चे-तुंग का छह महीने का सैनिक जीवन अब खतम होने लगा। क्रान्ति के लिए अब सेना में रहकर वह कोई काम नहीं कर सकता था, इसलिए उसने सेना से इस्तीफा दे दिया।

5
कालेज-जीवन (1912-18 ई.)

1. विद्या के दीवाने

माओ चे-तुंग की उम्र इस वक्त 19 वर्ष की हो रही थी। सिपाहीगीरी छोड़ने के बाद अब उनको सबसे पहले खयाल आया—कहीं रहकर बाकायदा शिक्षा प्राप्त करना—आधुनिक ढंग से पढ़ाई करना। इसके लिए चांगशा से बढ़कर कौन स्थान हो सकता था, जिससे कि अब वह कुछ-कुछ परिचित भी हो चुके थे।

(1) **चांगशा नगरी में**—किस विद्यालय में प्रवेश हो, इसके लिए उन्होंने अखबारों में छपे विज्ञापन देखने शुरू किये। 'मिन् ली पाउ' से उनका पहले से परिचय था। अखबारों में तरह-तरह के विज्ञापन छपते रहते थे। पुलिस विद्यालय का भी एक विज्ञापन था। दूसरे विज्ञापन में साबुन बनाना सिखाने के विद्यालय की बात थी। इसमें चे-तुंग जैसे तरुण के लिए आकर्षण भी हो सकता था, क्योंकि उसमें फीस नहीं लगती थी, भोजन

भी मिलता था और उसके ऊपर से थोड़ा-सा मासिक भी। साबुन भी देश के लिए एक आवश्यक चीज है। माओ चे-तुंग ने पुलिस विद्यालय में जाने का खयाल छोड़ साबुन विद्यालय को पसन्द किया और नाम लिखाने की एक डालर फीस भी जमा कर दी। इसी बीच उनके एक विद्यार्थी मित्र ने अपने विद्यालय के गुणगान शुरू किये। वहाँ बाकायदा शिक्षा होती थी, कितनी ही आधुनिक विद्याओं का ज्ञान तीन वर्ष के भीतर कराकर पंडित बना दिया जाता। मित्र अपने विद्यालय का गुणगान करते नहीं अघाते थे। माओ चे-तुंग ने विद्यालय के बारे में सारी बातें घर लिखकर फीस के लिए पैसा माँगा। इसके बाद ही दूसरे मित्र ने कहना शुरू किया कि आर्थिक व्यवस्था के बिगड़ने के कारण, देश रसातल जा रहा है, इसलिए अर्थशास्त्रियों की बड़ी आवश्यकता है। चे-तुंग ने एक डालर इस मित्र के बतलाए हुए विद्यालय में भी नाम लिखाने का दे दिया, और प्रवेश हो भी गया था। इसी बीच फिर एक दूसरा विज्ञापन देखने में आया, जिसमें सरकार द्वारा चालित एक कालेज के पाठ्य-क्रम के बारे में लिखा हुआ था। विज्ञापन से यह भी मालूम हुआ कि वहाँ के अध्यापक अधिक योग्य हैं। इस विद्यालय में व्यापार की शिक्षा मुख्य तौर से दी जाती थी। एक डालर देकर यहाँ भी नाम लिखवा इसकी खबर पिता को दी। पिता पहले से व्यापारशास्त्र के ही पक्षपाती थे, और वह चे-तुंग को एक महाजन के यहाँ रखकर इस शास्त्र को सिखलाना चाहते थे, इसलिए वह इससे बहुत खुश हुए।

विद्यालय में दाखिल होने से पहले माओ चे-तुंग को यह पता नहीं था, कि वहाँ सभी विषयों की शिक्षा अंग्रेजी में दी जाती है, जिसका ज्ञान उन्हें नाममात्र को था। अंग्रेजी सिखानेवाला कोई ऐसा अध्यापक भी नहीं था, ऐसी अवस्था में उसमें और वक्त बरबाद करना बेकार था।

(2) प्रथम प्रादेशिक विद्यालय में—महीने-भर व्यापारिक विद्यालय में रहने के बाद अब उसे छोड़ माओ चे-तुंग ने फिर विज्ञापन देखने शुरू किए। प्रथम प्रादेशिक कालेज का पता लगा, जिसके लिए प्रवेश-परीक्षा भी देनी पड़ी। अपनी प्रतिभा और ज्ञान के कारण प्रवेश परीक्षा में वह सर्वप्रथम रहे। प्रिंसिपल और दूसरे अध्यापक अपने नये होनहार विद्यार्थी से बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने परीक्षा में एक निबन्ध लिखने के लिए दिया था। माओ का निबन्ध इतना सुन्दर था कि उन्हें विश्वास नहीं हुआ कि यह इस विद्यार्थी का लिखा हुआ है। इस पर उन्होंने दूसरा निबन्ध अपने सामने लिखने के लिए दिया। नवीन और प्राचीन चीनी-साहित्य को अवगाहन किये हुए गामड़े के इस प्रतिभाशाली किसान-पुत्र ने उसे भी बहुत सुन्दर तौर से लिख दिया। सभी अध्यापक अब तरुण का लोहा मानने लगे। माओ कालेज में दाखिल हो गया। लेकिन, पढ़ते समय देखा, कि पाठ्यक्रम बहुत ही सीमित तथा मामूली-सा है। वह उससे सन्तुष्ट नहीं हुआ और किसी तरह छह महीने बिताये। एक चीनी अध्यापक ने उसे इस समय पढ़ने में काफी सहायता दी। साहित्य की ओर विशेष अनुराग देखकर अध्यापक ने माओ को 'यू-पी तुंग-चियेन्' (इतिहास दर्पण) नामक पुस्तक दी। इस पुस्तक पर चियेन् लुंग की टीका भी थी। माओ को पुस्तक पढ़ने में बड़ा रस आया। उसने देखा कि पाठ्यक्रम में चाहे कुछ भी कमी हो, लेकिन स्वाध्याय द्वारा मैं अपनी ज्ञान-पिपासा को पूर्ण कर सकता हूँ, इसलिए उसने स्वयं अध्ययन की योजना बना ली।

विद्यालय के अध्यापक यांग चेन-ची की पहले ही दिन से माओ के ऊपर विशेष कृपा थी। यांग इंग्लैंड से पढ़कर आये थे, और वह राजनीति के अध्यापक होते हुए एक आदर्शवादी पुरुष थे। माओ का भी ऐसे आदर्शवादी अध्यापक के प्रति विशेष आदर होना स्वाभाविक था। यांग का पढ़ाने का ढंग भी अच्छा था। अपने विद्यार्थी को आगे बढ़ते हुए देखकर एक दिन यांग ने पीठ ठोंकते हुए माओ से कहा : "मानसिक शक्ति के ऊपर तुम्हारा लिखा निबन्ध बहुत सुन्दर था। मैंने तुम्हें सौ में सौ नम्बर दिये।" तांग नामक एक दूसरे शिक्षक भी माओ को पसन्द थे। एक दिन उनके पास से 'जनता का अखबार' लेकर माओ ने पढ़ा। उसमें दो विद्यार्थियों की तिब्बत की साहस-यात्रा वर्णित थी। उसे पढ़कर माओ को भी बहुत शौक हुआ, और उसने भी घुमक्कड़ी करने का स्वप्न देखा। उन्होंने गर्मियों के दिनों हाथ में बिना पैसा-कौड़ी के एक छोटी-मोटी यात्रा की भी। उससे वह इतना उत्साहित हुआ कि उसने मुफ्त यात्रा करने वाली तरुणों की मंडली बनाने के लिए अखबारों में लेख छपवाया। माओ के कहने के मुताबिक साढ़े तीन जवानों ने इसका जवाब दिया, जिनमें आधा जवाब

देनेवाला ली ली-सान नामक तरुण था। वह माओ से मिलने भी आया और उससे योजना पर चुपचाप बात सुनी और अपनी कुछ भी सम्मति दिये बिना चला गया। पीछे ली भी कम्युनिस्ट पार्टी में शामिल हुआ, लेकिन उसकी दृष्टि अव्यावहारिक ज्यादा साबित हुई।

(3) **स्वयं अध्ययन**—माओ विद्यालय की पाठ्य-पुस्तकों से अधिक अपने ऊपर विश्वास रखता था, इसलिए अब उसका समय स्वाध्याय में अधिक लगने लगा। चांगशा में कोई एकान्त पहाड़ी नहीं थी, लेकिन तिंग-वांग-ताइ नामक एक ऊँचा बड़ा टीला था, जिसके ऊपर जाकर देखने से दृष्टि बहुत दूर तक नहीं जा सकती थी। लेकिन, इसके ऊपर एक इमारत थी, जिसमें पुस्तकालय था। पहली मंजिल पर चीनी और विदेशी भाषाओं की पुस्तकें थीं। हूनान का यह पहला प्रादेशिक पुस्तकालय था और अभी थोड़े ही समय से आम पाठकों के लिए इसका दरवाजा खुला था। रोज जैसे ही दरवाजा खुलता, नियमपूर्वक सीधी-सादी पोशाक में एक लम्बा-सा तरुण धीरे-धीरे पुस्तकालय की ओर पग बढ़ाता। अपनी इच्छित पुस्तक को लेकर वह वाचनालय में एक मेज पर बैठ जाता और बीच में जरा भी रुके बिना तब तक पढ़ता रहता, जब तक कि पुस्तकालय के बन्द होने का समय न आता। जाड़ा हो या वर्षा, प्रतिदिन वह इसी तरह से आकर पढ़ता रहता। बीच में वह थोड़ी देर के लिए क्षुधा शान्त करने के वास्ते कुछ रोटियाँ लेकर खाने के लिए बाहर जा फिर लौट आता। माओ चे-तुंग के अपने शब्दों में ही वह पुस्तकालय की पुस्तकों के ऊपर क्या पड़ता मानो "बैल को बारी में छोड़ दिया गया।" माओ ने इस पुस्तकालय में प्राचीन साहित्य, इतिहास, दर्शन आदि पर चीनी भाषा की कितनी ही सुन्दर पुस्तकें पढ़ीं। विदेशी साहित्य इतिहास, भूगोल और दर्शन ने भी उसका ध्यान अपनी ओर खींचा। इसी समय चे-तुंग ने अर्थशास्त्री ऐडम स्मिथ की पुस्तक 'राष्ट्रों का धन', चार्ल्स डार्विन की 'प्राणिजातियों की उत्पत्ति', टामस हक्सले की 'विकास और आचारशास्त्र', जान स्टुअर्ट मिल का 'तर्कशास्त्र', हरबर्ट स्पेन्सर का 'समाशास्त्र का अध्ययन', मोन्तेस्कू की 'विधान की आत्मा' पढ़ी। इसी तरह रूस, प्राचीन ग्रीस और रोम के कुछ महान् ग्रन्थकारों की कृतियों को भी पढ़ने का उसे वहाँ मौका मिला। वस्तुतः माओ चे-तुंग ने विदेशी भाषाओं से चीनी में अनुवादित ग्रंथों में से शायद ही किसी पुस्तक को उस समय छोड़ा हो। पुस्तकालय की दीवाल पर एक बहुत बड़ा दुनिया का नक्शा टँगा था, वह भी माओ चे-तुंग का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किये बिना नहीं रहता था। उधर से गुजरते समय वह अवश्य थोड़ी देर ठहरकर उसे बड़े ध्यान से देखता।

पुस्तकालय में सारा दिन बिताने के बाद चे-तुंग शाम को अपने बासे में लौटता। छह महीने तक माओ ने इसी तरह जीवन बिताया। माओ अध्ययन के सम्बन्ध में अपने जीवन के इस आधे साल को बहुत ही मूल्यवान समझता था। पिता खर्च भेज रहे थे, लेकिन जब उन्हें मालूम हुआ कि पुत्र न तो बाकायदा किसी स्कूल में पढ़ता है और न कोई काम ही कर रहा है, तो उन्होंने पैसा भेजना बन्द कर दिया। माओ खर्च बहुत संकोच से करने लगा, लेकिन तब भी वह कितने दिनों तक चलता ? उसने पहले अपने वर्तमान बासे को एक और मामूली कोठरी में बदलना चाहा। फिर इधर-उधर कहीं पढ़ाने के काम की तलाश करने लगा। इसी समय एक दिन एक अखबार में उसने निम्न विज्ञापन पढ़ा :

"हूनान का प्रथम नार्मल विद्यालय
पढ़ना और रहना मुफ्त
ग्रेजुएट होने पर शिक्षा का काम
शिक्षा देश की नींव रखती है", इत्यादि

विज्ञापन पढ़कर माओ को बड़ी प्रसन्नता हुई। घर लिखने पर वहाँ से भी उत्साहजनक उत्तर आया। प्रवेश-परीक्षा में वह पास हुआ और कालेज में दाखिल हो गया।

2. कालेज में (1913-18 ई.)

प्रथम नार्मल विद्यालय (कालेज) चांगशा के दक्षिणी दरवाजे के बाहर म्याउ-काउ-फेंग नामक पहाड़ी के नजदीक अवस्थित था। माओ ने यहाँ डटकर पाँच साल अध्ययन करके बाकायदा शिक्षा समाप्त की। पढ़ने की उसमें धुन थी, और बहुत-से ग्रन्थों को अब तक वह स्वयं भी पढ़ चुका था। बीस से पच्चीस वर्ष की उम्र तक

इसी कालेज में पढ़ते माओ चे-तुंग ने ज्ञानवृद्धि के साथ-साथ सामाजिक जीवन के भी तजर्बे हासिल किये। इसी समय उसके विचार परिपक्व और दृष्टिकोण विस्तृत होने लगे। इसी कालेज में उसकी संगठन सम्बन्धी प्रतिभा का पहले-पहल जौहर देखने में आया। यहीं पर उसे कितने ही विद्यार्थी मित्र मिले, जो आगे चलकर उसके काम में बड़े सहायक साबित हुए।

माओ का नाम ङ श्रेणी में लिखा गया। पाठ्य-पुस्तकों के अतिरिक्त अपने स्वाध्याय को भी उसने पहले की तरह अखंड जारी रक्खा। ऐसे मेहनती, मेधावी और अहंकारशून्य मधुर बर्ताववाले तरुण के प्रति लोगों का विशेष अनुराग क्यों न होगा ? माओ के निबन्ध विद्यालय में बड़े चाव से पढ़े जाते। जब-जब वह निबन्ध लिखता, अध्यापक उसके निबन्ध को विभागाध्यक्ष (दीन) के आफिस के सामने दीवाल पर चिपका देते, और क्लास के बाद पढ़नेवालों की वहाँ सदा भीड़ लग जाती। चे-तुंग को इसका न अभिमान होता, न इतने से वह अपने को संतुष्ट मानता। वह भली प्रकार जानता था कि ज्ञान का विशाल सागर अभी बहुत कुछ उसके लिए अछूता है। वह क्लास के बाद के समय को भी पढ़ने में लगाता, रात को बहुत देर तक अपने रहने की कोठरी में पढ़ा करता। जब कालेज के चिरागों को बुझाने का बिगुल बज जाता, तो वह अपना छोटा-सा चिराग जला लेता, पास में बाँस की छोटी सलाई पड़ी रहती, जिससे समय-समय पर बत्ती के गुल को हटाकर रोशनी तेज कर चारपाई पर पड़े-पड़े पढ़ता। कितनी ही बार पढ़ते-पढ़ते सबेरा हो जाता।

लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि क्लास में नियमपूर्वक जाने से कभी वह चूका हो। हाँ, जिस वक्त कोई ऐसी समस्या अध्ययन के विषय में आ जाती, जो उसका ध्यान बहुत आकृष्ट करती, तो वह उसके हल करने में इतना लीन हो जाता कि क्लास में जाने की भी सुध न रहती। सामाजिक विज्ञान उसका बहुत प्रिय विषय था। यह स्वाभाविक भी था, क्योंकि सामाजिक और राजनीतिक समस्याएँ उसका ध्यान विशेष करके अपनी ओर आकृष्ट करती थीं। प्राकृतिक विज्ञान के अध्ययन में भी वह काफी समय और परिश्रम लगता। यद्यपि जिस विषय में उसकी ज्यादा दिलचस्पी होती, अपना सबसे अधिक ध्यान उसी की ओर लगाना उसकी आदत थी। चीन के इतिहास को वह बड़ी सावधानी से अध्ययन करता। एक बार उसने चीनी इतिहास पर लिखी गई सभी तरह की नई और पुरानी पुस्तकों को इकट्ठा किया और क्रम से एक के बाद एक अध्ययन करके उनके नोट लिये। उसकी इन नोटबुकों से एक पूरा बक्स भर गया।

(1) 'शूये वेन्' (पढ़ो और पूछो)–यांग हुए-चुंग कालेज में एक प्रसिद्ध अध्यापक थे, जिनका प्रभाव माओ और उनके साथियों पर विशेष पड़ा। यांग चांगशा के रहनेवाले थे, उन्होंने छह साल जापान और चार साल इंग्लैंड में अध्ययन किया था। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि एक ही प्रकार की संकेतलिपि में लिखे होने से किसी चीनी-छात्र को जापान में पढ़ने का बहुत सुभीता रहता है। यांग केवल आधुनिक ज्ञान-विज्ञान से ही सुपरिचित नहीं थे, बल्कि अपने देश की विचारधारा और दर्शन का भी उन्होंने गम्भीर अध्ययन किया था, विशेषकर सुंगकाल (960-1279 ई.) के दार्शनिकों को वह बड़े सम्मान की दृष्टि से देखते थे। पश्चिमी विचारकों में दार्शनिक कान्ट, स्पेन्सर तथा रूसो में उनकी बहुत दिलचस्पी थी। कालेज में वह आचारशास्त्र, तर्कशास्त्र, मनोविज्ञान, शिक्षा और दर्शन के अध्यापक थे। यद्यपि वह बहुत अच्छे वक्ता नहीं थे, लेकिन साथ ही उनके बोलने का ढंग दिलचस्प था, विद्यार्थी उनकी बातों को बड़े ध्यान से सुनते थे। उनके प्रिय विद्यार्थियों में माओ चे-तुंग, चाइ हो-शेन्[1], चन-चांग[2] और दूसरे थे।

---

1. चाई हो-शेन् माओ चे-तुंग के बहुत घनिष्ठ मित्र थे। वह श्यांग-श्यांग के रहनेवाले तथा बड़े ही मेहनती छात्र थे। पीछे वह फ्रांस चले गये, जहाँ पर उन्होंने चीनी विद्यार्थियों और मजूरों के बीच कम्युनिस्ट-समूह संगठित किया। चीन लौटने पर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की ओर से उन्होंने बहुत सफलतापूर्वक प्रचार का कार्य किया। 1931 ई. में उन्हें हांग-कांग में गिरफ्तार किया गया। अंग्रेजों ने उन्हें कान्तन के क्रान्ति-विरोधी कसाइयों के हाथ में दे दिया, जिन्होंने उन्हें दीवाल से बाँधकर भाले और संगीनों से छेद-छेदकर मारा–उनकी छाती संगीनों के घाव से छलनी हो गई थी।
2. चेन-चांग भी पीछे कम्युनिस्ट पार्टी में आये। बहस करने में वह जितने चतुर थे, उतने ही अच्छे सुवक्ता भी थे। 1928 ई. में कुओ-मिन्-तांग के कसाइयों ने पकड़कर उन्हें मार डाला, लेकिन मरने से पहले उन्होंने अपने दुश्मनों के सामने एक निर्भीकतापूर्ण जर्बदस्त भाषण दिया, जिससे वे लज्जित हो गये।

ये तीनों मित्र प्रोफेसर यांग के अधिक प्रिय थे। वे अक्सर इतवार के दिन उनके घर पर जाकर भिन्न-भिन्न विषयों पर बातचीत करते। यांग उनकी सहायता करने में जरा भी संकोच नहीं करते थे।

इतिहास और साहित्य के बाद माओ चे-तुंग का सबसे प्रिय विषय था दर्शन। इसे वह बड़े उत्साह और चाव के साथ पढ़ता। पढ़ने के साथ-साथ उसकी जिज्ञासा और तीव्र हो जाती। चांगशा में जब कोई बड़ा विद्वान् आता, तो माओ चे-तुंग उससे मिलकर अपनी जिज्ञासा की पूर्ति करते हुए ज्ञान बढ़ाने से बाज़ न आता। ऐसे विद्वान् से मिलने के बाद जो बातें उसे जानने को मिलतीं, आलोचना करते हुय उससे वह अपने मित्र को भी परिचित कराता। चांगशा में 'चुआन्-शान् सभा' नाम की एक संस्था थी, जिसमें मिंग काल (1368-1644 ई.) के महान् दार्शनिक वांग चुआन-शान् की शिक्षा के सम्बन्ध में व्याख्यान हुआ करते। इस दार्शनिक की गम्भीर देशभक्ति से माओ चे-तुंग विशेष तौर से प्रभावित हुआ था। माओ चे-तुंग कहा करता : "शूये वेन् (अध्ययन) शब्द बड़ा ही महत्त्वपूर्ण है, जिसमें शूये (अध्ययन) और वेन् (प्रश्न, पृच्छ) दोनों एक साथ आते हैं।"

(2) तितिक्षा और तपस्या–प्रोफेसर यांग पाश्चात्य ज्ञान और दर्शन के साथ-साथ पूर्वी ज्ञान और दर्शन के भी पंडित तथा प्रेमी थे। एक आदर्शवादी के तौर पर वह सामन्तों के भ्रष्ट जीवन के विरोधी तथा नवीन, जनतांत्रिक और वैज्ञानिक ढंग के जीवन को पसन्द करते थे। वह कहते थे कि सुबह के जलपान की आवश्यकता नहीं है, शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिए अच्छा है कि आदमी प्राणायाम और ध्यान करे, बारहों महीने ठंडे पानी में नहाये। अपने गुरु का अनुकरण माओ चे-तुंग, चे हो-शेन् और दूसरे बड़े उत्साह के साथ करने लगे। करीब-करीब दो साल तक उन्होंने नाश्ते को छोड़ रक्खा।

एक साल गर्मी की छुट्टियों में माओ, चाइ और एक दूसरे विद्यार्थी चांग कुन् तीने चांगशा के परले पारवाली नदी के तट के यूये-लू पहाड़ के ऊपर अवस्थित एक शाला में रहे। वह नाश्ता और ब्यालू दोनों नहीं खाते थे। उनका भोजन अधिकतर हरी मटर का होता। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि इसमें जितना भोजन की सादगी का खयाल था, उतना ही खर्च की कमी का भी। सबेरे वह पहाड़ के ऊपर ध्यान करने के लिए जाते, फिर नीचे उतरकर तालाब या नदी में स्नान करते। सारे छुट्टी के दिनों में उन्होंने ऐसा ही किया। उनकी इस तितिक्षा के प्रति बड़ी श्रद्धा थी। तितिक्षा में ठंडे पानी से नहाना ही पर्याप्त नहीं था, बल्कि उन्होंने चीन के बौद्ध तितिक्षयों की तरह धूप, हवा और वर्षा में कपड़े उतारकर रहने की साधना भी की। माओ चे-तुंग इन्हें 'सूर्यस्नान', 'वायुस्नान', और 'वर्षास्नान' के नाम से पुकारता था। शियांग नदी में एक छोटा-सा द्वीप था, जहाँ जाकर वह अक्सर तैरा करते। इसमें तो सन्देह नहीं कि शरीर को मजबूत करने के लिए यह साधनाएँ बुरी नहीं थीं। तरह-तरह के स्नानों और ध्यान-साधना के साथ-साथ 'कंठ साधने' का भी उन्हें शौक पैदा हो गया। वह पहाड़ के ऊपर चले जाते, और वहाँ से थांग-काल (618-907 ई.) के कवियों की मनोहर कविताओं को पढ़ते या चिल्लाते। कभी-कभी नगर के प्राकार के ऊपर चढ़कर माओ वहाँ से भी फेफड़े में हवा भरकर जोर से चिल्लाता। इस शाला में इस एकान्तवास के समय चे-तुंग ने अपने पास सिर्फ एक अँगोछा, एक छाता और कुछ कपड़े रख छोड़े थे। माओ चे-तुंग हमेशा एक लम्बे खाकी चोगे में रहा करता, जो कि दूसरों से भिन्न था। रात को तीनों मित्र आसमान के नीचे मैदान में सोते। काफी स्वच्छ हवा प्राप्त करने के लिए वह एक-दूसरे से दूर सोया करते। छुट्टियों के बाद कालेज लौटने पर जाड़े के आने तक वह बाहर खेल के मैदान में सोया करते। माओ चे-तुंग ने उस समय के बारे में अपनी डायरी में लिखा था :

"देवों के विरुद्ध लड़ना, क्या आनन्द !
पृथ्वी के विरुद्ध लड़ना, क्या आनन्द !"

पीछे 1920-21 ई. में चे-तुंग ने एक 'सप्ताह क्लब' संगठित की थी, जिसके सदस्य इतवार को चांगशा के उपनगरों के सुवर्णद्रोणी श्रेणी, रौप्यद्रोणी श्रेणी, बानरशिला आदि जैसे सुन्दर प्राकृतिक स्थानों में घूमने जाया करते। शरद् ऋतु में एक रात वह शियांग नदी के नीचे चाँदनी का आनन्द लेने गया, जहाँ से 'नारंग द्वीप' की पूरी परिक्रमा करते अगले दिन भिनसार को लौट सका।

माओ को भी एक समय कविता करने का शौक पैदा हुआ था, और अब भी कविता-प्रेम उनसे दूर नहीं

हुआ है। उनकी कविताएँ अच्छी भी होती हैं, लेकिन महान् नेता और चीन के भाग्यविधाता बनने के बाद चापलूसी के डर के मारे वह अपनी कविताओं को छपने नहीं देते। अपने तितिक्षा और तपस्या के दिनों में माओ चे-तुंग ने निम्न कविता लिखी थी :

"एकाकी ठंडी शरद में,
उत्तरवाहिनी शियांग नदी के साथ,
नारंगियों के द्वीप में,
मैंने देखा लाखों पर्वत सर्वत्र लाल
रँगी घनी पत्तियों से,
और पारदर्शक हरित नदी
जिसमें सैकड़ों नौकाएँ दौड़ रहीं।
बाज असीम आकाश में उड़ता,
मछलियाँ झुंडों में एकत्रित,
शीतल आकाश के नीचे जीवन नाना रूप में
स्वतन्त्रता के लिए फूट निकल रहा था।
मैंने एक एकाकी मीनार के तहखाने को खोला
और पूछा : विशाल ग्रह पर कौन,
प्राणियों के भाग्य का फैसला करता ?
बहुत साथियों के साथ दुबारा,
मैं इस स्थान पर आया,
मैंने बीते उत्साहमय दिनों को याद किया,
जब कि मेरे सारे मित्र तरुण
और भार-मुक्त, हृदय से कोमल थे,
और हाथ भी, जो लिखते और बाधा न जानते,
मुक्त किन्तु कोमल कल्पना पर अधिकार रखते।
हमने नदी और पहाड़ों की ओर संकेत किया,
जो सृजनात्मक बुद्धि को प्रेरित करते थे,
और लाखों परिवारों के शासक,
अतीत के ठाकुरों से घृणा करते थे,
क्या तुम भूल गये :
तीव्र बहते जलप्रवाह के बीच कैसे
लहरों पर आरूढ़ हमारी नौका आगे बह चली ?"

—(शिन्-युवान-चुन् के राग में लिखित)

1917 ई. में चांगशा में पढ़ते समय ही माओ चे-तुंग की माँ मर गई। माँ के प्रति माओ का असाधारण प्रेम था और जब तक वह शाउ-शान् में जीवित थीं, तब तक वहाँ उसके लिए आकर्षण था। अब वह उस मृदु स्नेहबन्धन से भी मुक्त था।

(3) घुमक्कड़ विद्यार्थी—माओ चे-तुंग अपने पाँच साल के कालेज-जीवन में नियमपूर्वक पढ़ने-लिखने में लगा रहा, लेकिन गर्मी की छुट्टियाँ उसे कुछ समय के लिए कालेज और स्वाध्ययन से मुक्त कर देतीं। यदि उसने अपनी एक छुट्टी को तितिक्षा और तपस्या में लगाया तो दूसरी छुट्टी को घुमक्कड़ी में लगाना पसन्द किया। अब की उसने अपने हूनान प्रदेश के भिन्न-भिन्न जिलों को देख आने का निश्चय किया। छुट्टी हुई। पाकेट में एक भी पैसा बिना वह तरुण पैदल चल पड़ा। बौद्ध पर्यटकों ने शायद उसे इस तरह की यात्रा के

लिए प्रोत्साहित किया। वह निंग-शियांग, पिंग-चियांग, ल्यू-यांग आदि पाँच जिलों में घूमा। धार्मिक तथा दूसरे तरह के लेखों को लिखकर पैसा कमाते, यात्रा का खर्च निकालते घूमना चीन में पहले से चला आता था, माओ चे-तुंग ने भी उसी तरीके को स्वीकार किया। उसकी आवश्यकताएँ बहुत ही सीधी-सादी और थोड़ी थीं। इस प्रकार बिना पैसे की यात्रा करते हुए वह किसानों के रीति-रवाज और जीवन का गंभीरतापूर्वक अध्ययन करता रहा। उसके उद्‌बुद्ध मस्तिष्क में अब किसानों की समस्याएँ ज्यादा स्पष्ट रूप में आने लगीं।

अगली गर्मियों की छुट्‌टी में चाइ हो-शेन् भी माओ का साथी बना और दोनों श्यांग यिन् यीयांग और यूये चाउ चुंग चिंग सरोवर की परिक्रमा करते घूमे। उन्होंने अपनी यात्रा यूवेलू पर्वत से शुरू की, जो कि चांगशा के बाहर है। हरेक के पास एक छाता, एक अँगोछा, एक जोड़ा देशी जूता और कुछ मामूली से कपड़े थे। अँगोछे को उन्होंने छाते से लपेट रक्खा था। स्थान छोड़ने से पहले चाइ हो-शेन् ने अपनी माँ और बहन (चाइ-चांग, आजकल अखिल चीन जनतांत्रिक महिलासंघ की अध्यक्षा) को कह दिया कि हम दो या तीन दिन में लौट आयेंगे, लेकिन दोनों करीब दो महीने बाद ही लौट सके। यूवेलू पर्वत से चलते-चलते वह युनवान मन्दिर गये और दो महीने की यात्रा पूरी करके यूवेलू पर्वत लौट आये, जिसके पास ही चाइ-परिवार का एक घर था। दोनों पर्यटकों ने अपनी यात्रा का विवरण परिवार को कह सुनाया : "हम रास्ते में पड़नेवाले विहारों के भिक्षुओं से किस तरह बात-व्यवहार करते, कैसे अभिलेखों को लिखकर जहाँ-तहाँ पैसा कमाते", इत्यादि। किसान पहले-पहल उनको सन्देह की दृष्टि से देखते थे, क्योंकि वह साधारण घुमक्कड़ भिक्षुओं या पंडितों जैसे नहीं दीख पड़ते थे।

कोई-कोई कहते शायद ज्योतिषी हैं। लेकिन, जब एक बार तरुणों के सामने बात करने के लिए वह राजी हो जाते, तो तरुण उन्हें मोह लेते और वह उनका बड़ा स्वागत-सत्कार करते। दोनों साथियों ने अपनी इस यात्रा में भिन्न-भिन्न गाँवों के रीति-रिवाजों और तरीकों के बारे में पूछ-ताछ की, किसानों के जीवन के बारे में जानकारी प्राप्त की : 'मालगुजारी कैसे ली जाती है ? किसानों और जमींदारों का सम्बन्ध कैसा है ? गरीब किसानों की क्या अवस्था है ?' अक्सर किसान उन्हें खाने-रहने के लिए बुलाते, लेकिन बहुत बार उन्हें खुले आसमान के नीचे सोना तथा पहाड़ी फल-फूल खाकर क्षुधा शान्त करनी पड़ी थी।

3. वैज्ञानिक दिमाग

कालेज में विद्यार्थियों को रात में पढ़ने के लिए एक विशेष शाला थी। यह दुमंजिला इमारत जब रोशनी से जगमगा उठती, तो विद्यार्थी वहाँ बैठ अपनी किताबों के भिन्न-भिन्न स्थलों को घोखने की कोशिश करते। उस समय माओ चे-तुंग को भी वहाँ देखा जा सकता था, लेकिन वह घोखने की जगह समाचार-पत्रों में लीन रहता, देश-विदेश की राजनीतिक और सैनिक स्थिति पर गंभीरतापूर्वक विचार करने में लगा रहता। इस अध्ययन का परिणाम यह हुआ था कि वह चीन तथा दुनिया की स्थिति का स्पष्ट विश्लेषण कर सकता था। जब प्रथम विश्वयुद्ध के वर्ष चल रहे थे, उस समय उसके साथी विद्यार्थी बराबर चे-तुंग से तत्कालीन सैनिक और राजनीतिक अवस्थाओं के बारे में सुना करते। आस्ट्रिया के युवराज की सेराजीवो में हत्या करने से लेकर कैसर विलियम द्वितीय के सेनाचालन, फिर जर्मनी और रूस के बीच में युद्ध-घोषणा, फिर जर्मनी और इंग्लैंड में युद्ध-घोषणा की बात बतलाते हुए वह कहता कि वेंर्दू में कैसे डटकर लड़ाई हुई और कैसे पश्चिमी साम्राज्यवादियों को आपस में लड़ते देखकर जापान ने उससे फायदा उठाते हुए चीन के ऊपर अपना जूआ लादने के खयाल से एक्कीस माँगें रक्खीं।

माओ के साथियों को यह सब सुनकर बड़ा आश्चर्य होता, और वह कहते : "हम भी अखबार पढ़ते हैं, लेकिन क्या बात है, जो हम उस तरह स्थिति का विश्लेषण नहीं कर सकते, जैसे कि तुम ?"

माओ चे-तुंग अब राजनीतिक विचारधाराओं को अपना चुका था। उसका तीव्र वैज्ञानिक मस्तिष्क अखबारों की पंक्तियों को पढ़ते हुए एक-एक बात का विश्लेषण करते, सम्बन्ध जोड़ते उसके भीतर छिपे हुए मूल कारणों तक पहुँचता। विदेशों की राजनीतिक घटनाओं और स्थितियों के बारे में बात करते समय वह अपने देश के

इतिहास और तत्कालीन स्थिति से तुलना किया करता। कालेज में दो अखबार आया करते, जिनमें एक शांघहाइ का था और दूसरा चांगशा का। स्कूल में विद्यार्थियों की संख्या अधिक थी। उनके लिए ये दोनों अखबार पूरे नहीं पड़ते थे। चे-तुंग अखबारों के महत्त्व को समझता, उन्हें दैनिक इतिहास मानता था। वह अपने लिए एक अलग अखबार मँगाया करता था। उसे ध्यानपूर्वक पढ़कर वह अखबारों की खाली हाशिया पर सभी पढ़े हुए भौगोलिक नामों को लिख डालता, फिर हाशियों को काटकर नत्थी कर लेता, और नक्शे की सहायता से नामों को अंग्रेजी में लिख डालता। उसके साथी पूछते : "क्या कर रहे हो ?"

"मैं अंग्रेजी लिखना सीख रहा हूँ," माओ का उत्तर होता, "और मैं दुनिया के सभी महत्त्वपूर्ण नगरों, बन्दरगाहों, सागरों, नदियों और पहाड़ियों को याद करना चाहता हूँ। आखिरी बात यह कि मैं अपने साधारण ज्ञान को बढ़ाना चाहता हूँ, क्योंकि अखबार जीवित इतिहास के स्रोत हैं।"

कभी-कभी वह घंटों अखबार में लीन रहता। उसके सामने एक चीनी और एक दुनिया का एटलस रहता। वह प्रत्येक स्थान के नाम को अखबारों में पढ़कर नक्शे में देखता। माओ की स्मृति बड़ी तेज थी। अगर किसी स्थान का नाम उसके सामने कहा जाय, तो वह तुरन्त बतला देता कि चीन के किस प्रदेश या जिले में अथवा बाहर कौन-से देश में किस जगह वह स्थान है। पीछे शांघाइ, चांग-शा और पेकिंग के अखबारों को वह इसी तरह ध्यान से उस समय तक पढ़ता रहा, जब कि उन्हें चिंग-कांग-शान में क्रान्तिकारी संघर्ष का नेतृत्व करना पड़ा। इतिहास और भूगोल दोनों को वह एक तरह बड़े ध्यान से पढ़ा करता। माओ चे-तुंग को अपने गुरुजनों मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन की तरह दुनिया के एक दूसरे विशाल भाग में महान् कार्य करना था, जिसकी तैयारी उन्होंने इसी समय की थी। कालेज में रहते हुए उन्होंने नेतृत्व, संगठन और प्रचार की कला का अभ्यास किया और साथ-साथ तदनुरूप सब प्रकार के ज्ञान का।

4. जन्मजात नेता

माओ चे-तुंग में, इसमें शक नहीं, जन्मतः नेतृत्व के सारे गुण मौजूद थे, लेकिन उसके लिए सभी साधनों से सम्पन्न होने की आवश्यकता थी, जिनका संचय माओ ने अपने इस पाँच वर्ष के कालेज-जीवन में किया। माओ को बहुत जल्दी अपने सहपाठियों के प्रेम और सम्मान को प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। वे प्रतिभावान् और मेहनती थे, उनका बर्ताव बड़ा ही सरल तथा स्नेहपूर्ण होता था। उनके विचार और निश्चय इतने पक्के और उचित होते थे, जिसे जानकर उनके सहाध्यायी अनुरक्त हुए बिना न रहते। उनके विचार उदार तथा प्रेरणादायक होते। सादगी और सरलता रखते हुए भी उनके चेहरे पर एक प्रकार की गम्भीरता और हास्य रहता। वह अपने सहाध्यायियों के लिए अनुकरणीय थे, इसमें शक नहीं। कितने ही विद्यार्थी उनके प्रभाव में आये, जिन्होंने अपने अध्ययन और चिन्तन में माओ को अपना आदर्श माना। बातचीत का उनका अपना एक सरल और दिलचस्प ढंग था। वह विज्ञान और साहित्य, वैयक्तिक गुणों और समसामयिक बातों के बारे में कहते, लेकिन वह कभी लोगों के प्राइवेट जीवन को अपने कथन का विषय न बनाते। अपनी पंडिताई दिखलाने का उन्हें कभी खयाल न होता और बात आने पर वह बहुत स्पष्ट किन्तु बिना जल्दी किये साफ तौर से खोल करके बतलाते। जब कोई दूसरी बात करता, तो जरा-सा सिर एक तरफ झुकाये वह बड़े ध्यान से सुनते और बीच में अक्सर कहीं-कहीं 'उम' (हाँ) भर कह देते। फिर जब उनकी बारी आती, तो एक-एक बात को लेकर उसका विश्लेषण करते हुए सामने रक्खी समस्या की महत्त्वपूर्ण बातों को लेते बहुत थोड़े शब्दों में सार निकालकर रख देते। उनकी टिप्पणियाँ हमेशा विषयान्तर में न जातीं, और सदा श्रोता के हृदय में प्रेरणा पैदा करतीं। लोग उनके सामने अपनी समस्याएँ लेकर आते, थोड़ी-सी बातचीत में वह उन्हें उनके सामने स्पष्ट करके रख देते। हरेक प्रश्न या समस्या का जवाब उनकी जीभ के नोक पर मौजूद रहता। माओ के और भी कितने ही गुण थे : लक्ष्य पर दृढ़ता, प्रज्ञा, निर्णय और तर्क की बहुत तीव्र और तीक्ष्ण शक्ति, तथा सभी तरह की समस्याओं का ध्यानपूर्वक सावधानी के साथ विचारपूर्ण निर्भीक हल। उनके सहाध्यायी और कितने ही पुराने क्रान्तिकारी साथी माओ के बारे में उचित शब्द न पाते। कोई कहता :

"माओ चे-तुंग सचमुच अद्भुत हैं—उनकी प्रतिभा अद्भुत है।"

माओ ने एक बार अपने सहपाठियों से कहा था :

"दुनिया में दो तरह के लोग होते हैं : एक वह जो कि वैयक्तिक बातों में अच्छे हैं, और दूसरे वह जो कि संगठन में। पहले प्रकार के लोग अपेक्षाकृत अधिक हैं। तो भी, हरेक आदमी के अपने विशेष गुण होते हैं, जो चाहे कितने ही सीमित क्यों न हों, उन्हें अच्छी तरह काम में तथा विकसित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। किसी आदमी के ऊपर फैसला देने के पहले हमें उसके गुणों की ओर देखना चाहिए।"

माओ चे-तुंग इसी दृष्टि से अपने साथियों और दूसरे आदमियों को देखते, और उनकी क्षमता को उपयोग में लाने में सहायता करते। अपनी इसी पारखी बुद्धि से वह इतने जबर्दस्त संगठनकर्ता और क्रान्तिकारी बने। वह अक्सर कहा करते : "लँगड़ा-लूला, बहरा-गूँगा और अन्धा भी क्रान्ति के काम में उपयुक्त हो सकता है।" पीछे अपने संगठन में काम करनेवालों के साथ बात करते हुए उन्होंने एक बार कहा था : "पहले यह देखो कि किसी साथी में क्रान्ति के प्रति अति प्रेम, मार्क्सवाद-लेनिनवाद में विश्वास आदि कौन-सी बात अपने जैसी है। फिर देखो कि उसमें सैद्धान्तिक निर्बलता आदि कौन से दोष हैं।" माओ चे-तुंग अपने सम्पर्क में आनेवाले व्यक्तियों में उसके गुणों और क्षमता से परिचय प्राप्त करके उनको उपयोग में लाने की हमेशा कोशिश करते रहे। दोषों के लिए कुढ़ना और धिक्कारना उन्हें उतना पसन्द नहीं है। उनका सिद्धान्त है "रोग मुक्त करना और बचाना, आदमी को सीधे रास्ते पर चलने में सहायता करना।"

(1) छात्र-संघ संगठन—संगठन की अद्भुत शक्ति को पहले-पहल दिखलाने का मौका माओ चे-तुंग को अपने इसी कालेज में मिला। उन्होंने वहाँ छात्रसंघ संगठित किया। यहीं से उनके सामाजिक कार्य और जनतन्त्रता के प्रचार का आरम्भ होता है। यहीं पर उन्हें संगठन के बारे में दोषों-गुणों के जानने और कड़वे-मीठे तजर्बों से फायदा उठाने का मौका मिला। हूनान क्या, सारे चीन में जिस तरह शिक्षा और शिक्षण-संस्थाओं का संचालन किया जाता था, उसमें तानाशाही और भ्रष्टाचार बहुत दिखलाई पड़ता था। किसी विद्यालय का मुख्याध्यापक बनने के लिए भिन्न-भिन्न अफसरों के कृपापात्र बनने की आवश्यकता थी, जिसके लिए उनको चापलूसी और अपने को बढ़ा-चढ़ाकर दिखलाने का प्रयत्न करना पड़ता। कितनी ही बार रिश्वत भी देनी पड़ती। विद्यालय का मुख्याध्यापक बनते ही आदमी अपने भाई-भतीजे-भांजों और मित्रों को मुख्य-मुख्य स्थानों पर बैठाना जरूरी समझता। अक्सर अयोग्य आदमी इन पदों पर बहाल कर दिये जाते, और विद्यार्थियों को यह सब देखते हुए भी आवाज उठाने की हिम्मत न होती। पैसा-कौड़ी का सारा नियंत्रण हेडमास्टर या प्रिंसिपल के हाथ में रहता। वह उन्हें अपने निजी धन के तौर पर खर्च करता। विद्यार्थियों को पैसा लेकर जो भोजन दिया जाता, वह बड़ा रद्दी होता। अपने बड़ों के सामने पूँछ हिलाना और छोटों को घुड़कते रहना, बस यही चारों ओर देखा जाता। युवान शि-काइ के राष्ट्रपति होने के समय सारे प्रिंसिपल और हेडमास्टर पुराने शासन के समर्थक थे। 'राष्ट्रपति की हिदायत' बड़े मोटे-मोटे अक्षरों में हरेक स्कूल के सभा-भवन की दीवाल पर टँगी रहती जिसमें विद्यार्थियों को कहा जाता : 'विद्रोह न करो, अध्यापकों का सम्मान करो' इत्यादि। जब हाल में विद्यार्थी जमा हो जाते, तो कोई अध्यापक उठकर राष्ट्रपति की हिदायत को बड़े ऊँचे स्वर पढ़ता। विद्यार्थी स्वभावतः ही उसकी ओर ध्यान न देते और बीच में हल्ला-गुल्ला मचाते। अधिकांश हेडमास्टर या प्रिंसिपल किसी न किसी तरह से सरकारी अधिकारियों से सम्बद्ध थे, इसलिए वह नहीं चाहते थे कि विद्यार्थी अपने पढ़ने-लिखने से बाहर किसी क्षेत्र में कोई काम करें। विद्यार्थियों को अपनी पाठ्य-पुस्तकें पढ़ने के लिए दी जातीं, लेकिन विद्यालय में भी या बाहर किसी दूसरी कार्रवाई में भाग लेने का मौका न दिया जाता। यही अवस्था उस कालेज की भी थी, जिसमें माओ चे-तुंग पढ़ते थे।

मंचू-वंश खतम हो गया था, तो भी युवान शि-काइ ने शासन के पुराने ढाँचे को बनाये रखने की कोशिश की थी। लेकिन, सदियों से चले आते देवपुत्र का रोब 1911-12 ई. की क्रान्ति ने उठा दिया था, इसलिए विद्यालय के तरुण हरेक बात को चुपचाप मानने के लिए तैयार नहीं हो सकते थे। कितने ही मर्तबे वह असंतुष्ट होकर विद्यालय के अधिकारियों के खिलाफ हड़ताल कर बैठते और प्रादेशिक सरकार से नये प्रिंसिपल को भेजने की

माँग करते। माओ चे-तुंग विद्यार्थियों के हितों के पक्षपाती थे। वह प्रबन्धकों के स्वेच्छाचार और भ्रष्टाचार के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए हमेशा तैयार रहते। उनमें योग्यता और दृढ़ता दोनों एक समान मौजूद थीं। विद्यार्थी अपने तरुण सतीर्थ्य को भलीभाँति जानते थे, इसीलिए उन्होंने माओ को अपना नेता चुना था। एक बार विद्यालय के अधिकारियों ने इसके लिए उन्हें निकाल बाहर करने की कोशिश की, लेकिन वह इसमें सफल नहीं हो सके, क्योंकि सारे विद्यार्थी माओ के समर्थक थे, और कितने ही अध्यापक भी माओ के पक्षपाती थे।

माओ चे-तुंग ने अपने सहाध्यायियों का पूर्ण समर्थन प्राप्त कर कुछ कर्मठ विद्यार्थियों के साथ मिलकर जनतन्त्रतावादी एक युवान शि-काई विरोधी प्रधानाध्यापक के आने के समय अवसर पा एक छात्र-संघ संगठित कर लिया। हूनान के शिक्षणालय में पहले ऐसा नहीं हुआ था। छात्र-संघ का विद्यार्थियों के ऊपर बहुत जबर्दस्त प्रभाव हो गया। विद्यालय में जब कोई प्रबन्ध या शिक्षा-सम्बन्धी बैठक होती, तो छात्र-संघ के प्रतिनिधि को वहाँ अवश्य बुलाया जाता। अधिकारी तब तक किसी नियम-उपनियम या कार्रवाई के करने की हिम्मत नहीं रखते थे, जब कि छात्र-संघ उसे मंजूर न कर ले। छात्र अपने छात्र-संघ द्वारा अपनी माँगों को रखते थे। छात्र-संघ के संगठित हो जाने के बाद, पढ़ाई, रोजमर्रे के जीवन, अनुशासन, पाठ्य से बाहर के पढ़ने-लिखने आदि सम्बन्धी समस्याएँ बड़ी आसानी से हल कर ली गईं। विद्यालय के छह सौ विद्यार्थी माओ चे-तुंग को अपना नेता मानते थे। उनके इशारे पर सारा स्कूल उठ खड़ा होने के लिए तैयार रहता।

कुछ समय तक स्कूल का जीवन बड़ा ही उत्साहवर्द्धक रहा। विद्यार्थियों के कामों की प्रदर्शनी की जाती, अखाड़े में कुश्तियाँ लड़ी जातीं। अनुसन्धान-मंडली में विशेष-विशेष विषयों पर वाद-विवाद और भाषण होते। प्रदर्शनी में माओ चे-तुंग के सुलेख बहुत पसन्द किये जाते। चीनी लिपि चित्र जैसी लिपि है, जिसके लिखने के लिए चित्रकार की तरह तूलिका इस्तेमाल की जाती है। माओ चे-तुंग की लिपि बहुत सुन्दर होती थी। विद्यालय देखनेवाले हमेशा अपनी सम्मति-पुस्तक में लिखते समय माओ चे-तुंग का विशेष तौर से उल्लेख करते। यह छात्र-संघ माओ के अपने कालेज में बराबर तब तक उसी तरह सक्रिय रहा, जब तक कि जापानी आक्रमण के विरुद्ध युद्ध नहीं आरम्भ हो गया। देश के सामाजिक और राजनीतिक आन्दोलनों में भिन्न-भिन्न छात्र-संगठनों ने बड़ा महत्त्वपूर्ण काम किया था।

(2) युद्धपतियों का विरोध—तान् येन्-काइ के बाद तांग शियांग-मिंग हूनान का सैनिक राज्यपाल बनकर आया। युवान शि-काइ ने इसे उस समय राज्यपाल बनाकर भेजा, जब कि वह गणराज्य को उठा अपने को सम्राट घोषित करने लिए उतारू था। तांग तुंग-मेंग हुइ का मेम्बर था, पर वस्तुतः वह मंचुओं का खरीदा गुप्तचर था। हूनान में आते ही उसने कई आदमियों को मरवाया, जिसके कारण लोग उसे 'कसाई तांग' कहने लगे। जब युवान शि-काइ ने अपने को सम्राट घोषित कर दिया, तो तांग को मारक्विस (राजा) की उपाधि प्रदान की। लेकिन, सम्राट युवान अधिक दिनों तक शासन नहीं कर सका। युन्नान पहला प्रदेश था, जिसने उसके खिलाफ बगावत की। उसके बाद दूसरे प्रदेशों ने भी उसकी नकल की। 'गणराज्य रक्षासेना' ने संगठित हो जेचुआन, हूनान और क्वेइ-चाउ पर कूच कर दिया। सुन्-यात् सेन् ने भी युवान शि-काइ के विरुद्ध काम करने के लिए यांग-जी-उपत्यका में अपने आदमी भेजे। गण सम्वत्सर 5 (1916 ई.) में हूनान में लिन् छू-हान (आजकल केन्द्रीय जन सरकार के महासचिव लिन् पो-चू) और दूसरों ने 'तांग को भगाओ' का आन्दोलन शुरू कर दिया। युवान शि-काइ ने जब देखा, कि इतने अधिक प्रदेश हमारे खिलाफ हो गये हैं, तो उसने सम्राट के सिंहासन को छोड़कर फिर राष्ट्रपति के पद पर लौटने का निश्चय किया। वह केवल सौ दिनों से थोड़ा ही अधिक सम्राट रहा।

'गणराज्य रक्षासेना' दृढ़ होती गई। जल्दी ही और कितने ही प्रदेशों ने भी अपने को स्वतन्त्र घोषित किया। चारों ओर गड़बड़ी छाई हुई थी। युवान शि-काइ भयभीत और हताश हो जल्दी ही (1917 ई. में) मर गया। हूनान के राज्यपाल तांग शियांग-मिंग को भी अपने पद से हाथ धोना पड़ा।

युवान के मरने के बाद 1 जुलाई, 1917 को मंचू-पिट्ठू चांग शुन् ने गद्दी से उतार पू-यी को फिर से मंचू-सम्राट बनाना चाहा, लेकिन 10 जुलाई को उसे हार खानी पड़ी। इसके बाद फेंग कुओ-चांग राष्ट्रपति और

तुआन ची-जुइ प्रधानमन्त्री बने। तुआह ची (1864-1936 ई.) युवान शि-काइ का दाहिना हाथ था। अब हूनान पर शासन करने के लिए उत्तरी युद्धपतियों की गुट का एक आदमी फू लियांग-चो नया सैनिक राज्यपाल बनाकर भेजा गया। उत्तर के राज्यपाल का मुकाबला करने के लिए तान् येन्-काइ ने दक्षिणी गुट से मदद माँगी और साथ ही मुकाबले के लिए हूनान में सैनिक तैयारी की। इस आपस की धींगामुश्ती में चारों ओर गड़बड़ी फैल गई। चांगशा के स्कूलों में अक्सर सेनाएँ जबर्दस्ती बैठ जातीं, और विद्यार्थियों का पढ़ना-लिखना बन्द हो जाता।

इसी समय 'गणराज्य रक्षासेना' ने फू लियांग-चाउ की उत्तरी सेना को करारी हार दी और वह चांगशा की ओर पीछे हटने लगी। फूकी सेना ने कई स्कूलों की इमारतों को अपने लिए खाली कराना चाहा। प्रथम नार्मल विद्यालय चांगशा के दक्षिणी दरवाजे के बाहर था और उसकी इमारत भी आधुनिक ढंग की विशाल तथा बहुत सुन्दर थी, इसलिए हारी हुई सेना के एक भाग ने उसे अपने लिए लेना चाहा। प्रबन्ध-विभाग तथा लोगों के समझ में नहीं आ रहा था कि क्या किया जाय। इसी समय माओ चे-तुंग ने विद्यालय की रक्षा का काम अपने हाथों में लिया और सभी कुश्तीबाजों को संगठित कर स्कूल के दरवाजों को रोक, डेस्कों और कुर्सियों को ला, रोक लगा दी। फिर उत्तरी सिपाहियों में से कुछ बन्दूकें लेकर वह वहाँ डट गये। अब वह हथियारबन्द हो विद्यालय की प्रतिरक्षा के लिए तैयार थे। गोलियों की आवाज सुनकर कितने ही कायर विद्यार्थी और अध्यापक छात्रावास के पीछे के सेहन में जा छिपे। स्कूल के बड़े रोब गाँठने वाले सभी जवाबदेह अधिकारी तथा अध्यापक भी अब भीगी बिल्ली की तरह माओ चे-तुंग की आज्ञा मानने के लिए तैयार थे। भगोड़ी सेना को जब यह मालूम हुआ तो कुछ गोलियाँ चलाकर वह वहाँ से आगे बढ़ गई।

इसके बाद माओ चे-तुंग और उनके कुछ विद्यार्थी साथी विद्यालय के पीछेवाले पहाड़ पर गये और वहाँ गड़बड़ी पैदा करनेवाले सिपाहियों को उन्होंने बहुत दुत्कारा। कालेज की इमारत और उसका सारा सामान सुरक्षित बच रहा। माओ चे-तुंग का यह काम पहली सैनिक कार्रवाई थी।

चीन में गणराज्य स्थापित हो जाने के बाद कुछ वर्ष सारे देश में गड़बड़ी फैली रही। मध्यम वर्ग ने और पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने मंचू-वंश को हटाकर युवान शि-काइ को बैठाया था। युवान ने कामन्तवाद ही को कायम नहीं रखना चाहा, बल्कि अपने एक नये राजवंश को चलाने का भी असफल प्रयत्न किया। अब सारे देश में जगह-जगह युद्धपति अपना स्वतन्त्र शासन कायम करने का प्रयत्न कर रहे थे, जिसके कारण एक की जगह दर्जनों राज्यों के अस्तित्व में आने का डर था, इसलिए फिर से क्रान्ति की जरूरत पड़ी। 'गणराज्य प्रतिरक्षा सेना' ने फिर अभियान शुरू किया। युन्नन्, क्वेइ चाउ क्वान्तुन और क्वान् ती ने दूसरी बार अपनी स्वतन्त्रता घोषित की। युद्धपतियों ने उत्तर-दक्षिण का झगड़ा भी खड़ा कर दिया था। गणराज्य के नये राष्ट्रपति फेंग कुओ-चांग ने दक्षिण को संतुष्ट करने के लिए तान येन्-काइ को हूनान का सैनिक-राज्यपाल नियुक्त किया, लेकिन अन्-ह्वेई (तुआन) की गुट अब भी तलवार को म्यान में रखने के लिए तैयार नहीं थी। इस पर फेंग ने चांग-याउ और दूसरे जेनरलों के अधीन एक बड़ी सेना हूनान-कयांग सी प्रदेश में भेजी। तुआन ची-जुइ ने अपनी ओर से चांग चिंग याउ को हूनान का सैनिक राज्यपाल नियुक्त किया। चांग की सेना उस समय चांगशा के पास पड़ी हुई थी। युद्धपति जब स्वयं डाकू थे, तो उनके सिपाहियों में अनुशासन कैसे रह सकता था ? सिपाहियों के बर्ताव से लोग तंग आ गये थे। चांग ने हूनान के सभी प्रगतिशील तत्त्वों को दबा डालने की पूरी कोशिश की। माओ चे-तुंग का चुप रहना मुश्किल था। उन्होंने 'चांग को निकाल बाहर करो' का नारा दे उसके खिलाफ पहले से भी बड़ा अभियान संगठित किया—पहला अभियान उन्होंने अपने कालेज के दुष्ट प्रिंसिपल चांग कान् के खिलाफ संगठित किया था। माओ चे-तुंग का यह अभियान युद्धपतियों के विरुद्ध आन्दोलन का सूत्रपात था, जो हूनान से आरंभ हुआ, किन्तु बढ़ते-बढ़ते अन्त में सारे देश में फैल गया।

5. सार्वजनिक जीवन में

हम देख चुके कि माओ चे-तुंग के कार्यक्षेत्र ने परिस्थितियों से मजबूर होकर अब कालेज के सीमित क्षेत्र में न रहकर विशाल रूप लिया। 23 वर्ष में माओ चे-तुंग अब इस योग्य भी हो चुके थे, कि वह विशाल क्षेत्र

में अपने जौहर को दिखलाते।

(1) 'नूत्न जनता संघ' (1971 ई.)—कालेज के विद्यार्थियों का दृढ़ संगठन करने के बाद माओ का प्रभाव बाहर के विद्यार्थी मंडल में पड़ने लगा और सलाह-मशविरा करने के लिए दूसरी जगह के विद्यार्थी भी उनके साथ पत्र-व्यवहार करने लगे। यह वस्तुतः छोटे रूप में हमारे यहाँ के 'नौजवान सभाओं' की तरह की संस्था थी। पेकिंग युनिवर्सिटी के प्रोफेसर चेन् शू शिउ—जो वहाँ साहित्य-विभाग के अध्यक्ष भी थे—के सम्पादकत्व में 'नौजवान' पत्र निकलता था, जिससे तरुणों के इस नये संगठन के अस्तित्व में आने में प्रेरणा मिली थी। जिस तरह माओ चे-तुंग ने चांगशा में 'नूतन जनता-संघ' स्थापित किया था, उसी तरह तियेन-चिन् में चाउ एन-लाइ और उसकी भावी पत्नी तांग यिंग चाउ ने भी 'नूतन जनता संघ' स्थापित किया था। प्रोफेसर चेन् समझते थे कि ऐसे सार्वजनिक संगठन और आन्दोलन के लिए जनता के समझ में आनेवाली भाषा द्वारा प्रचार करना अधिक लाभदायक हो सकता है, इसलिए साहित्य के प्रकांड पंडित होते हुए भी उन्होंने भाषा की सुगम शैली अपनायी। चेन् की लेखक के तौर पर पहले ही से ख्याति थी। वह मार्क्सवाद में विश्वास रखते थे। 1921 ई. में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना में भी उनका हाथ था। माओ चे-तुंग को चेन् की लेखन-शैली बहुत पसन्द आई, उन्होंने भी उसी को अपनाया। 1917 ई. की गर्मियों में चांग शा के सभी स्कूलों की दीवालों पर एक छपा हुआ छोटा-सा कागज चिपका देखा गया। उस पर स्पष्ट अक्षरों में कुछ पंक्तियाँ लिखी हुई थीं, जिनके आरम्भ में पुरानी साहित्यिक भाषा में लिखा हुआ था : 'ओरियोल* चहचहाती मित्रों की खोज में है।' इसमें लेखक ने देश की मुक्ति के लिए लोगों को आगे आकर लेखक और उसके साथियों के साथ मिलने का निमन्त्रण दिया था। यह नौजवानों के लिए एक खुला पत्र-सा था। पत्र पर '28 लकीरों' के सिवा और कोई हस्ताक्षर नहीं था—चे-तुंग के तीन चीनी संकेताक्षर 28 लकीरों से बनते हैं।

चांगशा के अखबारों में भी यह नोटिस छपी थी। उसे पढ़कर कई दर्जन तरुणों ने जवाब दिया, जिनमें से कुछ दूसरे कालेजों और अधिकांश माओ के अपने कालेज के विद्यार्थी थे।

शरद का मौसम आया। गर्मियों की छुट्टियाँ खत्म हो गईं। विद्यार्थी अपने स्कूल-कालेजों को लौटे। जाड़े के आने से पहले ही मापल की अंगार की तरह लाल पत्तियाँ गिरने लगी थीं। यूयेलू पहाड़ी की जड़ में चै हो-शेन् के परिवार का भाड़े का घर था। उसी में तीस के करीब आदमी एकत्रित हुए। मध्याह्न और सायंकाल के भोजन के बीच के समय में उन्होंने एक संगठन की आवश्यकता, उसके नाम तथा नियमोपनियम पर विचार किया। इसी के परिणामस्वरूप माओ चे-तुंग ने शिनमिन सभा (नूतन जनता-संघ) की स्थापना की। माओ चे-तुंग संघ के संस्थापक और संगठनकर्ता थे। उन्हें ही मंत्री का पद सँभालने के लिए भी कहा गया। लेकिन, माओ उसे इन्कार करके उपमंत्री बने रहने के लिए राजी हुए। संघ का उद्देश्य था 'चरित्र-निर्माण विद्वत्तापूर्ण अनुसन्धान'। संघ के नियमों में जुआ खेलना, वेश्यालयों में जाना और उठाईगीरी करना निषिद्ध था। इसी संघ ने चांगशा के सभी प्रगतिशील तरुणों को पहले-पहल एकताबद्ध करने का प्रयत्न किया।

यह संघ एक छोटी चिनगारी थी, किन्तु हूनान में निकली यह चिनगारी लेनिन के 'इस्का' की तरह सारे चीन में विशाल दावाग्नि लगाने में सफल हुई। आरंभ में इसके सत्तर-अस्सी सदस्य थे, जिनमें से करीब-करीब सभी आगे चलकर चीन के कम्युनिस्ट आन्दोलन में प्रधान कार्यकर्ता बने, और चीनी-क्रान्ति के इतिहास ने उनके नाम को अमर कर दिया। 1924-27 ई. की क्रान्ति के असफल होने पर कसाई चांग काई-शेक और उसके गीदड़ों के हाथों इनमें से कितने ही शहीद हुए।

(2) द्वितीय क्रांति के शहीद—कुओ लियांग—यह शियांग-यिन् के निवासी तथा हूनान के कमकरों के नेता थे। कद में छोटे लेकिन कार्य करने की अद्भुत क्षमता रखते थे। क्रान्ति के असफल होने पर चांगशा में उन्होंने वीरगति प्राप्त की।

शियांग सिंग-यू—यह शूपू (हूनान) की निवासिनी, तथा चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की प्रथम और योग्यतम महिला थीं। यह भाषण, लेखन और काम करने में बड़ी चतुर और एक समान योग्यता रखती थीं। क्रान्ति के असफल

---

* एक पक्षी

होने पर 1 मई, 1928 के 4 बजे शाम को वू-हान में कुओ-मिन्-तांग के कसाइयों ने इनको मार डाला।

चेन चांग–यह एक सुन्दर वादकर्त्ता, अच्छे वक्ता और आन्दोलन करने की अद्‌भुत क्षमता रखनेवाले थे। कद में मध्यम दर्जे का यह सुन्दर तरुण शील-स्वभाव में भी बड़ा ही सुन्दर तथा विचारों में प्रगतिशील था। क्रान्ति के असफल होने पर इसे गिरफ्तार करके मारने के लिए ले गये। उस वक्त अपने हत्यारों के सामने इसने निर्भयतापूर्वक एक जबर्दस्त भाषण देते हुए लोगों को हिम्मत के साथ संघर्ष को आगे बढ़ाने के लिए कहा।

लो जूये-चान–यह श्यांग-तान् के निवासी थे। चांगशा में कमकरों के आन्दोलन में भाग ले क्रान्ति के असफल होने पर शहीद हुए।

चाइ हो-शेन–माओ चे-तुंग के इस अभिन्न मित्र के बारे में पहले बतला चुके हैं।

शिया-शि–यी यांग के निवासी थे। यह 1934 ई. के लालसेना के लम्बे कूच के समय नदी में डूब गये।

हो शू-हेंग–निंग-शियांग के निवासी तथा शिन्-मिन् संघ और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के आरंभिक सदस्यों में सबसे अधिक उमर के थे। जब केन्द्रीय लालसेना ने लम्बे कूच के लिए क्यांग सी को छोड़ यात्रा शुरू की, उस समय क्रान्ति-विरोधियों के गिरफ्तार करने के प्रयत्न में बाधा देते हुए इन्होंने वीरगति प्राप्त की।

शिन्-मिन् संघ द्वारा प्रभावित विद्यार्थियों और तरुणों ने 'चौथी मई' और क्रान्ति के आन्दोलन में भारी काम किया था। इसी के सदस्य नव-संस्कृति आन्दोलन के भी स्तम्भ थे। उन्होंने बुद्धिजीवियों में आन्दोलन का सफलतापूर्वक प्रचार किया। संघ ने अपनी स्थापना के बाद किसानों और कमकरों में बड़े उत्साह के साथ काम करना शुरू किया। कहा जा सकता है कि शिन्-मिन् संघ से ही आगे हूनान में कम्युनिस्ट पार्टी संगठित हुई। इस संघ द्वारा आगे के देश के क्रान्तिकारी और राजनीतिक कामों में माओ चे-तुंग का कितना हाथ था, यह आसानी से मालूम हो सकता है।

(3) नव-संस्कृति आन्दोलन–भारत की तरह चीन की भी संस्कृति हजारों वर्ष पुरानी है और भारत की तरह ही वहाँ पर भी सहस्रों वर्ष तक उसके रूप में बहुत क्रान्तिकारी परिवर्तन नहीं हुआ, जिसके कारण सामन्तवाद की जड़ वहाँ बहुत गहरी और मजबूत थी। पुरानी संस्कृति का बहाना करके सामन्त और जमींदार जनसाधारण विशेषकर किसानों को बरगलाने में अधिक सफल रहते थे। राजवंश बदलते रहे, लेकिन सामन्तवाद जैसा का तैसा बना रहा, और उसका शोषण तथा उत्पीड़न पहले से और भी भीषण होता गया। सामन्तों के इस स्वेच्छाचारी क्रूर शासन में पश्चिमी पूँजीवादी देशों में दाल-भात में मूसलचन्द की तरह दखल दिया। पुराने चीन ने विदेशियों से देश की प्रतिरक्षा के लिए हजारों मील लम्बी महादीवाल बनाई थी, लेकिन पश्चिमी पूँजीवादियों को इस दीवाल को बेकार करने के लिए कोई परिश्रम नहीं करना पड़ा, क्योंकि वह चुपके से समुद्र के रास्ते चीन के विशाल तट पर पहुँच गये। यदि चीन ने बाधा डाली, तो उनके जहाजों की तोपों ने विरोध को विफल कर बन्दरगाहों के फाटक अपने लिए खोल लिये। अब चीन में इन विदेशियों का बोलबाला था। उनके धनकुबेर जगह-जगह अपनी कोठियाँ कायम करके खूब नफा कमा रहे थे, उनके ईसाई-मिशनरी धर्म के नाम पर चीनी तरुणों को पश्चिमी साम्राज्यवादियों के पक्ष में करके उनका काम कर रहे थे, इसलिए यदि यह मिशनरियों के ऊपर लाखों-करोड़ों खर्च कर रहे थे, तो इसमें आश्चर्य क्या ? विदेशी अब यहाँ तक ढीठ हो गये कि अपनी भूमि में चीनियों और कुत्तों को एक समान बना उन्होंने खास-खास जगहों में उनका जाना निषिद्ध कर दिया था। चारों ओर उत्पीड़न, शोषण और अपमान का बोलबाला था। विदेशियों की यह हेकड़ी चीनी तरुणों के सहने के मान की नहीं थी। मंचू-शासन विदेशियों के सामने पूँछ हिलाता, अपनों के सामने शेर बन जाता, इसलिए उसके प्रति चीन के तरुणों के हृदय में अपार घृणा होना स्वाभाविक था, और इसी का परिणाम 1911 ई. क्रान्ति द्वारा मंचू-वंश का खतम होना था। क्रान्ति को छह-सात साल हो गये थे, और अब भी वही रफ्तार बेढंगी थी। विदेशी पूँजीपतियों के दास उस भ्रष्ट स्वेच्छाचारी चीनी सामंतवाद के ऊपर चारों ओर से प्रहार करने की आवश्यकता थी, जो कि कभी 'सुधार', कभी 'आधुनिकता' और कभी 'वैधानिक राजतन्त्र' आदि का आन्दोलन खड़ा कर लोगों की आँखों में धूल झोंकना चाहता था।

माओ चे-तुंग अपने देश के कान् यू-वेइ, लियांग ची-चाउ, तान् सू-तुंग जैसे सुधारवादियों के विचारों से प्रभावित हुए थे। तान् सू-तुंग ने 'यान् शुये' (लोक-प्रेम-कला) के नाम से एक पुस्तक लिखी थी जिसमें उसने उदारवाद, जनतांत्रिक सुधारवाद और स्वप्नचारी (उटोपियन) समाजवाद को मिलाकर एक विचित्र चूँचूँ का मुरब्बा तैयार किया था। 1911 ई. की क्रान्ति से वह क्रान्तिकारी जनतंत्रता पर विश्वास रखने लगा। चतुर्थ मई-आन्दोलन के आरंभ होने पर, तथा "1914 ई. में प्रथम साम्राज्यवादी युद्ध के आरंभ हो जाने तथा भूतल के एक-छठे हिस्से पर 1917 ई. की रूसी अक्तूबर क्रान्ति द्वारा एक समाजवादी राज्य स्थापित हो जाने के बाद" इस तरह की जनतंत्रता में और भी परिवर्तन हुआ, जो असाधारण था। माओ चे-तुंग ने पीछे 'चिये फांग' (मुक्ति) पत्र में 'चतुर्थ मई-आन्दोलन' के बारे में लेख येनान में लिखकर बतलाया था कि इस परिवर्तन द्वारा "चीन की साम्राज्यवादी-विरोधी, सामंतवाद-विरोधी बूर्ज्वा-जनतांत्रिक क्रान्ति बढ़कर एक नई मंजिल पर पहुँची।" माओ ने आगे इस जनतंत्रता को 'नवीन जनतंत्रता' का नाम दिया। उक्त लेख में माओ ने लिखा था :

"बीस साल पहले चतुर्थ मई-आन्दोलन ने बतलाया कि चीन की साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी बूर्ज्वा जनतांत्रिक क्रान्ति बढ़कर एक नई मंजिल पर पहुँची है। चतुर्थ मई-आन्दोलन बन गया। यह केवल चीन के साम्राज्यवाद-विरोधी बूर्ज्वा-जनतांत्रिक क्रान्ति का सिर्फ एक पहलू था। उस समय की नवीन सामाजिक शक्तियों की वृद्धि और विकास के कारण पहले ही से मजबूत एक पक्ष चीन के साम्राज्यवाद-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी बूर्ज्वा-जनतांत्रिक क्रान्ति में तैयार हुआ। इस पक्ष में चीन का मजूर-वर्ग, उसके विद्यार्थी-समूह, और उसकी नवोदित राष्ट्रीय बूर्ज्वाजी शामिल थी। चतुर्थ मई-आन्दोलन के काल में आन्दोलन के मुखिया बनकर लाखों विद्यार्थी बहादुरी के साथ खड़े हुए। यह बतलाता है कि चतुर्थ मई-आन्दोलन 1911 ई. की क्रान्ति से एक कदम आगे था।

नई जनतंत्रता के काम में माओ चे-तुंग हाथ बँटाते अपने कालेज में नवसंस्कृति-नव-जनतंत्रता आंदोलन के वह अगुआ बन गए। 'नौजवान' की विचारधारा का समर्थन और प्रचार करते हुए देश में नव-संस्कृति के लिए काम करनेवाले कर्मियों के साथ भी उन्होंने सम्बन्ध स्थापित किया, और इस प्रकार हूनान तक ही अपने को उन्होंने सीमित नहीं रखा।

1918 ई. में माओ चे-तुंग अपने कालेज की पढ़ाई समाप्त कर उसके ग्रेजुएट हो गये। अब उनके सामने विस्तृत क्षेत्र में प्रवेश करने का समय आया।

6
विस्तृत क्षेत्र (1918-20 ई.)

1. घर से वाहर

चांगशा में रहते हुए 'नौजवान' पत्रिका तथा नव-संस्कृति के दूसरे प्रचारकों के साथ माओ चे-तुंग का सम्बन्ध हो चुका था। विश्वयुद्ध अब समाप्ति पर आ रहा था। इस वक्त दूसरे कामों में योग देने की आवश्यकता माओ को मालूम हुई।

(1) स्वावलम्बी विद्यार्थी–कालेज की पढ़ाई सफलतापूर्वक समाप्त करने के बाद माओ चे-तुंग ने उत्तरी चीन के नव-संस्कृतिवाले कर्मियों के साथ सम्बन्ध स्थापित करने के लिए चांगशा से पेकिंग के लिए प्रस्थान किया। इसी समय फ्रांस में जा 'स्वावलम्बी हो पढ़ने के' प्रोग्राम के सम्बन्ध में कुछ छपी सूचनाएँ हूनान में आईं। हूनान और दूसरे प्रदेशों के भी उन विद्यार्थियों के लिए वह सुवर्ण संयोग था, जो पढ़ाई में और आगे बढ़ने में धन के अभाव के कारण असमर्थ थे। तरुणों के लिए बिना पैसा-कौड़ी यूरोप में जाकर पढ़ने का

अवसर बहुत आकर्षक था। इसके लिए माओ चे-तुंग, चाइ हो-शेन और दूसरों ने हूनान में तरुणों को तैयार करना शुरू किया। लेकिन फ्रांस जाने से पहले उन्होंने विद्यार्थियों के लिए यह भी जरूरी समझा कि वह पाउ-तिंग या पेकिंग में जाकर फ्रेंच भाग का थोड़ा-सा ज्ञान प्राप्त कर ले, फिर वह 'चौथे क्लास के कैबिन में' फ्रेंच जहाज पर फ्रांस के लिए रवाना हो। महायुद्ध के कारण फ्रांस के ग्राम-नगरों को बड़ी क्षति हुई थी, और वहाँ पर्याप्त संख्या में तथा सस्ते मजदूर मिल नहीं सकते थे, इसलिए एशियाई देशों से मजूरों को मँगाया जा रहा था। चीनी मजूर भी जा रहे थे। चीनी विद्यार्थियों को भी 'कमाओ और पढ़ो' की बात अच्छी मालूम हुई। ऐसा ही एक जमात के साथ चीन के वर्तमान प्रधानमन्त्री चाउ एन-लाई भी फ्रांस गये। माओ चे-तुंग को विदेश जाकर पढ़ने का खयाल नहीं था, वह देश में रहकर ही पढ़ना-गुनना चाहते थे। इसी समय 1 लाख 40 हजार चीनी मजूर लाखों भारतीय मजूरों की तरह लड़ाई के बन्द होने से पहले ही फ्रांस जाने लगे। उन्होंने टूटी-फूटी जगहों को ठीक करने के अतिरिक्त कारखानों में भी काम किया और पीछे फ्रेंच मजदूरों के सम्पर्क में आकर हड़तालों में भी भाग लिया।

माओ चे-तुंग का अध्ययन प्राचीन और अर्वाचीन दोनों शैली से और सभी विषयों में बहुत गम्भीर था। अपने अखंड अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण के रहते चीनी संस्कृति के प्रति भी उनकी बड़ी आस्था थी। 14 मई, 1945 को सातवीं पार्टी कांग्रेस में व्याख्यान देते हुए साथी ल्यू शाओ ची ने एशिया के इस महान् नेता के बारे में कहा था : "वह हमारी महान् जाति की सभी सर्वश्रेष्ठ परम्पराओं के श्रेष्ठ प्रतिनिधि हैं। वह सृजनकर्ता और प्रतिभाशाली मार्क्सवादी हैं, जिनमें सार्वभौम मानव-जाति की सर्वश्रेष्ठ विचारधारा मार्क्सवाद के विश्वजनीन सत्य तथा चीनी-क्रान्ति के साकार व्यवहारात्मक ज्ञान का सुन्दर सम्मिश्रण है। उन्होंने हमारी बुद्धिवादी विचारधारा को अनुपम उत्कर्ष पर पहुँचाया, और पूर्ण मुक्ति के एकमात्र निर्भ्रान्त और स्पष्ट पथ—माओ चे-तुंग के पथ—को विपदा में पड़ी चीनी जाति और लोगों को दिखलाया।" माओ चे-तुंग ने चीनी जाति की हजारों वर्ष पुरानी सांस्कृतिक परम्पराओं को विवेक के साथ स्वीकार किया। एमी स्याउ के शब्दों में "वह हमारी सुन्दर संस्कृति के अत्यन्त पूर्ण प्रतीक हैं, जो संस्कृति उनकी विचारधारा में अपने श्रेष्ठ विकास और अविच्छिन्न रूपेण प्राप्त हुई।"

माओ ने अपनी पुस्तक 'सम्मिलित सरकार' में मार्क्सवाद, ऐतिहासिक, भौतिकवाद और द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के बारे में लिखा है कि "मार्क्सवाद सारी दुनिया में सर्वहारा की अत्यन्त परिशुद्ध, अत्यन्त क्रान्तिकारी तथा वैज्ञानिक विचारधारा है।" अपनी इस विशेषता के कारण जहाँ हरेक परिस्थिति में वह अपने चीनी राष्ट्र को आगे बढ़ाने के लिए स्पष्ट मार्ग निकालते रहे, वहाँ चीनी संस्कृति का कौन-सा पहलू हेय और कौन-सा उपादेय है, इसका विवेक करते वह अपनी जाति की पुरानी देनों को स्वीकार करते हुए भी चीन के बहुजातिक राष्ट्र में भेदों के बीच गहरी एकता स्थापन करने में सफल हुए। मार्क्सवाद की सहायता से उन्होंने चीनी राष्ट्रीय संस्कृति का विवेचन, विश्लेषण और उत्कर्षापादन करते हुए उसे वैज्ञानिक रूप दिया। यदि चीनी राष्ट्रीय संस्कृति का इतना गम्भीर अवगाहन, चीनी समाज के समृद्ध ज्ञान और जातीय संघर्ष के अनुभवों का इतना गम्भीर ज्ञान उन्हें न होता; तो सचमुच ही मार्क्सवाद को व्यवहार में लाकर चीन के सर्वहारा को मुक्त करते अपने राष्ट्र को उस ऊँचे स्थान पर पहुँचाना, उनके लिए असंभव नहीं तो मुश्किल जरूर होता, जहाँ पर कि आज वह देखा जा रहा है; मार्क्सवाद 'बाहर से जातीय और तत्त्वतः समाजवाद के' अपनाने की जो बात कहता है, उसको व्यवहार में लाना सचमुच ही बहुत कठिन है। लेनिन और स्तालिन की तरह के अद्भुत प्रतिभाशाली व्यक्ति ही ऐसा कर सकते हैं। चीन के सम्बन्ध में माओ ने उसी अद्भुत प्रतिभा का परिचय दे मार्क्स-एंगेल्स, लेनिन-स्तालिन की पंक्ति में अमर स्थान प्राप्त किया। इसी कारण मार्क्सवाद चीन के लिए पराया नहीं रह गया, और वहाँ उसकी जड़ पाताल तक जम गई। उन्होंने चीनी जीवन को मार्क्सवाद की देन से एक पूर्ण शरीर प्रदान किया। यदि उन्होंने कन्फूजू, बौद्ध तथा दूसरे महान् साहित्यकारों, दार्शनिकों, कलाकारों की कृतियों का बहुत समय तक और अन्तस्तल तक पहुँचकर अवगाहन किया, तो आगे चलकर इसी ने उन्हें चीनी राष्ट्र के लिए मार्क्सवाद के पथ को प्रशस्त में काम करने में बड़ी सहायता की। निश्चय ही ऐसे पुरुष के लिए

अपने देश की उस समय की परिस्थिति में काम करने से वंचित रहते विदेश में जाकर शिक्षा प्राप्त करने से बहुत फायदा न होता; यह वह जानते थे, इसीलिए यद्यपि वह अपने साथियों को फ्रांस में जाकर अपनी दृष्टि को विशाल और शिक्षा को अधिक व्यापक बनाने की प्रेरणा देते रहे, पर स्वयं वहाँ नहीं जाना चाहते थे।

एमी स्याउ लिखते हैं : "आज सारे चीन में कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर या बाहर चीन को जो सबसे अच्छी तरह समझता है, वह पुरुष माओ चे-तुंग है। साथ ही वह दूसरे देशों की स्थितियों से अत्यन्त सुपरिचित हैं। बहुत-से विदेशी उनसे बातचीत करने के बाद यह जानकर चकित हुए कि दूसरे देशों के बारे में माओ का ज्ञान इतना अधिक है। (विदेशी अतिथियों से वह उनसे देश के भिन्न-भिन्न पहलुओं के बारे में सवाल पूछा करते हैं। उनसे जो सवाल पूछे जाते हैं, माओ के प्रश्नों की संख्या अक्सर उनकी अपेक्षा अधिक होती है।) उनका 'चीनी शिक्षण' और 'पश्चिमी शिक्षण'—बड़ा ही सुन्दर और बहुत ही व्यापक तथा आगे बढ़ा हुआ है। यह बिलकुल स्वाभाविक है, क्योंकि यह उनके बालकपन से लेकर एक लम्बे अर्से तक कठिन परिश्रम और लगातार स्वाध्याय का परिणाम है।"

(2) पेकिंग में प्रथम—(1919 ई.)—फ्रांस के लिए जाने की इच्छा रखनेवाले विद्यार्थियों में से कुछ चांगशा से रवाना होने से पहले फ्रेंच भाषा सीखने के ख़याल से पेकिंग गये। माओ ने उन्हें प्रोत्साहित ही नहीं किया, बल्कि उनके साथ वह भी पेकिंग पहुँचे। चीन की प्राचीन और अर्वाचीन राजधानी को दक्षिणी चीन में पैदा हुए माओ ने पहली बार देखा। उनके पुराने अध्यापक यांग चेन्-ची अब पेकिंग में अध्यापक हो गये थे। प्रोफेसर यांग अपने पूर्व विद्यार्थी से बहुत स्नेह रखते थे। माओ को अब इस विशाल नगरी में पहुँचकर सबसे पहले खाने-रहने का प्रबन्ध करना था, जिसमें यांग ने बड़ी सहायता की। अपने विद्यार्थी की योग्यता से वह भली भाँति परिचित थे। उन्होंने युनिवर्सिटी पुस्तकालय के अध्यक्ष ली ता-चाउ से उनका परिचय करा दिया। ली ता-चाउ पीछे कम्युनिस्ट पार्टी के संस्थापकों में हुए। उन्होंने आठ चीनी डालर मासिक पर माओ को अपने सहायक का काम दे दिया। यह सहायक का काम इतना छोटा समझा जाता था कि माओ के शब्दों में : 'मेरा यह काम इतना नीचा समझा जाता था, कि लोग मुझे मिलने से परहेज करते थे। "मेरे अनेक कामों में एक काम यह भी था कि लाइब्रेरी में जो लोग अखबार पढ़ने आयें, उनके नामों को नोट कर लिया करूँ। इन आनेवालों में अधिकांश की नजर में मैं मनुष्य भी नहीं था। इनमें कुछ तो पुनर्जागरण-आन्दोलन में नेता थे। मैंने उनके साथ राजनीतिक और सांस्कृतिक विषयों पर बात करने का निश्चय किया, किन्तु वह लोग इतने कार्य-व्यस्त थे कि दक्षिणी बोली बोलनेवाले एक सहायक-पुस्तकालयाध्यक्ष से बात करने के लिए उनके पास समय नहीं था।" चाहे माओ अभी पचीस वर्ष के तरुण थे, लेकिन वह ज्ञानवृद्ध थे, इसे हम जानते हैं। लेकिन, मध्यम वर्ग के भीतर से खोखले और ऊपर से तड़क-भड़क रखनेवाले बुद्धिजीवी कब आदमी की परख कर सकते हैं ? वह तो स्वयं लिफाफिया होते हैं और दूसरों के लिफाफियापन को ही पसन्द करते हैं।

अपने आठ डालर मासिक से माओ को खाने-रहने का प्रबन्ध करना था, लेकिन माओ को तितिक्षा और तपस्या के जीवन का काफी अनुभव था। वह परिस्थितियों के अनुसार अपनी जीवन-यात्रा चला सकते थे। चांगशा से पेकिंग जाते समय भी कुछ पैसों का प्रबन्ध उन्हें उधार लेकर करना पड़ा था। उनको इस बात की प्रसन्नता थी कि उनके मुखिया ली ता-चाउ एक प्रसिद्ध और प्रगतिशील विद्वान हैं, जिन्होंने पहले-पहल चीन में रूसी-क्रान्ति और मार्क्सवाद का प्रचार और प्रवेश कराया। ली ता-चाउ के विचार और व्यवहार की मधुरता से माओ बहुत प्रभावित हुए। ली को पीछे (1927 ई. में) युद्धपति चांग चौ-लिन् ने उनके विचारों के कारण पेकिंग में मरवा डाला। उस समय अभी वह 40 वर्ष के भी नहीं हो पाये थे। पेकिंग विश्वविद्यालय में पहुँचकर माओ यदि स्वाध्याय में डूब जायँ, तो इसमें आश्चर्य क्या ?

यहीं पर अपने पुराने अध्यापक यांग हुइ-चुंग की पुत्री यांग कइ-हुइ के साथ माओ का प्रेम हो गया। लड़की बहुत सुशिक्षिता तथा क्रान्तिकारी विचारों की थी। उसने अपने पिता से माओ की प्रशंसा काफी सुन रक्खी थी, दोनों काफी वर्षों से एक-दूसरे को जानते थे। 1920 ई. में माओ ने इस तरुणी के साथ ब्याह कर लिया। माओ का यह विवाह साधारण अर्थों में स्त्री-पुरुषों के प्रेम का विवाह नहीं था, बल्कि यांग कई-हुइ

के रूप में माओ ने एक अत्यन्त दृढ़ सहकारी प्राप्त किया था। अपने काम के सिलसिले में दोनों को कितनी ही बार अलग-अलग क्षेत्रों में जाना पड़ता था। 1927 ई. में क्रान्ति-विरोधी सफलता प्राप्त कर माओ तथा दूसरे कम्युनिस्टों की जान के ग्राहक बन गये, और 1930 ई. में माओ की पत्नी और बहन चांग काई-शेक के पिट्ठू हूनान के एक जमींदार के हाथ में पड़ गईं। माओ उस वक्त क्रांतिकारी सेना को चिंग-कांग-शान् की ओर ले जा रहे थे और उनकी पत्नी हूनान में रह गईं। क्रान्ति-विरोधियों ने घोर साँसत देकर यांग कइ-हुइ को मजबूर करना चाहा, कि वह माओ चे-तुंग को छोड़ दे, लेकिन कइ-हुइ ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया, और दस साल के आदर्श वैवाहिक जीवन के बाद वह अपनी ननद के साथ शहीद हो गई। माओ अपने सर्वस्व को चीनी सर्वहारा के उद्धार के लिए दे चुके थे, उनके लिए कोई भी बलि अदेय नहीं थी।

पेकिंग में रहते समय अपनी पुरानी आदत के अनुसार वह फिर स्वाध्याय में लीन हो गये। प्रोफेसर यांग तथा हूनान कालेज के साथियों ने पेकिंग के कुछ प्रसिद्ध विद्वानों और भद्र पुरुषों से माओ का परिचय करा दिया, और उन्होंने उनके सत्संग से लाभ उठाने से कभी भी अपने को वंचित नहीं रक्खा। लम्बी नाकवाले नव-संस्कृति आन्दोलन के नेताओं की उपेक्षा से माओ केवल मुस्करा दिया करते और अपने रास्ते चले जाते। इसी समय माओ को अराजकतावाद-सम्बन्धी कुछ पुस्तिकाएँ मिलीं। कुछ समय तक इसी नकली समाजवाद ने माओ को भी कितने ही दूसरे चीनी तरुणों की तरह अपने प्रभाव में रक्खा। लेकिन मार्क्सवाद का ज्ञान होने पर जल्दी ही उन्होंने उसे तिलांजलि दे दी। पेकिंग यूनिवर्सिटी में दर्शन और पत्रकारिता के भी अध्ययन का प्रबन्ध था, माओ भी उनके अध्ययन के लिए कक्षाओं में शामिल होते। वह विशाल नगरी के सान्-येन्-चिंग मोहल्ले में एक छोटी कोठरी में सात और आदमियों के साथ रहते। आठों के इकट्ठा हो जाने पर कोठरी की हवा उनके साँस लेने के लिए पर्याप्त न होती; लेकिन माओ को इसकी कोई चिन्ता नहीं थी। पेकिंग का वसन्त उनको बहुत प्रिय था। उस समय उनका कवि-हृदय इस गन्दी कोठरी को भूलकर वसन्त की सुषमा लूटने में लीन रहता।

(3) शांघाइ में प्रथम बार (1919 ई.)—पेकिंग में कितने ही समय तक रहने के बाद फ्रांस में पढ़ने के लिए जानेवाले विद्यार्थियों के साथ-साथ माओ चे-तुंग भी शांघाइ के लिए रवाना हुए। लेकिन उनके पास सिर्फ यान्-चिन् तक के टिकट के लिए ही पैसा था। एक मित्र ने दस डालर उधार दिये, और अन्त में वह पुको तक पहुँच सकें। सीधे जाने की जगह उन्होंने रास्ते के ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्त्व के स्थानों को देख लेना जरूरी समझा। वह चीन के पवित्र पर्वत थाई-शान् पर गये। कन्फूजू, येन् युवान् और मेनूसियस जैसे चीन के महान् विचारकों के जन्म-स्थानों और समाधियों के उन्होंने दर्शन किये। कूको पहुँचने पर उनके पास ताँबे के केवल दो पैसे रह गये। जूते फट गये थे, पैदल चलना एक भारी समस्या थी। इसी समय हूनान का एक पुराना मित्र सहायता के लिए निकल आया। वह उसकी मदद से एक जोड़ा जूता और शांघाइ तक पहुँचने की यात्रा का प्रबन्ध कर सके। शांघाइ में पहुँचकर उनके विद्यार्थी मित्रों ने हूनान पहुँचने-भर का खर्चा अपने चन्दे से प्राप्त पैसों में से दे दिया। ताई शान् चीन का एक पवित्र पर्वत ही नहीं, बल्कि प्राकृतिक सौंदर्य और सांस्कृतिक स्मृतियों के लिए भी प्रसिद्ध पर्वत है। जेनरल फेंग यू-श्यांग ने वहीं पर रहकर कितने ही देशभक्तिपूर्ण लेख लिखे थे। इस यात्रा में पेड़-हाइ तक माओ को बर्फ के ऊपर चलना पड़ा था। थुंग-थिंग सरोवर की उन्होंने प्रदक्षिणा की। वह पाउ-तिंग-फू और शूचाउ गये, नानकिंग शहर भी देखा। ये प्राचीन सांस्कृतिक स्थान पुराने ग्रंथों के अध्ययन के समय माओ के मानस-नेत्रों के सामने अनेक बार अंकित होते रहते थे, अब उन्होंने उनको साकार अपनी आँखों के सामने बड़े प्रेम के साथ देखा।

2. क्रान्तिकारी सरगर्मी

शांघाइ की पहली यात्रा में माओ इस आधुनिक महान् नगरों को बाहर ही से देख सके। अभी उन्हें इन नगरों के सर्वहारों तथा क्रान्तिकारी धाराओं से परिचय प्राप्त करने का मौका नहीं मिला। वहाँ से वह अपने जन्म-प्रदेश हूनान को चले गये।

(1) **'चतुर्थ मई आन्दोलन'** (1919 ई.)–युवान शि-क़ाइ ने पश्चिमी साम्राज्यवादियों की कृपा तथा चीन की बूर्ज्वाजी की मदद से राष्ट्रपति का पद प्राप्त किया था। पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने युवान को और भी मुट्ठी में करने के लिए 1913 ई. में ढाई करोड़ पौण्ड कर्ज दिया और जिसके सूद में चीन के कर और कस्टम (आयात) शुल्क को अपने प्रबन्ध में कर लिया था। कर्ज की सुरक्षा के लिए उन्होंने युवान को मजबूर किया कि सरकारी हिसाब-किताब का देखनेवाला कोई यूरोपियन हो। राजनीतिक सलाहकार के तौर पर चीन सरकार एक अंग्रेज को रखने के लिए भी मजबूर हुई और डाक-तार तथा सैनिक सलाहकार एक फ्रेंच बनाया गया। आधुनिक ढंग के उद्योग-धन्धों का बहुत अधिक भाग अब पश्चिमी पूँजीपतियों के हाथों में चला गया। इस प्रकार चीन को हाथ-पैर बाँधकर पश्चिमी पूँजीवाद के सामने पटक दिया गया। हम देख चुके हैं, किस तरह युवान शि-काइ ने अपने को आजीवन राष्ट्रपति होने से ही संतुष्ट न रह अपना राजवंश चलाने की कोशिश की। संसद को उसने तोड़ दिया और चीन के अठारहों प्रदेशों में अपने क्षत्रप (तू-चुन) नियुक्त किये। इस अवस्था से फायदा उठाकर पश्चिमी साम्राज्यवादियों और उनके साथी जापान ने चीन राष्ट्र के शरीर को नोचना शुरू किया। अंग्रेजों ने तिब्बत और बर्मा के भीतर पैर पसारने की कोशिश की। जापान ने दक्षिणी मंचूरिया की रेलों से संतोष न करके जर्मनी के हाथ के बन्दरगाह शान्-तुंग पर महायुद्ध के समय हाथ साफ किया और 1915 ई. में चीन की बेबसी से फायदा उठा चीन के सामने अपनी 21 माँगें रक्खी थीं।*

"इस काल में असम संधियों में जापान की 'इक्कीस माँगें' सबसे अधिक घातक और घृणित थीं। इनसे तो यह पता चलता है कि चीन के प्रति जापान की आक्रामक साम्राज्यवादी नीति एक कदम और आगे बढ़ी है, यानी जापान की 'चीन के विभाजन की नीति' अब 'चीन पर अपने एकाधिकार करने की नीति' के रूप में बदल गई। इन माँगों की मूल्य बातें यों हैं :

प्रथम वर्ग (शान तुंग सम्बन्धी माँगें)–प्रथम वर्ग में चार धाराएँ थीं। इनके अनुसार पइ-चिंग (पेकिंग) सरकार शानूतुंग प्राप्त स्थित जर्मनी के सभी विशेष अधिकार जापान को दे दे। ये विशेष अधिकार थे–चिआव्-चउ-वान् तथा चिआव्-चउ चि-निंग रेलवे-सम्बन्धी अधिकार तथा रेल के किनारे-किनारे खान खोदने का अधिकार। शानूतुंग प्रान्त तथा उसके समुद्री तट के जितने भूभाग तथा द्वीप हैं, 'किसी दूसरी शक्ति को न तो सौंपे जायें और न पट्टे पर दिये जायँ।' यह भी माँग की कि जापान को यन्-थाइ या लुंग-खउ से चिआव-चउ-चि-निंग तक रेल लाइन बिछाने का अधिकार हो और शानतुंग के सभी प्रसिद्ध नगर व्यापारिक बंदरगाह की तरह खोल दिये जायँ। संक्षेप में जापान की यह माँग रही कि सम्पूर्ण शानूतुंग प्रान्त जापान 'प्रभावक्षेत्र' माना जाय।

दूसरा वर्ग {तीन पूर्वी प्रान्तों (मंचूरिया) के दक्षिणी भाग और भीतरी-मंगोलिया के पूर्वी भाग सम्बन्धी माँगें}–दूसरे भाग में सात धाराएँ थीं, जिनकी मुख्य बातें यों थीं–लु शुन् (पोर्ट आर्थर) और ता-लिएन् (डाइरेन्) के पट्टे तथा दक्षिणी मंचूरिया और आन्-तुंग-फंग-थिएन्–इन दोनों रेलों-सम्बन्धी पट्टे की अवधि 99 वर्ष और बढ़ा दी जाय। 'दक्षिणी मंचूरिया' और 'पूर्वी मंगोलिया' में जापानी नागरिकों को जमीन रखने या पट्टे पर लेने, बसने, यात्रा करने और वाणिज्य-व्यापार चलाने का अधिकार हो, तथा इन दोनों क्षेत्रों में जापानी लोग राजनीतिक, आर्थिक और सैनिक परामर्शदाता तथा शिक्षक के रूप में नियुक्त किये जायें। चि-लिन् (किरिन्)–छांग-छुन् रेलवे की व्यवस्था तथा नियंत्रण का अधिकार जापान को रहे और दोनों क्षेत्रों (दक्षिणी मंचूरिया और पूर्वी मंगोलिया) में किसी दूसरी शक्ति को रेल बिछाने या आर्थिक पूँजी लगाने की आज्ञा न मिले। संक्षेप में जापान ने चाहा कि तीन पूर्वी प्रान्तों (मंचूरिया) का दक्षिणी भाग और भीतरी मंगोलिया का पूर्वी भाग उसका 'प्रभाव क्षेत्र' मान लिया जाय।

तीसरा वर्ग ('हान् ये फिंग' कम्पनी सम्बन्धी माँगें)–तीसरे वर्ग में दो धाराएँ थीं। इनके द्वारा माँग की गई थी कि हान्-ये कंपनी को चीन और जापान संयुक्त रूप से चलाएँ और हान्-ये-फिंग कंपनी के अधिकार में जो खानें हैं, उनके अड़ोस-पड़ोस की सभी खानों का एकमात्र अधिकार जापान को हो।

चौथा और पाँचवाँ वर्ग (सम्पूर्ण चीन से सम्बन्ध रखनेवाली माँगें)–चौथे वर्ग में एक धारा थी, जिसके द्वारा

* "चीन का भाग"।

माँग की गई थी कि चीन अपने समुद्र के बन्दरगाह, खाड़ी और द्वीप किसी दूसरे देश को न दे। पाँचवें वर्ग में सात धाराएँ थीं, जिनके द्वारा यह माँग की गई थी कि चीन जापान के लोगों को अपने यहाँ राजनीतिक, आर्थिक और सैनिक परामर्शदाता के रूप में नियुक्त करे, चीन के भीतरी भाग में जापान के लोगों को जमीन रखने का अधिकार हो, चीन के पुलिस-विभाग का नियन्त्रण चीन और जापान द्वारा संयुक्त रूप से किया जाय, जापान को चीन के लिए अस्त्र-शस्त्र की पूर्ति करने का अधिकार मिले तथा चीन के अस्त्रागार की व्यवस्था चीन और जापान मिलकर करें, जापान को वू-छांग से हांक-चउ तक और नान् छांग चउ तक रेल बिछाने का अधिकार हो, सम्पूर्ण फू-चियेन् प्रान्त को जापान का 'प्रभाव क्षेत्र' करार दिया जाय और जापान के लोगों को चीन में धर्म-प्रचार का अधिकार रहे। संक्षेप में जापान ने सम्पूर्ण चीन पर अपना एकाधिकार स्थापित कर उसे अपने आश्रित या अधीनस्थ राज्य के रूप में रखना चाहा।

जापान द्वारा 'इक्कीस माँगों' के पेश किए जाने पर चीनी जनता क्रोध से जल-भुन उठी और सारा संसार चकित हो गया।

जब रूस में बोल्शेविक क्रान्ति हो गई, तो बोल्शेविकों को रोकने के बहाने 1917-18 ई. के बीच जापान ने सारे मंचूरिया को अपने हाथ में कर लिया। चीनी सरकार को उसने जबर्दस्ती कर्ज लादकर चीनी सेना की शिक्षा का काम भी अपने हाथों में ले लिया।

इसी समय युवान शि-काइ मर गया। उसके मरते ही चीन में अराजकता ने और घोर रूप धारण किया। ली ने युवान के स्थान पर राष्ट्रपति का स्थान लिया था। उसे पदच्युत करके 1918 ई. में तीन जापानियों ने पेकिंग में आकर सत्ता अपने हाथ में ले ली। ली ने भागकर कान्तन में जा दूसरी सरकार स्थापित की। प्रथम विश्वयुद्ध के बाद जब शत्रुओं के साथ सन्धि करने के लिए वरसाई शान्ति-परिषद् बैठी, उस समय पेकिंग और कान्तन दोनों सरकारों ने अपने-अपने प्रतिनिधि भेजे थे। जापान ने पहले ही से अपने हाथ में किये शांतुंग को माँगा और पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने 'परमुंडे फलाहार' करने में कोई आनाकानी नहीं की। चीनी प्रतिनिधियों के विरोध करने पर भी वरसाई शान्ति-परिषद् ने शानुतुंग को जापान के हाथ में दे दिया। यह खबर जब चीन पहुँची, तो प्रथम महायुद्ध में मित्रशक्तियों का मित्र रहने का यह परिणाम देख चीन की जनता में अपार क्षोभ पैदा हो गया।

विद्यार्थियों और बुद्धिजीवियों में राजनीतिक चेतना लाने में पेकिंग से निकलेवाली पत्रिका 'नौजवान' ने जबर्दस्त काम किया। माओ चे-तुंग हूनान में उसके जबर्दस्त समर्थक थे। वह अपने साथी विद्यार्थियों से उसके बारे में कहा करते थे : "नौजवान के दो सिद्धान्त हैं : एक कू-वेन् (पुरानी भाषाशैली) का विरोध करना, और पेइ-हुआ (लोक-भाषाशैली) का समर्थन करना। दूसरा सिद्धान्त है, पुरानी आचार-शिक्षा का विरोध करना। ··· नौजवान विज्ञान और जनतंत्रता का समर्थक है। इसीलिए यह पत्रिका सांस्कृतिक एवं राजनीतिक भी है।" अब उसे तथा चीन के तरुणों को आग में घी डालने का समय आ गया था।

राष्ट्र का यह भीषण क्षोभ 4 मई, 1919 को एक विशाल राष्ट्रीय प्रदर्शन के रूप में परिणत हो गया। उस दिन पेकिंग के स्कूल-कालेज विद्यार्थियों से सूने हो गये। सबेरे से ही विद्यार्थी मोहल्ले-मोहल्ले जमा होने लगे। उनका नेतृत्व अध्यापक चेन् श्यू-तू कर रहे थे। दिन चढ़ा। 15 हजार विद्यार्थी सरकारी कार्यालयों की तरफ गये और उन्होंने वहाँ घेरा डाल दिया। सशस्त्र घुड़सवार उनके ऊपर छोड़े गये, जिन्होंने आकर उनका रास्ता रोक लिया, लेकिन विद्यार्थियों के एक भाग ने उनकी पाँती तोड़कर राजभवन में प्रवेश करने में सफलता पाई। तीनों जापानी सर्वेसर्वा उस वक्त वहाँ मौज से बैठे हुए थे। इसी समय घनगर्जन जैसा नारा उठा : "जापानी पिट्ठुओं को विदा करो !" "देश बेचनेवाले मन्त्री हमें नहीं चाहिए !"

विद्यार्थी राजभवन से जब लौटने लगे, उसी समय धर-पकड़ शुरू हो गई। विद्यार्थी लौट पड़े और उन्होंने फिर नारा लगाना शुरू किया : "हमारे साथियों को लौटाओ !" और उन्होंने अपने साथियों को मुक्त कराकर ही छोड़ा। मुक्त हुए विद्यार्थियों को लिए विशाल जलूस जब पेकिंग के दरवाजे के बाहरवाले विशाल मैदान में पहुँचा, उस समय शाम के 4 बज रहे थे। विद्यार्थियों की आवाज घर-घर पहुँच चुकी थी, पेकिंग की दूकानें

बन्द होने लगी थीं, और जनसाधारण इस विशाल सार्वजनिक सभा में भारी संख्या में पहुँचे। विद्यार्थियों ने प्रोफेसर चेन् श्यू-तू की सलाह से अपनी एक युद्ध-समिति स्थापित की, और 'चतुर्थ मई-आन्दोलन' के नाम से यह आन्दोलन देश के कोने-कोने में फैल चला। सारा देश भारत के असहयोग-आन्दोलन की तरह चतुर्थ मई के आन्दोलन से गूँज उठा।

माओ चे-तुंग ने 'नवीन जनतन्त्रता' में इस समय के अपने भावों के बारे में लिखा है : "चीन पूँजीवादी अर्थनीति एक कदम आगे बढ़ी, तीन बड़ी साम्राज्यवादी शक्तियों—रूस, जर्मनी और आस्ट्रिया-हुंगरी—के परास्त होने तथा इंग्लैंड और फ्रांस के कमजोर पड़ने, साथ ही रूसी सर्वहारों द्वारा एक समाजवादी राज्य के स्थापित होने, एवं जर्मन, आस्ट्रियन (हुंगेरियन), और इतालियन सर्वहारों के क्रान्ति के लिए उठ खड़े होने को देखकर चीनी क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों के मन में चीन राष्ट्र की मुक्ति के लिए नई आशाएँ पैदा हुईं।" रूस की समाजवादी क्रान्ति ने इस समय चीन के क्रान्तिकारियों, विशेषकर तरुणों पर भारी प्रभाव डाला। और ठीक वैसा ही हुआ, जैसा कि स्तालिन ने कहा था :

"अक्टूबर-क्रान्ति दुनिया के इतिहास में पहली क्रान्ति है, जिसने कि पूर्व की मेहनतकश जनता, उत्पीड़ित जातियों की युगों से चली आती नींद को तोड़ दिया और उन्हें विश्व साम्राज्यवादियों के विरुद्ध लड़ने के लिए तैयार किया। ईरान, चीन और भारत में रूस की सोवियतों के नमूने पर कमकरों और किसानों की पंचायतों का बनना इसका पर्याप्त प्रमाण है।"

माओ चे-तुंग ने भी 'नवीन जनतन्त्रता में' इसी विषय पर कहा था : "चतुर्थ मई-आन्दोलन तत्कालीन विश्व-क्रान्ति, सोवियत-क्रान्ति और लेनिन की पुकार का परिणाम था।" 4 मई, 1919 के पेकिंग के विशाल आन्दोलन ने जब खोखला नारा नहीं बुलन्द किया : "जापान के साथ सीधी बातचीत न हो !" "देशद्रोहियों की क्षय !" "हम सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर नहीं करेंगे !" "एक्कीस माँगों को हटा दो !" "चियांग-ताउ को जैसे भी हो लौटाओ !" "कूटनीति मुर्दाबाद !" "जापानी माल का बायकाट करो।"

नारा लगाते पाँच हजार विद्यार्थी तियान आन-मेन् के सामने प्रदर्शन करते हुए गए, फिर वहाँ से 1915 ई. में जापान द्वारा लादी गई एक्कीस माँगों पर हस्ताक्षर करनेवाले देशद्रोही चाउ जू-लिन् के घर पर चाउ-चिया लूमे गये। विद्यार्थियों ने वहाँ चांगचुंग-शियांग (जापान में राजदूत) लू चुंग-यू (टकसाल संचालक) चाउ जू-लिन् तथा एक जापानी को बैठक करते देखा। विद्यार्थी चांग चुंग-शियांग पर टूट पड़े और उसकी लात-मुक्के से खबर लेने लगे, दूसरे तीन इसी बीच भाग निकले। फिर विद्यार्थियों ने चाउ जू-लिन् के घर में आग लगा दी।

पुलिस और हथियारबन्द सैनिक त्वान् ची-जुइ की सरकार द्वारा प्रदर्शन भंग करने के लिए भेजे गये जिन्होंने 32 विद्यार्थियों को गिरफ्तार किया। अगले दिन पेकिंग के सभी विद्यार्थियों ने हड़ताल कर दी। पेकिंग के स्कूलों और कालेजों के विद्यार्थियों की सभा बनाई गई, जिसने विरोध में तार भेजे, प्रचारक के लिए पुस्तिकाएँ निकालीं और हर जगह विरोध-सभाएँ संगठित कीं।

इस प्रकार आरम्भ हुआ चतुर्थ मई-आन्दोलन अब तियान्-चिन्, शांघाइ, नानकिन् और वूहान में विद्रोह की आग लगाने में सफल हुआ। क्वांग-तुंग, क्वांगसी, फूकियान, शान्सी, चेक्यांग, क्यांग-सी, हूनान एवं उत्तर-पूर्वी इलाकों में आन्दोलन जंगल की आग की तरह भड़क उठा। जगह-जगह हड़तालें और विरोध सभाएँ होने लगीं। असहयोग आन्दोलन के विदेशी माल के बायकाट की तरह चीन में भी जापानी माल का बायकाट होने लगा। सारे देश के विद्यार्थी और तरुण बुद्धिजीवी इस जापान-विरोधी आन्दोलन में सम्मिलित हो गये।

(2) माओ मैदान में—माओ चे-तुंग इस समय शांघाइ से चांगशा पहुँच गये थे। चतुर्थ मई-आन्दोलन को हूनान में फैलाने के लिए उन्होंने एक छोटी-सी किन्तु जबर्दस्त अपील निकाली, जिसके आरम्भ के वाक्य थे : "उठो देशभाइयो !" हूनान के विद्यार्थी उठ खड़े हुए। उन पर माओ का पहले ही से भारी प्रभाव था। उन्होंने हूनान छात्र-सभा संगठित की और उसकी तरफ से एक पत्रिका निकालने का निश्चय किया। माओ चे-तुंग ने पत्रिका का नाम 'शियांग पत्रिका' रक्खा और वह स्वयं उसके सम्पादक बने। पत्रिका का आधा भाग सम्पादक की कलम से लिखा होता था। इसके एक-एक शब्द दहकते हुए अंगारे थे, जो पाठक के हृदय में

ज्वाला फूँक देते थे। उसमें साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और युद्धपतिवाद का घोर विरोध तथा जनतंत्रता, विज्ञान और नवसंस्कृति का समर्थन होता था। उसने हूनान और बाहर के भी विद्यार्थियों और तरुणों को बड़ी प्रेरणा दी, और वहाँ के बुद्धिजीवियों तथा शिक्षण-संस्थाओं में क्रान्ति की लहर पैदा करने में भारी काम किया। पत्रिका पुराने आचारों के विरुद्ध संस्कृति का प्रचार ही नहीं करती थी, बल्कि वह जनता के क्रान्तिकारी आन्दोलन का संगठन भी करती थी। उसमें वास्तविक सामाजिक समस्याओं पर अक्सर लेख होते। वह तरुण बुद्धिजीवियों और विद्यार्थियों में अपनी नीति का प्रसार करते हुए उन्हें जनसाधारण के साथ एकताबद्ध होने के लिए प्रेरित करती। छुट्टियों में घर जाने पर विद्यार्थियों पर जनता को संगठित करने के लिए जोर दिया जाता। सम्पादकीय लेख की एक सुर्खी थी : 'जनता की महान् एकता' जिसमें गर्मियों की छुट्टियों में घर लौटनेवाले विद्यार्थियों को काम करने का रास्ता बतलाया गया था। हूनान छात्रसभा से भिन्न-भिन्न स्कूलों के विद्यार्थियों में 'घर जाओ और काम करो' वाली टुकड़ियाँ संगठित कीं। घर लौटने पर बहुत-से विद्यार्थी स्थानीय तरुण बुद्धिजीवियों से मिलकर अपने संगठन को बढ़ाने तथा प्रचार-कार्य को करने के लिए 'देश भाषण इकाइयाँ' कायम कीं। सभा ने 'तेन-मान (देशभक्ति) टुकड़ियाँ' और 'दुश्मन के माल की पड़ताल करनेवाली टुकड़ियाँ' कायम कीं, जिनका काम था जापानी माल के बहिष्कार को कार्यरूप में परिणत कराना। हूनान प्रदेश के बहुत-से स्कूलों के अपने साप्ताहिक पत्र निकलने लगे। अब चियांग पत्रिका ने–जो कि क्रान्तिकारी प्रचार के क्षेत्र में प्रमुख स्थान रखती थी–सबको एकसाथ मिल जाने के लिए कहा। इसके परिणामस्वरूप 'साप्ताहिकों की सभा' कायम हुई। इस संगठन के बाद अब मिलकर भिन्न-भिन्न पत्र-पत्रिकाओं द्वारा और अच्छी तरह प्रचार-कार्य होने लगा। 'शियांग-चियांग' पत्रिका और उसके सम्पादक माओ चे-तुंग के इस प्रयत्न से सारे हूनान प्रदेश के विद्यार्थियों और बुद्धिजीवियों में एक अभूतपूर्व नये ढंग की जागृति दिखाई पड़ने लगी। यहीं से माओ की क्रान्तिकारी पत्रकारिता और सामाजिक, राजनीतिक तथा सांस्कृतिक पुस्तिकाओं के प्रभावशाली रूप में निकालने का प्रयत्न होता है। प्रयत्न सफलता का परिणाम था, जो कि पत्रिका को सरकार ने घनी-घोरियों ने बन्द कर दिया।

(3) शांघाइ में दूसरी बार (1919 ई.)–16 जून, 1919 को शांघाइ में विद्यार्थियों की राष्ट्रीय सभा स्थापित हुई। उसके लिए सारे देश के विद्यार्थियों के प्रतिनिधि वहाँ पहुँचे थे। हड़ताल में अब व्यापारी और मजूर भी शामिल हो गये थे। 'चतुर्थ मई-आन्दोलन' ने अब तृतीय जून-आन्दोलन का रूप ले लिया था। माओ ने 'नवीन जनतन्त्रता' में इसके बारे में लिखा है : "जैसे ही तृतीय जून-आन्दोलन (3 जून को पेकिंग के विद्यार्थियों ने सामूहिक रूप से नगर की सड़कों में निकलकर लोगों के सामने भाषण दिये। हजार से अधिक विद्यार्थी पकड़े गये) की खबर शांघाइ पहुँची, तो पेकिंग के विद्यार्थियों का समर्थन करते हुए वहाँ के सभी व्यापारियों, विद्यार्थियों और मजूरों ने हड़ताल कर दी। शांघाइ की इस हड़ताल में केवल बुद्धिजीवी वर्ग ही नहीं, बल्कि सर्वहारा, निम्न मध्यमवर्ग और बूर्ज्वाजी (मध्यमवर्ग) ने भी बहुत भारी संख्या में भाग लिया, और आन्दोलन ने सम्पूर्ण राष्ट्रव्यापी क्रान्तिकारी आन्दोलन का रूप लिया।"

शांघाइ के सर्वहारों के रूप में चीन के मजदूर वर्ग ने पहले-पहल क्रान्ति के पथ पर पैर रक्खा। चीनी सर्वहारा का जन्म पूँजीवाद के जन्म के साथ-साथ हुआ था। माओ चे-तुंग ने 'चीनी-क्रान्ति और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी' में इसके बारे में कहा है : "चीनी सर्वहारा उमर और अनुभव में चीनी बूर्ज्वाजी से जेठा है, क्योंकि चीनी सर्वहारा की उत्पत्ति और विकास केवल चीनी राष्ट्रीय बूर्ज्वाजी की उत्पत्ति और विकास के साथ नहीं हुआ, बल्कि इसी समय चीन में साम्राज्यवादी उद्योग-धन्धों में सीधे कार्य करना भी हुआ।...प्रथम साम्राज्यवादी विश्वयुद्ध के दौरान में चीन का राष्ट्रीय उद्योग...और अधिक विकसित हुआ।" इसके परिणामस्वरूप चीनी सर्वहारा ने भी और प्रगति की।

'चतुर्थ मई-आन्दोलन' में सर्वहारा की दृढ़ शक्ति का सम्मिलित होना क्रान्तिकारी आन्दोलन में एक नये जीवन का संचार करना था। 5 जून, 1919 को शांघाइ के 70 हजार कमकरों ने हड़ताल कर दी। इन हड़तालियों में धातु कमकर, मशीन-टूल, कपड़े के कारखानों, छापेखानों, जहाजों और रेलों, ट्रामों और बसों, टेलीफोन कम्पनियों और दियासलाई के कारखानों, कागज की मिलों और तम्बाकू के कारखानों में काम करनेवाले मजूर शामिल

हुए थे। यही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय भावना इतनी जाग उठी थी कि शांघाइ के टैक्सी-ड्राइवर, सड़क सफाई करनेवाले, होटल में काम करनेवाले, मकानों के राज-मजदूर भी उसमें शामिल हो गये। शांघाई-नानकिन रेलवे-मजदूरों की हड़ताल ने खास तौर से प्रभाव डाला। उसी दिन शांघाइ के व्यापारियों ने भी अपनी दूकानों के दरवाजे बन्द कर लिये और नानकिन, हांग-चाउ, क्यूकियांग, तियान्-चिन, वूहान; अमोय जैसे नगरों, तथा शान्तुंग और आनह्वेइ प्रदेशों के कस्बों और शहरों के व्यापारियों ने भी अपने शांघाइ के भाइयों का अनुसरण किया। तांग-शान में पेकिंग, मुकदन रेलवे के मजूरों तथा चांग-शिन्-तियान में पेकिंग-हानकाउ रेलवे के मजदूरों ने विशाल प्रदर्शन किये। 6 जून को शांघाइ अखिल चक्रसभा ने पेकिंग तार भेजकर देशद्रोहियों को दण्ड देने की माँग की। पेकिंग सरकार के लिए और कोई रास्ता नहीं रह गया, और 9 जून को जापान-समर्थक तीन राजनीतिज्ञ चाउ जू-लिन्, लू चुंग-यू और चांग चुंग-शियांग को उनके पद से हटाते घोषित किया कि चीन पेरिस-सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर नहीं करेगा। आन्दोलन की जबर्दस्त विजय थी, इसे कहने की आवश्यकता नहीं। 28 जून को चीनी प्रतिनिधियों ने पेरिस में सन्धिपत्र पर हस्ताक्षर करने से इन्कार कर दिया। इसकी खबर सारी दुनिया में फैल गई। चीन जैसे एक विशाल राष्ट्र ने नई अँगड़ाई ली और बता दिया कि वह मुर्दा लाश नहीं, बल्कि सजीव शक्तिशाली महाशरीर है, जिसका प्रथम परिचय शांघाइ के सर्वहारों ने क्रांतिकारी आन्दोलन में शामिल होकर दिया।

3. संक्रमण-काल

नव-संस्कृति-आन्दोलन का साम्राज्य-विरोधी और सामन्तवाद-विरोधी रूप था। राजनीतिक आन्दोलन को आगे बढ़ाते उसे देश के कोने-कोने में पहुँचाने में उसने सहायता की। उसका लक्ष्य था पुराणपन्थी आचारों के विरुद्ध सांस्कृतिक क्रान्ति को और पुराने साहित्य के विरुद्ध नवीन साहित्य को आगे बढ़ाना। 'नव-संस्कृति आन्दोलन' अब सारे देश में फैल गया था। जगह-जगह कितनी ही पत्र-पत्रिकाएँ, पुस्तिकाएँ तथा साहित्यिक संग्रह छपकर निकलने लगे। इसी समय ली ता-चाउ ने अपने राजनीतिक निबन्ध लिखे, और लू शुन् ने अपने उपन्यास और कहानियाँ प्रकाशित कीं—ली ता-चाउ ने 1918 के अक्टूबर में 'साधारण जनता की विजय', 'बोल्शेविज्म की विजय', और 'नौजवान' प्रकाशित कराये, पीछे 1919 की मई में उन्होंने मार्क्सवाद पर अपने तुलनात्मक सारगर्भित निबन्ध 'मार्क्सवाद पर मेरे विचार' प्रकाशित किये। इस पुस्तक ने चीन में वैज्ञानिक समाजवाद के प्रवेश का रास्ता साफ कर दिया।

माओ ने 'नवीन जनतन्त्रता' में लिखा है : "यद्यपि चतुर्थ मई-आन्दोलन के समय चीन में अभी कम्युनिस्ट पार्टी नहीं थी, लेकिन ऐसे बुद्धिजीवी काफी संख्या में थे, जो कि रूसी क्रान्ति के समर्थक थे और उनको कम्युनिस्ट विचारधारा का मोटा-मोटा ज्ञान था। चतुर्थ मई-आन्दोलन आरम्भ में जनता के तीन भागों—कम्युनिस्ट बुद्धिजीवियों, क्रान्तिकारी, निम्न-मध्यमवर्गी बुद्धिजीवियों और बूर्ज्वा बुद्धिजीवियों—के संयुक्त मोर्चे का क्रान्तिकारी आन्दोलन था। बूर्ज्वा बुद्धिजीवी उस समय आन्दोलन के दक्षिण पक्ष थे।

पीछे इस क्रान्तिकारी आन्दोलन में जो बूर्ज्वा शामिल हुए थे, और जिन्होंने सांस्कृतिक और वैचारिक संयुक्त मोर्चा कायम किया था, वह दो पक्षों में बँट गये : एक पक्ष उग्र-क्रान्तिकारी जनतन्त्रता के सर्वहारा-समाजवाद अर्थात् साम्यवाद (कम्युनिज्म) की ओर बढ़ा, जिसके मुखिया थे ली ता-चाउ, माओ चे-तुंग, चू च्यू-पो, युन् ताई-यिंग आदि। दूसरे पक्ष में हू शी जैसे लोग थे, जो कि व्यवहारवाद* की ओर बढ़े जिनका मत था "वादों के बारे में बात करने की अपेक्षा समस्याओं का अधिक अध्ययन" करना चाहिए। इसी विषय पर ली ता-चाउ ने अपनी पुस्तक 'वादों की समस्याओं का पुनः परीक्षण' लिखा, जिसमें ली ने हू शी के पाखण्ड का भंडाफोड़ करते हुए बतलाया कि मार्क्सवाद का इतना व्यापक प्रभाव एक महान् घटना है। समस्याओं के अध्ययन को वादों की ठीक शैली और उनके समर्थन के बिना नहीं किया जा सकता। हू शी ने इसके जवाब में 'नवीन विचारधारा का अर्थ' के नाम से एक लेख छपवाया, जिसमें उसने 'छोटी मात्रा में सुधार' और 'समस्याओं की

* Pragmatism.

खंडशः समस्या' की बात कहते हुए मार्क्सवाद तथा समाज के भौतिक पुनर्निर्माण का विरोध किया। आगे और दूर हटते हुए उसने 'भले मानुसों की सरकार' और 'चीन की प्राचीन शिक्षा के अनुसंधान' की बातें कीं। इस प्रकार माओ चे-तुंग के शब्दों में बूर्ज्वा बुद्धिजीवियों का अधिक भाग "शत्रु के साथ समझौता करने तथा प्रतिक्रियावाद के पक्ष में था।"

माओ ने अपने लेख 'पार्टी लफ्फाजी का विरोध करो' में संक्षेपतः इसके बारे में कहा है : "अपने विकासक्रम में चतुर्थ मई-आन्दोलन दो धाराओं में बँट गया। एक ने चतुर्थ मई-आन्दोलन के वैज्ञानिक और जनतान्त्रिक भावों को अपने को मार्क्सवाद के आधार पर फिर से ढाला। यह काम कम्युनिस्टों और कुछ थोड़े-से अ-पार्टी मार्क्सवादियों ने किया। दूसरी धारा ने बूर्ज्वाजी का रास्ता ले दक्षिण पक्ष का रूप लिया।"

शिन्-मिन् सभा भी अब दक्षिणपक्ष और वामपक्ष के दो भागों में बँट गई। अल्पमत निराशावादी हो अपने रास्ते चला गया, लेकिन सभा के अधिकांश मेम्बर सदा जैसे उत्साही तथा ईमानदार प्रगतिशील बने माओ चे-तुंग के उदाहरण और पथ-प्रदर्शन पर चले और उन्होंने सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक व्यवस्था में पूर्ण परिवर्तन करने पर जोर दिया।

'चतुर्थ मई-आन्दोलन' के असफल होने का मुख्य कारण था कि वह इतना व्यापक नहीं था, जिसमें कमकर और किसान सम्मिलित हो जाते। थोड़े-से कमकर (मजूर) जरूर उसमें शामिल हुए, लेकिन पर्याप्त संख्या में नहीं। माओ ने अपने गुरुओं की शिक्षाओं के अनुसार 'चतुर्थ मई-आन्दोलन' लेख में लिखा है : "यदि बुद्धिजीवी कमकरों और किसानों के साथ एकताबद्ध नहीं होते, तो वह कुछ नहीं कर सकते।" कमकरों और किसानों के साथ एकताबद्ध होने का मतलब दूसरे समाजवादियों की तरह से भेड़ों को डंडे के सहारे हाँकना नहीं बल्कि अटूट सम्बन्ध रख उनसे शक्ति और प्रेरणा दोनों को प्राप्त करना है। लेकिन माओ ने 'नवीन स्वतन्त्रता' में स्वीकार किया है : "चतुर्थ मई-आन्दोलन ने विचारधारा और कर्मियों के सम्बन्ध में 1921 में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना के लिए रास्ता तैयार किया, साथ ही 30 मई-आन्दोलन और उत्तरी अभियान का भी रास्ता साफ किया।"

'काम करो और पढ़ो' के खयाल से तीन हजार के करीब चीनी विद्यार्थी फ्रांस गये थे, जिनमें ते-ली, चाउ एन-लाइ जैसे भावी कम्युनिस्ट नेता भी थे। शू ते-ली उन चार सौ हूनानी विद्यार्थियों में से थे, जो कि विचारों में प्रगतिशील रहते सभी तरह की कठिनाइयों को सहने के लिए तैयार थे। ये चार सौ विद्यार्थी बारी-बारी से शांघाइ से फ्रांस के लिए रवाना हुए थे। 1920 ई. की गर्मियों में माओ चे-तुंग (चांग-चिंग-याउ) 'चांग को भगाओ' के लिए हूनान में जनता-आन्दोलन तथा युद्धपति-विरोधी राष्ट्रव्यापी आन्दोलन को संगठित करने के लिए दूसरी बार शांघाइ आये। इसी समय हूनान के स्वावलम्बी विद्यार्थियों का एक जत्था फ्रांस के लिए रवाना हो रहा था। उन्हें विदाई देने के लिए माओ चे-तुंग जहाज पर गये। शांघाइ के पासवाली नदी ह्वांगपू की लहरें सूर्य के प्रकाश में चमक रही थीं। इसी समय में विदाई लेने और देनेवाले एक-दूसरे से जुदा हो रहे थे। वह देर तक एक-दूसरे की तरफ बड़े भावुकतापूर्ण दृष्टि से देखते रहे। जब तक जहाज रवाना नहीं हुआ, माओ चे-तुंग एक हल्के नीले रंग का चोगा पहने जहाज पर चढ़े साथियों के लिए हाथ हिलाते रहे। फिर जहाज के लंगर के उठने की प्रतीक्षा करने से पहले ही वह जेटी पर होते शांघाइ की जनसंकुल सड़कों के जन-समुद्र में विलीन हो गये।

अपने 27 वर्ष की उमर में माओ चे-तुंग ने कितनी मंजिलें पार कीं ? विद्या के लिए असीम प्यास रखनेवाले ग्रामीण तरुण से वह राष्ट्रीय जनतंत्रतावादी बने, पुरानी सामाजिक व्यवस्था, सामन्तवाद और पूँजीवाद का विरोध करते उन्होंने उग्र क्रान्तिकारी जनतांत्रिकता को अपनाया, फिर सर्वहारा-विचारधारा की ओर बढ़ते वह वैज्ञानिक समाजवादी बन गये। अब उनके पास अदम्य उत्साह था, बलिवेदी पर सर्वस्व अर्पण करने की तीव्र इच्छा थी, संगठन की अद्‌भुत शक्ति और व्यापक तजर्बा था, और उसके साथ मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्त हर समय रास्ता बतलाने के लिए उनको मिल चुके थे।

'चिंग याउ' के लिए हूनानी जनता के आन्दोलन के सम्बन्ध में ही दूसरी बार शांघाइ जाने से पहले माओ

चे-तुंग पहले नौजवान संघ के निश्चयानुसार उसकी ओर से भेजे पेकिंग जानेवाले प्रतिनिधि मंडल में शामिल हुए। दूसरा प्रतिनिधि मंडल डा. सुन यात्-सेन के पास गया था। पेकिंग में माओ को चेन् श्यू-तू से मिलना था, लेकिन वहाँ जाने पर मालूम हुआ कि चेन् शांघाइ चले गये। इस समय पेकिंग में रहते उन्होंने अनेक बार ली ता-चाउ से मुलाकात की, और उससे मार्क्सवाद के बारे में बहुत-सी बातें मालूम कीं। उस समय रूसी क्रान्ति के बारे में बहुत कम ही पुस्तकें चीनी भाषा में लिखी गई थीं। माओ को कार्ल मार्क्स-एंगेल्स की अमर रचना 'कम्युनिस्ट घोषणापत्र' पढ़ने को मिला। कौत्स्की का 'वर्ग-संघर्ष' और किरकुप का 'समाजवाद का इतिहास' पढ़ने को मिले। इन तीनों पुस्तकों ने माओ की विचारधारा का निर्माण करने में बड़ी सहायता की।

(4) विवाह—चतुर्थ मई-आन्दोलन के फलस्वरूप उसके मूलस्थान पेकिंग में भी उस समय वड़ी चेतना फैली हुई थी। सारे रूस में उसी तरह की उत्तेजना और जोश दिखलाई पड़ता था, जैसाकि उस समय भारत में हो रहा था। विद्यार्थी पकड़े जाते और उनकी जगह नये दूसरे अधिक संख्या में लेते। स्त्रियाँ भी आन्दोलन में शामिल होने लगी थीं। माओ की प्रिया यांग काइ-हुइ स्वयं भाग ले रही थीं। माओ अपनी भावी पत्नी के साथ उसके पिता तथा अपने पुराने अध्यापक के घर जाया करते। प्रोफेसर ने माओ को बतलाया कि रूस में राजसत्ता मजूरों के हाथ में चली गई। माओ के हृदय में जबर्दस्त प्रेरणा मिली, जो कि तीनों उक्त ग्रन्थों के पढ़ने से कम नहीं थी। उन्होंने सोचा : "दुनिया में एक जगह तो सर्वहारा का राज्य कायम हो गया।"

कुछ दिनों तक पेकिंग में रहने के बाद माओ चेन्-श्यू-तू से मिलने शांघाइ चले गये, जहाँ उन्होंने रूसी क्रान्ति तथा अपनी पढ़ी तीनों पुस्तकों की चर्चा की। चेन् ने रूसी क्रान्ति की प्रशंसा की और मार्क्सवाद के बारे में अपनी जानी हुई बातें बतलाईं। इस प्रकार माओ चे-तुंग के जीवन ने एक जबर्दस्त मोड़ लिया।

(5) फिर हूनान में—1919 ई. में दुबारा शांघाइ में जाकर चेन्-श्यू-तू से माओ ने मुलाकात की और माओ के शब्दों में उन्होंने शायद मुझे सबसे अधिक प्रभावित किया। शांघाइ में रहते उन्होंने 'हूनान पुनर्निर्माण लीग' के संगठन के बारे में बातचीत की। शांघाइ से चांगशा लौटने के बाद माओ ने लीग के संगठन में हाथ लगा दिया। लीग का उद्देश्य था हूनान की आजादी के लिए संघर्ष और आजादी का अर्थ था स्वायत्त-शासन। लीग के सदस्यों का विश्वास था कि यदि हूनान पेकिंग के प्रतिक्रियावादी शासन से अलग हो जाय, तो वह तेजी से उन्नति कर सकता है। हूनान के स्वतन्त्रता-आन्दोलन के समर्थकों में चाउ-हेंग-ती नामक एक युद्धपति भी था। जन-आन्दोलन की सहायता से उसने हूनान के राज्यपाल को भगाकर शासन की बागडोर अपने हाथ में ले ली, और फिर जन-आन्दोलन का बलपूर्वक दमन करने लगा। माओ तथा उनके दल के लोग अभी बूर्ज्वा जनतन्त्र के समर्थक थे और स्त्री-पुरुषों के समानाधिकार तथा पार्लियामेण्टरी सरकारी माँग करते थे। माओ ने चांगशा लौटकर लीग की ओर से 'नवीन हूनान' पत्र का सम्पादन शुरू कर दिया, जिसके शक्तिशाली लेखों और लीग के प्रयत्न की सहायता से तान् येन्-काइ ने पेकिंग के क्षत्रप चांग को मार भगाया था जब दूसरे युद्धपति ने वही काम करना शुरू किया, तो 'नवीन हूनान' ने उसके विरोध के लिए कमर कसी, और तरुणों ने प्रतिक्रियावादी प्रादेशिक पार्लियामेण्ट पर आक्रमण करके उसके झंडों और तोरणों को फाड़ फेंका।

1920 की 7वीं नवम्बर की तारीख आई। रूस में सर्वहारों की सरकार कायम हुए तीन वर्ष हो चुके थे। माओ चे-तुंग और उनके साथियों ने रूसी-क्रान्ति के तृतीय महोत्सव को मनाने का निश्चय किया। इसके उपलक्ष्य में एक प्रदर्शन का संगठन हुआ। सभा में लालझंडा फहराने के समय पुलिस ने लोगों को रोकना चाहा। प्रदर्शनकारियों ने जब विधान की बारहवीं धारा में उल्लिखित जनता के सभा-सम्मेलन करने और भाषण की स्वतंत्रता के बारे में कहा, तो पुलिस ने साफ कह दिया कि हमें विधान देखने की फुर्सत नहीं है, बल्कि राज्यपाल चाओ ह्वेग पी की आज्ञा पालन करनी है। इस उत्तर को सुनकर माओ की आँखें खुल गईं और उन्हीं के शब्दों में : "इस घटना के बाद मेरा यह विश्वास पक्का हो गया कि सजीव सुधार केवल जन-संघर्षों द्वारा प्राप्त जनता की राजनीतिक शक्ति द्वारा ही पाये जा सकते हैं।" इसी समय यांग काइ-हुइ से माओ ने विवाह किया। अब दोनों मिलकर नौजवान संघ में काम करने लगे। माओ ने अब मार्क्सवाद को स्वीकार कर लिया था।

7
पार्टी-जीवन आरम्भ (1921-23 ई.)

चीनी सामन्तवाद अपने हजारों वर्ष पुरानी चाल से चला जा रहा था, लेकिन पूँजीवाद दुनिया के किसी कोने को कैसे अछूता छोड़ सकता था ? उसे लाभ-शुभ के साथ व्यापार करना था, और अधिक-से-अधिक नफा कमाने के लिए उसे कोई चीज अकरणीय नहीं थी। अगर कोई देश व्यापार के लिए दरवाजा बन्द करता, तो भाप और लोहेवाले उसके आधुनिक जहाज अपनी शक्तिशाली तोपों को लेकर दरवाजा तोड़ने के लिए तैयार थे। 19वीं शताब्दी के मध्य में पहुँचते-पहुँचते कारखानों के माल से भी ज्यादा लाभ का व्यापार था अफीम का। अफीम की लत के कारण कोई जाति तबाह हो जाय, तो उनकी बला जाने। एक तरफ यूरोपीय पादरी काफिरों को ईसाई बनाकर धर्म के रास्ते पर चला, उनके वास्ते स्वर्ग का दरवाजा खोल रहे थे, और दूसरी तरफ अंग्रेज व्यापारी अफीम खिलाकर सारी जाति को रसातल पहुँचाने का प्रयत्न कर रहे थे। चीन ने जब अफीम खाने से इन्कार किया, तो 1840 ई. में ब्रिटेन की हथियारबन्द सेनाओं ने चीन पर हमला करके अफीम-युद्ध शुरू कर दिया, और जैसाकि हम देख चुके हैं, असमान शर्तों के साथ नानकिन-सन्धि पर हस्ताक्षर करने के लिए उसे मजबूर किया। इसके बाद चीन के अंग-भंग करने और वहाँ मनमाने सुभीते प्राप्त करने के लिए यूरोपीय शक्तियों ने लगातार जो लड़ाइयाँ छेड़ीं, उनका अन्त एक तरह से 1949 ई. में चीन में लोकशाही गणराज्य की स्थापना के बाद ही हो सका। 1857 ई. में—उसी साल जब कि भारतीय मुक्ति-युद्ध को दबाया गया—अंग्रेजों और फ्रांसीसियों ने मिलकर चीन से युद्ध छेड़ा। 1884 ई. में फ्रांसीसियों ने चीन से लड़ाई की, दस वर्ष बाद 1894 ई. में जापान ने प्रहार किया। 1900 ई. में बाक्सर-विद्रोह में सात पश्चिमी राज्यों और आठों सवारों में नाम लिखानेवाले जापान ने भी चीन पर हमला करके मनमानी शुरू की। 1914 ई. में पश्चिमी शक्तियों को आपस में उलझा देखकर जापान ने शान्तुंग पर हाथ साफ किया, और उसके बाद द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त होने तक वह चीन के प्रदेशों को एक के बाद एक दबाता गया, यह हम आगे देखेंगे। जापान के जूते में अमेरिका ने पैर रखना चाहा, लेकिन आखिर में उसे और उसके पिट्ठू चांग काइ-शेक को मुँह की खानी पड़ी और पुराने की जगह पर अधिक सुन्दर, अधिक शक्तिशाली और अधिक उद्बुद्ध आधी अरब जनता का चीन पैदा हुआ। इस महान् परिवर्तन का काम चीन की कम्युनिस्ट पार्टी और उसके महान् नेता माओ चे-तुंग ने किया जिनको अपने जन्म से ही तलवारों की छाया में पलना पड़ा। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास भीषण युद्धों और महान् त्याग का इतिहास है। जन्म से (1 जुलाई, 1921) तिब्बत की मुक्ति (नवम्बर, 1950) तक अपने तीस वर्ष के जीवन को उसने संघर्षों में बिताया। इस तीस वर्ष के काल को चार युद्धकालों में विभक्त किया जाता है :

(1) पार्टी का जन्म और 1921-27 का पहला क्रान्तिकारी गृहयुद्ध,

(2) 1927-36 ई. का दूसरा क्रान्तिकारी गृहयुद्ध,

(3) 1936-47 ई. का जापानी आक्रमण के विरुद्ध प्रतिरोध-युद्ध, और

(4) 1945-51 ई. का तीसरा क्रान्तिकारी गृह-युद्ध और चीन में लोकशाही गणराज्य की स्थापना।

कम्युनिस्ट पार्टी—सर्वहारा की मुक्ति-युद्ध के संचालन का जेनरल स्टाफ—सर्वहारा की उत्पत्ति के बिना अस्तित्व में नहीं आ सकती। इसीलिए उसका अस्तित्व तब आया, जब कि चीन में आधुनिक उद्योग-धन्धों का विस्तार होने लगा। 19वीं सदी के उत्तरार्ध में 1860-69 ई. तक के काल में चीन में नये तरह के कारखाने स्थापित होने लगे, लेकिन देशी सामन्तवाद उसकी ओर से उदासीन था और विदेशी पूँजीवाद चीन को अपने माल का बाजार बनाये रखना चाहता था, इसलिए उद्योग-धन्धों की प्रगति बड़ी मन्द रही; लेकिन, पीछे—विशेषकर पूँजीवाद के अपने इजारादारी रूप—साम्राज्यवाद बनने के समय (20वीं सदी के आरम्भ) से अब विदेशी उद्योगपति अपनी पूँजी चीन के अपने अधीनस्थ भागों हांककांग या अपने प्रभाव-क्षेत्रवाले शांघाइ जैसे नगरों में कल-कारखाने

बनाने लगे, और इस प्रकार इन कारखानों के आसपास सर्वहारा जमा होने लगे। 'ताइपिंग राज्य' के काल (1851-1864 ई.) में किसानों ने क्रान्तिकारी युद्ध करके एक नई तरह की राजव्यवस्था कायम करने की कोशिश की, जिसकी परम्पराएँ चीन की उत्पीड़ित जनता में आशा का संचार करती थीं। लेकिन इससे जग-परिवर्तन का काम नहीं हो सकता था। उसकी ठोस भूमि सर्वहारा ही हो सकती थी, जो कि वास्तविक सामाजिक क्रान्ति करने के लिए स्थायी सेना का रूप ले सकता था। चीनी सर्वहारा ने 1915 ई. में हांगकांग में पहले-पहल अपना मजदूर संगठन किया। चतुर्थ मई-आन्दोलन ने जन-जागृति के लिए बड़ा काम किया, यह हम बतला आये हैं, किन्तु सबसे महत्त्वपूर्ण बात थी उसी साल के 3 जून को शांघाइ में जापानी और दूसरे विदेशी मिलों के मजूरों का राजनीतिक हड़ताल में पैर रखना। विदेशी सेनाओं ने उनके ऊपर गोली चलाई। लेकिन, गोली सर्वहारा के आन्दोलन को दुनिया में कहीं भी दबा नहीं सकी। रूस में जार ने खूनी अवतार मनाकर केवल अपने लिए कब्र खोदी। पेकिंग और तिंग-ताउ के मजदूरों ने भी हड़ताल में भाग लिया और अगले साल 1920 ई. में मजदूरों का त्यौहार मई दिवस मनाया गया। हू चियाओ-मू के अनुसार[1] :

"1919 की 4 मई के आन्दोलन में चीन के मजूर वर्ग ने पहली बार अपनी ताकत का प्रदर्शन किया, तथा उसने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के असर को ग्रहण करना शुरू किया। चीन के इतिहास में पहली बार जनता ने राष्ट्रव्यापी साम्राज्य-विरोधी संघर्ष में भाग लेते और इस प्रकार संघर्ष को तेजी के साथ विजय तक पहुँचाने में मदद देने के लिए शांघाइ, तांग-शान् और चांग-सिन्-तिन् के मजदूरों ने राजनीतिक हड़ताल की। मजूर वर्ग की ताकत की वृद्धि ने चीन के वामपक्षी बुद्धिजीवियों में जान फूँक दी और उन्हें मजदूरों के बीच क्रान्तिकारी काम करने के बारे में फैसला करने में मदद दी। सांस्कृतिक क्षेत्र में 4 मई के आन्दोलन ने जनवाद और विज्ञान के लिए संघर्ष करने के नारे को जन्म दिया। लेकिन, रूस में हुई अक्टूबर की क्रान्ति से प्रभावित होकर उस आन्दोलन के वाम-पक्ष ने–उन क्रान्तिकारी बुद्धिजीवियों ने, जिन्होंने साम्यवाद के बारे में प्राथमिक जानकारी हासिल की थी–इस दृष्टिकोण का प्रचार करना शुरू किया कि चीन में समाजवाद को कार्यरूप में परिणत करना और चीनी-क्रान्ति के मार्ग-दर्शन के लिए मार्क्सवाद-लेनिनवाद से काम लेना जरूरी है। इस दृष्टिकोण को अपना आधार बनाकर वे मजूरों के बीच प्रचार और संगठन-सम्बन्धी काम करने लगे। इस प्रकार चीन के मजदूर-वर्ग के आन्दोलन और चीन के क्रान्तिकारी आन्दोलन ने एक नये युग में प्रवेश किया।"

माओ चे-तुंग ने अपनी पुस्तक 'जनता की नई लोकशाही' में 1919 ई. के साल को चीन की जनवादी-क्रान्ति में एक ऐसे मोड़ का साल बताया है, जिसने पुरानी तरह की जनवादी क्रान्ति को नई तरह की जनवादी क्रान्ति में बदल दिया। इसी साल से जनवादी क्रान्ति ने चीन के मजूर-वर्ग के नेतृत्व में चलनेवाली क्रान्ति का रूप धारण कर लिया।

1. कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना (1921 ई.)

अक्टूबर-क्रान्ति के बाद विशेष तौर से समाजवादी विचारधारा चीन में फैलने लगी और जगह-जगह नई विचारधारावाले लोग पैदा होने लगे। अब इनको संगठित करके कम्युनिस्ट पार्टी को अस्तित्व में लाने की आवश्यकता थी। पार्टी की स्थापना के बारे में साथी हू ने लिखा है[2] :

"कम्युनिस्ट दलों द्वारा चुने गये बारह प्रतिनिधियों ने 1 जुलाई, 1921 को शांघाई में हुई पहली पार्टी-कांग्रेस में हिस्सा लिया। ये वे दल थे, जो 4 मई के आन्दोलन के बाद कई केन्द्रों में कायम हो गये थे। इन प्रतिनिधियों में माओ चे-तुंग, तुंग पी-हू, चेन् तान्-च्यू, ओ शू-हेंग आदि शामिल थे। लगभग पचास कम्युनिस्टों ने इन्हें अपना प्रतिनिधि चुनकर कांग्रेस में भेजा था। पहली पार्टी-कांग्रेस ने चीन की कम्युनिस्ट पार्टी का पहला विधान मंजूर किया, पार्टी के केन्द्रीय संगठन का चुनाव किया और चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की नींव डाली। उस दिन से

1. 'चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के तीस वर्ष', पृष्ठ 6-7
2. वही, पृष्ठ 8

चीन में एक बिलकुल नई और संयुक्त राजनीतिक पार्टी–मजदूरों की एक ऐसी पार्टी का उदय हुआ, जिसका उद्देश्य था साम्यवाद और जो लेनिनवाद के पथ-निर्देशन में काम करती थी। इस कांग्रेस में कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल का एक प्रतिनिधि भी मौजूद था।"

पार्टी की स्थापना के लिए अब के तीसरी बार माओ शांघाइ गये, जहाँ उन्होंने पार्टी की स्थापना में भाग लिया। इस समय उनकी अवस्था 27 वर्ष की थी। पहली पार्टी-कांग्रेस में पार्टी की स्थापना के बाद माओ फिर अपने कार्य-क्षेत्र हूनान में चले आये और उन्होंने कांग्रेस के निश्चयानुसार हूनान पार्टी के सेक्रेटरी का पद सँभाला। यह भी याद रखना चाहिए कि जिस तरह चीन में वहाँ के साथियों ने अपनी कम्युनिस्ट पार्टी स्थापित की, उसी तरह विदेश में रहनेवाले कम्युनिस्ट विचारधारा रखनेवाले चीनी तरुणों ने वहाँ भी पार्टी स्थापित की। इसी तरह चाउ एन्-लाइ, ली-सान् और शांग चेन्-लू (चाइ-हो-शांग की पत्नी तथा पार्टी संस्थापकों में एकमात्र चीनी महिला) ने फ्रांस में पार्टी के निर्माण में काम किया। लो मान् और चाइ-हो-शांग चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की फ्रेंच शाखा के संस्थापक थे। जर्मनी में जो पार्टी-शाखा बनाई गई, उसमें काओ यू हान्, चू तेह (आजकल चीन गणराज्य के महासेनापति), और चांग-शांग-पूँ (पीछे चिंग-हुआ विद्यापीठ के प्रोफेसर) थे। मास्को में चू च्यू-पाइ आदि ने पार्टी-शाखा खोली और जापान में भी चाउ फू-हाइ आदि ने यह काम किया।

शांघाइ से लौटकर हूनान में माओ ने पार्टी का काम जोर-शोर से शुरू किया। 1922 के मई महीने में हूनान-पार्टी के खनक मजूरों, रेलवे मजूरों, म्यूनिसिपल मजूरों, प्रेस मजूरों, सरकारी टकसाल के मजूरों के संगठनों को मिलाकर मजूरसंघ स्थापित किया, और उस साल के जाड़ों तक मजूर-आन्दोलन जोर-शोर से होने लगा।

शांघाइ में पार्टी ने चेन् तू-श्यू को अपना नेता चुना था, लेकिन उसका मार्क्सवाद बहुत गहरा नहीं था। चतुर्थ मई-आन्दोलन में वह एक अत्यन्त उग्र जनवादी नेता के तौर पर प्रसिद्ध हुआ था, इसलिए चीन में मार्क्सवाद के आते ही वह एक प्रभावशाली समाजवादी प्रचारक बन गया।

1922 के जाड़ों में हूनान के राज्यपाल ने दो मजूरों को फाँसी की सजा दी, जिनमें हुवांग पाइ भी था। हुवांग पाइ एक आतंकवादी विद्यार्थी था। फाँसी की सजा रद्द करने के लिए जब आन्दोलन शुरू हुआ, तो कुछ साथियों ने शंका उठाई कि आतंकवादी को छुड़ाने के लिए हमें प्रयत्न करने की आवश्यकता नहीं। इस पर माओ ने अपनी दीर्घदर्शिता का परिचय देते हुए कहा : कोई बात नहीं, आखिर वह मजूर तो है। और हम दोनों के सम्मिलित दुश्मन ने उसे सजा दी है, इसलिए उसकी सजा रद्द करने के लिए लड़ना हमारा कर्तव्य है। फाँसी के रद्द करने के आन्दोलन के लिए माओ को जाना पड़ा, जहाँ पार्टी की दूसरी कांग्रेस होनेवाली थी।

2. द्वितीय पार्टी-कांग्रेस (1922 ई.)

मई, 1922 में पश्चिम सरोवर (सी), हांग-चाउ में यह कांग्रेस हुई, जिसमें पार्टी का घोषणा-पत्र तैयार किया गया, और महतम तथा लघुत्तम कार्यक्रम बनाया गया। जरूरी कर्तव्यों के बारे में कांग्रेस का कहना था :

"... गृह-युद्ध को खतम करना, सामन्ती युद्धपतियों का तख्ता उलटकर देश में शान्तिमय काम करना, अन्तर्राष्ट्रीय साम्राज्यवाद के उत्पीड़न का अन्त करना, चीनी राष्ट्र को पूर्ण स्वतन्त्र बनाना, और एक सच्चे जनवादी गणराज्य के रूप में समूचे चीन को एकताबद्ध करना।"

घोषणापत्र में कुछ कमियाँ भी थीं, सर्वहारा-वर्ग के नेतृत्व के बिना जनवादी क्रान्ति भूलभूलैया में पड़ सकती है, और इस नेतृत्व को द्वितीय कांग्रेस ने घोषित नहीं किया था। यही नहीं बल्कि किसानों के लिए जमीन की माँग तथा उनके राजनीतिक अधिकारों के बारे में भी कुछ नहीं कहा गया था। इसमें मजूरों और किसानों के जनवादी क्रान्ति में हिस्सा लेने तथा सिर्फ अपने अधिकारों के लिए संघर्ष करने के वास्ते आवाहन किया गया था। इस गलती के कारण 1924 से 1927 ई. तक के काम में पार्टी के काम में चेन् तू-श्यू की असरवादी नीति ने बहुत हानि पहुँचाई। दूसरी पार्टी-कांग्रेस में चीनी पार्टी को कम्युनिस्ट इन्टरनेशनल से सम्बद्ध करने का भी फैसला किया गया।

इस कांग्रेस में माओ चे-तुंग शामिल नहीं हो सके। उन्हें शांघाइ का जो पता दिया गया था, वहां कांग्रेस नहीं हुई। गैरकानूनी होने के कारण कांग्रेस के स्थान को बदलकर उसे हांग-कांग में किया गया। माओ ने बड़ी कोशिश की, लेकिन स्थान और स्थान-परिवर्तन का पता नहीं लग सका और इस प्रकार उनको वहाँ से खाली हाथ हूनान लौटना पड़ा।

मजूर-आन्दोलन में उन्होंने फिर जोर-शोर से काम शुरू किया, और 1 मई 1923 के दिन हूनान प्रदेश में मजूरों ने आम हड़ताल कर दी। उनकी माँगें थीं : मजूरी बढ़ाओ, मालिकों की मनमानी कम करो और मजूर-सभा को स्वीकार करो। चीनी मजूर-आन्दोलन के इतिहास में यह हड़ताल अपूर्व थी।

3. तृतीय पार्टी कांग्रेस (1923 ई.)

चीन में मजूरों का आन्दोलन बढ़ता गया। हूनान में माओ उसका संचालन कर रहे थे। अब छिटपुट होते मजूर-आन्दोलनों को एकताबद्ध करने के लिए पार्टी ने एक कानूनी मजूर-संघ (ट्रेड यूनियन) सचिवालय की स्थापना की और मई, 1922 में कान्तन् में पहली अखिल चीन मजूर-कांग्रेस की गई। पार्टी के काम का यह परिणाम हुआ कि जनवरी, 1922 से फरवरी, 1923 तक सारे देश में मजूरों के संघर्ष ने जोर पकड़ा और देश के बड़े-बड़े नगरों और औद्योगिक केन्द्रों में सौ से अधिक हड़तालें हुईं, जिनमें तीन लाख मजूरों ने भाग लिया। सभी हड़तालों के अगुवा कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्य थे और अधिकतर हड़तालें पूरी तरह सफल हुईं। इस प्रकार कम्युनिस्टों के नेतृत्व में मजूरों ने अपने मजूर-संघों को निर्माण करके उसकी जड़ें मजबूत कीं।

एक तरफ मजूर-आन्दोलन इस प्रकार जोर पकड़ता जा रहा था, दूसरी तरफ प्रतिक्रियावाद भी प्रहार करने के लिए तैयार था। उस समय हो-पे, हूनान और हू-पेइ प्रदेशों पर युद्धपति वू पेइ-कू का आधिपत्य था। पेकिंग-हांग-कांग रेल-मजूरों के आम मजूर-संघ की उद्घाटन-सभा होनेवाली थी। वू ने उस पर प्रहार करने का निश्चय किया। इसके विरोध में बाकी रेलवे लाइनों के मजूरों ने भी हड़ताल कर दी। वू ने अपने सैनिकों को भेजकर 7 फरवरी को हान्‌काउ और चांग-शिन्-तिन् में रेलवे-मजूरों के साथ खून की होली खेली, जिसे 7 फरवरी का हत्याकांड कहा जाता है। इसमें 40 मजूर शहीद हुए और कई सौ घायल। मजूरों ने प्रथम बलिदान और अपनी हिम्मत को दिखलाकर सर्वहारा की शक्ति का परिचय दिया; किन्तु अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित प्रतिक्रियावादियों की सेना से निहत्थे मजूर कैसे सफलतार्वूक लड़ सकते थे ? कम्युनिस्ट पार्टी भी पेरिस कम्यून तथा रूसी-क्रान्ति के तजर्बा से जानती थी कि बिना किसानों की सहायता के सर्वहारा सफल नहीं हो सकता—चीन की आबादी में 80 सैकड़ा किसान थे। इनके अतिरिक्त नगरों के निम्न-पूँजीपति-वर्ग के लाखों लोगों तथा पूँजीवादी वर्ग के उन जनतन्त्रवादियों को भी साथ लेना जरूरी था; जो कि साम्राज्य था और सामन्तवाद से लोहा लेने के लिए तैयार थे।

इन सब बातों पर विचार करके पार्टी ने सुन यात्-सेन् के नेतृत्व में चलनेवाले कुओ-मिन्-तांग से मेल करने के लिए ठीक कदम उठाया। 1911 ई. में मंचू-शासन को उठाने में तुंग-मेन-हुइ (क्रान्तिकारी लीग) ने भारी काम किया था, इस प्रकार उसकी परम्परा जनवादी थी। इसी तुंग-मेन्-हुइ ने कुओ-मिन्-तांग का रूप लिया, यह हम देख आये हैं। 1911 ई. की क्रान्ति को जब विश्वासघातियों ने विफल करके युवान् शि-काइ को ला बैठाया और देश में युद्धपतियों का बोलबाला होने के लिए रास्ता साफ कर दिया, तो भी डा. सुन् यात्-सेन् के नेतृत्व में उसके एक भाग ने जनवादी संघर्ष को नहीं छोड़ा। पेकिंग सरकार के विरुद्ध संघर्ष करने में, डा. सुन ने आशा रक्खी थी कि क्वान्-तुंग के युद्धपति हमारी सहायता करेंगे, लेकिन युद्धपति च्यांग मिन् ने उन्हें क्वान्-तुंग से भगा दिया, जिनके कारण कुओ मिन्-तांग और भी अधिक टूट-फूट गई।

ऐसी अवस्था में सब तरह से निराश होकर डा. सुन् और कुओ-मिन्-तांग के दूसरे सदस्यों को आशा की किरण कम्युनिस्ट पार्टी तथा मजूर-आन्दोलन की शक्ति में दिखाई पड़ी, और उन्होंने सोवियत रूस और कम्युनिस्ट पार्टी के साथ मेल करना चाहा।

इसके बाद जून, 1923 में कान्तन् शहर में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की तीसरी कांग्रेस हुई, जिसमें शामिल

होने के लिए हूनान के हाल के जबर्दस्त मजूर-हड़ताल के तजर्बों को लिए माओ चे-तुंग भी शामिल हुए। जिस समय कांग्रेस बैठ रही थी, उसी समय जापानी माल के बायकाट के आन्दोलन द्वारा चीन में जापानी व्यापार को बहुत नुकसान पहुँचा था। उसी समय साइबेरिया के भीतर घुसे जापानियों को सोवियत सेना हार पर हार दे रही थी। अमेरिका चीन के बाजार को अपने हाथ में करने की सोच रहा था, इसलिए वह नहीं चाहता था, कि जापान का पैर वहाँ मजबूत हो। उसने अंग्रेजों को भी जापान से अलग करने के लिए दबाव डाला। जापान को मजबूर होकर शातुंग से निकलना स्वीकार करना पड़ा। चीन के भीतर भी स्थिति बदलती जा रही थी। चतुर्थ मई आन्दोलन के समय कान्तन् में ली की सरकार टूट गई, शहर का मध्यम-वर्ग डा. सुन् के कुओ-मिन-तांग दल की ओर झुक रहा था। लेकिन कुओ-मिन् तांग के पास अभी ऐसी शिक्षित सेना नहीं थी, जो युद्धपतियों का मुकाबला कर सकती। डा. सुन् ने अपने मित्र मोरिस कोहेन को कनाडा और अमेरिका में भेजकर सैनिक विशेषज्ञों को बुलाना चाहा। विशेषज्ञ आने के लिए तैयार थे, लेकिन उनकी सरकारें चीन में एक मजबूत शासन को देखना पसन्द नहीं करती थीं। इंग्लैंड और फ्रांस की भी वही नीति थी। जापान से कोई आशा नहीं रक्खी जा सकती थी। इस प्रकार चारों ओर का रास्ता बन्द देख डा. सुन् का ध्यान सोवियत रूस की तरफ गया। अपने जन्म से ही सोवियत रूस ने सभी देशों की पूर्ण स्वतन्त्रता की माँग की थी। जारशाही रूस में चीन के साथ असमान सन्धि करके जो बन्दर दखल किये थे, और पूर्वी चीन के रेलों आदि के बारे में दूसरे विशेषाधिकार प्राप्त किये थे, उन्हें सोवियत सरकार ने लौटा दिया था।

डा. सुन् के माँगने पर सोवियत रूस ने गालेन जैसे सैनिक तथा बोरोदिन जैसे राजनीतिक विशेषज्ञों को चीन भेजा। उसी समय एशियाई समझकर एम. एन. राय को भी भेजा गया, जिन्होंने अन्त में अपने कामों से हमेशा के लिए अपने मत्थे में कलंक का टीका लगाते भारत को भी बदनाम किया।

जून 1923 में पार्टी की तीसरी कांग्रेस ने साम्राज्यवाद और सामन्ती युद्धपतियों के खिलाफ खड़े होने की डा. सुन् की जनवादी नीति का ठीक तौर से मूल्यांकन किया। साथ ही उसने कुओ-मिन्-तांग को मजूरों-किसानों, निम्न-पूँजीपतियों और राष्ट्रीय पूँजीपतियों के क्रान्तिकारी संगठन के रूप में परिवर्तित करने की संभावना के बारे में भी ठीक राय कायम की। पार्टी ने दो बड़ी गलतियों की आलोचना की : एक गलती समर्पणवादी चेन्-तु-श्यु जैसे लोग कर रहे थे, जो समझते थे, कि पूँजीवादी जनवादी क्रान्ति की अगुवाई पूँजीपति-वर्ग ही कर सकता है, इसलिए सारा काम कुओ-मिन्-तांग को समर्पित कर देना चाहिए। वह यह भी मानते थे कि क्रान्ति के सफल हो जाने पर सर्वहारा को बस इतना ही लाभ होगा कि उसे कुछ साँस लेने की फुर्सत तथा थोड़े-से अधिकार मिल जायेंगे। वह यह नहीं समझ पाते थे कि क्रान्ति की अगुवाई के लिए सर्वहारा-वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी के आगे बढ़ाने की कोशिश करनी चाहिए, जिसमें कि सर्वहारा-वर्ग क्रान्ति की विजय से अधिकाधिक लाभ उठा राजनीतिक सत्ता को हाथ में लेने में सफलता प्राप्त कर सके, और उसे काम में लाकर देश को समाजवाद की ओर बढ़ाने के लिए अगला कदम उठा सके। चांग कुओ-ताउ जैसे लोग 'बन्द दरवाजे' की नीति को स्वीकार करते दूसरी गलती कर रहे थे। उनका कहना था कि कुओ-मिन्-तांग के साथ सहयोग का दरवाजा बन्द होना चाहिए। क्योंकि कुओ-मिन्-तांग के मध्यवर्गी लोग नहीं, बल्कि मजूरवर्ग ही सफल क्रान्ति कर सकता है, कुओ-मिन्-तांग कभी जनवादी क्रान्ति का साथ नहीं दे सकती। यह लोग कुओ-मिन्-तांग में कम्युनिस्टों, मजूरों और किसानों के शामिल होने का विरोध करते थे। कांग्रेस ने पहले प्रकार के सुधारवादी और दूसरी प्रकार के नामधारी 'वामपक्षी' दृष्टिकोणों को गलत बतलाते हुए निश्चय किया कि कुओ-मिन्-तांग के साथ हमें सहयोग करना चाहिए, और हमारे सदस्यों को उसमें शामिल हो उसे क्रान्तिकारी जनवादी संगठन के रूप में बदलना चाहिए। यह सब करते हुए कांग्रेस ने यह भी निश्चय किया कि पार्टी के संगठन और राजनीतिक स्वतन्त्रता को यथापूर्व कायम रखना चाहिए। अभी भी पार्टी-कांग्रेस किसानों और सशस्त्र सेना के महत्त्व पर ठीक से ध्यान नहीं दे सकी थी। तृतीय कांग्रेस में माओ चे-तुंग ने भाग लिया और गलत दृष्टिकोणों का विरोध करते हुए सही दृष्टिकोण अपनाने के पक्ष में अपनी राय दी। कांग्रेस ने उन्हें पार्टी की केन्द्रीय कमेटी का सदस्य चुना।

8

कुओ-मिन्-तांग से सहयोग (1923-26 ई.)

1. संयुक्त मोर्चा

इस समय डा. सुन्-यात्-सेन् के नेतृत्व में कुओ-मिन्-तांग और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी दोनों चीन की स्वतन्त्रता और वहाँ वास्तविक जनतन्त्रता को स्थापित करने के लिए परस्पर सहयोग कर रहे थे। चीन की सैनिक और आर्थिक स्थिति को मजबूत करने के लिए सोवियत रूस के विशेषज्ञ भी उनकी सहायता कर रहे थे। इसके फलस्वरूप देश में एक नई स्फूर्ति आ रही थी। कम्युनिस्ट इण्टरनेशनल के मुख्य संगठनों तथा चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की कोशिशों से जनवरी, 1924 में कान्तन् में कुओ-मिन्-तांग की पहली राष्ट्रीय कांग्रेस हुई। इस कांग्रेस ने एक घोषणा-पत्र जारी किया, जनवादी क्रान्ति के कार्यक्रम की रूपरेखा बनाई और अपने को पुनर्गठित करने तथा क्रान्तिकारी साँचे में ढालने के लिए अनेक उपायों की रूपरेखा तैयार की। इस समय तक व्यक्तिगत रूप से कम्युनिस्ट भी कुओ-मिन्-तांग में शामिल हो गये थे। माओ ने राय दी थी : यदि हम अपने संगठन को अलग कायम रखते व्यक्तिगत रीति से कुओ-मिन्-तांग में दाखिल हों, तो हम बुरी तरह से फँसने से ही नहीं बचेंगे, बल्कि कुओ-मिन्-तांग के विश्वसनीय उग्र तत्त्वों को भी आगे बढ़ाने में सहायता करेंगे। चेन् तू-श्यू उत्साह में इतना उतावला हो गया था कि वह कम्युनिस्ट पार्टी के अलग संगठन को भी अनावश्यक समझता था। माओ का कहना था–यदि हमारी पार्टी छिन्न-भिन्न कर दी गई, तो मजूरों के हक के लिए कौन लड़ेगा ? माओ ने इसी तरह 'वामपक्षी' चेंग हाउ-ताउ के मत का भी खंडन किया। उनके प्रयत्न का यह परिणाम हुआ कि कुओ-मिन्-तांग में सम्मिलित होकर पार्टी-मेंबरों ने कुओ-मिन्-तांग की कांग्रेस में महत्त्वपूर्ण भाग लिया और उन्होंने डा. सुन्, कुओ-मिन्-तांग के वामपक्षी लोगों और सारे देश को साम्राज्यवाद, सामन्तवाद तथा कुओ-मिन्-तांग में घुसे उनके दलालों–कुओ-मिन्-तांग के दक्षिणपंथी तत्त्वों के खिलाफ संघर्ष को आगे बढ़ाने के लिए बाध्य कर दिया। पार्टी के सुझाव पर उसकी अगुवाई तथा मदद से क्वातुंग प्रदेश में क्रान्तिकारी सरकार और एक क्रान्तिकारी सैनिक विद्यालय कायम किया गया। क्वातुंग प्रदेश की प्रतिक्रियावादी शक्तियों के खिलाफ युद्ध छेड़ दिया गया और साथ ही राष्ट्रीय सभा (एसेम्बली) के आयोजन करते असमान सन्धियों को रद्द करने के लिए देशव्यापी जन-आन्दोलन का सूत्रपात कर दिया गया। अब मजूर-वर्ग के आन्दोलन के साथ-साथ किसानों का आन्दोलन भी जोर पकड़ने लगा।

कम्युनिस्ट राष्ट्रीय कांग्रेस में कितना प्रभाव रखते थे, यह इसी से मालूम होगा कि कुओ-मिन्-तांग के मुखपत्र का सम्पादक माओ चे-तुंग को बनाया गया। सैनिक शिक्षा देने के लिए ह्मू-प्वा सैनिक विद्यालय की स्थापना हुई, जिसका प्रमुख यद्यपि चांग काई-शेक को बनाया गया, लेकिन उसका मंत्री कम्युनिस्ट तरुण चाउ एन्-लाइ (वर्तमान चीन के प्रधानमंत्री) बनाये गये। चारों ओर नारा लगने लगा : "असमान सन्धियों को रद्द करो।" "सार्वजनिक चुनाव द्वारा राष्ट्रीय सभा कायम करो।"

अब मजूर-संघ बड़ा जोर पकड़ने लगा और कुछ ही दिनों में उसके पाँच लाख सदस्य हो गये। पार्टी-मेम्बरों की संख्या भी 8 सौ से बढ़कर साढ़े तीन हजार हो गई, किसानों में भी काम होने लगा।

(1) चौथी पार्टी कांग्रेस (1925 ई.) –इसी साल जनवरी में पार्टी की चौथी कांग्रेस हुई, जिसने अपने पिछले काम का लेखा-जोखा अपने संगठन को मजबूत करने तथा जन-संघर्ष को आगे बढ़ाने के लिए कई महत्त्वपूर्ण निर्णय किये। लेकिन इसके थोड़े ही समय बाद पेकिंग में 12 मार्च, 1925 को चीन के राष्ट्रपति डा. सुन् यात्-सेन की मृत्यु हो गई। सुन् यात्-सेन् के मन में उस समय एक तरफ सोवियत के मैत्रीपूर्ण हाथों और दूसरी तरफ देश में निर्लोभ, निर्भीक, दीर्घदर्शी तरुण कम्युनिस्टों को पाकर बड़ी आशा होने लगी थी, साथ ही उनके मन में कुछ शंका भी थी। इसी समय उन्होंने अपने पत्र में सोवियत रूस के साथियों को लिखा था :

"प्रिय साथियो, मृत्यु-शय्या पर पड़े-पड़े मेरा ध्यान तुम्हारी तरफ तथा हमारी और राष्ट्र के भविष्य की तरफ जाय, यह स्वाभाविक है। अमर लेनिन ने जिसे मुक्तिदान दिया, उस गणराज्य के तुम सूत्रधार हो। साम्राज्यवाद के उत्पीड़न में पड़े देश आज अगर तुम्हारे रास्ते पर चलेंगे, तो वह भी तुम्हारी तरह दासता, युद्ध और अन्याय के ऊपर निर्मित सामाजिक व्यवस्था के फन्दे से छूट सकेंगे। अपने पीछे जो मैं अपनी पार्टी छोड़े जा रहा हूँ, वह तुम्हारे सहयोग से चीन तथा दूसरे गुलाम राष्ट्रों को साम्राज्यवाद के फन्दे से छुड़ाने में काम करेंगी, यह हमेशा मेरी आशा रही है। इसीलिए मैं अपनी पार्टी को आदेश देता हूँ कि वह तुम्हारे साथ बराबर सम्पर्क रक्खे। हमारे देश को तुमने सदा सहायता की है। तुम हमेशा बेधड़क उसकी मदद करते रहोगे, इस बात का मुझे पूरा विश्वास है और इससे मुझे आनन्द है। तुमसे विदा लेते समय एक अभिलाषा प्रकट किये बिना मैं नहीं रह सकता। वह दिन बहुत दूर नहीं है, जब कि सोवियत रूस तथा उसका साथी तथा मित्र स्वतन्त्र शक्तिशाली चीन मिलकर दुनिया के दलितों के महान् मुक्तियुद्ध को आगे बढ़ाएँगे।

साथी जैसे अभिनन्दन के साथ

सुन् यात्-सेन्"

चीन के राष्ट्रपिता की क्या वसीयत थी, यह इस पत्र से प्रकट होती है। लेकिन, अभी घनघोर संघर्ष में चीन को चौबीस वर्ष बिताने थे, जब कि डा. सुन् की वसीयत को पूरा करने में माओ चे-तुंग और उनके साथियों को सफलता मिलनेवाली थी। इसमें शक नहीं कि आज चीन, रूस और दूसरे लोकशाही गणराज्यों में रहती मानव-जाति का आधा भाग इस बात की गारंटी है कि साम्राज्यवाद के नीचे कराहती जातियों का मुक्ति-युद्ध सफल होके रहेगा।

मई, 1925 में शांघाइ के मजदूरों ने इंग्लैंड और जापान के खिलाफ एक बड़ी हड़ताल की, जिसके साथ सारे देश में एक जबर्दस्त क्रान्तिकारी तूफान उठ खड़ा हुआ। 18 मई को शांघाइ में सूती कपड़े के एक जापानी मिल के मालिक ने कू चेंग-हू नामक एक कम्युनिस्ट कार्यकर्ता को जान से मार डाला। 30 मई को शांघाइ के छात्रों ने उक्त सूती मिल के मजूरों के संगठन में एक प्रदर्शन किया। शांघाइ को अलग-अलग हिस्से में बाँटकर वहाँ अंग्रेजों, फ्रांसीसियों, जापानियों आदि ने अपने राज्य स्थापित कर लिये थे। प्रदर्शन नानकिंग सड़क से गुजर रहा था, उसी समय अंग्रेज पुलिस ने उस पर गोली दागनी शुरू कर दी। कितने ही प्रदर्शनकारी मारे गये और कितने ही घायल हुए। यह 30 मई का हत्याकांड था। इसके बाद शांघाइ और समूचे राष्ट्र में क्षोभ की लहर दौड़ गई। कई दिनों तक शांघाइ के मजूरों, छात्रों और दूसरे नागरिकों ने इस अत्याचार के विरुद्ध प्रदर्शन किये, जिसमें से कितनों ही पर अंग्रेज, अमेरिकन और जापानी पुलिस ने गोलियाँ चलाईं, और कितने ही लोग मारे गये। शांघाइ के सभी मजूरों ने आम हड़ताल की पुकार की, छात्रों ने विद्यालयों में जाने से इन्कार किया, व्यापारियों ने अपनी दूकानें बन्द कर दीं। शांघाइ के साथ-साथ सभी नगरों में यह आन्दोलन फैल गया। जगह-जगह मजूरों, विद्यार्थियों और नागरिकों ने मिलकर साम्राज्यवाद-विरोधी प्रदर्शन किये, मजूरों ने काम छोड़ दिया, विद्यार्थियों ने स्कूलों में जाना बन्द कर दिया, सारी दूकानें बन्द हो गईं और अंग्रेजी तथा जापानी माल का बायकाट होने लगा। हांगकांग में भी आम हड़ताल हुई। उसके बाद वहाँ के मजदूर कान्तन् पहुँचे और उन्होंने नाकाबन्दी करके हांगकांग को एक निर्जीव बन्दरगाह बना दिया। 23 जून को कान्तन् में एक जबर्दस्त प्रदर्शन हुआ, जिसमें मजदूरों और छात्रों के साथ सैनिक विद्यालय के जवान भी शामिल थे। अंग्रेज पनडुब्बियों ने गोले बरसाये, जिनसे कितने ही प्रदर्शनकारी हताहत हुए। सारे देश में साम्राज्यवाद-विरोधी भाव भी बढ़ा। देश ने एकमत हो माँग की कि हत्यारों को सजा दी जाय, हरजाने अदा किये जायँ, माफी माँगी जाय, चीन की भूमि के जिन खंडों को विदेशियों ने अपने हाथ में कर लिया है, उन्हें चीन को दिया जाय और देश से विदेशी सैनिकों को हटाया जाय। लेकिन इन माँगों को पूरा करने के लिए देश के भिन्न-भिन्न भागों के सामन्तवादी युद्धपति तैयार नहीं थे। वह तो जन-आन्दोलन को कुचलकर साम्राज्य के सामने घुटना टेकने में ही अपना हित समझते थे। कान्तन् में उस समय क्रान्तिकारी सरकार थी। सिर्फ उसी ने साम्राज्यवाद के खिलाफ इस जन-आन्दोलन का समर्थन किया, जिसके कारण हांगकांग और कान्तन् में पूरे सोलह महीनों तक हड़तालों का सिलसिला

जारी रहा।

'30 मई-आन्दोलन' ने क्वान्तुंग प्रदेश में क्रान्तिकारी भावनाओं को बहुत आगे बढ़ाया, जिससे सारा देश प्रभावित हुआ। सबकी नजर क्वान्तुंग और उसकी 'राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना' की ओर थी, सभी उसकी सहायता के लिए तैयार थे।

इस समय माओ बीमार पड़कर हूनान के गाँव में पड़े हुए थे। अत्यन्त काम करने के कारण शांघाइ में उनको बुखार आने लगा। जब और तरह से स्वास्थ्य-सुधार होने में कठिनाई दीख पड़ी, तो उन्हें चिकित्सा और विश्राम करने के लिए गाँव में लाया गया। लेकिन वहाँ पर भी माओ अपने क्रान्तिकारी काम को कैसे छोड़ सकते थे ? गाँव के लोगों में नई चेतना पैदा करने से वह बाज नहीं आ सकते थे। यहीं पर उन्हें पूरी तौर से अनुभव हुआ कि किसान क्रान्ति की सेना के लिए पक्के सिपाही हो सकते हैं। एक दिन पन्द्रह-सोलह वर्ष के एक किसान लड़के ने कहा : "मेरा दादा, स्वर्ग के राजकुमार की सेना में मरा और बाप कुओ-मिन्-तांग की सेना में शामिल हो स्वर्ग गया। हमारे गाँव में कौन है जो दो वर्ष भी निश्चिन्त जिन्दगी बिता सके ?"

"एक तूचुन (सैनिक डाकू) सेना आती है, और गाँव को नष्ट करके अपना झंडा गाड़ती है। वह जाती है, तो उसका दुश्मन दूसरा तूचुन आ धमकता है, और गाँव को नष्ट करके पहला झंडा उखाड़कर अपना झंडा गाड़ता है। इसमें हमारा क्या बना ?" लड़के की माँ ने कहा।

इस पर माओ ने समझाया : "माँ, तुम पहले की बातें कर रही हो। अब जो राष्ट्रीय सरकार आवेगी, वह सभी तूचुनों को खतम कर डालेगी और सबको जमीन देगी।"

किसान-माता ने कहा : "जमीन ! जमीन मिले, तो बेटा ! मनुष्य एक नहीं अपने लाख लड़कों की बलि देने के लिए तैयार है।"

लेकिन किसान माता को विश्वास कहाँ हो सकता था कि कभी किसान धरती के मालिक होंगे। माओ ने विश्वास दिलाते हुए कहा कि तुम्हें जमीन जरूर मिलेगी।

किसान-स्त्री ने कहा : "मान लो, तुम्हारे जैसे लोगों ने हमें जमीन भी दिला दी, किन्तु तुम तो हवा के बादल, आज आये कल चले गये, फिर जमींदार अपने गुंडों को हमारे ऊपर छोड़ेगा। अपने पीहर की बात बतलाती हूँ। मेरे बाप को ताइपिंग के समय जमीन मिली थी, मेरे भाइयों को कुछ सुख-चैन भी मिला; लेकिन, ताइपिंग राज गया, तो उसके साथ जमीन भी चली गई। हँसिया और दराती लेकर भला कोई बन्दूकधारियों को हरा सकता है ?"

किसान-माता का सोलह वर्ष का लड़का अपने सत्पीड़कों से लड़ने के लिए अधीर हो रहा था। माँ उसे समझाने के लिए ही यह बात कर रही थी। माओ ने लड़के की ओर मुँह करके पूछा : "बतला, तेरे पास इसका क्या जवाब है ?"

"इसका जवाब मेरे पास नहीं है भैया। मेरे दोस्त भी इसी तरह की बात कहते हैं। हमारे पास यदि हथियार हों और गाँव की हमारी सेना हो, तो···"

'हमारी सेना हो तो···' यह शब्द बार-बार माओ के कानों में गूँजने लगे। गाँव में वर्गभेद किस सीमा तक पहुँच गया है, इसका साक्षात्कार माओ को अब हो रहा था। उन्होंने किसानों में जागृति पैदा करने तथा उनके संगठन को मजबूत करने का निश्चय किया। '30 मई आन्दोलन' ने किसानों में भी जागृति पैदा कर दी थी। कुछ ही महीनों में माओ ने बीस से अधिक किसान सभाएँ कायम कीं, खेतिहर मजूर और गरीब किसान इन सभाओं में बड़े उत्साह से शामिल होने लगे। गाँव के जमींदार घबड़ा गये और उनकी मदद में राज्यपाल यावो हेंग-ती ने अपनी सेना माओ को पकड़ने के लिए गाँव में भेजी। लेकिन, किसान अपने नेता की पीठ पर थे। उन्होंने पहले ही से चेतावनी दे दी, और माओ हूनान से अन्तर्धान हो कान्तन् पहुँच गये। उस समय तक डा. सुन् ने मरने के बाद च्यांग-काइ-शेक कुओ-मिन्-तांग की सेना का प्रधान सेनापति बन चुका था।

माओ चे-तुंग ने 'राजकीय साप्ताहिक' का सम्पादन का काम हाथ में लिया था; लेकिन उनका दिल बराबर किसान-आन्दोलन को मजबूत करने की ओर था। माओ को किसान-आन्दोलन चलानेवाले कार्यकर्ताओं को शिक्षा

देने का काम सौंपा गया। इससे उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। 21 प्रदेशों के कर्मी शिक्षाएँ लेने के लिए आये थे। कान्तन् में आने के थोड़े ही दिनों बाद माओ कुओ-मिन्-तांग के प्रचार-विभाग के मुखिया और कुओ-मिन्-तांग की केन्द्रीय समिति के सदस्य भी हो गये। उन्होंने किसानों में काम करनेवाले कर्मियों के लिए विशेष शिक्षा-क्रम तैयार किया, और उनको शिक्षा ही नहीं दी, बल्कि भिन्न-भिन्न प्रदेशों में किसानों की क्या-क्या समस्याएँ हैं, इसे भी जानने के अवसर से फायदा उठाया।

मार्च, 1926 में च्यांग काइ-शेक ने कान्तन् शहर में अकस्मात् कत्लेआम शुरू कर दिया। उस समय माओ कुओ-मिन्-तांग के दफ्तर में काम करते थे। उस वक्त पार्टी और कुओ-मिन्-तांग में फिर मेल हो गया था और 1926 ई. के वसन्त में ही वह शांघाइ गये थे! वहाँ मई महीने में कुओ-मिन्-तांग की दूसरी कांग्रेस च्यांग काइ-शेक के नेतृत्व में हुई। माओ को किसान-विभाग की देखरेख के लिए निरीक्षक (इन्स्पेक्टर) नियुक्त किया गया, और वह हूनान चले गये। इसी वक्त के संयुक्त मोर्चे के समय 1926 ई. की वर्षा में उत्तराभिमुख अभियान हुआ था।

2. उत्तरी अभियान

देश की सर्वव्यापी सहानुभूति से फायदा उठाते राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना ने क्वान्तुंग के सारे प्रदेश को युद्धपतियों के हाथ से निकालकर सारे राष्ट्र को एकताबद्ध करने के लिए जुलाई, 1926 में उत्तर की ओर अपनी विजय-यात्रा शुरू की। किसानों की सहायता अभियान की सफलता के लिए आवश्यक थी। माओ चे-तुंग किसान प्रचार-विभाग-किसान-आन्दोलन की राष्ट्रीय संस्था की बागडोर हाथ में लेते ही उसमें दिलोजान से लग गये। उन्होंने 1926 ई. में 'चीनी समाज के विभिन्न वर्गों का एक विश्लेषण' के नाम से एक पुस्तक लिखी, जिसमें किसानों और दूसरे वर्गों के बारे में जो ज्ञान उन्होंने पिछले दो वर्षों में प्राप्त किया था, उसे पेश करते हुए बतलाया कि क्रान्ति की सफलता के लिए उसके दोस्तों और दुश्मनों को पहचानना जरूरी है। केवल इसी तरह "हम अपने असली दुश्मनों के खिलाफ आक्रमण करने के लिए अपने सच्चे दोस्तों को एकजुट कर सकते हैं।" आगे माओ ने (1) जमींदार और विदेशी पूँजी के पत्तलचट वर्गों (2) पूँजीपति वर्ग, (3) मझोले किसानों और निम्न-पूँजीपति, (4) गरीब किसानों और अर्ध-सर्वहारा वर्ग–चीन की इन पाँच प्रमुख सामाजिक शक्तियों की–राजनीतिक और आर्थिक स्थितियों का विश्लेषण करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि "सारे युद्धपति, नौकरशाह, विदेशी पूँजी के पत्तलचट पूँजीपति और साम्राज्यवादियों के साथ षड्यन्त्र में शामिल बड़े जमींदार एवं उनके साथ सम्बद्ध प्रतिक्रियावादी बुद्धिजीवी हमारे दुश्मन हैं। औद्योगिक सर्वहारा-वर्ग हमारी क्रान्ति की अगुवा ताकत है। सारा अर्ध-दास-सर्वहारा वर्ग और निम्न पूँजीवादी वर्ग के लोग हमारे घनिष्ठतम मित्र हैं। जहाँ तक ढुलमुल मध्यवर्गियों (राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग) का सम्बन्ध है, उनका दक्षिणपंथी तत्त्व हमारा पक्का दुश्मन है और वामपक्षी तत्त्व हमारा पक्का मित्र। लेकिन हमें उनके प्रति बराबर सजग रहना है, जिसमें वह सारे मोर्चे को छिन्न-भिन्न न कर सकें।"

इस प्रकार माओ ने किसानों और क्रान्ति के सहायक दूसरे तत्त्वों के महत्त्व को बतलाया।

(1) **सर्वत्र विजय**–राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना का अभियान बड़ी सफलतापूर्वक उत्तर की ओर आगे बढ़ता गया। सारा देश युद्धपतियों और उनके आका साम्राज्यवादियों के खिलाफ उठ खड़ा हुआ था, इसलिए युद्धपतियों की सेनाएँ क्रान्तिकारी सेना के सामने ठहर नहीं सकीं। सितम्बर, 1926 में हान्काउ पर अधिकार हुआ। मार्च, 1927 में शांघाइ के मजदूर क्रान्तिकारी सेना के साथ तालमेल रखते अपने नगर पर कब्जा करने के लिए उठ खड़े हुए।

चाउ एन्-लाइ–चाउ एन्-लाइ ह्म्-पु-आ सैनिक विद्यालय के सेक्रेटरी थे, यह हम बतला चुके हैं। वह मंचू-वंश के एक बड़े अफसर तथा प्रभावशाली खानदान में पैदा हुए थे। उनका बाप एक प्रतिभाशाली शिक्षक और माँ भी सुशिक्षिता थीं। चीन के भावी प्रधानमन्त्री चाउ एन्-लाइ ने पहले स्कूल में पढ़ाई की, फिर अमेरिकन पादरियों की युनिवर्सिटी में पढ़ते अंग्रेजी सीखी। जब युद्ध के बाद साम्राज्यवादी अत्याचारों और जापान की माँगों के

विरुद्ध विद्यार्थियों में जबर्दस्त विद्रोह की आग भड़की, तो चाउ ने विद्यार्थियों का नेतृत्व किया और गिरफ्तार होकर जेल में ठूँसे गये। फिर 'काम करो और पढ़ो' के नारे से प्रभावित हो वह फ्रांस पहुँचे और वहाँ उन्होंने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की शाखा संगठित की। दो वर्ष तक फ्रांस में काम करते और पढ़ते उन्होंने मार्क्सवाद तथा विश्व-राजनीति का अध्ययन किया। फिर वहाँ से जाकर वह एक वर्ष तक जर्मनी में पढ़ते रहे। 1904 ई. में चीन लौटने पर उन्होंने कान्तन् में डा. सुन से मुलाकात की। सैनिक विद्यालय के खुलते ही 26 वर्ष के इस तरुण को उसका सेक्रेटरी बना दिया गया। गालेन (जेनरल ब्लूखैर) का इस तरुण पर बहुत विश्वास था, किन्तु साथ ही विद्यालय का प्रमुख च्यांग काइ-शेक उनसे जला-भुना करता था। जिस वक्त क्रान्तिकारी सेना ने उत्तर की ओर अपना अभियान शुरू किया, उसी समय युद्धपतियों का प्रभाव हटाने के लिए चाउ एन्-लाइ को शांघाइ भेजा गया। मजूरों की मदद से ही यह काम हो सकता था, जिसके लिए चाउ को अधिक योग्य समझा गया। चाउ ने तीन महीने के भीतर ही वहाँ के छः लाख मजूरों का एक जबर्दस्त संगठन तैयार किया। मजूरों ने आम हड़ताल कर दी। हड़ताल पूरी सफल हुई, किन्तु राजनीतिक शक्ति को लेने में निहत्थे मजूर सफल नहीं हो सके। दूसरी हड़ताल भी की गई, लेकिन उससे भी काम नहीं बना, और केवल कितने ही मजूरों ने अपने प्राणों से हाथ धोये। अब चाउ का खयाल मजूरों की स्वयंसेवक सेना संगठित करने की ओर गया, जिसमें पाँच हजार मजूर शामिल हो गये और दो हजार मजूर गुप्तरीति से कुछ सैनिक शिक्षा प्राप्त करने में भी सफल हो गये। पिस्तौल और कुछ दूसरे हथियार इकट्ठा करके तीन सौ मजूरों को हथियारबन्द कर दिया गया। 21 मार्च, 1927 को फिर आम हड़ताल की गई। शांघाइ के सभी कारखाने और दूसरे स्थानों में काम करनेवाले मजूरों ने काम छोड़ दिया। हथियारबन्द मजूरों ने सड़कों पर मोर्चाबन्दी कर डाली, खानों, हथियारखानों, फिर फौजी पड़ावों पर कब्जा कर लिया। नये प्राप्त हथियारों से पाँच हजार मजूर लैस करके उनकी छह बटालियन सेना तैयार कर दी गई और शांघाइ में 'नागरिकों की सरकार' कायम हो गई। इस सारे कार्य का सूत्रधार तरुण चाउ एन्-लाइ था, जिसने सेना की कोई बाकायदा शिक्षा नहीं पाई थी, लेकिन जरूरत ने उसे एक कुशल सैनिक-विशेषज्ञ बना दिया। आखिर सैनिक विद्यालय का सेक्रेटरी सैनिक विज्ञान से अछूता नहीं हो सकता था।

इसी साल जनवरी में माओ चे-तुंग ने हूनान के किसानों के जबर्दस्त संघर्षों का अच्छी तरह अध्ययन किया। फिर उन्होंने पार्टी के प्रथम क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के समय लिखे गये अपने सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ 'हूनान में किसान-आन्दोलन के बारे में किये गये अनुसन्धान की रिपोर्ट' को लिखा। इस ग्रंथ में माओ ने किसानों के महत्त्व की अवहेलना करनेवालों की खबर लेते हुए उनको एकताबद्ध करने तथा उससे काम लेने के बारे में जोर देते हुए कहा : "बहुत थोड़े ही समय में चीन के केन्द्रीय, दक्षिणी और उत्तरी प्रान्तों में लाखोंलाख किसान उठ खड़े होंगे। वे तूफान की भाँति इतनी अदम्य तेजी और ताकत से आगे बढ़ेंगे कि कोई बड़ी से बड़ी शक्ति भी उन्हें रोकने में सफल नहीं हो सकेगी। वे अपनी मुक्ति के लक्ष्य की ओर तेजी से बढ़ते हुए रास्ते की सभी बाधाओं को उखाड़ फेंकेंगे और साम्राज्यवादियों, युद्धपतियों, भ्रष्टाचारियों और काले-सफेदपोशों को कब्रिस्तान की ओर ढकेल देंगे।"

पार्टी के तीस साल के इतिहास में इस ग्रंथ के महत्त्व के बारे में लिखा गया है : (1) यह चीनी-क्रान्ति में किसानों की भूमिका का पूर्ण लेखा-जोखा पेश करता है, (2) यह देहाती क्षेत्रों में किसानों की राजनीतिक सत्ता और उनकी हथियारबन्द सेनाएँ कायम करने की जरूरत को बताता है, (3) यह किसान-वर्ग के विभिन्न स्तरों का विश्लेषण करके बतलाता है कि चीन की आबादी में सबसे अधिक संख्या रखनेवाले गरीब किसानों के भीतर अत्यन्त क्रान्तिकारी शक्ति है, (4) यह जनता को जोरों के साथ और पूरे देश में मैदान में लाने, संगठित करने और उस पर भरोसा रखने के क्रान्तिकारी सिद्धान्त का प्रतिपादन करता है। इस ग्रंथ ने चीन के कम्युनिस्टों को किसानों के बीच काम करने के लिए जर्बदस्त पथ-प्रदर्शन का काम दिया। लेकिन, उस समय इससे इतना फायदा नहीं उठाया जा सका, क्योंकि पार्टी का नेतृत्व चेन् तू-श्यू जैसे अवसरवादियों के हाथ में था।

24 मार्च, 1927 को क्रान्तिकारी सेना ने नानकिंग पर अधिकार कर लिया। इस पर ब्रिटेन, अमेरिका, जापान, फ्रांस और इताली के युद्धपोतों ने नगर पर बमबारी शुरू कर दी।

अब तक च्यांग काइ-शेक ने अपने को नंगा कर दिया था। वैसे मार्च, 1826 में ही उसने एक चीनी जंगी जहाज के सेनापति को कम्युनिस्ट कहकर गिरफ्तार कर लिया था, साथ ही उसने यह भी हुकुम निकाला था कि सेना के वह सभी कार्यकर्ता अपने पदों से हटा दिये जायँ, जो कम्युनिस्ट हैं या जिन पर वैसे होने का सन्देह है। उस समय कुओ-मिन्-तांग की चार सेनाओं में से तीन पर कम्युनिस्टों का पूरी तरह से प्रभाव था और चौथी भी अछूती नहीं थी। बहुत-से कम्युनिस्ट च्यांग की आज्ञा का विरोध करना चाहते थे, लेकिन चेन् तू-श्यू ऐसा नहीं चाहता था और उसने एकता के नाम पर च्यांग की आज्ञाओं को स्वीकार किया। इसी प्रकार, 1927 ई. की गर्मियों में च्यांग की तानाशाही के विरुद्ध वूहान् में कुओ-मिन्-तांग के आधे आदमियों ने अपनी अलग सरकार बना ली थी। वूहान नगर में सशस्त्र मजूर प्रतिरक्षा का काम कर रहे थे, लेकिन वूहान-सरकार के कहने पर चेन् तू-श्यू ने मजूरों से हथियार रखवा दिया। इसी समय एक युद्धपति ने वूहान सरकार का विरोध करके चांगशा नगर पर अधिकार कर लिया, जिसके विरोध में एक लाख किसानों ने 'वूहान जनवादी सरकार' के नाम से चांगशा को घेर लिया। वूहान की निम्न पूँजीवादी सरकार इससे घबड़ा उठी और कम्युनिस्टों से माँग की कि वह किसानों को घर लौटने के लिए कहे। चेन् ने वैसा ही किया। किसानों को इससे बड़ी निराशा हुई और नेताओं के बिना उनकी शक्ति जल्दी ही छिन्न-भिन्न कर दी गई। और फिर जुलाई, 1927 में वूहान में कम्युनिस्टों पर प्रहार आरंभ हो गया।

उत्तरी अभियान बहुत हद तक सफल रहा। 11 जुलाई (1927 ई.) को चांगशा युद्धपति के हाथ से निकला। अगस्त में एक समय एक युद्धपति के नीचे काम करते फेंग यू-शियांग भी कुओ-मिन् तांग से आ मिला। सितम्बर में हांग-काउ पर अधिकार हो गया। अक्टूबर में एक वूहान के तीनों शहरों पर कुओ-मिन्-तांग का झंडा लहराने लगा। 1926 ई. की इन विजयों के बाद मार्च, 1927 में अभियानिक सेना शांघाइ पहुँची. जिससे तीन दिन पहले ही शांघाइ के मजूरों ने प्रतिगामी शासन को हटाकर नगर को स्वतन्त्र कर लिया था।

लेकिन, च्यांग काइ-शेक मजूरों की इस उदीयमान शक्ति को कैसे देख सकता था ? मजूर स्वागत करने के लिए आये और च्यांग उन पर भड़क उठा। च्यांग और उसके सम्बन्धी जमींदार थे जो मजूरों-किसानों के भारी शत्रु थे। इसलिए, च्यांग किसी तरह के जमीन-सम्बन्धी सुधार को अपने हित के लिए भारी घातक समझता था। उसकी सेना को पैसा देनेवाले व्यापारी और उद्योगपति थे, जो मजूरों को आगे बढ़ते देखना नहीं चाहते थे। मजूर और किसान का पक्ष ले या निहित स्वार्थों की तरफ़ आँख मूँदकर च्यांग सामन्ती जमींदारों और चीनी उद्योगपतियों की सहायता से वंचित हो सकता था। विदेशी साम्राज्यवादी भी अब समझने लगे : जिस तरह एक बार हमें केवल अपने स्वार्थों के खयाल से भवितव्यता के सामने सिर झुकाते हुए युवान शि-काइ को स्वीकार करना पड़ा था, वही बात हमें चीन के 'बलवान पुरुष' च्यांग काइ-शेक के सामने करनी होगी, नहीं तो बोलेशेविकों का खतरा यहाँ भी साफ दिखलाई पड़ रहा है। उन्होंने इसी खयाल से हांग-काउ और क्यूकेंग में प्राप्त अपने विशेषाधिकारों को लौटा दिया और कहने लगे, चीन का एकीकरण होना चाहिए।

11 फरवरी, 1927 को कुओ-मिन्-तांग की एक निजी सभा में च्यांग ने कम्युनिस्टों की कड़ी आलोचना की थी। जब नानकिंग पर अंग्रेज, अमेरिकन, जापानी, फ्रेंच एवं इतालियन युद्धपोतों ने गोलावारी की, उस समय च्यांग पैंतरा बदलने का विचार कर रहा था। शांघाइ में अब मजूरों की सफलता को देखकर उसने अपना अंतिम निश्चय कर लिया।

(2) कम्युनिस्टों के बारे में च्यांग—च्यांग कम्युनिस्टों का घोर शत्रु रहा। एक स्वार्थी तथा देश के साथ विश्वासघात करनेवाले नेता से यही आशा की जा सकती है। च्यांग ने कुओ-मिन्-तांग और कम्युनिस्ट पार्टी के बीच जो बिगाड़ हुआ था, उसके बारे में लिखा है* :

"कम्युनिस्ट व्यक्तिगत हैसियत से कुओ-मिन्-तांग में शामिल हुए थे। वह कुओ-मिन्-तांग के प्रति भक्ति बनाये रखने की अपनी पवित्र प्रतिज्ञा को नहीं निभा सके। साथ-साथ वे राष्ट्रीय क्रान्ति को जनतन्त्रात्मक पूँजीवादी

* 'चीन का भाग्य', पृष्ठ 100-101

क्रान्ति मानते थे। उन लोगों ने राष्ट्रीय क्रान्ति की प्रगति का लाभ उठा उसे सर्वहारा सामाजिक क्रांति के रूप में बदलना चाहा। उनकी राय में कुओ-मिन्-तांग कोई राजनीतिक पार्टी नहीं, बल्कि एक राजनीतिक संगठन था, जिसमें विभिन्न वर्गों के लोग शामिल थे। कुओ-मिन्-तांग की प्रगति से जो सुयोग पैदा हो गया था, उसका उपयोग वे अपने संगठनों को मजबूत बनाने में करना चाहते थे। इन बातों को तो छन् तु-शिउ (चेन् तु-शिउ), अन्य कम्युनिस्ट नेताओं ने खुले आम तथा बराबर 'शिन्-छिंग निएन्' (नवयुवक) 'शियांग ताव' (मार्गदर्शक) और दूसरी पत्रिकाओं में प्रकट किया है। कम्युनिस्टों के कार्यों की ओर देखने से मालूम होता है कि उन्होंने कुओ-मिन्-तांग के दक्षिणपक्षीय और वामपक्षीय सदस्यों के बीच झगड़ा लगा दिया। जनसाधारण के बीच उन्होंने सामाजिक क्रान्ति द्वारा वर्ग-संघर्ष का आन्दोलन मचाया। वर्ग-संघर्ष का नारा लगा उन्होंने मजदूरों और किसानों को अपना हथियार बना उन पर कम्युनिस्ट पार्टी का एकाधिकार जमाया। इस प्रकार, उन्होंने उत्पादन ही बन्द करा दिया। दूसरी आर्थिक और सामाजिक बातों का तो इसी से अन्दाज लगाया जा सकता है कि जो विद्यार्थी ध्यानपूर्वक पढ़ने में लगे रहे, उन पर 'क्रान्ति-विरोधी' होने का कलंक लगाया और जो अनियन्त्रित तथा उच्छृंखल जीवन व्यतीत करते थे, उनको 'प्रगतिवादी युवक' कहकर प्रशंसा की। कम्युनिस्टों ने युवकों से अपने परम्परागत गुणों को छोड़ देने की सलाह दी। यहाँ तक कि उन्होंने औचित्य, न्यायनिष्ठ, चारित्र्य और प्रतिष्ठा की भावना को फूहड़ तथा मातृ-पितृ-भक्ति, भाईचारे, राजभक्ति और विश्वासपात्रता की भावना को सड़ा-गला बताया। इस प्रकार, उन्होंने अपने को इतना नीचे गिरा दिया कि उनका ऊपर उठना प्रायः असंभव हो गया। इसके अतिरिक्त, सन् 1931-33 (गण संवत् 20-25) के बीच कम्युनिस्टों ने दक्षिण चिआंग-सि (क्यांग-सी), पूर्व हूनान, पश्चिम अन्-ह्वेइ, दक्षिण हूनान, पश्चिम हू-पइ, स-चुआन् (जेचुआन्), शन-सि और दूसरी जगहों पर तलवार की नीति अपनाई। वे जहाँ कहीं भी गए, उन्होंने देश को उजाड़ डाला तथा लोगों को लूट लिया। अब चूँकि घाव भर गया है, इसलिए हम उस पर विचार कर सकते हैं। जब हम इन सबका कारण ढूँढ़ते हैं, तो हमें पता चलता है कि इनका कारण 'हान् खउ-नान् चिंग (हान् हाउ-नानकिंग) फूट' जैसी दुःखद घटना थी। इस नाटक का अभिनय पूर्ण रूप से विश्वासघाती वांग चिंग-वेइ द्वारा किया गया था जिससे राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना में फूट पड़ गई। इस आंतरिक विभेद के कारण उत्तरी अभियान की प्रगति जहाँ की तहाँ रुक गई—राष्ट्रीय क्रान्ति से हम लोगों को यह सबसे बड़ी शिक्षा मिली और राष्ट्रीय क्रान्ति के इतिहास की यह सबसे दुःखद घटना भी है।"

3. संयुक्त मोर्चा भंग

च्यांग काइ-शेक प्रतिगामी स्वार्थों का प्रतिनिधि था, यह जानने में चीन को नोचकर खानेवाले साम्राज्यवादियों को देर नहीं लगी, और उसे अपने हाथ में करने में उन्हें कोई दिक्कत नहीं हुई। च्यांग शांघाइ के मजूरों की सफलता से बौखला गया था, जिन्होंने उससे बिना पूछे वहाँ नया शासन स्थापित कर लिया।

(1) शांघाइ-हत्याकांड (1927 ई.)—12 अप्रैल, 1927 को च्यांग एकाएक शांघाइ के मजूरों पर टूट पड़ा। कम्युनिस्टों के खिलाफ जहाद में भला विदेशी पूँजीपतियों को क्यों न प्रसन्नता होती ? उस दिन च्यांग की सेना ने पाँच हजार मजूरों और विद्यार्थियों के खून से अपने हाथ रँगे। चीन में फिर से गृहयुद्ध शुरू हो गया। इस हत्याकाण्ड में कितने ही प्रभावशाली नेता और क्रान्तिकारी नेता मारे गये। शांघाइ का ही हत्याकांड सारे देश में फैल गया। और सब जगह कम्युनिस्ट होने के बहाने किसानों, बुद्धिजीवियों को जरा-सा भी सन्देह होने पर गाजर-मूली की तरह काटकर फेंका गया। यह बड़ी परीक्षा का समय था। "समूचा देश एकाएक अँधेरे में डूब गया। केवल राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग ही नहीं, बल्कि ऊपरी स्तर के कितने ही निम्न पूँजीपति भी क्रान्ति से अलग हो रहे। पार्टी में शामिल निम्न पूँजीपति वर्ग से आये कितने ही बुद्धिजीवियों ने दृढ़ता के अभाव के कारण पार्टी से अपना नाता तोड़ने की घोषणा कर दी।" लेकिन चीन की बहादुर कम्युनिस्ट पार्टी और क्रान्तिकारी जनता साथी माओ चे-तुंग के लेख 'मिली-जुली सरकार' के अनुसार "न तो भयभीत हुई, न पराजित की जा सकी और न उसे नष्ट ही किया जा सका। वह फिर से उठ खड़ी हुई, खून के दागों को उसने पोंछ

डाला, मारे गये अपने साथियों को दफनाकर उसने फिर अपनी लड़ाई जारी रक्खी।"

देश और क्रान्ति को धोखा देनेवाले च्यांग काइ-शेक और कुओ-मिन्-तांग ने देश की सारी समस्याओं को जैसा-का-तैसा छोड़कर अब पूरी तरह पुराने प्रतिक्रियावादी शासकों और साम्राज्यवादियों के हाथ में खेलना शुरू किया। साम्राज्यवादी चतुर खिलाड़ी थे। उन्होंने दिखलावे के लिए कस्टम-सम्बन्धी तथा दूसरे विशेषाधिकारों को छोड़कर च्यांग को बहलाया। उनकी उन्हें जरूरत भी नहीं थी, क्योंकि च्यांग और कुओ-मिन्-तांग तो अब उनके हाथ की कठपुतली थी। च्यांग ने अब अमेरिका से ज्यादा साँठ-गाँठ करनी शुरू की। लेकिन, च्यांग को अकेला शासन करने के लिए युद्धपति छोड़ कैसे सकते थे ? उन्होंने फिर आपसी लड़ाइयाँ शुरू कर दीं। लड़ाइयों में जो अपार जन-धन नष्ट हो रहा था, च्यांग, युद्धपति और उनके भाई-बन्धु गुलछर्रे उड़ाने के लिए जो भारी सम्पत्ति लूट रहे थे, उन सबका बोझ मजूरों और किसानों के ऊपर पड़ रहा था। च्यांग अब राष्ट्रीय पूँजीपतियों के हितों का रक्षक नहीं, बल्कि उनके विरुद्ध साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और विदेशी पूँजी की जूठ खानेवालों के हितों का संरक्षक बन गया। च्यांग की इस नीति से चीन में एक और तरह का पूँजीवाद विकसित हुआ, जिसे पीछे 'नौकरशाही पूँजीवाद' कहा जाने लगा, जो था "विदेशी पूँजी का पत्तलचट, सामन्ती, सैनिकवादी, इशारेदार पूँजीवाद।" अब च्यांग नौकरशाही और विदेशी पूँजीवाद के बीच केवल मजदूर-किसान ही नहीं, बल्कि राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग भी पिसने लगा। इस समय की स्थिति के बारे में 1928 ई. में माओ ने कहा था :

"राजनीतिक या आर्थिक दृष्टि से जरा भी छुटकारा पाये बिना समूचे देश के मजूर, किसान और आम लोग, यहाँ तक कि पूँजीपति वर्ग भी अभी तक प्रतिक्रियावादी शासन के चंगुल में फँसे हुए थे।"

–"चीन की लाल राज्यसत्ता कायम रहना क्यों संभव है ?"

(2) पाँचवीं पार्टी-कांग्रेस (1927 ई.)–जिस महीने में च्यांग ने शांघाइ में कत्लेआम किया था, उसी अप्रैल के अन्तिम दस दिनों में पार्टी-कांग्रेस वूहान में (25 अप्रैल को शुरू) हुई। पार्टी छह वर्ष की हो रही थी, लेकिन अभी उसके अनुभव उतने पक्के नहीं थे। चेन् तू-श्यू का ज्ञान किताबी था और वह उन परिस्थितियों में ठीक से मार्ग-प्रदर्शन नहीं कर सकता था। माओ ने चेन् की नीति का विरोध किया। चेन् के मार्ग-दर्शन ने असफलता का मुँह देखा था, इसलिए अब उसका साहस घट गया था, पार्टी के लोग समझने लगे थे कि चेन् का नेतृत्व बहुत महँगा पड़ेगा। तब भी कांग्रेस में हानूकाउ में चेन् अभी माओ को आगे न आने देने में सफल हुआ। चू च्यू-पाइ और जेन् पी-शी जैसे कुछ साथियों ने चेन् के काम की आलोचना की, लेकिन वह अपनी ओर से कोई ठोस कदम उठा नहीं सके। इतना होने पर भी कम्युनिस्ट इण्टरनेशनल के सही निर्देशों को पाँचवीं कांग्रेस ने मंजूर किया। तो भी, अभी रस्सी की ऐंठन वैसी ही बनी रही। अवसरवादिता की निन्दा तथा भूमि-सुधार-सम्बन्धी प्रस्ताव भी पास किये गये, लेकिन तो भी कांग्रेस ने चेन् को ही पार्टी का प्रधानमन्त्री चुना।

इसका परिणाम जैसा होना था, वैसा ही हुआ। पार्टी अपनी कमियों को दूर करके मजबूत नहीं बन सकी और दुश्मनों को उस पर प्रहार करने का मौका मिला। कांग्रेस के थोड़े ही समय बाद 21 मई को वांगशा में सैनिक अफसर हू के-श्यांग ने आक्रमण कर कितने ही क्रान्तिकारियों को मार डाला। 15 जुलाई को हानूकाउ में स्थित कुओ-मिन्-तांग ने कम्युनिस्ट पार्टी से सम्बन्ध विच्छेद करने का बाकायदा निश्चय किया।

इस प्रकार, 1927 ई. में कम्युनिस्ट पार्टी का पहला क्रान्तिकारी युग खतम हुआ, जिसके साथ संयुक्त मोर्चा ही खतम नहीं हुआ, बल्कि पार्टी को भी बहुत क्षति हुई। इस समय पिछले सालों के काम का निष्कर्ष निकालते हुए हू चियाओमू ने लिखा है* :

"(1) आज के चीन में जनवादी क्रान्ति का बीड़ा उठाने के लिए मजदूर-वर्ग की अगुआई में संयुक्त मोर्चे का होना लाजिमी है, बिना इस संयुक्त मोर्चे के क्रान्ति में जीत प्राप्त नहीं की जा सकती और यह कि संयुक्त मोर्चा असफल होगा अगर इसका नेतृत्व मजदूर-वर्ग के हाथों में न हो, पूँजीपति वर्ग के हाथों में रहेगा।

(2) चीन की जनवादी क्रान्ति में मजदूर-वर्ग के नेतृत्व की केन्द्रीय समस्या किसानों की समस्या थी, इसलिए

* 'चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के तीस वर्ष', पृष्ठ 23

क्रान्तिकारी साथी के रूप में किसानों को अपनी ओर करके ही क्रान्ति को विजयी बनाया जा सकता है।

(3) हथियारबन्द प्रतिक्रान्ति के मुकाबले में हथियारबन्द क्रान्ति को खड़ा करना ही चीन में क्रान्ति का मुख्य रूप हो सकता है, बिना हथियारबन्द क्रान्तिकारी सेनाओं के प्रत्येक चीज हाथ से जाती रहेगी।"

9

चीनी सोवियत (1923-30)

च्यांग की पीठ पर स्वदेशी सामन्त और विदेशी पूँजीवाद के पत्तलचट एवं साम्राज्यवादी थे, लेकिन इन छह वर्षों में अपनी सूझ, स्वार्थत्याग और कर्मण्यता द्वारा चीन की कम्युनिस्ट पार्टी का असर दूर-दूर तक फैल गया। यदि चेन् की दिवालिया नीति पार्टी को डुबो देने के लिए तैयार थी, तो पार्टी में माओ चे-तुंग, चाउ एन्-लाइ चू तेह, एह पिंग, हो लुंग जैसे पक्के कम्युनिस्ट भी थे। च्यांग के हत्याकाण्ड को देखकर एक अगस्त को चाउ एन-लाई, चू तेह, एह पिंग, हो लुंग, आदि साथियों ने उत्तरी अभियान के पार्टी द्वारा प्रभावित तीस हजार सैनिकों को लेकर नानचांग और क्यांग सी के प्रदेशों पर हथियारबन्द कार्रवाई की। उन्होंने एक बड़ी गलती यह की कि क्यांग-सी प्रदेश में उस समय हो रहे किसान-आन्दोलन से अपना सम्बन्ध जोड़कर अपनी स्थिति को मजबूत नहीं किया, बल्कि वह दक्षिण में क्वान्-तुंग की ओर बढ़ते गये। क्वान्-तुंग प्रदेश के पूर्व में शत्रु ने उनका जबर्दस्त मुकाबला किया, जिसके कारण भारी हार हुई और कम्युनिस्ट सेनानायक अपनी सेना के थोड़े ही भाग को बचा सके। अप्रैल से शुरू हुए कत्लेआम में पार्टी के बहुत-से अत्यन्त योग्य क्रान्तिकारी मजदूर और नेता, किसान और बुद्धिजीवी बलिदान होकर पार्टी को बहुत कमजोर कर चुके थे। लेकिन, च्यांग की और उसकी कुओ-मिन्-तांग पार्टी के पीछे अब जनता का बल नहीं रह गया था। देश की पीसी जाती बहुसंख्यक जनता अब एकमात्र कम्युनिस्ट पार्टी से ही भले दिनों की आशा रख सकती थी। पार्टी कमजोर थी, लेकिन रक्त-बीज की तरह एक सिर गँवाने पर सौ सिर उसके लिए पैदा होने को तैयार थे। च्यांग का प्रभाव अपनी हथियारबन्द सेनाओं के बल पर केवल नगरों तक ही सीमित था। वह देश के विशाल देहाती इलाके में अपने शासन को फैला नहीं सकता था। ऊपर से कुओ-मिन्-तांग अब डाकू युद्धपतियों के आपसी संघर्ष का अखाड़ा बन गई थी। देहात में किसान जमींदारों के खिलाफ थे और वह संगठित होकर उनसे जमीन माँग रहे थे। इतना बड़ा किसान जनसाधारण इस बात के लिए तैयार था कि उसको योग्य नेतृत्व देकर प्रतिक्रान्ति को दबाया और क्रान्ति को आगे बढ़ाया जा सके। किसान उस समय क्रान्ति के लिए कितना महत्त्वपूर्ण पार्ट अदा कर सकते थे, इसका चेन् तू-श्यू के बस की बात नहीं थी।

पार्टी के कर्मियों के सर्वनाश का डर सिर पर था। शहरों में हर जगह खून की होली खेली जा रही थी। पार्टी के लिए यह था कि वह अपने कुछ संगठनों को देहाती जिलों में स्थानान्तरित कर दे, जहाँ प्रतिक्रान्ति की ताकतें अपेक्षाकृत कमजोर थीं, और क्रान्ति की ताकतें अच्छी तरह अपने पाँव जमाये थीं। वहाँ जाकर वह भूमि-सुधार के पथ पर किसानों को आगे बढ़ाने तथा छापामार युद्ध को चलाने में किसानों की अगुवाई कर सके। पार्टी के संगठन का दूसरा हिस्सा, जो नगरों में था, उसे अन्तर्धान (अंडरग्राउंड) कर देना था। छिपकर काम करने से ही अब कार्यकर्ताओं तथा पार्टी-संगठनों को बचा आम जनता की क्रान्तिकारी शक्तियों को फिर से खड़ा किया जा सकता था। इसके बाद दुश्मन के भीतरी विरोधों और कमजोरियों से लाभ उठाते क्रान्तिकारी आन्दोलन को पुनरुज्जीवित करने के लिए दोनों भाग एक-दूसरे से तालमेल करके क्रांतिकारी संघर्ष को आगे बढ़ा सकते थे।

(1) **चेन् तू-श्यू का पतन** (1927 ई.)—जब तक चेन् तू-श्यू पार्टी का प्रधानमंत्री था, तब तक गलतियों से मुक्त नहीं हुआ जा सकता था, इसलिए जुलाई, 1927 में वूहान के कुओ-मिन्तांगी जब पार्टी के खिलाफ

हो गये, तो पार्टी की नीति को फिर से निर्धारित करने के लिए 7 अगस्त को पार्टी ने एक अत्यावश्यक कान्फरेंस बुलाई। कान्फरेंस ने चेन् की गलतियों को बतलाते हुए उसे पार्टी के नेतृत्व से हटा दिया। लेकिन, पूरी तौर से आगे का रास्ता साफ करने का काम तब तक नहीं हो सका, जब तक कि जुलाई, 1928 में छठी पार्टी-कांग्रेस ने फिर से विस्तारपूर्वक चेन् की गलतियों को नहीं जाँचा-परखा। अभी भी चेन् अपनी गलतियों को मंजूर करने के लिए तैयार नहीं था। उसने और उसके समर्थकों ने उस समय कहा कि पूँजीपति-वर्ग की चीन के साथ चीन में पूँजीवादी-क्रांति पूरी हो चुकी है, पूँजीपति-वर्ग अपना शासन कायम कर चुका है। वह जरूर अपने शासन को मजबूत बना लेगा। अब चीन के सर्वहारा-वर्ग को क्रान्तिकारी संघर्ष का रास्ता छोड़ देना चाहिए और उसे वैधानिक कार्यकलाप की ओर अपना मुँह मोड़ना चाहिए तथा भविष्य में उदय होनेवाली समाजवादी क्रान्ति की प्रतीक्षा करनी चाहिए। तब से चेन् तू-श्यू और उसके सहायकों ने त्रोत्स्कियायियों के साथ सहयोग का प्रतिक्रियावादी पथ स्वीकार किया और वे पार्टी-विरोधी कार्रवाइयाँ करने लगे, इसलिए अगले साल (1929 ई.) में उसे पार्टी से निकाल दिया गया।

अपनी 7 अगस्त की कान्फरेंस में पार्टी ने शरद् के फसल बटोरने के दिनों में किसानों को विद्रोह करने के लिए आवाहन किया। कान्फ्रेंस के बाद माओ चे-तुंग ने पश्चिमी क्यांग-सी प्रदेश के भिन्न-भिन्न इलाकों और हूनान-प्रदेश के पूर्वी इलाकों का दौरा किया और किसानों, मजूरों तथा उत्तरी अभियान के सैनिकों के एक हिस्से का विद्रोह चलाने में पथ-प्रदर्शन किया। हूनान और क्यांग-सी प्रदेशों की सीमा पर इसी समय मजूरों और किसानों की क्रान्तिकारी सेनाओं का निर्माण हुआ, जिन्होंने शत्रुओं के साथ लड़ाई की।

(2) मृत्यु के मुख में—सितम्बर महीने में माओ हूनान-प्रदेश में किसान-संगठन को मजबूत करते उसे आगे बढ़ा रहे थे। उसी समय जैसाकि अभी बतलाया, किसानों और कमकरों की फौज की पहली टुकड़ी संगठित हुई। माओ ने इस फौज के तैयार करने में किसानों के अतिरिक्त हान् यांग के खान-मजदूरों तथा पहले की सेना के सैनिकों को भी भरती किया था। उन्होंने इस टुकड़ी का नाम 'किसान-मजूर प्रथम सेना का प्रथम डिवीजन' रक्खा। पहली रेजिमेंट खान-कमकरों की थी। दूसरी हूनान-प्रदेश के पिंग-कियांग, ल्यू-यांग, ली-लिंग और दो जिलों के किसानों से तैयार की गई थी। तीसरी रेजिमेंट को वांग चिंग-वेइ के विरुद्ध संघर्ष करने के लिए वूहान से तैयार किया गया। माओ ने यद्यपि यह सेना-संगठन हूनान-प्रान्त की कमेटी की मंजूरी से किया था, लेकिन केन्द्रीय कमेटी ने इसका विरोध किया। जिस वक्त माओ कमकर-किसानों की सेना का संगठन करते हांग-यांग के खान-मजूरों और जिले के किसान-गारदों के बीच में थे, इसी समय कुओ-मिन्-तांग की मिन्-तुवान टुकड़ी ने उन्हें पकड़ लिया। उस समय च्यांग काइ-शेक ने जमींदारों को भी छोटा-मोटा युद्धपति बना दिया था। यदि एक तरफ किसान उनसे संघर्ष करने के लिए संगठित थे, तो उन्होंने भी अपना सशस्त्र संगठन कर लिया था। मिन्-तुवान् सेना के आदमी माओ को पकड़कर अपने स्वामी की कचहरी की ओर ले गये। वहाँ उन्हें मृत्युदण्ड का हुक्म हुआ। सिपाही अब उन्हें मारने के लिए दूसरी जगह ले चले। इसी समय रिश्वत देकर छुड़ाने का प्रयत्न किया गया। सिपाही भाड़े के थे, उन्हें इसकी बहुत चिन्ता नहीं थी कि हाथ में पड़े बन्दी को मृत्यु का मुख देखना पड़े या न पड़े। वह कुछ डालर पाकर माओ को छोड़ सकते थे, लेकिन उनके अफसर ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया। माओ के सिर पर अब मृत्यु नाच रही थी। वह इसकी ताक में थे कि कैसे मौका मिले और वह हाथ से निकल जायँ। सिपाही खेतों के भीतर से जा रहे थे। इसी समय मौका पा वह सिपाहियों के हाथ से निकलकर फसल उगे खेतों के बीच में भाग निकले। मृत्यु पीछा कर रही थी और माओ उसके पंजे से निकलने की जी तोड़ कोशिश कर रहे थे। उन्हें पास में एक तालाब मिला, जिसके ऊपर बहुत ऊँची घास उगी हुई थी। माओ उसी में जाकर छिप गये। जमींदार के सैनिक आसपास के किसानों को पकड़कर माओ की खोज करने लगे, लेकिन जमींदार या कुओ-मिन्-तांग से किसानों का सद्भाव नहीं था, सभी बेमन से काम कर रहे थे। एकाध बार तो ढूँढ़नेवाले इतने नजदीक आ गये थे कि वह हाथ बढ़ाकर उन्हें छू सकते थे। सूर्यास्त होने के बाद ढूँढ़नेवाले लौट गये, माओ अपनी जगह से निकलकर पहाड़ की ओर चले। दिन को छिपते और रात को मुसाफिरी करते वह दौड़ते-भागते चलते ही गये। जूता फट गया। जेब में पैसे

नहीं थे। पैर के तलवे कट चुके थे। इसी समय उन्हें एक किसान मिला, जिसने माओ को पहचानकर बुलाना चाहा। लेकिन माओ को क्या पता था। वह भागने लगे। किसान ने दौड़कर कहा कि तुमने और तुम्हारे दोस्त ने मेरे घर भोजन किया था, भागो नहीं। माओ ने पीछे फिरकर देखा, तो वह वही किसान मालूम हुआ, जिससे चांगशा में पढ़ते वक्त परिचय हुआ था। किसान माओ को अपने घर ले गया। उसने उन्हें सान्त्वना और मदद ही नहीं दी, बल्कि लाल इलाके के पास तक उसे पहुँचाने ले गया।

(3) सेनापति और पार्टी-मोर्चा कमेटी के 'अध्यक्ष'—माओ के पास, जान बचाकर भागते समय सात डालर थे, जिनसे उन्होंने जूते, छाता और खाने की चीजें खरीदीं। जब वह किसान गारदों की छावनी के पास पहुँचे, तो उनके खीसे में ताँबे के दो पैसे रह गये थे।

यद्यपि चेन् की अवसरवादी नीति खतम हो चुकी थी, लेकिन उसकी जगह अब नया नेतृत्व 'वामपक्षी' गलती कर रहा था। छठी कांग्रेस के समय माओ चे-तुंग वहाँ मौजूद नहीं थे, तो भी कांग्रेस ने उन्हें पार्टी की केन्द्रीय कमेटी में चुन लिया। अक्टूबर, 1927 में माओ मजूरों और किसानों की नव-निर्मित लाल सेना को हटाकर क्यांग-सी और हूनान प्रदेशों की सीमा पर चिंग-चांग के पहाड़ी इलाके में ले गये, जहाँ पर, उन्होंने मजूरों और किसानों की हूनान-क्यांग-सी सीमान्त प्रदेशी सरकार कायम की, भूमि-वितरण में हाथ बँटाया और दुश्मनों के निरन्तर होते आक्रमणों का मुँहतोड़ जवाब दिया। चिंग-कांग पहाड़ी इलाका प्रतिरक्षा के ख्याल से भी बहुत अच्छा था।

1927 के नवम्बर में हूनान-प्रदेश के चालिन् स्थान में माओ ने प्रथम सोवियत की स्थापना की और सोवियत के पहले अध्यक्ष ताउ तुंग-पिंग चुने गये। सोवियत का जो कार्यक्रम माओ ने बनाया था, वह गणतन्त्री आधार पर था। सोवियत की स्थापना के बाद अब संगठन और शक्ति को मजबूत करने का काम माओ ने जोर-शोर से करना शुरू किया। इसके थोड़े समय बाद दो डाकू नेताओं वांग-चो और युवान् वेन्-चाइ ने लालसेना में शामिल होने की इच्छा प्रकट करते कहा कि अब से हम पार्टी के हुकुम में चलेंगे। वे जितने समय तक कम्युनिस्टों के साथ रहे, उतने समय तक उन्होंने लूटमार नहीं की। चालिन् में सोवियत के स्थापित होने की खबर पाकर और कितने ही इलाकों में भी सोवियतें कायम होने लगीं, किसानों-मजूरों की सेना संगठित होने लगीं। हो लुंग ने पश्चिम में और सू हाइ-तुंग ने पूर्व में लालसेना संगठित करके सोवियत स्थापित की। फू-कियान के नजदीक क्यांग-सी की उत्तरी-पूर्वी सीमा पर भी एक सोवियत की नींव पड़ी। हेलन-फेंग में बनी सोवियत ज्यादा दिनों तक नहीं टिक सकी, हाँ, इसकी सेना माओ से जा मिली, जो 11वीं लालसेना की अंकुर बनी।

1928 के मई महीने में चू तेह अपने आदमियों के साथ आकर माओ से मिल गये। फिर पेंग तेह-ह्वाई भी अपने दल के साथ आ मिला। शक्ति-संचय के साथ-साथ सोवियत शासित प्रदेश का धीरे-धीरे विस्तार होने लगा। इतना सुन्दर नेतृत्व पाकर किसानों की बिखरी शक्ति एकताबद्ध हो और मजबूत हुई। वह छापेमार लड़ाइयाँ करने लगे। जमीन के लिए किसानों के संघर्ष अब क्यांग-सी, फूकियान, हूनान, हूपेइ, क्यांगसी और अन्य प्रदेशों में जोर पकड़ने लगे, कितने ही दूसरे क्रान्तिकारी अड्डे और लालसेना की टुकड़ियाँ संगठित हुईं। 1929 ई. में माओ और चू-तेह के नेतृत्व में लालसेना क्यांगसी के दक्षिण और फूकियान् प्रदेश के पश्चिम में घुस गई, और जुइचिन (क्यांगसी) स्थान को केन्द्र बनाकर वहाँ केन्द्रीय क्रान्तिकारी अड्डे कायम किये। देहातों में क्रान्तिकारी अड्डों का निर्माण करके अपने शक्ति और संगठन को मजबूत करने में किस तरह सफल हुए, इसका जवाब माओ चे-तुंग ने अपने दो लेखों में सैद्धान्तिक दृष्टि से दिया है। अक्टूबर, 1928 में उन्होंने इस विषय का एक लेख 'चीन में लाल राजसत्ता का कायम रहना क्यों सम्भव है ?' लिखा, और जनवरी 1930 में दूसरा लेख 'एक चिनगारी ही लपटों की रचना कर देगी' लिखा। पहले लेख में उन्होंने लालशासन के लिए अनुकूल पाँच मुख्य परिस्थितियों को बतलाया।

"(1) चीन के स्थानिक (सीमित) कृषि-अर्थतंत्र के साथ-साथ देश को अपने-अपने प्रभाव-क्षेत्रों में बाँटकर शोषण करने और उसे मुट्ठी में रखने की साम्राज्यवादियों की नीति ने प्रतिक्रियावादी शासन में दरारों की रचना कर दी है। इन दरारों से क्रान्तिकारी ताकतें फायदा उठा सकती हैं।

(2) देश के व्यापक इलाकों के लोगों में प्रथम क्रान्तिकारी गृह-युद्ध का असर अभी तक मौजूद है।

(3) समूचे देश में क्रान्तिकारी स्थिति बराबर विकसित होती जा रही है।

(4) लाल राज्य-सत्ता की मदद के लिए लालसेना मौजूद है।

(5) लाल राज्य-सत्ता के निर्देशन के लिए कम्युनिस्ट पार्टी मौजूद है, जिसका संगठन शक्तिशाली और जिसकी नीति सही है।"

अपने दूसरे लेख में साथी माओ ने चीन की लालसेना द्वारा संचालित युद्ध के महत्त्व का विस्तार से लेखा-जोखा करके बतलाया कि "लालसेना और क्रान्तिकारी अड्डों का निर्माण और विस्तार अर्ध-औपनिवेशिक चीन में मजदूर-वर्ग के नेतृत्व में किसान-संघर्षों का सबसे ऊँचा रूप है" और "वह आनेवाले राष्ट्रव्यापी क्रान्तिकारी संघर्ष की गति को तेज बनाने का अत्यधिक महत्त्वपूर्ण साधन है।" माओ चे-तुंग की राय थी कि लालसेना द्वारा किए जानेवाले युद्ध को, किसान-क्रान्ति को और क्रान्तिकारी राज्यसत्ता के निर्माण को ज्यादा से ज्यादा आगे बढ़ाना चाहिए। "केवल ऐसा करने पर ही हम समूचे देश की क्रान्तिकारी जनता के विश्वास और आदर को प्राप्त कर सकेंगे, जैसाकि सोवियत संघ समूची दुनिया में कर चुका है। केवल इसी रास्ते पर चलकर हम शासक-वर्ग के लिए भारी कठिनाइयाँ खड़ी कर सकेंगे, उसकी नींव को हिला सकेंगे, और उसके छिन्न-भिन्न होने की गति को तेज कर सकेंगे। केवल ऐसा करके ही हम सही अर्थों में वैसी लालसेना का निर्माण कर सकेंगे, जो आनेवाली महान् क्रान्ति में महत्त्वपूर्ण हथियार का काम देगी। संक्षेप में यह कि केवल इसी प्रकार हम क्रान्ति की आनेवाली लहर की गति को तीव्र बना सकेंगे।"

साथी माओ चे-तुंग ने इस प्रकार बलशाली प्रतिक्रियावादियों के मुकाबले में क्रान्ति की शक्तियों को संचित करने और बढ़ाने का काम किया। च्यांग काइ-शेक और कुओ-मिन्-तांग के कसाइयों ने नगरों पर काबू करके चाहा था कि सर्वहारा-किसानों-मजूरों की क्रान्ति को चीन में सदा के लिए दबा दें। लेकिन, माओ ने इसी समय क्रान्ति की लड़ाई का एक नया नियम निकाला, जो था "प्रतिक्रान्ति के हाथ में गये नगरों पर हथियारबन्द क्रान्तिकारी देहाती जिलों के द्वारा घेरा डाला जाय और फिर उन पर कब्जा किया जाय।" अगले बीस साल के क्रान्ति के इतिहास ने साथी माओ की इस नीति की पुष्टि की। हू चियाओ-मू के अनुसार* :

"इस काल में साथी माओ चे-तुंग ने पार्टी के लिए, द्वितीय क्रान्तिकारी गृह-युद्ध के दौरे में क्रान्ति के विकास के आम रास्ते का सिर्फ मानचित्र ही नहीं पेश किया, बल्कि ठोस नीतियों के विभिन्न पहलुओं को उभारकर रखने में उन्होंने महत्त्वपूर्ण रचनात्मक योग दिया–मिसाल के लिए किसान-क्रान्ति-सम्बन्धी नीति को निर्धारित करने में, बीच के वर्गों के बारे में, जबर्दस्त दुश्मन को हरानेवाली सैनिक रणनीति और कार्यनीति के बारे में, सैनिकों के बीच में काम करने और देहाती जिलों में तथा युद्ध की परिस्थितियों में पार्टी-निर्माण का काम करने के बारे में बतलाया। इन तथ्यों को ध्यान में रखा कि देहाती जिलों में गरीब किसान और खेत-मजूर सबसे ज्यादा क्रान्तिकारी ताकत हैं, दृढ़ता से क्रान्ति का समर्थन करते हैं, पूँजीवादी जनवादी क्रान्ति की मंजिल में धनी किसानों के अर्थतंत्र को अभी भी कायम रखने और बीच के दर्जे के तथा छोटे पैमाने के उद्योग और व्यापार की अभी भी रक्षा करने और आगे बढ़ाने की जरूरत है। कृषि-क्रान्ति में साथी माओ चे-तुंग ने सही तौर पर मजबूत के साथ गरीब किसानों और खेत-मजूरों को आधार बनाने की, मझोले किसानों के साथ एका करने की, धनी किसानों को नियन्त्रित करने की, और मझोले तथा छोटे उद्योगपतियों और व्यापारियों की रक्षा करने की तथा केवल जमींदार-वर्ग को खत्म करने की नीति को अपनाया। चूँकि चीन की क्रान्ति में संघर्ष का मुख्य रूप, और संगठन का मुख्य रूप फौज थी, और चूँकि उस काल में क्रान्तिकारी युद्ध की स्थिति यह थी कि दुश्मन ताकतवर था और हम कमजोर, वह आकार में बड़ा था और हम छोटे और यह कि दुश्मन जनता से अलग पड़ गया है और हम जनता के साथ घनिष्ठ रूप में गुँथे हुए थे, साथी माओ चे-तुंग ने सही तौर पर निम्न बुनियादी सिद्धान्तों को निर्धारित किया, जैसे–लालसेना को पार्टी के बारे में, जनता की

* चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के तीस वर्ष, पृष्ठ 33-35

राज्यसत्ता के बारे में, कृषि-सुधार और अन्य सब प्रकार के स्थानिक कार्यों के बारे में, प्रचारकों और संगठनकर्ताओं के रूप में काम करना चाहिए, लालसेना को जबर्दस्त राजनीतिक काम को आगे बढ़ाना और अपने बीच जन-आन्दोलन को कड़ाई के साथ कायम करना चाहिए। लालसेना का युद्ध जनता का युद्ध हो जाना चाहिए और जनता या छापेमार लड़ाई की खासियत रखनेवाले गतिशील युद्ध को जो कि उस काल में लड़ाई का मुख्य रूप था—अपना आधार बनाना चाहिए। लालसेना को लम्बे युद्ध की रणनीति पर अमल करना चाहिए, लेकिन कार्यनीति में उसे फौरन फैसला होनेवाली लड़ाइयों में ही हिस्सा लेना चाहिए, साधारण काल में लालसेना के सैनिकों को आम जनता को संगठित करने के लिए उनके बीच जाना चाहिए और युद्ध के समय में उसे अपनी श्रेष्ठ ताकतों को दुश्मनों को घेरने और नष्ट करने के लिए लगा देना चाहिए। ये सब बुनियादी सिद्धान्त और कुछ दूसरे सैनिक सिद्धान्त चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की सैनिक नीति के ही भाग थे। इन सब बातों को देखकर कहा जा सकता है कि चीन की क्रान्ति के इस कठिन दौर में साथी माओ चे-तुंग के काम ने मुख्य रूप से चीन की क्रान्ति को जीत की ओर ले जाने के लिए जमीन पक्की कर दी।"

10

माओ के साथी

1. चू तेह

माओ चे-तुंग और चू तेह का सम्बन्ध बहुत कुछ वैसा ही है, जैसे मार्क्स और एंगेल्स का था। चू तेह से माओ 13 वर्ष छोटे हैं, लेकिन चू तेह माओ के बड़प्पन को स्वीकार करते हैं। चू तेह की सैनिक प्रतिभा अद्भुत है, और उसी के कारण आज भी वह चीन गणराज्य के प्रधान सेनापति हैं। लेकिन माओ की प्रतिभा सर्वतोमुखी है। सैनिक विज्ञान के भी वह अद्भुत तत्त्वदर्शी हैं, यह उनकी 1935 ई. में लिखी पुस्तक 'चीन के क्रान्तिकारी युद्ध की दाँव-पेंच-सम्बन्धी समस्याएँ' से मालूम होगा। माओ और चू का प्रेम भी अद्भुत है, जिसका दर्शन मार्क्स और एंगेल्स में ही पाया गया था। चू तेह का जन्म जेचुआन प्रदेश में एक छोटे-मोटे जमींदार के घर में 1888 ई. में हुआ था, लेकिन परिवार भारी था और जमींदारी छोटी, इसलिए उसे वैभवशाली जमींदार-घर नहीं कहा जा सकता था। थोड़े ही दिनों बाद परिवार में अलगी-बिलगी हो गई और चू तेह को चचा ने अपने पास रख लिया। जेचुआन के पास के प्रदेश युन्ननफू में उसी समय सैनिक विद्यालय खुला था। चचा के प्रभाव के कारण चू तेह को प्रारंभिक शिक्षा समाप्त करने के बाद इस विद्यालय में दाखिल होने में दिक्कत नहीं हुई। वहाँ रहकर चू तेह ने सैनिक शिक्षा समाप्त की। उसके बाद उन्हें लेफ्टिनेंट बना दिया गया। पहले ही से चू तेह के विचार राष्ट्रवादी थे। 1909 ई. में वह कुओ-मिन-तांग के सदस्य बन गये। 1911 ई. की क्रान्ति में तरुण अफसर ने क्रान्ति का साथ दिया। 1916 ई. में युवान् शि-काइ की गद्दारी के समय चू तेह की फौजी टुकड़ी ने बड़ा काम किया, जिससे उन्हें 'चार भयंकर सेनानायकों' में गिना जाने लगा। 1915 ई. में अब वह एक रेजिमेंट के अफसर थे। जब डा. सुन् और युवान् शि-काइ में समझौता हो गया, तो चू तेह की नई जिन्दगी का दौर शुरू हुआ। उन्हें यून्ननफू के प्रादेशिक अर्थ-सचिव का पद मिला। उस समय के चीनी अधिकारियों में घूसखोरी, अफीम और लम्पटता आम पाई जाती थी। चू तेह भी उसमें फँस गये। उनके पास कई स्त्रियाँ और रखैलियाँ थीं। यून्नन नगरी में अपने लिए उन्होंने महल भी बना लिया और अफीम भी खाने लगे। लेकिन चू तेह को पुस्तकों को पढ़ने का शौक तथा स्वतन्त्र और तीव्र बुद्धि मिली थी। देश की आजादी और उसको शक्तिशाली देखने का उन्होंने जवानी में स्वप्न देखा था। रह-रहकर वह स्वप्न फिर उनके मन में उभड़ने लगा। एक समय वह अपने किसी काम से तिब्बत में गये हुए थे। उस समय उनके हाथ में रूसी-क्रांति-सम्बन्धी कुछ

पुस्तकें आईं, जिनके पढ़ने से उनकी सुषुप्त भावनाएँ फिर जाग उठीं और अपने ऊपर घृणा होने लगी। उनका मन कीड़े-मकोड़े के जीवन से बागी हो गया।

1922 ई. में चू तेह ने सुख का रास्ता छोड़ काँटों का रास्ता स्वीकार करने का निश्चय कर लिया। देश और उसकी साधारण जनता की भलाई के लिए अपने इस लज्जाजनक जीवन को उन्होंने तिलांजलि दे दी। उन्होंने अपने हरम में रुपये-पैसे बाँटकर महल को छोड़ा। शांघाइ उस समय कम्युनिस्टों का केन्द्र माना जाता था, इसलिए वह वहाँ पहुँचे। राष्ट्रवादी कुओ-मिन्-तांगी अब गले तक भ्रष्टाचार में डूबे विदेशी साम्राज्यवादियों के दलाल बनकर जनता का खून चूस रहे थे, इसलिए चू तेह केवल कम्युनिस्ट पार्टी के ही साथ रहकर कुछ काम करने की आशा रखते थे। लेकिन और सब बुरी आदतों के छोड़ने के बाद भी अफीम उनसे छूटी नहीं थी। जब तक अफीम पीछे पड़ी हुई थी, तब तक कम्युनिस्ट उन पर विश्वास कैसे कर सकते थे ? चू तेह के पास दृढ़ मनोबल था। उन्होंने अफीम छोड़ने का पक्का निश्चय कर लिया। लेकिन, अफीम का छोड़ना शारीरिक तौर से भी आसान नहीं है। सात दिन तक चू तेह तड़फड़ाते रहे, लेकिन उन्होंने अफीम को नहीं छुआ; उनको डर था कि एक बार छोड़ देने पर कहीं अफीम फिर अपने फन्दे में न जकड़ ले। शांघाइ से हांग-काउ अंग्रेजी स्टीमर आया-जाया करता था, जिसमें अफीम खाने की सख्त मनाही थी। चू तेह उसी स्टीमर पर सवार हो गये, और अब हफ्तों वह उसी स्टीमर पर बैठे शांघाइ और हांग-काउ के बीच आते-जाते रहे। एक महीने के बाद स्टीमर से उतरने पर चू तेह अब दूसरे ही आदमी थे, उनका स्वास्थ्य फिर पहले जैसा हो गया था।

1922 ई. में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी को कायम हुए अभी एक ही साल हुआ था, और अभी उसकी अवस्था चेन् के नेतृत्व के कारण बहुत मजबूत नहीं थी। साम्यवादी-साहित्य भी अभी चीनी भाषा में नाममात्र था, और चू तेह कोई दूसरी विदेशी भाषा नहीं जानते थे। शांघाइ से चू तेह पहले पेकिंग गये। वहाँ उन्होंने कम्युनिस्ट पार्टी के सम्पर्क में आने की कोशिश की, किन्तु उसमें सफलता नहीं मिली। फिर शांघाइ लौटकर उन्होंने डा. सुन् यात्-सेन् से मुलाकात की। डा. सुन् ने भी सलाह दी और चे तेह चाली वर्ष की उमर में अपने ज्ञान को बढ़ाने के लिए जर्मनी पहुँचे। बर्लिन में चाउ एन्-लाइ से उनकी मुलाकात हुई। यहीं उनके हाथ में लेनिन की पुस्तक 'राज्य और क्रान्ति' तथा दूसरी पुस्तकें मिलीं, जिसे पढ़कर चीनी विद्यार्थियों के जर्मनी में कम्युनिस्ट पार्टी कायम करते समय चू तेह उसके मेम्बर बन गये। बर्लिन में ही उन्हें चीनी कम्युनिस्ट पार्टी मिली। बर्लिन में उस समय भारतीय तथा कितने ही और भी एशियाई कम्युनिस्ट रहते थे। चू तेह उनके साथ काम किया करते थे। इसके फलस्वरूप उन्हें पुलिस ने एक बार गिरफ्तार भी किया। फिर वह फ्रांस चले गये। कुछ समय तक वह वहाँ रहे, फिर रूस के लिए रवाना हुए, जहाँ 'पूर्वी' यूनिवर्सिटी में दाखिल होकर वह कितने ही समय तक पढ़ते रहे। प्रायः तीन वर्ष बाहर रहने के बाद 1925 ई. में चू तेह शांघाइ लौटकर फिर क्रान्ति-सेना में सम्मिलित हो गये।

क्रान्ति-सेना के उत्तरी अभियान का समय आया। चू तेह भी अपनी टुकड़ी के साथ उसमें शामिल थे। चू तेह का बड़ा अफसर चू पी-ते च्यांग की सेना का एक बहुत बड़ा प्रभावशाली अफसर था, जो चू तेह से बहुत प्रभावित हुआ था, जिसके कारण चू तेह की पदवृद्धि होती गई। किन्तु, जब च्यांग काइ-शेक ने कम्युनिस्टों पर 1927 ई. में प्रहार करना शुरू किया, तो फिर चू तेह के लिए वहाँ स्थान नहीं रह गया। उनके साथ बहुत-से सैनिक तथा कितने ही सेनानायक—जिनमें लिन् पियाओ भी था—निकलकर माओ के पास चले गये। लिन् पियाओ आगे लालसैनिक विद्यालय के अध्यक्ष बने।

नवीन चीन के इतिहास के लिए माओ-चू जोड़ी का मिलन अद्भुत घटना है। क्रान्ति के युद्ध में बहुत से उतार-चढ़ाव आये, लेकिन यह जोड़ी उसी तरह दृढ़ रही। ऐसा भी समय आया, जब कि जेनरल चू तेह की सेना में हजार से भी कम सैनिक और उसमें से भी आधे के पास ही बन्दूकें रह गईं, लेकिन उनका उत्साह अदम्य था, भविष्य के प्रति उनका विश्वास अटूट था। चिंग-कांग शान् में एक समय दोनों के सैनिकों की सभा हो रही थी। माओ ने कहा :

"साथियो ! हमें आसपास की जमीन किसानों में बाँटनी है, यहाँ सोवियत-शासन को मजबूत करना है।

यह कैसे हो सकता है ? पहली बात यह, कि जनता को अपने राज्य की स्वयं रक्षा करना सीखना होगा। दूसरी बात यह है कि इस राज्य के संदेशवाहकों को चारों तरफ फैल जाना चाहिए। यह बात असंभव नहीं है। कुओ-मिन्-तांगी शत्रु-सेना के पास से छीने गये हथियारों को गाँव के गरीबों में बाँट दो। उनके साथ समझदारी के साथ बर्ताव करो। उन्हें सैनिक-शिक्षा दो। यह भी करने की बात है कि हम अपने आसपास के प्रदेशों के साथ व्यापार-सम्बन्ध स्थापित करें। आज व्यापारी हमारे नाम से भड़कते हैं। यह भी करना होगा, कि जो कुओ मिन्तांगी सैनिक अपने हाथ में पड़ें, उनके साथ हमें अच्छा प्रेमपूर्वक सलूक करके प्रभावित करना चाहिए, फिर वह जहाँ चाहें, वहाँ जाने की छूट देनी चाहिए। इससे क्या होगा ? ये लोग जायँगे, दूसरे लोगों में हमारे प्रति विश्वास पैदा करेंगे।"

इसी समय एक सैनिक बोल उठा : "लेकिन, इस तरह के कूड़ा-करकट अगर राज्य में भर जायँगे, तो हमारे सोवियत राज्य का विकास नहीं होगा। हमें चांगशा पर सीधे हमला करके इस शहर को अपना मुख्य-केन्द्र बनाना चाहिए। पार्टी की आज्ञा हमें माननी चाहिए।" इस समय पार्टी की केन्द्रीय कमेटी की यही नीति थी, और इसका प्रधानमन्त्री च्यू-पाई 'वामपंथी' उग्रता में फँसने की गलती कर रहा था।

इस पर माओ ने अपने भावों को और भी स्पष्ट करते हुए कहा : "पार्टी के अनुशासन को तोड़ने की बात मैं नहीं कहता, लेकिन पार्टी की नीति क्रान्ति की अहिरन पर गढ़ी जाती है, अनुभव की कसौटी पर चढ़कर पक्की होती है। आज की स्थिति क्या कह रही है ? दुश्मन हमारी अपेक्षा बहुत अधिक बलवान् हैं। क्रान्ति का ज्वार उतरने लगा है। आज हम दो ज्वारों के बीच में हैं। इस वक्त हमें अपनी शक्ति को सँभाल के रखना चाहिए। एक सफल क्रान्तिकारी को केवल आक्रमण करना ही नहीं, बल्कि सुव्यवस्थित रीति से पीछे हटने की कला भी सीखनी चाहिए। आज नगरों में दुश्मन का जोर बहुत है। हम यदि बहुत नुकसान उठाकर शहरों को हाथ में कर भी लें, तो भी उन्हें देर तक हम अपने हाथ में नहीं रख सकेंगे। हमें शहर के आसपास के गाँवों को घेर लेना चाहिए। क्रान्ति का ज्वार जब आयेगा, तो प्रतिक्रान्ति की यह बाढ़ पलक मारते ही खतम हो जायगी।"

अब जेनरल चू तेह बोलने लगे। उनके मुँह पर स्नेह, कोमलता और वात्सल्य जिस तरह मुस्करा रहा था, उससे इस रणवीर के शौर्य का पता नहीं लगता था। लेकिन, नानचांग का विद्रोह प्रसिद्धि पा चुका था, जिसके नेता यही चू तेह थे। चू तेह ने कहा : "साथी माओ ठीक कह रहे हैं। हमारा आज तक का अनुभव भी यही बतला रहा है। इस समय बेकार का साहसवाद हमें नहीं करना चाहिए। एक दूसरी बात कहूँ। कल हमारे एक सैनिक ने मुझसे कहा कि हम इस पहाड़ी सोवियत को बचा नहीं सकेंगे, इसलिए यहाँ से खिसक जाना चाहिए। नहीं, साथियो, इस प्रकार का पीछे-हटो-वाद भी क्रान्ति के लिए ठीक नहीं हैं : यदि हमारी सेना किसानों के हृदय को जीत सके, तो विजय हमारी ही होगी।"

उस समय क्रान्ति-सेना में अनुशासन की कमी थी, सभा ने उनके बारे में तीन नियमों को स्वीकार किया : (1) आज्ञा को तन्देही से पालन करना, (2) गरीब किसानों से कोई चीज नहीं लेना, (3) जमींदारों के पास से जो कुछ जब्त किया जाय, उसे सरकारी भंडार में जमा करना।

चू-माओ की सेनाओं को मिलाकर प्रसिद्ध चौथी लालसेना का निर्माण हुआ, जिसके सेनापति चू-तेह हुए और राजनीतिक सलाहकार माओ—ठीक अर्जुन और कृष्ण की जोड़ी। इस बीच में कुओ-मिन्-तांग की सेनाओं ने दो बार उनके ऊपर चढ़ाई की, लेकिन दोनों बार उसे मुँह की खानी पड़ी। एक बार रात को चालिन् में चू तेह पड़ाव डाले पड़े थे, अकस्मात् कुओ-मिन-तांगी सेना ने हमला कर दिया, और चू-तेह दुश्मन के हाथ में पड़ गये। दुश्मन के सैनिक ने पूछा :

"बतला, तेरा कमांडर कहाँ भाग गया ?"

"मुझे मालूम नहीं, हुजूर··मैं अभी जगा।" चू-तेह एक गरीब की बोली में बोल रहे थे। उनके शरीर पर दूसरे सिपाहियों जैसा ही कपड़ा था, इसलिए दुश्मन यह नहीं पहचान सका कि वह किससे बात कर रहा है। जब शत्रु सैनिकों ने अपने हथियार उनकी तरफ ताने, तो चू-तेह ने गिड़गिड़ाकर कहा : "मुझे मत मारो, मैं

रसोइया हूँ। मारने से क्या फायदा, मैं तुम्हारे लिए खाना बनाऊँगा।"

सैनिकों ने हथियार रोक लिया, किन्तु सहज में ही न छोड़ रसोइये को अच्छी तरह देखने के लिए वह बाहर ले गये। एक ने पहचानते हुए चिल्लाकर कहा—"यह तो चू-तेह है", लेकिन तब तक चू-तेह ने अपनी रिवाल्वर सँभाल ली थी और चिल्लानेवाले को उन्होंने पहले ठंडा कर दिया, फिर दूसरों को पटककर वह वहाँ से नौ-दो-ग्यारह हो गये।

इस घटना के कारण कितनी ही बार लालसैनिक अपने जेनरल को 'रसोइया सरदार' कहकर प्यार से पुकारते थे।

मई, 1928 से चू-माओ की सेनाएँ मिलकर एक हुईं। भोले-भाले किसान चू-तेह की करामात की बहुत-सी कथाएँ कहते-सुनते हैं। कोई कहता है : चू तेह को ऐसी दृष्टि प्राप्त है, कि वह सौ कोस तक देख सकता है। कोई उनमें उड़ने की सिद्धि मानता है, और यह भी बतलाता है कि दुश्मन के रास्ते को रोकने के लिए वह आँधी और धूल का तूफान उठा सकते हैं। किसी-किसी का कहना है कि चू-तेह का शरीर कर्ण की तरह अभेद्य है, हजारों गोलियाँ चलाई जायँ, किन्तु उनके शरीर तक को भी नहीं छू सकतीं, इसीलिए वह आज तक कभी घायल नहीं हुए। कोई-कोई यह भी विश्वास रखते हैं कि चू-तेह को फिर जी जाने का मंत्र मालूम है। च्यांग काइ-शेक के लोगों ने कितनी ही बार उनके मरने की खबरें उड़ाईं। यदि वह इस मंत्र को नहीं जानते, तो अब तक जीवित कैसे रह सकते ! चू-तेह शब्द का अर्थ है 'लाल-पुण्य' जो किसानों के लिए भारी भावगर्भित है, इसे कहने की आवश्यकता नहीं।

चीन के यह प्रधान सेनापति अपने स्वभाव में बहुत शान्त और विनीत हैं। उनकी आवाज मीठी और आँखें स्नेह और करुणाभरी बड़ी-बड़ी हैं। कद कुछ ठिंगना तथा मोटा भी है, लेकिन शरीर की गठन बड़ी मजबूत है। आज वह 70 वर्ष से ऊपर हो गये हैं, लेकिन अब से कुछ ही वर्षों पहले कोई उनको 50 वर्ष का भी नहीं कहता था। चू-तेह हँसकर कहते हैं : "जब से मुझे याद है, मैं अपने को 46 वर्ष ही का बतलाता हूँ।" चू-तेह की पहली स्त्री लड़ाई में लड़ते-लड़ते मरीं, दूसरी भी एक किसान कन्या हैं, जो किसान-स्त्रियों की सेना स्वयं बनाकर लड़तीं और कन्धे पर घायल सैनिकों को ढोया करतीं। वह बड़ी साहसी और हाथ-पैर से पुरुषों जैसी मजबूत स्त्री हैं।

सादगी में तो चू-तेह का सानी नहीं मिलेगा। साधारण सैनिकों की पोशाक ही नहीं, बल्कि बहुत दिनों तक वह नंगे पैर रहते और अपने सिपाहियों की तरह उनके साथ मिलकर साग-पात खाते थे। साधारण सैनिकों में घुलमिल जाना उनके स्वभाव में है। वह उनके साथ चहलकदमी करते, ताश खेलते या कहानियाँ कहते-सुनते रहते, जिसे देखकर भला कौन उन्हें रसोइया छोड़कर और कुछ कह सकता था। टेनिस और बास्केटबाल के वह अच्छे खिलाड़ी हैं। कोई भी सिपाही उनके पास सीधे पहुँच सकता है। सैनिकों से बात करते समय वह अपनी टोपी को उतारकर हाथ में ले लेते हैं। महान् अभियान के समय कितनी ही बार वह अपने घोड़े को किसी थके सैनिक को दे स्वयं पैदल चलते।

2. छठी पार्टी-कांग्रेस (1928 ई.)

1928 ई. के जाड़ों में छठी कांग्रेस बैठी। इसने च्यू-पाइ की 'वामपक्षी' भूल को हटाया, मजूरों और किसानों की एकता के महत्त्व को स्वीकार किया, तथा सोवियत-राज्य की स्थापना, जमीन का किसानों में बाँटना तथा लालसेना संगठित करने का आदेश दिया। इसी कांग्रेस ने यह भी निश्चय किया कि इस समय आक्रमण की नीति अच्छी नहीं है, बल्कि जनता को अपनी ओर खींचने की बड़ी आवश्यकता है। कांग्रेस ने अनुभव किया कि लड़ाई लम्बे अर्से तक चलती रहेगी, जिसके बीच किसान और मजूर दो ही वर्ग क्रान्ति के अचल-अटल अनुयायी बने रहेंगे। कांग्रेस ने कुओ-मिन् तांग के भीतर के लड़ाई-झगड़ों से फायदा उठाने का भी निर्णय किया और यह भी कि इस समय हमें शहरों की अपेक्षा गाँवों को अपना मुख्य कार्यक्षेत्र बनाना चाहिए। केन्द्रीय कमेटी पर अब भी उग्रवादियों का ही हाथ रहा। माओ उपस्थित नहीं थे, तब भी उनको केन्द्रीय कमेटी में लिया

गया। धीरे-धीरे पार्टी समझने लगी। माओ और चू-तेह को छठी कांग्रेस की नीति मान्य थी। धीरे-धीरे पार्टी के भीतर के मतभेद हटते जा रहे थे, जगह-जगह नई-नई सोवियतें स्थापित हो रही थीं। पश्चिमी हू-पेइ प्रदेश में हो-लुंग ने, पूर्वी हू-पेइ में शू हाइ-चुंग ने लालसेना और सोवियत की स्थापना की थी। क्यांग-सी में भी अब इस तरह का काम शुरू हो चला था।

इसी समय हो चिन् नाम के एक सैनिक डाकू के खिलाफ हो उसके सैनिक चू-माओ की सेना में आ मिले, जिनसे पाँचवीं लालसेना का निर्माण हुआ। इतनी बड़ी सेना का भरण-पोषण वहाँ कैसे हो सकता था ? जाड़े के दिनों में उनके पास गरम कपड़ा नहीं था, सागपात खाते उन्होंने कितने ही महीने काटे। इन आजादी के दीवाने सैनिकों ने नारा लगाया था : 'पूँजीवाद मुर्दाबाद ! मटर खाके हो आजाद !' जिस वक्त भूख और कपड़े के अभाव में सैनिक कष्ट भोग रहे थे, उस समय उनका शंका और भ्रम में पड़ना आसान था। सैनिकों को कहा जाने लगा : "हमारी छोटी-सी टुकड़ी थी, तब भी हम अपने लिए काफी खुराक जमा कर लेते थे। हम तुम्हारी देशभक्ति को स्वीकार करते हैं, लेकिन जमीन बाँटना तथा इस तरह की और हवाई बातों को छोड़ो, तो हम सबको खिलाने का इन्तजाम कर सकते हैं।"

माओ ने सैनिकों को समझाते हुए कहा : "देखो भाई, हम लूटमार करने के लिए घर-बार छोड़ हथेली पर सिर लिए नहीं फिर रहे हैं। सभी देशभक्तों और जनता के सेवकों के लिए लालसेना में स्थान है, लेकिन जनता के शत्रुओं के लिए हर्गिज नहीं।"

3. पथप्रदर्शन

1929 ई. में चू-माओ के नेतृत्व में लालसेना ने दक्षिणी क्यांग-सी और पश्चिमी फू-कियान प्रदेश में प्रवेश कर जुइचिन् (क्यांग-सी) में अपना अड्डा कायम किया, यह हम बतला आये हैं।

(1) उतार-चढ़ाव—1928 ई. की परिषद् ने लालसैनिकों के पथ-प्रदर्शन के लिए कई बातों का निर्णय किया था। इसी में सैनिकों के लिए आठ नियम, गोरिल्लों के लिए चार नारे स्वीकार किये। नारे थे :

1. जब शत्रु आगे बढ़े, तो हम पीछे हटें,
2. जब शत्रु रुके और डेरा डाल दे, तो हम उसे परेशान करें,
3. जब शत्रु लड़ाई से बचना चाहे, तो हम उस पर हमला करें,
4. जब शत्रु पीछे हटें, तो हम उसका पीछा करें।

जनता के साथ भाईचारा स्थापित करने के लिए परिषद् ने निम्न आठ नियम बनाये थे, जिन्हें बड़ी कड़ाई से पालन करने की आदत सैनिकों में पड़ गई थी :

1. जब तुम जाने लगो, घरों की किवाड़ें पहली जगह पर लगा दो।
   (चीन में किवाड़ें निकालकर उन पर रात में सोया जाता है।)
2. उन सभी चटाइयों को, जिन पर तुम रात में सोओ, समेट कर लौटा दो।
3. लोगों के साथ तुम्हारा व्यवहार नरम और शिष्ट होना चाहिए और जहाँ तक बन पड़े उनकी मदद करने से मत चूको।
4. उधार ली हुई सभी चीजें वापस कर दो।
5. टूटी हुई चीजों के बदले में अच्छी दे दो।
6. किसानों के साथ लेन-देन करने में पूरी ईमानदारी से काम लो।
7. खरीदी हुई चीजों का पूरा-पूरा दाम दो।
8. सफाई से रहो और पाखाने को लोगों के घर से काफी दूरी पर बनाओ।

(2) वंश-संहार (1930 ई.)—1929 के अप्रैल में चिंग-कान्-शान् छोड़कर लालसेना ने अपनी कारवाइयों से अपनी शक्ति और प्रभाव को खूब बढ़ाया। 1930 के अप्रैल में अब उनका मुख्य केन्द्र यूचेन् था, यहीं एक बैठक में निश्चय किया गया कि पेंग के नेतृत्व में तीसरी सेना क्यांग-सी हूनान प्रदेशों की सीमा पर सैनिक

कार्रवाई करे और चू-माओ फूकियान-प्रदेश पर। 1930 के जून महीने में पहली कोर (सेना) और तीसरी कोर फिर एक जगह मिलीं और दोनों ने मिलकर चांगशा नगर के ऊपर दूसरा हमला किया। पहली और तीसरी सेना कोर को एक करके पहली मोर्चा-सेना का नाम दिया गया, जिसके मुख्य सेनापति चू-तेह और राजनीतिक कमीसर (सलाहकार) माओ हुए।

इस समय किसान-कमकर-क्रान्तिकारी कमेटी संगठित की गई, जिसके 'अध्यक्ष' (चू-शी) साथी माओ चे-तुंग बनाये गये। शक्तिशाली चीन गणराज्य के स्थापित होने के बाद आज भी माओ चे-तुंग माओ चू-शी (अध्यक्ष माओ) के नाम से ही प्रसिद्ध हैं और लाख-लाख जनगण के कंठों से माओ चू-शी वान् स्वइ (अध्यक्ष माओ जिंदाबाद) का नारा सुनाई देता है। जब माओ नवीन चीन के प्रतीक बनते जा रहे थे, उसी समय दुश्मन उनके साथ नीचता की पराकाष्ठा करने के लिए उतारू थे। च्यांग ने लालशक्ति को बढ़ते देख माओ, चू-तेह और उनके साथियों के सिर पर लाखों के इनाम ही नहीं घोषित कर रक्खे थे, बल्कि उनके सगे-सम्बन्धियों के सर्वनाश करने के लिए भी वह तैयार था। शियांग-तान् में माओ की जो जमीन थी, उसे कुओ-मिन्-तांग ने जब्त कर लिया। माओ की वीर पत्नी, उनकी बहन, उनके दोनों भाइयों (माओ चे-हुंग और माओ चे-तान्) की बीवियों तथा माओ के लड़के को हो चि-येन् ने गिरफ्तार कर लिया। माओ की पत्नी को बहुत फोड़ने की कोशिश की गई, लेकिन जब उसमें सफलता नहीं हुई, तो उसे तथा माओ की बहन को फाँसी दे दी गई। जन्मभूमि के किसानों का माओ के ऊपर अटल विश्वास था। एक दिन माओ के खेतों के ऊपर से कोई हवाई जहाज उड़ा, तो किसानों ने कहना शुरू किया—"माओ अपना खेत देखने आये हैं, खेती कैसी हो रही है, इसे अपनी आँखों से देखना चाहते हैं। वह च्यांग काइ-शेक से हरजाना लिए बिना नहीं रहेंगे।"

1929 के दिसम्बर में चौथी लालसेना की नवीं पार्टी-कांग्रेस फूकियान प्रदेश में हुई, जिसमें कितने ही दोषों पर विचार करके उन्हें दूर किया गया। इसी परिषद् में क्यांग-सी प्रदेश में सोवियत-शासन स्थापित करने का निश्चय किया गया। 7 फरवरी, 1930 को दक्षिणी क्यांग-सी प्रदेश में एक महत्त्वपूर्ण स्थानीय पार्टी-परिषद् बैठी, जिसमें सोवियत के भावी कार्यक्रम पर विचार-विमर्श हुआ। इस परिषद् में कम्युनिस्ट पार्टी, लालसेना और सरकार तीनों के स्थानीय प्रतिनिधि मौजूद थे। इसमें जमीन-सम्बन्धी कार्यक्रम पर भी विस्तारपूर्वक विचार करके उसे मंजूर किया गया।

4. भीतरी संघर्ष

'दक्षिणपक्षी' गलती पार्टी से बहुत पहले ही निकल चुकी थी, 'वामपक्षी' गलती भी बहुत कुछ हटाई जा चुकी थी, लेकिन अभी उसका बिलकुल सफाया नहीं हो पाया था। इसी समय ली ली-सान् ने एक गलत रास्ता पकड़ाने की कोशिश की।

(1) **फुकियेन-प्रकरण**—शत्रु का मुकाबला करने में लालसेना की नीति ज्वार-भाटे जैसी थी : जन-समुद्र के भीतर से उठते ज्वार की लहरों की तरह तेजी से आकर शत्रु को पूरी तौर से छाप लेना और उसके सँभलने से पहले उसी तरह तेजी से जन-समुद्र में विलीन हो जाना। माओ की दूसरी नीति थी, अपने पिछवाड़े को मजबूत किये बिना आगे न बढ़ना, अर्थात् शत्रु से छूटे इलाके में अपना पैर अच्छी तरह जमाकर ही उसे अड्डा बना आगे बढ़ो। ली ली-सान् की नीति इससे उलटी थी। वह कहता था कि च्यांग के खिलाफ सीधे जमकर लड़ाई लो, दुश्मन की भूमि में दूर तक घुसते जाओ। बड़े-बड़े शहरों पर आक्रमण करके उन पर अधिकार कर लो, गाँवों में अचानक हमला करके वहाँ के जमींदारों को भयभीत कर दो। ली ली-सान् किसानों में काम करने का विशेष महत्त्व नहीं मानता था। वह शहरों में मजूरों के विद्रोह तथा संघर्ष करने पर अधिक जोर देता था। यह 'वामपक्षी' पथभ्रष्टता थी, इसमें सन्देह नहीं। माओ और चू-तेह शत्रु की शक्ति को समझते थे और हर जगह उसके ऊपर आक्रमण करने को ठीक न समझ उसके कमजोर स्थान पर ही प्रहार करना चाहते थे। च्यांग काइ-शेक की सत्ता शहरों में मजबूत थी, इसलिए वह शहरों में जाकर उससे भिड़ना गलत समझते थे। ली ली-सान् छापामार लड़ाई का विरोधी था। वह चाहता था कि गोरिल्ला टुकड़ियों को तोड़कर उनकी बाकायदा

सेना बना दी जाय। संक्षेप में "वह आक्रमण करना, आगे बढ़ना, शहरों पर हमला करना, विद्रोह कराना आदि कामों को ही मुख्य मानता था। सेना जंगली सूअर की भाँति केवल आगे बढ़ती जाय, इधर-उधर की खबर न रक्खे कि पीछे क्या हो रहा है, इसकी पर्वा न करे, कि रसद-माल आदि पहुँच सकेगा या नहीं, इसे भी न सोचे, अर्थात् पिछवाड़ी मजबूत किये बिना आगे बढ़ती जाय। इस प्रकार ली ली-सान् रणनीति के सीधे-सादे नियमों को भी मानने के लिए तैयार नहीं था।"

पार्टी का मुख्य-केन्द्र शांघाइ में था। सोवियत के क्षेत्रों से बाहर पार्टी में अभी ली ली-सान् की बात ही मानी जाती थी। उसी के दबाव के कारण चांगशा पर आक्रमण करना पड़ा था। हाँ, गुरिल्ला टुकड़ियों को तोड़ने से माओ-चू ने साफ इन्कार कर दिया, क्योंकि ऐसा करने से आगे बढ़नेवाली सेना का पिछवाड़ खतरे में पड़ जाता। जून, 1930 में माओ और चू तेह के संचालन में लालसेना चांगशा नगर के प्राकारों के पास पहुँच गई। नगर में उस समय शत्रु की काफी सेना थी, जिसके पास रसद और गोला-बारूद की भी कमी नहीं थी। पहली ही मुठभेड़ में लालसेना ने शत्रु के दो दस्तों का सफाया कर दिया। लेकिन वीरता और रणकौशल में आगे बढ़ी होने पर भी लालसेना नगर पर अधिकार न कर सकी और कुछ सप्ताहों की घेराबन्दी के बाद उसे अपने प्रयत्न को छोड़ना पड़ा। इस असफलता ने ली ली-सान् की नीति को गलत बतला दिया। ली ली-सान् वूहान पर भी हमला करने के लिए जोर दे रहा था, लेकिन इस असफलता के बाद उस मनसूबे को छोड़ देना पड़ा। यद्यपि ली ली-सान् की नीति गलत साबित हुई, और उस नीति को छोड़ दिया गया, लेकिन उसका असर, जो सेना के भीतर घुस गया था, जल्दी समाप्त नहीं हुआ। लालसेना की तीसरी कोर के कुछ सैनिक ली की नीति को माननेवाले थे। उन्होंने माँग की, कि हमारी टुकड़ी को लालसेना से अलग कर दिया जाय। सेनानायक ने इसका विरोध किया। पीछे सैनिकों ने भी उसकी बात मान ली। पर ल्यू ती-साउ के नेतृत्व में बीसवीं सेना ने ली की नीति मानते हुए खुले विद्रोह की घोषणा कर दी। उसने क्यांग-सी सोवियत के प्रधान तथा अन्य अधिकारियों को गिरफ्तार कर लिया और माओ तथा उसके समर्थकों को चुनौती दी। यह 'फूकियेन-प्रकरण' था जिसके कारण थोड़े समय के लिए लालसेना में गड़बड़ी मच गई, लेकिन तीसरी वफादारी पार्टी-मेम्बरों और लालसैनिकों की एकता तथा किसानों के सहयोग से विद्रोह को जल्दी ही दबा दिया गया। ल्यू ती-साउ को गिरफ्तार कर लिया गया, दूसरे विद्रोहियों से हथियार रखाकर उन्हें फौज से निकाल दिया गया। इस प्रकार ली ली-सान् की नीति का अन्तिम तौर से खातमा हुआ।

मार्क्सवाद सिद्धान्त और व्यवहार के हरेक क्षेत्र में द्वन्द्वात्मक दृष्टि—परिस्थिति के अनुसार हर चीज का पुनः मूल्यांकन और अपने रवैये में तबदीली—प्रदान करता है, उसका ठीक तौर से इस्तेमाल करना आसान काम नहीं है। कठमुल्लापन दिखलाते हुए मार्क्सवादी श्रुतियों को तोते की तरह दोहराना केवल अपनी बेवकूफी और अयोग्यता साबित करना है। ऐसे ही कठमुल्लों के कारण क्यांग-सी जैसा गढ़ कम्युनिस्टों के हाथ से चला गया। फूकिएन प्रदेश में चाइ तिंग-काइ एक सेनापति था। वह च्यांग की नीति से असंतुष्ट हो क्यांग-सी के कम्युनिस्टों से सहयोग करना चाहता था, किन्तु कट्टरपंथी नेता लोग उस 'पूँजीवादी-सामन्तवादी' सेनापति के साथ संयुक्त मोर्चा बनाना बुरा समझते थे। उन्होंने ऐसा नहीं किया, च्यांग ने दोनों को बारी-बारी से खतम करने का निश्चय कर पहले चाइ तिंग-काइ को परास्त किया।

(2) लालसेना की शक्ति—1930 ई. में लालसेना के सैनिकों की संख्या 60 हजार तक पहुँच गई थी। इनमें से 30 हजार से ज्यादा क्यांग-सी प्रदेश के केन्द्रीय इलाके में थे। 1930 ई. में और उसके कुछ बाद फूकियेन, अन्-ह्वेइ, हूनान, शेन्शी, कांसू और दूसरे प्रदेशों में क्रान्तिकारी अड्डे फैल गए थे, साथ ही हैनान द्वीप तथा क्वान्तुंग प्रदेश में भी उनका प्रभाव था। लालसेना को इतनी तेजी से बढ़ते हुए देखकर च्यांग काइ-शेक का होश गुम हो गया। उसने अब उसके उच्छेद करने का संकल्प किया।

11

च्यांग के आक्रमण (1930-35 ई.)

च्यांग ने जब चीन से साम्यवाद को उखाड़ फेंकने का निश्चय किया, तब तक कम्युनिस्ट पार्टी नौ साल की हो चुकी थी। उसकी शक्ति काफी बढ़ चुकी थी और कितनी ही लड़ाइयों में उसने च्यांग के दाँत खट्टे किये थे। उसकी शक्ति जितनी बड़ी थी, उससे कहीं अधिक कम्युनिस्टों का प्रभाव चीन में बढ़ चुका था। च्यांग के शैतानी शासन से मुट्ठीभर लोगों को छोड़ बाकी सभी 'त्राहि-त्राहि' कर रहे थे। यह सारा 'त्राहि-त्राहि' केवल अरण्यरोदन होता, यदि च्यांग के खिलाफ विशृंखलित शक्ति को एकत्रित करने का प्रयत्न न किया जाता। इस प्रयत्न के लिए माओ के नेतृत्व में चीनी कम्युनिस्ट काफी काम कर चुके थे। इसमें सन्देह नहीं कि च्यांग की शक्ति अभी भी बहुत बड़ी थी, लेकिन कम्युनिस्टों के साथ शक्ति का अक्षय भंडार–जनता और उसकी सद्भावना–मौजूद थी, जब कि च्यांग के लिए वह स्रोत सूखता जा रहा था। 1930 में जूचिन में सभी सोवियतों के प्रतिनिधियों की प्रथम कांग्रेस हुई, जिसमें माओ की नीति को स्वीकार किया गया। इस प्रकार जहाँ तक दृष्टि का सम्बन्ध था, बहुत-सी बुराइयाँ कम्युनिस्ट पार्टी के भीतर से दूर हो गईं। पर, वह इससे अपरिचित नहीं थी कि च्यांग भीषण हमले की तैयारी कर रहा है।

1. प्रथम आक्रमण (1930-31 ई.)

1930 ई. के आखिर में च्यांग काइ-शेक ने सात डिवीजनों (कुल मिलाकर एक लाख सैनिकों) को सोवियत के केन्द्रीय इलाके में लालसेना को घेरने के लिए भेजा। उस समय लालसेना के पास केवल 40 हजार सैनिक थे। लालसेना के पास जन-बल कम था, लेकिन उसके पास माओ-चू जैसे सेनानायक थे। लालसेना ने अपने से ढाई गुनी बड़ी सेना को कुछ ही दिनों में बुरी तरह से हराकर तितर-बितर कर दिया। उसने डेढ़ डिवीजन तो वहीं साफ कर दिए और च्यांग काइ-शेक का फील्ड-कमांडर लालसेना के हाथ में बन्दी बना। शत्रुओं ने इसी समय (नवम्बर, 1930 में) क्यांग-सी पर चढ़ाई की। दो महीने बाद जब हारकर पीछे हटा, तो इसी समय माओ की पत्नी तथा उनकी छोटी बहन का उसने वध कर दिया। यही नहीं, सारे हूनान प्रान्त में चू-माओ पदवीवाले दस हजार आदमियों का सिर काट लाने के लिए दस-दस हजार का इनाम घोषित किया। इस समय लालसेना का दाँवपेंच था : (1) शीघ्रतापूर्वक एक स्थान पर जमा होकर जोरदार हमला करना और फिर तुरन्त तितर-बितर हो जाना, (2) शत्रु की हर टुकड़ी पर अपनी पूरी ताकत से प्रहार करना, (3) पहले शत्रु की टुकड़ियों को सोवियत क्षेत्र में दूर तक घुस आने का अवसर देना, फिर अधिक फौज लेकर अचानक टूट पड़ना तथा इस प्रकार उसकी छोटी-छोटी टुकड़ियों को घेरकर खतम कर देना।

जनवरी, 1931 तक च्यांग का प्रथम आक्रमण पूरी तौर से असफल हो गया। अमेरिकन पत्रकार एडगर स्नो से इस आक्रमण के बारे में माओ ने कहा था : "मेरी राय है कि हमारे लिए च्यांग को हराना कभी संभव न होता, यदि उसके आक्रमण से पहले ही लालसेना ने तीन शर्तों को पूरा न कर लिया होता : (1) पहली और तीसरी सेना को एक केन्द्रीय संचालन में संगठित करना, (2) ली ली-सान्-नीति का सफाया करना, (3) लालसेना तथा सोवियत के क्षेत्रों में सभी सक्रिय प्रतिक्रियावादियों तथा बोल्शेनिक-विरोधी गुटों पर पार्टी की विजय।"

2. द्वितीय आक्रमण (1931 ई.)

इस घोर पराजय से च्यांग जैसा क्षुद्र आदमी कितना बौखलाया होगा, इसे आसानी से समझा जा सकता है। उसने इसका बदला लेने के लिए फिर तैयारी की, और एक महीने बाद (फरवरी, 1931 में) हो यिंग-चिन् (नानकिंग के युद्ध-मन्त्री) के नेतृत्व में दो लाख सेना लालसेना को घेरकर खतम करने के लिए भेजी। लालसेना ने पीछे

हटते हुए हो को अपने देश के भीतर घुसने दिया। हो ने समझा, उसकी भारी विजय हो रही है, और दुश्मन हार खाकर भाग रहा है। बहुत भीतर ले जाकर जब लालसेना ने मरम्मत करनी शुरू की, तब उसको अक्ल आई, लेकिन अब बचने का कोई रास्ता नहीं था। इस लड़ाई में लालसेना ने च्यांग के 30 हजार से अधिक सैनिकों और 20 हजार से अधिक हथियारों को अपने कब्जे में किया।

3. तृतीय आक्रमण (1931 ई.)

हो यिग-चिन् जैसे अपने प्रधान-सेनापति की भीषण हार से च्यांग और बौखला उठा। अंग्रेज, जापानी और जर्मन बड़े-बड़े जेनरल उसके सलाहकार थे, सेना की भी कमी नहीं थी। अन्त में उसने उसी साल की जुलाई में 3 लाख सेना का संचालन स्वयं अपने हाथ में लेकर तीन दिशाओं से लालसेना को घेरना शुरू किया। सोवियत-क्षेत्र के बहुत भीतर घुसते हुए उसने वही गलती की। लालसेना की संख्या इस समय केवल 30 हजार थी, अर्थात् उसके एक सैनिक पर च्यांग के दस सैनिक थे। पूँजीवादी दुनिया के बड़े-बड़े जेनरल उसे सलाह-मशविरा दे रहे थे, नये-से-नये हथियारों से उसकी सेना लैस थी। लेकिन, इस बार भी उसके आक्रमण को कुचल दिया गया, सितम्बर में उसे पूरी हार खाकर पीछे लौटना पड़ा। केन्द्रीय इलाके में ही नहीं, दूसरी जगहों पर भी लालसेना ने महत्त्वपूर्ण विजयें प्राप्त कीं। पहले हूपे-हूनान, अन्-ह्वेई में और बाद में उत्तरी जेचुआन में भेजी गई सू स्यांग-चियेन् के नेतृत्ववाली लालसेना तथा हो लुंग के नेतृत्ववाली पश्चिमी हूनान और पश्चिमी हू-पेइ की लालसेनाओं ने इस युद्ध में भारी वीरता दिखलाते हुए अनेक सफलताएँ प्राप्त कीं। लालसेना की जीतों से बल पाकर कुओ-मिन्तांग की 26वीं रूट सेना के 10 हजार से ज्यादा सैनिक विद्रोह करके लालसेना से आ मिले। यह सेना निंग तू (क्यांग-सी प्रदेश) से लालसेना को कुचलने के लिए भेजी गई थी, जिसने दिसम्बर, 1931 में साथी चो ओ शेंग, तंग चेन-तांग तथा दूसरे साथियों के नेतृत्व में विद्रोह किया।

शू सुंग-लिन् द्वितीय क्रान्तिकारी गृहयुद्ध के समय (1927-36 ई.) चीनी कमकर किसान लालसेना के जेनरल-हेडक्वार्टर में काम करते थे। जनवरी, 1930 से सितम्बर, 1932 तक दो वर्ष नौ महीने उन्होंने माओ चे-तुंग और चू तेह के साथ काम करते युद्धों में भाग लिया। 1953 में शू हूनान सैनिक क्षेत्र के रसद सेवा के हथियार-विभाग के मुखिया थे। उन्होंने अपने संस्मरणों में माओ चे-तुंग के उस समय के जीवन के बारे में लिखा है* :

"उस समय साथी माओ चे-तुंग बहुत पतले थे। नित्य शिविर में आने के समय वह तुरन्त सैनिक कार्रवाई और कूच-सम्बन्धी समस्याओं के बारे में साथी चू तेह और चीफ-आफ-स्टाफ से सलाह करते। मेज, कुर्सी या चट्टान पर बैठकर वह स्वयं हुकुम लिखते थे। रात के वक्त वह अपने कमरे में टहलते थे, जिसमें एक सैनिक नक्शा छोटे-छोटे लाल और सफेद झंडियों के निशान के साथ दीवाल पर टँगा था। कभी अकेले और कभी साथी चू तेह के साथ वह सैनिक कार्रवाई के बारे में विचार करते। वह तब तक सोने नहीं जाते, जब तक कि योजना नहीं बन जाती और करणीय ठीक नहीं हो जाते।

"क्रान्तिकारी अड्डे-क्षेत्र के बाहर से जब कभी अखबार आते, तो वह उन्हें आदि से अंत तक फिर-फिर पढ़ जाते और महत्त्वपूर्ण बातों को काट लेते। कभी-कभी अखबारों को पढ़कर समाप्त करने के लिए वह सारी रात बैठे रहते। घोड़े पर चढ़कर भी वह अपने समय की योजनाओं के बारे में पढ़ने, सोचने अथवा अधमुँदी आँखों से रात की नींद को पूरा करते। साथी चू-तेह के साथ वह प्रत्येक लड़ाई की योजना का नक्शा बनाते। उस पर राय देने के लिए भिन्न-भिन्न कमांडिंग-अफसरों को बुलाने के पहले वह प्रत्येक युद्ध की योजना को बनाते और विस्तार के साथ उस पर बहस और अध्ययन करते। उनकी अच्छी तरह बनाई योजना बराबर विजय प्रदान करती। जब स्थिति प्रतिकूल हो जाती, तो वह तुरन्त अपनी सेनाओं को अपनी जगह छोड़ने और आगे की कार्रवाई के लिए अधिक अनुकूल समय और स्थान को खोजने के लिए आज्ञा देते।

---

* 'Peoples China' 1953

" मई 1921 में द्वितीय विरोधी घिरावे का अभियान शुरू हुआ। जेनरल हेडक्वार्टर क्यांग-सी प्रदेश के तुंग कू जिले के च्याओ-ताउ-काउ स्थान में परिवर्तित किया गया। साथी माओ चे-तुंग और चू तेह छोटी-सी सड़क के किनारे के झोंपड़े में विश्राम के लिए गये। पाँच मिनट बाद पता लगा कि शत्रु नजदीक आ रहा है, वह केवल एक किलोमीटर दूर है। मैं कुछ अर्दलियों के साथ पता लगाने गया, मेरे पीछे साथी चू तेह भी थे। हम आधा किलोमीटर से कम ही गये थे, जब कि हमें शत्रु की सेना का एक बड़ा कालम मिला। स्थान से हटने के समय जेनरल हेडक्वार्टर की रक्षा के लिए हमारे पास केवल पचास के करीब राइफलें थीं। तो भी साथी चू तेह ने कहा, 'कोई पर्वाह नहीं, वह हमें पकड़ नहीं सकते।' फिर वह और साथी माओ चे-तुंग अपनी सेनाओं को लिए दो भिन्न दिशाओं में हो एक ऊँचे पर्वत की ओर चल दिये।

" द्वितीय विरोधी घिरावे के अभियान में शत्रु के पास दो लाख सेनाएँ थीं, जब कि लालसेना की संख्या 20 हजार से थोड़ी ही अधिक थी। साथी माओ चे-तुंग ने लालसेना की मुख्य फौजों को शत्रु की बिखरी हुई टोलियों से लड़ने के लिए जमा किया और लगातार तीन दिशाओं में लड़ाइयाँ जीतीं। 10 हजार से ऊपर राइफलें पकड़ी गईं। हमारी मुख्य सेनाएँ क्यांग-सी प्रदेश के निंगतू, युंगफेंग और शिंगकुओं के तीन जिलों की सन्धि पर अवस्थित थीं। हमें पूरी तौर से घेर लेने के लिए शत्रु ने अपनी सारी फौजों को साढ़े सात किलोमीटर के घेरे में जमा कर दिया था। तो भी साथी माओ चे-तुंग और चू तेह के नेतृत्व के कारण रात के वक्त बड़ी तेजी से चलकर शत्रु के घिराव के ढाई किलोमीटर चौड़े एक स्थान से पाँती तोड़ने में सफल हुए। दूसरे दिन जब शत्रु ने घिरावे को और घना किया, तो उसने देखा कि लालसेना हाथ से निकल गई है।

" इस विरोधी घिरावे के अभियान में दस दिन से अधिक (16 से मई के अन्त 1931) साथी माओ चे-तुंग और चू तेह बहुत कम सो पाये थे। हर रात को दोनों अपनी योजनाओं के ऊपर सिर रखकर लेट जाते। बहुत-सी कठिनाइयों से उन्हें गुजरना पड़ा। गर्मियों के दिन थे और क्यांग-सी प्रदेश में परेशान करनेवाले मच्छर बहुत होते हैं। साथी माओ चे-तुंग, चू तेह या लालसेना के किसी कर्मी के पास मसहरी नहीं थी। रात के वक्त वह घर के भीतर भूसी या घास जलाकर धुएँ से मच्छरों को भगाने की कोशिश करते जिससे कोठरियाँ सदा धुएँ से भरी रहतीं। उनके पास पंखा भी नहीं था। मच्छरों को भगाने के लिए वह अपनी टावलों या ताड़ के पत्तों को इस्तेमाल करते थे। रात के वक्त मच्छरों के मारे जागकर कभी-कभी वह घूमते-टहलते रहने के लिए मजबूर होते। एक बार उनको मच्छर भगानेवाली धूप खरीदने का सौभाग्य मिला था। मई से अगस्त तक चार महीने यही स्थिति बनी रही।

" जाड़ों में हमारी लालसेना बाहर पड़ाव डाले हुए थी। हमारे दोनों नेता साथी पतले कपड़े में जाड़े से अक्सर ठिठुरते आधी रात तक काम करते। मार्च में जब वर्षा हो रही थी, तब वह अपने भीगे कपड़ों को पहने रहते।

" 1931 की जुलाई में तीसरे विरोधी घिरावे के अभियान के समय शत्रु सेना की संख्या बढ़ गई थी। भीषण स्थिति में लालसेना को पहले से भी ज्यादा कठिनाई के साथ काम करना और लड़ना पड़ रहा था। वह रात को कूच करती और दिन में पहाड़ों में छिप जाती, कोई भी निशाना दिखलाई देने पर शत्रु के हवाई जहाज बम और गोलियों की वर्षा करते। साथी माओ चे-तुंग और सभी लड़नेवाले योद्धाओं को अपने सिरों में पत्तियाँ लगाकर अपने को छिपाना पड़ता। साथी माओ चे-तुंग के पास पहनने की एक जीर्ण-शीर्ण रुईदार कोट भर थी। जब वह रात को सोने लगते, तो पुआल का एक पूला, ईंट अथवा चौड़ा पत्थर उनकी तकिया का काम करता। उनके पास पेबंद लगे केवल दो जामे थे। कुछ साथी उन्हें नया जामा बना देना चाहते थे, किन्तु उन्होंने इन्कार कर दिया। वह उसी तरह कठोर और सीधा-सादा जीवन बिताते थे जैसे कि आम योद्धा।

" तीसरे विरोधी घिरावे के अभियान में जीवन बहुत कठिन हो गया था। जेनरल-हेडक्वार्टर के साथी मोटे-झोटे अनाज पर गुजारा कर रहे थे। चावल के साथ खाने के लिए यदि सब्जी खरीदने का मौका मिल जाता, तो वह इसे बड़े भाग्य की बात मानते, अन्यथा वह बाँस के करील, जंगली साग या पिसे हुए चावल को खाते। कभी-कभी ऐसा भी होता कि कुछ चावल के दानों के साथ उबला हुआ पानी ही उन्हें मिलता।

हम सभी लोग जो खाते, वही साथी माओ चे-तुंग और चू-तेह भी खाते। "

(1) प्रथम सोवियत कांग्रेस (1931 ई.)–11 दिसम्बर, 1931 को प्रथम सोवियत कांग्रेस का अधिवेशन शुरू हुआ, और साथी माओ चे-तुंग की अध्यक्षता में केन्द्रीय सोवियत सरकार की स्थापना हुई। चू तेह सोवियत सरकार के प्रधान सेनापति बनाये गये। तुंग चेन्-तान् पीछे लालसेना के कमांडर हुए और चाउ पू-शेन क्यांग-सी प्रदेश की लड़ाई में वीरगति को प्राप्त हुए।

(2) जापान का प्रहार (1931 ई.)–जिस समय च्यांग काइ-शेक देश में गृह-युद्ध की आग भड़का कम्युनिस्टों का उच्छेद करने में अपनी सारी शक्ति लगा रहा था, उस समय 18 सितम्बर 1931 को जापानियों ने बड़े पैमाने पर उत्तर-पूर्वी चीन (मंचूरिया) पर हमला शुरू कर दिया। 1894 ई. के चीन-जापान-युद्ध के दिनों से ही उसकी आँख चीन के इस भूभाग पर लगी हुई थी। 1929 ई. में विश्वव्यापी मन्दी का वज्र गिरा। उससे जापानी पूँजीवाद की भी स्थिति भयंकर हो उठी। ब्रिटेन, अमेरिका और दूसरे पूँजीवादी देश अपनी घरेलू समस्याओं में बुरी तरह उलझे हुए थे। जापान जानता था कि इस समय सोवियत की सीमा के पासवाले चीन के इस विस्तृत भूभाग पर हाथ साफ करने में दूसरे हरीफ बाधा नहीं डाल सकते। वह यह भी देख रहा था, कि च्यांग काइ शेक लालसेना से लड़ने में बुरी तरह से फँसा हुआ है, और वह साम्राज्यवादियों के हाथ का पूरा कठपुतली बना हुआ है। जापान को विश्वास था, कि इस समय च्यांग हमारे विरुद्ध खड़े होने की हिम्मत नहीं कर सकता। जापान केवल मंचूरिया लेकर संतुष्ट होनेवाला नहीं था, बल्कि उसको अड्डा बनाकर वह धीरे-धीरे पैर फैलाते सारे चीन को हड़पना चाहता था। उपरोक्त अनुकूल अवसर से फायदा उठाकर जापान ने 1931 ई. में सारे उत्तर-पूर्वी चीन पर अधिकार कर लिया। यही नहीं, 1931 के जनवरी में उसने शांघाइ पर भी हमला किया। 1933 ई. में मंचूरिया के पश्चिमवाले जेहोल प्रदेश तथा चहार प्रदेश के उत्तरी हिस्से पर भी अधिकार कर लिया। 1935 ई. में हो पेइ प्रदेश का पूर्वी भाग भी जापानियों के हाथ में था। 1931-37 ई. तक जापानी साम्राज्यवाद जिस तरह निर्द्वन्द्व हो चीन को दबाता रहा, उसका एक मुख्य कारण था च्यांग काइ-शेक का गृहयुद्ध की आग में घी डालते हुए भ्रातृ-वध करना।

लेकिन, जापानी आक्रमण से अब चीन की सारी जनता में भयंकर प्रतिरोध का भाव पैदा हो गया था। मजदूरों, किसानों और छात्रों ने सारे देश में जापान के खिलाफ जबर्दस्त आन्दोलन करना शुरू कर दिया। 1927 ई. में पूँजीपति वर्ग के ऊपरी हिस्से और राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग ने, क्रान्ति से सम्बन्ध-विच्छेद कर लिया था। अब चीन को जापानी राहु के मुख में जाते देख उसने अपना रुख बदल दिया, और राजनीतिक प्रगतिशील भावना उसके भीतर काम करने लगी। उन्होंने च्यांग काइ-शेक की सरकार से अपना रुख बदलने की माँग की। कुओ-मिन्तांग और कुओ-मिन्तांगी सैनिक तक में राजनीतिक मतभेद हो गया। जनवरी, 1932 में कुओ मिन्तांग की 19वीं रूट सेना ने शांघाइ की जनता के जापान-विरोधी आन्दोलन से प्रभावित होकर वहाँ जापानी सैनिकों का बड़ी बहादुरी के साथ मुकाबला किया। 1933 के नवम्बर में इस सेना के नेताओं ने कुओ मिन्तांग के दूसरे सदस्यों के साथ मिलकर फूकियेन् प्रदेश में जनता की सरकार कायम कर ली। इस सरकार ने च्यांग की सरकार का विरोध करते कम्युनिस्टों के साथ सहयोग किया। 1933 के मई महीने में जेनरल फेंग यू-स्यांग ने कम्युनिस्टों के साथ मिलकर चहार प्रदेश के कलगन स्थान में जनता की जापान-विरोधी मित्रसेना संगठित की।

चीन पर जापान के आक्रमण के बाद सबसे पहले जिसने जापान से मुकाबला करने के लिए आवाहन किया, वह थी चीन की कम्युनिस्ट पार्टी। उसने ऐसा करके भारी दूरदर्शिता का परिचय दिया। यही वह हथियार था, जिसके कारण कम्युनिस्टों की शक्ति और प्रभाव चीन में दिन-दूना रात-चौगुना बढ़ता गया, और च्यांग का प्रभाव खत्म होते-होते उसे त्रिशंकु बनना पड़ा। जापान-विरोधी राष्ट्रव्यापी आन्दोलन में कम्युनिस्ट सबसे आगे थे। उत्तर-पूर्व में जनता की छापेमार लड़ाई का पथ-प्रदर्शन करने में कम्युनिस्ट पार्टी ने सक्रिय भाग लिया। जनवरी 1933 में चीन की मजूर-किसान लालसेना ने घोषित किया कि जापानी हमले का मुकाबला करने के लिए लालसेना देश की अन्य सेनाओं के साथ होने को तैयार है। इसके लिए अपनी घोषणा में लालसेना ने

तीन शर्तें रक्खी थीं—(1) लालसेना के खिलाफ आक्रमणों को बन्द किया जाय, (2) जनता के जनवादी अधिकारों की रक्षा की जाय, (3) जनता को हथियारबन्द किया जाय।

ऐसा होने पर भी 1931 से 1934 ई. के बीच पार्टी के नेताओं ने बड़ी-बड़ी 'वामपक्षी' गलतियाँ कीं, जिसके कारण पार्टी उतनी सफलता नहीं प्राप्त कर सकी, जितना कि उसे प्राप्त करना चाहिए था। पहले क्रान्तिकारी गृह-युद्ध की हार और उसकी घटनाओं से पार्टी ने जो सबक सीखे थे, उसके होते भी छठी पार्टी-कांग्रेस (1928 ई.) के बाद से अब तक प्रति-क्रान्ति के गढ़ शांघाइ में ही पार्टी के प्रमुख संगठन थे। पार्टी के नेताओं का ध्यान लालसेना की गतिविधि पर केन्द्रित नहीं था और न ही साथी माओ चे-तुंग अभी तक उसका केन्द्र बन पाये थे। पार्टी के केन्द्रीय संगठनों के प्रमुख पदों पर निम्न पूँजीवादी वर्ग की अहंमन्यता रखनेवाले लालसेना की युद्धप्रणाली के महत्त्व तथा नियमों से अपरिचित वामपक्षी अवसरवादी बैठे हुए थे, जो प्रतिक्रियावाद के घोर आतंक से घिरे नगरों में विद्रोह संगठित करने की झूठी लालसाओं को लिये बैठे थे। ली ली-सान् के नेतृत्व में केन्द्रीय प्रमुख संगठनों ने 1930 ई. के जून से अक्टूबर तक यही माँग रक्खी थी कि प्रमुख नगरों में आम विद्रोहों को संगठित किया जाय और बड़े नगरों के खिलाफ लालसेना अपनी सारी शक्ति लगाकर हमला शुरू करे। इस गलती के कारण कुओ-मिन्-तांगी इलाके में छिपकर काम करनेवाले संगठनों को भारी नुकसान पहुँचा, लेकिन लालसेना के वह क्षेत्र इससे बचे रहे, जहाँ साथी माओ चे-तुंग ने दृढ़ता के साथ ठीक नीति पर काम किया था। छठी कांग्रेस द्वारा चुनी गई केन्द्रीय कमेटी के तीसरे विस्तारित अधिवेशन में (सितम्बर, 1930 में) ली ली-सान् की गलतियों का मार्जन किया गया। तो भी जनवरी, 1931 में साथी वांग मिंग (चेन् शाओ-यू) और पो कू (चिन् पिंग-सियेन्) की अगुवाई में एक नया 'वामपक्षी' गुट खड़ा हो गया, जो फिर अपना सैद्धान्तिक कठमुल्लापन दिखलाने लगा। मार्क्सवाद-लेनिनवाद के 'सिद्धांतों' की चादर ओढ़कर इस गुट ने तीसरे विस्तारित अधिवेशन पर वामपक्षी हमला शुरू कर दिया। इस गुट के सदस्यों का मत था : "साथी ली ली-सान् की मुख्य गलती सुधारवादी थी, और उस काल में चीनी पार्टी के भीतर मुख्य खतरा वामपक्षी गलतियों का नहीं, बल्कि सुधारवाद का था। उन्होंने इल्जाम लगाया कि तीसरे विस्तारित अधिवेशन में ली ली-सान् द्वारा अपनी नीति में बराबर अनुसरण किये जाते सुधारवादी अवसरवाद के सिद्धान्त और आचरण का पर्दाफाश करने के लिए कुछ नहीं किया। आखिर में, इन्होंने छठी कांग्रेस द्वारा चुनी गई केन्द्रीय कमेटी के चौथे विस्तारित अधिवेशन में पार्टी के केन्द्रीय संगठनों के प्रमुख पदों पर अधिकार कर लिया। इस नये 'वामपक्षी' गुट ने वांग मिंग और पो कू की अगुवाई में उन महत्त्वपूर्ण परिवर्तनों की ओर ध्यान रखने से बिल्कुल इन्कार कर दिया, जो कि जापानी-आक्रमण के फ़लस्वरूप चीन की घरेलू राजनीति में उत्पन्न हुए थे। उन्होंने कुओ-मिन्-तांग के भीतर भिन्न-भिन्न गुटों तथा बीच के दलों को एक समान ही प्रतिक्रियावादी मानकर माँग की कि पार्टी को बिना भेदभाव के सभी के खिलाफ जीवन-मृत्यु का संघर्ष छेड़ देना चाहिए। लालसेना की युद्ध-प्रणाली के मसले पर इस 'वामपक्षी' दल ने साथी माओ चे-तुंग के छापेमार तथा गतिशील युद्ध-सम्बन्धी विचारों का विरोध किया और इस माँग पर अड़ गया कि लालसेना को सभी बड़े नगरों पर कब्जा करना चाहिए। गलत पथ-प्रदर्शन के कारण कुओ-मिन्-तांग के कब्जेवाले इलाके में पार्टी के प्रायः सारे संगठन नष्ट हो गये, यद्यपि भारी कठिन परिस्थितियों में भी उन्होंने कई संघर्ष बड़ी वीरता से चलाये थे। 1933 ई. में पार्टी के अस्थायी केन्द्रीय संगठन को—जिसमें 'वामपक्षियों' का ही जोर था—मजबूर होकर लालसेना के केन्द्रीय अड्डों में जाना पड़ा। यहाँ आने के बाद पार्टी के अस्थायी केन्द्रीय संगठन का साथी माओ चे-तुंग तथा केन्द्रीय-कमेटी का उन सदस्यों के साथ एका कायम हो गया, जो लालसेना और क्रान्तिकारी अड्डों में काम करते थे। आगे चलकर केन्द्रीय प्रमुख संगठनों को बाकायदा कायम किया गया। लेकिन फिर भी एक बड़ी गलती यह की गई कि साथी माओ चे-तुंग को—खास कर लालसेना में इनके नेतृत्व को—अलग कर दिया गया, और इस प्रकार लालसेना की जीतों तथा कुओ-मिन्-तांगी इलाकों में जन-आन्दोलन के उत्थान के रूप में क्रान्ति के फिर से पनपने की जो स्थिति प्रकट हुई थी, उसे कमजोर कर दिया गया।

4. चतुर्थ आक्रमण (1933 ई.)

जापान के आक्रमण ने देश में नई स्थिति पैदा कर दी। पार्टी में भी अभी दृष्टिकोण साफ नहीं था, और साथी माओ चे-तुंग की दूरदर्शिता से पूरी तौर से फायदा उठाने का मौका नहीं मिल रहा था। च्यांग का अपने प्रतिक्रियावादी अनुयायियों से हमेशा यह कहना था कि जापान को हम चुटकी बजाते-बजाते भगा सकते हैं, पहले हमें कम्युनिस्टों को खतम करना है, जो देश के सबसे बड़े शत्रु हैं। इस अभियान के लिए च्यांग ने शांघाइ में जापान-विरोधी युद्ध को बन्द कर 5 लाख सेनावाले 90 डिवीजनों को लेकर कम्युनिस्टों के ऊपर जून, 1932 में चौथा आक्रमण कर दिया। यह आक्रमण फरवरी, 1933 तक चलता रहा। लालसेना ने च्यांग के दो डिवीजनों को नष्ट कर उनके कमांडरों को कैद कर लिया। 59वीं डिवीजन को अंशतः 52वीं डिवीजन को भी पूर्णतः नष्ट कर दिया। लोआन जिले के ता-लुग-पिंग और यच-चियाओ-हुइ में एक लड़ाई में माओ की सेना ने शत्रु के 13 हजार सैनिक कैद किये। च्यांग काई-शेक की सर्वोत्तम फौज को भी लालसेना ने उसी समय खतम कर दिया तथा उसके बहुत-से सैनिक पकड़े-मारे गये और कमांडर पर भारी विपत् पड़ी। इस समय की पराजय के बारे में च्यांग काइ-शेक ने अपने सेनापति चेन् चेंग को लिखा था : "यह पराजय मेरी सारी उम्र के सभी अपमानों में सबसे बड़ा अपमान है।" चेन् चेंग ने कहा था कि "कम्युनिस्टों से लड़ना जीवन-भर का काम है, यह एक उमरकैद है।"

च्यांग चूँकि अन्धा और बेशर्म था, उसे अपनी लालसाओं को पूरा करने के लिए सारे देश की बलि देने में भी आनाकानी नहीं हो सकती थी, तभी तो बिल्ली के सामने कबूतर की तरह वह जापानी हमलों के सामने आँख मूँदना चाहता था। उसके इस रुख के कारण कुओ-मिन्-तांग की 19वीं सेना ने बिगड़कर फूकियेन प्रदेश में नवम्बर, 1933 में जनता की सरकार स्थापित कर ली। इसी साल के मई महीने में जेनरल फेंग यू-शेंग ने भी च्यांग के विरुद्ध हो चहार प्रदेश के कलगन नगर में जापान-विरोधी जनसेना का संगठन शुरू किया था, यह हम पहले बतला आये हैं।

5. पंचम आक्रमण (1933 ई.)

च्यांग काइ-शेक को आदमी कहना गलत होगा, वह दानव है और बड़ा मूढ़। विदेशी साम्राज्यवादियों को चीन के भीतर कोई मोटा आदमी चाहिए था, जो कि उनके हाथों में पूरे तौर से बिकने के लिए तैयार हो। इसी खयाल से उन्होंने च्यांग को सिर पर चढ़ाया। च्यांग जैसा पतित, नीच, क्रूर राजनीतक नेता दुनिया में शायद ही किसी देश को किसी समय मिला हो। जनता चाहती थी कि च्यांग अपनी शक्ति को कम्युनिस्टों के खिलाफ बरबाद न करके उसे जापान के विरोध में लगाये। 5 लाख सेना के साथ आक्रमण करके अभी-अभी वह पूरी तौर से विफल हो चुका था, लेकिन उसने फिर कम्युनिस्टों के खिलाफ ही मुहिम शुरू की। शांघाइ-निवासी उससे जापानियों से प्रतिरोध करने की माँग कर रहे थे। उसने शांघाइ के इन जापान-विरोधियों को कतल करके उनका मुँह बन्द करना चाहा, वहाँ के बैंकर, प्रोफेसर आदि जैसे प्रतिष्ठित लोगों द्वारा स्थापित 'मुक्ति आन्दोलन संघ' के सदस्यों को पकड़कर जेल में भर दिया। बस, उसका एक ही कहना था : "पहले लाल डाकुओं को खतम करो, फिर दूसरी बात। इसके पहले जो जापान-विरोध की बात करता है, वह देशद्रोही है।"

अब की बार (अक्टूबर, 1933) च्यांग ने 10 लाख सेना लेकर कम्युनिस्टों के ऊपर आक्रमण किया, जिसमें से 5 लाख केन्द्रीय लालसेना पर आक्रमण करने के लिए झोंक दिये गये। दुश्मन की शक्ति के अधिक होने पर डटकर मुकाबला करना साथी माओ की रणनीति के विरुद्ध था, लेकिन पार्टी के केन्द्रीय संगठन अभी भी माओ के पथ-प्रदर्शन को पूरी तरह से मानने के लिए तैयार नहीं थे। एक समय केवल रक्षात्मक युद्ध लड़ने की गलती की गई, जिसके कारण इस बार लालसेना दुश्मन के घेरे को चकनाचूर करने में सफल नहीं हो सकी।

1933 के अक्टूबर में हमला शुरू हुआ था। 1934 की फरवरी में सोवियत चीन की राजधानी जुइचिन में दूसरी अखिल चीन सोवियत कांग्रेस का अधिवेशन हुआ। इसी कांग्रेस में महान् अभियान का निश्चय

किया गया।

च्यांग की सेना ने पाँचवें आक्रमण में नये हथियारों और नये साज-सज्जा से सज्जित होकर आक्रमण किया था। उसने अपनी आधी शक्ति द्वारा सीमेंट की फौजी चौकियों को कायम करते आगे बढ़ना शुरू किया। सीमेंट की दीवालोंवाली मोर्चाबन्दी के साथ यह फौजी चौकियाँ मील-मील पर कायम की गई थीं। च्यांग अब नये रूप में चीन की महादीवाल का अनुकरण कर रहा था। महादीवाल विदेशी हूणों के आक्रमण से बचने के लिए खड़ी की गई थी, और च्यांग की इन फौजी चौकियों की दीवाल कम्युनिस्टों की सबसे बड़ी शक्ति जनता थी, जिनके ही हित के लिए वह लड़ रहे थे। च्यांग ने उनके इस शक्तिस्रोत और रक्षास्थान को नष्ट करने का निश्चय कर लिया। जिस गाँव में भी कुओमिन्तांग की सेना पहुँचती, वहाँ के पुरुषों को वह कत्ल कर स्त्री-बच्चों को बेच डालती। जिस गाँव में फौज मुकाम करती, वहाँ की स्त्रियों को पहले वह दो भागों में बाँट देती : एक भाग उन स्त्रियों का होता, जिन्होंने बचपन में अपने पैर नहीं बाँधे, इसलिए वह 'बड़े पैरवाली' होतीं तथा वह स्त्रियाँ भी जो 'बालकटी' होतीं। इन्हें कुओमिन्तांगी कम्युनिस्ट कहकर फाँसी पर चढ़ा देते। बाकी स्त्रियों में से रूपवतियों को सैनिक सरदार अपने लिए रख लेते, दूसरों को आम सैनिकों में बाँट देते, जो पीछे उन्हें वेश्याखानों में बेच देते—1934 ई. में कुओमिन्तांग ने वेश्यालयों को स्त्री बेचने का यह नया व्यापार शुरू किया।

इस समय दुर्भाग्य से लालसेना का सूत्र-संचालन माओ के हाथ नहीं था, पार्टी के 'उग्र' नेताओं ने अपने कामों से च्यांग को मदद दी।

12

महान् अभियान (1934 ई.)

1934 ई. की दूसरी सोवियत-कांग्रेस ने देख लिया था कि सोवियत का तत्कालीन प्रदेश अनुकूल नहीं है। वहाँ बाहर से किसी तरह का सम्बन्ध स्थापित करके सहायता नहीं प्राप्त की जा सकती। इसकी अपेक्षा चीन के उत्तर-पश्चिमी भूभाग ज्यादा सुरक्षित थे, जहाँ पर कम्युनिस्टों ने अपनी सोवियतें भी कायम कर ली थीं। च्यांग के लिए अपनी सेना को उतरी दूर ले जाना आसान नहीं था। अब वह समय आ गया, जबकि लालसेना को क्यांग-सी और अपने दूसरे अधिकृत स्थानों को छोड़ना था, 'अर्ध तजैं बुध सरबस जावे' की नीति को स्वीकार किया गया। इस वक्त तो किसी तरह भी अपने अस्तित्व को कायम रखना बहुत जरूरी था। यदि साथी माओ चे-तुंग की चली होती, तो उतनी हानि न उठानी पड़ती और न च्यांग को अपने मनसूबे में सफलता मिलती।

इस महान् प्रयाण के समय घर-घर ऐसे दृश्य देखे जा रहे थे। माओ चे-तुंग की पत्नी यंग काइ-माइ को च्यांग काइ-शेक के सैनिकों ने मार डाला था, उसके बाद माओ ने सोवियत शिक्षा-विभाग में काम करनेवाली महिला हो चे-नियो से ब्याह किया था। माओ ने पत्नी से कहा, "तुम्हारी तबीयत ठीक नहीं है। यहाँ किसी किसान-परिवार में रह जाओ।" पत्नी ने जवाब दिया : "जिसमें मेरे साथ उसे भी कतल होना पड़े। नहीं, मैं अपने बच्चों को लिए साथ चलूँगी।" गाँव में घर-घर में तैयारी हो रही थी। बूढ़े-बूढ़ियाँ भी कसाई च्यांग काइ-शेक के शासन में रहने के लिए तैयार नहीं थे। लेकिन, माओ के छोटे-छोटे बच्चे कैसे पैदल चल सकते थे ? इसलिए माओ ने कम-से-कम बच्चों को वहीं किसी विश्वासपात्र परिवार में रख देने के लिए आग्रह किया। पत्नी ने जवाब दिया : "अभी तो मैं साथ ही ले चलूँगी, रास्ते में फिर देखा जायगा। छोटे को मैं अपनी पीठ पर बाँध लूँगी, और बड़े को हाथ से पकड़े चलूँगी।" पत्नी ने हँसते हुए यह भी कहा—"तुम्हारे लिए मैंने सौ सिगरेट भी बाँध लिये हैं।"

कम्युनिज़्म के प्रपितामह कार्ल मार्क्स तम्बाकू के पाइप बहुत पिया करते थे, पितामह लेनिन न सिगरेट

पीते न मदिरा, कुछ समय तक तो वह घासहारी भी हो गये थे। पिता स्तालिन भी प्रपितामह की तरह ही पाइप के शौकीन थे। माओ चे-तुंग सिगरेट के बड़े प्रेमी थे। हो चे-नियेे के सौ सिगरेट कितने दिनों तक चलते ? जब सिगरेट खतम हो गये, तो माओ ने रास्ते में धूम्रपान के नये-नये तजर्बे किये, तम्बाकू की जगह दूसरे पत्तों के सिगरेट बनाकर पिये।

1. प्रस्थान (1934 ई.)

16 अक्तूबर 1934 को दक्षिण क्यांग-सी के यूतू ग्राम में सन्ध्या के समय माओ एक टेकरी पर खड़े थे, जहाँ 90 हजार लाल सैनिक जमा थे। उन्होंने कारखानों की मशीनें उखाड़ ली थीं, जिनके ढोने के लिए बहुत-से खच्चर तथा हजारों आदमी हाजिर थे। हथियारखानों और कोष-भंडार की सारी चीजें खाली करके उसी जगह लाई गई थीं। क्यांग-सी प्रदेश से जो कुछ भी उखाड़कर लाया जा सकता था, उसे उखाड़े नर-नारी, बाल-वृद्ध सारी जनता तैयार थी। अपने महान् देश ही में, किन्तु एक अज्ञात भूभाग में उन्हें जाना और अपने सब घर-बार-पूर्वजों की जन्मस्थली को छोड़कर। इस समय उनके हृदय भारी थे, लेकिन क्षितिज में दूर तक देखनेवाली माओ की आँखें बतला रही थीं कि यह प्रस्थान सदा का नहीं है। फिर लालसेना और क्रान्तिकारी जनता सबल होगी और क्यांग-सी ही नहीं, बल्कि अपने सारे महादेश को देशी और विदेशी आततायियों से मुक्त करने में समर्थ होगी। जिस समय यात्रा शुरू की जा रही थी, उस समय यह मालूम नहीं था कि कितनी दूर की यात्रा करके वह अपने लक्ष्य स्थान पर पहुँचेंगे। उन्हें अन्त में 25 हजार ली (8 हजार मील से भी ज्यादा) की यात्रा करनी पड़ी, जिसमें अनगिनत सैनिक और राजनीतिक कठिनाइयों तथा भयंकर प्राकृतिक रुकावटों, बर्फ से ढँके दुर्गम पहाड़ों और उच्च मैदानों से गुजरना था। पूरे एक साल के सफर के बाद अक्तूबर, 1935 में केन्द्रीय लालसेना उत्तरी शेन्शी में पहुँचनेवाली थी।

प्रस्थान बहुत गुप्त रीति से करना था, जिनमें च्यांग काइ-शेक को पता न लगे। सचमुच ही दुश्मन को सप्ताहों बाद मालूम हो सका कि कम्युनिस्ट क्यांग-सी छोड़कर चले गये। लेकिन क्यांग-सी के किसान च्यांग के हाथ में अपनी जन्मभूमि को बेखटके जाने देने को तैयार नहीं थे। वह छापामार बनकर कुओ-मिन्तांगी सेना के नाकों दम करते रहे। 1937 ई. तक उनकी अन्तर्धान सत्ता मौजूद रही, जबकि च्यांग को संयुक्त मोर्चे की शर्तों पर हस्ताक्षर करना पड़ा।

माओ टेकरी पर से उतरे। उसी रात दुनिया के इतिहास का अद्वितीय महान् अभियान शुरू हुआ। इसके सामने ग्रीक सेना का दुर्गम पहाड़ों के भीतर से काकेशस के रास्ते पीछे लौटना, हाजिबाल की सेना का आल्प्स पार करना या नेपोलियन का मास्को से भागना भी कुछ नहीं था। 18वीं सदी में वोल्गा किनारे से लाखों कलमक-मंगोलों का अपनी जन्मभूमि की ओर प्रस्थान कुछ-कुछ उसकी तुलना में आ सकता है, लेकिन इस महान् अभियान की प्राकृतिक और मानवी बाधाएँ उससे कहीं अधिक थीं।

(1) आगे बढ़ो—तीन रात तक पश्चिम दिशा में सेना बढ़ती रही। उन्हें दुश्मन को धोखा देना था, इसलिए दिशाओं को परिवर्तित करते चलना था। पहिले पश्चिम जाकर फिर वह दक्षिण की तरफ मुड़ी। 21 अक्तूबर को क्यांग-सी में, 3 नवम्बर को हूनान में, फिर एक सप्ताह तक हूनान में ही, 29-30 नवम्बर को भी इसी तरह लड़ाई लड़कर च्यांग काइ-शेक के व्यूह को तोड़ना पड़ा। फिर जेचुआन के रास्ते में चलने लगे। समूची सेना को दो भागों में बाँट दिया गया था। तीन रात तक एक सेना पश्चिम की ओर और दूसरी दक्षिण की ओर बढ़ती रही। चौथी रात को दोनों सेनाओं ने मिलकर हूनान और क्वान्तुंग की किलेबन्दी पर अकस्मात् आक्रमण कर दिया, दुश्मन को इसका पता नहीं लगा और वह रास्ता छोड़ने के लिए मजबूर हो गया। यह पहली किलाबन्दी थी। अभी आगे चार किलाबन्दियाँ और तोड़नी थीं, तभी कम्युनिस्ट कुओमिन्तांगी सेना के पंजे से निकल सकते। च्यांग-सी की पहली किलाबन्दी को लालसेना ने 21 अक्टूबर को तोड़ा, हूनान की दूसरी पंक्ति को 3 नवम्बर को। तीसरी किलाबन्दी भी हूनान में थी, जिसके तोड़ने के लिए एक सप्ताह तक भयंकर लड़ाई लड़नी पड़ी। 29 नवम्बर को च्यांग की सेना चौथी पंक्ति को छोड़ने के लिए मजबूर हुई। अब लालसेना

सीधे उत्तर में हूनान की ओर बढ़ी। वहाँ से जेचुआन होते सोवियत जिलों में प्रवेश करके चौथा मोर्चा सेना से मिलना था। लेकिन च्यांग काइ-शेक की सेना भी चौकन्नी थी, उसकी 110 रेजिमेन्टें वहाँ तैयार थीं, जिनके साथ 16 अक्तूबर से 29 नवम्बर तक नौ बड़ी-बड़ी लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं।

क्यांग-सी, क्वान्तुंग, क्वांगसी और हूनान को पार करने में इतनी हानि पहुँची, कि सेना की संख्या एक तिहाई रह गई। इस अभियान के समय भी पार्टी के केन्द्रीय संगठनों ने कितनी ही सैनिक गलतियाँ कीं। दुश्मन पीछे से बढ़ता आ रहा था, आगे का रास्ता भी उसने रोक दिया था। ऐसे भीषण संकट में पड़ी लालसेना और अपने क्रान्तिकारी लक्ष्य को बचाने के लिए साथी माओ चे-तुंग और उनके साथियों ने दृढ़ता के साथ संघर्ष किया।

(2) चू-नाई-कान्फरेंस (1935 ई.)–गलतियों को दूर करने के लिए जनवरी 1935 में क्वे-प्रान्त के चू-नाइ स्थान में केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो की विस्तारित कान्फरेंस बुलाई गई। जो समस्याएँ सामने थीं, उनमें से अधिकांश को साथी जानते थे। उनकी सतर्कता और मदद से 'वामपक्षी' अवसरवादियों को यहीं पार्टी से अलग कर दिया गया, और सारी पार्टी ने एकमत हो साथी माओ चे-तुंग के तपे नेतृत्व को मान लिया। 1935 ई. का आरम्भ था, जबकि पार्टी ने यह जबर्दस्त निर्णय किया। तब से 'चीन की कम्युनिस्ट पार्टी' और चीन की क्रान्ति लगातार इस असाधारण, महान् और विश्वसनीय नेता के मार्क्सवादी-लेनिनवादी नेतृत्व में रही है, जो यही चीनी-क्रान्ति की जीत के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण कारण हुआ।

क्वे-चाउ पहुँचकर अब यात्रा के लिए कुछ और भी निर्णय करने पड़े। साथ चलनेवाले सामान को ढोने के लिए पाँच हजार आदमी लगे रहते, जिसके कारण चलने की गति भी धीमी होती। लालसेना को अपना अभियान गुप्त रखने के लिए रात में चलना पड़ता। साथ के सामान को कम किया गया, क्यांग-सी से उन्होंने उत्तर मुँह यात्रा शुरू की थी, जिसका पता लगाना शत्रु को आसान हो गया था। क्वे-चाउ से अब उन्होंने टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता लिया। नानकिंग (कुओ-मिन्तांग की राजधानी) के हवाई जहाज बराबर लालसेना का पता लगाने के लिए उड़ा करते थे। उनके लिए अब यह मालूम करना मुश्किल हो गया कि कम्युनिस्ट वाहिनी किधर जा रही है। उसे धोखा देने के लिए सैनिक टुकड़ियाँ किसी दूसरी दिशा को चल पड़तीं, और मुख्य सेना चुपचाप आगे बढ़ती! अगल-बगल में बहकाने के लिए छोटी टुकड़ियाँ हल्ला मचाती चलतीं। दुश्मन के हवाई जहाज जहाँ-तहाँ गोला गिराने की भी कोशिश करते। वह खास तौर से इस बात की कोशिश करते, कि हथियार बनानेवाली मशीनें साथ न जाने पायें।

च्यांग को विश्वास था कि जेचुआन में क्रम्युनिस्ट यांग-ची नदी पार करेंगे। इसी ख्याल से उसने हू-पे, अन्-ह्वेइ और क्यांग-सी से बहुत-सी सेनाएँ मँगाकर जहाजों द्वारा उन्हें पश्चिम की ओर भेज रास्ता रोकना चाहा था। नदी के सभी घाटों और उतार-स्थानों पर उसने किलाबन्दी कर रक्खी थी। समझते थे कि कम्युनिस्ट नदी के दक्षिणी तट से आएँगे, इसलिए नदी की सारी नावें कुओ-मिन्तांगी सेनाओं ने उत्तरी तट पर जमा कर ली थीं। सभी सड़कों पर सैनिक घेरे पड़े हुए थे, जिसमें कम्युनिस्टों को अन्न न मिल सके। इसके लिए बहुत बड़े इलाके से अनाज हटा लिया गया था। जेचुआन के राज्यपाल की मदद के लिए भी सेनाएँ भेजी गई थीं, और युन्नान् प्रदेश की सीमा पर भी सेनाएँ तैनात थीं।

शतरंज के चतुर खिलाड़ी की तरह से च्यांग की सभी मोहरें और चालें माओ को साफ दीख रही थीं। उनके नेतृत्व में विश्वास रखनेवाली सेना को घबराने की आवश्यकता नहीं थी। चार महीने तक कम्युनिस्ट कभी एक ओर बढ़ते, कभी दूसरी ओर हटते, कभी एक जगह लुप्त होते और कभी दूसरी जगह प्रकट होते। साथ-साथ वह शत्रु की सेना पर आक्रमण भी करते रहते, जिससे च्यांग के पाँच डिवीजन खतम हो गये। लालसेना ने प्रादेशिक राजधानी पर भी अधिकार कर लिया। इन लगातार होनेवाले संघर्षों में लालसेना केवल खर्च ही नहीं बल्कि आमदनी भी करती रही। इसी संघर्ष के दौरान में उसने अपने लिए 20 हजार नये सैनिक भरती किए। गाँवों और शहरों में जहाँ भी कम्युनिस्ट जाते, वह सभाएँ करके बतलाते कि किसानों और गरीबों के लिए हम क्या करना चाहते हैं, और क्यों च्यांग की बालू की भीत बहुत दिनों तक टिक नहीं सकती। इस तरह

वह जहाँ लोगों में भविष्य के प्रति विश्वास तथा अदम्य उत्साह भरते, वहाँ साथ ही कम्युनिस्ट पार्टी स्थापित करते तरुणों को लाल सैनिक भी बनाते।

अब यांग-ची नदी पार किये बिना शेन्शी में अपने गंतव्य स्थान में पहुँचना संभव नहीं था। च्यांग काइ-शेक दूसरों पर कैसे विश्वास कर सकता था, जबकि वह जानता था कि उसका रास्ता पाप और स्वार्थ का है। यांग-ची पार न हो जायें, इसके लिए उसने खुद आकर स्वेचाउ-जेचुआन की सड़क को इस तरह घेर लिया, कि उस पर आगे बढ़ने का केवल एक ही रास्ता था, जिससे महान् नदी के तट पर पहुँचा जा सकता था। च्यांग ने समझा था कि इस रुकावट से कम्युनिस्ट दक्षिण-पश्चिम की ओर बढ़ने के लिए मजबूर होंगे, जहाँ तिब्बत की निर्जनप्राय भूमि में जाकर वह मर-खप जायँगे।

लेनिक, च्यांग की यह सारी चाल बेकार गई। मई, 1935 को अचानक लालसेना दक्षिण की ओर मुड़ पड़ी और बर्मा तथा हिन्दचीन की सीमा पर अवस्थित यून्नान् प्रदेश में पहुँची। वह इतनी तेजी से चली थी, कि चार दिन के भीतर ही राजधानी युन्ननफू से दस मील पर पहुँच गई। फ्रांसीसी रेलवे लाइन को जल्दी-जल्दी ठीक कराया गया। साम्राज्यवादियों द्वारा दिये हुए उसके हवाई-जहाज जगह-जगह बम गिराने लगे। कितने ही समय शत्रु यही समझता रहा, कि हमने यहाँ अब लालसेना को घेर लिया है। पर आखिर में उसे पता लगा, कि कम्युनिस्टों ने उसे धोखा दिया। उस समय युन्ननफू में च्यांग अपनी पत्नी के साथ हवाखोरी के लिए आया हुआ था। कम्युनिस्टों के आने की खबर पाते ही दोनों वहाँ से प्राण लेकर फ्रेंच रेलवे द्वारा भागे।

चीन में कम्युनिस्ट जहाँ नहीं पहुँच पाये थे, वहाँ के भी किसान, और गरीब जनता जानती थी कि हमारे उद्धारक यही हैं, और वह सारी कुर्बानियाँ हमारे ही लिए कर रहे हैं। लालवाहिनी के स्वागत के लिए जगह-जगह आते थे। अनपढ़ किसान नहीं समझ पाते थे कि उनका उद्धारक सोवियत कोई आदमी है या कुछ और। वह अपनी मंडली बनाकर सोवियत साहब से मिलने आते। उनकी सीधी-सादी बातों से प्रसन्न हो माओ और उनके साथी सीधे-सादे शब्दों में सोवियत तंत्र की बातें बतलाते। गाँववाले पहले ही से लालसेना को 'गरीबों की फौज' कहकर पुकारते थे। वह आकर माओ से कहते—हमारे गाँव को भी मुक्त कर दो। लालसेना हर जगह जमींदारों की जमीन को किसानों में बाँटती; यही नहीं, बल्कि नई पाई हुई जमीन की रक्षा के लिए किसानों को हथियार देती।

(3) माओ के बच्चे—यांग-ची नदी पार करने का भारी संकट सामने था। क्वेचाउ प्रदेश के गाँव चू-नाइ से पहले ही इतनी यात्रा करने के बाद माओ के दोनों बच्चे बीमार हो गये। उनकी पत्नी हो चे-निये भी बहुत परिश्रांत हो गई थी। एक दिन रात में लेटने के लिए पुआल फैला रहे थे कि इसी समय गाँव की एक स्त्री आई। उसने माओ की स्त्री से कहा :

"बहिन, मैंने सुना है, तुम्हारे बच्चे बीमार हैं। मुझे थोड़ी-सी घरेलू दवाई करना आता है, लाओ, जरा नाड़ी देख लूँ।"

नाड़ी देखकर स्त्री ने कहा—"यह कोमल फूल इस यात्रा में नहीं निभ सकेंगे। इन्हें मेरे पास रख जाओ।"

माओ-पत्नी ने कहा : "बहन, यह मैं कैसे कर सकती हूँ ? ऐसा करने से तुम्हारे ऊपर आफत आयेगी। मैं बच्चों को लेकर यदि तुम्हारे पास रहूँ, तो कुओ-मिन्तांगी सेना मुझे पहचाने बिना नहीं रहेगी।"

"तो बच्चों को मेरे पास रख जाओ। ये मेरे बच्चों के साथ रहेंगे, नहीं तो मैं उन्हें अपने पीहर भेज दूँगी। जैसे भी होगा, मैं इनके ऊपर आँच नहीं आने दूँगी। जब फिर तुम लौटोगी, तो ले लेना।"

हो चे-निये बच्चों को लेकर उस बहन के घर गई। छोटा बच्चा सो रहा था, बड़े को ज्वर चढ़ा हुआ था। बड़े बच्चे को कुछ देकर बहला दिया। उसे क्या पता था कि मेरे माँ-बाप मुझे यहाँ छोड़े जा रहे हैं—हाँ, उसी की जान को बचाने के लिए। माँ का कण्ठ भर आया। आकरण-बन्धु स्त्री ने बच्चे को अपनी गोद में ले लिया, और उसे खिलौना देने के बहाने दूसरी ओर ले गई। हो चे-निये ने आँसू भरकर ऊँघते छोटे बच्चे से विदाई ली।

2. भीषण बाधाएँ

(1) यांग-ची पार—युन्नान की पहाड़ियों में बहती यांग-ची दो ही तीन जगहों में पार की जा सकती है, और उन सभी जगहों पर च्यांग ने जबर्दस्त पहरा बैठा रक्खा था। लालसेना तीन दलों में विभक्त होकर अब बढ़ रही थी। पथ-प्रदर्शक सेना यांग-ची के किनारे पहुँची। वहाँ नावें जला दी गई थीं। सेना ने बाँसों का पुल बनाना शुरू किया। च्यांग के हवाई जहाजों को पता लगा, तो उन्होंने यह समझकर संतोष कर लिया कि पुल बनाने में अब हफ्तों लगेंगे, लेकिन एक शाम लालसेना की एक बटालियन वहाँ से चुपचाप रवाना हो एक रात-दिन में 85 मील चलकर बेर ढलते समय चाउ-पिंग स्थान में पहुँच गई। यही एक मात्र स्थान बचा हुआ था, जहाँ से नदी पार की जा सकती थी। च्यांग की सेना यहाँ भी पड़ी थी, लेकिन वह निश्चिन्त थी। उसको लाल डाकुओं के इतनी जल्दी यहाँ आ धमकने का खयाल नहीं था। लाल सैनिकों के पास च्यांग-सेना की वर्दियाँ भी थीं, उनका इस वक्त उपयोग लाभदायक हुआ। कुओ-मिन्तांगी सेना की वर्दी में शाम के वक्त वह किनारे के एक गाँव में घुसे। लोग धोखे में आ गये। छावनी में पहुँचकर उन्होंने च्यांग के सैनिकों को चुपचाप आत्म-समर्पण करने के लिए बाध्य किया, लेकिन नदी के इस पार कोई नाव न थी। च्यांग ने नावों को जलाने का हुकुम दे दिया था, किन्तु उसके आदमियों ने उन्हें परले पार ले जाकर सुरक्षित रख छोड़ा था। आखिर उन्हें भी कभी-कभी नावों की जरूरत पड़ती थी, और इधर लाल-डाकुओं के आने की कोई सम्भावना न थी। लाल सैनिक च्यांग के एक अफसर को पकड़कर नदी के किनारे ले गये और उन्होंने उसे गोली से उड़ा देने का भय दिखाकर आवाज देने के लिए मजबूर किया। अफसर ने दूसरे तट से सैनिकों को आवाज दी—"हो-हो सरकारी सैनिक पार जाना चाहते हैं, नाव जल्दी लाओ।" 'सरकारी सैनिकों' के लिए एक नाव भेज दी गई। कुछ 'सरकारी सैनिक' नाव पर बैठकर उस पार पहुँचे। च्यांग के सैनिक ताश खेल रहे थे। नये 'सरकारी सैनिकों' ने हथियार दिखाकर हाथ उठाने का हुकुम दिया। उन्हें आत्मसमर्पण करने के लिए मजबूर होना पड़ा। दूसरे दिन एक घुमघुमौवे रास्ते से लालसेना का मुख्य भाग भी यहाँ पहुँच गया, जिसमें माओ और दूसरे नेता थे। और भी कुछ नावें वहाँ मिलीं। फिर ढुलाई शुरू हुई। छह बड़ी-बड़ी नावें दिन-रात यह काम करती रहीं। नौ दिनों में सारी सेना पार हो : जेचुआन प्रदेश की भूमि में पहुँच गई। जब सब लोग पार हो गये. तो च्यांग काइ-शेक की आज्ञा को पूरा करते हुए नावों को बरबाद कर दिया गया।

(2) लोलो-प्रदेश में—लालसेना लोलो प्रदेश में पहुँची। यह चीन की भिन्न जाति जंगलों से घिरी भूमि में रहती है। जाति से यह तिब्बती है, किन्तु संस्कृति में पिछड़ी हुई। पर बड़ी लड़ाकू जाति* है। चीनी कभी इसे पूरी तरह पराजित नहीं कर सके। लोलो देश के पश्चिम में तिब्बत है। च्यांग को यह समझकर बहुत सन्तोष हुआ, कि लोलो पग-पग पर लाल डाकुओं पर हमला करेंगे, और इस भूमि से निकलने में उन्हें बहुत समय लगाना पड़ेगा। लेकिन, च्यांग को क्या मालूम था कि लोलो के लिए भी कम्युनिस्टों के पास मोहिनी मंत्र है। लोलो के सीमान्त पर पहुँचते-पहुँचते लालसेना ने कई कुओमिन्तांगी सेनापतियों को हराया और उनके हाथ से कितने ही लोलो-सरदार को मुक्त किया। अपने मुक्तिदाताओं के प्रति लोलो-सरदारों का सद्भाव का होना स्वाभाविक था। कम्युनिस्टों ने उन्हें समझाया, कि चीन के यह सफेद डाकू तुमपर-हमपर-सबपर जुल्म करते हैं, हम भी इसीलिए उनसे लड़ रहे हैं। उन्होंने बतलाया, जैसे तुम्हारे यहाँ काले और सफेद लोलो होते हैं, वैसे चीनी भी लाल और सफेद चीनी हैं। सफेद चीनी डाकू शैतान हैं, इसीलिए हम उनसे लड़ रहे हैं। लोलो-सरदारों ने अपने आदमियों से बात की। वह चीनी मात्र से पुश्तैनी की शत्रुता को इतनी जल्दी भूल कैसे सकते थे ? उनको कैसे विश्वास हो सकता था कि यह लाल चीनी सचमुच ही हमारे शत्रुओं के शत्रु हैं। उन्होंने कहा : "क्या सफेद चीनियों से लड़ने के लिए तुम हमें बन्दूकें दे सकते हो ?" एक क्षण की भी देर न करते हुए लालसेना नायक लियो ने कहा—"अवश्य।" उन्होंने लोलो के हाथों में बन्दूकें दे दीं। लोलो और लाल सैनिकों

* ला-लो तिब्वती भाषा में म्लेच्छ या वर्वर को कहते हैं।

ने धर्म-भाई की शपथ ली : "जो कायर इस शपथ को तोड़े, वह कुत्ते की मौत मरे।" सारी लोलो जातिवाले लाल सैनिकों के धर्म-भाई बन गये। उन्होंने हर तरह से अपने धर्म भाइयों की मदद करनी शुरू की। केवल वह पथ-प्रदर्शन ही नहीं बने, बल्कि सैकड़ों की तादाद में लोलो-तरुण लालसेना में भरती हो गये।

(3) **तातू पार**–लालसेना का सेनापति लिन् पियाओ लोलो लोगों की सहायता से निर्विघ्न सबसे पहले तातू नदी के तट पर अवस्थित आन्-जेन्-चांग शहर में पहुँचा। वह इतनी तेजी के साथ वहाँ पहुँचा कि च्यांग के हवाई-जहाजों को पता नहीं लगा। लोलो लोगों के पथ-प्रदर्शन में लालसेना की एक टुकड़ी ने चुपचाप पहाड़ी रास्तों से पहुँच इस छोटे शहर में घुसकर उस पर कब्जा कर लिया। ऊँची जगह से तातू नदी की ओर देखने पर उस पार की तीन नावों में से एक पार आ रही है। नावों के लिए कड़ा हुकुम था, लेकिन च्यांग के हुकुम को कड़ाई से पालन करने के लिए उसके सैनिक अपने को मजबूर नहीं समझते थे। तातू पार च्यांग की जो सेना छावनी डाले पड़ी हुई थी, उसके तरुण सेनापति का घर कहीं आसपास ही था। उसकी पत्नी का पीहर नदी के इस पार था। पत्नी की इच्छा पीहर हो आने की हुई। पति ने देखा, अभी लालसेना का तो कहीं पता भी नहीं है, हो सकता है, हफ्तों बाद वह इधर आये, फिर पत्नी की इच्छा क्यों न पूरी कर दी जाय ? बस, पत्नी सदलबल पीहर के लिए यात्रा करती नाव पर इस पार आ रही थी। लिन् पियाओ ने नाव को अपने हाथ में कर लिया। फिर अपनी सेना की पाँच कम्पनियों में से प्रत्येक में से सोलह-सोलह आदमी ले 80 सैनिकों को नाव पर सवार कर उस पार भेजा। उसने अपनी मशीनगनों को भी पार के दुश्मनों की ओर करके पहाड़ पर लगा वह प्रतीक्षा करने लगा। मई का महीना था, बर्फ पिघल रही थी, जिसके कारण नदी की धार बढ़ी हुई थी। तातू की धार यांग-ची से अधिक चौड़ी ही नहीं, बल्कि अधिक तेज भी थी, जिसको पार करने में नाव को दो घंटे लगे। उस पार भी पहाड़ी शहर था। आन-जेन-चांग से नाव को अपलक दृष्टि से देख रहे थे। 80 आदमी बलि के बकरे बनकर जा रहे थे। नाव से नीचे उतरे शत्रु की तापों के नजदीक से ही वह आगे बढ़े। इसी समय इस पार से लालसेना की मशीनगनें गर्जन करने लगीं। उनके धुएँ में भी सैनिक आगे बढ़े। बात की बात में 80 वीर पहाड़ की टेकरी पर पहुँच गए और वहाँ अपने हाथ की मशीनगन बैठाकर दुश्मन पर गोली बरसाने तथा हाथों से बम फेंकने लगे। कुओमिन्तांगी सेना इसके लिए तैयार नहीं थी, जरा ही देर में उसके सैनिक भागने लगे। पहली, दूसरी, फिर तीसरी पाँति भी काई की तरह छँट गई, तातू पार लाल झंडा फहराने लगा, विजयघोष होने लगा। पहली नाव के साथ अब दो और नावें इस पार भेजी गईं। तीनों पर अस्सी-अस्सी सैनिक सवार हो उस पार चले। अब च्यांग की सेना को आस-पास कहीं ठहरने की हिम्मत नहीं रही। तीन दिन तीन रात तक लगातार ढुलाई लगी रही, और लालसेना का एक पूरा डिवीजन उस पार उतर गया। बर्फ के अधिक पिघलने के कारण धार अधिक तेज होती गई। तीसरे दिन एक बार आने-जाने में चार घंटे लग गये। ऐसा होने पर तो सारी सेना, उसके सामान और पशुओं को पार करने में हफ्तों लग जायँगे। च्यांग काइ-शेक को अब तक पता लग गया था कि तातू के किनारे क्या हो रहा है। लिन् पियाओ ने कान्फरेंस बुलाई। माओ चे-तुंग, चू-तेह, चाउ एन्-लाइ, पेंग पे ह्वाइ आदि सभी नेताओं ने इकट्ठा होकर परिस्थिति पर विचार किया। मालूम हुआ, वहाँ से करीब सवा सौ मील पर तातू के किनारे एक और जगह है, जिस पर लिउ नामक एक बहुत पुराना पुल है। तिब्बत से पूर्व नदी पार करने का यही एक स्थान है, जहाँ नदी को पार किया जा सकता है। लेकिन, साथ ही यह भी मालूम हुआ कि यदि वहाँ तातू पार न हो पाये, तो फिर पीछे लौट लोलो-देश में होकर तिब्बत की सीमा पार करनी पड़ेगी। नदी के दाहिने किनारे पड़ी लालसेना ने अब पश्चिम की ओर अपना मुँह मोड़ दिया। उसी समय नदी पार की लालसेना भी किनारे-किनारे पश्चिम की ओर बढ़ी। दोनों के बीच में प्रखरवाहिनी तातू चल रही थी। कहीं-कहीं नदी की धारा इतनी सँकरी हो जाती कि दोनों किनारे के लालसैनिक आपस में बात कर लेते। रात को भी दस हजार मशालें जलाकर लालसैनिकों की पंक्ति आगें बढ़ती। दिन और रात कूच जारी रहा। केवल दस मिनट खाने और आराम करने के लिए मिला। एक-एक मिनट का भारी मूल्य था, च्यांग की सेना कहीं लिउ-पुल को तोड़ न दे। दूसरे दिन दाहिने तट की सेना को रुक जाना पड़ा, क्योंकि जेचुआन की सफेद सेना ने उसका रास्ता रोक दिया, पर

दाहिने तट की लालवाहिनी उसी तरह आगे बढ़ती रही। इतने में ही उत्तरी (बायें) तट पर एक और सेना दीख पड़ी। वह सफेदसेना थी, जो पुल की ओर तेजी से बढ़ती जा रही थी। दिन-भर दोनों तटों पर दोनों सेनाओं में होड़ लगी रही, किन्तु आखिर में लालसेना ही पुल के पास पहुँचने में सफल हुई। च्यांग के भाड़े के टट्टू भला इतनी परेशानी उठाने के लिए क्यों तैयार होते ?

सदियों पहले जंजीरों को दोनों किनारों पर बाँधकर यह पुल बनाया गया था। तिब्बत और दूसरे देशों में भी ऐसे झूलेवाले कितने ही पुल देखे जाते हैं। दोनों किनारों पर पत्थर के दो-दो पाये खड़े किये गये थे, जिनसे लोहे की सोलह मोटी-मोटी जंजीरें बीच के सौ गज में लटकी हुई थीं। इन जंजीरों से लटकती जंजीरों में तख्ते बँधे हुए थे। इन्हीं पर होकर नदी पार करना था। पुल झूले ही की तरह हिलता था, इसे कहने की आवश्यकता नहीं। लालसेना जब नजदीक पहुँची, तो उसने देखा कि इस तरफ के आधे पुल के तख्तों को हटा दिया गया है, और पहले तट के पाये के नजदीक मशीनगन लगी हुई है, जिसके पीछे च्यांग की सेना का एक पूरा डिवीजन बैठा हुआ है। पुल नष्ट कर देना चाहिए था, लेकिन 'अठारह प्रदेशों के धन' से बने पुल का उनको लोभ था। उन्होंने समझा, तख्ता हटा देने से काम हो गया लाल-डाकू अब इस पार नहीं आ सकते।

लालसेना के पास एक भी मिनट बरबाद करने के लिए समय नहीं था, क्योंकि च्यांग की और भी सेनाएँ दौड़ी आ रही थीं। तुरन्त पुल पार करना है। ऐसे वीरों की वहाँ कमी कहाँ हो सकती थी, जो हथेली पर सिर रखकर जंजीरों से नदी पार करने को तैयार होते ? बहुत-से तैयार हो गये, जिनमें से तीस को चुन लिया गया। उन्होंने हथबमों और पिस्तौलों को पीठ पर बाँध एक के बाद-एक-हाथ से जंजीर पर लटकते आगे बढ़ना शुरू किया। नीचे नदी गरज रही थी, सामने दुश्मन की मशीनगन गोलियों की बौछार कर रही थी। इस पार की लाल मशीनगनों ने भी परले पार गोलियाँ छोड़नी शुरू कीं। इस आग और गोली की वर्षा के बीच तीस वीर बन्दर की तरह जंजीर से लटकते, भुनते आगे बढ़ रहे थे। दुश्मन अपनी बन्दूकों से ताक-ताककर निशाना लगा रहा था। एक वीर को गोली लगी, वह धड़ाम से नदी के खौलते पानी में गिर पड़ा, दूसरा भी, तीसरा भी। लेकिन बाकी वीर बचे हुए तख्ते की ओर बढ़ रहे थे। गोलियाँ अब उनसे चूककर सामने की चट्टानों से टकरा रही थीं। च्यांग के भाड़े के टट्टू कैसे विश्वास कर सकते थे कि ये लाल-डाकू आदमी हैं। जरूर यह मनुष्य हैं। उनकी वीरता ने भी शत्रु सैनिकों पर प्रभाव डाला, और कितने ही जान-बूझकर अपनी गोलियों को इधर-उधर बहकाने लगे। अन्त में एक लालसैनिक तख्ते के ऊपर पहुँच गया। पीठ पर से बम निकालकर उसने दुश्मन के अड्डे पर फेंका। शत्रु अब घबरा चुके थे। उन्होंने बाकी तख्तों को भी उखाड़ना चाहा, लेकिन जल्दी-जल्दी में वैसा करने के लिए समय नहीं रह गया था। दूसरे लाल सैनिक भी तख्त की ओर बढ़े आ रहे थे। सफेद सैनिकों ने तख्ते पर पराफीन छिड़ककर आग लगा दी, तख्ते जलने लगे, लेकिन तब भी बाकी लाल सैनिक घुटने और हाथ के सहारे लगातार आगे बढ़ते रहे। उनके हथबम लगातार दुश्मन के मशीनगन के घोंसले पर फटते रहे। सफेद सेना के पैर उखड़ गए। दूसरे तट से 'क्रान्ति चिरंजीव', 'लालसेना की जय', 'तातू के बहादुरों की जय' की आवाज आने लगी। आग की कोई भी परवा न करके ये वीर दुश्मन की मशीनगन के नजदीक पहुँच गये। उन्होंने उसका मुँह भागती हुई कायरों की पलटन की ओर फेर दिया। तब तक लाल सैनिकों की दूसरी टुकड़ी भी जंजीरों को पकड़कर झूलते बढ़ते तख्तों पर आ पहुँची। तख्तों की आग बुझा दी गई। पुल पर जल्दी-जल्दी नये तख्ते लगाये जाने लगे। इसी समय एनजन-चांग में तातू पार की हुई लालसेना भी च्यांग की सेना की बाधा को हटाकर आ पहुँची। घंटे-दो घंटे में पुल तैयार हो गया और दाहिने तट की लालसेना तातू पार करने लगी। च्यांग काइ-शेक के हवाई-जहाजों ने बम गिराकर लालसेना के रास्ते में बाधा डालने और पुल को तोड़ने की बहुत कोशिश की, किन्तु उनके अधिकतर बम तातू की धारा में गिरकर ठंडे हो गये।

इस प्रकार लाल वीरों ने तातू को पार किया। लालसेना ने भारी बाधाओं पर विजय पाई, लेकिन अभी बाधाएँ समाप्त नहीं हुई थीं।

(4) दुर्लंघ्य हिमालय—तातू पार करने के बाद लालसेना अब पश्चिमी जेचुआन प्रदेश में प्रविष्ट हुई। च्यांग सुदूर जेचुआन प्रदेश में अपनी घेराबन्दी पूरी नहीं कर पाया था, लेकिन उसकी बाधाओं के कम होने पर भी लालवीरों के अभी सात दुर्लंघ्य पहाड़ी डाँड़ों को पार करते हुए तिब्बत की ऊँची पठारों से दो हजार मील का रास्ता पार करना था। तातू से उत्तर 16000 फीट ऊँचे 'महागिरि' डाँड़े (खङ्-छेन्-ला) को पार करना पड़ा। डाँड़े के ऊपर से उन्हें पश्चिम की तरफ तिब्बत की भूमि दिखाई दे रही थी, जान पड़ता है, बर्फ से ढँकी चोटियों का सफेद जंगल फैला हुआ है। जून का महीना था, जब कि वह ताइ-स्वे-शान (महाश्वेतगिरि, कर-छेन्-री) को पार कर रहे थे। इस ऊँचाई पर सर्दी भयंकर थी। लोगों के पास कपड़े का अभाव था और दक्षिणी चीन के निवासी होने से वह इतनी सर्दी बर्दाश्त करने के आदी नहीं थे। कितने ही लाल सैनिक सर्दी के मारे ठिठुरकर मर गये। पाव-तुंग-कांग के नंगे डाँड़े को पार करना और भी कठिन हुआ। कमरभर बर्फीली कीचड़ पर लट्ठा रखकर उन्हें अपने लिए रास्ता बनाना पड़ा। इस डाँड़े में सेना के दो-तिहाई पशु मर गये, जो एक बार गिरे, वह फिर नहीं उठ सके। इसके बाद भी तीन डाँड़े आये जहाँ पर भी बहुत-से मनुष्यों और पशुओं की बलि देनी पड़ी। सारे महान् अभियान में बेतार ने लालसेना की बड़ी मदद दी। भिन्न-भिन्न दल उसी के द्वारा अपने सम्बन्ध को स्थापित किये हुए थे।

जिस समय क्यांग-सी की केन्द्रीय लालसेना ने अभियान आरंभ किया था, उसी के बाद दूसरे सोवियत-क्षेत्रों की सेनाओं ने भी कूच शुरू कर दिया। मावेर-काइ इलाके में मुख्य लालसेना 20 जुलाई, 1935 को पहुँची, और यहीं दूसरी ओर से कूच करके आती चौथी-मोर्चा-फौज भी उससे आ मिली। इस जगह पर शू शेंग-चेन् और चेंग काउ-ताउ के नेतृत्व में आकर लाल सैनिकों ने सोवियत राज्य स्थापित किया था। सारी सेना बहुत थकी-माँदी थी, इसलिए उसे विश्राम करने की बड़ी आवश्यकता थी। तीन सप्ताह तक उसने यहीं विश्राम किया। अब क्यांग-सी से आई लालसेना के पास 90 हजार की जगह 45 हजार सैनिक रह गये थे। बाकी सभी मर नहीं गये थे, बल्कि जान-बूझकर अपनी छोटी-छोटी टुकड़ियों को जहाँ-तहाँ छोड़ दिया था, जिसमें कि वह पीछा करनेवाली च्यांग की सेना को तंग करें, किसानों में अपने सिद्धान्तों का प्रचार करके उन्हें अपने शत्रुओं से लड़ने के लिए तैयार करें; क्यांग-सी से जेचुआन तक जो प्रचार किया गया था, उसके फलस्वरूप अब जगह-जगह विद्रोह हो रहे थे। उत्तरी हूनान में हो लंग के नेतृत्व में इस समय भी सोवियत-शासन कायम था, और वह तब तक वहाँ से नहीं रवाना हुआ, जब तक कि उसे तिब्बत होकर आ मिलने का हुकुम नहीं दिया गया।

रास्ते में लालसेना को रसद की जरूरत पड़ती थी। उसको जुटाने के लिए उन्होंने ऐसा उपाय सोच निकाला था, जिससे अधिकांश जनता उनकी भक्त बनती गई। लाल सैनिक जिस स्थान पर पहुँचते जमींदारों, नौकरशाहों और बड़े-बड़े अमीरों की सम्पत्ति जब्त कर लेते। यह लूट-पाट नहीं थी, बल्कि बाकायदा जब्ती-विभाग एक-एक चीज को सँभालकर अपने हाथ में लेता। जब्ती के बाद बेतार द्वारा हुकुम पाते ही चीजों का बँटवारा किया जाता। लालसेना अपने काम-भर की चीजें अपने पास रख लेती, बाकी गरीबों में बाँट देती। बाँट की चीजों को पाने के लिए मीलों से चलकर गरीब लोग आते। साधारण वित्तवाले किसानों को जरा भी नहीं छेड़ा जाता। जब्ती माल के अतिरिक्त लालसेना अपने साथ जो चाँदी-सोना लाई थी, उसे भी वह गरीबों में बाँटती चली। जमींदारों और महाजनों के पंजे से छुड़ाने के लिए वह कर्ज या दूसरी तरह के कागजों को फाड़कर फेंक देती, कर के भार को कम करके गरीब किसानों को बन्दूकों से हथियारबन्द भी करती।

3. खतरे से बाहर

मावेर-काइ और मो-कुंग में लालसेना ने विश्राम किया। यहाँ पर चौथी मोर्चा-फौज ने सोवियत शासन स्थापित किया। चौथी फौज का संगठन हूनान हू, पे-आन् ह्वेइ के सोवियत जिलों में हुआ था। 1933 ई. में ही आकर उसने जेचुआन में अपनी जड़ जमा ली थी। जिस समय लालसेना क्यांग-सी केन्द्रीय लालसेना इससे आकर मिली, उस समय इसकी संख्या 50 हजार थी। इस प्रकार अब लालसेना में प्रायः एक लाख सैनिक थे।

(1) सलाह-मशविरा—शू शेंग-चेन् और चांग कुओ-ताउ ने इस सुदूरस्थ सोवियत-शासन को काफी मजबूत

कर रक्खा था। यहाँ विश्राम लेते आगे का कार्यक्रम निर्धारित करना था, जिसके लिए स्थानीय सोवियत के प्रतिनिधियों और केन्द्रीय नेताओं का सम्मेलन हुआ। चांग कुओ ताउ का रवैया इस वक्त अनुकूल नहीं था। लालसेना को अभी अपना अभियान खतम नहीं करना था, बल्कि उसे और दूर जाकर अपने को जमाना था। लेकिन चांग कुओ-ताउ का कहना था, हमें यहाँ जम जाना चाहिए, फिर धीरे-धीरे यांग-ची के दक्षिण में भी सोवियत का विस्तार करना चाहिए। माओ और उनके साथियों ने बहुत समझाया : "तुम जापान को भूल रहे हो। इस समय कुओमिन्तांग से लड़ने से अधिक महत्त्व का काम है जापान से लड़ना। जैसे भी हो, हमें राष्ट्रीय एकता स्थापित करनी है। हमें च्यांग काइ-शेक को जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चा में लाना है, और जितनी जल्दी हो सके उतनी जल्दी जापानी मोर्चे के नजदीक पहुँचना है। यदि हम जापानी फौज को एक-दो लड़ाइयों में पराजित कर सके, तो देश-भाइयों की हिम्मत बहुत बढ़ जायगी।"

शू शेंग-चेन् ने भी चांग को समझाने की बहुत कोशिश की, किन्तु उसने एक नहीं मानी। यहीं से चांग कुओ-ताउ साथी सू स्यांग-चेन् के नेतृत्व में चलनेवाली लालसेना की टुकड़ी में काम करता था। चांग कुओ-ताउ का वस्तुतः वह बहाना था। क्रान्ति के भविष्य के बारे में उसका विश्वास अब निर्बल हो चुका था। वह फूट डालकर पार्टी के साथ गद्दारी करने में जुट गया था। उत्तर-पश्चिमी जेचुआन से केन्द्रीय लालसेना के साथ उत्तर की दिशा में बढ़ने से इन्कार करके वह सैनिकों के एक हिस्से को जबर्दस्ती पीछे हटाकर सी-कांग प्रदेश की ओर ले गया, और वहाँ उसने अवैधानिक तरीके से एक दूसरा केन्द्रीय संगठन कायम कर लिया। लेकिन, माओ चे-तुंग की ठीक नीति एवं चू-तेह, जेन् पी-शी, हो लुंग, क्वान् स्यांग-मिन् और दूसरे साथियों की दृढ़ता के कारण गद्दार चांग कुओ-ताउ के फूट डालनेवाले षड्यन्त्रों का जल्दी ही पूरी तौर से पर्दाफाश हो गया, तो भी इन षड्यन्त्रों के कारण लालसेना को भारी नुकसान उठाना पड़ा।

लालसेना को अब अपने अन्तिम लक्ष्य-स्थान की ओर बढ़ना था।

(2) लक्ष्य स्थान को—1 अगस्त को लालसेना का जन्मदिवस था। माओ ने उसके सम्बन्ध में रेडियो द्वारा एक वक्तव्य दिया, जिसमें च्यांग काइ-शेक को जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे में शामिल होने के लिए निमंत्रण देते हुए कहा : "घरेलू युद्ध को बन्द करो। जापान के विरुद्ध लड़ने के लिए एक हो जाओ।" उसी दिन आगे की यात्रा फिर शुरू हो गई। शेन्शी में पहुँचने से पहले अभी उन्हें एक बीहड़ घास के मैदान से गुजरना था। चू-तेह जेचुआन की सेना के सेनापति बनाकर वहीं छोड़ दिये गये थे, माओ अपने दूसरे सेनापतियों तथा 30 हजार सेना के साथ अब आगे के बीहड़ रास्ते मनूजू और तिब्बत के पूर्वी हिस्से से होकर चले। इस समय लालसेना का वास्ता खम्पा लोगों से पड़ा, जो कि लाल-सफेद का कोई भेदभाव न करते सभी चीनियों के साथ अपार घृणा रखते थे। पैसा रहने पर भी यहाँ कुछ खरीदा नहीं जा सकता था। रास्ता जंगल से था, जहाँ मंजू लोग छिपे रहते और मौका पाते ही लाल सैनिकों पर टूट पड़ते। घाटियों और दर्रों को पार करते वक्त वे ऊपर से चट्टानों को गिराते। मंजुओं की रानी चीनियों से सख्त घृणा करती थी। उसने हुकुम दे रक्खा था कि जो कोई चीनी सेना को मदद देगा, मैं उसे जिन्दा खौलते कड़ाह में भून डालूँगी। बड़ी बीहड़ घासवाली भूमि आई, जिसमें दस दिनों तक किसी भी आदमी की सूरत नहीं दिखाई पड़ी। दिन-रात वर्षा होती रही, दलदली भूमि के बीच से पहला रास्ता था, जरा भी इधर-उधर हटने पर आदमी का पता नहीं लगता था। ईंधन के लिए नहीं। तिब्बत से जो हरे गेहूँ वह अपने साथ लाये थे, उसी को बच्चे चबाते अपनी भूख शान्त करते। पेड़ भी नहीं थे। हलका रहने के लिए तम्बू भी साथ नहीं लाया गया था। तो भी लालसेना फौलाद की बनी थी, उसे उतनी क्षति नहीं हुई, जितना कि उसका पीछा करनेवाली च्यांग काइ-शेक की सेना को—जो रास्ता भूलकर कभी की नष्ट हो चुकी थी।

लालसेना कान्सूकी सीमा पर पहुँची, लेकिन यहाँ नानकिंग, तुंग-पे और सी-निंग की मुसलमानी सेना उनके मुकाबले के लिए तैयार थी, सी-निंग (सी-लिंग) के मुसलमान घुड़सवार बड़े जबर्दस्त लड़ाके समझे जाते थे। इनका सरदार शासक, मुल्ला, जमींदार और व्यापारी सब कुछ था। वह कम्युनिस्टों को फूटी आँखों नहीं देखना चाहता था। उसने सभी मुसलमानों को भड़का रक्खा था कि लाल-डाकू इस्लाम के भारी दुश्मन हैं। लालसेना

को कई लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं, जिनमें से एक की भी हार में सब किये-कराये के चौपट होने का डर था, लेकिन विजय सदा लालसेना के साथ रही। मुसलमानी सेना से छीने हुए घोड़ों से लालसेना ने अपना रिसाला तैयार किया। अन्त में 20 अक्टूबर, 1935 को 20 हजार ली (8 हजार मील से ऊपर) की यात्रा करके लालसेना शेन्शी प्रदेश में महादीवाल के ठीक नीचे पहुँच गई। महान् अभियान का सफल अन्त हुआ। उस समय लालसेना के पास 20 हजार सैनिक रह गये थे। महाभियान एक दूसरी दृष्टि में सफल रहा : अपने सिर को दे-देकर इन क्रान्तिवीरों ने क्रान्ति के सन्देश को चीन के बहुत भारी भाग तक पहुँचा दिया।

माओ चे-तुंग ने इस महान् अभियान के बारे में कहा था :

"1935 के जनवरी मास में चुन्-यी और क्वे-चाउ में लालसेना के पहुँचने के बाद अगले महीने का समय लगातार चलते रहने और बहादुरी के साथ बराबर लड़ते रहने में बीता। अनेक मुसीबतों, बीहड़ भयंकर विशाल जंगलों, खाइयों, दर्रों और ऊँचे पर्वतों को लाँघते कठिन सर्दी, गर्मी, वर्षा और तूफानों में, दूर-दूर तक फैले मैदानों और जंगली प्रदेशों को पार कर लालसेना को चलना पड़ा—सामने नदियों, वनों और पर्वतों की प्राकृतिक बाधाएँ थीं, और पीछे लगातार पीछा करती चीनी सफेद सेना थी। किन्तु, लालसेना इनसे टक्करें लेती बढ़ती गई। अक्तूबर, 1935 में लालसेना शेन्शी पहुँची। आगे चलकर उसको केन्द्र बना पश्चिमोत्तर इलाकों का विस्तार किया गया। चीनी जनता, लालसेना और पार्टी के इस सफल अभियान और अपनी संगठित ताकत के साथ कान्सू और शेन्सी में पहुँच सकने के दो कारण थे—(1) कम्युनिस्ट पार्टी का सफल पथ-प्रदर्शन, (2) सोवियत इलाकों की जनता और उसके पुत्रों का साहस, बुद्धिमानी, लगन, अनोखी वीरता और क्रान्तिकारी प्रसार। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी हमेशा मार्क्सवादी-लेनिनवादी सिद्धान्तों पर चल रही है और आगे भी चलती रहेगी, वह हर तरह की अवसरवादी प्रवृत्तियों के खिलाफ लड़ती रहेगी। इसी विश्वास पर, इसी राह पर हमारी अजेय शक्ति और अन्तिम विजय निश्चित है।"

अभियान में लालसेना को 20 करोड़ जनसंख्यावाले 12 प्रदेशों से गुजरना पड़ा। 368 दिनों में 235 दिन की यात्रा में और 18 रात की यात्रा में बीते। सौ दिन पड़ाव डाले गये, किन्तु इनमें भी अधिकतर छोटी-मोटी लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं। जेचुआन प्रदेश के सौ मील के रास्ते में सौ विश्राम दिनों में से 56 बीते। बाकी सारे रास्ते में मिलाकर केवल 44 दिन डेरे डाले गये, अर्थात् डेढ़ सौ मील से ऊपर चलने के बाद ही लालसेना जरा देर के लिए विश्राम लेती। उसे प्रतिदिन औसतन 24 मील चलना पड़ा। इस यात्रा में अठारह पहाड़ों को लाँघना पड़ा, जिनमें पाँच हिमाच्छादित थे। जिन 24 नदियों को पार करना पड़ा, उनमें से कुछ चीन की सबसे बड़ी तथा भयानक नदियाँ हैं। लड़ाइयों और मुठभेड़ों के बीच जिस-जिस शहर या गाँव पर लालसेना ने अधिकार किया, वहाँ बड़ी-बड़ी सभाएँ कीं, नाट्य-मंडली ने अभिनब दिखलाते हुए मनोरंजन और प्रचार किया।

(3) वीर लिउ जू-तान्—लालसेना जिस भूमि में पहुँची थी, वह उसके लिए अजनबी परदेश नहीं था। माओ चे-तुंग ने जिस शासन की नींव डाली थी, वह क्यांग-सी, फूकियेन् और हूनान तक ही सीमित नहीं था। दूसरे साहसी कम्युनिस्ट वीरों ने और स्थानों में सोवियतें कायम की थीं, जिनमें एक थी हूनान-हूपे-आन्-ह्वे का और दूसरा शेन्शी-शान्शी-कान्सू-निंग स्याकी। शेन्शीवाली सोवियत को ही लक्ष्य करके क्यांगसी की केन्द्रीय लालसेना चली थी। यहाँ पहुँचकर वह मानो अपने घर में पहुँच गई। लेकिन, आने के बाद उसे मालूम हुआ कि यहाँ सोवियत-शासन के नाम पर कुछ अन्धेरखाता-सा चल रहा है, सोवियत के संस्थापक लिउ जू-तान को तंग करके हटाकर मनमानी की जा रही है।

ल्यु जू-तान् सोवियत और आधुनिक चीन के यशस्वी वीर हैं। उनका जन्म शेन्शी के उत्तरी भाग के पाओ-आन् नामक एक पहाड़ी स्थान में एक मध्यवित्त किसान के घर में हुआ था। यूलिन में शिक्षा समाप्त कर वह कान्तन् के वाम्पा सैनिक विद्यालय में दाखिल हुआ, जहाँ से 1926 ई. में उसने पूरी सैनिक-शिक्षा समाप्त की। इसी जगह वह कम्युनिस्ट पार्टी का मेम्बर हो गया। शिक्षा समाप्ति के बाद कुओ-मिन्तांग की सेना में वह एक छोटा सैनिक अफसर बन गया। 1927 ई. में जब च्यांग काइ-शेक ने कम्युनिस्टों के साथ खून की होली खेलनी शुरू की, तो ल्यु ने वहाँ से भागकर शांघाइ में जा पार्टी का काम शुरू किया। 1928 ई. में शेन्सी

लौट उसने अपने कुछ पुराने साथियों से मिलकर किसानों में क्रान्तिकारी भावना पैदा करके विद्रोह कराया। यद्यपि इस विद्रोह को बड़ी निष्ठुरता से दबा दिया गया, किन्तु साथ ही शहीदों के खूनों की बूँदों में शेन्सी की लालसेना का जन्म हुआ। 1929-32 ई. तक ल्यु जू-तान् बराबर मौत के मुँह से बचता जय-पराजय के बीच से गुजरता रहा। उसकी सेना नष्ट कर दी गई। ऐसे काम न बनते देख साम से काम लेने की कोशिश की। इस पर उसे पाओ-आन की सरकारी रक्षा-समिति का अध्यक्ष बना दिया गया। लेकिन ल्यु सर्वहारा के लिए अपने जीवन को दे चुका था, वह प्रलोभन में कैसे पड़ सकता था ? उसने अपने पद का उपयोग जमींदारों और साहूकारों को पकड़कर फाँसी पर चढ़ाने में किया। जब यह रहस्य खुला तो पाओ-आन् के कितने ही अफसर नौकरी से निकाल दिये गये और ल्यु अपने तीन साथियों के साथ निकल भागा। एक बार एक सैनिक अफसर ने ल्यु को भोज खाने का निमन्त्रण दिया। ल्यु गया, लेकिन भोज खाने नहीं। अफसर और उसके आदमियों को पकड़कर वहाँ से 20 बन्दूकें छीनकर वह पहाड़ में लोप हो गया। कुछ ही समय बाद अब ल्यु द्वारा संगठित लालसेना में 300 सैनिक थे। यह छोटी सेना एक बार घिर गई। ल्यु ने सुलह करने के लिए संदेश भेजा। च्यांग के लोगों ने समझा कि इस शेर को पद के प्रलोभन में हाथ में किया जा सकता है। कुओमिन्तांगी सेना में कर्नल बना दिया गया। कर्नल बनकर फिर उसने जमींदारों की खबर लेनी शुरू की। फिर उसे गिरफ्तार किया गया। बड़ी मुश्किल से जान बची और उसके प्रभाव का खयाल करके उसे एक छोटा-सा दर्जा दे दिया गया। तीसरी बार भी उसने अपने पुराने रवैये को दोहराया। उसकी सेना घिर गई, किन्तु वह निकल भागने में सफल हुआ। उसके सिर पर भारी इनाम घोषित किया गया।

ल्यु प्राण बचाने के लिए नहीं भागा था, वह अपनी धुन में मस्त घूमता रहा। धीरे-धीरे उसके इर्द-गिर्द क्रान्तिकारियों की टोली इकट्ठी होती गई। इस टोली ने 1931 ई. में पाव-आन् और चुंग-यान् पर लाल झंडा गाड़ा और शेन्सी के उत्तर में फैलना शुरू किया। उसके खिलाफ जो भी सेना भेजी गई, सभी को भारी हानि उठाकर निष्फल होना पड़ा। दो साल तक ल्यु की लालसेना शेन्सी में अफसरों, कर उगाहनेवालों और जमींदारों को चुन-चुनकर मारती रही। सदियों से उत्पीड़ित किसान अब ल्यु की प्रेरणा और प्रोत्साहन से निडर हो चले थे, हथियारबन्द होते ही वह दुश्मनों को लूटना-मारना शुरू कर देते। डाकुओं की तरह लूट-पाट के लिए ल्यु ने अपना जीवन अर्पित नहीं किया था, उसे वहाँ सुव्यवस्थित सोवियत शासन की नींव डालनी थी। 1932 ई. तक ल्यु और उसके साथियों ने शेन्सी के उत्तर के ग्यारह हल्कों पर अधिकार कर लिया, यू-लिन में कम्युनिस्ट पार्टी का भी संगठन कर लिया। 1933 ई. में शेन्सी में क्यांगसी के सोवियत के कार्यक्रम के अनुसार पहली सोवियत कायम हुई। 1934-35 ई. वह खूब बढ़ती रही। शेन्सी में प्रादेशिक सोवियत-सरकार कायम की गई। पार्टी शिक्षण-शिविर कायम हुआ, आन्-तिन् में सेना का केन्द्र बनाया गया। शेन्सी की सोवियत-सरकार ने अपने सिक्के ढाले, अपने टिकट चलायें, बैंक और डाकखाने कायम किये। जमींदारों की जमीन जब्त करके सोवियत ने उसे किसानों में बाँट दिया, कितने ही कर उठा दिये, सहयोग समितियाँ स्थापित कीं, निरक्षरता और अ-शिक्षा को दूर करने के लिए शिक्षकों की टोलियाँ तैयार की जाने लगीं।

ल्यु जू-तान् का अब सीमा विस्तार करते चीन की प्राचीन राजधानी सियान्फू (छांग-अन्) पर अधिकार करने का इरादा था। कई दिनों तक उसने सियान्फू पर घेरा भी डाले रक्खा, लेकिन उसे वहाँ से हटना पड़ा। लालसेना का एक दस्ता शेन्सी के दक्षिण की ओर गया और वहाँ उसने कई हलकों में सोवियतें कायम कीं। अनुशासन को बढ़ाते हुए ल्यु ने सैनिकों की लूट-पाट की आदत को खतम किया। 1935 ई. के मध्य शेन्सी और कान्सू के 22 हलकों पर सोवियत सरकार स्थापित हो चुकी थी। उस समय वहाँ की लालसेना में 500 सैनिक थे। उनके पास अपना रेडियो भी था, जिससे वह दूसरे भागों के साथियों से सम्बन्ध रखते थे। जिस समय क्यांग-सी फूकियेन की केन्द्रीय लालसेना ने माओ के नेतृत्व में महान् अभियान शुरू किया था, उस समय ल्यु का सफेद सेना से घमासान युद्ध हो रहा था, जिसके मारे च्यांग काइ-शेक को अपने उप-प्रधान सेनापति, मार्शल चांग स्यो-लियांग के नेतृत्व में एक बड़ी सेना उसके खिलाफ भेजनी पड़ी। इसी समय ल्यु को भी एक बड़ा बहादुर साथी मिला, वह था कुम्हार-पुत्र, पीछे प्रसिद्ध कम्युनिस्ट जेनरल सू हाइ-तुंग। वह 1934 ई. के

अन्त में 8 हजार की लालसेना लेकर हूनान प्रदेश से शेन्सी में पहुँच ल्यु की सेना से मिल गया। शक्ति बढ़ गई और च्यांग की सेना को हार पर हार खानी पड़ी। शेन्सी की लालसेना का सेनापति सू हाइ-तुंग और उप-सेनापति ल्यु जू-तान् बनाये गये। शेन्सी-कान्सू-शान्सी की क्रान्तिकारी सेना कमेटी बनाकर ल्यु को उसका अध्यक्ष चुना गया। 1935 के अगस्त में इस सेना ने चांग स्यो-लियांग की तुंग-पी सेना के दो बड़े-बड़े डिवीजनों को भरती करके अपनी शक्ति को और बढ़ाया।

लेकिन इसी समय दूध में मक्खी पड़ गई। च्यांग चिंग-फू नामक एक हट्टे-कट्टे तरुण ने शेन्सी में आकर अपने को पार्टी केन्द्रीय कमेटी का प्रतिनिधि बताते हुए स्थानीय पार्टी और सेना का पुनः संगठन शुरू किया। च्यांग बड़ा चालाक और धोखेबाज था। उसने कितने ही लोगों को अपनी बात में फँसा पार्टी के परम भक्त ल्यु के खिलाफ शिकायतें जमा करके उस पर अभियोग लगाया। ल्यु चुपचाप फैसले को मान अपने पद से इस्तीफा दे पाव-आन् की अपनी पहाड़ी गुफा में जाकर रहने लगा। च्यांग चिंग-फू ने इतना ही करके दम नहीं लिया, बल्कि ल्यु के सौ प्रमुख साथियों को भी क्रान्ति-विरोधी कहकर उसने बाहर निकाल दिया।

यही समय और यही स्थिति थी, जब कि 1935 के अक्टूबर में शेन्सी में माओ चे-तुंग अपनी लालसेना के साथ पहुँचे। उनको जब यह बातें मालूम हुईं, तो उन्होंने नये सिरे से जाँच-पड़ताल करवाई, फिर चाँग चिंग-फू की बदमाशियों का पता लगा। उस पर अभियोग लगाया गया, और पीछे निम्न दर्जे के काम पर लगा दिया गया। ल्यु और उसके साथियों को माओ ने बड़े आदर के साथ बुलाया और उन्हें फिर उनके पहले के स्थान पर रख दिया।

ल्यु के एक साल के अवशिष्ट जीवन को भी यहाँ कह देना अच्छा होगा। अगले साल 1936 ई. में जब माओ चे-तुंग के नेतृत्व में जापान के विरुद्ध लालसेना ने चढ़ाई शुरू की, तो प्रथम सेना का सेनापति ल्यु जू-तान् बनाया गया। उसने दो महीने के भीतर 18 जिलों (शियान्) पर अधिकार किया। जापानी उसके नाम से घबराते थे। उसी साल वह दुश्मन की एक मोर्चेबन्दी पर चढ़ाई करते समय घायल हो गया। सेनापति घायल हो गया, लेकिन उसकी सेना ह्वाँग-हो (पीत नदी) पार हो गई, यह जानकर उसे बड़ा संतोष हुआ। घायल वीर को शेन्सी लाया गया। उसने आखिरी बार उन पहाड़ों को अपनी आँखों से देखा, जिनमें वह जन्मा, पला और बढ़ा था। उस वीर के सम्मान में सोवियत सरकार ने एक जिले का नाम उसके नाम पर रख दिया। बाप के सम्मान में उसके छह वर्ष के बच्चे को अफसर का पद दे उसे सेनापति की तरह रक्खा गया।

एक वर्ष बीतते-बीतते जेचुआन से चू-तेह की सेना भी आकर केन्द्रीय लालसेना से मिल गई।

4. शेन्सी-कान्सू-शान्सी प्रदेश

चीन के उत्तर-पश्चिमी सीमान्त में अवस्थित लेकिन ह्वांग-हो (पीत नदी) की कछार का यह विशाल भूभाग चीनी जाति और उसकी संस्कृति का गहवारा है, इसलिए इसे निरा देहाती इलाका नहीं समझना चाहिए। इस भूमि में सैकड़ों मील तक चारों ओर चरागाह ही चरागाह दिखाई पड़ती थी। आधुनिक सभ्यता के चिह्न रेल, तार या बिजली का वहाँ पता नहीं था। लोग बिजली के चिरागों की जगह चर्बी के चिराग जलाया करते थे। पेकिंग, नानकिंग, शांघाइ, कान्तन् के बाद चांगशा, लूहान आदि का बोलबाला था। प्रतापी थांग-वंश की राजधानी छांगआन् (सिआन्) के इस विशाल भूभाग की किसको पर्वाह थी, वह बड़ी मेहनत के साथ कितनी ही मशीनें ढोकर लाये थे। उन्हें वह कैसे बेकार छोड़ सकते थे ? मशीनों के साथ मिस्त्री और इंजीनियर भी आये थे। थोड़े ही दिनों में यहाँ कारखाने खुलने लगे। पावेन् और होलिनवान् (कान्सू) में कपड़े, वर्दियों, जूते और कागज के कारखाने खुल गये। तिंग-पिंग में कम्बलों के कारखाने चलने लगे। प्रायः हर जिले में ऊनी और सूती कपड़ों के छोटे-छोटे कारखाने खुले। यंग-पिंग की कोयले की खानें चालू कर दी गईं। महादीवाल के नजदीक की नमक की झीलों के किनारे येनू-ची में बड़े भारी पैमाने पर नमक तैयार होने लगा, जो सारे चीनभर में सबसे बढ़िया और सस्ता था। नमक के व्यापार द्वारा मंगोलों से कम्युनिस्टों ने दोस्ती कायम की। यंग-पिंग और एनू-चान् में तेल की खाने थीं, कम्युनिस्टों ने वहाँ पेट्रोल, पराफिन, वेसलिन, मोमबत्ती और दूसरी चीजें तैयार करने के कारखाने

खोल दिये। चीन में यहीं एक मात्र तेल की खानें थीं, जिनका ठेका एक अमेरिकन कम्पनी ने ले रक्खा था। कम्युनिस्टों ने अमेरिकनों को भगाकर उन्हें राष्ट्रीय सम्पत्ति बना दिया। उन्होंने दो नये कुएँ धँसाये, जिनसे तेल का उत्पादन तीन महीने के अन्दर ही 40 सैकड़ा बढ़ गया। अफीम की खेती बन्द करके उसकी जगह कपास की खेती की जाने लगी। बुनाई सीखने के लिए स्कूल खोल दिया गया। सीखनेवाली अधिकतर स्त्रियाँ थीं, जो तीन महीने की शिक्षा पाती थीं। वू-ची-चेन् में गोला-बारूद का कारखाना खोला गया, साथ ही वहाँ कपड़े, वर्दियाँ, जूते-मोजे के कारखाने तथा औषधि के लिए रसायनशाला भी कायम कर दी गई। च्यांग के बमबार जिसमें उसका कुछ बिगाड़ न सकें, इसके लिए गोला-बारूद का कारखाना पहाड़ खोदकर भीतर बनी गुफाओं में रक्खा गया। यहाँ राइफलें, मशीनगनें, मॉर्टर तथा छोटे-बड़े हथियार तैयार होने लगे। आज से डेढ़ हजार वर्ष पहले इसी भूभाग में पहाड़ खोदकर कितनी ही गुफाएँ बनाई गई थीं, लेकिन उनका उद्देश्य था बौद्ध-धर्म की अभिवृद्धि के लिए विहार और मूर्तियों को स्थापित करना। उस समय वे गुफाएँ एक नये युग को लाने के लिए बनाई गई थीं। किन्तु ये नई गुफाएँ मानवता का कहीं अधिक कल्याण करनेवाली थीं। चीन के भिन्न-भिन्न स्थानों से प्रतिभाशाली आदर्शवादी विद्वान, विशेषज्ञ, सलाहकार शेन्सी की तरफ चुम्बक की तरह खिंचते आने लगे।

5. संयुक्त मोर्चा का आह्वान

माओ अपनी सेना लेकर साथियों सहित च्यांग से बचने के लिए शेन्सी की गुफाओं में वास करने नहीं आये थे, बल्कि उनका उद्देश्य था जापानी राहु से देश की रक्षा करना। वह इससे पहले अगस्त में च्यांग और उसकी सरकार के सामने मिलकर जापानियों का मुकाबला करने का प्रस्ताव रख चुके थे, लेकिन च्यांग ने उसका मजाक उड़ाया। पेकिंग के 800 विद्यार्थियों ने माओ के प्रस्ताव का स्वागत किया और विद्यार्थियों तथा जनता ने समर्थन में एक विराट प्रदर्शन किया। जापान के साथ सारे चीन को मिलकर संघर्ष करने और उसके सफल होने पर पूरा विश्वास रखते माओ ने इस सम्बन्ध में अपने विचारों को अमेरिकन पत्रकार निम वेल्स के सामने निम्न रूप से प्रकट किया था :

" चीनी क्रान्ति के स्वरूप को समझने के लिए चीनी समाज के स्वरूप को समझ लेना जरूरी है।

" चीनी समाज के स्वरूप को एक वाक्य में व्यक्त किया जा सकता है : वह एक अर्ध-सामन्तवादी अर्ध-औपनिवेशिक समाज है। यहाँ विभिन्न आर्थिक व्यवस्थाएँ प्रचलित हैं, किंतु मुख्यतया ग्राम्य अर्थ-नीति पर आधारित सामन्तवादी छोटी तिजारती व्यवस्था प्रधान है। छोटी तिजारती अर्थनीति से मेरा मतलब स्वतः पर्याप्त अर्थनीति की उस अवस्था से है, जो पूँजीवाद से ठीक पहले से लेकर बहुत पीछे की अवस्थाओं तक जाती है जब कि चीजों का उत्पादन जिन्स की शकल में बेचने के लिए नहीं, बल्कि अपने इस्तेमाल के लिए होता है।

" चीन पूँजीवादी अर्थनीति की अवस्था में भी है। इस बात से इन्कार करना गलत होगा कि चीन में पूँजीवादी अर्थनीति भी प्रचलित है। इस पूँजीवादी अर्थनीति के तीन अंग हैं : (1) व्यक्तिगत पूँजीपति, (2) राष्ट्रीय सरकार, (3) साम्राज्यवादी। यह तीनों तत्त्व मिलकर चीनी अर्थनीति का पूँजीवादी ढाँचा खड़ा करते हैं।

" यह पूँजीवादी व्यवस्था चीन की अर्थनीति में एक नई व्यवस्था है, जो चीन की सामन्तवादी आर्थिक व्यवस्था से टकराती है। इसकी शक्ति बड़े-बड़े शहरों, गमनागमन के साधनों, उद्योगों, खानों आदि में है। फिर भी चीन की अर्थनीति में पूँजीवाद का प्रधान स्थान नहीं है, क्योंकि वह साम्राज्यवाद से दबा है, जो व्यक्तिगत और राष्ट्रीय-सरकारी पूँजीवाद के और अधिक विकास में बाधाएँ खड़ा करता है। उत्पादन के कई क्षेत्रों में चीनी तत्त्वों के मुकाबले साम्राज्यवादी तत्त्व प्रधान हैं। राष्ट्रीय सरकार के कारोबारों–रेल तथा दूसरे उद्योग–से भी प्राथमिक पूँजी साम्राज्यवादियों से आती है। इस सबके अतिरिक्त साम्राज्यवादी चीन की चुंगी पर भी रोक लगाकर उसे सीमित रखते हैं।

" यदि हम सारे चीन की आर्थिक व्यवस्था को लें तो उसमें सामन्तवादी आर्थिक व्यवस्था की प्रधानता

है, पूँजीवादी विकास के दृष्टिकोण से औपनिवेशिक अर्थनीति प्रधान है; इसलिए साम्राज्यवादियों और व्यक्तिगत पूँजी के राजनीतिक सम्बन्धों के स्वरूप को औपनिवेशिक अर्थनीति निर्धारित करती है, जैसे चुंगी का नियन्त्रण।

" ऊपर की बातों से हम इसी परिणाम पर पहुँचते हैं कि चीनी समाज अर्ध-सामन्तवादी और अर्ध-औपनिवेशिक समाज है।

" चूँकि यह चीनी समाज की विशेषताएँ हैं, इसलिए चीनी क्रान्ति का स्वरूप क्या होगा, यह समझना बड़ा आसान हो जाता है। यह एक साम्राज्यवाद सामन्तवाद विरोधी जनवादी राष्ट्रीय क्रान्ति होगी।

" चीन से सामन्तवादी और साम्राज्यवादी शक्तियों को उखाड़ फेंकने के लिए चीनियों को लम्बा संघर्ष करना पड़ेगा : इन कामों के पूरे हो जाने पर निस्सन्देह पूँजीवाद के विकास के लिए रास्ता खुल जायगा। किन्तु साथ ही हमारा यह भी कहना है : सम्भव है कि चीनी क्रान्ति पूँजीवादी विकास काल को छोड़ जाय और जन-क्रान्ति के बाद वह समाजवादी क्रान्ति की ओर मुड़ जाय।

" अब सवाल उठता है—चीनी क्रान्ति की चालक शक्ति का स्वरूप क्या होगा ? चीनी क्रान्ति की मुख्य शक्तियाँ हैं सर्वहारा, किसान और टुटपुँजिया वर्ग। कुछ हालतों में राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग के भी क्रान्ति में भाग लेने की सम्भावना है। किन्हीं दूसरी परिस्थितियों में वह ढुलमुलायेगा। चीनी साम्राज्यवादी और सामन्तवादी चीनी क्रान्ति के शत्रु हैं। राष्ट्रीय पूँजीपति कभी क्रान्ति के शत्रु हैं, और कभी नहीं।

" चीनी क्रान्ति का नेता सर्वहारा है। पूँजीवादी क्रान्ति में पूँजीपति वर्ग के बजाय सर्वहारा-वर्ग क्यों नेतृत्व करेगा ?··· चूँकि चीन अर्ध-औपनिवेशिक अवस्था में है, इसलिए तुलनात्मक दृष्टि से सर्वहारा की शक्ति पूँजीपति वर्ग से अधिक है। इसका कारण यह है कि चीन के बड़े-बड़े उद्योगों पर हमारे राष्ट्रीय पूँजीपतियों के बजाय साम्राज्यवादियों का नियन्त्रण है। इन बड़े-बड़े साम्राज्यवादी उद्योगों के मजदूरों और राष्ट्रीय सरकार तथा व्यक्तिगत पूँजीपतियों के उद्योगों के मजदूरों की सम्मिलित शक्ति कमजोर है, अतः सर्वहारा की शक्ति पूँजीपति वर्ग के स्थान पर नेतृत्व की बागडोर अपने हाथों में लेने के लिए पर्याप्त है।

" थोड़े शब्दों में हम कह सकते हैं कि चीन में सर्वहारा और कम्युनिस्ट शक्तियाँ दोनों मिलकर संख्या में बहुत कम होते भी, सबसे अधिक शक्तिशाली और क्रियाशील हैं।

" सौभाग्यवश चीनी सर्वहारा के पास क्रान्ति में एक बहुत शक्तिशाली मित्र है—किसान। चीन की कुल जनसंख्या में किसान 80 प्रतिशत से भी अधिक हैं और चीनी सामन्तशाहों तथा साम्राज्यवादियों के दोहरे बोझ के कारण उनका क्रान्तिकारी मनोबल बहुत तगड़ा है !···

" किसानों के सामने पहली समस्या है जमीन पाने की और दूसरी समस्या है साम्राज्यवादी शोषण के अन्त करने की। किसानों की समस्याएँ पूँजीपति-वर्ग द्वारा हल नहीं हो सकतीं। चीनी किसानों की समस्याएँ सर्वहारा-वर्ग के नेतृत्व में सामन्तवाद और साम्राज्यवाद से डटकर संघर्ष लेने से ही हल हो सकती हैं। इसलिए हमारा कहना है कि किसान चीनी सर्वहारा के मजबूत और दृढ़ मित्र हैं।

" क्रान्ति की तीसरी वाहक शक्ति है शहरों का टुटपुँजिया (निम्नमध्यम) वर्ग। इसमें विद्यार्थी, सांस्कृतिक बुद्धिजीवी, छोटे उत्पादक, छोटे सौदागर और अनेक स्वतंत्र पेशेवाले शामिल हैं। इन शक्तियों का बहुत बड़ा भाग साम्राज्यवाद-सामन्तवाद-विरोधी क्रान्ति का साथी बन खड़ा हो सकता है।

" चीन के राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग की एक विशेष स्थिति है। वे क्रान्ति के शत्रु भी बन सकते हैं और उसके अंग भी। कभी वे ढुलमुलाते हैं और साम्राज्यवाद तथा उस जैसी अन्य प्रतिक्रियावादी ताकतों के साथ होते हैं। कभी वे सामन्तों के साथ खड़े हो जाते हैं और कभी टुटपुँजियों के साथ। कारण यह है कि अधिकांश पूँजीपति अर्ध-जमींदार और साम्राज्यवादी पूँजी पर निर्भर रहनेवाले पूँजी-एजेंट हैं। इन पूँजीपतियों को हम राष्ट्रीय पूँजीपतियों में शामिल नहीं करते। चीन के राष्ट्रीय पूँजीपतियों के पास अधिकतर अपनी पूँजी है, किन्तु इनका साम्राज्यवादियों से और भूमि से विशेष सम्बन्ध है। जो साम्राज्यवादी पूँजी पर निर्भर करते हैं, उन्हें हम कम्प्रेडोर कहते या कहीं जमींदारों में गिरते हैं। कम्प्रेडोर पूँजीपति और सामन्तवादी साम्राज्यवादियों पर निर्भर है, इसलिए उसका स्थान क्रान्ति के मुख्य शत्रुओं में है।

" नानकिंग सरकार का स्वरूप है जमींदार पूँजीपति और कम्प्रेडोर-पूँजीपतियों का गठबन्धन।

" साम्राज्यवाद के चीन पर सीधा अधिकार कर लेने पर यदि उसके कारण जमींदारों और कम्प्रेडोर-पूँजीपतियों के अपने स्वार्थों पर आँच आने की सम्भावना उठी, तो सम्भव है, वे साम्राज्यवाद-विरोधी संघर्ष का विरोध न करें या किसी विशेष स्थिति में उसका साघ भी दें–हाँ, उन लोगों को छोड़कर जिनके स्वार्थों पर कि इस साम्राज्यवादी आक्रमण से आँच नहीं आती या जिनके स्वार्थ आक्रमणकारी से मिले हुए हैं।

" ऊपर की बात से स्पष्ट हो जाता है कि हमारा साम्राज्यवाद-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा वास्तव में राष्ट्रीय है–अर्थात् उसमें देशद्रोहियों को छोड़कर बाकी सब आ सकते हैं। जन-मोर्चे की तुलना में हमारे राष्ट्रीय मोर्चे की यह विशेषता है।

" संयुक्त मोर्चे की दूसरी विशेषता यह है कि उसकी पहल सर्वहारा की राजनीतिक पार्टी ने की है और आगे चलकर केवल सर्वहारा की राजनीतिक पार्टी के नेतृत्व में ही उस मोर्चे का संगठन हो सकता है और उसके काम पूरे किये जा सकते हैं। यह इसलिए कि चीन में केवल सर्वहारा ही सजग और पक्की तौर से क्रान्तिकारी शक्ति है। इस काम के पूरा करने की जिम्मेदारी पूँजीपति-वर्ग नहीं उठा सकता।

" चीन की आर्थिक और राजनीतिक हालतों के कारण यह सम्भव है कि साम्राज्यवाद-विरोधी, सामन्तवादी-विरोधी, पूँजीवादी-जनवादी-राष्ट्रीय क्रान्ति के कुछ हद तक सफल हो जाने के बाद जनवादी क्रान्ति एक ऐसी अवस्था पर पहुँच जाय, जब वह अपनी जीत को समाजवादी क्रान्ति में बदलकर पूरा करे।...

" क्रान्ति की पहली अवस्था सर्वहारा, किसान और टुटपुँजिया-वर्ग की पूँजीवादी जनवादी क्रान्ति की अवस्था है। अपने संक्रमण-काल में यह किसानों, मजदूरों की जनवादी लोकशाही की अवस्था से गुजरेगी। "

13

सियान्-कांड (1936 ई.)

माओ चे-तुंग अपने दलबल सहित निकलकर दूर चीन के पश्चिमोत्तर भूभाग में चले गये। च्यांग काइ-शेक ने हाथ मलते घोषित किया था : यदि कोई माओ का सिर काटकर ला दे, तो उसे ढाई लाख डालर इनाम मिलेगा। लेकिन, माओ का सिर इतना सस्ता नहीं था। वह एक ऐसा सूर्य था, जिसके किनारे अनगिनत चीन के भव्य ग्रह घूमते हुए उसकी रक्षा कर रहे थे। वह सूर्य अपने सभी साथियों के साथ मिलकर काम में हाथ बँटा रहा था। वह मजूरों में मजूर था, विद्वानों में विद्वान, साहित्यकारों में साहित्यकार–माओ अच्छे कवि हैं, लेकिन उनकी कविताएँ उनके संकोची स्वभाव के कारण प्रकाश में नहीं आने पातीं : अध्यक्ष माओ की चीज समझकर कहीं लोग उसका जरूरत से अधिक मूल्यांकन न करने लगें। नई जगह में आकर अब सोवियत जनता अपने नेता को माओ चे-तुंग न कहकर माओ चू-शी (माओ अध्यक्ष) के नाम से ही अधिक पुकारती थी। आज भी हरेक चीनी इसी नाम से उन्हें याद करता है। शेन्सी में पहुँचने के बाद और कामों के साथ माओ चू-शी ने जमीन-व्यवस्था-सम्बन्धी सुधार में हाथ लगा दिया। बड़े जमींदारों की जमीन गरीब किसानों या बेखेतवाले लोगों में बाँट दी गई। बड़े जमींदारों और बड़े व्यापारियों को छोड़कर बाकी सब स्त्री-पुरुषों को वोट देने का अधिकार दिया। हाँ, सोवियत (पंचायत) के पंचों में गरीब किसानों, खेत-मजूरों तथा दूसरे कमकरों को जिसमें ज्यादा स्थान मिले, इसका प्रयत्न किया गया था। लगान और कर की भी व्यवस्था ऐसी की गई कि जिससे बोझ धनियों पर अधिक और गरीबों पर कम पड़े। इसके कारण बड़े-बड़े जमींदार भागकर च्यांग काइ-शेक के राज्य में चले गये, और पूँजीवादियों ने अपने चिर-अभ्यस्त कायदे के अनुसार दुनिया में हल्ला करना शुरू किया कि कम्युनिस्ट-राक्षस सभी लोगों का घर-बार छुड़ाकर देश से भगा रहे हैं। लेकिन, अब दुनिया दो दलों में बँट गई है, और तीसरा दल हो ही नहीं सकता, तो ऐसे प्रोपेगेंडा के शिकार होनेवाले भी वही हो सकते हैं, जो

मूढ़ या फरेबी हैं। पश्चिमोत्तर भूभाग में जिसमें खाने-पीने की कोई तकलीफ न रह जाय, इसके लिए वहाँ अधिक अन्न उपजाने के लिए मैत्रीपूर्ण होड़ होने लगी, अधिक परिश्रम करनेवाले पुरुषों को 'श्रमवीर' की गौरवपूर्ण उपाधि दी जाने लगी। श्रमवीरों का नाम बात की बात में सारे लाल चीन में फैलने लगा। अभी यह लाल चीन केवल 90 लाख की आबादी का था। लेकिन, तुलसी के कथानुसार —

"रविमंडल देखत लघु लागा। उदय तासु त्रिभुवन तम भागा।"

माओ को भी गुफा की दो कोठरियाँ मिली थीं, जिसकी दीवालों पर चारों तरफ नक्शे टँगे हुए थे। वहाँ कोई कीमती चीज अगर थी, तो मच्छरदानी। माओ को च्यांग काई-शेक के हाथ में जैसे नहीं पड़ना था, वैसे ही मलेरिया के मच्छरों से भी बचना था। उनकी कीमत चीन के लिए और इतिहास के लिए अनमोल थी। उनकी पत्नी हो चे-निये नई लालभूमि में आकर अब पार्टी-संगठन में लग गई थीं। एक दिन माओ ने अपनी पत्नी को पहले से आकर लेटी देखकर पूछा–"तू आज मुझसे भी पहले आ गई ?"

"आज से मेरी सगर्भावस्था की छुट्टी शुरू हो गई है।"

लालचीन में स्त्री भी पुरुष के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर काम करती थी, दोनों के पद और वेतन में कोई भेदभाव नहीं रक्खा गया था, लेकिन गर्भिणी स्त्री को प्रसव-दिन के प्रायः दो महीने पहले से वेतन-सहित छुट्टी मिल जाती थी। हो ने काम करने की जिद करते हल्का-फुल्का काम ले रक्खा था, लेकिन चीनी कम्युनिस्टों के अनुसार अमेरिकन डाक्टर ने आज हो चे-निये को काम करने की इजाजत नहीं दी–"तुम्हें पूर्ण आराम करना होगा।" उक्त अमेरिकन डाक्टर को अब यहाँ चीनी नाम से दाक़र मा कहा जाता था। इसी गुफाओं की नगरी में जैसे माओ के लिए दो कोठरियाँ मिली थीं, उसी तरह अस्पताल के लिए भी कोठरियाँ थीं। रास्ते के कितने ही घायल अब भी इन गुफा-कोठरियों में देखे जा सकते थे। माओ क्या सचमुच ही कर्ण-कवच पहने थे, जो इतनी गोलियों की बौछार में उनको एक भी गोली नहीं लगी ? च्यांग और उसके आदमी कितनी बार माओ को मरा घोषित कर चुके थे, कितनी बार अखबारों में यह भी लिख चुके थे कि कम्युनिस्ट भगोड़े एक लाश को साथ-साथ ढोये लिये जा रहे हैं, और यह लाश माओ की है। गाँव के सीधे-सादे लोग तो विश्वास करते थे कि माओ ने दैवी कवच पहने जन्म लिया है, वह दिव्य पुरुष है।

1. पारिवारिक जीवन

हो चे-निये अपने दोनों बच्चों को रास्ते में एक सहृदय महिला को दे आई थीं। बाहर से काम से लौटने के बाद माओ ने पत्नी की सगर्भावस्था की छुट्टी की बात जानकर नहाने-धोने की तैयारी करी। फिर पत्नी जब चीनी कायदे के अनुसार दूध-चीनी की चाय प्याले में लेकर आई, तो उन्होंने चे-निये से पूछा–"बच्चों की क्या खबर है ?" लेकिन पत्नी भी उतनी ही उदारहृदया है। चे-निये ने जवाब दिया : "फिर वही बात : हमारे जैसे कितने माँ-बाप हैं, हमारे बालक तो सही-सलामत होंगे, लेकिन हमारे देश के असंख्य बालकों की क्या हालत है ?"

माओ ने माता के हृदय का ख्याल करके बात पूछी थी, लेकिन उत्तर पाकर अपने देश के लाखों बालकों, अनाथ बालकों, दानव च्यांग काइ-शेक के निष्ठुर प्रहार से विपद्ग्रस्त बालकों का ध्यान करके उनका मन खिन्न हो गया। माओ और उनकी पत्नी उन सभी कष्टों और आफतों में से जाने के लिए तैयार थे, जिनसे कि उनके लाखों साथी गुजर रहे थे।

2. जापान का प्रतिरोध करो

नवम्बर, 1935 में केन्द्रीय लालसेना ने और उत्तरी शेन्सी की लाल-टुकड़ियों ने, और हूपे, होनान तथा अन्-ह्वेइ प्रदेशों से उत्तर में चली आईं लाल-टुकड़ियों ने मिलकर उत्तरी शेन्सी के क्रान्तिकारी अड्डे के खिलाफ कुओमिन्तांगी हमले को कुचल दिया, जिससे उत्तरी शेन्सी के सैनिक अड्डे बहुत मजबूत हो गये और साथ ही लालसेना की धाक जम गई। उत्तरी चीन पर जापानी हमलों के कारण आगे चलकर '9 दिसम्बर-आन्दोलन' समूचे देश में

फैल गया। इसका आरम्भ 9 दिसम्बर, 1935 को पेकिंग के छात्रों के 'जापान का प्रतिरोध करो और चीन को बचाओ' के प्रदर्शन से हुआ। इस आन्दोलन द्वारा कम्युनिस्ट पार्टी के नारे 'गृह-युद्ध बन्द करो. जापान का मुकाबिला करने के लिए एकता कायम करो' का बहुत व्यापक रूप से समर्थन होने लगा।

(1) **राजनीतिक ब्यूरो के निर्णय** (1935 ई.)–तत्कालीन राजनीतिक परिस्थिति को देखते हुए आगे के अपने कार्यक्रम को ठीक करने के लिए पार्टी की केन्द्रीय कमेटी के राजनीतिक ब्यूरो की बैठक 25 दिसम्बर को हुई। माओ ने 27 दिसम्बर को 'जापानी साम्राज्यवाद के विरुद्ध लड़ने की नीति' के शीर्षक से एक रिपोर्ट कान्फरेंस में पेश की, जिसमें इस बात की सम्भावना का जिक्र किया कि राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग का वामपक्षी तत्त्व जापानी साम्राज्यवाद के खिलाफ होनेवाले संघर्ष में शामिल हो सकता है, उसका बाकी हिस्सा ढुलमुलपन छोड़कर तटस्थ रह सकता है, कुओ-मिन्-ताँग के भीतर फूट पड़ सकती है, एवं उसके भीतरवाले अंग्रेज-अमेरिकी-पूँजी के पत्तलचट दलालों का गुट कुछ खास परिस्थितियों में जापान के खिलाफ होनेवाले संघर्ष में भाग लेने के लिए मजबूर हो सकता है।" माओ ने महान्-अभियान के बारे में कहने के बाद पार्टी के सामने के कामों के बारे में कहा :

"पार्टी के सामने काम है लालसेना की गतिविधि को समूचे देश के मजूरों, किसानों, छात्रों, निम्न पूँजीपति-वर्ग की तमाम गतिविधियों और कार्यकलापों के साथ एकाबद्ध करना और इस एकाबद्ध गतिविधि के बीच से संयुक्त राष्ट्रीय क्रान्तिकारी मोर्चे का निर्माण करना।"

माओ ने 'वामपक्षी' दलीलों को रद्द करते हुए बतलाया कि मजूरों और किसानों के गणराज्य की जगह हमें जनता के गणराज्य को कायम करना है, और राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग के प्रति आर्थिक और राजनीतिक दोनों ही दृष्टियों से ठीक नीति का प्रतिपादन करना है। उन्होंने कहा कि पूँजीवादी जनवादी क्रान्ति के काल में, जनता का गणराज्य राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग के उन सदस्यों की और उनके उद्योग और कारोबार की रक्षा करेगा, जो साम्राज्यवाद और उसके गुर्गों की नहीं करेंगे। साथ ही उन्होंने यह भी बतलाया कि जनता के गणराज्य का मुख्य आधार मजूर-किसान होंगे। वह ऐसा गणराज्य होगा, जो साम्राज्यवाद और सामन्तवाद के विरोध करनेवाले सभी स्तरों के लोगों के हितों का प्रतिनिधित्व करेगा। उन्होंने तत्कालीन संयुक्त मोर्चे तथा 1924-27 ई. के संयुक्त मोर्चे का अन्तर बतलाते हुए कहा कि वर्तमान संयुक्त मोर्चे में पहले से कहीं अधिक दृढ़ और शक्तिशाली कम्युनिस्ट पार्टी और क्रान्तिकारी सेना शामिल हैं। दोनों कालों के भेदों की तुलना करते हुए साथी माओ ने कहा :

"लेकिन, आज स्थिति बदल गई है। केवल इतना ही नहीं कि आज एक दृढ़ और शक्तिशाली कम्युनिस्ट पार्टी तथा एक मजबूत लालसेना मौजूद है, बल्कि यह भी कि आज लालसेना के पास अपने अड्डे भी मौजूद हैं। न केवल यही कि कम्युनिस्ट पार्टी और लालसेना वर्तमान काल में राष्ट्रीय जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे की पहल करनेवाली शक्ति है, बल्कि लाजिमी तौर से भविष्य में भी बननेवाली जापान-विरोधी सरकार और सेना का वह मजबूत आधार-स्तम्भ बन जायगी; इस प्रकार जापान-विरोधी राष्ट्रीय मोर्चे को छिन्न-भिन्न करने की जापानी साम्राज्यवादियों और च्यांग काइ-शेक की साजिशों को अन्तिम रूप से धूल में मिला वह पत्थर-लकीर बन जायगी।"

(2) **प्रचार-कार्य**–कम्युनिस्ट किसी काम को भी आधे दिल से करना नहीं जानते, और न उस समय की स्थिति में कर सकते थे। वह सारे देश को जापान-विरोधी भावनाओं से भर देना चाहते थे, और इसके लिए सभी साधनों को इस्तेमाल कर रहे थे। उन्होंने पहले ही से रंगमंच को एक सजीव और सुन्दर कला के रूप में अपने प्रचार के लिए साधन बनाया था। अब 'जापान-विरोधी लोक-नाट्य-संघ' इस दिशा में बहुत काम कर रहा था। यह नाट्य-संघ सचमुच ही जनता का नाट्स-संघ था। इसमें खच्चरों और घोड़ों के साईस, बोझा ढोनेवाले, जूता सीनेवाले, कारखानों की लड़कियाँ, डाकखानों और सहयोग-समितियों के कर्मी, बढ़ई, लोहार–पाओ-चेन् के बालवृद्ध सभी स्त्री-पुरुष नाटक देखने आते। यहाँ के लाल सैनिक विद्यालय के विद्यार्थियों के सिर पर च्यांग काइ-शेक ने 20 लाख डालर इनाम घोषित कर रक्खा था। माओ तथा दूसरे सोवियत नेताओं के सिर पर

जो इनाम घोषित थे, उन्हें मिलाने पर तो वह करोड़ों तक पहुँचता। तो भी वहाँ नाट्यघर के पास कोई सशस्त्र पहरेदार नहीं था। नाट्यशाला में माओ पहुँचे। किसी ने उनकी तरफ खास ध्यान नहीं दिया। लेकिन, जब नाटक शुरू होने को हुआ, तो दर्शकों में से आवाज आने लगी : "माओ चू-शी और लिन्-पियाओ मिलकर गीत गायें।" लेकिन, उससे पहले ही मंच का पहला पर्दा उठ गया। लाल रंगमंच बहुत सीधा-सादा था, इतना सीधा-सादा कि उसे गाँवों में भी आसानी से तैयार किया जा सके। लालसेना की हरेक पलटन में नाट्यमंडली होनी जरूरी थी। हरेक जिले में अपनी-अपनी सांस्कृतिक मंडलियाँ कायम हो गई थीं। सैनिकों और गाँववालों में जिस स्त्री-पुरुष में प्रतिभा देखी जाती, उन्हें क्यांग-सी से आये चतुर कलाकारों की देखरेख में शिक्षा दी जाती। क्यांग-सी में 1921 ई. में नाट्य-आन्दोलन आरम्भ हुआ था। जू-शिन (लाल राजधानी) में गोर्की-नाट्यशाला स्थापित की गई थी, जिसमें हजार विद्यार्थी थे, जिनसे साठ मंडलियाँ तैयार की गई थीं। पाओ-आन् (वर्तमान लाल राजधानी) के नाट्य-संघ की मुख्य संचालिका कुमारी वाई कुंग-ची क्यांग-सी से महान्-अभियान के साथ सारी मुसीबतों को बर्दाश्त करते यहाँ पहुँची थीं। वाई ने यहाँ आते ही अपने काम को शुरू कर दिया और थोड़े ही दिनों में, 'जापान-विरोधी लोक-नाट्य-संघ' चमक उठा। दूर-दूर से लोग उसे देखने के लिए आते। यहाँ तक कि कुओ-मिन्-तांग के सिपाही भी बाज वक्त अपने अफसरों से नजर बचाकर अभिनय देखने चले आते।

नाटक शुरू हुआ : मंचूरिया पर आक्रमण करनेवाली जापानी सेना का एक सिपाही एक किसान कन्या से छेड़खानी करता है। इतने ही में जापानी फेरीवाला आकर लड़की के भाई को अफीम खरीदने के लिए कह रहा है। भाई के इन्कार करने पर पहला सैनिक उसका गला पकड़कर धमका रहा है–"हरामखोर, अफीम लेने से इन्कार करता है, 'मंचु-कुओ' के डाक्टरी-कानून को भंग करना चाहता है। अफीम खरीद ले, ले जा।" यह कहकर फिर वह उसे मारने लगता और कहता जाता है, "तू जरूर जापान-विरोधी डाकू है, तुझे मौत की सजा होनी चाहिए।" और तुरन्त उसे फाँसी दे दी जाती है। नाटक के दूसरे अंक में दिखलाया गया था : एक जापानी बाजार में माल खरीदता है। चीनी दुकानदार दाम माँगता है। इस पर जापानी जवाब देता है–"तू हमसे दाम माँग रहा है ? च्यांग काइ-शेक ने तो हमसे एक भी कौड़ी लिये बिना हमें जैहोल, चहार, तांग-कूकी सन्धि, हू-मात्सू का करारनामा, और हो पेइ-चहार परिषद् प्रदान कर दी। तू साला सूअर, पैसा माँग रहा है ? डाकू !"

लोग जापानियों का जुल्म सहते-सहते जागे। जो भी हाथ में आया, उसे लेकर वह जापानियों पर टूट पड़े–'जापानी राक्षस को खतम करो।' 'मरते दम तक लड़ो, लेकिन दुश्मन को मारकर मरो' आदि नारे लगने लगे। नाटक के पात्रों के साथ-साथ दर्शकों ने भी नारा लगाया। दर्शक और अभिनेता भेद मिट गया। फिर यांग-फू नृत्य शुरू हुआ। यह शेन्सी का सीधा-सादा लोकनृत्य था, जो लाल कलाकारों के हाथ में पड़कर चमक उठा। फिर राष्ट्रगायक निये इर्हे द्वारा रचित 'मंचूरिया के स्वयंसेवकों का कूच' गीत गाया जाने लगा।

इस प्रकार नई लाल राजधानी और लाल चीन के दूसरे स्थानों में अभिनयों, गीतों द्वारा आक्रमणकारी जापान के विरुद्ध लोहा लेने के लिए जबर्दस्त प्रचार किया जा रहा था। ऐसे ही एक अभिनय में उस दिन माओ, लिन् पियाओ और दूसरे नेता मौजूद थे, जब कि किसी ने आकर उन्हें खबर दे दी कि सियान में च्यांग काइ-शेक गिरफ्तार हो गया।

3. सियान-कांड से पूर्व

मंचूरिया का तानाशाह चांग सो-लिन् शक्तिशाली युद्धपति, प्रदेशपति बनकर तीन करोड़ के मंचूरिया-प्रदेश का सर्वेसर्वा बन गया। जिस समय कुओ-मिन्-तांग की राष्ट्रीय सेना ने चीन को एकताबद्ध करने के लिए उत्तर की ओर अभियान किया था–यह 1927 में कम्युनिस्टों से च्यांग के उलझने से पहले की बात है–उस समय च्यांग सो-लिन् को दबाना सबसे मुश्किल जान पड़ा, और रेल की ट्रेन में धोखे से उसे मारने में सफल होने के बाद ही मंचूरिया पर राष्ट्रीय झंडा गाड़ा जा सका। उसके लड़के च्यांग स्यो-लियांग को बाप के स्थान पर राज्यपाल नियुक्त किया गया, जो कि अपने बाप से अधिक उदार तथा आधुनिक विचारोंवाला था। खेलकूद

का भी उसे शौक था। अफीम तथा स्त्री-लंपटता तो सामन्तों के लिए एक स्वाभाविक चीज थी। 1931 ई. में जापान ने जब मंचूरिया के ऊपर आक्रमण कर उसे ले लिया, उस समय टाईफाइड से बीमार हो पेकिंग के अस्पताल में पड़े रहने के कारण वह बच गया। च्यांग काइ-शेक ने उसे अपना छोटा भाई बनाया था, लेकिन छोटे भाई के गुहार करते रहने पर भी बड़े भाई ने मंचूरिया के बचाने के लिए कुछ नहीं किया, और इसकी जगह उसने मंचूरिया का मामला राष्ट्रसंघ में पेश कर जापान को पराजित करना चाहा।

मंचूरिया की फौज 'तुंग-पी' (उत्तर-पूर्वी) सेना के नाम से पुकारी जाती थी, जिसे जापानी आक्रमण के बाद अपने देश से निकल अब महादीवाल के नजदीक भाग आना पड़ा था। उसे आशा थी कि हमारा तरुण-मार्शल आकर जापानियों को देश से भगा देगा और हम फिर अपने देश में लौट जाएँगे। लेकिन च्यांग तो जापान से अधिक अपने देश के कम्युनिस्टों को अपना शत्रु मानता था। जापान ने मंचूरिया से आगे बढ़कर जेहोलक भी ले लिया। च्यांग स्यो-लियांग उदास हो यूरोप चला गया। बाप के जमा किये हुए करोड़ों रुपये उसके पास थे। उसने चाहा कि यूरोप की शक्तियों से कुछ सहायता प्राप्त करें। वह मुसोलिनी, हिटलर और इंग्लैंड के प्रधानमन्त्री रैमजे मेकडानल्ड से भी मिला। रूस जाने की बड़ी इच्छा थी, लेकिन किसी गलती के कारण वह वहाँ नहीं पहुँच सका। तरुण-मार्शल को पैतृक तौर से अफीम की आदत लग गई थी, लेकिन जापान की इतनी चपत खाने के बाद उसने यूरोप में पहुँचकर उसे छोड़ दिया और अपने शोहदे साथियों को भी दूर कर दिया। 1934 ई. में वह चीन लौटा, तो लोगों ने उसके शरीर को ही स्वस्थ और मजबूत नहीं देखा, बल्कि उसके दिमाग में भी परिवर्तन था। लौटते ही उसने तुंग-पी सेना की बागडोर सँभाली और मंचूरिया के उद्धार के लिए प्रयत्न करने की ठानी।

(1) **तुंग-पी सेना का आक्रमण**—च्यांग काइ-शेक ने तरुण-मार्शल को दिलासा देते हुए कहा कि अपने कलेजे में घुसे कम्युनिस्ट बर्छे को बस उखाड़ फेंकने दो, फिर हम सारी शक्ति लेकर जापान के ऊपर टूट पड़ेंगे। बड़े भैया की बात मानकर तरुण-मार्शल अपनी 1 लाख 40 हजार सेना ले कम्युनिस्टों के ऊपर चढ़ा। कम्युनिस्टों से लड़ते समय धीरे-धीरे उसे मालूम होने लगा कि कम्युनिस्ट न डाकू हैं, न निर्बल। 1935 ई. में जब लालसेना ने तुंग-पी को दो बार बुरी तरह से हराया और उसके बहुत-से सैनिक लालसेना से जा मिले, तो उसकी आँखें खुलीं। उसे डर लगने लगा कि कहीं तुंग-पी को मंचूरिया लौटना कभी नसीब ही न हो और लालसेना उसे यहीं खतम न कर दे।

कम्युनिस्टों ने अपनी नीति के अनुसार तुंग-पी के बन्दी सैनिकों को अपनी बातें बतलाने का प्रयत्न किया और फिर उन्हें मुक्त रक्खा। ये सैनिक लौटकर सियान् आये, जहाँ पर कि उस समय तरुण-मार्शल का अड्डा था। तरुण-मार्शल ने उनसे कम्युनिस्टों के बारे में पूछा। उन्होंने सोवियत इलाकों की सुख-समृद्धि की बातें बतलाईं, लालसेना के अनुशासन और शक्ति के बारे में लेखा-जोखा दिया और साथ ही यह भी कहा कि वह संयुक्त मोर्चा बनाकर हमारे दुश्मन जापानियों से लड़ने के लिए तैयार हो रहे हैं : "चीनी चीनी से क्यों लड़े ! लड़ना हो तो मिलकर जापानियों से लड़ो और मंचूरिया को लौटा लो।" बेचारे तुंग-पी सैनिक पाँच-पाँच वर्ष से अपना देश छोड़े मारे-मारे फिर रहे थे। तरुण-मार्शल भी च्यांग काइ-शेक से निराश हो चला था, कम्युनिस्टों के जापान-विरोधी नारे में उसे आशा की किरण दिखलाई पड़ने लगी। च्यांग काइ-शेक हू पेइ, मंचूरिया और जेहोल ही नहीं, हो पेइ, चहार तथा करीब-करीब सारे उत्तरी चीन को जापान को भेंट चढ़ाने के लिए तैयार दिखाई पड़ रहा था। तरुण-मार्शल का झुकाव अब धीरे-धीरे कम्युनिस्टों की ओर हुआ। वह उनका मित्र बन गया। उनके साथ छिपे तौर से उसने सुलह भी कर ली। तुंग-पी तथा लालसेना में लड़ाई बन्द हो गई। लालसेना के अफसर तुंग-पी सेना की वर्दी पहनकर तरुण-मार्शल के सैनिक विद्यालयों में गये। उन्होंने वहाँ के अफसरों को अपनी युद्धकला साम्राज्य-विरोधी मोर्चे की राजनीतिक नीति को सिखाया। मंचूरिया के सम्बन्ध में आँकड़ों को जमा करके बतलाया कि उसे खो देने से चीन की कितनी हानि हुई है।

(2) **च्यांग काइ-शेक**—च्यांग काइ-शेक चीन का राहु बनकर पैदा हुआ। अपने देशभाइयों के खून से इतना हाथ शायद ही किसी ने रँगा हो। वैयक्तिक और वर्गगत स्वार्थ आदमियों को कहाँ तक पतित कर सकता है,

च्यांग इसका अच्छा उदाहरण है। उसका जन्म दक्षिणी चीन के चेकियांग प्रदेश के फेन्-हुआ कस्बे में 1887 (माओ चे-तुंग से सात वर्ष पहले) में हुआ था। च्यांग का पिता बनिया था। वह अपने बेटे को नौ वर्ष की उम्र में छोड़कर ही मर गया। माँ ने सिलाई-कढ़ाई करके बच्चे को पढ़ाया-लिखाया। युद्धपति युवान् शि-काइ ने अपना एक सैनिक स्कूल पाओ-तिंग में खोल रखा था। च्यांग उसमें दाखिल हो गया। यद्यपि वह मुँह से अपने को डा. सुन् यात-सेन् का शिष्य कहता है, लेकिन वह वस्तुतः स्वार्थी तानाशाह युवान् शि-काइ का चेला था। उसी से उसने स्वार्थ-सिद्धि के लिए हरेक कल-बल-छल करना सीखा और उसी से धन और शक्ति बटोरने की चरम सीमा की महत्त्वाकांक्षा उसमें पैदा हुई। लेकिन वह जानता था कि युवान् शि-काइ जैसों का जमाना गुजर गया है, अब राष्ट्रीयता का चोला पहनने से ही काम चलेगा। 20 वर्ष की उम्र में पाओ-तिंग सैनिक स्कूल से निकलकर 1907 ई. में वह जापान चला गया, जहाँ तीन वर्ष तक सैनिक शिक्षा प्राप्त करता रहा। 23 वर्ष की उम्र में युवान शि-काइ जापानी धूर्तों से शिक्षा प्राप्त करके अब च्यांग चीन लौटा। 1911 ई. की क्रांति में डा. सुन् यात्-सेन् के नेतृत्व में जब मंचू-वंश को हटा दिया गया, तो च्यांग भी सुन् यात्-सेन् का अनुयायी बन गया, और जल्दी ही उनका विश्वासपात्र बनने में भी उसे सफलता प्राप्त हुई। अभी उसको अपनी महत्त्वाकांक्षा दिखलाने की आवश्यकता नहीं थी। सुन् यात्-सेन् इस आस्तीन के साँप को क्या जानते थे, जब जून 1924 में ह्वांग-फू (ह्वम्पुआ, बेम्पा) सैनिक स्कूल खुला, तो च्यांग को उसका अध्यक्ष बना दिया गया। इससे पहले 1923 ई. में डा. सुन् यात्-सेन् ने च्यांग को सैनिक स्थिति के अध्ययन के लिए मास्को भी भेजा था। 1925 ई. के बसन्त में सुन् यात्-सेन् मर गये और अगले साल च्यांग जनक्रान्ति-सेना का सेनापति नियुक्त हुआ। अब सुन् यात्-सेन् नियन्त्रण के लिए मौजूद नहीं थे, इसलिए च्यांग ने खुलकर खेलना शुरू किया। कम्युनिस्ट और कुओमिन्तांग दोनों का जो संयुक्त मोर्चा कायम हुआ था और जिसके कारण ऐसा मालूम होने लगा था कि चीन एकताबद्ध होकर एशिया की सबसे बड़ी शक्ति होने जा रहा है, उसके बारे में च्यांग ने सब किये-कराये पर पानी फेर दिया। कान्तन्, शांघाइ और दूसरे शहरों में उसने कम्युनिस्टों का कत्लेआम किया। जरा-सा संदेह हो जाने पर स्त्री या पुरुष किसी की जान की खैरियत नहीं थी। 1927 ई. में च्यांग ने तीनों सुंग बहनों में से एक सुंग मेइ-लिंग से ब्याह किया, जिसकी बड़ी बहन का ब्याह डा. सुन् यात्-सेन् से हुआ था। च्यांग को अब एक चंट सहायिका मिल गई। 1930-34 तक च्यांग ने कम्युनिस्टों का उच्छेद करने के लिए कितना प्रयत्न किया, इसे हम बतला चुके हैं। च्यांग ने जापान के सामने घुटने टेककर दया की बहुत भिक्षा माँगी, लेकिन जापान तो चीन को हड़पना चाहता था, वह कैसे दया दिखलाता ? अन्त में किस तरह माओ चे-तुंग के नेतृत्व में जन-मुक्ति-सेना ने च्यांग को खदेड़कर समुद्र के भीतर अमेरिका-संरक्षित ताइयुवान (फारमूसा) में शरण लेने के लिए मजबूर किया, यह हम आगे बतलाएँगे।

पेकिंग के हाथ से निकल जाने पर, नानकिंग च्यांग काइ-शेक की राजधानी बनी। च्यांग पूरा घाघ था, वह तरुण-मार्शल क्या अपने बाप पर भी विश्वास नहीं कर सकता था। सियान् में उसने अपनी भी कुछ सेना रख छोड़ी थी, जिससे और लालसेना से कभी-कभी लड़ाइयाँ हुआ करती थीं। च्यांग के खुफिया-विभाग के अफसर भी वहाँ थे। लेकिन उन्हें पता नहीं लग पाया कि तुंग पी और लालसेना में भीतर ही भीतर क्या हो रहा है। कुछ गड़बड़ी उन्हें जरूर मालूम होती थी, क्योंकि उसी समय वहाँ उपस्थित एक अमेरिकन महिला पत्रकार ने लिखा था :

"सियान् (इलाके) की राजधानी सियान्फू में एक अजीब हालत है। तरुण-मार्शल च्यांग स्यु-लियान् की जो सेना यहाँ लालसेना के दमन के लिए रक्खी गई है, उसमें एक नई हवा बह रही है। उसके सैनिक अपने देश के लिए अधीर हो रहे हैं, गृह-युद्ध से ऊब उठे हैं और नानकिंग सरकार जिस तरह जापान को बढ़ने दे रही है, उससे उन्हें घृणा हो रही है। छोटे-छोटे अफसरों में तो बगावत के चिह्न स्पष्ट दिखलाई पड़ते हैं। अफवाह यहाँ तक है कि चांग स्यु-लियान् अपने पहले के व्यक्तिगत सम्बन्ध को छोड़कर च्यांग काइ-शेक से खिंच रहा है, और लालसेना से सुलह करके जापान-विरोधी संयुक्त-मोर्चा को काम में लाने के लिए छटपटा रहा है।" अक्टूबर, 1936 में ये पंक्तियाँ लिखी गई थीं, जिस महीने में कि च्यांग काइ-शेक सियान्

में पहुँचा था।

तरुण-मार्शल आया। च्यांग काई-शेक उसका बन्दी था। उसने अगले दिन सूच देश के लिए सूचना निकाली : "प्रधान सेनापति की मारी गई बुद्धि में चेतना लाने के लिए हमने उन्हें सियान् में आग्रह करके रोक लिया है, उनके प्राण सुरक्षित हैं।"

च्यांग काइ-शेक ने अधीरता प्रकट करने पर तरुण-मार्शल का अपमान करते हुए एक दिन गरजकर कहा—"मैं तब तक कोई बात नहीं सुनूँगा, जब तक कि लालसेना का एक-एक सैनिक कतल नहीं कर दिया जाता और एक-एक कम्युनिस्ट जेल के सींकचों में बन्द नहीं हो जाता।" यही नहीं, उसने अपनी तूफानी पहली सेना को कान्सू पर चढ़ाई करने के लिए रवाना कर दिया। नवम्बर के भीतर ही शेन्सी की सीमा पर च्यांग की दस डिवीजन सेना पहुँच गई। गोली-बारूद से भरी ट्रेनें, सियान् पहुँचने लगीं। टैंक, बख्तरदार-गाड़ियाँ, मशीनगन और राइफलों के ढोने का ताँता लग गया। सियान् और लन्-चाउ के शहरों में एक सौ हवाई जहाजों के उतरने लायक अड्डे बनाये गये, टारपिडो का प्रबन्ध किया गया, विषैली गैस के इस्तेमाल करने की बातचीत भी की जाने लगी। च्यांग ने अपनी डायरी में गर्व से लिखा था—"पन्द्रह दिनों में नहीं, तो एक महीने के अन्दर तो जरूर ही इन लाल-डाकुओं को खतम कर दिया जायगा।"

इसी समय जापान ने सुइ-युवान प्रदेश (शेन्सी से उत्तर) पर चढ़ाई कर दी, लेकिन च्यांग ने उस ओर कोई ध्यान नहीं दिया। तरुण-मार्शल ने बड़े विनय के साथ एक पत्र च्यांग के पास लिखा—"हमने अपनी सेना के सैनिकों से यह प्रतिज्ञा की थी कि जब कभी अवसर मिलेगा, तुम्हें जापानियों से लड़ने की आज्ञा देंगे। अब तो हमें उस प्रतिज्ञा का पालन करना ही होगा, नहीं तो वे हमें तथा आपको भी धोखेबाज और बेईमान समझेंगे। और न हो तो हमें आप आज्ञा दे दें कि हम अपनी सेना के एक हिस्से को सुइ-युवान के मोर्चे पर भेजें। हमें आशा है कि हम एक लाख की सेना तैयार कर सकेंगे, जो आपके नेतृत्व में जापानियों के दाँत खट्टे कर डालेंगे।" इस पत्र का कोई फल न हुआ तो तरुण-मार्शल स्वयं बड़े भैया की सेवा में पहुँचा। जापान-विरोधी योजना को उसके सामने रखते हुए उसने यह भी प्रार्थना की कि शांघाइ के राष्ट्रमुक्ति संघ के सात विशिष्ट राजबन्दियों को छोड़ दिया जाय।" इसी समय उसके मुँह से यह भी निकल गया—"आप जिस निर्दयता से देशभक्तिपूर्ण आन्दोलन को कुचल रहे हैं, उसे देखते आपमें और युवान शि-काइ की सैनिक तानाशाही में कोई फर्क नहीं रहता।" इस पर च्यांग काइ-शेक ने बिगड़कर कहा—"तुम्हारी राय चाहे जैसी हो, किन्तु सरकार तो मैं हूँ। मैं जो कर रहा हूँ, वह एक क्रान्तिकारी के लिए बिलकुल उचित है।"

अन्त में च्यांग काइ-शेक ने तरुण-मार्शल को यह कहकर लौटाया कि मैं सियान् आ रहा हूँ, उस समय अपनी योजना बतलाऊँगा। किन्तु इसी समय ऐसी बातें घटीं, जिनके कारण तुंग-पी सेना का रवैया बिलकुल बदल गया :

(1) जर्मनी और जापान में साम्यवाद-विरोधी सुलहनामा हो गया, जिस पर इताली ने मोहर कर दी। इताली ने जापान पर मंचूरिया की विजय को स्वीकार कर लिया, जिसके बदले में जापान ने उसके अबीसीनिया-विजय को मान लिया। जब इताली ने जापानी खिलौने मंचू-कुओ को स्वतन्त्र राष्ट्र मानकर उसके साथ राजनीतिक सम्बन्ध स्थापित कर लिया, तो तुंग-पी सेना के धैर्य का बाँध टूट गया। तरुण-मार्शल ने खुलेआम प्रतिज्ञा की—"हम चीन से फासिस्तवाद की जड़ उखाड़कर ही दम लेंगे।" च्यांग काइ-शेक के सैनिक-विशेषज्ञों में जर्मन और इतालियन भी थे, जिसका अर्थ था, च्यांग काइ-शेक खुद फासिस्तों के गुट में शामिल था।

(2) च्यांग ने अपनी प्रथम तूफानी सेना को हू संग-नान् नामक एक प्रसिद्ध सेनापति के अधीन भेजा था, जो कि नानकिंग का बड़ा युद्धविशारद समझा जाता था। उसने आते ही लालसेना पर धावा बोल दिया। लालसेना पीछे हटी। हू की हिम्मत बढ़ी और वह बड़े जोर से आगे बढ़ने लगा। लालसेना और हटी। हटते हुए भी उसने हू की सेना में संयुक्त-मोर्चे की नीति का प्रचार करना जारी रक्खा। हू की सेना और उसका मन बढ़ता ही गया। एकाएक एक रात को लालसेना ने मुड़कर चढ़ाई कर दी। सख्त जाड़ों के दिन थे, हथबम की खोल को हटाना भी मुश्किल था, लेकिन लालसेना ने अपना काम बड़ी बहादुरी से किया। हू की दो पैदल

पलटनें और एक रिसाला नष्ट हो गया, एक पलटन लालसेना में जा मिली। बहुत भारी युद्ध-सामग्री लालसेना के हाथ आई। हू बची-खुची सेना लेकर च्यांग के हुकुम की प्रतीक्षा करने लगा। तुंग-पी सेना सोचने के लिए मजबूर हुई ! "क्या यही नानकिंग का सबसे बड़ा युद्धविशारद और यही प्रथम तूफानी सेना के रणबाँकुरे हैं, जो कि कम्युनिस्टों का नाश करेंगे ?" उसको विश्वास हो गया कि ये सारे बहाने हैं। कम्युनिस्ट ठीक कह रहे हैं, च्यांग चीन को जापान के हाथ बेच रहा है।

तुंग-पी की आँखें खुल चुकी थीं। उसने अब संयुक्त मोर्चे कायम करने का निश्चय कर लिया था। इसके लिए जेनरल यांग हू-चेंग से मिलकर सब बात ठीक कर ली गई। यांग की सेना में 40 हजार सैनिक थे, जिसे सी-पी (उत्तर-पश्चिमी) सेना कहा जाता था। इस सेना को भी च्यांग काइ-शेक ने लाल-डाकुओं के दबाने के लिए शेन्सी भेजा था। वह भी तुंग-पी की तरह ही इस गृहदाह से ऊब गई थी। तरुण-मार्शल की 1 लाख 30 हजार सेना के साथ उसके मिल जाने पर अब संयुक्त मोर्चे की नई सेना की संख्या 1 लाख 70 हजार पहुँच गई थी। च्यांग काइ-शेक को कुछ भनक लग गई थी। उसने अपने भतीजे को वहाँ पहले भेज दिया। लेकिन तुंग-पी और सी-पी ने उससे बात करने से इन्कार कर दिया। इस पर वह उन्हें अलग बुलाकर डराता-धमकाता रहा।

7 दिसम्बर, 1936 को च्यांग काइ-शेक अपने खास विमान में सियान् पहुँचा। 10 दिसम्बर को उसने जेनरल-स्टाफ की बैठक बुलाई, और किसी की सलाह या चेतावनी पर ध्यान न दे छठे आक्रमण की घोषणा करते हुए आम कूच का हुकुम लिखकर कह दिया कि 12 तारीख को तुंग-पी, सी-पी और नानकिंग की सेनाएँ तैयार हो जायें। च्यांग ने यह भी साफ कह दिया कि यदि तरुण-मार्शन हुकुम मानने में जरा भी आनाकानी करे, तो उसकी सेना के हथियार छीन लिये जायँ और उसे सेनापति के पद से हटा दिया जाय। तरुण-मार्शल के स्थान के लिए एक आदमी भी ठीक कर लिया गया था। यह भी पता लगा कि च्यांग की खुफ़िया-पुलिस ने तरुण-मार्शल और जेनरल यांग की सेना के उन सभी आदमियों के नाम नोट कर लिये हैं, जिनका झुकाव साम्यवादियों की ओर था। कूच का डंका बजते ही उन्हें गिरफ्तार कर कोर्ट-मार्शल किया जानेवाला था।

यह सभी बातें मालूम हो जाने के बाद तरुण-मार्शल ने तुंग-पी और सी-पी के सैनिक अफसरों की 11 दिसम्बर के 10 बजे रात को एक बैठक की। इसके पहले ही दोनों सेनाओं के एक सैनिक डिवीजन को चुपके से खबर दे दी गई कि नगर के निकट आकर हुकुम की प्रतीक्षा करो।

(3) च्यांग की गिरफ्तारी (1936 ई.)–कम्युनिस्ट नई जगह पर आकर अपनी शक्ति को मजबूत करते जापान के बढ़ावे से उत्तेजित चीनी जनता को संयुक्त मोर्चे और जापानी प्रतिरोध की क्रियात्मक शिक्षा दे रहे थे, जिसके कारण उनकी शक्ति और बढ़ती जा रही थी। च्यांग क्यांग-सी में पाँच बार कम्युनिस्टों पर आक्रमण करके उनका सर्वनाश नहीं कर पाया था। वह छठे आक्रमण की तैयारी को देखने अपने निजी विमान में 7 दिसम्बर को एक जगह उतरा। वहाँ के विद्यार्थियों ने जापान-विरोधी प्रदर्शन किया। तरुण-मार्शल ने विद्यार्थियों के बीच में पड़कर उन्हें शान्त किया था। इस समय अक्ल के अन्धे गाँठ के पूरे च्यांग काइ-शेक ने तरुण-मार्शल को दोनों बाँहों से ढकेलते हुए देशद्रोही कहा, और लाल चीन पर हमला करने का हुकुम दिया।

सियान्फू (प्राचीन छांग-अन्) से 10 मील दूर लिन्-तुंग का तप्तकुण्ड है। यहाँ एक मंचू-सम्राट ने अपनी चहेती रानी के लिए एक महल बनाया था। च्यांग इसी महल में उतरा। 12 दिसम्बर, 1936 को सबेरे च्यांग सोकर उठा। उसकी दो पलटनों ने सियान् में विद्रोह कर दिया था। सियान् के अफसर अपने-अपने घरों में नजरबन्द कर दिये गये। राज्य के दफ्तरों पर विद्रोहियों के पहरे लग गये। 290 चुने हुए सैनिकों के साथ 26 साल के कप्तान सुन् मिंग-च्यु ने रात को 3 बजे आकर महल को घेर लिया। 5 बजने पर 50 सैनिकों के साथ वह महल के भीतर गया। सुन् के आदमियों ने नाम के लिए गोली चलाई, जिसकी आवाज सुनकर च्यांग की नींद टूट गई। कप्तान सुन् शयनकक्ष में दाखिल हुआ। देखा, चारपाई खाली है। उसके आदमियों ने चारों ओर खोज-तलाश शुरू की। महल के पिछवाड़े बर्फ से ढँकी एक टेकरी पर कप्तान चढ़ने लगा। कुछ दूर पर च्यांग का अंगरक्षक मिला, जिसे अपने सैनिकों के हाथ में देकर वह आगे बढ़ा। देखता है, रात का

कपड़ा पहने नंगे पैर. खुले सिर च्यांग काइ-शेक कड़कड़ाती सर्दी में गोलमटोल होकर बैठा है। उसका शरीर थर-थर काँप रहा था। उसने कप्तान को देखते ही कहा–"यदि तेरे दिल में मेरे लिए जरा भी दया हो, तो मुझे इसी समय गोली मारकर इस सारे मामले को खतम कर दे।"

कप्तान ने बड़ी शान्ति से जवाब दिया : "हम आपको मारने नहीं आये। हम इतना ही चाहते हैं कि आप अपने देश के जापान-विरोधी लड़ाई के मोर्चे में शामिल हो जायँ।"

च्यांग ने थोड़ी देर रुककर कहा : "तरुण-मार्शल को बुला लाओ, तब मैं इस टेकरी से उतरूँगा।" कप्तान सुन् तरुण-मार्शल का अंगरक्षक है, यह च्यांग काइ-शेक को मालूम था।

च्यांग के यह कहने पर कप्तान सुन् ने कहा :

"मार्शल च्यांग स्यु-लियांग यहाँ नहीं हैं। वह शहर में हैं, जहाँ सेना ने विद्रोह कर दिया है। हम लोग आपकी रक्षा करने आये हैं।

इस पर च्यांग काइ-शेक ने संतोष की साँस लेते हुए कहा–"अच्छा, घोड़ा लाओ, मैं चलता हूँ।"

कप्तान सुन् ने कहा : "घोड़ा कहाँ है ? आप मेरी पीठ पर चढ़िये, मैं आपको ले चलता हूँ।" इतना कहकर वह बर्फ पर बैठे च्यांग काइ-शेक के पैर के नीचे झुक गया। जरा-सी हिचकिचाहट के बाद च्यांग का नौकर जूता लेकर पहुँच गया। सब पैदल चलकर पहाड़ के नीचे खड़ी मोटर के पास पहुँचे। मोटर उन्हें सियान् नगर की ओर ले चली। रास्ते में कप्तान ने पूछा : "जो बीता सो बीता। अब चीन के लिए एक नई नीति स्वीकार करनी चाहिए। आप क्या करने जा रहे हैं ?··चीन के सामने इस समय सबसे आवश्यक प्रश्न है जापान के विरुद्ध लड़ना। उत्तर-पूर्व के लोगों की यही एक खास माँग है। आप जापान से क्यों नहीं लड़ते ? उलटे हमें लालसेना से लड़ने को क्यों कहते हैं ?"

च्यांग ने चिल्लाकर कहा–"मैं चीन की जनता का नेता हूँ। मैं चीनी राष्ट्र का प्रतिनिधि हूँ। मैं समझता हूँ, मेरी नीति ठीक और दुरुस्त है।"

इस तरह च्यांग काइ-शेक अब भी गुस्सा निकालता सियान् नगर में पहुँचा, लेकिन अब वह तरुण-मार्शल और जेनरल यांग का जबर्दस्ती बनाया मेहमान था।

(4) **बातचीत**–उसी दिन तुंग-पी और सी-पी सेनाओं के सभी डिवीजन कमांडरों के हस्ताक्षरों से एक विज्ञप्ति निकली और उसे केन्द्रीय (नान-किंग) सरकार और प्रादेशिक नेताओं के पास भेज दिया गया, साधारण जनता में भी उसे वितरित किया गया। विज्ञप्ति में लिखा था : "सेनापति च्यांग काइ-शेक से कुछ दिनों तक सियान्फू में आराम करने के लिए प्रार्थना की गई है। उनकी जान पर कोई खतरा नहीं आवेगा।" इसी समय राष्ट्र की मुक्ति के लिए आठ शर्तें भी प्रचारित की गईं :

"(1) नानकिंग सरकार का फिर से संगठन हो, और सभी दलों को राष्ट्र की मुक्ति में अपनी जिम्मेवारी पूरा करने के लिए मौका दिया जाय,

(2) गृह-युद्ध को खतम किया जाय और जापान के विरुद्ध सशस्त्र प्रतिरोध की नीति अख्तियार की जाय,

(3) शांघाइ के सात देशभक्त राजबन्दियों को छोड़ दिया जाय,

(4) सभी राजबन्दियों को क्षमा प्रदान की जाय,

(5) जनता को सभा-समिति करने-बनाने की स्वाधीनता दी जाय,

(6) देशभक्तिपूर्ण संगठन और राजनीतिक स्वतंत्रता के जनता के हक को स्वीकार किया जाय,

(7) डाक्टर सुन् यात्-सेन् की अन्तिम वसीयत को कार्यरूप में परिणत किया जाय,

(8) शीघ्र ही राष्ट्र-मुक्ति-सम्मेलन बुलाया जाय।"

1 दिसम्बर को तरुण-मार्शल और कम्युनिस्टों में जो शर्तें तै हुई थीं, उनमें चीन की लालसेना, सोवियत सरकार और कम्युनिस्ट पार्टी ने उक्त बातों पर सहमति प्रकट की थी।

तरुण-मार्शल ने एक विमान सोवियत सरकार के पास अपने प्रतिनिधियों को भेजने के लिए भेजा, जिसमें जो तीन प्रतिनिधि आये, उनमें चाउ एन्-लाइ भी थे। तुंग-पी, सी-पी और लालसेना के प्रतिनिधियों की बैठक

हुई। तीनों ने मिलकर एक जापान-विरोधी संयुक्त सेना के निर्माण करने की घोषणा 14 दिसम्बर को की। इस सेना में तुंग-पी की 1 लाख 30 हजार, सी-पी की 40 हजार और लालसेना की 90 हजार सेना सम्मिलित हुई। इस प्रकार 2 लाख 60 हजार की एक महासेना तैयार हो गई। इस सेना की सैनिक समिति का अध्यक्ष च्यांग स्यु-लियांग और उपाध्यक्ष च्यांग चू-चेंग चुने गये।

सियानूफू में हुआ विद्रोह वहीं तक सीमित नहीं रहा। कान्सू की राजधानी लन्-चाउ में तुंग-पी की एक टुकड़ी पड़ी हुई थी। उसने 12 तारीख को अपनी जिम्मेवारी पर वहाँ मौजूद नानकिंग की सरकारी सेना पर हमला करके उसके हथियार छीन लिये कान्सू के दूसरे भागों पर भी लाल और तुंग-पी सेनाओं ने अधिकार कर नानकिंग की 50 हजार सेना को घेरकर उसे बेकार कर दिया। 14 दिसम्बर के इस सम्मेलन के बाद ही तुंग-पी, सी-पी और लालसेना पूर्व में शेन्सी-शान्सी और शेन्सी-होनान् की सीमा की ओर बढ़ी। दक्षिण में भी वह एक सप्ताह के भीतर ही पूरे उत्तरी शेन्सी पर चढ़ दौड़ी। पेंग ते-ह्वाइ ने सानू-युवानू नगर पर अधिकार कर लिया और सू हाइ-तुंग ने शेन्सी-हूनान् सीमा-प्रदेश को अपने हाथ में कर लिया। चारों ओर ऐसी जबर्दस्त मोर्चा-बन्दी कर ली गई कि च्यांग काइ-शेक को छुड़ाने के लिए किसी भी सैनिक-प्रयत्न का ठीक तरह से मुकाबला किया जा सके।

(क) नानकिंग में दाँवपेंच—आठों शर्तें और दूसरी बातें जब नानकिंग और प्रादेशिक नगरों में पहुँचीं, तो उन्हें दबा दिया गया। लेकिन, संयुक्त-मोर्चा-समिति ने अपने क्षेत्रों में उन्हें काम में लाना शुरू किया। लालसेना ने जमींदारों की सम्पत्ति को जब्त करना बन्द कर और दूसरों ने साम्यवादियों के खिलाफ जितने हुक्म निकाले थे, उन्हें हटा दिया गया। सियानूफू के जेल से 400 राजबन्दियों को छोड़ दिया गया, अखबारों से सेंसर हटा लिया गया। हजारों विद्यार्थियों को मुक्त करके उन्हें जापान-विरोधी संयुक्त-मोर्चे की बात जनता तक पहुँचाने के लिए नगरों और देहातों में भेज दिया गया। सब जगह प्रतिदिन बड़ी-बड़ी सभाएँ होने लगीं। एक सभा में तो एक लाख आदमी सम्मिलित हुए थे।

लेकिन, उधर नानकिंग में क्या हो रहा है ? सियान् की घटना को वहाँ प्रकाशित नहीं होने दिया गया। सरकारी अखबारों पर भी रोक लगा दी गई, जिसमें कि यह बाहर न जाने पाये। खबर पहुँचते ही नानकिंग सरकार की केन्द्रीय समिति की बैठक हुई। उसने च्यांग स्यु-लियांग को विद्रोही घोषित करके उसे पदच्युत कर दिया और च्यांग काइ-शेक की रिहाई की माँग की तथा यह भी तै किया कि देर होने पर सियान् पर चढ़ाई की जाय। नानकिंग के तानाशाह चाहे जो भी कोशिश करें, लेकिन किसी-न-किसी तरह च्यांग के गिरफ्तार होने की खबर जनता तक पहुँच गई। च्यांग के दुश्मन खुश हुए, कुछ लोग गृहयुद्ध को भारी भीषण रूप लेते देख त्रस्त हुए। च्यांग का क्या हुआ, इसे ठीक से तीन दिन तक कोई नहीं जान सका। हाँ, विदेशी तार-एजेंसियाँ (एसोसियेटेड प्रेस, अमेरिका) तार पर तार दे रहे थे कि च्यांग काइ-शेक को मार्शल च्यांग ने मार डाला, सियान् में लूट-मार मची हुई है, कम्युनिस्ट स्त्रियों का सतीत्व नष्ट कर रहे हैं। जापान का इसमें हाथ है, मास्को का भी हाथ इसमें मालूम होता है।

लेकिन, च्यांग काइ-शेक का तो लुटेरों का गुट था। जहाँ भ्रष्टाचार अपनी पराकाष्ठा को पहुँचा हो, च्यांग उसके तीन साथी परिवार देश को लूटकर अपना घर भर रहे हों, वहाँ 'जब कि दो मूजियों में हो खटपट' से लाभ उठाने में दूसरे क्यों पीछे रहने लगे ? च्यांग के युद्ध-मन्त्री हो पिंग-चिंग ने अब च्यांग के जूते में अपना पैर डालने का निश्चय किया। जापानियों ने भी उसकी पीठ ठोंकी। सियान पर चढ़ाई करने के लिए जोर दिया जाने लगा। हो ने 20 डिवीजन सेना को सियान् की ओर बढ़ने का हुक्म दिया। विमानों के दस्ते भेजे गये, जो जब-तब मँडराते हुए गोले गिराने लगे।

लेकिन, च्यांग की पत्नी सुंग माइ-लिंग हो से कहीं चतुर थी। वह बात समझ गई। उसने तुरन्त हो को बुलाकर फटकारते हुए कहा : "यह क्या हो रहा है ? यदि लड़ाई शुरू हो गई, तो क्या तुम उसे रोक सकोगे ? क्या तुम फिर मेरे पति को बचा सकोगे ? या तुम उन्हें मरवा डालना चाहते हो ?" च्यांग-पत्नी ने युद्ध-सचिव को डाँट-फटकारकर उसे रोका, फिर अपनी बहन (डा. सुन् यात्-सेन् की विधवा पत्नी) के थसा

रकलमि नानकिंग और शांघाइ के प्रतिक्रियावादियों को भी उनके मनसूबों से रोका।

च्यांग काइ-शेक की गिरफ्तारी के दो दिन बाद 14 दिसम्बर को तुंग-पी, सी-पी, लालसेना तीनों के प्रतिनिधियों ने आस्ट्रेलियन डोनाल्ड को बुलाकर च्यांग काइ-शेक से उसकी मुलाकात कराई। डोनाल्ड तरुण-मार्शल और च्यांग काइ-शेक दोनों का दोस्त था। उसको दिखलाने का मतलब यही था कि दुनिया जान ले कि च्यांग काइ-शेक अब भी जिन्दा है और उसके साथ कोई बुरा बर्ताव नहीं किया जा रहा है। सुलह की बात जारी रखने के लिए उसे नानकिंग भेजा गया। डोनाल्ड ने च्यांग-पत्नी से सारी बातें जाकर कहीं। 18 दिसम्बर को एक सेनापति च्यांग के हाथ का लिखा कुशल-मंगल का एक पत्र भी नानकिंग लेकर गया, जिसमें च्यांग ने हुक्म दिया था, अपनी फौज को आगे मत बढ़ाओ। तरुण-मार्शल के पत्र में था, बातों को जल्दी तै करने के लिए किसी जिम्मेवार आदमी को बुलाया गया था।

(ख) च्यांग का पारा नीचे—च्यांग काइ-शेक के गिरफ्तार होने के बाद उससे भारी घृणा रखनेवाले संयुक्त मोर्चे के कितने ही लोगों विशेषकर तुंग-पी और सी-पी के नौजवान-अफसरों ने प्रस्ताव पास किया कि देशद्रोही च्यांग पर खुला मुकदमा चलाया जाय और उसे दण्ड दिया जाय। लोग उसे तोप के मुँह में बाँधकर उड़ा देने के लिए भी कह रहे थे। किन्तु, माओ और उसके साथी वैयक्तिक क्रोध उतारने के पक्षपाती कब हो सकते थे ? वह जानते थे, च्यांग काइ-शेक एक स्वार्थ का प्रतिनिधि है, जब तक वह स्वार्थ खतम न कर दिया जाय, तब तक च्यांग न रहे तो दूसरा कोई उसका स्थान लेगा। च्यांग इस वक्त ऐसी हालत में है कि वह हमारी बातों को मान लेने पर संयुक्त-मोर्चे के लिए भारी सहायक सिद्ध होगा, जिसकी सम्भावना च्यांग के न रहने पर मुश्किल हो जायगी। वह च्यांग को दण्ड देने ही के विरोधी नहीं थे, बल्कि यह भी कहते थे कि च्यांग का किसी तरह से अपमान नहीं करना चाहिए। अपमानिक होने से उसकी इज्जत कम हो जायगी, जिससे उसका प्रभाव जापान-विरोधी मोर्चे के पक्ष में कम हो जायगा।

चाउ एन्-लाइ जिस दिन सियान् पहुँचे, उसी दिन तरुण-मार्शल के साथ च्यांग काइ-शेक से मिले। च्यांग ने उस पुरुष को देखा, जो कि कान्तन् के सैनिक विद्यालय में उसका सेक्रेटरी था, जिसने शांघाइ में मजदूरों की शक्ति को संगठित कर नया शासन कायम करके उसके स्वागत की तैयारी की थी, और वर्ग-स्वार्थ में अंधे च्यांग ने जिसके सिर के लिए 80 हजार डालर इनाम रक्खा था। चाउ ने जब अपने घातक शत्रु के सामने बहुत शिष्टता के साथ प्रणाम किया, और नम्रता दिखलाई तो च्यांग को और भी आश्चर्य हुआ होगा, इसमें सन्देह नहीं। चाउ ने कम्युनिस्टों की नीति को संक्षेप में बतलाया। पहले तो च्यांग चुपचाप सुनता रहा, फिर दस वर्षों के संघर्ष के बाद पहली बार कम्युनिस्टों की विचारधारा को उनके मुँह से सुनने के लिए उसने अधिक उत्सुकता दिखलाई 17-25 दिसम्बर तक कम्युनिस्ट तथा विद्रोही नेता (च्यांग-यांग) च्यांग काइ-शेक से बात करते रहे। पहले वह कुछ खिंचा-खिंचा-सा रहा। इसी बीच नानकिंग में जो षड्यन्त्र उसके विरुद्ध हो रहा था, उसका उसे पता लगा। इस पर वह धीरे-धीरे जापान-विरोधी मोर्चे की ओर झुका।

5. समझौता

20 दिसम्बर को नानकिंग सरकार के प्रतिनिधि के तौर पर तब तुंग सियान् पहुँचा। सुंग की तीनों बहनों में एक डा. सुन् यात्-सेन् से ब्याही थी, दूसरी च्यांग काइ-शेक से और तीसरी एक और करोड़पति से। सारा चीन राष्ट्र इन्हीं चारों परिवारों की निजी सम्पत्ति था। सुंग की शिक्षा-दीक्षा अमेरिका में हुई थी, और वह इस समय च्यांग-सरकार की वित्त-समिति का प्रधान था। सुंग यूरोपीय शक्तियों का पक्षपाती तथा जापान का विरोधी समझा जाता था। सुंग के सियान् पहुँचने से पहले ही च्यांग काइ-शेक के साथ बहुत-सी बातें तै हो चुकी थीं। 10 दिसम्बर को तरुण-मार्शल ने निम्न वक्तव्य प्रकाशित किया था :

"ज्योंही मिस्टर डोनाल्ड गत सोमवार को यहाँ पहुँचे, प्रधान सेनापति अपने तथाकथित अपमान को भुलाने में समर्थ हो गये। वह हम लोगों से बड़ी शान्ति से बातें करने लगे, और दूसरे ही दिन एक राष्ट्रीय नीति तै कर ली गई, जिसके अनुसार शासन में परिवर्तन करने का निश्चय भी हो चुका। हमने इसके बाद ही नानकिंग

तार भेजा। यदि वहाँ से कोई आ गये होते, तो प्रधान-सेनापति कब के यहाँ से रवाना हो गये होते।"

जिस वक्त इस तरह यह समझौते की बातचीत हो रही थी, उसी समय तुंग-पी सेना के सैनिक और अफसर च्यांग काइ-शेक को सजा देने की खुलेआम माँग कर रहे थे। च्यांग ने अपने ऊपर पहरा देनेवालों को स्वयं बातचीत करते सुना था, "फैसला करना जनता का काम है, कुछ अफसर समझौता कर लें तो इससे क्या ?" यह सुनकर च्यांग ने अपनी डायरी में लिखा था—"मैं समझ गया कि यह मेरी जान लेना चाहते हैं, जनता का नाम तो बहाना है।" इन सैनिकों और अफसरों को जब समझाने की कोशिश की जाती, तो कुछ तो अधीर होकर रोते हुए कहने लगते—"तब तो आप हमें भी धोखा देना चाहते हैं।"

सुंग के पहुँचने पर बातचीत होकर बाहर से कहा गया कि आठों शर्तें नामंजूर की गईं, किन्तु भीतर से उन्हें व्यावहारिक रूप में निम्न प्रकार स्वीकार किया गया :

(1) गृह-युद्ध बन्द किया जाय, कुओ-मिन्-तांग और कम्युनिस्ट पार्टी आपस में सहयोग से काम करें।
(2) जापानियों के खिलाफ स्पष्ट रवैया अख्तियार करते हुए उनका मुकाबला किया जाय।
(3) नानकिंग के उन पदाधिकारियों को हटा दिया जाय, जो जापानियों के पक्षपाती हैं, और इंग्लैंड, अमेरिका और रूस के साथ सम्बन्ध स्थापित किया जाय।
(4) तुंग-पी और सी-पी सेनाओं का दर्जा नानकिंग-सेना के समान माना जाय।
(5) जनता को राजनीतिक स्वतन्त्रता दी जाय।
(6) सरकार को गणतान्त्रिक ढंग पर फिर से संगठित किया जाय।

च्यांग-पत्नी 22 दिसम्बर को सियान् पहुँच गई थी। इन शर्तों को मनवाने में उसका बड़ा हाथ था।

समझौता हो जाने के बाद 25 दिसम्बर को च्यांग काइ-शेक तरुण-मार्शल को साथ लिये नानकिंग लौट गया। संयुक्त-मोर्चा कायम हो गया, उसका कार्यक्रम बना, जिसकी स्वीकृति भी दे दी गई। लेकिन, बाहर से च्यांग काइ-शेक की प्रतिष्ठा को बनाये रखने के लिए कुछ अभिनय भी किया गया। नानकिंग में पहुँचकर तरुण-मार्शल ने सबके सामने स्वीकार किया : "मैं शरम से मरा जा रहा हूँ। मुझसे भारी अपराध हुआ। मैं इसीलिए साथ आया हूँ, कि मुझे सजा दी जाय जिसमें मेरे पापों का प्रायश्चित्त हो जाय।" च्यांग काइ-शेक ने बड़ी उदारता दिखलाते हुए कहा : "नहीं, अपराध मेरा था, जो मैंने अपने अधीन लोगों को अच्छी तरह शिक्षा नहीं दी और वह विद्रोह करने के लिए उतारू हो गये। अच्छा किया जो तुमने अपना कसूर मान लिया, मैं केन्द्रीय अफसरों से तुम्हें क्षमा कर देने के लिए कहूँगा।"

तरुण-मार्शल पर मुकदमा चला कर दस वर्ष की सजा दी गई, लेकिन दूसरे ही दिन उसे माफ भी कर दिया गया। शेन्सी में जो नानकिंग की सेना मौजूद थी, उसे हटा लिया गया, जापान-पक्षपाती अफसर चान्-चुन् को हटाकर उसकी जगह जापान-विरोधी अफसर को दी गई। च्यांग काइ-शेक ने अपनी भूलों को स्वीकार कर तीन बार उसे दोहराते इस्तीफा दे दिया, और उसके स्वीकार या अस्वीकार किये जाने से पहले ही तरुण-मार्शल के साथ दो महीने के विश्राम के लिए वह अपने देहाती घर में चला गया। वस्तुतः इस समय में वह तुंग-पी, सी-पी और लालसेना के प्रतिनिधियों से सलाह-मशविरा कर रहा था।

15 फरवरी को कुओमिन्तांग की बैठक हुई। इसके पहले 10 फरवरी को कम्युनिस्ट पार्टी ने अपने प्रस्ताव में चार बातों के लिए प्रार्थना की : गृहयुद्ध बन्द हो; व्याख्यान, अखबार और सभासंगठन की स्वतन्त्रता हो; राजनैतिक कैदी छोड़े जायँ; जापान के विरोध के लिए एक संयुक्त योजना बने और डा. सुन यात् की वसीयत के तीन सिद्धान्त कार्यरूप में परिणत किये जायँ। पार्टी ने यह भी कहा कि यदि ये बातें स्वीकार कर ली जायँ, तो हम निम्न बातों को करने के लिए तैयार हैं :

(1) लालसेना का नाम बदलकर क्रान्तिकारी सेना रख दिया जायगा, और उसे सैनिक-समिति के मातहत कर दिया जायगा।
(2) सोवियत-प्रदेश का नाम बदलकर 'चीन गणराज्य का विशेष क्षेत्र' कर दिया जायेगा।
(3) सोवियत-प्रदेशों में पूर्ण जनतान्त्रिक सरकार कायम कर दी जायगी।

(4) जमीन की जब्ती रोक दी जायगी और सारी ताकत जापान के खिलाफ लड़ने में लगाई जाएगी।

कुओमिन्तांग की बैठक ने पहले इस प्रस्ताव को ठुकरा दिया, किन्तु यह मंजूर किया कि कम्युनिस्टों के साथ तब तक बात जारी रह सकती है, जब कि वह निम्न बातों पर विचार करने को तैयार हैं :

(1) लालसेना तोड़ दी जाय और उसे राष्ट्रीय सेना में मिला दिया जाय,

(2) सोवियत गणराज्य खतम कर दिया जाय,

(3) सुन् यात्-सेन् के तीन सिद्धान्तों के विरुद्ध कोई प्रचार न किया जाय, और

(4) वर्ग-युद्ध का ढंग छोड़ दिया जाय।

वस्तुतः इन सारी बातों से यही दिखलाने की कोशिश की गई कि कुओमिन्तांग नहीं, बल्कि कम्युनिस्ट दबें।

15 मार्च, 1937 को कम्युनिस्ट पार्टी, सोवियत सरकार और लालसेना ने नानकिंग सरकार से सुलह की प्रार्थना की, और जून तक करीब-करीब सारी बातें तै हो गईं। च्यांग भी समझौते के लिए उत्सुक था। उसने हवाई-जहाज भेजकर जून में चाउ एन्-लाइ को अपनी ग्रीष्म राजधानी कुलिंग में बुलाया। कुछ दिनों की बातचीत के बाद कम्युनिस्ट पार्टी के भेजे प्रस्ताव के अनुसार ही करीब-करीब सुलह हो गई। इससे पहले अप्रैल से ही दोनों पक्षों में सद्भाव पैदा हो गया था। कम्युनिस्टों के दमन के लिए भेजी गई सेनाएँ लौटा ली गई थीं। च्यांग ने अपने उस विभाग को भी तोड़ दिया, जो लाल डाकुओं को मटियामेट करने के लिए दस सालों से काम कर रहा था। सोवियत-इलाकों के ऊपर से घेरा हटा लिया गया, और माल और लोगों का यातायात बेरोक-टोक होने लगा। सोवियत-इलाके ने जल्दी ही बाहर के प्रदेशों से व्यापार करना शुरू किया, सड़कें और तार का प्रबन्ध हुआ, एक नगर से दूसरे नगर लारियाँ आने लगीं, उद्योग-धन्धों के लिए मशीनें मँगाई जाने लगीं, बड़े परिमाण में किताबें मँगाकर एक अच्छा पुस्तकालय कायम कर दिया गया। चीन के भिन्न-भिन्न भागों में अन्तर्धान रहते कम्युनिस्ट सोवियत की नई राजधानी येनान् में चले आये। जापान-विरोधी सैनिक युनिवर्सिटी के नाम से अब लाल सैनिक विद्यालय काम करने लगा। उसके पास भरती होने के लिए हजारों दरखास्तें आने लगीं और कितने ही विद्यार्थी तो सैकड़ों मील पैदल चलकर उसमें दाखिल होने आये। मई (1936 ई.) में सोवियत इलाके का नाम विशेष-भूभाग रख दिया गया। कम्युनिस्टों को डा. सुन् के तीन सिद्धान्तों को मानने में कोई आपत्ति नहीं थी, क्योंकि गणराज्य, राष्ट्रीयता और आजीविका के बारे में इन तीनों सिद्धान्तों की व्याख्या साम्यवादी ढंग से भी की जा सकती थी। कम्युनिस्टों ने जमींदारों की सम्पत्ति जब्त करना छोड़ दिया, किन्तु उसके बदले में च्यांग ने 50 लाख डालर की पहली भेंट उनके पास भेजी। अब सोवियत इलाके की सीमाओं पर कम्युनिस्ट और कुओमिन्तांग के झंडे साथ-साथ फहराये जाते, सोवियत के दफ्तरों पर भी दोनों ही झण्डे लहराते।

इतना सद्भाव दिखलाते हुए भी माओ चे-तुंग ने अपनी नीति को स्पष्ट करके बतलाया था :

"इस पारस्परिक समझौते की एक सीमा है। सोवियत जिलों और लालसेना का नेतृत्व कम्युनिस्ट पार्टी ने अपने हाथ में रक्खा है। कुओमिन्तांग से सम्बन्ध रखते हुए भी अपने अस्तित्व को अलग बनाये रखने तथा एक सीमा तक कुओमिन्तांग की आलोचना करने का भी हमें हक है, इन बातों में कोई जरा भी रियायत नहीं की जा सकती। कम्युनिस्ट पार्टी अपने साम्यवाद की स्थापना के ध्येय को कैसे छोड़ सकती है ? किन्तु इसके लिए पहले जनतांत्रिक-क्रान्ति की जरूरत है, जिसके लिए ही हमने नई नीति स्वीकार की है। कम्युनिस्ट पार्टी अपने कार्यक्राम और नीति को छोड़ नहीं सकती।"

14
जापान-प्रतिरोध (1936-39 ई.)

1. 'दाँवपेंच'

जापान के आक्रमण ने देश के सामने एक नई समस्या पैदा कर दी थी, जिसे हल करते हुए संयुक्त-मोर्चे के पथ-प्रदर्शन के लिए साथी माओ चे-तुंग ने 1936 ई. की शरद में लाल सैनिक अकादमी के लिए 'चीन क्रान्तिकारी युद्ध की दाँव-पेंच सम्बन्धी समस्याएँ' के नाम से एक पुस्तिका लिखी। इसमें चीन के महान् नेता को एक महान् युद्धविशारद के रूप में देखा जा सकता है। पुस्तिका में सिद्धान्त-प्रतिपादन की वह शैली देखी जाती है, जिसे कि पुराने भारतीय विचारक अपने ग्रंथों के लिखने में इस्तेमाल किया करते थे। यह कोई आकस्मिक घटना नहीं है, क्योंकि हजारों वर्षों तक भारतीय आचार्यों की कृतियाँ चीन में बड़े आदर के साथ पढ़ी जाती रहीं। माओ ने आरम्भ में ही पुस्तिका को आरम्भ करते हुए लिखा है : "युद्ध के विधान (मानव-निर्मित विधानों से भिन्न प्राकृतिक अर्थों में)–एक ऐसी समस्या है, युद्ध-संचालन करनेवाले हरेक आदमी को जिसका अध्ययन करना और हल करना है।"

"क्रान्तिकारी युद्ध के विधान–यह ऐसी समस्या है, जिसे हरेक क्रान्तिकारी युद्ध के संचालन करनेवाले को अध्ययन करना और हल करना है।"

"चीन के क्रान्तिकारी युद्ध के विधान–यह एक ऐसी समस्या है, जिसे चीन के क्रान्तिकारी युद्ध के हरेक संचालन करनेवाले को अध्ययन करना और हल करना है।"

"इस समय हम एक युद्ध में–क्रान्तिकारी-युद्ध में लगे हुए हैं, जिसे अर्धउपनिवेशी चीन में विद्यमान राजनीतिक और आर्थिक स्थितियों में लड़ा जा रहा है। इस प्रकार हमें केवल युद्ध के सामान्य कानूनों का ही अध्ययन नहीं करना है, बल्कि क्रान्तिकारी युद्ध के, विशेषकर चीनी क्रान्तिकारी युद्ध के विशेष कानूनों का भी अध्ययन करना है।"

इसके बाद युद्ध की (परिभाषा) बतलाते हुए माओ ने लिखा है :

"युद्ध, वर्ग-समाज के आरम्भ से ही विकास की एक खास अवस्था में वर्गों, राष्ट्रों, राज्यों या राजनीतिक गुटों के बीच के विरोधों का फैसला करने के लिए किये जानेवाले संघर्ष के सर्वोच्च रूपों में से एक है। बिना युद्ध और युद्ध की स्थितियों और विशेषताओं तथा बाहरी वस्तुओं के साथ उसके सम्बन्धों को जाने बिना युद्ध के कानूनों को नहीं जाना जा सकता, न उसके संचालन करने के उपायों और साधनों को जाना जा सकता है, और उसके बिना विजय प्राप्त करना असंभव है।"

"क्रान्तिकारी युद्ध–क्रान्तिकारी वर्ग-युद्ध अथवा क्रान्तिकारी राष्ट्रीय युद्ध में युद्ध की सामान्य स्थितियों और विशेषताओं के अतिरिक्त अपनी विशेष स्थितियाँ और स्वभाव होते हैं। इस प्रकार युद्ध के आम कानूनों के अतिरिक्त इस पर उसके अपने निजी विशेष कानून लागू होते हैं। इस विशेष स्थितियों, विशेषताओं और कानूनों को जाने बिना क्रान्तिकारी युद्ध के संचालन करने का कोई उपाय नहीं, या ऐसे युद्ध में विजय प्राप्त करने का कोई रास्ता नहीं है।..."

"इसलिए हमें आम युद्ध के आम कानूनों का अध्ययन करना चाहिए, साथ ही क्रान्तिकारी युद्ध आम कानूनों को भी और अन्त में हमें चीन के क्रान्तिकारी युद्ध के कानूनों का अध्ययन करना चाहिए।"

इसके बाद माओ चे-तुंग युद्ध को मार्क्सवादी दृष्टि से अध्ययन करने पर जोर देते हुए कहते हैं :

"इस गलत धारणा का बहुत पहले हमने खण्डन किया है कि युद्ध के आम कानूनों का अध्ययन करना पर्याप्त है, अर्थात् चीनी सरकार या सैनिक अकादमी द्वारा जारी किये गये सैनिक नियमों और व्यवस्थाओं का अनुसरण करना पर्याप्त है। वह लोग जो ऐसी धारणा रखते हैं, वह नहीं जानते कि यह नियम युद्ध के आम

कानूनों पर आधारित है, और विशेषकर वह केवल दूसरे देशों की पूरी तौर से नकल है। यदि हम रूप या विषय में जरा भी परिवर्तन किये बिना आँख मूँदकर उनका अनुकरण करेंगे, तो छोटे जूते में ठीक होने के लिए हम अपने पैर काटेंगे, जिसका परिणाम पराजय होगी। तो भी ये लोग तर्क करते हैं कि चूँकि यह कानून अतीत के खूनी तजर्बों के परिणाम हैं, फिर वह क्यों नहीं उपयोगी हैं ? किन्तु, ये लोग यह नहीं जानते कि अतीत के खूनी तजर्बों का सम्मान करते हुए भी, हमें अपनी निजी खूनी तजर्बों का भी सम्मान करना होगा।

"इस गलत धारणा का भी हमने बहुत पहले खण्डन किया है कि रूसी क्रान्तिकारी युद्ध का अध्ययन करना पर्याप्त है। ··· वह नहीं जानते कि सोवियत तजर्बों का सम्मान करते हुए बल्कि दूसरे ऐतिहासिक अथवा विदेशी युद्धों की अपेक्षा अधिक सम्मान करते हुए भी, उसकी अपेक्षा हमें चीनी क्रान्तिकारी युद्ध के तजर्बों के प्रति अधिक सम्मान प्रदर्शित करना होगा, क्योंकि चीनी-क्रान्ति और चीन लालसेना को बहुत-सी विशेष स्थितियों से गुजरना पड़ा है।

मार्क्सवादी दृष्टि से निष्कर्ष निकालते हुए माओ चे-तुंग कहते हैं :

"ऊपर की बातों से यह देखा जा सकता है कि युद्ध की स्थिति के भेदों की विशेषता पर भिन्न-भिन्न देश, काल और स्वभाव के अनुसार युद्ध के कानूनों के संचालन करने में भेद होता है। काल के विचार से युद्ध और उसके संचालन करनेवाले कानून विकासशील हैं, जिनका प्रत्येक ऐतिहासिक मंजिल पर विशेष स्वभाव होता है, जिसका परिणाम होता है युद्ध के विशेष कानून, जिनका कि भिन्न-भिन्न मंजिल पर बिना परिवर्तन किये अनुसरण नहीं किया जा सकता। युद्ध के स्वभाव की दृष्टि से देखने पर क्रान्तिकारी या प्रतिक्रान्तिकारी युद्ध में क्रान्तिकारी वर्ग या क्रान्तिकारी राष्ट्रीय युद्ध में अपने ऐसे विशेष स्वभाव होते हैं, जिनके कारण विशेष-विशेष स्वभावोंवाले अपने निजी कानून होते हैं, जिन्हें पका-पकाया एक से दूसरे में स्थानान्तरित नहीं किया जा सकता। देश की दृष्टि से विचार करने पर भी वही बात है, क्योंकि हरेक राज्य या राष्ट्र का युद्ध के कानूनों के विषय में अपने निजी विशेष स्वभाव होते हैं, जिन्हें कि एक से दूसरे के लिए नकल नहीं किया जा सकता। भिन्न-भिन्न ऐतिहासिक मंजिलों, भिन्न-भिन्न स्वभावों, भिन्न-भिन्न भूभागों और भिन्न-भिन्न राष्ट्रों के युद्ध-कानूनों के अध्ययन के समय हमें अपना ध्यान उनके अपने-अपने स्वभावों और विकासों पर केन्द्रित करना चाहिए, और युद्ध-विज्ञान में यान्त्रिक सिद्धान्तों का प्रत्याख्यान करना चाहिए।"

पहले अध्याय में 'युद्ध का अध्ययन कैसे करना चाहिए' इसे बतलाकर दूसरे अध्याय में माओ ने चीनी क्रान्तिकारी युद्ध और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के सम्बन्ध में अपने सिद्धान्तों का निरूपण किया है, तीसरे अध्याय में उन्होंने चीनी क्रान्तिकारी युद्ध की विशेषताओं को बतलाया, चौथे अध्याय में इस युद्ध के मुख्य रूपों आदि की विवेचना की, फिर दाँव-पेंच-सम्बन्धी प्रतिरक्षा (अध्याय 5) के सम्बन्ध में कहते हुए उन्होंने बतलाया है :

"शत्रु को सीमा से परे रोकने के पक्षपाती और दाँव-पेंच-सम्बन्धी पीछे हटने के विरोधी कहते हैं कि "पीछे हटने का अर्थ है भूमि को हाथ से देना, लोगों के लिए खतरा पैदा करना और बाहरी दुनिया में अनुकूल प्रभाव पैदा करना।" पाँचवें आक्रमण के दिनों में वह तर्क करते थे : जब हम एक कदम पीछे हटते हैं, तो शत्रु के चौकी घरों की पाँती एक कदम आगे बढ़ती है, जिससे सोवियत-क्षेत्र का भूभाग लगातार कम होता जाता है, और उसे फिर से पाने की सम्भावना नहीं रहती।"

साथी माओ चे-तुंग की यह छोटी-सी पुस्तिका चीन में सर्वहारा की विजय के लिए बहुमूल्य साबित हुई है, और दूसरे देशों के सर्वहारा भी बहुत शिक्षा ले सकते हैं।

2. दूसरे युग का लेखा-जोखा

इस दूसरे क्रान्तिकारी गृह-युद्ध के ऊपर सिंहावलोकन करते हुए हू चियाओ-मू* ने लिखा है :

---

* 'पार्टी के तीस वर्ष', पृष्ठ 47-48

" दूसरे क्रान्तिकारी गृह-युद्ध का काल एक ऐसा काल था, जिसमें चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने, अत्यन्त कठिन परिस्थितियों में राजनीतिक परिपक्वता प्राप्त की और क्रान्ति को नई ऊँचाइयों पर पहुँचा दिया। इस काल में मुख्य रूप से साथी माओ चे-तुंग की कोशिशों की बदौलत, पार्टी ने गहराई के साथ सैनिक काम और गाँवों के काम के महत्त्व को समझा-बूझा, क्रान्तिकारी सेना और देहातों में क्रान्तिकारी अड्डों का निर्माण किया, क्रान्तिकारी लड़ाई को चलाने के तरीके सीखे, भूमि-सुधार को लागू करने और अन्य दूसरे कामों को—ऐसे कामों को जो राज्यसत्ता के अन्तर्गत आते थे—करना सीखा। इस काल के दौरान में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने साथी माओ चे-तुंग को अपने असल मार्क्सवादी-लेनिनवादी नेता के रूप में अपनाया और इसी के साथ-साथ, निम्न पूँजीपति-वर्ग के 'वामपक्षी' विभिन्न प्रकार के सिद्धान्तों के खतरे और हानिकारक रूपों को भी पहचाना। विभिन्न प्रकार की गलत निम्न-पूँजीवादी विचारधाराओं के खिलाफ संघर्ष के दौरान में पार्टी ने साथी माओ चे-तुंग की रहनुमाई में अपने नेतृत्व को कायम किया।

" पहले क्रान्तिकारी युद्ध के दौरान में कुओमिन्तांग कम्युनिस्ट सहयोग के सिलसिले में सुधारवादी गलतियों का मुख्य खतरा सामने था। लेकिन, इस काल में पार्टी के नेतृत्व ने मुख्य तौर पर 'वामपक्षी' गलतियाँ कीं। 'वामपक्षी' गलतियों ने पार्टी और लालसेना को भारी आघात पहुँचाया और नई ऊँचाइयों की ओर क्रान्ति को न बढ़ने दे, उसके पैर को पीछे की ओर घसीटा। फिर भी पार्टी और लालसेना ने—जो कितनी ही उथल-पुथलों और पेचीदा संकटों से मूल्यवान् अनुभव प्राप्त कर बाहर निकली थी—बाद के दिनों में प्रतिरोध-युद्ध और जनता के मुक्ति संग्राम की मुख्य शक्ति का रूप धारण कर लिया। इन तथ्यों की रोशनी में कहा जा सकता है कि द्वितीय क्रान्तिकारी गृह-युद्ध के दौरान में ही वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण राजनीतिक तैयारियाँ हुईं और वैसे कार्यकर्ता तैयार किये गये, जिनकी वजह से आज चीनी-क्रान्ति विजयी हुई है।

" 1927 से 1937 तक के अत्यन्त प्रतिक्रियावादी काल को पार्टी ने पार किया। इस काल में एक ओर तो दुश्मन ने हमारी पार्टी को पूर्णतया खतम करने की कोशिश की और हमारी पार्टी को दुश्मन के खिलाफ अत्यन्त कठिन, पेचीदा और वीरतापूर्ण लड़ाइयाँ लड़नी पड़ीं, और दूसरी चेन् तू-स्यू के सुधारवादी अवसरवाद पर काबू पाने के बाद पार्टी को कई बार 'वामपक्षी' अवसरवाद के आघातों को सहना पड़ा। इन आघातों ने पार्टी को भारी खतरे में डाल दिया। फिर भी, साथी माओ चे-तुंग की सही, रचनात्मक, मार्क्सवादी-लेनिनवादी रहनुमाई की बदौलत, असाधारण धीरज और अनुशासन को मानने की भावना की बदौलत अन्त में अच्छे फलों के साथ पार्टी ने अवसरवादी गलतियों पर काबू पाने और अपने को अत्यन्त खतरनाक परिस्थितियों में से बाहर निकालने में सफलता प्राप्त की। इस प्रकार, प्रतिक्रिया के दस साल के काल में बावजूद दुश्मनों के भीतरी और बाहरी आक्रमणों के, पार्टी देशभर की आम जनता को क्रान्तिकारी भावना में दीक्षित करने में समर्थ हो सकी, व्यापक जन-समूह के बीच पार्टी ने अपने क्रान्तिकारी फरहरे को ऊँचा उठाये रखा, लालसेना की शक्ति के मुख्य हिस्से को और क्रान्तिकारी अड्डों के कुछ इलाकों को बचाये रखा। भारी संख्या में पार्टी के प्रमुख कार्यकर्ताओं को और पार्टी के दसियों हजार सदस्यों को सुरक्षित रखने में पार्टी ने सफलता प्राप्त की। साथ ही पार्टी ने इस काल में क्रान्तिकारी अनुभव की बहुमूल्य निधि भी प्राप्त की—खास तौर से युद्ध और क्रान्तिकारी अड्डे कायम करने के बारे में पार्टी ने अनुभव हासिल किये। साथ ही पार्टी ने जापानी आक्रमण के खिलाफ देशव्यापी देशभक्तिपूर्ण प्रतिरोध के नये उठान में अपना कर्तव्य पूरा करने और कुओमिन्तांग और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के बीच नया सहयोग कायम करने के बारे में बहुमूल्य अनुभव हासिल किया।'

3. भावी युद्ध

साथी माओ चे-तुंग ने जुलाई, 1936 में ही युद्ध के तरीके के बारे में एक पत्रकार से कहा था :

" कुछ लोग समझते हैं कि ज्यों ही जापान ने तटीय नगरों पर कब्जा कर बाहर से युद्ध-सामग्री ले जाने का रास्ता रोक दिया, त्यों ही चीन के लिए लड़ते रहना असम्भव हो जायगा और जापान जीत जायगा। यह बिलकुल बेवकूफी की बात है। ऐसे लोगों का ध्यान हम सिर्फ लालसेना के इतिहास की ओर खींचना चाहते

हैं। ऐसे मौके आये, जब कुओमिन्तांग की सेना हमारी सेना से दस गुनी थी और उसके पास युद्ध-सामग्री भी हमसे बहुत अधिक थी। आर्थिक दृष्टि से उसकी साधन-सम्पन्नता का क्या कहना है ? उसे बाहर से भरपूर सहायता मिलती थी। किन्तु, इन सब बातों के होते हुए भी क्यों लालसेना विजय-पर-विजय प्राप्त करती रही और क्यों वह आज सिर्फ जिन्दा ही नहीं, बल्कि उसकी ताकत कहीं अधिक बढ़ गई है ?

" इसका कारण स्पष्ट है। लालसेना और सोवियत-सरकार ने अपनी सेना के अन्दर की जनता को सुदृढ़ एकता के सूत्र में आबद्ध कर लिया था। वह चट्टान की तैरह मजबूत और ठोस बन गई थी। उसका हरेक आदमी समझता था कि यह लड़ाई हमारी 'अपनी' लड़ाई है—अपने घरबार की लड़ाई, अपने स्वार्थ की लड़ाई, अपने अधिकार की लड़ाई है। दूसरी बात यह थी कि जो लोग लालसेना का संचालन करते थे, वे योग्य व्यक्ति थे, उनमें ताकत और बलिदान-भावना थी। वे युद्ध-कला के जानकार थे और अपनी राजनीतिक, आर्थिक और सैनिक स्थिति को भली भाँति समझते थे। लालसेना की जिन्दगी चन्द राइफलों से शुरू हुई, किन्तु, शुरू से ही वह सफेद सेना को हराती रही। क्यों ? इसलिए कि वह जनता की थी, सफेद सेना में भी उसके हिमायती थे और सरकारी अफसर भी उसकी निःस्वार्थ नीति से प्रभावित थे। हमारे दुश्मनों की सैनिक शक्ति असीम थी, किन्तु राजनीतिक दृष्टि से वे विशृंखलित थे।

" जापान-विरोधी युद्ध छिड़ने पर चीन की संयुक्त सेना को लालसेना से भी अधिक सहूलियतें होंगी। चीन एक देश नहीं महादेश है और जब तक उसकी इंच-इंच भूमि को जीत न लिया जाय, तब तक चीन को विजित नहीं कहा जा सकता। अगर जापान ने चीन के एक बड़े हिस्से को भी जीत लिया—मान लीजिए, उसने 10 करोड़ या 20 करोड़ की आबादी पर भी अपना शासन जमा लिया, तो भी उसकी विजय पूरी नहीं कही जायगी। उस समय भी हमारे पास काफी बड़ी ताकत होगी और हमारे दुश्मनों को बहुत बड़े और फैले हुए मोर्चों पर हमसे लगातार लड़ते ही रहना पड़ेगा।

" सवाल उठाया जा सकता है : हमारे पास युद्ध-सामग्री कहाँ से आवेगी ? उत्तर है : जापान हमारे उन कारखानों और शस्त्रागारों पर कब्जा नहीं कर सकता, जो देश के बहुत भीतर, बिलकुल सुरक्षित स्थानों में स्थापित हैं। उनसे हम इतने अस्त्र-शस्त्र तैयार कर सकेंगे, कि हम वर्षों तक लड़ते रहें। फिर, जापान हमें उसके हाथों से ही अस्त्र-शस्त्र छीनने से कैसे रोक सकता है ? हमारी लालसेना तो नौ वर्षों तक कुओ-मिन्तांग से छीने अस्त्र-शस्त्रों पर ही मुख्यतः निर्भर रही—हमारे दुश्मन ही हमारे 'शस्त्र-वाहक' साबित हुए। जिस समय समूचा चीन जापान के खिलाफ एक होकर खड़ा होगा, उस समय इसकी सम्भावना कितनी अधिक हो जायगी, जरा इसकी कल्पना कीजिए।

" यह ठीक है कि आर्थिक दृष्टि से अभी चीन में एकसूत्रता नहीं है। किन्तु, चीन की अविकसित आर्थिक स्थिति भी जापान-विरोधी युद्ध के लिए एक वरदान ही सिद्ध होगी; क्योंकि शांघाइ को चीन से छीन लेने पर भी चीन की वह दयनीय स्थिति नहीं हो जायगी, जो न्यूयार्क के छीन लेने से अमेरिका की हो सकती है। फिर, जापान कितना बड़ा घेरा डालेगा ? वह हमारे उत्तर-पश्चिम, दक्षिण-पश्चिम और पश्चिम में तो कुछ कर ही नहीं सकेगा। आखिर जापान की सबलता तो समुद्र पर ही है।

" एक बात और भी ध्यान में रखना है। जापान की जनता भी इतनी बड़ी लड़ाई का बोझ अधिक दिनों तक बर्दाश्त नहीं करेगी। ज्यों ही चीन ने जापान को दो-तीन अच्छी 'पटक' दीं, उसे जरा जोर से हराया कि जापान की शोषित जनता कंधा फड़फड़ाकर खड़ी होगी और तब जापान हमसे लड़ेगा या घर सम्हालेगा ? जापान में क्रान्ति होना अनिवार्य है। फिर बाह्य मंगोलिया और रूस—हमारे ये दो पड़ोसी राष्ट्र कब तक अलग खड़े तमाशा देखते रहेंगे ? रूस अपने को ज्यादा दिनों तक अलग नहीं रख सकेगा। क्योंकि, चीन पर कब्जा होने से तो जापान को एक ऐसी भूमि मिल जायगी, जिस पर पैर जमाकर वह रूस के छक्के छुड़ा सकता है। रूस ऐसी गलती कभी नहीं करेगा। इंग्लैंड और अमेरिका भी चीन के अपने स्वार्थों को जापान के हाथ में सौंप अपने पैर में कुल्हाड़ी नहीं मारेंगे।

" इस लड़ाई में हमारी युद्ध-कला क्या होगी—यह भी विचारणीय है। हम उसी नीति का अवलम्बन करेंगे,

जिसे लालसेना करती रही है। एक विस्तृत, परिवर्तनशील, और असीम मोर्चे पर लुक-छिपकर लड़ना–कभी पीछे हटना, कभी आगे बढ़ना, कभी निकल भागना, कभी जबर्दस्त धावे करना–यही नीति हम अख्तियार करेंगे। एक जगह जमकर बड़े पैमाने पर लड़ना–खाइयाँ खोदना, घेरे बनाना, मजबूत किले बनाना, यह गलती हम नहीं करेंगे। पर, इसका मतलब यह भी नहीं होगा कि हम मोर्चे की महत्त्वपूर्ण जगहों को यों ही हाथ से निकल जाने देंगे। ऐसी जगहों पर हम जमकर लड़ेंगे भी–किन्तु, ऐसा लड़ना हमारी तात्कालिक युद्ध-कला होगी, स्थायी युद्धकला तो हमारी वही लुक-छिप की लड़ाई होगी।

" भौगोलिक दृष्टि से युद्ध का रंगमंच इतना विस्तृत होगा कि इस पद्धति से हम बहुत बड़े फायदे में रहेंगे। जब कि जापानी सेना सोच-समझकर, रुक-रुककर, भारी युद्ध-सामग्रियों के साथ धीरे-धीरे आगे बढ़ेगी, उस समय हम इधर-उधर दौड़ते जैसे उसे तबाह और बर्बाद करेंगे। जमकर लड़ना या किसी प्रमुख स्थान की रक्षा में अपनी ताकत को बिलकुल बरबाद करना, तो उस सहूलियत को ठुकराना है, जो हमारे देश की भौगोलिक स्थिति हमें देना चाहती है। अबिसीनिया ने जो गलती की, हमें उसे दुहराना नहीं है। किसी निर्णयात्मक महान् युद्ध की भूल-भूलैया में हम लड़ाई के प्रारम्भ में नहीं पड़ेंगे। हमारा काम होगा धीरे-धीरे दुश्मन को थकाना, उसके युद्ध-साहस को तोड़ना, उसकी लड़ाई की योग्यताओं को खतम करना।

" बेचारे अबिसीनियावाले दो गलतियों के शिकार हुए : एक तो उनमें राजनीतिक कमजोरियाँ थीं, दूसरे वे एक जगह मोर्चा बाँधकर डट गये और इस प्रकार उन्होंने हत्यारे दुश्मनों को बम गिराने, जहरीली गैस छोड़ने और दूसरे शक्तिशाली युद्ध साधनों का प्रयोग करने का मौका दे दिया। वे कहीं के नहीं रहे।

" फिर, हम बाकायदा सेना पर ही निर्भर नहीं रहेंगे। हम अपने किसानों के अन्दर से स्वयंसेना बनाएँगे, गोरिल्ला-सैनिकों की सृष्टि करेंगे, राजनीतिक और सैनिक दोनों तरह की शिक्षा देंगे। वे हमारे तत्त्वावधान में अपना कमाल दिखाएँगे। किसानों की स्वयंसेना कैसा कमाल कर सकती है, इसका सबूत इस गृह-युद्ध में ही नहीं मिला है, बल्कि मंचूरिया में जापानियों को भी उसकी एक झलक मिल चुकी है। हमारी यह स्वयंसेना दुश्मनों को चौबीसों घंटे तंग करती रहेगी–उन्हें उलझाकर मार डालेगी।

" यह याद रखना है कि लड़ाई चीन में होगी। इसका मतलब यह है कि दुश्मनों को चौबीसों घंटे हमारे घेरे के अन्दर रहना पड़ेगा–उनके चारों ओर एक ऐसी जमात रहेगी, जो मौका पाते ही उन्हें निगल जाना चाहेगी। उन्हें एक जगह से दूसरी जगह बहुत सावधानी से जाना पड़ेगा। अपने कैम्प, अपनी रसद, अपने रास्ते, सबकी रक्षा में दिन-रात चौकस रहना पड़ेगा। इन सबके साथ मंचूरिया और जापान में भी उन्हें अपने आधारों की रक्षा करनी पड़ेगी।

" ज्यों-ज्यों लड़ाई के दिन बीतते जायँगे, हम उनसे अस्त्र-शस्त्र छीनकर अपने को ज्यादा-से-ज्यादा सशस्त्र बनाते जायँगे। एक समय ऐसा भी आयेगा, जबकि हम उनसे जमकर लड़ाई ले सकेंगे, हम खाइयाँ खोदेंगे, किला बनावेंगे। लड़ाई करते-करते हमारी फौज युद्ध-कला में निपुण होती जायगी। विदेशी मदद को भी हम बन्द नहीं कर सकते। ज्यादा दिन तक लड़ाई चलने पर, जापान के लिए उसका खर्च बर्दाश्त करना मुश्किल पड़ जायेगा। उसकी अर्थनीति ताश के घर की तरह ढह पड़ेगी। लड़ते-लड़ते उसकी फौज भी ऊब उठेगी–जिस लड़ाई की कोई सीमा नहीं हो, उसमें कहाँ तक कोई ज़ान खपाता रहेगा ? चीन की जनसंख्या इतनी अधिक है कि हमें नये-नये लड़ाके सदा मिलते जायेंगे। जिन जापानी सैनिकों को हम पकड़ेंगे, उनके साथ हमारा अच्छा सलूक होगा। हम उन्हें बतावेंगे कि भाइयो, आप भी गरीब के ही लड़के हैं। इन फासिस्तों के फेर में क्यों पड़े हैं ? आओ, मिलकर हम इन मुट्ठीभर तानाशाहों का सामना करें।

" ये और दूसरी हालतें वह सूरत पैदा करेंगी, जब कि हम जापान के किले और मोर्चे पर आखिरी धावा कर जापान को अपने देश से भगाकर ही दम लें। जापानी जहाज चीन की चट्टान पर आकर टूटेगा ही–यह निश्चय है ! निश्चय है !! निश्चय है !!! "

4. लोक-युद्ध

देश की स्थिति जितनी गम्भीर होती जाती थी, उसी तरह साथी माओ चे-तुंग की प्रतिभा भी अपनी करामात दिखला रही थी। 1937 के अगस्त में लोचुआन में पार्टी की छठी कांग्रेस हुई, जिसका माओ ने लोक-युद्ध में सफलता प्राप्त करने के लिए दससूत्री कार्यक्रम उपस्थित किया जिनमें से कुछ ये हैं : (1) दुश्मन के मोर्चे की पिछाड़ी स्वतन्त्र रूप से गोरिल्ला युद्ध शुरू करने में पार्टी को अगुवाई करना, (2) इन गोरिल्ला दलों की जिम्मेवारी है कि वह अपने रणमोर्चे के साथ अपने काम का सम्बन्ध जोड़ें, (3) दुश्मन के पीठ के पीछे नया मोर्चा खोलना और जापान-विरोधी मुक्त इलाकों की स्थापना करना, (4) कुओमिन्तांग के इलाके में भी जापान-विरोधी आन्दोलन को पूर्ण रीति से विकास करने के लिए पार्टी का प्रयत्न करना, (5) जनता के राजनीतिक और आर्थिक हितों के लिए लड़ते हुए उसे जापान-विरोधी मोर्चे में सम्मिलित होने के लिए उत्साहित करना, (6) लोक-युद्ध के समय किसान-समस्या को हल करना, (7) लगान घटाना, (8) ब्याज घटाना···

माओ ने लोक-युद्ध की परख ठीक तौर से करके कहा :

"आज मजूर-वर्ग, व्यापारियों तथा जमींदारों के बीच में मतभेद है, यह ठीक है। यह मतभेद दोनों राजकीय दलों—कम्युनिस्ट पार्टी और कुओमिन्तांग—की नीति में भी दिखलाई पड़ता है। जापान के विरुद्ध लड़ना चाहिए, अब यह बहस की बात नहीं रह गई है। आज इसे कुओमिन्तांग के बड़े व्यापारियों और जमींदारों ने भी स्वीकार कर लिया है। जापान के विरुद्ध किस तरह लड़ा जाय, इसके बारे में दोनों दलों में अब भी मतभेद है। पर यदि च्यांग की 'सीमित युद्धनीति' पर काम किया गया, तो जापान जीतेगा और चीन हारेगा, यह भी बात पक्की है। लोक-युद्ध के नेतृत्व का इजारा च्यांग ने अपने हाथ में रक्खा है, किन्तु जापान के विरुद्ध लड़ने के लिए देश में जिन लोकतान्त्रिक सुधारों की आवश्यकता है, उसे करने के लिए वह राजी नहीं है। च्यांग चाहता है कि जनता की शक्ति न बढ़े। वह चाहता है, जापानियों के साथ लड़कर कम्युनिस्ट कमजोर बन जायँ और मैं दूर खड़ा तमाशा देखते अपनी सेनाओं को सुरक्षित रख अपनी शक्ति को अक्षुण्ण रखूँ। इस प्रकार जब हम जापानियों को हराने में लगे रहें, उस समय वह हमारे ऊपर हमला करने की नियत रखता है। उसकी धारणा है कि मेरी ताजी तैयार सेना थके-माँदे कम्युनिस्टों को तुरन्त दबोच लेगी। अमेरिका च्यांग की योजना का पूर्ण तौर से अनुमोदन करता है। लेकिन, हम च्यांग की इच्छा पूरी नहीं होने देंगे। हम उसके जन-विरोधी पैंतरे को बेकार कर देंगे। च्यांग जनतांत्रिक सुधार करना नहीं चाहता। हम स्वतन्त्र इलाके में स्वतन्त्र रूप से जनतांत्रिक सुधारों को कार्यरूप में परिणत करेंगे। वह जनता को हथियार नहीं देना चाहता, हम जैसे भी हो तैसे जनता को हथियारबन्द करेंगे। च्यांग विजय-यात्रा में जनता को प्रविष्ट होने नहीं देना चाहता, हम जनता को जागृत करके उसे जापान के विरुद्ध सक्रिय तौर से लड़ने के लिए कहेंगे। यह लोक-युद्ध है, और इसे लोक-युद्ध की रीति से लड़ा जायगा। लोगों के पूरे सहयोग के साथ ही इसमें विजय प्राप्त की जा सकती है।"

इस प्रकार साथी माओ के नेतृत्व में कम्युनिस्ट जापान-विरोधी युद्ध को पूरी तौर से लोक-युद्ध के रूप में परिणत करने के लिए तुले हुए थे।

5. जापान की विजय-यात्रा

(1) शांघाइ पर जापानी आक्रमण (1936 ई.)—सियान्-कांड के बाद चीन की राजनीतिक शक्ति का सबसे बड़ा केन्द्र येनान् हो गया—पाओ-एन् से अब लाल राजधानी येनान् में आ गई थी। वहाँ से उत्तरी चीन और मंचूरिया में फैले जापानी पंजे पर प्रहार करने की जोर-शोर से तैयारी होने लगी। इसी समय 13 अगस्त (1936 ई.) को जापानियों ने शांघाइ पर आक्रमण कर दिया। कम्युनिस्टों ने लोगों में उत्साह पैदा करने के लिए जो प्रयत्न किये थे, वह विफल कैसे हो सकते थे ? शांघाइ के निवासी जापान के खिलाफ लड़ाई में कूद पड़े। 1935 ई. से ही लियो शाउ-ची के नेतृत्व में छिपे हुए क्रान्तिकारी कार्रवाइयाँ कुओमिन्तांगी इलाको में भी हो रही थीं। सियान् के समझौते के बाद जब छिपे नेता ऊपर प्रकट होने और जेलों से निकलकर काम करने लगे,

तो जापान-विरोधी आन्दोलन बहुत जोर से होने लगा। जापान-विरोधी मुक्ति-संघ के एक नेता चाउ ताउ-फेंग ने शांघाइ में देशमुक्ति के सम्बन्ध में प्रचार करने के लिए एक दैनिक निकाला, जिसकी ग्राहक-संख्या एक लाख तक पहुँच गई। 'विश्व-संस्कृति', 'नारी-जीवन', 'जनता-साप्ताहिक' जैसे पत्र बड़े लोकप्रिय थे, और वह बड़ी संख्या में निकल रहे थे। छापेखाने जब नष्ट हो गये, तो हाथ से लिखे दीवाल-पत्र निकलने लगे। मार्क्सवादी पुस्तकों का प्रचार भी बड़े जोर से हो चला। पामदत्त की पुस्तक 'विश्व की राजनीति' के दो महीनों के भीतर तीन-तीन हजार के कई संस्करण खतम हो गये। माओ की कृतियों को खरीदने के लिए लोग दूकानों के सामने लम्बी कतार बाँधकर खड़े हो जाते।

इस तरह नवचेतना-प्राप्त शांघाइ की जनता अपनी नगरी की रक्षा में बहादुरी के साथ तत्पर थी। 'यह देश हमारा है', 'यह धरती हमारी है', 'हम मरेंगे, किन्तु दुश्मनों को मारकर, हम जियेंगे, किन्तु शत्रु को हराकर' जैसे नारे देश में सर्वत्र गूँज रहे थे। पतित च्यांग काइ-शेक ऐसे नारों को कैसे पसन्द कर सकता था ? वह जनता का शत्रु नहीं चाहता था कि जिस युद्ध में वह कायरता दिखला रहा है, उसमें जनता अपनी वीरता दिखलाकर उसके भविष्य के मनसूबे को तोड़ दे। लेकिन, सियान्-काण्ड के बाद उसकी अब इतनी हिम्मत नहीं थी कि जन-आन्दोलन पर प्रहार करे। च्यांग द्वारा गैर-कानूनी बनाये राष्ट्रकवि निये इरहे के राष्ट्रगीतों को नानकिंग के मुख्य सभागृह में गाया गया, जिन्हें सुनने के लिए खुद च्यांग के अफसर भी आये। बड़े-बड़े शहरों में 'राष्ट्रमुक्ति संस्कृति कार्यकर्ता-मंडल' की शाखाएँ कायम की जा रही थीं। खुद नानकिंग में स्थापना के पहले ही मास में उसके एक लाख से अधिक सदस्य हो गए। मोहल्ले-मोहल्ले और गाँव-गाँव में उसकी शाखाएँ खुलीं।

(2) पहली कम्युनिस्ट सफलता—सियान् के समझौते के बाद लालसेना ने अब 'आठवीं सेना' का नाम धारण किया था। महान् अभियान के समय माओ ने दक्षिणी प्रदेशों में लालसेना की जो टुकड़ियाँ छोड़ दी थीं, उन्होंने गोरिल्ला दल का रूप लिया था, जिसका नाम 'नई चौथी सेना' पड़ गया था। इस सेना के निर्माण की इजाजत नानकिंग की सरकार को देनी पड़ी थी। 'आठवीं सेना' जापान के खिलाफ उत्तरी चीन में लड़ने के लिए रवाना हो गई और उसने पहली बार जापान को जबर्दस्त हार दी। इस खबर से सारी जनता में बिजली की तरह उत्साह की भावना दौड़ गई—हम जापानियों को हरा सकते हैं। 'नई चौथी सेना' का कार्यक्षेत्र यांग-ची के दक्षिण-पूर्व चीन में था। जापान से लड़ने का काम यही दोनों सेनाएँ कर रही थीं। जापानी सेनाएँ जब आगे बढ़तीं, तो यह पीछे से गोरिल्ला-युद्ध छेड़ उनके यातायात को भंग कर उन्हें भारी क्षति पहुँचातीं। इनके कारण जापान देहात में अपनी शक्ति कायम करने में असमर्थ था। कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में ये दोनों सेनाएँ बराबर अपने काम में आगे बढ़ रही थी। इन्होंने चीन के उत्तर, पूर्व, मध्य और दक्षिण के प्रदेशों में जनता को हथियार दे जापान के विरुद्ध बाकायदा गोरिल्ला-वाहिनी का संगठन करके देहात में जनतांत्रिक इलाके कायम किये। इस लड़ाई के कारण कम्युनिस्टों की शक्ति और प्रभाव कितना अधिक बढ़ा, यह इसी से मालूम होगा कि लोक-युद्ध के तीसरे स्मृतिदिवस (1940 ई.) तक कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में लड़नेवाले सैनिकों की संख्या 40 हजार से 5 लाख हो गई, और पार्टी-मेम्बरों की संख्या 48 हजार से 8 लाख पर पहुँच गई। उनसे लड़ने के लिए जापान की आधी सेनाएँ फँस गईं। दुश्मन से 150 जिले छीन लिये गये, मुक्त इलाकों तथा गोरिल्ला-इलाके में 10 करोड़ आदमी रहते थे।

जापान ने 1931 ई. में मंचूरिया को लेकर फिर जेहोल, चहार, आदि प्रदेशों की ओर हाथ फैलाया। अभी सारे चीन पर हाथ साफ करने की उसको हिम्मत नहीं थी। वह समझता था, पश्चिमी साम्राज्यवादी हमें अकेले चीन को निगलने नहीं देंगे और दस्तंदाजी जरूर करेंगे। यह निश्चय ही था कि पश्चिमी देश यदि रूस से मिलकर पूर्व और पश्चिम के फासिस्तों को रोकना चाहते, तो उसमें सफल हो सकते थे। जब जापान को उनकी कमजोरियों का पता लग गया, तो उसने चीन को निगल लेने का निश्चय किया।

(3) पेकिंग पर अधिकार (1937 ई.)— 7 जुलाई, 1937 को जापानियों ने पेकिंग के दक्षिण में अवस्थित ल्यू-को-चाउ (मार्को पोलो पुल) पर हमला कर दिया। जापान को युद्धघोषणा की न कोई जरूरत थी, न युद्ध के कारण बतलाने की। उसके लिए यह पर्याप्त था कि मुल्क फरोश कायर च्यांग काइ-शेक के किये-कराये

कुछ नहीं होगा, और हमारा आक्रमण किसी तरह भी असफल नहीं होगा। चीनी कम्युनिस्टों की कार्रवाइयों को देखकर वह समझने लगा था कि चीन की रक्षा के लिए एक दूसरी शक्ति पैदा हो रही है, जिसके सफल हो जाने पर मुख्य चीन के उत्तरी और दक्षिणी भूभाग पर अधिकार नहीं हो सकेगा। च्यांग काइ-शेक की सरकारी राजधानी नानकिंग थी, जो पेकिंग से दक्षिण काफी दूर थी। जापान ने मंचूरिया में अपनी कठपुतली सरकार (मंचू-कुओ) तैयार कर ली थी, जहाँ पुराने मंचू-सम्राट फूइ के दरबार में चीन के बहुत-से गद्दार जा पहुँचे थे। पेकिंग किस तरह अपने को बचा सकती थी ? लेकिन, जापान की शक्तिशाली सेना के सामने पेकिंग के नागरिकों ने च्यांग की तरह कायरता नहीं दिखलाई। चीनी सैनिक वहाँ लड़े, फिर वह और पेकिंग के विद्यार्थी गोरिल्ला बन गये। 7 जुलाई से यदि जापान की यह यात्रा शुरू हुई, तो उसके साथ ही अब वस्तुतः जनता के सारे भागों में देश-उद्धार की तीव्र भावना भी पैदा हो गई।

पेकिंग के पतन के दूसरे दिन एक बुढ़िया भाजी की टोकरी ले नगर-द्वार के भीतर घुसी। उसने शत्रु की गतिविधि का अच्छी तरह पता लगाया। फिर एक गन्दी गली में छिपकर हथियार खरीदे और टोकरी में रखकर दूसरे दरवाजों से पहाड़ी का रास्ता लिया जहाँ उसने गोरिल्लों की एक टुकड़ी तैयार की। धीरे-धीरे गोरिल्लों की एक पलटन बन गई, जिसने जापानियों के खिलाफ हथियार उठा लिया। गोरिल्ला-माता चाउ अपनी बहादुरी के लिए सारे चीन में प्रसिद्ध हो गई। चाउ-माता के पुत्रों की संख्या एक साल बीतते-बीतते एक हजार हो गई, जिन्होंने 7वीं जुलाई, 1938 को फिर ल्यु-को-चाउ पुल पर चीन का राष्ट्रीय झंडा गाड़कर जापानियों को बतला दिया कि चीन की भूमि वीरहीन नहीं है। 29 जुलाई (1937) को जापानियों ने जब नगर पर हमला किया था, तो नागरिक दल के 600 वीरों ने छह घंटे तक उनका अकेले मुकाबला किया। च्यांग काइ-शेक का देशद्रोही जेनरल चेंग चे जापानियों से मिल गया, लेकिन उसकी सेना ने उसका अनुसरण करने से साफ इन्कार कर दिया। यह सेना जाकर राष्ट्रीय सेना में मिल गई। जापानी जब नानकाइ के प्रसिद्ध विश्वविद्यालय को जलाने आये, तो विद्यार्थियों ने अपने अध्यापकों के साथ हाथ में सिर लेकर उनसे लड़ाई की। फिर जो अध्यापक और विद्यार्थी बचे, वह विद्यालय की चीजों को लेकर लाल राजधानी येनान् को भाग गये।

6. दार्शनिक और विचारक माओ

साम्यवाद के अमर विचारक और पथ-प्रदर्शक लेनिन और स्तालिन जानते थे, कि पूर्व के जगने में बहुत देर नहीं होगी। 1918 ई. में स्तालिन ने 'अक्तूबर की क्रान्ति और जातियों का सवाल' नामक अपने लेख में लिखा था :

"अक्तूबर-क्रान्ति का विश्व के लिए सबसे बड़ा महत्त्व इस बात में है कि :

(1) इसने जातियों के सवाल के दायरे को बढ़ा दिया, यूरोप में जातीय उत्पीड़न के खिलाफ संघर्ष की एक समस्या-विषय को बदलकर, उसे उत्पीड़ित जातियाँ, उपनिवेशों और अर्ध-उपनिवेशों की साम्राज्यवाद से मुक्ति की आम समस्या बना दिया।

(2) इसने इस मुक्ति की व्यापक सम्भावनाओं और असली रास्तों को खोल दिया, एवं पश्चिम और पूर्व की उत्पीड़ित जातियों की मुक्ति के कामों को, उन्हें साम्राज्यवाद के खिलाफ विजय संघर्ष की आम धारा में खींचकर, आसान बना दिया है।

(3) इस प्रकार इसने समाजवादी पश्चिम और गुलामी में जकड़े हुए पूर्व के बीच नाता कायम करके विश्व-साम्राज्यवाद के खिलाफ एक नया क्रान्तिकारी मोर्चा कायम कर दिया—ऐसा मोर्चा जो पश्चिम के सर्वहारा-वर्ग से लेकर रूसी-क्रान्ति के जरिये पूर्व की उत्पीड़ित जातियों तक फैला हुआ है।"

स्तालिन ने चीनी-क्रान्ति की सम्भावनाओं को पहले ही से अच्छी तरह समझ लिया था, जब कि उन्होंने कहा था :

"पहले, अठारहवीं और उन्नीसवीं सदियों के दौरान में, क्रान्तियाँ आम तौर से लोगों के विद्रोह के साथ शुरू होती थीं जिनका ज्यादातर हिस्सा निहत्था या कमजोर तौर से हथियारबन्द होता था और पुरानी व्यवस्था

की सेना से उनकी टक्कर होती थी। इस सेना में वे फूट डालने या कम-से-कम आंशिक रूप में उसे अपनी ओर करने की कोशिश करते थे। उस जमाने में क्रान्तिकारी विस्फोटों का यही विशेष रूप होता था। 1905 में रूस में हमारे साथ भी ऐसा ही हुआ था। चीन में घटनाएँ दूसरे रूप में घटीं। चीन में जनता निहत्थी नहीं थी, बल्कि अपनी क्रान्तिकारी सेना के रूप में सशस्त्र क्रान्ति, सशस्त्र प्रतिक्रान्ति के खिलाफ लोहा ले रही है, यह चीनी क्रान्ति की एक विशेषता और उसका एक गुण है। चीनी क्रान्तिकारी सेना का खास महत्त्व भी इसी बात में है।"

इन संभावनाओं को अब माओ के नेतृत्व में साकार रूप धारण करने का अवसर आया था। माओ सर्वतोमुखीन प्रतिभा के धनी हैं, इसे हम अब तक अच्छी तरह जान गये हैं। उन्हें अपने कार्यों और भाषणों द्वारा ही क्रान्ति का पथ-प्रदर्शन करना नहीं था, बल्कि इसके लिए उन्हें अपनी शक्तिशाली लेखनी का भी उपयोग करना पड़ा। उन्होंने जहाँ युद्ध-विज्ञान पर अपनी कलम उठाई, वहाँ मार्क्सवाद के दार्शनिक सिद्धान्तों की भी क्रियात्मक रूप से व्याख्या की, और चीन के क्रान्तिकारियों के सामने भावी प्रोग्राम रक्खा। 1937 और 1938 ई. में उन्होंने कुछ महत्त्वपूर्ण पुस्तकें लिखीं, जिनका थोड़ा-सा परिचय यहाँ दे देना आवश्यक होगा।

(1) **'व्यवहार'**—इस पुस्तिका को माओ ने जुलाई, 1937 में लिखा था, और इसमें वह एक व्यवहारवाद दार्शनिक के रूप में हमारे सामने आते हैं। उन्होंने प्रमाण (प्रमा, ज्ञान) की जो विवेचना की है, उसमें हमें उसी शैली की झलक मिलती है, जिसमें भारत के प्रमाणशास्त्रियों ने अपने गम्भीर विचारों को रक्खा है। वह कहते हैं :

"प्राग-मार्क्सीय भौतिकवाद ने ज्ञान की समस्या को मनुष्य के सामाजिक स्वरूप से अलग करके परीक्षा करनी चाही, उसके ऐतिहासिक विकास से अलग करके परीक्षा करनी चाही, इसलिए वह यह नहीं समझ सका कि ज्ञान (प्रमाण) का आधार सामाजिक व्यवहार* है, अर्थात ज्ञान निर्भर करता है उत्पादन और वर्ग-संघर्ष पर।"

"मार्क्सवादी मनुष्य के उत्पादन-सम्बन्धी क्रियाकलाप को अत्यन्त मौलिक व्यावहारिक क्रियाकलाप के तौर पर, दूसरे सभी क्रियाकलापों पर मुख्यतः निर्भर करते मनुष्य प्रकृति के प्राकट्य (बाह्य रूप), प्रकृति की विशेषताओं, प्रकृति के कानूनों एवं मनुष्य और प्रकृति के सम्बन्ध को क्रमशः समझता है और उत्पादन-सम्बन्धी क्रियाकलापों द्वारा मनुष्य और मनुष्य के कतिपय पारस्परिक सम्बन्धों के बारे में भिन्न-भिन्न मात्रा में ज्ञान प्राप्त करता है। उत्पादन-सम्बन्धी क्रियाकलाप से अलग रहकर इस प्रकार का कोई भी ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता। एक ओर वर्गहीन समाज में समाज के व्यक्ति के तौर पर प्रत्येक आदमी अपने प्रयत्न में दूसरे व्यक्तियों से सहयोग करता, और उत्पादन के कुछ सम्बन्धों का निर्माण करता है, तथा मनुष्य के भौतिक जीवन की समस्या को हल करने के लिए उत्पादन-सम्बन्धी क्रियाकलापों में लग जाता है। दूसरी ओर, वर्गयुक्त समाज के भिन्न-भिन्न प्रकारों में, दूसरे सभी वर्गों के समाज के भी व्यक्ति भिन्न-भिन्न तरीके से बनते हैं। मनुष्य के भौतिक जीवन की समस्या को हल करने के लिए उत्पादन-सम्बन्धी क्रियाकलाप में वह लगते हैं और उत्पादन के सम्बन्ध में कुछ सम्बन्ध कायम करते हैं। यह प्रारंभिक स्रोत है, जिससे कि मानव-ज्ञान (प्रमा) विकसित होता है।

"मनुष्य का सामाजिक व्यवहार उत्पादन-सम्बन्धी क्रियाकलाप तक ही सीमित नहीं है। क्रियाकलाप के दूसरे भी कितने ही रूप हैं, जैसे—वर्ग-संघर्ष, राजनीतिक जीवन, विज्ञान और कला-सम्बन्धी क्रियाकलाप—संक्षेप में मनुष्य अपने समाज के वास्तविक जीवन के सभी क्षेत्रों में भाग लेता है। इस प्रकार, मनुष्य भौतिक जीवन द्वारा वस्तुओं के जानने के अतिरिक्त राजनीतिक जीवन और सांस्कृतिक जीवन—जो कि भौतिक जीवन से घनिष्ठतया सम्बद्ध हैं—के द्वारा भिन्न-भिन्न मात्रा में मनुष्य और मनुष्य के बीच के भिन्न-भिन्न आकार मनुष्य के ज्ञान के विकास पर बहुत व्यापक प्रभाव डालते हैं। वर्ग-समाज में हरेक व्यक्ति एक विशेष वर्ग की स्थिति के भीतर रहता है और विचार की हरेक शैली पर उसके वर्ग की मुहर की छाप अवश्य लगी रहती है।"

'प्रामाण्यं व्यवहारेण' के कहने का यह मतलब नहीं है कि 7वीं सदी के आरम्भ में धर्मकीर्ति को ज्ञानस्रोत का ठीक-ठीक पता लग गया। उससे इतना ही मालूम होता है कि अँधेरे में टटोलते-टटोलते उनका हाथ जबर्दस्त

* यहाँ यह उल्लेखनीय बात है कि सातवीं सदी के पूर्वार्द्ध के महान् प्रमाणशास्त्री धर्मकीर्ति ने कहा, "प्रामाण्यं व्यवहारेण।"

रत्न पर जा पड़ा, लेकिन अभी बाकी परिस्थितियाँ यथा धर्मकीर्ति की अपनी मानसिक तैयारी इतनी नहीं थी कि उस रत्न की वह पूरी तौर से परख कर सकते।

दार्शनिक माओ ने अपने प्रमाण-सम्बन्धी विचारों को और भी स्पष्ट करते हुए यहाँ कहा है :

"मार्क्सवादी मानते हैं कि मनुष्य का, केवलमात्र मनुष्य का, सामाजिक व्यवहार ही बाह्य जगत्-सम्बन्धी उसके ज्ञान की सच्चाई की कसौटी है। वस्तुतः मनुष्य के ज्ञान की प्रामाणिकता केवल तभी सिद्ध होती है, जबकि सामाजिक व्यवहार (भौतिक उत्पादन, वर्ग-सम्बन्ध तथा वैज्ञानिक तजर्बे) के दौरान में अपने विचारों में जिस परिणाम की वह संभावना रखता था, उसे प्राप्त करता है। यदि मनुष्य अपने काम में सफलता प्राप्त करना चाहता है, अर्थात् अपेक्षित परिणामों को प्राप्त करना चाहता है, तो उसे अपने विचारों को बाह्य जगत् के कानूनों के अनुकूल बनाना होगा। अगर वह अनुकूल नहीं हैं, तो वह व्यवहार में सफल नहीं होगा। असफल होने पर वह अपनी असफलता से सबक सीखेगा, अपने विचारों में इस प्रकार संशोधन करेगा कि वह बाह्य जगत् के कानूनों के अनुसार हों, और इस प्रकार वह अपनी असफलता को सफलता में परिणत कर सके। ··· द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के ज्ञान का सिद्धान्त (प्रमाणशास्त्र) व्यवहार को प्रथम स्थान देता है और मानता है कि मानव-ज्ञान व्यवहार से जरा भी अलग नहीं किया जा सकता। वह उन सभी गलत सिद्धान्तों (अपसिद्धान्तों) का प्रत्याख्यान करता है, जो कि व्यवहार के महत्त्व से इन्कार करते अथवा व्यवहार से ज्ञान को पृथक् करते हैं। जैसा कि लेनिन ने कहा है : "व्यवहार (सैद्धान्तिक) ज्ञान से ऊँचा है, क्योंकि इसमें केवल विश्वजनीनता का ही गुण नहीं मौजूद है, बल्कि यह वास्तविकता के गुण को भी अपने में रखता है।" मार्क्सवादी दर्शन—द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद—के दो सबसे बढ़कर स्वरूप हैं : एक है उसका वर्ग-सम्बन्धी स्वभाव, जो कि द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद सर्वहारा के पक्ष में अपने को खुलकर घोषित करता है, और दूसरा है उसका व्यवहार पर सिद्धान्त के निर्भर होने पर जोर देना—व्यवहार सिद्धान्त का आधार है, सिद्धान्त व्यवहार की सेवा करता है। किसी का ज्ञान या सिद्धान्त सच्चा है या नहीं, इसका निर्णय करते वक्त आदमी को उसके सम्बन्ध में अपने भीतर अनुभूत होनेवाली मानसिक भावनाओं पर निर्भर नहीं रहना चाहिए, बल्कि यह देखना चाहिए, कि वस्तुगत्या सामाजिक व्यवहार में उसका क्या फल है। द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के ज्ञान-सिद्धान्त (प्रमाणशास्त्र) में सर्वप्रथम और मौलिक दृष्टिकोण है व्यवहार का दृष्टिकोण।"

आगे चलकर फिर इसी बात की और स्पष्ट व्याख्या करते हुए माओ कहते हैं :

"सभी सच्चे ज्ञान (प्रमा) का स्रोत प्रत्यक्ष अनुभव है। लेकिन, मनुष्य हरेक चीज का प्रत्यक्ष अनुभव नहीं कर सकता। वस्तुतः, हमारा अधिकांश ज्ञान अप्रत्यक्षः अनुभूत वस्तु है, प्राचीन काल और दूसरे देशों-सम्बन्धी हमारा सारा ज्ञान इसी तरह का है।··· मनुष्य का ज्ञान निम्न दो भागों को छोड़कर और कुछ नहीं। प्रत्यक्ष अनुभव का ज्ञान और अप्रत्यक्ष अनुभव का ज्ञान*। जो मेरे लिए अप्रत्यक्ष अनुभव है, हो सकता है वह दूसरे के लिए प्रत्यक्ष अनुभव से पृथक् नहीं किया जा सकता हो। सभी ज्ञानों का स्रोत है मनुष्य की भौतिक इन्द्रियों द्वारा बाह्य दुनिया का प्रत्यक्षीकरण। यदि कोई आदमी इस तरह के प्रत्यक्षीकरण से इन्कार करता है, तो वह प्रत्यक्ष अनुभव से इन्कार करता है, और वास्तविक स्थितियों के परिवर्तन के व्यवहार में वैयक्तिक भाग लेने से इन्कार करता है। ऐसी हालत में वह भौतिकवादी नहीं है।··· चीनियों में पुरानी कहावत है : 'बाघ की माँद में घुसे बिना कैसे कोई बाघ-बच्चों को प्राप्त कर सकता है ?' यह कहावत मनुष्य के व्यवहार तथा ज्ञान-सिद्धान्त के बारे में सच उतरती है। व्यवहार से पृथक् ज्ञान (प्रामाण्य) सम्भव नहीं है।"

ज्ञान की प्रक्रिया के बारे में कहते हुए आगे माओ लिखते हैं :

"ज्ञान की प्रक्रिया में पहला कदम है बाह्य जगत् की चीजों के सम्पर्क (सन्निकर्ष) में आना। यह प्रत्यक्ष

* यहाँ यह भी उल्लेखनीय बात है कि दिङ्नाग आदि बौद्धप्रमाण-शास्त्रियों ने प्रमाण के इन्हीं दो रूपों को प्रत्यक्ष और अनुमान का नाम देते हुए ज्ञान के स्रोत केवल दो ही बतलाये हैं। चीनी भाषा में दिङ्नाग और वसुबन्धु के प्रमाणशास्त्रों के अनुवाद हैं। हो सकता है उन्हीं के कारण माओ की व्याख्या में यहाँ इतनी समानता दीख पड़ रही है।

की स्थिति है। दूसरा कदम है, प्रत्यक्ष के आँकड़ों को संश्लेषित करना, उन्हें फिर से क्रमबद्ध और पुनर्निर्मित करना, यह प्रत्यक्षीकरण निर्णय (उपनय) और अनुमान की मंजिल से सम्बन्ध रखता है। जब प्रत्यक्ष द्वारा प्राप्त सामग्रियाँ अत्यन्त समृद्ध (अर्थात् अपूर्ण या खण्ड-खण्ड नहीं) हैं और वह वास्तविकता (अर्थात् अकाल्पनिकता) के अनुसार हैं, केवल तभी ऐसी सामग्रियों के आधार पर हम निर्भ्रान्त विचार निर्मित कर सकते हैं और ठीक तरह से विचार कर सकते हैं, बुद्धि का प्रयोग कर सकते हैं।"

बौद्धिक ज्ञान के बारे में वह कहते हैं :

"बौद्धिक ज्ञान प्रत्यक्षीकृत ज्ञान पर निर्भर करता है और प्रत्यक्षीकृत ज्ञान को अभी बौद्धिक ज्ञान के रूप में विकसित करना बाकी रहता है : यह है द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी ज्ञान-सिद्धान्त।"

मार्क्सवादी दर्शन को केवल दिमागी शौकीनी अथवा 'स्वान्तः सुखाय' मानकर उसे स्वाध्याय करके खूँटी पर रखने की बात न मानते हुए, उसका प्रयोग करते हुए माओ लिखते हैं :

"अक्सर देखा जाता है कि विचार वास्तविक घटनाओं से पिछड़ जाते हैं। यह इसीलिए कि मनुष्य का ज्ञान बहुतेरी सामाजिक स्थितियों द्वारा सीमित है। हम क्रान्तिकारियों की पंक्ति में रूढ़िवादियों का विरोध करते हैं, जिनके विचार बदलती हुई वास्तविक परिस्थितियों के साथ आगे नहीं बढ़ पाते और अपने को वह ऐतिहासिक तौर से दक्षिणपंथी अवसरवादी प्रकट करते हैं। ये लोग यह नहीं देख पाते कि विरोध का संघर्ष वस्तुगत प्रक्रिया को आगे ले जा चुका है, जबकि हमारा ज्ञान पुरानी जगह पर ही रुका हुआ है। सभी रूढ़िवादियों के विचारों में यही विशेषता देखी जाती है। उनके विचार सामाजिक व्यवहार से पृथक्कृत हैं, और वह समाज के रथ के मुख्य स्थान पर सारथी बनने के लायक नहीं हैं, वह केवल रथ के पीछे-पीछे और उसके बहुत तेज चलने पर भुनभुनाते हुए घसिट सकते हैं अथवा उसे पीछे खींचने या जबर्दस्ती पीछे लौटाने का प्रयत्न कर सकते हैं।

"हम 'वाम' पक्ष की खोखली बातों का भी विरोध करते हैं। वस्तुगत प्रक्रिया के विकास की एक निश्चित स्थिति से उनके विचार आगे हैं : उनमें से कुछ अपनी कल्पनाओं को सत्य समझते हैं, दूसरे इस समय एक ऐसे आदर्श को कार्यरूप में परिणत करने में जोर से प्रयत्नशील हैं, जो कि भविष्य में ही कार्यरूप में परिणत किया जा सकता है। वह उस समय के बहुसंख्यक लोगों के व्यवहार से अपने को अलग रख सामने उपस्थित वास्तविकता से अपने को अलग करते अपनी कार्रवाइयों में अपने को दुस्साहसी प्रकट करते हैं।"

माओ ने हरेक सत्य सिद्धान्त के मुख्य आधार 'व्यवहार' के बारे में अपने विचारों को इस सारगर्भित किन्तु संक्षिप्त ग्रंथ में उक्त प्रकार से प्रकट किया है।

(2) 'विरोध'—अगस्त, 1937 में दार्शनिक माओ चे-तुंग ने द्वन्द्वात्मक भौतिकवादी दर्शन के एक मुख्य तत्त्व 'विरोध' पर अपने विचार प्रकट किये हैं। वेदान्तियों, ईश्वरवादियों और दूसरे उन जैसे दार्शनिकों ने विश्व के निर्माण में विश्व से पृथक् एक दूसरी शक्ति का होना आवश्यक माना है। द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद द्वन्द्वों-विरोधियों के समागम का इस सारे निर्माण का कारण मानकर विषय में 'विरोध' (द्वन्द्व) के नाम से एक गम्भीर किन्तु सरल पुस्तक लिखी है। वह कहते हैं :

"वस्तुओं में विरोध का नियम—अर्थात् विरोधियों की एकता का नियम—भौतिकवादी द्वन्द्ववाद का अत्यन्त मौलिक नियम है। लेनिन ने कहा है : "अपने मुख्य अर्थ में द्वन्द्ववाद वस्तुओं के मुख्य निजी सार के भीतर विरोध का अध्ययन है।" लेनिन ने अक्सर इस नियम को द्वन्द्ववाद का सार कहा है, उन्होंने इसे द्वन्द्ववाद की गरी भी कहा है, इसलिए इस नियम का अध्ययन करते हुए विस्तृत विषयों, दर्शन के बहुसंख्यक समस्याओं को हम छुए बिना नहीं रह सकते। अगर हम इन सभी समस्याओं को स्पष्ट कर सकें, तो भौतिकवादी द्वन्द्ववाद के मूल ज्ञान को समझ सकेंगे। ये समस्याएँ हैं : विश्व-सम्बन्धी दो दृष्टिकोण, विरोध की विश्वजनीनता, विरोध की विशेषता, मुख्य विरोध और विरोध का मुख्य स्वरूप, विरोध के रूपों को पहचानना और संघर्ष, विरोध में द्वन्द्व का भाग।" इसके बाद माओ इनमें से एक-एक को लेकर उनका विवेचन करते हैं, जिसे संक्षेप में भी यहाँ देना कठिन है।

वह आगे बतलाते हैं :

"अतिभौतिक विश्व-दृष्टिकोण के विरुद्ध भौतिकवादी द्वन्द्वात्मक विश्व-दृष्टिकोण वस्तुओं के विकास के अध्ययन का उनके भीतर से पक्षपाती है, एक वस्तु का दूसरी वस्तुओं के सम्बन्ध से अध्ययन करने का पक्षपाती है। अर्थात्–वस्तुओं के विकास को उनकी अपनी आवश्यक स्वयंगति समझनी चाहिए, और कि वस्तु को, अपनी गति और उसके आसपास की वस्तुओं को परस्पर-सम्बद्ध और एक-दूसरे पर काम करनेवाली समझना चाहिए। वस्तुओं के विकास का मूल कारण उनके बाहर नहीं, बल्कि उनके आन्तरिक विरोधों में निहित है। वस्तुओं की गति और विकास इसीलिए होता है, उन सबके भीतर इस तरह के विरोध मौजूद हैं। वस्तु के भीतर वह विरोध उसके विकास का मूल कारण है, जब कि एक वस्तु का दूसरी वस्तु के साथ सम्बन्ध और उसके द्वारा परस्पर-प्रभावित करना उसके विकास के गौण कारण हैं। इस प्रकार भौतिकवादी द्वन्द्ववाद बड़े जोर के साथ बाह्य कारणों के सिद्धान्त या (बाहर से) संचालन के सिद्धान्त का प्रत्याख्यान करता है, जिसे कि अतिभौतिक, यांत्रिक भौतिकवाद और भद्दा विकासवाद प्रतिपादित करता है। यह स्पष्ट है कि शुद्ध बाह्य कारण वस्तु में केवल यांत्रिक गति कर सकते हैं, अर्थात् वस्तु को वह आकार और मात्रा में परिवर्तित कर सकते हैं, लेकिन वह इस बात की व्याख्या नहीं कर सकते, क्यों चीजें गुणात्मक रूप से हजारों प्रकार से भिन्न-भिन्न हैं, और क्यों वस्तुएँ एक दूसरे के रूप में परिवर्तित होती हैं। वस्तुतः, किसी बाह्य शक्ति द्वारा चालित वस्तुओं की यांत्रिक गति भी उनके आन्तरिक विरोधों द्वारा ही उपस्थित होती है। वनस्पतियों और प्राणियों में प्ररोह (वृद्धि) और उनका परिमाणात्मक (मात्रा में) विकास मुख्यतः उनके आन्तरिक विरोधों द्वारा ही होता है। इसी प्रकार सामाजिक विकास मुख्यतः बाह्य नहीं, बल्कि आन्तरिक कारणों से होता है। बहुत-से देश करीब-करीब एक ही तरह के भौगोलिक और जलवायुवाली स्थितियों में विद्यमान हैं, तो भी उनमें भेद तथा विकास की असमानता अत्यधिक देखी जाती है। एक ही देश मे अपने भीतर जबर्दस्त सामाजिक परिवर्तन होते हैं, जब कि उसके भौगोलिक और जलवायु-सम्बन्धी स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। साम्राज्यवादी रूस समाजवादी सोवियत संघ में परिवर्तित हो गया और सामन्तवादी··· जापान साम्राज्यवादी जापान में बदल गया, जब कि इन दोनों देशों की भौगोलिक और जलवायु-सम्बन्धी स्थिति में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। दीर्घकाल से सामन्तवाद के नीचे कराहते चीन में पिछले सौ वर्षों में बहुत-से परिवर्तन हुए, और अब वह स्वतन्त्र और मुक्त नवीन चीन की दिशा में बदल रहा है, तो भी उसके भूगोल और जलवायु में परिवर्तन नहीं हुआ।··· भौतिकवादी द्वन्द्वात्मक दृष्टिकोण (दर्शन) के अनुसार प्रकृति में परिवर्तन होता है, मुख्यतः प्रकृति के आन्तरिक विरोधों के विकास के कारण ही। सामाजिक परिवर्तन मुख्यतः समाज के आन्तरिक विरोधों अर्थात् उत्पादक शक्तियों और उत्पादन के सम्बन्धों के विरोध, वर्गों के बीच के विरोध और प्राचीन तथा नवीन के बीच के विरोध–के कारण होते हैं। क्या भौतिकवादी द्वन्द्ववाद बाह्य कारणों को कोई महत्त्व नहीं देता ? नहीं, यह बात नहीं है। भौतिकवादी द्वन्द्ववाद बाह्य कारणों को परिवर्तन का हेतु, परिस्थिति मानता है और आन्तरिक कारणों को परिवर्तन का आधार। हेतु, परिस्थिति, बाह्य कारण आन्तरिक कारणों द्वारा कार्यकारी होते हैं। एक अनुकूल तापमान में अंडा चूजे के रूप में परिवर्तित होता है, लेकिन ऐसा कोई तापमान नहीं है, जो कि पत्थर को चूजे के रूप में परिणत कर दे, क्योंकि दोनों वस्तुओं के मूल भिन्न हैं।"

चीन के अपने विचार को खूब अवगाहन करनेवाले माओ जिस तरह मार्क्सवाद को चीनी जीवन के हरेक भाग में इस्तेमाल करने में दक्ष हैं, उसी तरह वह चीनी की दार्शनिक परम्परा का भी विश्लेषण करना जानते हैं। उन्होंने आगे कहा है :

"तून् जू ने सैनिक विज्ञान की विवेचना करते हुए कहा है : 'जानो शत्रु को और जानो अपने को, तब बिना सर्वनाश के तुम सौ युद्धों को लड़ सकते हो।' यहाँ वह युद्ध के दो पक्ष के बारे में कह रहा था। थांग-वंश के विचारक वेइ चेंग ने कहा है : 'दोनों का सुनना तुम्हें उद्बुद्ध बनाता है, और केवल एक पक्ष को सुनना तुम्हें दुर्बुद्ध बनाता है।'··· तो भी हमारे साथी अक्सर समस्याओं को देखते हुए एकांगी दृष्टि की तरफ झुकते हैं।··· "

उपसंहार में माओ लिखते हैं :

"वस्तुओं में विरोध का नियम, विरोधि-समागम का नियम, प्रकृति और समाज का आधारभूत नियम है, और इसलिए वह विचार का भी आधारभूत नियम है, जो अतिभौतिक विश्व-दृष्टिकोण से उलटा है। इसका अर्थ है मानवज्ञान के इतिहास में एक महान् क्रान्ति। द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद के दृष्टिकोण के अनुसार विषयगत वस्तुओं और भावगत विचार की सभी प्रक्रियाओं में विरोध मौजूद है, वह आदि से अन्त तक सभी प्रक्रियाओं में जारी रहता है–अर्थात् विरोध विश्वजनीन और परमार्थ तत्त्व है। विरोधी वस्तुएँ और उनके प्रत्येक रूपों के क्रमशः अपने विशेष आकार होते हैं–विरोध में विशेषता और सापेक्षता अन्तर्हित है। विरोधी वस्तुएँ खास स्थितियों में समानता रखती हैं, और इसीलिए एक चीज में साथ-साथ वर्तमान रह सकती हैं, एवं प्रत्येक वस्तु अपने विरोधी के रूप में अपने को रूपान्तरित कर सकती है–यह भी विरोध की विशेषता और सापेक्षता है। लेकिन, विरोध के भीतर संघर्ष निरन्तर मौजूद रहता है। चाहे उस समय, जब कि विरोधी साथ वर्तमान हों या अथवा एक-दूसरे के रूप में अपने को रूपान्तरित कर रहे हों, विरोध मौजूद रहता है। संघर्ष उसी समय विशेष तौर से आविर्भूत होता है, जब कि विरोधी वस्तुएँ अपने को एक दूसरे के रूप में रूपान्तरित करती हैं, यह फिर विरोध की विश्वजनीनता (सामान्य) और परमार्थता है। विरोध की विशेषता और सापेक्षता का अध्ययन करते समय हमें विरोध में क्या मुख्य है और क्या अमुख्य (गौण) तथा दोनों के बीच के विधेय तथा विरोधी पहलुओं का भी ध्यान रखना चाहिए। विरोध की विश्वजनीनता (सामान्य) और उसके भीतर के संघर्ष का अध्ययन करते समय हमें विरोध के भीतर संघर्ष के भिन्न-भिन्न रूपों के बीच के भेद का ध्यान रखना चाहिए, नहीं तो हम भूल करेंगे। यदि अध्ययन के बाद हमने वस्तुतः उपरोक्त सारभूत बातों को समझ लिया, तो हम उन मतवादी विचारों को चकनाचूर कर देंगे, जोंकि मार्क्सवाद-लेनिनवाद के आधारभूत सिद्धान्तों का प्रत्याख्यान करते हमारे क्रान्तिकारी लक्ष्य में बाधा पहुँचानेवाले हैं। साथ ही, यह हमारे अनुभवी साथियों को अपने अनुभवों को इस तरह व्यवस्थित करने में सहायता करेगा, जिससे कि मुख्य का स्वरूप उनको मालूम हो जायगा, और वह प्रयोगवाद* की भूलों को दोहराने से बाज आएँगे। विरोध के नियम के अध्ययन से हम इन थोड़े-से सीधे-सादे निष्कर्षों पर पहुँचते हैं।"

(4) 'लम्बी लड़ाई' (1938 ई.)–1938 के मई महीने में माओ ने अपनी इस महत्त्वपूर्ण पुस्तक को लिखकर चीन और जापान की तत्कालीन राजनीतिक और सैनिक स्थिति का विश्लेषण करके यह बतलाया कि हमारी लड़ाई लम्बी होगी, लेकिन चीन की विजय निश्चित है। इस लक्ष्य तक पहुँचने के लिए कोई छोटा रास्ता नहीं है। यह लड़ाई तीन रूपों और कालों में होगी : (1) पहले काल में जापान चीन के सारे शहरों पर अधिकार कर लेगा, क्योंकि दुश्मन हमसे ज्यादा शक्तिशाली है। इस समय हमें लगातार पीछे हटना पड़ेगा। लेकिन, चीन हमारी भूमि है, हमारी शक्ति का अटूट भण्डार, हमारी जनता हमारे साथ है, दुश्मन दूसरे की भूमि में है और चीनी जनता उसके प्रति पूरी तौर से घृणा रखती है। जापान की यह कमजोरी है। (2) इस स्थिति से लाभ उठाकर हम लोग गोरिल्ला युद्ध करते हुए दूसरे काल में दाखिल होंगे। मातृभूमि के लिए सिर से कफन बाँधे हुए गोरिल्लों के आक्रमण से दुश्मन का आगे बढ़ना रुक जायगा। कभी वह जीतेगा और कभी हम जीतेंगे। युद्धों का कोई निर्णय न होने पर भी दिन-दिन हमारी शक्ति बढ़ती जायगी। (3) अन्त में दुश्मन से हम अधिक शक्तिशाली हो जायँगे और इस प्रकार तीसरा तथा अन्तिम काल शुरू होगा। उस समय हम अपनी बढ़ी हुई शक्ति से दुश्मन पर प्रत्याक्रमण करेंगे और उसे चीन की सीमा से बाहर निकाल देंगे। यह लोक-युद्ध है, लोक-युद्ध की व्यूह-रचना ही हमें विजय प्रदान करेगी।

माओ की इस गम्भीर पुस्तक ने पार्टी के बाहरवालों को भी उनके विचारों पर गम्भीरतापूर्वक सोचने के लिए बाध्य किया। इसकी विश्लेषण-शैली बड़ी तीक्ष्ण और ऊँचे दर्जे की थी। पुस्तक के लिखे जाते समय चीन में भारी निराशा फैली हुई थी। कुछ लोग जुआरी की तरह अन्धे होकर सर्वस्व दाँव पर रखकर तुरन्त

---

* Empirism

भारी प्रत्याक्रमण की बात कर रहे थे। च्यांग चुपचाप अमेरिका, इंग्लैंड और रूस के युद्ध में पड़ने की प्रतीक्षा कर रहा था। यह पुस्तक एक तत्त्वदर्शी की दूरदर्शिता का प्रमाण थी, उसके पढ़ते समय यह नहीं मालूम होता, कि हम कोई भविष्य की बात पढ़ रहे हैं, बल्कि जान पड़ता है कि हम एक बीती हुई लड़ाई का इतिहास पढ़ रहे हैं। इस पुस्तक ने शत्रुओं—जापानी रणनीतिज्ञों—को भी यह मानने के लिए मजबूर किया कि माओ चे-तुंग रणविद्या के महान् पंडित हैं।

(5) 'नया दौर' (1938 ई.)—उसी साल (1938 के अक्तूबर में) माओ की यह पुस्तक प्रकाशित हुई। इस पुस्तक में जापान-विरोधी युद्ध में कुओमिन्तांग के सामने सहयोग के तरीक़ों के तीन सुझाव रक्खे थे : (1) कम्युनिस्ट कुओमिन्तांग में सम्मिलित हो जायँ, (2) यदि यह सम्भव न हो, तो दोनों की सम्मिलित कमेटियाँ बना दी जायँ, (3) यदि यह भी न हो सके, तो दोनों के सम्मिलित सम्मेलन जल्द-जल्द होते रहें, जिसमें सब बातें तय कर ली जाया करें। माओ के इन सुझावों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा, कुओमिन्तांग और च्यांग दिन-पर-दिन प्रतिक्रियावादी बनते गये—च्यांग ने बाकी सभी दलों और पार्टियों को गैर-कानूनी बना दिया।

7. द्वितीय विश्वयुद्ध से पहले

द्वितीय विश्वयुद्ध के लक्षण चारों ओर दिखाई पड़ रहे थे। जापान उसका आरम्भ सात वर्ष पहले 1931 में मंचूरिया पर हाथ मारकर कर चुका था। इताली ने अफ्रीका में अबीसीनिया को उदरसात् करके उसी ओर कदम बढ़ाया। फिर हिटलरी जर्मनी ने चेकोस्लोवाकिया को दबोचा। यदि विश्वयुद्ध कुछ दिनों और रुका रहा तो यह पश्चिमी साम्राज्यवादियों की दब्बू नीति तथा उनके रूस के प्रति अपार द्वेष के कारण ही। जिस तरह चीन के भीतर च्यांग कम्युनिस्ट-विरोध में अन्ध हो बाहरी शत्रु जापान से लड़ने की जगह उधर आँख मूँदे रह अपना सब कुछ खो रहा था, उसी तरह पश्चिमी साम्राज्यवादी भी फासिस्त इताली और जर्मनी को अपनी दब्बू नीति के फलस्वरूप बढ़ते हुए देखते भी रूस से मिलकर इस नई जंगबाज शक्ति से लड़ने के लिए तैयार नहीं थे।

(1) केन्द्रीय कमेटी विस्तारित अधिवेशन (1938 ई.)—इस साल के अक्तूबर महीने में छठी पार्टी-कांग्रेस में निर्वाचित केन्द्रीय समिति का विस्तारित खुला अधिवेशन येनान् में हुआ। इस अधिवेशन ने माओ चे-तुंग के नेतृत्व में राजनीतिक ब्यूरो द्वारा उपस्थित की गई जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चे और रक्षात्मक युद्ध की नीति को स्वीकार कर लिया। संयुक्त मोर्चे के सवाल पर ढील देने की गलत नीति, तुष्टि की नीति की आलोचना की गई और निश्चय किया गया कि सारी पार्टी का किसी भी निर्बन्ध के बिना आजादी के साथ जापान के खिलाफ जनता के सशस्त्र संघर्ष को संगठित करना चाहिए। यह भी निश्चय किया गया कि पार्टी का मुख्य कार्य है युद्ध के क्षेत्रों और दुश्मन के पिछले भागों में संघर्ष करना। पार्टी ने रक्षात्मक युद्ध में विजय पाने के लिए कुओ-मिन्तांगी सेना पर भरोसा रखने तथा कुओमिन्तांगी शासन की छत्रछाया में होनेवाले कानूनी आन्दोलन के हाथों में जनता के भाग्य को सौंपना गलत बतलाया।

उधर च्यांग काइ-शेक अपनी नीति के कारण हार पर हार खा रहा था, जापान उसे पीछे ढकेलता जा रहा था। 1938 के अक्तूबर तक उसकी सेनाएँ कान्तन् और वूहान से हटने के लिए मजबूर हुईं। इसके बाद च्यांग ने अपनी सेनाओं को चुंग-किंग और सियान् को आधार बनाकर दक्षिण-पश्चिम और उत्तर-पश्चिम में केन्द्रित कर दिया। इसी ख्याल से कि इतनी दूर भाग जायँ, जिसमें जापान से लड़ने की नौबत न आये। जिस वक्त च्यांग इस तरह कायरता दिखला रहा था, उसी समय कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में आठवीं मोर्चा-सेना और नई चौथी सेना ने उत्तरी, पूर्वी, केन्द्रीय और दक्षिणी चीन की जनता को हथियारबन्द करके जापान के खिलाफ बड़े जोर-शोर से गोरिल्ला युद्ध को बढ़ाया और जापान-विरोधी कितने ही जनवादी अड्डों को कायम कर दिया।

(2) जापान का नाकों दम—केन्द्रीय लालसेना ने सियान्-समझौते के बाद आठवीं मोर्चा सेना नाम धारण किया था। जापान इस सेना का नाम सुनकर काँपता था। 1937 की जुलाई में जापान ने नया आक्रमण शुरू किया, और च्यांग की कायरता के कारण वह इतनी तेजी के साथ आगे बढ़ा कि जान पड़ने लगा थोड़े ही

दिनों में सारा चीन उसके हाथ में चला जायगा। कान्तन् और वूहान् को उसने ले लिया था और च्यांग देश के बहुत भीतरी हिस्से में चुंग-किंग और सियान् में जा छिपा था। इसी समय फरवरी, 1929 के आखिरी सप्ताह में जापानियों के हाथ से चहार जैसे बड़े प्रदेश के छिन जाने की खबर आई, और उत्तर-पूर्व प्रदेश में जापानियों की हार पर हार होने लगी। 17 फरवरी, 1939 के 'स्टेट्समैन' (कलकत्ता) के अग्रलेख में इसके बारे में निम्न बातें लिखी थीं :

"पूर्वी चीन में जो घटनाएँ घट रही हैं, उनकी खबर संसार को बहुत कम मिलती है–जो खबरें आती भी हैं, वह जापान के ही द्वारा। लेकिन, इन खबरों के नक्शे को देखते हुए पढ़ने से कई बातें स्पष्ट हो जाती हैं। यह साफ है कि चीन की गोरिल्ला सेना ने जापान का नाकों दम कर रक्खा है। जिन प्रदेशों पर जापान का अधिकार है, उनमें भी गोरिल्लों का प्रहार जारी है। हांग-कांउ और कान्तन् के पतन के बाद लोगों को विश्वास हो गया था कि अब चीन का समृद्ध और धनधान्यपूर्ण भूखण्ड सदा के लिए चला गया। किन्तु, जाड़े के आरम्भ होते ही 1937 में ही जापान के हाथ में चला गया उत्तरी चीन फिर चीन के हाथ में आ गया। जापान ने 1934 ई. में ही जिसे जीत लिया था, उस होपेइ प्रान्त में चीनी सेना फिर लड़ने लगी, शान्सी और दक्षिणी होपेइ से भी जापान को हटने के लिए मजबूर होना पड़ा और उसके पास केवल दो बड़े-बड़े शहर रह गये। जापानियों ने इधर ही कई छोटी-छोटी विजयों को बहुत महत्त्व देने की कोशिश की, लेकिन नक्शे को देखने और पिछली घटनाओं को समझने से वह महत्त्व खतम हो जाता है। छापामारों ने उसके नाकों दम कर रक्खा है। शहरों और रेलवे लाइनों के बीच में उनकी कार्रवाइयों से जापानी परेशान हैं। वैसे जापानी भी अब चीन को विजय करना आसान नहीं समझते।··· इस सुदृढ़ मुकाबले को देखने और जापान की आर्थिक निर्बलताओं पर विचार करने से यह बात असम्भव नहीं जान पड़ती, कि चीन एक न एक दिन जरूर विजयी होगा।"

यह कहने की आवश्यकता नहीं कि जापान के मन से विजय की आशा हटाने का पहला काम आठवीं मोर्चा-सेना और वीर गोरिल्ले कर रहे थे, जिनका संचालन माओ चे-तुंग और उनके साथी सेनापति चू-तेह, पेंग ते-ह्वाइ, लिन् पियाओ, चाउ एन्-लाइ कर रहे थे। आठवीं मोर्चा-सेना का संचालन इस समय पेंग ते-ह्वाइ के हाथ में था। आठवीं सेना की वीरता को देखकर फासिस्तों के बढ़ाव से परेशान पश्चिमी साम्राज्यवादियों और उनके संवाददाताओं का भी ध्यान उधर जाना जरूरी था। जनरल पेंग ने एक पत्र-प्रतिनिधि से बात करते हुए अपनी युद्ध-प्रणाली के बारे में कहा था :

"हमारी युद्ध-प्रणाली की मूल बात यह है कि हम लड़ाई को इस तरह लुक-छिपकर लड़ें कि शत्रु का सर्वनाश किया जा सके, और उसके छोटे-मोटे दस्तों को बिलकुल समाप्त कर दिया जाय। जहाँ हम स्वयं आगे भी बढ़ें, वहाँ भी अपनी सेना को छोटी-छोटी टुकड़ियों में विभक्त कर ही। आम तौर से आमने-सामने जमकर लड़ने से हम बचते हैं, यद्यपि ऐसे भी समय आये हैं, जब हमें लड़ना पड़ा।" एक अमेरिकन पत्रकार ने भी आठवीं मोर्चा-सेना के गोरिल्ला ढंग के बारे में लिखा था :

"मैं उस वक्त पहुँचा, जब कि उस नगर पर चीन के किसानों की गोरिल्ला सेना आक्रमण कर रही थी। उसने शहर को चारों ओर से घेर लिया था और उसकी प्राचीन दीवाल पर जब-तब गोलाबारी भी होती रहती थी। एक रात चीनी गोरिल्ले नगर के फाटक के नीचे सेंध लगाकर जापानी सेना के पास भीतर पहुँच गये और कितने ही सोये हुए सन्तरियों को मारकर चम्पत हो गये।" शहर से जापानी मशीनगनों और तोपों द्वारा दिन-रात आग बरसाते रहते थे, लेकिन गेहूँ के खेतों में छिपे गोरिल्लों का वह कुछ बिगाड़ नहीं सकते थे। आकाश में मँडराते जापानी हवाई-जहाज भी बेकार थे, क्योंकि अन्तर्धान गोरिल्लों को वह देख नहीं पाते थे। शहर को जानेवाली रेल की पटरी उखाड़ दी गई थी, एक सैनिक ट्रेन उलटी जा चुकी थी। जापान के आधुनिक ढंग के अस्त्र-शस्त्र कम्युनिस्ट लड़ाकों के सामने बेकार साबित हो रहे थे। गोरिल्लों की संख्या इतनी अधिक थी कि वह नगर पर कब्जा कर सकते थे, लेकिन उनका उद्देश्य तो जापानियों का सफाया करना था। टेलीफोन और रेडियो द्वारा गोरिल्ले अपने केन्द्र से सम्बद्ध थे, खाने-पीने की उनके पास कमी नहीं थी। अपने देहाती कारखानों से उन्हें बन्दूक, तलवार और बम-बारूद मिलते थे। रेलों की पटरियों के उखाड़ने में ये बड़े दक्ष थे।

उक्त पत्रकार ने ही लिखा है :

" एक गाँव में मेरी मुलाकात दो प्रोफेसरों से हुई, जो क्लास में लेक्चर देने की जगह चीनी तरुणों को ट्रेन उलटने की विद्या सिखला रहे थे। अभी-अभी एक जापानी सैनिक ट्रेन को वह उलटकर आये। डिनामाइट के न होने से प्रोफेसरों ने अपने विद्यार्थियों को मेखों और कीलों के निकालने की युक्ति सिखलाई थी। जैसे ही गाड़ी वहाँ पहुँचती, मेखों-कीलों के निकाल लेने के कारण लाइन फैल जाती और ट्रेन उलट जाती। जापानियों ने इससे बचने के लिए ट्रेन से पहले खाली इंजन चलाने का क्रम जारी किया, तो भी तीन महीने के भीतर तीन ट्रेनें केवल इस इलाके में उलट चुकीं। ऐसी भी छापामार टोलियाँ संगठित की गई हैं, जो चुपचाप लाइनों को उखाड़कर दूर ले जाकर छिपा देती हैं और टेलीफोन के तार को काटकर उसके खम्भों को भी गायब कर देती हैं। जापानियों ने इससे बचने के लिए चीनी किसानों की टोलियों को रेलवे लाइन पर रात-दिन गश्त लगाने के लिए मजबूर किया और धमकाया कि अगर ठीक से पता नहीं देंगे तो गोली मार दिये जायँगे। ये किसान ठीक से पता अवश्य देते हैं, किन्तु साथ ही रेल हटाने में खूब सहायता देकर अपराधी को निकल जाने में मदद भी करते हैं।

" जापानियों को छकाने के लिए ये चीनी सैनिक एक और ढंग इस्तेमाल करते हैं। वह जापानी अफसरों की पोशाक पहनकर उनकी सेना में घुसकर भेद लाते या उन पर अचानक धावा बोल देते हैं। इस तरह के चीनी सैनिक जापानी भाषा भी अच्छी तरह बोल सकते हैं। लेकिन, यह भारी खतरे का काम है। एक बार जापानी पोशाक पहने छह सौ सैनिकों को लेकर जेनरल लिन् पियाओ जापानी पंक्ति के भीतर घुस गये, किन्तु पता लग गया और पहली बार उन्हें जीवन में आहत होना पड़ा।

" जापानी भाषा बोलनेवाले और उनकी पोशाक में रहनेवाले ये चीनी सैनिक प्रायः जापानी टेलीफोन को इस्तेमाल करते और जापानी हेडक्वार्टर को झूठी खबर देते कि फलाँ स्थान पर सेना चाहिए, उसे भेजिए। जैसे ही सेना वहाँ पहुँचती, पहले ही से घात में बैठी चीनी सेना टूटकर उनका सर्वसंहार कर देती। "

दक्षिणी शान्सी में लालसेना ने किस तरह एक नगर को वापस लिया, इसके बारे में एक पत्रकार का लिखना है :

"जापानियों ने इस शहर पर अधिकार कर लिया। नगर की आबादी 15 हजार थी। जापानियों ने उसमें 20 हजार सेना रख दी। खाने-पीने की सामग्री की भी कमी नहीं थी। पर, गोरिल्ला सैनिकों ने नगर को चारों ओर से घेरकर जापानी सैनिकों का रसद का भीतर जाना बिलकुल रोक दिया। जापानी सेना ने कई सप्ताहों तक देहात में घुसकर वहाँ के लोगों के बल तो तोड़ना चाहा, लेकिन जो भी सेना देहात में जाती, अपने में से बहुतों को खोकर लौटती। अन्त में दो महीने बिताकर अपनी आधी संख्या खो सेना को भाग जाने के लिए मजबूर होना पड़ा। "

जहाँ इस तरह जापानी सैनिकों को मारने के लिए, जापान के सैनिक बल को खतम करने के लिए कम्युनिस्ट हर तरह की कोशिश करते थे, वहाँ वह हाथ में पड़े जापानी सैनिकों में अपने विचारों का प्रचार भी करते थे : " आज हम युद्धभूमि में तुम्हारे ऊपर बन्दूकें तानते और गोली छोड़ते हैं, यह हमारे लिए दुर्भाग्य की बात है। आप और हम दोनों किसान-मजूर हैं। आपके सैनिक अफसरों ने सेना में भरती कर तुम्हें घर-द्वार, बाल-बच्चों को छोड़ने के लिए मजबूर किया। इधर हमें भी अपने देश और जनता की रक्षा करनी है। जापानी जनता और वहाँ के मजूर-किसानों से हमारी कोई शत्रुता नहीं है। हम तो जापानी किसानों-मजूरों से हमेशा हाथ मिलाने के लिए तैयार हैं। जापानी सैनिको, जरा इस बात पर सोचो।

" क्योंकि जापानी किसानों और मजूरों को चीन में मरने के लिए भेजा जाता है ? बताओ, प्राणसंहार से तुम्हें क्या मिलेगा ? जापानी सैनिको, अपनी बन्दूकें अपने अफसरों की ओर घुमाकर हमसे आ मिलो। अगर लड़ना ही है, तो जनता की आजादी के लिए लड़ो, चीनी जनता के लिए लड़ो। आओ, हम सब एक हो जायँ। इस युद्धक्षेत्र में एक-दूसरे का गला न काटें।··· जापानी सैनिको, जरा हमारे नारे लगाओ : 'जापानी तानाशाही के लिए प्राण मत दो', 'जापानी और चीनी सैनिको, एक हो और इस युद्ध को समाप्त करो', 'जापानी सैनिको,

चीन की जनता के इस राष्ट्रीय युद्ध में सहायता करो', 'अपने भाइयों की हत्या मत करो', 'जापानी साम्राज्यवाद का नाश हो', 'जापान के किसान-मजूरों की स्वतन्त्रता विजयी हो।' "

आठवीं मोर्चा-सेना ने शत्रु-विभाग के नाम से अपना एक विभाग खोल रक्खा था, जिसका काम था हत या आहत जापानियों की डायरियाँ पढ़ना। एक जापानी ब्रिगेड-कमांडर ने अपनी डायरी में लिखा था :

"लालसेना का नाम सुनते ही मुझे सिरदर्द होने लगता है। हम जापानी दिन में ही लड़ने के आदी हैं, किन्तु ये लाल सैनिक रात-दिन आठों पहर कमर कसे तैयार रहते हैं। यहाँ कम्युनिस्टों का बड़ा जोर है, डेढ़ सौ के करीब मोटर-ट्रकों को इन्होंने बरबाद कर दिया और 50 सैनिकों को मार डाला। हमें आज्ञा दी गई है कि यहाँ जिसे पाओ, उसे मार डालो।"

एक दूसरे जापानी अफसर ने अपनी डायरी में लिखा था :

"हम सेनापतियों के लिए सेना-संचालन कठिन हो रहा है। कुछ सैनिक घोड़ों पर दुनिया-भर की बेकार चीजें लाद लेते हैं। कितने खाई खोदने से इन्कार करते हैं। हमें पानी की जगह कीचड़ पीना पड़ता है, खाना तो और भी दुर्लभ है। मोर्चे पर दियासलाई और मोमबत्ती तक नहीं मिलती। और, ये चीनी सैनिक विचित्र हैं। घायल हो जाने पर भी ये कुछ कारतूस अपने पास रख लेते हैं, और जैसे ही कोई उनके पास पहुँचता है, उसे गोली मार देते हैं। आत्महत्या के लिए भी एक कारतूस अलग रख लेते हैं। ये हमारे शत्रु हैं, किन्तु हैं महापुरुष।"

एक और डायरी में लिखा था :

"कल मेरी एक कम्पनी एक गाँव से गुजर रही थी। हमने अपना सामान चीनी कुलियों पर लाद रक्खा था। पहले तो सीधे से चलते रहे, परन्तु गाँव में पहुँचते ही उन्होंने बगावत कर दी। उनके पास कोई हथियार नहीं था। उन्होंने हमारे में से कई की राइफलें छीन लीं और राइफल चलाना न जानने के कारण कुन्दों से ही उन्होंने हमारे तीन आदमियों का सफाया कर दिया। कभी-कभी वृक्षों, पत्थरों या दीवालों पर हम विशेष प्रकार का चिह्न देखते हैं, जिसका अर्थ है कि नजदीक में ही चीनी तोपें खड़ी हमें मौत के घाट उतारने को तैयार हैं।"

एगनेस स्मेडले ने आठवीं मोर्चा-सेना के साथ बहुत समय बिताया था। इस अमेरिकन लेखिका ने अपने एक मित्र के पास भेजे पत्र में लिखा था :

" आप समझ नहीं सकते कि किस स्थिति में हमारी सेना को काम करना पड़ रहा है ? जापानियों के पास ट्रकें हैं, लारियाँ हैं, हवाई-जहाज हैं, दूसरे भी जल्द पहुँचानेवाले वाहन हैं, किन्तु हमारे पास सिर्फ गदहे, घोड़े और खच्चर हैं। करीब-करीब हमारी सारी सेना पैदल ही चलती है, मोटरवाली टुकड़ी हमारे पास कहाँ है ? मेरे पास चाँदी के करीब सौ डालर हैं, लेकिन मेरे साथियों के पास फूटी कौड़ी नहीं है। इस सेना में मैं सबसे धनी हूँ। मेरे पास एक वर्दी, एक जाड़े का कोट और अंडरवियर का एक सेट है, दो जोड़े जूते भी हैं, लेकिन मेरे साथियों को एक ही जोड़े जूते पर गुजर करना पड़ रहा है, और सो भी अब समाप्त होने को हैं। हमारी सेना के अधिकांश सैनिकों के पास मोजे बिलकुल हैं ही नहीं।

" यहाँ कागज मिलना कठिन है, तेल-घी की तो बात ही मत कीजिए, जब कि नमक भी दुर्लभ है। जलाने के लिए लकड़ियाँ भी कठिनाई से मिलती हैं। जाड़े की आधी रात को मैं यह पत्र लिख रही हूँ, किन्तु हमें गरमाने के लिए एक अँगीठी भी नसीब नहीं है। पूरे भोजन के बिना पेट भी कुलबुला रहा है—कभी एक तरकारी मिल गई, तो गनीमत। आज शलगम, कल शलगम, सो भी प्रायः नहीं। चीनी तो सपने की चीज बन गई है। लेकिन, इसका अर्थ यह नहीं कि मैं तुम्हारे सामने अपना दुखड़ा रो रही हूँ। यह तो मेरे जीवन के सबसे आनन्द और काम के दिन हैं। एक कटोरे भर भात पर गुजर होनेवाले इस जीवन पर सभ्यता द्वारा प्रदत्त सारे सुखों को मैं वार देती हूँ। पीठ की टूटी हुई रीढ़ लेकर भी मैं इन्हीं के साथ घूमना, दौड़ना, और काम करना पसन्द करती हूँ। डर यही है कि कहीं दर्द ऐसा न बढ़ जाय कि काम में बाधा हो। "

उस समय भारतीय कांग्रेस ने चीन में घायलों की सेवा के लिए अपना डाक्टरी मिशन भेजा था, जो

आठवीं मोर्चा-सेना के साथ काम कर रहा था। 27 अक्टूबर, 1928 को मिशन के एक भारतीय डाक्टर ने अपने पत्र में लिखा था :

"हम लोग आठवीं मोर्चा-सेना के साथ काम करने जा रहे हैं। वह सेना एक दिन में 150 ली (50 मील) दौड़ जाती है, इसलिए हमें उससे मिलने के लिए काफी दौड़-धूप करनी पड़ेगी–किन्तु इस सेना के साथ काम करना कम सौभाग्य की बात नहीं है। इस सेना के युद्धकौशल के पँवाड़े सुने जाते हैं, रात में उत्तर और दक्षिण की विरोधी दिशाओं में आग जला दी जायगी, स्काउट बिगुल बजाते विचित्र-विचित्र संकेत करने लगेंगे। जापानी सेना समझ न सकेगी कि दुश्मन का मुख्य अड्डा कहाँ है। उसके भौंचक होने से फायदा उठाकर एक छोटी टुकड़ी बड़े वेग से चढ़ दौड़ेगी, और सजग होने से पहले ही जापानी सेना के एक हिस्से का संहार कर निकल भागेगी। पहाड़ों पर खाइयाँ और खोह बनाये हुए हैं। आठवीं मोर्चा-सेना के पास राज-मिस्तरियों और खाई खोदनेवालों का एक जबर्दस्त दल है, जो लड़ाई से दूर रह केवल निर्माण का काम करता है। सचमुच इस सेना को 'चीन की रक्षक सेना' कहा जा सकता है। यह चीन की सबसे अधिक सुसंगठित, मुस्तैद, लड़ाकू और अनुशासन-सम्पन्न सेना है।"

15
द्वितीय महायुद्ध के समय (1939-45 ई.)

1939 ई. में पहुँच आठवीं मोर्चा-सेना की सफलताओं को देखकर लोगों में आशा का संचार होने लगा था, किन्तु अभी मंजिल बहुत दूर थी।

1. कठिनाइयाँ

(1) च्यांग की नीयत (1939 ई.)–चीन के सबसे घने भाग को जापान के हाथ में सौंप च्यांग ने अब चुंग-किंग में भागकर शरण ली थी। एक तरह से उसने जापान के सामने हथियार डाल दिया था। वांग चिंग-वेइ जैसे कितने ही चोटी के कुओमिन्तांग नेता देश के साथ विश्वासघात करके जापान से मिल गये। उत्तरी चीन में कुओमिन्तांग की सेना के सेनापति ने पेकिंग के सेनापति जेनरल चेंग-चे का अनुकरण करते हुए जापान के हाथ में अपने को बेच दिया। अब वह जापानियों से मिलकर लाल राजधानी येनान् पर उत्तर से आक्रमण करने लगे थे। जापानियों के सामने पूँछ दबाकर भागा च्यांग इसी समय 1939 ई. के अन्त में दक्षिण से कम्युनिस्टों पर आक्रमण करने लगा। च्यांग अपनी प्रतिक्रियावादी नीति से एक इंच भी हटने के लिए तैयार नहीं था। वह अपने नेतृत्व को बनाये रखना चाहता था, लेकिन जनता को साथ में लिए बिना; इसीलिए वह सियान्-समझौते में जनतांत्रिक सुधारों को मानकर भी उन्हें कार्यरूप में परिणत नहीं करना चाहता था। जनता की ताकत के हरेक उभार को वह कुचलने के लिए तैयार था, और कम्युनिस्ट पार्टी को तो वह फूटी आँखों भी देखना नहीं चाहता था। प्रतिरोध के युद्ध के काल में उसने गुप्त रीति से षड्यन्त्र करके जापानी सैनिकों द्वारा आठवीं रूट (मोर्चा) सेना, नई चौथी-सेना तथा अन्य जापान-विरोधी शक्तियों को खतम कराकर अपनी शक्ति को सुरक्षित करना चाहा। च्यांग को यह विश्वास नहीं था कि चीन केवल अपनी ताकत के भरोसे पर विजय प्राप्त कर सकता है। जनशक्ति के अक्षय भंडार पर उसे विश्वास नहीं था, बल्कि वह थैलीशाहों, सामन्तों का मुखिया उसको सबसे भय की चीज समझता था। उसकी सारी उम्मीदें विदेशी मदद पर लगी हुई थीं। समझता था, इंग्लैंड और अमेरिका जल्दी ही जापान के खिलाफ लड़ाई में उतरेंगे–विशेषकर अमेरिका पर उसे बहुत भरोसा था, लेकिन बाद की घटनाओं ने बतला दिया कि इंग्लैंड और अमेरिका ने जापान के विरुद्ध दखल देने में सुस्ती से काम लिया और वह बार-बार जापान से ही समझौता करते रहे। लेकिन, आठवीं रूट सेना और नई चौथी

सेना जापानियों से किस तरह मुकाबला कर रही थी, यह हम देख चुके हैं। सारी चीनी जनता अपनी इन अजेय वाहिनियों पर अभिमान और विश्वास करने लगी। उन्होंने च्यांग काइ-शेक द्वारा लगाये सारे बन्धनों को तोड़ फेंका। जनशक्ति इतनी बढ़ी, कि च्यांग काई-शेक की सेनाएँ जब उसमें बाधा डालने लगीं, तो उन्हें भारी हानि उठाकर मुँह की खानी पड़ी। इसके कारण च्यांग की प्रतिष्ठा धूल में मिल गई।

इसके बाद च्यांग ने जापान के खिलाफ 'निष्क्रिय प्रतिरोध की नीति' अपना ली, पर वह कम्युनिस्ट पार्टी तथा जनता का सक्रिय रूप से विरोध करने लगा। जापान के विरुद्ध लड़ी जानेवाली लड़ाइयों से मुँह चुरा वह दूसरों को लड़ते देखना चाहता था। अपनी हथियारबन्द शक्ति को बचा-बटोरकर वह इस बात की ताक में था कि पश्चिमी शक्तियाँ जब जापान को पराजित कर दें, तो उसका फल मैं बटोरूँ और अपनी सुरक्षित सेना को लेकर कम्युनिस्ट पार्टी तथा जनता की ताकत को खतम कर दूँ। जापान के खिलाफ प्रतिरोध-युद्ध के समय च्यांग काइ-शेक के गुट की यही आधारभूत स्थिति और नीति थी, जिसका समर्थन अमेरिकी साम्राज्यवाद भी पूरी तौर से कर रहा था, यद्यपि प्रतिरोध-युद्ध के अन्तिम काल में च्यांग की इस स्थिति और नीति से अमेरिकन जनता में असंतोष और नाराजगी फैल गई। जापान के खिलाफ लड़नेवाली जनता की माँग थी कि एक हो सकनेवाली देश-भर की सारी शक्तियों को एकताबद्ध किया जाय, और प्रतिरोध-युद्ध को चलाने के लिए जनता की ताकतों को एकजुट किया जाय। इसके लिए किसी हद तक एक ओर तो यह जरूरी था कि च्यांग काइ-शेक के साथ एका किया जाय, जिसमें कि उसके अधीनस्थ सेना को जापान के खिलाफ खड़ा किया जा सके, और साथ ही दूसरी ओर च्यांग काइ-शेक की प्रतिक्रियावादी नीति के खिलाफ पक्के तौर पर संघर्ष करना भी जरूरी था, ताकि विजय प्राप्त करने के लिए जनता की शक्तियों को कायम रक्खा तथा एकजुट किया जा सके। इसका उद्देश्य यह था कि जनता की शक्तियाँ कमजोर न पड़ें, न पस्त हों; बल्कि वह स्वयं च्यांग काइ-शेक और उसके मालिक अमेरिकी साम्राज्यवादियों की साजिशों को विफल करने योग्य बन सकें।

प्रतिरोध-युद्ध के दिनों में ही साथी माओ चे-तुंग ने उस समय की पेचीदा राजनीतिक परिस्थितियों का ठीक से लेखा-जोखा किया। उन्होंने बतलाया कि कम्युनिस्ट पार्टी और कुओमिन्तांग के बीच, सर्वहारा और उन बड़े जमींदारों और बड़े पूँजीपतियों (च्यांग काइ-शेक के गिरोह) के बीच जो प्रतिरोध-युद्ध में हिस्सा ले रहे थे, उनके बीच के झगड़े अब इस बात पर नहीं होते कि प्रतिरोध युद्ध को चलाना चाहिए या नहीं, बल्कि वह इस बात के लिए होते थे कि विजय कैसे हासिल की जाय। साथी माओ ने बतलाया कि प्रतिरोध-युद्ध में दो विरोधी नीतियाँ मौजूद हैं : एक बड़े जमींदारों और पूँजीपतियों की नीति, जिसका प्रतिनिधित्व च्यांग काइ-शेक कर रहा है, और दूसरी सर्वहारा वर्ग तथा चीन की सारी जनता की नीति, जिसका प्रतिनिधित्व कम्युनिस्ट पार्टी कर रही थी। साथी माओ ने आगे चलकर बतलाया, कि अगर च्यांग काइ-शेक की, कुओमिन्तांग की 'आंशिक युद्ध' की नीति को अमल में लाया गया, तो युद्ध में निश्चय ही हमारी हार होगी। 'आंशिक युद्ध' का मतलब था प्रतिरोध-युद्ध को अकेले कुओमिन्तांग सरकार को लड़ना चाहिए और चीन की सारी जनता को उससे अलग रखना चाहिए। केवल एक ही नीति थी, जिसे अमल में लाकर जीत हासिल की जा सकती थी, और वह नीति थी जनता के युद्ध की, 'सर्वस्व युद्ध की'।

च्यांग उधर बंटाधार कर रहा था, लेकिन दूसरी ओर जनता के स्रोत से संख्या और बल में कम्युनिस्ट और भी मजबूत होते जा रहे थे। तीन साल पहले उनके पास 40 हजार सेना थी, जो 1940 में 5 लाख हो गई। चीन में रक्खे हुए जापान की सारी सेना के आधे भाग को इस सेना ने फँसा रक्खा था। अपनी तीन साल की लड़ाइयों में इसने 150 नगरों को फिर से अपने अधिकार में कर लिया। मुक्त भूभाग और गोरिल्ला इलाकों की आबादी बढ़कर 10 करोड़ हो गई। कम्युनिस्ट पार्टी के सदस्यों की संख्या तीन साल पहले 40 हजार थी, जो अब बढ़कर 8 लाख हो गई। लियाओ-निंग से लेकर जेहोल और चहार तक और सुइयान् से लेकर क्वान्तुंग और हैनान् द्वीप तक सभी मोर्चों पर कम्युनिस्टों के पथ-प्रदर्शन में जनता की जापान-विरोधी सेनाएँ मौजूद थीं। प्रतिरोध-युद्ध सचमुच अब एक महान् राष्ट्रीय क्रान्ति का रूप ले चुका था।

(2) पार्टी के भीतर–प्रतिरोध-युद्ध में च्यांग और कम्युनिस्ट पार्टी की दो नीतियों का असर पार्टी के भीतर

भी दिखाई पड़ा। वांग-मिंग चेन् शाओ-यू–जिसने द्वितीय क्रान्तिकारी गृह-युद्ध के काल में गम्भीर वामपक्षीय गलतियाँ की थीं–तथा उसके अनुयायी कुछ साथियों ने अब सुधारवादी-अवसरवादी दृष्टिकोण से पार्टी की आलोचना और विरोध शुरू कर दिया। इससे भी आगे बढ़कर उन्होंने पार्टी के अनुशासन को ताक पर रख मनमाने ढंग से अपनी नीति को पार्टी द्वारा सौंपे कार्यों में बरतने लगे। उन्होंने देखा कि कम्युनिस्ट पार्टी और उसकी ताकतें इस समय कमजोर हैं और कुओमिन्तांग बाहर से मजबूत दीखती हैं, इसलिए उन्होंने यह गलत निष्कर्ष निकाला कि प्रतिरोध-युद्ध में जीत कुओमिन्तांग द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है, और ऐसी जीत अवश्य ही कुओमिन्तांग की जीत होगी, जनता की नहीं। इस प्रकार कुओमिन्तांग ही इस युद्ध में अगुवा हो सकती है, कम्युनिस्ट पार्टी नहीं। कम्युनिस्टों द्वारा संचालित गोरिल्ला-युद्ध के महत्त्व को भी वह हलकी नजर से देखते थे और इस भ्रम के शिकार थे कि कुओमिन्तांगी सेना पर भरोसा करके जल्दी जीत हासिल की जा सकती है। संयुक्त मार्चे में आजादी और पहल करने की शक्ति को सुरक्षित करने की कार्यकारी नीति को उन्होंने ठुकरा दिया था, और इस क्रान्तिकारी नीति को भी ठुकरा दिया था कि "एकता के साथ-साथ संघर्ष और संघर्ष के द्वारा एकता।" प्रतिरोध-युद्ध के विषय में कम्युनिस्ट पार्टी और कुओमिन्तांग के बीच के सैद्धान्तिक भेद को भूलकर उन्होंने माँग पेश की थी कि कुओमिन्तांग की जन-विरोधी नीति के बारे में कम्युनिस्ट रियायतें दें और वह अपनी गतिविधि को उसी सीमा के भीतर रक्खें, जिसकी कि कुओमिन्तांग ने इजाजत दे रक्खी है। वह यह भी चाहते थे कि आठवीं-रूटसेना तथा नई चौथी-सेना को पूरी तौर से कुओमिन्तांगी सेना में मिला दिया जाय, ताकि "कमान में, संगठन में, साज और सामान में, अनुशासन में, हमले की योजना बनाने और उन्हें काम में लाने में एकता" हासिल की जा सके। संघर्ष में समूची जनता को पूरी तौर से खींचने-बटोरने के, मुक्त इलाकों और जापानी कब्जे के इलाकों में जनता की सशस्त्र ताकतों को बढ़ाने और फैलाने के भी वे विरोधी थे। उन्हें यह डर था कि इस कार्रवाई से च्यांग काइ-शेक की कुओमिन्तांग जापान-विरोधी संयुक्त मोर्चे से डर जायगी। उन्होंने गलत-गलत मतों से भरी मनमानी घोषणाएँ, फैसले और लेख केन्द्रीय कमेटी की स्वीकृति के बिना ही जारी कर दिये और केन्द्रीय समिति के ठीक निर्देशों को रद्दी की टोकरी में फेंक दिया। इन गलत विचारों और कामों ने 1938 ई. में वूहान् में पार्टी के काम पर भी असर डाला जिसके लिए वांग मिंग जिम्मेदार थे। जनवरी, 1941 में हुई 'दक्षिणी आनह्वेई-घटना' से पहले नई चौथी-सेना के साथी स्यांग मिंग का काम भी इन गलत विचारों और कामों के असर में आ गया था, जिसके परिणामस्वरूप यांग-ची नदी के इलाके में जनता के प्रतिरोध-युद्ध का विकास रुक गया, और इसीलिए उस घटना के दौरान में नई चौथी-सेना को हार खानी पड़ी। जिस तरह पहली क्रान्तिकारी गृह-युद्ध के काल में चेन् तू-स्यू ने सुधारवादी अवसरवादिता का परिचय दिया था, नई परिस्थिति में वही अवसरवादिता अब फिर दोहराई जाने लगी। साथी माओ ने जमकर इन गलत धारणाओं के विरुद्ध संघर्ष किया और बहुत भारी नुकसान के बिना उन पर काबू पा लिया। मई, 1938 से अपनी 'लम्बे युद्ध' नामक पुस्तक में साथी माओ ने इन्हीं गलतियों की आलोचना करते हुए ठीक रास्ता बतलाया और जनयुद्ध की नीति को अपनाने पर जोर दिया।

2. च्यांग के फिर हमले

च्यांग की मनोवृत्ति के बारे में हम पहले काफी बतला चुके हैं। माओ के नेतृत्व में कम्युनिस्टों की शक्ति को बढ़ती देख जापान के सामने से मुँह छिपाकर भगे इस कायर ने फिर गृहयुद्ध आरम्भ कर दिया।

(1) **प्रथम जिहाद** (1939-40 ई.)–जिस समय जापान के हाथ में बिके च्यांग के जेनरलों ने लाल राजधानी (येनान्) पर उत्तर से हमला शुरू किया था, उसी समय 1939 के अन्त में च्यांग काइ-शेक ने पहला कम्युनिस्ट-विरोधी जहाद बोल दिया, और कुओ-मिन्तांगी सेना ने शेन्सी कान्सू, निगस्या के सीमान्ती इलाके पर आक्रमण कर दिया। यह वह भूभाग था, जिस पर कम्युनिस्ट पार्टी का नेतृत्व चल रहा था। इस इलाके के पाँच नगरों पर कब्जा करके उन्होंने पश्चिमी शान्सी में कम्युनिस्टों द्वारा संचालित 'करो या मरो' नामक जापानी सेना पर आक्रमण कर दिया था। शान्-सी के दक्षिण-पूर्वी हिस्से में अवस्थित कम्युनिस्ट पार्टी की आठवीं रूट-सेना पर भी हमला

होने पर उसने कुओमिन्तांगी हमलों का मुँहतोड़ जवाब दिया—कुओमिनूतांगी हमले संयोगवश उसी समय हो रहे थे, जबकि जापानी भी कम्युनिस्टों पर हमला कर रहे थे।

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी जापान के खिलाफ युद्ध का असली नेता है, सिद्ध हो चुका था। अब उसका ही एक काम था कि समूची जनता के सामने चीन की क्रान्ति और नये चीन के निर्माण के बारे में अपने सारे विचारों को रक्खे, जिसमें कि कुओमिन्तांगी प्रतिक्रियावादियों और उसके पुछल्लों को नैतिक बल से पूर्णतया कमजोर करके चीन के मजूर-वर्ग तथा क्रान्तिकारी जनता को समुचित नैतिक हथियारों से लैस किया जा सके। यह काम साथी माओ चे-तुंग ने अपनी पुस्तक 'नई जनतन्त्रता' को लिखकर किया, जो जनवरी, 1940 में प्रकाशित हुई। इसमें उन्होंने बतलाया कि चीनी राष्ट्र नष्ट नहीं हो सकता, उसका भविष्य उज्ज्वल है। कुओ-मिन्-तांग के प्रतिक्रियावादियों के खुले देशद्रोह करके जापान से मिल जाने पर भी जनता के पास शक्ति का इतना अक्षय भण्डार है कि अन्त में उसकी विजय निश्चित है। विश्व की कोई शक्ति अजेय चीनी जनता को पराजित नहीं कर सकती। माओ ने चीन और विश्व के इतिहास को बतलाते हुए इस बात को खोलकर रख दिया कि रूस में अक्टूबर की महान् क्रान्ति के बाद चीन की क्रान्ति का नेतृत्व अनिवार्यतया चीन के मजूर-वर्ग को करना है। चीन की क्रान्ति को दो मंजिलों में विभाजित होना जरूरी है—(1) नई जनवादी मंजिल, और (2) समाजवादी मंजिल। नये जनवाद (लोकशाही) का भविष्य अवश्य ही मजूर-वर्ग के नेतृत्व में समाजवाद होगा। नई जनवादी-क्रान्ति के दौरान में पार्टी के लिए आवश्यक है कि वह उन नये जनवाटी राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक कार्यक्रमों को अपनाये, जो पूँजीवाद और समाजवाद—इन दोनों कार्यक्रमों से भिन्न हों। इस पुस्तक के प्रकाशन से पार्टी और चीन के सभी क्रान्तिकारी लोगों की सैद्धांतिक एकता में भारी वृद्धि हुई, इससे जनता के सभी मुक्त इलाकों की कार्यनीति में एकता कायम करने में मदद मिली।

चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने इस समय जापानियों के साथ मुकाबला करते हुए अपनी राजनीतिक सूझ से जनता की एकता को बढ़ाकर अपनी शक्ति को मजबूत किया। उसने साफ कहा कि जब तक कुओ-मिन्तांग जापानी आक्रमणकारियों के सामने घुटने नहीं टेकती, तब तक कुओ-मिन्तांग प्रतिक्रियाओं के विरुद्ध नाता न तोड़ने की सीमाओं के भीतर रहकर हमें संघर्ष चलाना है। जहाँ तक मझोले पूँजीपति-वर्ग और जाग्रत भद्र-वर्ग का सम्बन्ध है, उनके साथ एकता स्थापित करने पर खास तौर से ध्यान देना है। इसलिए पार्टी को चाहिए कि प्रगतिशील शक्तियों को आगे बढ़ाने, मझोली शक्तियों को आगे बढ़ाने, मझोली शक्तियों को अपनी ओर करने और प्रतिक्रियावादियों को छाँटकर उनके प्रभाव को खतम कर दें। माओ ने इस आम नीति का खाका तैयार किया। उन्होंने यह बात भी सामने रक्खी कि कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादियों के खिलाफ संघर्ष करना 'उचित, लाभदायक और बुद्धिमत्तापूर्ण' है। पार्टी ने तीन-तीन प्रतिनिधि प्रणाली भी स्वीकार की, अर्थात् सभी मुक्त इलाकों में राज-काज चलाने के लिए ऐसी प्रणाली मंजूर की, जिसमें एक-तिहाई मेम्बर कम्युनिस्ट (मजूर-वर्ग और गरीब किसानों का प्रतिनिधित्व करनेवाले), एक-तिहाई प्रगतिशील तत्त्व (निम्न पूँजीपति-वर्ग के प्रतिनिधि) और एक-तिहाई मझोले (मझोले पूँजीपति-वर्ग और सजग भद्र-वर्ग के प्रतिनिधि) हों।

पहले हमले में विफल होने के बाद च्यांग काइ-शेक ने जनवरी, 1941 में कम्युनिस्टों के विरुद्ध दूसरा जिहाद शुरू किया। उसने चौथी सेना के प्रधान दफ्तर और उसके 10 हजार से अधिक सैनिकोंवाले एक भाग—जो अब तक अनह्वेई प्रदेश के दक्षिणी इलाके में तैनात था—के नाम यांग-ची नदी को उत्तरी तट की ओर कूच करने का मनमाना फरमान जारी कर दिया। 7 जनवरी को कूच के समय ही उसने नई चौथी-सेना पर 80 हजार कुओ-मिन्तांगी सैनिकों से घेरकर हमला कर दिया। इस हमले से नई चौथी सेना को भारी नुकसान उठाना पड़ा। उसके कमांडर येह तिंग कैदी बने और उप-कमांडर स्यांग इंग लड़ाई में काम आये। इसके बाद तुरन्त ही च्यांग काइ-शेक ने नई चौथी-सेना को तोड़ देने की भी घोषणा कर दी और उसके अन्य भागों पर आक्रमण करने का हुक्म दिया। यह घटना 'अन्-ह्वेइ-घटना' के नाम से प्रसिद्ध है। कम्युनिस्टों ने नई चौथी-सेना के तोड़ने के फरमान का तेजी के साथ मुँहतोड़ जवाब दिया और जवाबी हमलों से च्यांग के जिहाद को चकनाचूर कर दिया। यही नहीं, बल्कि घटना से पहले की अपेक्षा नई चौथी-सेना का मुख्य भाग पहले से भी अधिक सुसंगठित बन

गया और पूर्वी चीन के इलाकों में उसकी ताकत और भी ज्यादा मजबूती के साथ बढ़ने लगी।

इस घटना के बाद कम्युनिस्टों ने प्रयत्न किया, किन्तु च्यांग काइ-शेक की बदमाशी के कारण संयुक्त मोर्चे को कायम करने में सफलता नहीं मिली। लेकिन, इससे च्यांग ने अपने ही प्रभाव को खतम कर दिया और लोगों की आँखें खुल गईं। वह समझने लगे कि च्यांग से कोई आशा नहीं हो सकती। 'अन्-ह्वेइ-घटना' से चीन की जनता की कठिनाइयाँ खतम नहीं, बल्कि शुरू हुईं। 1941 के शुरू से ही जापान ने अपनी सेना के 60 प्रतिशत हिस्से को अपने पिछले भाग के मोर्चों में स्थित मुक्त इलाकों के ऊपर तैनात करके हुकुम दिया था कि इन इलाकों के घावों को गहरा बनाते सब कुछ जलाकर खाक कर दो, सबको बीन-बीनकर खतम कर दो, सबको लूट लो। जापानी पांती के पिछले भागों में छूटे हुए अधिकतर कुओ-मिन्-तांगी सैनिक दुश्मन के सामने घुटने टेककर उसके कठपुतली सैनिक बन गये थे। इन कठपुतली सैनिकों में से 90 प्रतिशत से भी ज्यादा सैनिक जापानी अफसरों के संचालन में कम्युनिस्ट. स्वतन्त्र इलाकों पर हमले करने लगे। च्यांग काइ-शेक ने खुफिया तौर से अपनी कितनी ही टुकड़ियों के नाम आदेश जारी किया था कि वह जापान के सामने आत्मसमर्पण कर दें, और फिर जापानियों की कमान में आठवीं मोर्चा-सेना तथा नई चौथी-सेना से लड़ें।

यह वह समय था, जब कि जून, 1941 में हिटलर ने सोवियत संघ पर हमला कर दिया था। इसी साल के जाड़ों में जापान ने प्रशान्त महासागर में अमेरिका और ब्रिटेन के अधिकृत भूभाग पर आक्रमण कर दिया था। युद्ध के आरम्भिक काल में फासिस्तों की जीत-पर-जीत होने लगी थी। च्यांग के कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादियों ने शत्रु के सामने घुटना टेक उसके साथ सहयोग किया, मुक्त इलाकों को घेरने, कम्युनिस्टों तथा जनता के ऊपर आक्रमण करने की लज्जाजनक कार्रवाइयों को और भी अधिक प्रोत्साहन दिया। इस समय मुक्त इलाके अपनी आबादी और सैनिक-संख्या तथा आकार में भी काफी घट गये थे। भारी आर्थिक कठिनाइयाँ सामने थीं, जिन पर काबू पाने के लिए पार्टी को और भी ज्यादा जी-जान से कोशिश करनी पड़ी। पार्टी ने मुक्त इलाकों के सभी सरकारी दफ्तरों, स्कूलों और सैनिकों की संख्या घटा उनके गुण को बढ़ाने, उन्हें ऊँचा उठाने और शासन-यन्त्र में सादगी लाने की नीति पर अमल किया, जिससे कि जनता के बोझ को हलका किया जा सके। इसी के साथ पार्टी ने अधिक अन्न उपजाने के लिए अपने-आपको संगठित करने की दिशा में लोगों की अगुवाई करने के काम पर जोर दिया, जिसमें प्राकृतिक आफतों के समय सहायता मिल सके। उत्पादन बढ़ाने के संघर्ष के साथ-साथ पार्टी ने मालगुजारी और सूद को कम करने के व्यापक आन्दोलन में किसानों का पथ-प्रदर्शन किया। नई परिस्थिति में दुश्मन से लोहा लेने के लिए मुक्त इलाकों ने जन-सेना को भारी मात्रा में विकसित किया। "बीन-बीनकर खतम करनेवाले घावों के खिलाफ जवाबी संघर्ष के सिवा शत्रु के पिछले भाग के मोर्चे की गहराइयों में घुसकर मुक्त इलाकों को फिर से कायम करने और उन्हें बढ़ाने के संघर्ष को चलाने के लिए मुक्त इलाकों की सेना और जनता ने हथियारों से सुसज्जित दल भेजे। इन सब कोशिशों से सारी कठिनाइयों पर काबू पा लिया गया। मुक्त इलाके पहले से भी अधिक गठित बन गये और वह 1943 से लेकर आगे के काल में दृढ़ गति से फैलने और बढ़ने लगे।"

इस काल की अपेक्षाकृत कम परिवर्तन होनेवाली स्थिति का सारी पार्टी को मार्क्सवाद-लेनिनवाद की शिक्षा देने में इस्तेमाल किया गया। तेजी के साथ बढ़ते युद्ध और क्रान्ति की परिस्थितियों में बड़े पैमाने पर शिक्षा के काम का बीड़ा उठाना अत्यन्त कठिन था। काम में अध्ययन और लेखन में गलत तरीकों को ठीक करने की पद्धति के द्वारा पार्टी ने कार्यकर्ताओं और मार्क्सवाद-लेनिनवाद की चादर ओढ़कर पार्टी में फैले पूँजीवादी विचारों और काम करने के पूँजीवादी तरीकों की पहचान करना और उन पर काबू पाना सिखलाया—खास तौर से चेतनावादी और संकीर्णतावादी प्रवृत्तियों और उनकी अभिव्यक्ति के रूपों की पार्टी-सम्बन्धी तोता-रटन शब्दाडम्बर की पहचान और परख करना बताया। उसने कहा कि अध्ययन के ढंग में सुधार करो, पार्टी के काम करने के ढंग को ठीक करो, पार्टी के बारे में तोतारटन्त शब्दाडम्बर का विरोध करो। येनान् में हुई साहित्य और कला-सम्बन्धी गोलमेज-कान्फरेंस में दिये गये साथी माओ चे-तुंग के भाषणों एवं अच्छे कम्युनिस्ट बनने के ढंग तथा पार्टी के भीतर संघर्ष के बारे में साथी ल्यू शाओ-ची के भाषणों ने अध्ययन-आन्दोलन में महत्त्वपूर्ण

सहायता दी। इनसे 1931 से पार्टी में घर कर गये मतवादी तूफानों के बुरे प्रभाव खतम हो गये, और निम्न पूँजीपति वर्ग के बुद्धिजीवियों में से आये पार्टी के नये सदस्यों को अपने पहले के निम्न पूँजीवादी दृष्टिकोण को छोड़ने और सर्वहारा दृष्टिकोण को अपनाने में मदद मिली। फलतः पार्टी को सैद्धान्तिक दृष्टि से लम्बा डग भरते आगे बढ़ने और पहले से ज्यादा एकताबद्ध होने में सहायता मिली।

जिस समय कम्युनिस्ट पार्टी इस प्रकार कठिनाइयों और संघर्षों के बीच आगे बढ़ रही थी, उसी समय कुओ-मिन्तांग सरकार दिन-पर-दिन भ्रष्टाचार के दलदल में बुरी तौर से धँसती जा रही थी। अपनी राजनीतिक स्थिति और खास कर प्रतिरोध-युद्ध एवं मुद्रा-प्रसार आदि से फायदा उठाकर कुओ-मिन्तांगी नेताओं ने भारी सम्पत्ति बटोरी, चीन की पूँजी पर और व्यापार पर, उद्योग और खेती पर उन्होंने अपना एकाधिपत्य कायम कर लिया; एवं अन्धाधुन्ध लूट शुरू कर तेजी के साथ विदेशी पूँजी के पत्तलचट तथा फौजी इजारेदारीवाले पूँजीवाद 'नौकरशाही पूँजीवाद'—को विकसित कर दिया। इस नौकरशाही पूँजीवाद के अगुवा और प्रमुख सूत्रधार थे चार परिवार—च्यांग (काइ-शेक), सुंग (टी. ई.), कुंग (एच्. एच्.) और चेन् (ली-फू)। देश की सारी लूटी हुई सम्पत्ति का सबसे अधिक भाग इन चार घरानों के हाथ में चला गया।

ऐसा होने पर मजूर-वर्ग, किसान-वर्ग, नगर के निम्न पूँजीपति-वर्ग और कुओ-मिन्तांग के कब्जेवाले भूभाग में राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग के हितों से तेजी के साथ टक्कर होनी स्वाभाविक थी। एक ओर जीवन की परिस्थितियाँ अत्यन्त दुखद हो गईं, दूसरी ओर जापान के खिलाफ युद्ध करने में राजनीतिक आजादी के अभाव होने से लोगों में असंतोष और शिकायतें जोर पकड़ने लगीं। कितनी ही जगहों में जनता ने विद्रोह कर दिया। अब भ्रष्टाचार में नाक तक डूबा च्यांग काइ-शेक जनता से और अलग हो गया। जून, 1943 ई. में मुँह से झाग उगलते हुए च्यांग ने कम्युनिस्टों पर 'एकता' तोड़ने का दोष लगाकर उन्हें 'दण्ड' देने के लिए अभियान शुरू कर देने के लिए कहा और शेन्-सी-कान्सू-निंग स्या के सीमान्ती इलाकों पर आक्रमण करने की तैयारी के लिए बड़ी संख्या में सैनिकों को रवाना कर दिया।

(2) द्वितीय जिहाद (1941 ई.)—च्यांग ने कम्युनिस्टों पर दूसरा हमला किया, किन्तु इस आक्रमण या जिहाद को उसे बीच में ही रोक देना पड़ा। पार्टी ने पहले ही खुले तौर से जिहाद का पर्दाफाश कर दिया था, जिसमें सारे देश की जनता ने इसका घोर विरोध किया था। स्पष्ट ही युद्ध-काल में अछूता बचाकर पिछले भाग के मोर्चों में रख छोड़े अपने कई लाख सैनिकों पर उस समय भी च्यांग काइ-शेक को भारी भरोसा था। अभी तक उसको यह तथ्य समझ में नहीं आया था कि मेरी प्रतिक्रियावादी नीति खुद मेरे सैनिकों को काफी समय पहले ही से पस्त-हिम्मत कर चुकी है। यह तथ्य 1944 में पूरी तौर से प्रकट हो गया, जब जापानियों ने अपना नया हमला शुरू कर दिया।

(3) नया जनवाद—1940 में साथी माओ चे-तुंग ने 'नया जनवाद' ('नई लोकशाही') नामक पुस्तक लिखकर उस समय की निराशापूर्ण स्थिति में पथ-प्रदर्शन किया और बतलाया कि चीनी राष्ट्र नष्ट नहीं हो सकता। कुओ-मिन्तांग के प्रतिक्रियावादियों की खुली गद्दारी और विश्वासघात करके जापान से मिल जाने पर भी चीनी जनता के पास शक्ति का इतना अक्षय भण्डार है कि अन्त में जापान-विरोधी लड़ाई और क्रान्ति में उसकी विजय निश्चित है। चीनी जनता की अन्त में विजय होगी, लेकिन उसे स्थायी बना लोगों को खुशहाल करने के लिए 'नये जनवाद' को अपनाना होगा—सभी क्रान्तिकारी वर्गों अर्थात् मजूरों, किसानों, मध्य-वर्ग एवं सामन्तवाद-विदेशी साम्राज्यवाद के विरोधी पूँजीपतियों की मिली-जुली सरकार कायम करनी होगी। इस पुस्तक के निकलने के पाँच साल बाद अप्रैल, 1945 में सातवीं पार्टी-कांग्रेस के सामने रिपोर्ट करते हुए नये जनवाद के सिद्धान्त को और आगे बढ़ाया गया। यह रिपोर्ट 'मिली-जुली सरकार' के नाम से प्रकाशित हुई।

(4) भीतरी सुधार (1942)—1 फरवरी, 1942 को नये प्रदेश में पार्टी-स्कूल आरम्भ करते हुए माओ ने एक बड़ा ही महत्त्वपूर्ण भाषण दिया था, जिसमें उन्होंने मार्क्सवाद के सिद्धान्त और व्यवहार को समझने के महत्त्व को बतलाया था :

" आज पार्टी-स्कूल का उद्घाटन-दिन है। मैं स्कूल को उसकी सफलताओं के लिए अभिनन्दन करता हूँ।

" आज मैं हमारी पार्टी की कार्यशील-सम्बन्धी समस्या के बारे में संक्षेप से विचार करना चाहता हूँ।

" एक क्रान्तिकारी पार्टी का होना क्यों जरूरी है ? एक क्रान्तिकारी पार्टी का होना इसलिए जरूरी है कि हमारे शत्रु अब भी मौजूद हैं। पर साधारण क्रान्तिकारी पार्टी मात्र ही नहीं, बल्कि वह कम्युनिस्ट (क्रान्तिकारी) पार्टी होनी चाहिए, क्योंकि अगर कम्युनिस्ट (क्रान्तिकारी) पार्टी नहीं होगी, तो शत्रु की पूरी तौर से पराजय असम्भव होगी। शत्रु की पूरी तौर से पराजय के लिए हमारी पाँती को सुव्यवस्थित होना होगा, हमें कदम से कदम मिलाकर चलना होगा, हमारी सेनाओं को तपी और हमारे हथियारों को सक्षम होना होगा। जब तक ये शर्तें पूरी नहीं होतीं, तब तक शत्रु को पराजित नहीं किया जा सकेगा।

" अब भी हमारी पार्टी के सामने कौन-सी समस्याएँ हैं ? इसमें सन्देह नहीं, हमारी पार्टी की साधारण कार्यप्रणाली ठीक है और हमारी पार्टी के काम के अच्छे परिणाम निकले हैं। हमारे कई लाख पार्टी-सदस्य हैं, जो जनता के साथ एक हो हमारे राष्ट्रीय शत्रुओं के विरुद्ध कड़े और अद्वितीय संघर्ष में लगे हुए हैं। जनता की सेवा में उनके वीरतापूर्ण बलिदान और सफलताओं को सभी देख सकते हैं, उनके बारे में सन्देह करना असम्भव है।

" लेकिन, इस सबके बाद भी क्या पार्टी के सामने अब भी समस्याएँ मौजूद हैं ? क्या अब भी उसमें खामियाँ हैं ? मैं कहता हूँ, समस्याएँ अब भी हैं, खामियाँ अब भी हैं और कुछ बातों में यह समस्याएँ अपेक्षाकृत अधिक गम्भीर हैं।

" कौन-सी वह समस्याएँ हैं ? कुछ साथियों के दिमागों की कितनी ही बातें बिल्कुल ठीक या बिलकुल सिद्धान्तानुमोदित नहीं हैं।

" कौन-सी ये बातें हैं ? विचार का प्रश्न, पार्टी के आभ्यन्तरिक और बाह्य सम्बन्धों का प्रश्न तथा साहित्य का प्रश्न। इन तीन बातों में हमारे कुछ साथी अब भी सिद्धान्त-अननुमोदित प्रवृत्तियों से मुक्त नहीं हुए हैं। कितनी ही बातों में शिक्षा के बारे में हमारी मनोवृत्ति, हमारी पार्टी-मनोवृत्ति और हमारी साहित्य-सम्बन्धी मनोवृत्ति अब भी ठीक नहीं हैं। शिक्षा में बेठीक मनोवृत्ति को हम मनोमयवाद (सब्जेक्टिविज्म) कहते हैं, पार्टी-सम्बन्धी बेठीक मनोवृत्ति को सम्प्रदायवाद और साहित्य-सम्बन्धी बेठीक मनोवृत्ति को पार्टी लकीरवाद (फार्मलिज्म)। ये बेठीक मनोवृत्तियाँ जाड़ों में उत्तरहिया हवा की तरह आकाश को भर नहीं देतीं। मनोमयवाद, सम्प्रदायवाद और पार्टी लकीरवाद वर्तमान में हावी होनेवाली मनोवृत्तियाँ नहीं हैं। वह केवल हवाई हमले के रक्षास्थान के बाहर वाली प्रतिकूल और विपथगामिनी मनोवृत्तियाँ हैं (हँसी)। तो भी यह दुर्भाग्य की बात है कि हमारी पार्टी में अब भी ऐसी मनोवृत्तियाँ मौजूद हैं। हमें इन शरणस्थानों को मूँदना होगा, सारी पार्टी को इस मूँदने के काम को करना होगा। हमारे पार्टी-स्कूल को इसमें हिस्सा लेना होगा। मनोमयवाद, सम्प्रदायवाद और पार्टी लकीरवाद—इन सभी विपथगामिनी मनोवृत्तियों की अपनी ऐतिहासिक उत्पत्ति है। यह विचार सारी पार्टी नहीं रखती तो भी वह लगातार हमें तंग करती रहती है; इसलिए यह आवश्यक है कि हम उनका प्रतिरोध और सुधार करें, यह आवश्यक है कि उनका विश्लेषण और स्पष्टीकरण करें, और यह आवश्यक है कि उनका अध्ययन करें।

" अतः हमारे कर्तव्य हैं : शिक्षा-सम्बन्धी मनोवृत्ति का सुधार करने के लिए मनोमयवाद-विरोध, पार्टी-मनोवृत्ति को सुधारने के लिए सम्प्रदायवाद-विरोध, साहित्य की मनोवृत्ति को सुधारने के लिए पार्टी-लकीरवाद-विरोध।

" यदि हम शत्रु को पराजित करना चाहते हैं, तो हमें पार्टी के भीतर की इन मनोवृत्तियों के सुधार के काम को पूरा करना होगा। शिक्षा-सम्बन्धी मनोवृत्तियाँ साथ ही पार्टी-शिक्षा-सम्बन्धी मनोवृत्तियाँ हैं, साहित्य-सम्बन्धी मनोवृत्तियाँ साथ ही पार्टी-साहित्य-सम्बन्धी मनोवृत्तियाँ हैं। इस प्रकार, दोनों ही पार्टी-मनोवृत्तियाँ हैं। अगर हमारी पार्टी-मनोवृत्तियाँ पूरी तौर से सिद्धान्तानुमोदित हैं, तो सारे राष्ट्र के लोग हमसे सीख ग्रहण करेंगे और इन बेठीक मनोवृत्तियोंवाले पार्टी के बाहर के लोग, अगर वह सदिच्छा रखनेवाले हैं, हमसे सीखेंगे, अपनी भूलों को दुरुस्त करेंगे। इस प्रकार हम सारे राष्ट्र को प्रभावित करने में सफल होंगे। यदि कम्युनिस्ट पार्टी की कर्मी-पंक्ति अच्छी तरह व्यवस्थित है, यदि हम कदम से कदम मिलाकर चलनेवाले हैं, यदि हमारी

सेनाएँ तपी हैं और हमारे हथियार सक्षम हैं, तो शत्रु चाहे जितना भी शक्तिशाली हो, वह हमारे हाथों हार खाने से नहीं बच सकता।

"मैं अब मनोमयवाद की विवेचना करता हूँ।

"मनोमयवाद शिक्षा में एक सिद्धान्त-अननुमोदित मनोवृत्ति है। वह मार्क्सवाद-लेनिनवाद-विरोधी है, और कम्युनिस्ट पार्टी के साथ-साथ कायम नहीं रह सकता। हमें आवश्यकता है मार्क्सीय-लेनिनीय वृत्ति की शिक्षा की। यह शिक्षा-सम्बन्धी मनोवृत्ति केवल स्कूलों में ही अपेक्षित मनोवृत्ति नहीं है, बल्कि सारी पार्टी में उसकी जरूरत है। यह संगठनों, सभी कर्मियों और सभी पार्टी-मेम्बरों का नेतृत्व करने में विचार-सम्बन्धी एक समस्या है। यह मार्क्सवाद-लेनिनवाद की ओर पग बढ़ाने एवं अपने कामों की ओर सारी पार्टी में साथियों के पग बढ़ाने की समस्या है। चूँकि वह इस स्वभाव की है, इसलिए शिक्षा-सम्बन्धी मनोवृत्ति की समस्या अपवादरूपेण प्रथम महत्त्व रखती है।

"वर्तमान समय में सिद्धान्तियों के स्वभाव, बुद्धिजीवियों के स्वभाव, सिद्धान्त और व्यवहार के बीच के सम्बन्ध इत्यादि जैसे प्रश्नों के विषय में कितने ही अस्त-व्यस्त खयाल काम कर रहे हैं।

"पहला प्रश्न है : क्या पार्टी का सैद्धान्तिक तल ऊँचा है या नीचा ? हाल में मार्क्सवाद-लेनिनवाद-सम्बन्धी बहुत-सी पुस्तकों का अनुवाद हुआ है, और बहुत-सी पढ़ी भी गई हैं। यह बहुत अच्छा है। लेकिन, क्या हम इसके कारण कह सकते हैं कि पार्टी ऊँचे सैद्धान्तिक तल पर पहुँच गई है ? निश्चय ही, पहले की अपेक्षा हमारा तल कुछ ऊँचा है, तो भी चीनी क्रान्तिकारी आन्दोलन के मूल्यवान् अनुभव को देखते हमारे सैद्धान्तिक तल की प्रगति असाधारण रूप में मन्द और पिछड़ी हुई है, और आम तौर से हमारा सिद्धान्त हमारे क्रान्तिकारी अनुभव के साथ-साथ नहीं चल सका है। यह कहना तो और भी गलत है कि हमारा सिद्धान्त अनुभव से आगे बढ़ गया है। अभी हम इस मूल्यवान् अनुभव को आवश्यक सैद्धान्तिक तल तक नहीं उठा पाये हैं। अभी तक हम क्रान्ति के सभी या अत्यन्त आवश्यक प्रश्नों की परीक्षा नहीं कर सके हैं, और न उन्हें सैद्धान्तिक तल पर उठा सके हैं।

"चीन की आर्थिक, राजनीतिक, सैनिक व्यवस्था और संस्कृति को ही ले लो, हममें से कितने ऐसे हैं, जिन्होंने इनके सम्बन्ध में ऐसे सिद्धान्त निकाले हैं, जो वस्तुतः सिद्धान्त हैं, जिनमें वैज्ञानिक रूप है और जो सुसंगठित ढाँचेवाले हैं, और जो केवल सिद्धान्तों के कंकाल मात्र नहीं हैं ? यह बात आर्थिक व्यवस्था पर भी विशेष तौर से लागू होती है। अफीम-युद्ध को बीते एक सौ वर्ष हो गये, तो भी चीनी पूँजीवाद के विकास के सम्बन्ध में अभी तक वास्तविक तौर से वैज्ञानिक और चीनी आर्थिक विकास की वास्तविकताओं के अनुरूप कोई सैद्धान्तिक कृति नहीं तैयार की जा सकी है। चीनी अर्थशास्त्र के सम्बन्ध में क्या हम कह सकते हैं कि उसका सैद्धान्तिक तल ऊँचा हो चुका है ? क्या हम कह सकते हैं कि हमारी पार्टी में ऐसे अर्थशास्त्री सिद्धान्ती मौजूद हैं, जो कि उचित मान पर ठीक उतरते हैं ? यह सचमुच ही नहीं कहा जा सकता। क्या हम सिद्धान्तियों के होने का दावा सिर्फ इसलिए कर सकते हैं कि हमने मार्क्सवाद-लेनिनवाद के ऊपर बहुत सारे ग्रंथ पढ़ लिये हैं ? इनमें से एक बात भी हम नहीं कह सकते।

"मार्क्सवाद-लेनिनवाद वह सिद्धान्त है, जिसे कि मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन ने वास्तविक तथ्यों के आधार पर निर्मित किया है। वह ऐतिहासिक तथा क्रांतिकारी अनुभव के आधार पर निकाले साधारण निष्कर्ष के रूप में है। अगर हमने इस सिद्धान्त को केवल पढ़ा मात्र है और उसे ऐतिहासिक तथा क्रांतिकारी वास्तविकता के सम्बन्ध में अनुसन्धान का आधार नहीं बनाया, चीन की वास्तविक आवश्यकताओं के अनुरूप ऐसा सिद्धान्त नहीं निर्मित किया, जो कि हमारा निजी और एक खास स्वभाव का है, तो यह कहना गैर-जिम्मेदारी की बात होगी कि हम मार्क्सवादी सिद्धान्ती हैं। अगर कोई व्यक्ति कम्युनिस्ट पार्टी के मेम्बर के रूप में काम करता है, लेकिन चीनी समस्याओं को इस तरह देखने का आदी है, तो वह उन्हें देख नहीं सकता। रोज देखता है, लेकिन जानता कुछ नहीं है, चश्मा लगाता है, तो भी कुछ नहीं देखता। अगर कोई व्यक्ति मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन की सम्पूर्ण ग्रंथावलियों को अलमारी में ही देखता है, तो उसकी कामयाबियाँ अत्यन्त दरिद्र छोड़

और कुछ नहीं हो सकतीं। यदि हम मार्क्सवादी अर्थशास्त्र या दर्शन को केवल दोहराना जानते हैं, पहले से दसवें अध्याय तक दोहराते रहना जानते हैं, यहाँ तक कि वह अत्यधिक पक जाती है (हँसी), किन्तु उनको व्यवहार में लाने में बिल्कुल असमर्थ हैं; तो क्या हम मार्क्सवादी सिद्धान्ती समझे जा सकते हैं ? शायद नहीं। यह अच्छा होगा, यदि इस तरह के सिद्धान्ती हमारे यहाँ कमतर हों। यदि कोई आदमी मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन की दस हजार जिल्दों को पढ़ता है और हरेक जिल्द को हजार बार पढ़ता है और इस प्रकार प्रत्येक वाक्य को स्मृति से दोहरा सकता है, तो भी वह सिद्धान्ती नहीं समझा जा सकता।

" किस प्रकार के सिद्धान्तियों की हमें आवश्यकता है ? हमें ऐसे सिद्धान्ती चाहिएँ, जोकि अपने चिन्तन को मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन के दृष्टिकोणों, विचारों और शैलियों पर आधारित करें, जो इतिहास और क्रांति से पैदा होनेवाली वास्तविक समस्याओं की ठीक व्यवस्था कर सकें, चीनी अर्थनीति, राजनीति, सैनिक व्यवस्था और संस्कृति-सम्बन्धी भिन्न-भिन्न समस्याओं की वैज्ञानिक व्यवस्था, विश्लेषण और सैद्धान्तिक व्यवस्था कर सकें। इस प्रकार के सिद्धान्ती की हमें आवश्यकता है। इस प्रकार के सिद्धान्ती होने के लिए आदमी को मार्क्सवाद-लेनिनवाद एवं मार्क्सवाद-लेनिनवाद के दृष्टिकोणों, विचारों और शैली को ठीक तौर से समझना होगा। उन्हें चीन की वास्तविक समस्याओं के गम्भीर तथा वैज्ञानिक विश्लेषणों को इस्तेमाल करने में समर्थ होना चाहिए, जिसमें कि वह उनके विकास के नियमों का आविष्कार कर सकें। वस्तुतः हमें इस तरह के सिद्धान्ती की आवश्यकता है।

" केन्द्रीय कमेटी ने अभी-अभी एक प्रस्ताव निकाला है, जिसमें संक्षेप में बतलाया गया है कि हमारे साथियों को सबसे पहले मार्क्सवाद-लेनिनवाद के दृष्टिकोणों, विचार और चिन्तन-शैली पर अधिकार करना चाहिए, फिर चीनी इतिहास, अर्थशास्त्र, राजनीति, सैनिक-व्यवस्था और संस्कृति के सम्बन्ध में तत्परतापूर्वक अनुसन्धान में लगना चाहिए तब और प्रत्येक समस्या का परीक्षण और अनुसन्धान करने के बाद सिद्धान्त निर्मित करना चाहिए। हमारे कन्धे पर यह जिम्मेवारी है।

" हमारे पार्टी-स्कूल को मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तों को पढ़ लेने मात्र से संतुष्ट नहीं होना चाहिए, बल्कि पहले उन पर अधिकार प्राप्त करके फिर उन्हें व्यवहार में लाना चाहिए। अधिकार-प्राप्ति का मुख्य लक्ष्य है व्यवहार। हम योग्यता के तल को गिनने के लिए प्रति-सैकड़ा का इस्तेमाल करते हैं, हमें योग्यता का कौन सा तल प्राप्त होगा, यदि हम हजार दस हजार पुस्तकों में से प्रत्येक को इजार बार पढ़ें, लेकिन उसका व्यवहार बिलकुल न कर सकें ? मैं कहूँगा, हमें एक प्रतिशत नम्बर भी नहीं मिलना चाहिए (हँसी)। किन्तु, यदि मार्क्सवाद-लेनिनवाद के विचारों को एक या दो वास्तविक समस्याओं की व्याख्या करने में इस्तेमाल करने में समर्थ हों, तो तुम्हें प्रशंसा प्राप्त होगी और साथ ही कुछ नम्बर भी अधिक योग्यता के परिचयस्वरूप मिलेंगे। जितनी ही बहुसंख्यक, अधिक व्यापक और गम्भीर व्याख्याएँ होंगी, उतना ही तुम्हारा दर्ग ऊँचा होगा। हमारे पार्टी-स्कूट को मार्क्सवाद-लेनिनवाद के अध्ययन कर लेने के बाद, चीनी समस्याओं के निरीक्षण के सम्बन्ध में आदमी के निर्णय का दर्जा निश्चित करने में इस मान को स्वीकार करना चाहिए। कुछ ऐसे होंगे, जो उन्हें स्पष्ट देखते हैं और कुछ नहीं, कुछ देखने में समर्थ हैं और कुछ नहीं, उच्चतर और निम्नतर, भले और बुरे का वर्गीकरण इन विशेषताओं के अनुसार होना चाहिए।

" तथाकथित बुद्धिजीवियों की समस्या के बारे में क्या कहना है ? चूँकि हमारा चीन अर्ध-उपनिवेशीय, अर्ध-सामन्ती देश है, और इसकी संस्कृति अविकसित है, इसलिए बुद्धिजीवी वर्ग का यहाँ खास मूल्य है। केन्द्रीय कमेटी के प्रस्ताव के अनुसार हमें एक विस्तृत बुद्धिजीवी वर्ग तैयार करने की कोशिश करनी होगी। यह बिल्कुल ठीक है कि हमें उनकी तरफ स्वागत का हाथ बढ़ाना चाहिए, शर्त केवल यही है कि वह क्रान्तिकारी और प्रतिरोध-युद्ध में हिस्सा लेने के लिए इच्छुक हों। हम इसे बिलकुल आवश्यक समझते हैं कि बुद्धिजीवियों को सम्मानित किया जाय, क्योंकि बिना क्रान्तिकारी बुद्धिजीवी वर्ग के क्रान्ति सफल नहीं हो सकती।

" तो भी, हम जानते हैं कि कितने ही ऐसे ही बुद्धिजीवी हैं, जो अपने को भारी पंडित समझते हैं, जो अपने ज्ञान का भारी प्रदर्शन करते हैं और यह अनुभव नहीं करते कि इस तरह का मनोभाव उनकी प्रगति

के लिए हानिकारक और बाधक है। उन्हें इस सच्चाई को अनुभव करना चाहिए कि बहुतेरे तथाकथित बुद्धिजीवी वस्तुतः अत्यन्त अशिक्षित हैं, और कमकरों और किसानों का ज्ञान उनकी अपेक्षा कभी-कभी कितनी ही बातों में बढ़-चढ़कर होता है। इसके बारे में कोई कह सकता है : "आहा ! तुम इसे तर-ऊपर कर रहे हो। यह ऊल-जलूल शब्दाडम्बर है !' (हँसी) किन्तु साथियो, उत्तेजित मत होओ। मैं जो कह रहा हूँ, वह कुछ हद तक बुद्धिपूर्वक है।

" ज्ञान क्या है ? प्राचीन काल से आज तक केवल दो प्रकार के ही ज्ञान हैं : एक प्रकार का ज्ञान है उत्पादन-सम्बन्धी संघर्ष का ज्ञान और दूसरा है वर्ग-संघर्ष-सम्बन्धी ज्ञान। राष्ट्रीय संघर्ष-सम्बन्धी ज्ञान भी इन्हीं में सम्मिलित है। इससे बाहर कौन-सा ज्ञान है ? कोई नहीं। प्राकृतिक विज्ञान और सामाजिक विज्ञान इन दोनों प्रकारों के ज्ञानों के स्फटिकीकरण (परिमार्जित रूप) के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

" अब जरा उन विद्यार्थियों के सम्बन्धों में विचार कीजिए, जो कि पढ़ाई समाप्त करके अपने स्कूलों को छोड़ते हैं, किन्तु जो इस सारे समय समाज की व्यावहारिक कार्रवाइयों से बिलकुल अलग-अलग रहे हैं। वह अपने को उस समय कैसी स्थिति में पाते हैं ? किसी आदमी ने स्कूल के दर्जों से यूनिवर्सिटी तक पढ़ाई की है, वह ग्रेजुएट बना है और शिक्षित समझा जाता है, तो भी पहली बात यह है कि वह खेत नहीं जोत सकता, दूसरी बात यह कि उसे कोई व्यापार मालूम नहीं है, तीसरी बात यह कि वह लड़ नहीं सकता, चौथी यह कि वह एक काम को भी ठीक से कर नहीं सकता। इन क्षेत्रों में से किसी में उसे अनुभव नहीं और न उसे जरा भर भी व्यावहारिक ज्ञान है। उसके पास जो कुछ है, केवल किताबी ज्ञान। क्या ऐसे आदमी को पूर्ण बुद्धिजीवी समझा जा सकता है ? यह बहुत कठिन है, अधिक से अधिक मैं उसे अर्ध-बुद्धिजीवी समझ सकता हूँ, यह इसीलिए कि उसका ज्ञान अभी अपूर्ण है।

" कौन-सा ज्ञान अपेक्षाकृत पूर्ण है ? सभी अपेक्षाकृत पूर्ण ज्ञान दो सीढ़ियों में तैयार होता है : प्रथम यह, कि तुरन्त के प्रत्यक्ष द्वारा हुआ ज्ञान; दूसरे, तर्क द्वारा हुआ ज्ञान, चिन्तन द्वारा हुआ ज्ञान। चिन्तन द्वारा हुआ ज्ञान तुरन्त प्रत्यक्ष द्वारा हुए ज्ञान के विकास की उच्चतर सीढ़ी है। विद्यार्थियों का किताबी ज्ञान किस श्रेणी का है ? यदि हम यह भी समझ लें कि उनका ज्ञान ठीक है, तो भी वह उनके पूर्वजों के उत्पादन-सम्बन्धी संघर्ष और वर्ग-संघर्ष के अनुभव से प्राप्त वाद भर है, वह अपने वैयक्तिक अनुभव द्वारा प्राप्त ज्ञान नहीं है। इस प्रकार का वाद-सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करना उसके लिए अत्यन्त आवश्यक है; लेकिन उन्हें यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि यह ज्ञान उनके लिए उल्टा-पुल्टा, पिछड़ा और एकांगी है। दूसरों ने उसे सिद्ध किया है, लेकिन विद्यार्थियों ने स्वयं उसकी सत्यता को परखा नहीं है। उन्हें समझाना चाहिए कि इस प्रकार के ज्ञान को प्राप्त करना बिलकुल कठिन नहीं, बल्कि अत्यन्त आसान है। इसकी तुलना में भोजन तैयार करने में रसोइये का काम अधिक कठिन है। कोई खाने लायक चीज तैयार करने के लिए उसे ईंधन, चावल, तेल, नमक, चटनी, सिर्का और दूसरी सामग्री के मिश्रण को इस्तेमाल करना होगा। निश्चय ही यह आसान नहीं है, और बढ़िया भोजन पकाना तो और भी मुश्किल है। यदि हम भोजनशाला के रसोइया के कामों की तुलना अपने घरों के रसोइयों से करें, तो हमें भारी भेद मालूम होगा। यदि अत्यधिक ईंधन लगा दिया गया, तो भोजन जल जायगा, अत्यधिक सिर्का डाल दिया, तो वह अधिक खट्टा हो जायगा (हँसी)।

" भोजन पकाना, अनेक प्रकार के थालों को तैयार करना सचमुच ही एक कला है। लेकिन किताबी ज्ञान कैसा है ? अगर पढ़ना छोड़कर तुम और कुछ न करो, तो तुम्हें तीन से पाँच हजार अक्षरों को केवल पहचानना है, उन्हें एक कोष से लेकर रख लेना है, अपने हाथ में कोई पुस्तक पकड़ लेनी है। फिर तुम अपने सिर को लगातार हिलाते पढ़ना शुरू करते हो। लेकिन, किताबें चल-फिर नहीं सकतीं, किसी किताब को तुम अपनी इच्छा से खोल वा बन्द कर सकते हो। दुनिया में यह सबसे आसान काम है, उससे कहीं अधिक आसान, जितना कि एक रसोइये को भोजन तैयार करने में होता है और उससे तो अत्यन्त ही आसान, जितना कि उसे एक सूअर के मारने से पड़ता है। उसे सूअर पकड़ना होता है··· सूअर दौड़ सकता है··· (हँसी)··· वह उसे मारता है··· सूअर चिल्लाता है (हँसी)। मेज पर रक्खी किताब भाग नहीं सकती और न वह चिल्ला सकती

है (हँसी)। तुम जैसे चाहो वैसे ढंग से उसको काम में ला सकते हो। करने की क्या कोई दूसरी चीज इससे आसान है ? इसीलिए मैं तुममें से उन लोगों–जिनके पास केवल किताबी ज्ञान है और अभी भी उनका वास्तविकता से सम्पर्क नहीं हुआ है, जिनके पास व्यावहारिक अनुभव बहुत कम है–को सलाह देता हूँ कि वह अपनी कमियों को, खामियों को अनुभव करें और अपनी मनोवृत्ति को थोड़ा और नम्र बनाएँ।

" किस तरह एक अर्ध-बुद्धिजीवी को वास्तविक उपाधिवाले बुद्धिजीवी के रूप में परिणत किया जा सकता है ? इसका केवल एक ही रास्ता है : जो केवल किताबी ज्ञान रखनेवाले हैं, वह व्यावहारिक कार्यों में लगें, व्यावहारिक कमकर बन जायें, और सैद्धान्तिक काम करनेवाले व्यावहारिक अनुसन्धान करनेवालों के रूप में परिणत हो जायँ। इस प्रकार हम अपने लक्ष्य पर पहुँच सकते हैं।

" यह सुनकर कुछ लोग अपना होश-हवाश खो गर्म हो उठेंगे और कहेंगे : 'तुम्हारी व्याख्या के अनुसार मार्क्स भी अर्ध-बुद्धिजीवी अर्ध-शिक्षित थे।' मैं कहूँगा कि यह बिलकुल ठीक है। पहली बात यह है कि मार्क्स एक सूअर को मार नहीं सकता था; दूसरी बात यह है, कि वह खेत जोत नहीं सकता था। पर उसने क्रान्तिकारी-आन्दोलन में भाग लिया, और सौदे के उत्पादन के सम्बन्ध में अनुसन्धान किया। करोड़ों आदमी प्रतिदिन इन सौदों को देखते और इस्तेमाल करते हैं, लेकिन उन पर दृष्टिपात नहीं करते। केवल मार्क्स ने उन्हें हर रूप में अध्ययन किया, सभी पहलुओं से उनका परीक्षण किया, और उस तरह की एक भी असावधानी नहीं की, जैसाकि हम 'सोवियत संघ कम्युनिस्ट पार्टी इतिहास' के अध्ययन में करते हैं। उसने सौदा-उत्पादन के वास्तविक विकास का विश्लेषण किया, और विश्वव्यापी विद्यमान परिदर्शन (फेनोमैना) के परीक्षण से एक सिद्धान्त निकाला। उसने प्राकृतिक विज्ञान, इतिहास और क्रान्ति के सम्बन्ध में वैयक्तिक अनुसन्धान किया, और उसके अनुसार द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद, ऐतिहासिक भौतिकवाद और सर्वहारा-क्रान्ति के सिद्धान्तों का निर्माण किया। इस प्रकार मार्क्स को पूर्ण बुद्धिजीवी (शिक्षित) मानना पड़ेगा। उसमें और अर्ध-बुद्धिजीवी के भीतर यही भेद है कि उसने वास्तविक क्रान्तिकारी-आन्दोलन में भाग लिया, सर्वान्तरग्राही वास्तविकता के सम्बन्ध में शोध और अनुसन्धान किया। इस प्रकार का सर्वान्तरग्राही ज्ञान सिद्धान्त कहा जाता है।

" हमारी पार्टी को ऐसे बहुत-से साथियों की आवश्यकता है, जो सैद्धान्तिक काम कर सकें। वर्तमान में हमारे बहुत-से साथी सैद्धान्तिक अनुसन्धान करने की योग्यता रखते हैं, और उनमें अधिकांशतः समझदार और मेहनती हैं। हमें ऐसे साथियों की कदर करनी चाहिए, उनका भारी मूल्य मानना चाहिए। लेकिन उन्हें कार्यारम्भ ठीक तौर से करना होगा, पहले की भूलें नहीं दोहरानी होंगी। उन्हें मतवाद को दूर हटाना चाहिए और किताबों के पढ़ने तक अपने काम की इतिश्री नहीं समझनी चाहिए।

"सच्चा सिद्धान्त केवल एक ही प्रकार का है : वही जोकि पदार्थतन्त्र वास्तविकता के परीक्षण से निकाला गया है, और जो पदार्थतंत्र वास्तविकता द्वारा सिद्ध है। जिस सिद्धान्त के बारे में हम कह रहे हैं, उसके बराबर कोई दूसरी चीज नहीं हो सकती। स्तालिन ने साबित किया है, बतलाया है कि वास्तविकता से सम्बन्ध न रखनेवाला सिद्धान्त खोखला है। एक खोखला सिद्धान्त बेकार और बेठीक है, उसे फेंक देना होगा। हमें उन लोगों को पहचानकर लज्जित करना चाहिए, जोकि इस प्रकार के खोखले सिद्धान्तों के सम्बन्ध में वाद-विवाद करने में आनन्द अनुभव करते हैं। पदार्थतन्त्र वास्तविकता से निकाला और पदार्थतन्त्र वास्तविकता द्वारा सिद्ध मार्क्सवाद-लेनिनवाद अत्यन्त ठीक, वैज्ञानिक और क्रान्तिकारी सत्य है। लेकिन बहुत-से लोग मार्क्सवाद-लेनिनवाद को एक मुर्दा मतवाद के तौर पर पढ़ते हैं और इस प्रकरर वह अपने निजी सैद्धान्तिक विकास को नुकसान पहुँचाते हैं, अपने और अपने साथियों की हानि करते हैं। दूसरी ओर, व्यावहारिक काम में लगे हुए वे साथी भी गलतियाँ कर सकते हैं, जोकि अपने अनुभव का बेठीक इस्तेमाल करते हैं। यह बिलकुल सच है कि ऐसे आदमियों के पास बहुत भारी मात्रा में अनुभव है, और उनका ऊँचा मूल्य स्वीकार करना चाहिए। लेकिन, यदि वह अपने अनुभव से ही संतुष्ट हो जायँ, तो भारी खतरे की सम्भावना है। उन्हें समझना चाहिए कि उनके ज्ञान का अधिकांश तुरन्त के प्रत्यक्ष द्वारा प्राप्त हुआ है, इसलिए वह सीमित है, इसीलिए चिन्तन तथा व्यापक ज्ञान के सामने वह कच्चे उतरते हैं, अर्थात् सिद्धान्त में वह कच्चे हैं। इस प्रकार, उनका ज्ञान भी

अपेक्षाकृत अपूर्ण है। और, बिना अपेक्षाकृत पूर्ण ज्ञान के क्रान्ति को पूरा करना असम्भव है।

" इस प्रकार अपूर्ण ज्ञान दो प्रकार के हैं : एक है किताबों से लिया हुआ ज्ञान, और मुझे यह कहना पड़ेगा कि मार्क्सीय-लेनिनीय किताबें भी आदमी को चिन्तन में खोखला रख सकती हैं। दूसरे प्रकार का ज्ञान है, तुरन्त के प्रत्यक्ष के पहलू से परिमाण से अधिक और इसलिए सीमित। बुद्धिसंगत और व्यापक रूप में विकसित नहीं हुआ है। दोनों ही प्रकार के ज्ञान एकांगी हैं। यह तभी उपयोगी, और अपेक्षाकृत पूर्ण हो सकते हैं, जब कि दोनों मिला दिये जायँ और उनसे उपयोगी तथा अपेक्षाकृत पूर्ण ज्ञान पैदा किया जाय।

" अच्छा, यदि हमारे कमकर और किसान-कर्मी सिद्धान्त का अध्ययन करना चाहते हैं, तो पहले उन्हें संस्कृति का अध्ययन करना चाहिए, क्योंकि यदि संस्कृति न हो, तो मार्क्सवाद-लेनिनवाद का अवगाहन नहीं किया जा सकता। ठीक समय पर संस्कृति के अच्छी तरह अध्ययन कर लेने के बाद वह मार्क्सवाद-लेनिनवाद का अध्ययन कर सकते हैं। जब मैं तरुण था, तो मैं किसी मार्क्सवादी-लेनिनवादी स्कूल में नहीं गया, मैंने बहुत-सी चीजें पढ़ी हैं। कन्फूशी ने कहा है, 'क्या यह आनन्द की चीज नहीं है कि तुम अपने पाठ पढ़ो और उन्हें लगातार व्यवहार में लाओ ?' मैंने ठीक इसी तरह पढ़ना सीखा। उदाहरणार्थ, 'अध्ययन' के लिए अक्षरों को सीखा, और अब मैं उन्हें मार्क्सवाद-लेनिनवाद के 'अध्ययन' में इस्तेमाल कर सकता हूँ। किन्तु, आजकल लोग कन्फूशी को नहीं, बल्कि नई राष्ट्रभाषा, इतिहास, भूगोल और प्राकृतिक विज्ञान-सम्बन्धी साधारण ज्ञान को पढ़ते हैं। पूरी तौर से अध्ययन कर लेने के बाद यह सांस्कृतिक पाठ सभी जगह इस्तेमाल में आ सकते हैं। हमारी पार्टी की केन्द्रीय कमेटी बड़े जोर के साथ कमकर और किसान-कर्मियों को सांस्कृतिक अध्ययन में लगने के लिए कह रही है, क्योंकि उनके अध्ययन कर लेने के बाद राजनीति, सैनिक व्यवस्था और अर्थनीति सभी का अध्ययन किया जा सकता है। नहीं तो, चाहे उनके पास अनुभव की सम्पत्ति हो या न हो, अनुभव अधिक मात्रा में हो या न हो, कमकर-किसान कर्मी बढ़कर उस स्थिति में नहीं पहुँच सकेंगे, जहाँ पर सिद्धान्त निकालना सम्भव है।

" इस प्रकार यदि हम मनोमयवाद-विरोधी हैं, तो हमें यह भी ध्यान रखना होगा कि उपरोक्त दोनों प्रकार का ज्ञान उन क्षेत्रों में विकसित हो, जहाँ पर उनकी कमी है, और यह भी कि यह दोनों प्रकार के ज्ञान एक-दूसरे से मिलाये जायँ। किताबी ज्ञानवाले यदि व्यावहारिक क्षेत्रों में विकसित हो सकें, तभी उनके लिए अपनी पुस्तकों से आगे बढ़ना सम्भव हो सकेगा, तभी उनके लिए मतवाद की भूल से बचना मुमकिन हो सकेगा। काम के अनुभव रखनेवाले आदमियों को सिद्धान्त का अध्ययन करना और पढ़ने के मूल्य को समझना होगा; तभी उनके लिए अपने अनुभव को बुद्धि और विश्लेषण के तल तक, सिद्धान्त के तल तक उठाना सम्भव होगा। केवल तभी उनके लिए अपने व्यावहारिक अनुभव को व्यापक सत्य मानने से बचना और प्रयोगवाद (इम्पाइरिकिज्म) की गलती से बचना सम्भव होगा। मतवाद और प्रयोगवाद दोनों मनोमयवाद के रूप हैं, यद्यपि वे दो भिन्न-भिन्न चरम पंथिताओं से उत्पन्न होते हैं।

" इस प्रकार हमारी पार्टी में दो प्रकार के मनोमयवाद हैं जिनमें एक प्रकार है मतवाद और दूसरा प्रयोगवाद। दोनों भूलें तस्वीर के सारे नहीं, बल्कि केवल एक पहलू को देखती हैं। यदि तुम इस एकांगिता की उपेक्षा करते हो, और इसकी भूलों को समझने में असमर्थ हो, और साथ ही आगे बढ़ने की इच्छा रखते हो, तो तुम्हारे लिए भूल के पथ पर चलना आसान होगा।

" हमारी पार्टी के भीतर के इन दो प्रकारों के मनोमयवादों में से अधिक ध्यान देने लायक और खतरनाक मतवाद है, क्योंकि यह आसानी से मार्क्स-एंगेल्स-लेनिन-स्तालिनवाद का चोला पहनकर कमकर-किसान कर्मियों को डरा सकता है और स्थानीय घास के दानों को अपने वैयक्तिक नौकर के तौर पर अपने कब्जे में कर सकता है। कमकर-किसान कर्मियों के लिए इसके चेहरे के असली रूप को पहचानना मुश्किल है। यह भोले-भाले तरुणों को भी डराकर अपने हाथों में कर सकता है। यदि मतवाद पर विजय प्राप्त कर लें, तो हम किताबी ज्ञानवाले कर्मियों में अनुभव रखनेवाले कर्मियों के साथ सहयोग रखने में उत्साह पैदा करने और उन्हें व्यावहारिक बातों के अध्ययन में लगने की ओर प्रेरित कर सकेंगे। तब अनुभव और सिद्धान्त दोनों से संयुक्त बहुत-से

अच्छे कर्मियों को पैदा कर सकेंगे और बहुत-से सच्चे सिद्धान्तों का पैदा करना सम्भव हो सकेगा। यदि हम मतवाद पर विजय प्राप्त कर लें, तो अनुभव रखनेवाले साथी अच्छे शिक्षकों को प्राप्त कर सकते हैं और सिद्धान्त के तल तक ऊपर उठ सकते हैं, जिससे प्रयोगवाद की भूल से वह बच सकते हैं।

"··· हमारे साथियों को यह समझ लेना चाहिए कि हम मार्क्सवाद-लेनिनवाद का इसलिए अध्ययन नहीं करते कि वह हमारी आँखों को अच्छा लगता है, या उसमें शैतान और भूत-प्रेत पर विजय करने की सीख के लिए माओ-शान्-पर चढ़नेवाले चाववादी साधुओं के सिद्धान्तों की तरह कोई रहस्यपूर्ण मूल्य है। मार्क्सवाद-लेनिनवाद में न सौंदर्य है न उसका कोई रहस्यपूर्ण आध्यात्मिक मूल्य है। वह केवल अत्यन्त उपयोगी है। ऐसा मालूम होता है कि आज तक कितने ही लोगों ने मार्क्सवाद-लेनिनवाद को रामबाण औषध समझा है : अगर एक बार तुमने उसे पा लिया, तो थोड़े-से प्रयत्न से तुम अपने सारे रोगों को उससे दूर कर सकते हो। यह एक प्रकार की बच्चों जैसी मूर्खता है। हमें ऐसे लोगों को होश में लाने के लिए एक आन्दोलन आरम्भ करना चाहिए। जो लोग मार्क्सवाद-लेनिनवाद को एक धार्मिक मतवाद समझते हैं, वह इस प्रकार की अन्धी अज्ञानता दिखलाते हैं। हमें साफ तौर से उन्हें कहना चाहिए : 'तुम्हारा मतवाद बेकार है,' अथवा कुछ कठोर वाक्य कहने पर 'तुम्हारा मतवाद पाखाने से भी कम उपयोगी है।' हम देखते हैं कि कुत्ते का पाख़ाना खेतों को उर्वर कर सकता है, और मनुष्य का कुत्ते का भोजन हो सकता है। और मतवाद ? न वह खेतों को उर्वर कर सकता है और न कुत्ते का भोजन हो सकता है। फिर उसका क्या उपयोग है ? (हँसी)

" साथियो ! तुम जानते हो कि इस तरह की बात का उद्देश्य है मार्क्सवाद-लेनिनवाद को मतवाद समझनेवालों का उपहास करना, उन्हें डराना और जागृत करना, उनके भीतर मार्क्सवाद-लेनिनवाद के प्रति ठीक मनोभाव पैदा करना। मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन ने बार-बार कहा है : 'हमारा सिद्धान्त मतवाद नहीं है, यह काम करने के लिए पथ-दर्शक है।' वे लोग इस अत्यन्त महत्त्वपूर्ण वाक्य को सबसे अधिक भूलते हैं। सिद्धान्त और व्यवहार को केवल तभी मिलाया जा सकता है, जब कि चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के आदमी मार्क्सवाद-लेनिनवाद के दृष्टिकोणों, विचारों और शैलियों को लेकर उनका प्रयोग चीन पर करें, और चीनी इतिहास की वास्तविकताओं के आधार पर सोच-समझकर अनुसन्धान करके सिद्धान्त का निर्माण करें। अगर हम केवल सिद्धान्त और प्रयोग के सम्मिलन के बारे में शब्दाडम्बर-भर करें, और अपने कामों में उस सम्मिलन का व्यवहार न करें, तो चाहे हम सौ सालों तक बातें क्यों न बघारते रहें, उससे कोई फायदा नहीं होगा। चूँकि हम समस्याओं के सम्बन्ध में मनोमयता और एकांगिता के विरुद्ध हैं, इसलिए हमें मतवाद के और एकांगी स्वभाव के जाल को तोड़ फेंकना होगा।

" सारी पार्टी के शिक्षा-सम्बन्धी मनोभाव के सुधारने के उपाय के तौर पर मनोमयवाद-विरोध के बारे में मुझे यही कहना था। अब मैं साम्प्रदायिकता-सम्बन्धी समस्या को लेता हूँ।

" बीस वर्षों के तापन और घर्षण के बाद हमारी पार्टी सम्प्रदायवाद के पूरे-पूरे प्रभाव में नहीं है, लेकिन अन्तर्पार्टी और बहिःपार्टी सम्प्रदायवाद के अवशेष अब भी मौजूद जरूर हैं। अन्तर्पार्टी सम्प्रदायवाद भीतरी विरोध पैदा करना चाहता है, और पार्टी के एकताबद्ध तथा घनीभूत करने में बाधा पहुँचाता है। बहिःपार्टी सम्प्रदायवाद बाहर से विरोध पैदा करता तथा सारे राष्ट्र के साथ पार्टी के एकताबद्ध होने में बाधा पहुँचाता है। सारे पार्टी के साथियों और सारे राष्ट्र के लोगों के एकताबद्ध करने के पार्टी के महान् कार्य को स्वतन्त्रतापूर्वक और निर्बाध रूप से तब तक पूरा नहीं किया जा सकता, जब तक कि इन दोनों मनोवृत्तियों की ध्वसंक जड़ों को हटा नहीं दिया जाता।···

" मैं जानता हूँ कि हमें काम को ईमानदारी से करना चाहिए। दुनिया में बिना ईमानदारीवाली मनोवृत्ति के किसी काम को पूरा करना बिलकुल असम्भव है। ईमानदार आदमी कौन है ? मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन ईमानदार आदमी हैं। पाखण्डी कौन है ? त्रोत्स्की, बुखारिन और चांग कुओ-ताओ पाखण्डी थे, वैसे ही जैसा कि ली ली-सान्। जो आदमी अपने वैयक्तिक और विशेष हितों के लिए आजादी की माँग करते हैं, वह भी पाखण्डी हैं। जो लोग चालबाज हैं, जो अवैज्ञानिक मनोवृत्ति के साथ काम करना चाहते हैं, अथवा

जो अपने को चालबाज और चालाक समझते हैं, वह वस्तुतः अत्यन्त मूर्ख हैं, उनसे कोई भलाई नहीं हो सकेगी। हमारे पार्टी-स्कूल के विद्यार्थियों को इस समस्या की ओर अपना ध्यान जरूर देना चाहिए। हमें ऊपर से नीचे तक शुद्ध और साफ एक केन्द्रबद्ध तथा एकताबद्ध पार्टी स्थापित करने में नहीं चूकना चाहिए। सिद्धान्त के प्रश्नों पर टोली-संघर्षों को हटाकर हमें देखना होगा कि सारी पार्टी के कूच करने की व्यवस्था नियमित और एक जैसी हो और उसके संघर्ष का लक्ष्य एक हो। व्यक्तिवाद और साम्प्रदायिकता का विरोध करना परम आवश्यक है।

" हमें बाहरी (विशेष) और स्थानीय कर्मियों के बीच के सम्बन्धों को मजबूत बनाना होगा और दोनों को कुछ सम्प्रदायवादी मनोवृत्तियों का विरोध करना होगा! चूँकि जापान-विरोधी युद्ध-अड्डे आठवीं रूट-सेना और नवीन चतुर्थ-सेना के बाद ही स्थापित हुए, इसलिए बाहर से कर्मियों के आने के बाद ही बहुत-से स्थानों में काम का विकास हो सका। इसीलिए बाहरी (विशेष) और स्थानीय कर्मियों के बीच के सम्बन्ध के बारे में बहुत ध्यान देने की आवश्यकता है। यह समझ लेना चाहिए कि ऐसी स्थितियों में युद्ध के अड्डे मजबूत तभी हो सकेंगे और हमारी पार्टी अड्डों में जड़ तभी जमा सकेगी, जब कि बाहरी और स्थानीय कर्मियों के बीच एकता और मजबूत मित्रता स्थापित हो, नहीं तो यह होना असम्भव है।

" बाहरी और स्थानीय दोनों तरह के कर्मियों में अपने-अपने गुण हैं और दोनों में अपने-अपने दोष हैं। उन्हें अपने गुणों को कायम रखने में मजबूती दिखलानी चाहिए और अपनी गलतियों को सुधारना चाहिए; तभी प्रगति हो सकेगी। स्थानीय कर्मियों से बाहरी कर्मी भिन्न-भिन्न परिस्थितियों और जनता के साथ अपने सम्बन्धों के अनुभावों में अवश्य भेद रक्खेंगे।

" उदाहरणार्थ, मुझे ही ले लो, पाँच या छः वर्ष हुए, जबकि मैं उत्तरी शेन्सी में आया, तो भी इस भूभाग की स्थितियों और लोगों के सम्बन्ध का मेरा ज्ञान काओ कांग जैसे साथियों की तुलना में नहीं लाया जा सकता। चाहे अनुसन्धान और शोध के बारे में मैं कितनी ही प्रगति करूँ, मैं सदा उत्तरी शेन्सी के कर्मियों से कुछ घटकर ही रहूँगा। हमारे जो साथी शान्सी, हो पेइ, शानतुंग और दूसरे जापान-विरोधी युद्ध-अड्डों में जाते हैं, उन्हें इस समस्या की ओर अवश्य ध्यान देना चाहिए। साथ ही, यह भी ख्याल रखना चाहिए कि युद्ध-अड्डे के भीतर के भू-भागों के विकास की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं के कारण एक अकेले युद्ध-अड्डे के एक भाग के भीतर भी बाहरी और स्थानीय कर्मियों के बीच में भिन्नताएँ हैं। अपेक्षाकृत पिछड़े हुए भूभाग से आये उस क्षेत्र के लिए बाहरी कर्मियों का एक प्रकार है, उन्हें स्थानीय कर्मियों की सहायता की समस्या पर खास ध्यान देना होगा। इस प्रकार, आम तौर से, जहाँ कहीं भी बाहरी कर्मी नेतृत्व की जिम्मेवारी लेते हैं, उन्हें स्थानीय कर्मियों के सम्बन्ध के कम विकास होने के दोष का अधिक भाग अपने सिर पर लेना होगा। इस प्रकार, अत्यन्त महत्त्वपूर्ण नेताओं की जिम्मेवारी सबसे अधिक है।

" वर्तमान में इस समस्या के ऊपर काफी ध्यान नहीं दिया जा रहा है। कितने ही साथी हैं, जो स्थानीय कर्मियों को हलकी नजर से देखते हैं और उन पर हँसते हैं : 'स्थानीय लोग क्या समझते हैं ? गँवार !' इस तरह का आदमी स्थानीय कर्मियों के महत्त्व को बिलकुल नहीं समझता, नहीं उनके गुणों को समझ सकता है और न अपनी खामियों को ही। इस प्रकार वह साम्प्रदायिकता की गलत मनोवृत्ति को स्वीकार करता है। बिना किसी भी अपवाद के विशेष कर्मियों को स्थानीय कर्मियों का स्वागत करना चाहिए, रक्षा करनी चाहिए और बराबर उनकी सहायता करनी चाहिए। उनका उपहास हर्गिज नहीं करना चाहिए, न चोट पहुँचानी चाहिए। ··· स्थानीय कर्मियों के गुणों को समझना चाहिए, विशेष कर्मियों के साथ पूर्ण और अविभक्त एकता स्थापित करने के लिए उन्हें अयुक्त और संकीर्ण दृष्टिकोणों से अपने को मुक्त करना चाहिए और उनके साथ एक होकर साम्प्रदायिकता की मनोवृत्ति से बचना चाहिए।

" यही बात सेना के कामवाले कर्मियों और स्थानीय कामवाले कर्मियों के आपसी सम्बन्ध के बारे में है। दोनों को पूर्णतया घनिष्ठ एकता में बँधना चाहिए और साम्प्रदायिक मनोवृत्तियों का विरोध करना चाहिए। सैनिक कर्मियों को स्थानीय कर्मियों की सहायता करनी चाहिए और स्थानीय कर्मियों को सैनिक कर्मियों की।

" यही बात सेना के कुछ भागों, कुछ इलाकों और काम के कुछ भागों के ऊपर भी लागू है। यहाँ भी

केवल अपना-अपना ख्याल करने और दूसरों का कोई ख्याल न करने की मनोवृत्ति का विरोध करना चाहिए। ··· पुराने और नये कर्मियों के बीच का सम्बन्ध भी एक दूसरी समस्या उपस्थित करता है। जब से प्रतिरोध-युद्ध आरम्भ हुआ, तब से हमारी पार्टी का भारी विस्तार हुआ और भारी संख्या में नये कर्मी पैदा हुए। यह बहुत अच्छा है। सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी की अठारहवीं कांग्रेस में साथी स्तालिन ने अपनी रिपोर्ट में कहा : 'पुराने कर्मियों की मात्रा कभी पर्याप्त नहीं है, वह आवश्यकता से कहीं कम है और विश्व के प्राकृतिक नियमों के चपेटे में पड़कर वह अंशतः मुरझाने और नष्ट होने लगे हैं।' यहाँ पर वह कर्मियों पर प्रभाव डालनेवाली परिस्थितियों की एक और व्याख्या करते हैं, और दूसरी ओर प्राकृतिक विज्ञान की व्याख्या कर रहे हैं। अगर हम अपनी पार्टी के पुराने और नये कर्मियों के बीच सविस्तार और एक-सा सहयोग नहीं कर पाते, तो हमारा काम पूरा नहीं होगा। इसलिए पुराने कर्मियों का दिल से स्वागत करना चाहिए और उनकी ओर ध्यान देना चाहिए।

" निश्चय ही, नये कर्मियों में दोष होंगे। उन्होंने चिरकाल तक क्रान्ति में भाग नहीं लिया, उनमें अनुभव की कमी है। उनमें अब भी ऐसे आदमी मौजूद हैं, जोकि पुराने समाज के अवांछनीय विचारों की पूछों में घिसटने से बचे नहीं हैं, जो निम्न-मध्यमवर्ग के उदार विचारों के अवशेषों को छोड़े नहीं हैं, किन्तु यह दोष शिक्षा और क्रान्तिकारी स्थितियों द्वारा धीरे-धीरे हटाये जा सकते हैं। उन (नये कर्मियों) का गुण, जैसाकि स्तालिन ने कहा है, यह है कि नई बातों के सम्बन्ध में उनकी दृष्टि बड़ी तीक्ष्ण और गाहिका है, जिसके परिणामस्वरूप उनमें ऊँचे दर्जे का जोश और मनोबल है। ठीक इन्हीं बातों में पुराने कर्मी घाटे में हैं। पुराने और नये कर्मियों को एक-दूसरे का सम्मान करना चाहिए, एक-दूसरे से सीखना चाहिए, अपने गुणों को मजबूती से कायम रखना चाहिए और अपनी खामियों को दूर करना चाहिए, जिसमें कि वह एक टोली की तरह एकताबद्ध और दृढ़ हो एकसाथ अपने कामों में आगे बढ़ सकें। सम्प्रदायवादी मनोवृत्तियों का विरोध करना होगा, साधारण परिस्थितियों में, जब कि नेतृत्व की मुख्य जिम्मेवारी पुराने कर्मियों के ऊपर है, नये कर्मियों के साथ ठीक से सम्बन्धों के विकसित न होने का मुख्य दोष उन्हें स्वीकार करना पड़ेगा।

" अवयवों और सम्पूर्ण, व्यक्तियों और पार्टी, बाहरी और स्थानीय कर्मियों, सेना और स्थानीय कर्मियों, सैनिक इकाइयों और सैनिक इकाइयों, इलाकों और इलाकों, इस काम की टुकड़ी और उस काम की टुकड़ी के बीचवाले उपरोक्त सभी सम्बन्ध अन्तर्पार्टी-सम्बन्ध हैं। इन सभी सम्बन्धों में साम्यवाद के भावों को आगे बढ़ाना चाहिए और साम्प्रदायिक मनोवृत्तियों का विरोध करना चाहिए, जिसमें कि पार्टी के सदस्य सुन्दर व्यवस्था में रहें, हम एक होकर कदम बढ़ाएँ और हमारे युद्ध के लक्ष्य दूरे हों। यह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समस्या है, अगर हमें पार्टी के मनोबल को सुधारना है, तो इसे पूरी तौर से हल करना होगा। अगर हम मनोमयवादी नहीं होना चाहते हैं, और मार्क्सवादी-लेनिनवादी तथ्य के द्वारा सत्य को प्राप्त करना चाहते हैं, तो हमें पार्टी के भीतर सम्प्रदायवाद के अवशेषों को अलग बहा देना होगा, और पार्टी के हितों को वैयक्तिक तथा खास हितों के ऊपर उठाते हुए पार्टी को पूर्ण और सुदृढ़ एकता की ओर बढ़ाना चाहिए।

" सम्प्रदायवाद के अवशेषों को अन्तर्पार्टी-सम्बन्धों में से नष्ट करना तो है ही, साथ ही उन्हें पार्टी के बाहरी सम्बन्धों में से भी नष्ट करना होगा। वहाँ पर भी वह पार्टी की एक मनोवृत्ति है, जिसके सुधार की आवश्यकता है। सारी पार्टी के साथियों को एकताबद्ध करने मात्र से शत्रु को हराना सम्भव नहीं है। सारे राष्ट्र के लोगों को भी एकताबद्ध करना होगा, तभी शत्रु को हराना सम्भव होगा। बीस सालों से हम राष्ट्र के लोगों को एकताबद्ध करने के विशाल और कठिन काम में लगे हुए हैं। जब से प्रतिरोध-युद्ध आरम्भ हुआ, तब से इस काम में हमारी सफलताएँ पहले से कहीं अधिक हुई हैं। लेकिन, इसका यह अर्थ नहीं कि सभी साथियों के मनोभाव ठीक हैं अथवा वह सभी साम्प्रदायिक मनोवृत्तियों से मुक्त हैं। ऐसा कहना ठीक नहीं होगा, क्योंकि हमारे साथियों के एक समूह में ऐसी मनोवृत्ति है, कुछ की तो मात्रा में गम्भीर है। बहुत-से साथी अ-पार्टी पुरुषों से बात करते समय अपने को आवश्यकता से अधिक महत्त्व देते हुए दूसरों को नीची नजर से देखते हैं, उनको हलका समझते हैं, एवं दूसरों का सम्मान करने या दूसरों के गुणों को समझने की इच्छा नहीं रखते।

यह एक प्रकार की साम्प्रदायिक मनोवृत्ति है। थोड़े-से मार्क्सवादी-लेनिनवादी वाक्यों के सीख लेने के बाद विनम्र होने की जगह ये साथी अभिमानी हो जाते हैं, और आम तौर से दूसरों को बेकार समझते हैं। वह स्वयं नहीं समझते कि वस्तुतः हम आधा ही समझते हैं।

" एक बात हमारे साथियों को अवश्य गाँठ बाँध लेनी चाहिए : पार्टी के बाहरवालों की तुलना में पार्टी के सदस्यों की संख्या हमेशा कम होगी। अगर प्रति सौ आदमी पर कम्युनिस्ट पार्टी का एक मेम्बर हो, तो 45 करोड़ के सारे देश में 45 लाख पार्टी-मेम्बर होंगे। मान लीजिए कि इतनी भारी संख्या मेम्बरों की हो सकती है, तो भी कम्युनिस्ट पार्टी के मेम्बर सौ में एक होंगे और 99 पार्टी से बाहर होंगे। फिर अ-पार्टी पुरुषों के साथ असहयोग करने के क्या कारण हो सकते हैं ? हमारा कर्तव्य है कि जो हमारे साथ सहयोग करने की इच्छा और क्षमता रखते हैं, उनके साथ सहयोग करें। उनका प्रत्याख्यान करने का हमें कोई अधिकार नहीं है। पर पार्टी-सदस्यों का एक समूह इस अर्थ को नहीं समझ पाता। जो हमारे साथ सहयोग करना चाहते हैं, उनको नीची निगाह से देखने या उनका प्रत्याख्यान करने का कोई कारण नहीं है। क्या मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन या स्तालिन ने ऐसे कारण हमें बतलाये ? नहीं। बल्कि इसके विरुद्ध उन्होंने बराबर जोर देकर कहा कि हम जनता से अपने को अलग-अलग न करें, बल्कि उसके साथ घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित करें। क्या चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने हमें ऐसे कारण बतलाए ? नहीं, केन्द्रीय कमेटी का एक भी काम ऐसा नहीं है, एक भी सुझाव ऐसा नहीं कहता कि हम जनता से अपने सम्बन्ध को काटकर अपने को अलग-अलग कर लें। इसके विरुद्ध उसने हमेशा जोर देकर कहा है कि हम जनता से पृथक् नहीं, बल्कि उसके साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करें।

" इसलिए ऐसी कार्रवाई का कोई कारण नहीं है, जिसके द्वारा जनता से बिलगाव हो जाय। गड़बड़ी का कारण हमारे साथियों के एक गिरोह द्वारा पैदा किया हुआ साम्प्रदायिक विचार है। चूँकि इस प्रकार की साम्प्रदायिकता पार्टी-मेम्बरों के एक गिरोह के साथ अब भी गम्भीर समस्या के रूप में मौजूद है, और वह अब भी पार्टी की नीति को कार्यरूप में परिणत करने में बाधक है; इसलिए हमें अन्तर्पार्टी शिक्षा को एक बड़े पैमाने पर काम में लाना चाहिए। हमें इस बात का निश्चय करके अपने कर्मियों से आरम्भ करना चाहिए कि वह समस्या की गम्भीरता को ठीक तौर से समझते हैं, यह निश्चय करके कि वह इस बात को समझते हैं कि यदि कम्युनिस्ट अपने को कर्मियों और पार्टी के बाहर के आदमियों के साथ एकताबद्ध नहीं करते, तो शत्रु को हराना और हमारे क्रान्तिकारी लक्ष्यों की प्राप्ति सर्वथा असम्भव होगी।

" सभी तरह के साम्प्रदायिक विचार मनोमय तथा क्रान्ति की वास्तविक आवश्यकताओं से अनुकूल हैं। इस प्रकार साम्प्रदायिकता का विरोध करते हुए हम मनोमयवाद का भी विरोध करते हैं।...

" अगर हम मनोमयवाद का विरोध करने जा रहे हैं, तो हमें भौतिकवाद और द्वन्द्वात्मक नियमों का प्रचार करना होगा। अब भी पार्टी के भीतर ऐसे बहुत-से साथी हैं, जो कि भौतिकवाद अथवा द्वन्द्वात्मक नियमों के प्रचार की ओर बिलकुल ध्यान नहीं देते। कुछ तो बल्कि दूसरों को मनोमयवाद का प्रचार करते सुनकर उसकी पर्वाह नहीं करते। ये साथी मार्क्सवाद को मानते हैं, लेकिन तो भी भौतिकवाद के प्रचार की कोशिश नहीं करते। जब वह मनोमयवाद-सी कोई चीज देखते या सुनते हैं, तो वह उस पर विचार नहीं करते और न उसकी आलोचना करते हैं। कम्युनिस्ट पार्टी के मेम्बर का ऐसा रुख़ नहीं होना चाहिए। यही कारण है, जो कि हमारे बहुत-से साथी मनोमयवादी विचार का विष पीते हैं, और उनमें मूर्छा के चिह्न प्रकट होते हैं।

" इसलिए हमें पार्टी के भीतर उद्‌बोधन का एक आन्दोलन आरम्भ करना ही चाहिए, जोकि हमारे साथियों के भावों को मनोमयवाद के अन्धकार से मुक्त करे और उन्हें मनोमयवाद, सम्प्रदायवाद और पार्टी-लकीरवाद के विरुद्ध लोहा लेने के लिए प्रेरणा दे। ये बातें बहुत कुछ जापानी माल की तरह हैं, क्योंकि अन्धकार में लगातार डूबे रखने की आशावाला ही एकमात्र हमारा शत्रु है, जोकि इस अवांछनीय खुराफात में हमें रोक रखना चाहता है। इसलिए हम उसके विरुद्ध प्रतिरोध करने का आवाहन करते हैं, जैसे कि जापानी माल के विरुद्ध। हमें मनोमयवाद, सम्प्रदायवाद और पार्टी लकीरवाद जैसी हरेक बात का विरोध करना चाहिए, पार्टी के निम्न

सैद्धान्तिक तल से फायदा उठाकर उन्हें अपने सौदों को बेचने नहीं देना चाहिए। इस प्रकार की मनोवृत्ति रखनेवालों को बाजार में अपना माल बेचना कठिन कर देना चाहिए। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए हमें अपने साथियों की घ्राण-शक्ति को तीव्र करना चाहिए, और केवल तभी उसे ग्रहण या त्याग करने का निश्चय करना चाहिए। कम्युनिस्ट पार्टी के मेम्बरों को हरेक चीज के लिए 'क्यों' पूछना चाहिए। अपने दिमाग में इस बात को बार-बार दोहराना चाहिए और पता लगाना चाहिए कि क्या वह वास्तविकता के अनुरूप है ? उन्हें कभी किसी चीज का अन्धानुसरण नहीं करना चाहिए। उन्हें दासता को आगे बढ़ने नहीं देना चाहिए।

" अन्त में, मनोमयवाद, सम्प्रदायवाद और पार्टी लकीरवाद के विरोध करने में दो नियमों का पालन करना चाहिए। पहला है, 'पुरानी भूलों को मत दोहराओ' और दूसरा है, 'दोषों की चिकित्सा करके आदमियों को बचाना चाहिए।' पुरानी भूलों को वैयक्तिक आग्रह या भावना का बिना विचार किये नंगा करना चाहिए। अतीत से क्या अवांछनीय बात हुई, उसके विश्लेषण और आलोचना करने में हमें वैज्ञानिक रुख को अख्तियार करना चाहिए, जिसमें कि आगे के काम में अधिक सावधानी रक्खी जाय और काम बेहतर ढंग से पूरा किया जा सके। 'पुरानी भूलों को मत दोहराओ' का यही अर्थ है।

" किन्तु, भूलों को नंगा करने, खामियों की आलोचना करने में हमारा लक्ष्य रोग की चिकित्सा करनेवाले एक डाक्टर जैसा हो। उद्देश्य है लोगों को बचाना, न कि उन्हें मारकर चिकित्सा करना। किसी आदमी को एपेंडिसाइटिस् (आँत का फोड़ा) है, डाक्टर आपरेशन करता है, और आदमी बच जाता है। अगर कोई आदमी भूल करता है, चाहे वह कितनी ही बड़ी हो और उसे छिपाकर तथा अपनी भूल पर दृढ़ रहते अपने रोग को चिकित्सा के अयोग्य स्थिति में नहीं पहुँचा देता, और साथ ही वह पक्का और ईमानदारी के साथ नीरोग होने की इच्छा रखता है, सुधार करना चाहता है, तो हम उसका स्वागत करेंगे। इसलिए कि उसका रोग दूर हो जाय और वह एक अच्छा साथी बन जाय। एक बार के प्रहार से समस्या का हल करना निश्चय ही सम्भव नहीं है। विचार और राजनीति विषयक व्याधियों के प्रति हमें निष्ठुर रुख नहीं अख्तियार करना चाहिए, बल्कि 'बीमारियों की चिकित्सा द्वारा आदमियों के बचाने' का रुख अख्तियार करना चाहिए, यही ठीक और कार्यकारी तरीका है।

" पार्टी-स्कूल के उद्‌घाटन के अवसर को आज मैंने बहुत-सी बातों को कहने के लिए इस्तेमाल किया। मुझे आशा है, तुम उन पर विचार करोगे। " (जोर की हर्षध्वनि)*

5. कला और साहित्य की समस्याएँ : विश्वयुद्ध शुरू हो गया था, येनान् लाल राजधानी बन चुका था। जापान शांघाइ और नानकिंग पर अधिकार कर चुका था, कम्युनिस्ट सेनाएँ और गोरिल्ला जापानियों से लड़ रहे थे और च्यांग काइ-शेक लात खाते हुए भी पीछे हटते चुंग-किंग में इस विचार को लेकर बैठा था कि जापानी चीनी कम्युनिस्टों को खतम कर दें, फिर पश्चिमी शक्तियाँ जापान को खतम कर दें, तब चीन का पका-पकाया शासन हमारे हाथ में आ जायगा, तब भी अगर चीनी कम्युनिस्ट रहेंगे तो बहुत निर्बल रहेंगे, जिनका नाश हम आसानी से कर सकेंगे। इसी समय 2-23 मई, 1942 में येनान् में चीन के सभी भागों के साहित्यकारों और कलाकारों का एक सम्मेलन हुआ था, जिसमें जापानी और कुओ-मिन्तांगी प्रदेशों के भी प्रतिनिधि पहुँचे थे।

माओ चे-तुंग, यदि केवल कवि और साहित्यकार रहते, तब भी वह साहित्य-क्षेत्र के चमकते तारे होते। लेकिन, उनकी प्रतिभा बहुमुखी है, यह हम देख चुके हैं। अपने साहित्यकार और कलाकार बन्धुओं को देने के लिए उनके पास सन्देश की कमी नहीं थी, क्योंकि वह उनके सधर्मा थे। इसी समय उन्होंने 'कला और साहित्य की समस्याएँ' के नाम से 2 मई को एक भाषण दिया, जिसमें मुक्ति-संघर्ष और कलाकारों तथा साहित्यकारों के पार्टी के बारे में कहा। 23 मई को सम्मेलन की समाप्ति के समय उन्होंने विस्तारपूर्वक इन्हीं समस्याओं के बारे में कहा। इससे पाँच महीना पहले जापान ने अचानक पर्ल बन्दरगाह पर आक्रमण करके अमेरिका पर

* Mao's China (Washington University Press, Seattle, 1952).

प्रहार कर दिया था।

इन दोनों भाषणों में माओ ने जहाँ साहित्य और कला के तत्त्वदर्शी की सूक्ष्म दृष्टि का परिचय दिया, वहाँ चीन ही के नहीं, बल्कि दूसरे देशों के साहित्यकारों और लेखकों के लिए भी मार्ग-निर्देश किया। 2 मई के उद्घाटन-भाषण में उन्होंने कहा था :

" साथियो ! आप लोग इस बैठक में इसलिए निमन्त्रित हुए हैं कि हम एक ओर कला और साहित्य और दूसरी ओर क्रान्तिकारी काम इन दोनों के बीच के ठीक सम्बन्ध पर विचार करें। इस अभिप्राय से कि हमारा क्रान्तिकारी साहित्य और कला ठीक से विकसित हो सके और हमारी दूसरी क्रान्तिकारी कार्रवाइयों को उनसे और अधिक प्रभावशाली रूप में सहायता मिल सके। इन तरीकों से हम अपने राष्ट्रीय शत्रुओं को पराजित कर सकेंगे और राष्ट्रीय मुक्ति के लिए अपने कर्तव्य को पूरा कर सकेंगे। चीनी राष्ट्र की मुक्ति के लिए कितने ही सांस्कृतिक तथा सैनिक मोर्चों पर हमारे संघर्ष हो रहे हैं। यद्यपि अपने शत्रुओं पर विजय पाना मुख्यतः हाथ में बन्दूक लिये हुए सैनिकों पर ही निर्भर करता है, तो भी केवल सेनाएँ काफी नहीं हैं। हमें राष्ट्र को एकताबद्ध करने तथा शत्रु की पराजय के अपने कर्तव्य को पूरा करने के लिए एक सांस्कृतिक सेना रखनी होगी। वह सांस्कृतिक सेना–जिसने कि चीनी क्रान्ति में भारी सहायता की–चतुर्थ मई-आन्दोलन के समय से तैयार हो गई।

" इस बैठक को एक आवश्यक उद्देश्य से हमने बुलाया है, जिसमें साहित्य और कला को अपनी क्रान्तिकारी मशीन का इस तरह एक अंग बनाया जाय, कि वह हमारी जनता को एकताबद्ध और शिक्षित करने, शत्रु को आक्रान्त और नष्ट करने एवं एक शत्रु से हमारी जनता के लड़ने में सहायता करने में एक शक्तिशाली हथियार बन जाय। "

आगे साथी माओ, किसके साथ कैसा रुख लेना चाहिए, इसके बारे में बतलाते हुए कहते हैं :

" तीन प्रकार के लोग हैं–हमारे शत्रु, हमारे मित्र और हम स्वयं, अर्थात् सर्वहारा और उसका हरावल। हमें इन तीनों में से प्रत्येक के प्रति भिन्न-भिन्न रुख रखना होगा। क्या हमें अपने शत्रुओं–जापानी फासिस्तों और जनता के दूसरे सारे दुश्मनों–की प्रशंसा करनी चाहिए ? हर्गिज नहीं, क्योंकि वह दुष्ट और प्रतिक्रियावादी हैं, चाहें उनमें कहने के लिए कुछ गुण भी हों।··· हमारी सांस्कृतिक सेना को हमारे शत्रुओं के आततायीपन और विश्वासघात को नंगा करने, उनकी पराजय अनिवार्य है यह साफ बतलाने और सारी जापान-विरोधी शक्तियों को एक हृदय और मन से शत्रुओं के विरुद्ध दृढ़तापूर्वक युद्ध करने में उत्साहित करने के अपने कर्तव्यों को पालना होगा।

" हमारे मित्रों और हमारे भिन्न-भिन्न सहकारियों के सम्बन्ध में हमारा रुख सहयोग और समालोचना का होना चाहिए। सहयोग भी और समालोचना भी भिन्न-भिन्न प्रकार के होते हैं। जापान के विरुद्ध उनके प्रतिरोध का हम समर्थन करते हैं, उनके इस काम की हमें प्रशंसा करनी होगी। लेकिन, साथ ही हमें उन लोगों की आलोचना करनी होगी, जो कि प्रतिरोध-युद्ध में सक्रिय नहीं हैं, जो कम्युनिस्टों और जनता के विरुद्ध काम करनेवालों का विरोध करते हैं, और जो धीरे-धीरे प्रतिक्रियावाद के रास्ते को पकड़ रहे हैं। "

आगे अपने पाठकों के बारे में माओ चे-तुंग बतलाते हैं :

" साहित्य और कला किसके लिए सृजन करनी चाहिए ? इसका उत्तर शेन्सी-कान्सू-निंग स्या सीमान्त भूभाग में और उत्तरी तथा केन्द्रीय चीन के हमारे जापान-विरोधी अड्डों के आधार-स्थानों के लिए एवं पश्चात्-भाग वाले (कुओ-मिन्तांगी) इलाके तथा युद्धपूर्व शांघाइ से बिलकुल अलग होगा। युद्ध के पहले साहित्य और कला की क्रान्तिकारी कृतियों की पाठकमण्डली शांघाइ में मुख्यतः विद्यार्थियों, डाक्टर-वकील आदि पेशावरों और सफेदपोश कमकरों की थी। युद्ध के बाद आम पश्चात्-भाग के इलाके में पढ़नेवाली जनता की संख्या कुछ बढ़ी है, लेकिन अब भी मुख्यतः वह उन्हीं समुदायों की है, क्योंकि यहाँ कुओ-मिन्तांगी सरकार क्रान्तिकारी साहित्य और कला को कमकरों, किसानों और सैनिकों के पास पहुँचने नहीं देती।

" हमारे भूभाग में स्थिति बिलकुल भिन्न है। यहाँ कमकर, किसान और सैनिक, पार्टी-सेना-सरकार के

भीतर के हमारे कर्मी क्रान्तिकारी साहित्य और कला की पाठक जनता और दर्शकमण्डली है। हमारे अड्डों में विद्यार्थी भी हैं, लेकिन वह पुराने ढंग के विद्यार्थी नहीं हैं। अगर वह अभी हमारे कर्मी नहीं हैं, तो भविष्य में होंगे। नाना प्रकार के कर्मी–सेना के सिपाही, कारखानों के कमकर और गाँवों के किसान–सभी साक्षर होने के साथ ही पुस्तकों और अखबारों को पढ़ना चाहते हैं। जो पढ़ नहीं सकते, वह भी नाटकों और तस्वीरों को देखना चाहते हैं, संगीत को सुनना और गाना चाहते हैं। हमारे साहित्य और कला के लिए यह जनता है।"

एक कवि और साहित्यकार के तौर पर माओ चें-तुंग जनता सम्बन्धी अपने अनुभवों को बतलाते हुए अपने सधर्मियों के उनके प्रति क्या रुख रखना चाहिए, इसे बतलाते हैं :

" मुझे अपने अनुभव के बारे में आपसे कहना है। मैं यह कहना चाहता हूँ कि कैसे मेरा रुख जनता के प्रति बदला। एक समय मैं विद्यार्थी था और स्कूल में मैंने विद्यार्थियों की आदतों और तरीकों को सीखा था। उदाहरणार्थ, मुझे बड़ी झेंप लगी, जबकि अपने साथी विद्यार्थियों के सामने बाँस की बँहगी को कन्धे पर लटकाकर अपना असबाब ढोना पड़ा। हमारे विद्यार्थी इतने भद्र हैं कि वह अपने कन्धों पर कोई बोझ ले जाना सहन नहीं कर सकते। अपने हाथ में किसी चीज को ले जाने का ख्याल भी उनको झेंप में डाल देता है। उस समय मेरी धारणा थी कि केवल बुद्धिजीवी ही स्वच्छ और साफ हैं, कमकर, किसान और सिपाही गन्दे हैं। इसीलिए मैं पहनने के लिए एक बुद्धिजीवी से कपड़ा खुशी से माँग सकता था, किन्तु कमकर, किसान या सिपाही से हर्गिज नहीं, क्योंकि मैं समझता था, उनके कपड़े गन्दे होंगे।

" क्रान्ति के जमाने में मैं कमकरों, किसानों और सिपाहियों के बीच रहने लगा। धीरे-धीरे मैं उन्हें जानने लगा और वह भी मुझे जानने लगे। केवल तभी बूर्ज्वा-स्कूलों द्वारा मन में घुस आये बूर्ज्वा और निम्न-बूर्ज्वा भाव जड़-मूल से बदलने लगे। तब से जब कभी भी मैं असुधारित बुद्धिजीवियों की कमकरों, किसानों और सिपाहियों से तुलना करता हूँ तो मुझे पता लगता है कि इन बुद्धिजीवियों का केवल दिमाग ही नहीं गन्दा है, बल्कि इनके शरीर भी गन्दे हैं। दुनिया में सबसे अधिक स्वच्छ जन हैं कमकर और किसान। चाहे उनके हाथ मैले हों, उनके पैरों में गोबर लिपटा हो, लेकिन तो भी वह बूर्ज्वाजी और निम्न-बूर्ज्वाजी से अधिक स्वच्छ हैं। भावों के रूपान्तरित होने से मेरा मतलब यही है–एक वर्ग से दूसरे वर्ग के मूल रूप में उनका परिवर्तन होना। अगर बुद्धिजीवी वर्ग से आये हमारे लेखक और साहित्यकार चाहते हैं कि उनकी कृतियों का जनता स्वागत करे, तो उन्हें अपनी विचारधारा और अपने भावों में इस प्रकार का रूपान्तरीकरण करना होगा। नहीं तो वह कोई प्रभावशाली काम नहीं कर सकेंगे, क्योंकि कृतियाँ जनता में नहीं फैल सकेंगी। "

आगे साथी माओ लेखकों और कलाकारों के लिए मार्क्सवाद-लेनिनवाद एवं समाज के सिद्धांतों के अध्ययन की आवश्यकता बतलाते कहते हैं :

"मार्क्सवाद हमें यह सिखलाता है कि समस्याओं पर विचार करते समय हम वस्तु-सत्ता (वास्तविक तथ्य से) काम को आरम्भ करें, न कि निराकार परिभाषाओं से।"

साहित्य और कला का सृजन किसके लिए होना चाहिए, इसे बतालते हुए माओ कहते हैं :

" हमारा साहित्य और कला किसी विदेशी समुदाय के लिए नहीं, बल्कि हमारी जनता के लिए है। हम पहले बतला चुके हैं कि चीन की नई संस्कृति अपने विकास की आधुनिक मंजिल में साम्राज्यवाद-विरोधी, सामन्तवाद-विरोधी तथा सर्वहारा का नेतृत्व माननेवाली जनसाधारण की संस्कृति है।

" जनता (जनसाधारण) क्या है ? हमारी आबादी का 90 सैकड़ा कमकर, किसान, सिपाही और निम्न-मध्यवर्ग (निम्न-बूर्ज्वाजी)। इसलिए हमारे साहित्य और कला को सबसे पहले (1) मजूर-वर्ग की सेवा करनी होगी, जोकि क्रान्ति का नेतृत्व करता है, फिर (2) किसानों की सेवा करनी होगी, जोकि क्रान्ति में मजूर-वर्ग का अत्यन्त दृढ़ सहकारी तथा सबसे अधिक संख्या रखते हैं, (3) कमकरों-किसानों की हथियारबन्द सेनाओं–आठवीं मोर्चा सेना, नई चतुर्थ-सेना और दूसरी जनता की मिलिसिया की सेवा करनी होगी, जोकि हमारी लड़नेवाली शक्तियों के मुख्य आधार हैं, चौथे (4) निम्न-मध्य-वर्ग की सेवा करनी होगी, जोकि क्रान्ति में एक सहकारी है और दूर तक के प्रोग्राम में हमारे साथ सहयोग कर सकता है। यही चार प्रकार के जन-समूह हैं चीनी जनता

का अधिकांश भाग।

" हमारा साहित्य और कला हमारे विशाल जन-समूह—इन चार जन-समूहों के लिए हैं। कमकर, किसान और सिपाही सबसे अधिक महत्त्व रखते हैं। निम्न-मध्य-वर्ग का चाहे सांस्कृतिक तल दूसरों की अपेक्षा ऊँचा हो, लेकिन वह संख्या और क्रान्तिकारी जीवन दोनों में सबसे कमजोर समूह है। इसीलिए, हमारे साहित्य और कला को मुख्यतः किसानों, कमकरों और सिपाहियों के उद्देश्य से होना चाहिए, निम्न-मध्य-वर्ग के लिए केवल गौण रूप से ही। इससे उलटा करना गलत होगा। "

साहित्य और कला के लिए उत्पादन-सामग्री का स्रोत कहाँ है, इसके बारे में माओ बतलाते हैं :

" जन-जीवन साहित्य और कला के लिए उपयोगी कच्चे माल (उपादान-सामग्री) का एक समूह स्रोत है। यह उपादान-सामग्री यद्यपि अपने प्राकृतिक अनगढ़ रूप में है, लेकिन अत्यन्त सजीव, समृद्ध और मूलभूत है। उसके सामने बनावटी साहित्य और कला को लज्जित होना पड़ता है। सृजनात्मक साहित्य और कला के लिए उपयुक्त सामग्री का अनन्त भण्डार केवल जन-जीवन है, क्योंकि यही एकमात्र मुख्य भण्डार है, वैसा दूसरा भण्डार हो नहीं सकता।

" कुछ लोग प्रश्न कर सकते हैं कि 'क्या साहित्य और कला की प्रकाशित कृतियाँ, प्राचीन शिष्ट साहित्य, विदेशी साहित्य तथा कला मुख्य स्रोत नहीं हो सकते ?' इसका जवाब यही है कि उन्हें स्रोतभूत सामग्री माना जा सकता है, लेकिन गौणतः ही, मुख्यतः वह स्रोत-सामग्री नहीं। यदि आप उन्हें प्रथम श्रेणी की सामग्री मानेंगे, तो यह सुलटा को उलटा कर देना है। पुस्तकें और प्रकाशित कृतियाँ मुख्य नहीं, बल्कि स्रोत से निकला प्रवाह है। वह हमारे बाप-दादों, विदेशी लेखकों और कलाकारों की कल्पना तथा कृति हैं, जिन्होंने कि अपने समसामयिकों के जीवन, अपने समय के समाज में उस साहित्य और कला को ढूँढ़ा और पाया। हम उनकी कृतियों का उपयोग कर सकते हैं, लेकिन विवेक के साथ ही साहित्य और कला की ऐसी शिल्प-चातुरी के उदाहरण के तौर पर, जिसमें कि हम आज की जनता के जीवन को चित्रित करते हैं।··· प्राचीन शिष्ट या विदेशी साहित्य तथा कला की अविवेकपूर्ण स्वीकृति या नकल तथा किसी की जगह पर इनके इस्तेमाल से हम साहित्य और कला के विषय में अत्यन्त फजूल और हानिकारक मतवाद की ओर खिंच जाएँगे, वैसे ही, जैसे कि सैनिक, राजनीतिक, दार्शनिक या आर्थिक क्षेत्र में वैसा करने से।

" इसलिए चीन के क्रान्तिकारी और सच्चे योग्य लेखकों और कलाकारों को जनसाधारण के भीतर जाना होगा। बिना शर्त के और दिलोजान से उनके लिए काम करना होगा, देर तक उनके भीतर रहना होगा, धधकते संघर्ष में सम्मिलित होना होगा। अनुसन्धान, निरीक्षण, अध्ययन तथा भिन्न-भिन्न व्यक्तियों, भिन्न-भिन्न वर्गों, भिन्न-भिन्न सामाजिक समूहों, जीवन-मरण के भिन्न-भिन्न सक्रिय आकारों, साहित्य और कला के सभी प्राकृतिक स्रोतों के अनुसंन्धान, निरीक्षण, अध्ययन और विश्लेषण के लिए उन्हें एकमात्र विद्यमान अक्षय भण्डार—जनता के पास जाना होगा। केवल तभी वह सृजनात्मक या उत्पादन-प्रक्रिया का आरम्भ कर सकते हैं। "

जन-सम्पर्क पर और भी जोर देते हुए आगे वह कहते हैं :

" हम विशेषज्ञों का अत्यन्त सम्मान करते हैं, क्योंकि उनकी कृति हमारे लिए मूल्यवान् हैं, लेकिन, हम उनको स्मरण दिलाना चाहते हैं कि क्रान्तिकारी लेखक और कलाकार तभी महत्त्वपूर्ण कृति प्रदान कर सकते हैं, जबकि वह जनता के विश्वासपात्र वक्ता हों।

" जनता को उसका प्रतिनिधित्व करते ही आप शिक्षित कर सकते हैं। आप जनता के शिष्य होकर ही उसे शिक्षा दे सकते हैं। यदि आप अपने को जनता के स्वामी, निम्न-प्राणियों से बहुत ऊँचे प्रभु मानते हैं, तो जनता आपको अपने किसी काम का नहीं समझेगी, चाहे कितनी ही बड़ी आपकी प्रतिभा और आपकी कृति हो, उसका कोई भविष्य नहीं होगा। "

"क्या इसे 'उपयोगितावाद' कहा जा सकता है ?"

"भौतिकवादी स्वयं उपयोगितावाद के विरोधी नहीं हैं। हाँ, सामन्ती बूर्ज्वा और निम्न-बूर्ज्वा वर्ग के उपयोगितावाद के जबर्दस्त विरोधी हैं। वह उन लोगों के विरोधी हैं, जोकि जीभ से उपयोगितावाद को दुतकारते

हैं, पर दिल में उसके पुजारी हैं, अत्यन्त स्वार्थी और संकुचित दृष्टिवाले उपयोगितावादी हैं।"

बुद्ध ने 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' को अच्छापन का लक्षण बतलाया था। माओ भी उसी तरह श्रेष्ठ या भद्र होने की व्याख्या करते हुए कहते हैं :

"बहुसंख्यक जनता की अधिकतर भलाई के लिए जो चीज होती है, उसे श्रेष्ठ समझना होगा। आपकी कलाकृति 'यांग छुन् पाइ शियेह' जैसी हो सकती है, जिसका आनन्द केवल अमीर लोग ले सकते हैं जबकि जनसाधारण 'शिया ली पा जेन्' को अब भी गा रहे हैं। यदि आप जनता के सांस्कृतिक तल को ऊँचा नहीं कर सकते, और उसकी जगह और कुछ न कर केवल आप उनके पिछड़ेपन को दोष देते हैं, तो आप बेकार की बात बघार रहे हैं।"

उक्त दोनों गीत करीब दो हजार वर्ष पुराने हैं, और दोनों से प्रेम करनेवाले लोग दो वर्ग के हैं। माओ सर्वहारा के साहित्य और कला के बारे में बतलाते हैं :

" सभी संस्कृति अथवा आज का सभी साहित्य और कला किसी खास वर्ग, खास पार्टी अथवा खास राजनीतिक दृष्टिकोण लिए होता है। दुनिया में 'कला कला के लिए' जैसी कोई चीज नहीं है, अथवा ऐसा साहित्य और कला नहीं है, जोकि वर्गभेद के ऊपर या पक्षपात रखनेवाले हितों के ऊपर हो। ऐसा कोई साहित्य और कला नहीं है, जोकि राजनीति के समानान्तर चल रही हो अथवा राजनीति से स्वतन्त्र हो।··· वर्ग और पार्टी-भेद रखनेवाले समाज में साहित्य और कला भी एक वर्ग या पार्टी का होता है।

" सर्वहारा का साहित्य और कला सर्वहारा के क्रान्तिकारी प्रोग्राम का अंग है, जैसाकि लेनिन ने कहा है, वह मशीन के स्क्रू हैं।

" हम साहित्य और कला के महत्त्व को बढ़ा-चढ़ाकर कहने के पक्ष में नहीं हैं, लेकिन साथ ही हमें उसे घटाकर भी नहीं कहना होगा। यद्यपि साहित्य और कला राजनीति के अधीन हैं, लेकिन साथ ही वह राजनीति पर जबर्दस्त प्रभाव डालते हैं। क्रान्तिकारी साहित्य और कला एक क्रान्तिकारी प्रोग्राम का अंग है। वह उपरोक्त स्क्रू की तरह है। चाहे मशीन से दूसरे अंगों की तुलना में वह बड़ा या छोटा महत्त्व रखते हों, मुख्य या गौण मूल्य रखते हों, किन्तु तो भी मशीन के लिए उनकी अनिवार्य आवश्यकता है। सम्पूर्ण क्रान्तिकारी आन्दोलन के वे अनिवार्य अंग हैं। यदि हमारे पास, अत्यन्त साधारण किस्म का ही सही, साहित्य और कला नहीं है, तो हम क्रान्ति को आगे नहीं बढ़ा सकते और न उसके लिए विजय प्राप्त कर सकते हैं। तथ्य को न स्वीकार करना गलती होगी।

" साथ ही, जब हम कहते हैं कि साहित्य और कला राजनीति के अधीन हैं, तो राजनीति से हमारा अभिप्राय वर्ग-राजनीति और जन-राजनीति से है, न कि कुछ राजनीतिज्ञों की तथाकथित राजनीति। क्रान्तिकारी हो या क्रान्ति-विरोधी, राजनीति दो परस्पर-विरोधी वर्गों के संघर्ष, न कि अलग-अलग व्यक्तियों के रवैये का प्रतिनिधित्व करती है। विचारधारा का युद्ध साहित्य-कला का युद्ध, विशेषकर क्रान्तिकारी विचारधारा का युद्ध और क्रान्तिकारी साहित्य-कला का युद्ध अवश्य राजनीतिक युद्ध के अधीन होगा, क्योंकि वर्ग और जनता की आवश्यकताएँ अपने घनीभूत रूप में केवल राजनीति के द्वारा ही प्रकट की जा सकती हैं। "

माओ इस प्रकार बतलाते हैं कि साहित्य-कला में तटस्थता की बात करना केवल ढोंग है, और वह किसी-न-किसी रूप में परस्पर-विरोधी वर्गों या स्वार्थों में एक का सहायक होता है। लेकिन ऐसा कहते हुए भी वह साहित्य में साम्प्रदायिक दृष्टि का विरोध करते हैं :

"साहित्य-कला के सम्बन्ध में हमारी आलोचना साम्प्रदायिक नहीं होनी चाहिए। प्रतिरोध-युद्ध और राष्ट्रीय एकता के सामान्य सिद्धान्तों को ध्यान में रखते हुए हमें साहित्य-कला की उन सारी कृतियों को सहन करना चाहिए, जोकि राजनीतिक रुखों के हर प्रकार और हर रंग को प्रकट करते हैं। लेकिन, साथ ही जब हम आलोचना करते हैं, तो अपने सिद्धान्त और स्थिति पर हमें दृढ़ भी रहना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि हमें उन सभी साहित्य-कला-कृतियों की तीव्र आलोचना करनी चाहिए, जोकि राष्ट्रीय, वैज्ञानिक, जनता और कम्युनिस्ट स्वार्थों के विरुद्ध है, क्योंकि ऐसे तथाकथित साहित्य-कला का उद्देश्य और प्रभाव हमारे प्रतिरोध-युद्ध को खतरे में

डालता और हमारी राष्ट्रीय एकता को ध्वस्त करता है।"

माओ साहित्य-कला का बहुत सस्ता होना भी पसन्द नहीं करते और वह उसके मान को स्वीकार करते हैं :

" अब हम जानते हैं, दो माँगें हैं : एक राजनीतिक माँग है और एक कला-सम्बन्धी माँग।

" कला-सम्बन्धी माँगों के दृष्टिकोण से उच्च कलात्मक गुण रखनेवाली सभी कृतियाँ अच्छी या अपेक्षाकृत अच्छी हैं, और निम्न कलात्मक गुणवाली बुरी या अपेक्षाकृत बुरी। लेकिन यह कसौटी इस बात पर निर्भर करती है कि किसी कलाकृति का समाज के ऊपर क्या प्रभाव होता है। ऐसे बहुत कम लेखक और कलाकार हैं, जो अपनी कृतियों को बढ़िया नहीं समझते।

" अब हम जानते हैं कि मान दो प्रकार के होते हैं : राजनीतिक और कलात्मक। तो इनके बीच का ठीक सम्बन्ध क्या है ? राजनीतिक पर कला नहीं; आम तौर से विश्व दृष्टिकोण, पर कलात्मक सृजन की शैली नहीं। यहाँ हम केवल निराकार और जकड़बन्द कला-सम्बन्धी मानों का भी प्रत्याख्यान नहीं करते, बल्कि निराकार और जकड़बन्द कला-सम्बन्धी मानों का भी प्रत्याख्यान करते हैं। किसी वर्ग समाज के भीतर के भिन्न-भिन्न वर्गों की तरह भिन्न-भिन्न वर्ग समाजों के अपने भिन्न-भिन्न राजनीति और कला-सम्बन्धी मान होते हैं। किन्तु, किसी वर्ग-समाज या समाज के भीतर के किस वर्ग में राजनीतिक मान पहले आते हैं और कला सम्बन्धी बाद में। "

माओ चे-तुंग राजनीति और कला के सम्बन्ध में अपने विचारों को प्रकट करते हैं :

" हम राजनीति और कला में एकता चाहते हैं, हम विषय और रूप के बीच समन्वय चाहते हैं–क्रान्तिकारी राजनीतिक विषय का संभाव्य उच्चतम तलवाले कला-सम्बन्धी रूप का पूरी तौर से सम्मिश्रण चाहते हैं। जिन साहित्य-कला की कृतियों में कला-सम्बन्धी गुण नहीं हैं, वह बेकार हैं, चाहे राजनीतिक तौर से कितनी ही प्रगतिशील हों।

" इस प्रकार हम केवल हानिकारक प्रतिक्रियावादी विषयवाली कलाकृतियों की ही निन्दा नहीं करते, बल्कि उन कृतियों की निन्दा करते हैं, जो 'विज्ञापन और नारा शैली' में निर्मित की गई हैं। "

प्रेम और मानवता-प्रेम का साहित्य-कला के साथ क्या सम्बन्ध है, इसके बारे में वह बतलाते हैं :

" सभी साहित्य का मूल साहित्य-कला का मूल प्रेम, मानवता-प्रेम है। प्रेम आरम्भ बिन्दु हो सकता है, लेकिन उससे भी अधिक मूलभूत आरम्भ बिन्दु है। प्रेम वस्तुसत् अनुभव की उपज, एक धारणा है। हम एक धारणा या विचार से मूलतः आरम्भ नहीं कर सकते, हमें वस्तुसत् साकार अनुभव से आरम्भ करना होगा।

" हम साहित्यकार और कलाकार अपनी बौद्धिक पृष्ठभूमि के साथ सर्वहारा के प्रति जो प्रेम रखते हैं, वह इस कारण ही कि समाज ने हमारे ऊपर उसी भवितव्यता को लाद दिया है, जिसे कि उसने सर्वहारा के ऊपर लादा है, और यह कि हमारे जीवन सर्वहारा के जीवन के साथ एक हो गये हैं। जापानी साम्राज्यवादियों द्वारा होनेवाले हमारे उत्पीड़न का परिणाम है। दुनिया में कहीं भी न प्रेम अकारण होता है, और न घृणा ही।

" जहाँ तक मानवता के प्रेम का सम्बन्ध है, जब से मानव-जाति वर्गों में विभक्त हुई, तब से इस तरह का सर्वव्यापी प्रेम कभी भी नहीं रहा। शासक-वर्ग ने विश्वप्रेम का उपदेश दिया, कन्फूशी ने उसी तरह इसके बारे में कहा जैसे तोल्स्ताय ने, लेकिन एक भी उसे आचार में कभी नहीं ला सका, क्योंकि वर्ग-समाज में वैसा हो नहीं सकता।

" मानवता का सच्चा प्रेम तभी सम्भव हो सकता है, केवल उसी भविष्य काल में सम्भव हो सकता है, जबकि सारी दुनिया से वर्ग-विभेद को खतम कर दिया जाय। वर्ग विभक्त समाज की सेवा करते हैं। जब वर्ग हटा दिये गये, तो समाज फिर एक हो जायगा। उस समय मानवता का प्रेम फूले-फलेगा, वह आज नहीं फूल-फल सकता। आज हम फासिस्तों से प्रेम नहीं कर सकते और न अपने शत्रुओं से प्रेम कर सकते हैं। समाज में जो कुछ बुरा और विद्रूप है, उस सबसे हम प्रेम नहीं कर सकते। हमारा उद्देश्य है, इन सभी बुराइयों को हटाना। जनता जानती है, तो क्या हमारे लेखक और कलाकार इसे नहीं जान सकते ? "

मार्क्सवाद-लेनिनवाद साहित्य-कला की सृजनकारी भावना को नष्ट करता है, इसका संक्षेप में जवाब देते हुए माओ कहते हैं :

"तो क्या मार्क्सवाद-लेनिनवाद सृजनकारी आत्मा को नष्ट नहीं कर देगा ? हाँ जरूर, नष्ट करेगा। वह सामन्ती, बूर्ज्वा और निम्न-बूर्ज्वा सृजनकारी आत्मा को, उदारवाद, व्यक्तिवाद, निराकारवाद के भीतर मूलबद्ध सृजनकारी आत्मा, 'कला कला के लिए' कहनेवालों के समर्थक, अमीरी, पराजयवादी और निराशावादी सृजनकारी आत्मा को नष्ट करेगा। वह उस सभी तरह की सृजनकारी आत्मा को नष्ट करेगा, जो जनता की नहीं है, जो सर्वहारा की नहीं है।"

3. अमेरिका की चालें

1941 में प्रशान्त महासागर में युद्ध छिड़ने से पहले अमेरिकन साम्राज्यवादियों ने उसी तरह चीन की बलि देकर जापान से समझौता करने की कोशिश की, जैसा इससे कुछ सालों पहले ब्रिटिश और फ्रेंच साम्राज्यवादियों ने चेकोस्लोवाकिया की बलि चढ़ाकर हिटलर से समझौता करना चाहा था। लेनिन, अब वे जापानी हमले के खिलाफ प्रतिरोध-युद्ध से फायदा उठाकर चीन में अपने प्रभाव को ज्यादा बढ़ाना चाहते थे। उनका उद्देश्य था, युद्ध के बाद चीन के बाजारों पर अपना एकाधिपत्य कायम करना और चीन को अपना एक उपनिवेश बनाते जापान की जगह को अमेरिका का लेना। इसीलिए उन्होंने कुओमिन्तांगी प्रतिक्रियावादी सरकार को बनाये रखने की जी-जान से कोशिश की। एक ओर अमेरिकन साम्राज्यवादियों ने च्यांग के सैनिकों को सुशिक्षित और सुसज्जित करने के लिए बड़ी संख्या में अफसरों को भेजा और कितने ही दूसरे विशेषज्ञों को च्यांग की सरकार में घुसाकर अपने लिए जगह बनाने को छोड़ दिया। साथ ही, दूसरी ओर उन्होंने कुओ-मिन्तांग और चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के बीच 'फैसला' करने 'ईमानदार दलाल' का भी पार्ट अदा किया। लेकिन, अमेरिकन साम्राज्यवादियों ने इस तथ्य को प्रकट करने में देर नहीं लगाई, कि हम और च्यांग एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। अमेरिकन प्रतिनिधि और च्यांग काइ-शेक दोनों ने ही प्रतिक्रियावादी कुओ-मिन्तांगी सरकार में हिस्सा लेने के लिए 'एकीकरण' और 'जनतंत्रीकरण' प्राप्त करने की दुहाई देते हुए कम्युनिस्टों के पास बुलावे भेजे; और इस तरह उन्होंने सरकार को बदलकर मिली-जुली जनवादी सरकार बनाने की माँग को खतम करने की कोशिश की। इतना ही नहीं, बल्कि अपने इस खयाल के द्वारा उन्होंने आठवीं मोर्चा-सेना, नई चौथी-सेना और मुक्त इलाकों को भी नष्ट करने की कोशिश की। जब चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने अमेरिका और च्यांग के इस नीचतापूर्ण सुझाव को ठुकरा दिया, तो च्यांग काइ-शेक ने यहाँ तक कहा कि मुक्त इलाके की सेना के 'पुनर्संगठन' के लिए चुने तीन आदमियों की एक कमेटी बनाई जाय जिसमें एक अमेरिकन सदस्य भी रहें। इसी के साथ-साथ अमेरिकन प्रतिनिधि पैट्रिक जे. हरले ने धमकी के स्वर में घोषित किया कि अमेरिका केवल च्यांग काइ-शेक के साथ ही सहयोग करेगा, चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के साथ नहीं।

पर कम्युनिस्ट इतने कच्चे गोइयाँ नहीं थे कि वह अमेरिका और च्यांग की चालों को न समझ पाते और उनकी बन्दरघुड़कियों में आकर उनके सामने सिर नवाते। इसीलिए इन धमकियों और धोखेबाजी से न प्रभावित हो अपने उन्मुक्त और स्वतन्त्र होने के लक्ष्य की ओर आगे बढ़ने से पार्टी और चीनी जनता रुक न सकी।

(1) च्यांग फूला न समाया (1943 ई.)–1942 ई. में पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने च्यांग काइ-शेक को बिलकुल अपनी मुट्ठी में पाया, तो भी 12 जनवरी, 1943 को च्यांग ने गद्गद हो रेडियो-भाषण में कहा था* :
"मेरे देश भाइयो,

"गत वर्ष 10 अक्टूबर को संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और ग्रेट ब्रिटेन ने अपनी इच्छा से उन विशेष अधिकारों और सुविधाओं को छोड़ दिया, जो उन्हें असम संधियों के कारण चीन में प्राप्त थीं। कल हमारी सरकार ने संयुक्त राष्ट्र और ग्रेट ब्रिटेन की सरकार के साथ चुंग-छिंग (चुंकिंग) और वाशिंगटन में नई संधि की है, जो

* 'चीन का भाग्य', पृष्ठ 82

समानता और पारस्परिक सहयोग पर आधारित है। मेरे देश भाइयो, छिंग राजवंश के समय चीन और विदेशी राष्ट्रों के बीच हुई असम-संधियों में से जो प्रथम संधि हुई थी, उसे पिछले वर्ष एक सौ वर्ष पूरा हो गया थां। पचास वर्षों की खूनी-क्रान्ति और साढ़े पाँच वर्षों के आक्रमण-विरोधी संघर्ष के बाद–जिनमें जनता ने महान् बलिदान दिया है–हम लोगों ने अन्त में असम-सन्धियों को रद्द कर उनके एक सौ वर्षों के दुःखद इतिहास को शानदार कहानी में बदल दिया है। यह पुनरुत्थान चुंग ह्वा (चीन) राष्ट्र के इतिहास का एक नया पृष्ठ ही नहीं, बल्कि संसार के मार्ग-निर्देशन के लिए ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और अन्य देशों द्वारा समानता और स्वतन्त्रता का प्रकाश-स्तम्भ स्थापित करना भी है। ऐसा करके संयुक्त राज्यों ने जोकि इस युद्ध में हमारे सहयोगी हैं, यह सिद्ध कर दिया कि वे मानवता और न्याय के लिए लड़ रहे हैं। यह कार्य वास्तव में अमेरिका और अंग्रेजी सरकार तथा उनकी जनता के लिए बहुत बड़ी प्रतिष्ठा और सम्मान का है। खासकर संयुक्त राष्ट्र अमेरिका का व्यवहार तो इतना प्रशंसनीय है कि वह हमारी आशा-आकांक्षा के साथ मिलकर एक हो गया है, और उसने अपने लिए किसी तरह का संरक्षण नहीं रखा है।"

(2) तरुणों को 'उपदेश'–च्यांग और उसके सम्बन्धी चार परिवार आँख मूँदकर चीनी जनता को लूट रहे थे, सारे देश में घूस-रिश्वत और चोरबाजारी चल रही थी। तरुण भला च्यांग के शासन को कैसे बर्दाश्त कर सकते थे ? और जब तरुण हाथ से बाहर निकल गये, तो च्यांग और उसके कुओ-मिन्तांग को क्या आशा हो सकती थी ? च्यांग ने युवकों को फुसलाने के लिए कम कोशिश नहीं की। उसने बड़े-बड़े उपदेश दिये, जिन्हें चीनी तरुण-तरुणियाँ और कम्युनिस्ट 'छप्पन चूहा खाके बिलाई भई भक्तिन' कहकर उसे घृणा की निगाह से देखते थे। च्यांग व्यास-गद्दी पर बैठकर बोल रहा था।*

"हमारा राष्ट्रीय और सामाजिक पुनर्निर्माण आसानी से पूरा हो सकता है, अगर सम्पूर्ण राष्ट्र के युवक इस बात के लिए दृढ़प्रतिज्ञ हों कि दूसरे लोग जिस काम को करने का साहस नहीं कर सकते, उसे हम करेंगे, दूसरे लोग जिन क्लेशों को नहीं सह सकते, उन्हें हम सहेंगे, तथा राष्ट्रीय और सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के एवं जनता के जीवन को सुखी बनाने के लिए हम खतरे और कठिनाइयों को झलते हुए भी सीमाप्रान्तों तथा देश के भीतरी भागों में जाकर लोगों का मार्ग-प्रदर्शन करेंगे।"

च्यांग और उसके लग्गू-भग्गुओं को लूटकर करोड़ों-अरबों की सम्पति जमा करते हुए देखकर कौन-सा समझदार तरुण निःस्वार्थ भाव से इन लुटेरों की बात पर तपस्वी होने के लिए तैयार होकर मल्लू बनता ? च्यांग कहता ही रह गया :

"आज जो हमारे नवयुवकों में तरह-तरह की बुराइयाँ घुस गई हैं, उनका जीवन बेकार जा रहा है, उन्हें किसी काम में सफलता नहीं मिलती है, इसका बुनियादी कारण यह है कि उन्हें बड़ी खोखली शिक्षा मिली है। चूँकि वे अपने अध्यापकों के बताये मार्ग पर नहीं चलते, अपने जीवन की सफलता या असफलता के लिए 'संगठन' के महत्त्व को नहीं समझते और यह भी नहीं समझते कि 'स्वतंत्रता' और 'अनुशासन' का क्या अर्थ है; इसलिए वे अपने व्यवहार में गैर-जिम्मेवार होते हैं, उनका सोचना अव्यावहारिक होता है। समाज में जब प्रवेश करते हैं, तो अपने में किसी व्यावहारिक कार्य के करने की क्षमता तथा विश्वास का अभाव पाते हैं। फिर सामाजिक और राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के कार्य की बात तो दूर रह जाती है। वे कठिनाई तथा उत्तरदायित्व उठाने की क्षमता प्राप्त कर सकें तथा सामाजिक और राष्ट्रीय पुनर्निर्माण कार्य के योग्य बन सकें, इसके लिए आवश्यक है कि वे अपने विचारों का विकास वैज्ञानिक ढंग से करें और अपने आचरण को कड़े अनुशासन में रखें। इसीलिए प्रतिरोध-युद्ध प्रारम्भ होने के तुरन्त ही बाद मैंने 'सान् मिन् चु इ युवक संघ' का संगठन किया ताकि संपूर्ण देश के युवक-युवतियों की आवश्यक माँगों की पूर्ति हो, कुओ-मिन्तांग को नवजीवन प्राप्त हो और चुंग-ह्वा राष्ट्र में एक नई वर्धिष्णु शक्ति पैदा हो।"

कुओ-मिन्तांगी तानाशाह ने नेहरू की तर्कशैली में अपनी आँखों के सामने के शहतीर को न देखते हुए

* 'चीन का भाग', पृष्ठ 202-204

कम्युनिस्टों को भी उपदेश देने की धृष्टता करते हुए कहा था* :

"मैं पहले अपने उन मित्रों से पूछता हूँ, जो कुओ-मिन्तांग के विपक्ष में हैं-क्या आप कुओ-मिन्तांग का इसलिए विरोध करते हैं, कि उसके सिद्धान्त लचर हैं ? या इसलिए कि उसकी नीति ठीक नहीं है ? अगर हम कुओ-मिन्तांग को वास्तविकता की दृष्टि से देखें, उसके अतीत के कामों की छानबीन ऐतिहासिक दृष्टि से करें, उसके वर्तमान के कामों की संसार की बदलती परिस्थितियों की दृष्टि से जाँच करें, उसके भविष्य को अपनी राष्ट्रीय संभावनाओं की दृष्टि से आँकें; तो मुझे विश्वास है कि हम सभी एकमत होंगे कि चीन के लिए 'जनता के तीन सिद्धान्त' ही एकमात्र ऐसे सिद्धान्त हैं, जो एकसाथ ही व्यापक तथा ठोस भी हैं और हम लोगों के अनुसरण करने के लिए क्रान्ति ही एकमात्र महान् और प्रशस्त पथ हैं। हम सबों को यह समझना चाहिए कि कुओ-मिन्तांग ही क्रान्तिकारी कामों की प्रमुख संस्था है, जिसने प्रजासत्तात्मक राज की स्थापना की है तथा वह हमारे राष्ट्रीय पुनरुद्धार और पुनर्निर्माण की प्राणशक्ति है। अगर आप मानते हैं कि इसकी नीति ठीक है और इसके सिद्धान्त ठोस हैं; अगर आप स्वीकार करते हैं कि इसने जो क्रान्ति प्रारम्भ की है, वह राष्ट्र की भलाई के लिए है; तो आपको कुओ-मिन्तांग में सम्मिलित होकर उसके सिद्धान्त की पूर्ति और उसकी नीति के उत्कर्ष के लिए प्रयत्नशील होना चाहिए। अगर आप समझते हैं कि इसके काम और रुख में कुछ दोष है, तो आपको सुझाव देकर उसे ठीक करने का प्रयत्न करना चाहिए। केवल इतने के लिए ही आपको कुओ-मिन्तांग का विरोध नहीं करना चाहिए या इसे मिटाने की कोशिश नहीं करनी चाहिए; क्योंकि कुओ-मिन्तांग को मिटाने की कोशिश करना चुंग-ह्वा राष्ट्र के संपूर्ण जीवन को मिटाने की कोशिश होगी। अपने राष्ट्र के जीवन को नष्ट करना अपने जीवन तथा भविष्य की अपनी सन्तानों के जीवन को नष्ट करना है। इस प्रकार के फल की कामना करना बड़ा ही खतरनाक है।"

अमेरिका च्यांग की पीठ ठोंकते हुए भी उसकी भ्रष्टाचार और अयोग्यताओं को अच्छी तरह जानता था, इसलिए वह च्यांग की लगाम को खुली छोड़ देने के लिए तैयार नहीं था, इसलिए च्यांग ने जब धोखे से नई चौथी-सेना पर आक्रमण करके गृहयुद्ध को पूरी तौर से भड़काना चाहा, तो तत्कालीन अमेरिकन राज्यसेक्रेटरी सुमनर वेल्स ने कहा कि अमेरिकन सरकार चीन के सभी दलों और गुटों में विचार-विनिमय द्वारा शान्ति स्थापित करना चाहती है, और वहाँ के सभी दलों और संगठनों में पूर्ण एकता देखना चाहती है। इसी एकता को कायम करने के लिए रूजवेल्ट ने अपने एक सबसे बड़े जेनरल स्टिलवेल को चीन-बर्मा के मोर्चे पर अमेरिकन सेना का सेनापति और मित्र-राष्ट्रों की ओर से च्यांग काइ-शेक का चीफ-आफ स्टाफ (सेना का मुख्य-संचालक) बनाकर भेजा। स्टिलवेल ने कुछ ज्यादा ईमानदारी दिखलानी चाही, और वह ऐसा करने के लिए मजबूर भी था; क्योंकि वह देख रहा था, कुओ-मिन्तांगी सेना जापान पर जवाबी हमला करने में असमर्थ है। उसने इस सेना के भ्रष्टाचार और सैनिक अयोग्यता को निकालने की कोशिश की। इसी समय हूनान् और होनान् में च्यांग की पराजयों के कारण चुंग-किंग का पतन नजदीक दिखलाई पड़ने लगा, इसलिए जरूरी हो गया कि कम्युनिस्टों के साथ मेल किया जाय।

अमेरिकन उप-राष्ट्रपति वालेस के चुंग-किंग पहुँचने पर उसके कहने से च्यांग ने एक छोटे-से अमेरिकन मिशन को लाल-राजधानी येनान् जाने की आज्ञा दी। मिशन के लोगों ने मुक्त इलाकों की अच्छी तरह देखभाल की। कम्युनिस्टों के शासन, सैनिक-शिक्षा और गोरिल्ला-युद्ध को देखकर वह बहुत प्रभावित हुए। कर्नल बेरेट ने स्वीकार किया कि शत्रु के पाँती के पीछे सात वर्ष तक सफलतापूर्वक लड़नेवाले इन लोगों से हमें शिक्षा लेनी चाहिए। इसी प्रकार अमेरिकन डाक्टर दल के मेजर केसबर्ग ने कहा कि साधनों के अभाव में भी घायलों की चिकित्सा का जो प्रबन्ध यहाँ है, वह अत्यधिक साधनवाले हम लोगों के लिए एक चुनौती है। अमेरिकन पत्रकार और दूसरे सैनिक भी येनान् और मुक्त इलाके को देखकर बड़े प्रभावित हुए। इन्हीं दिनों जापान के कब्जेवाले चीनी शहरों पर बमवर्षा करनेवाले अमेरिकन वैमानिकों को लाचार होकर जब पैराशूट से नीचे कूदना

* 'चीन का भाग्य', पृष्ठ 211-212

पड़ा, तो कम्युनिस्ट गोरिल्लों ने उनकी रक्षा करते हुए, उन्हें चुंग-किंग में सुरक्षित पहुँचा दिया। इन लोगों ने उनकी आँखों से कम्युनिस्ट सेना और मुक्त इलाकों को देखा और उसकी प्रशंसा उन्होंने अपनी छावनियों में की।

इसी परिस्थिति में सितम्बर, 1944 में कम्युनिस्टों और कुओ-मिन्तांग के बीच बातचीत हुई, और च्यांग ने मजबूर होकर 'जनता की राजकीय सभा' बुलाई थी, जिसमें कम्युनिस्ट पार्टी की तरफ से लिन् पो-युए ने माँग की थी कि सभी राजकीय दलों की एक सलाहकार परिषद् जल्दी बुलाई जाय, सर्वदली सरकार बनाई जाय, मुक्त इलाकों की सरकारों को स्वीकार किया जाय, सभी चीनी सेनाओं के साथ समान व्यवहार और सेना के संचालन में हमारे लिए भी स्थान दिया जाय। लेकिन, च्यांग ऐसा समझौता क्यों करने लगा ? वह मुक्त इलाकों को नहीं स्वीकार करना चाहता था। आठवीं मोर्चा-सेना और नई चौथी-सेना को भी तभी स्वीकार करने को तैयार था, जब वह अपनी संख्या दो-तिहाई कर दें, और गोरिल्ला टुकड़ियों तथा सशस्त्र किसानों को बेहथियार कर दें। बातचीत टूट गई।

इस पर अमेरिका की ओर से स्टिलवेल ने सुझाव रक्खा कि जिस तरह आइजेनहोवर यूरोप में सभी मित्रराष्ट्रों की सेनाओं का सेनापति है, उसी तरह स्टिलवेल को चीनी युद्ध का सर्वोच्च सेनापति माना जाय, जिसमें कि कुओ-मिन्तांग कम्युनिस्ट की और अमेरिका की सेनाओं का जापान के विरुद्ध संगठित इस्तेमाल किया जा सके। चीन के सभी जनतन्त्रवादी दलों ने सुझाव को पसन्द किया। कम्युनिस्ट सेना के महा-प्रधान सेनापति चू-तेह ने भी स्टिलवेल के अधीन काम करना स्वीकार किया, और दूसरे प्रादेशिक जेनरलों ने भी। लेकिन च्यांग ऐसा स्वीकार क्यों करने लगा, जबकि वह जानता था, कि ऐसा करने पर मुक्त इलाकों को घेरकर पड़ी अपनी सबसे अच्छी सेना को लड़ाई के मोर्चे पर भेजना पड़ेगा, और युद्ध के बाद उपयोग करने के लिए अमेरिकन हथियारों को वह अच्छी तरह जमा नहीं कर सकेगा, साथ ही अमेरिकन सहायता को दूसरी सेनाओं में भी बाँटना पड़ेगा। च्यांग के दूसरे सेनापति भी इस प्रस्ताव से अपनी भारी क्षति देख रहे थे। वह अमेरिकन युद्ध-सामग्री और दवाइयों को काले बाजार में बेचकर लाखों अपनी जेब में भर रहे थे। च्यांग और इन प्रतिक्रियावादी चीनी जेनरलों ने अपने अमेरिकन मित्रों द्वारा रूजवेल्ट पर जोर डाला, और च्यांग ने सीधे भी रूजवेल्ट से माँग की कि स्टिलवेल को हटा लिया जाय, क्योंकि उसका व्यवहार बहुत बुरा है। उसने धमकी दी कि ऐसा नहीं करेंगे, तो मैं अमेरिकन प्रोग्राम पर बातचीत नहीं करूँगा। च्यांग का समर्थन रूजवेल्ट के चीन में स्थित विशेष प्रतिनिधि तथा तेल के व्यापारी पैट्रिक हरले ने भी किया। इन दबावों के कारण रूजवेल्ट ने स्टिलवेल को चीन से हटा लिया। सभी प्रगतिशील तत्त्वों ने इसका विरोध किया और चीन में अमेरिका के राजदूत गास ने तो अपने पद से त्यागपत्र भी दे दिया। इसके थोड़े ही समय बाद रूजवेल्ट की मृत्यु हो गई, और अमेरिकन प्रतिक्रियावादियों के सरदार राक्षस ट्रूमन ने अमेरिकन राष्ट्रपति पद को सँभाला, वहीं ट्रूमन जिसने हार से गये जापान के ऊपर दो-दो अणुबमों को फेंकवाकर हिरोशिमा और नागासाकी के लाखों निरीह आदमियों के प्राण लिए। अब हरले चीन का राजदूत बना दिया गया, और स्टिलवेल की जगह वेडमेयर को अमेरिकन जेनरल नियुक्त किया गया। च्यांग और चीन के प्रतिक्रियावादियों की अब पाँचों घी में थीं।

स्टिलवेल ने जो प्रस्ताव अमेरिका की ओर से रक्खा था, उसके लिए अब च्यांग पर दबाव डालने की जरूरत नहीं थी। जर्मनी की भी हार हो चुकी थी और कम्युनिस्टों के साथ समझौता किये बिना ही जापान को परास्त किया जा सकता था। च्यांग ने स्टिलवेल के सुझाव का हवाला देकर जोर दिया कि कम्युनिस्ट सेनाएँ संयुक्त कमान में रख दी जायँ, लेकिन कम्युनिस्ट ऐसा क्यों करने लगे ?

हरले येनान् और चुंग-किंग के बीच कितने ही दिनों तक उड़ता-फिरता रहा। उसके और वेडमेयर के सामने ही च्यांग ने येनान् के मुक्त इलाके पर 1945 के वसन्त में आक्रमण कर दिया, लेकिन अमेरिकन अस्त्रों से सुसज्जित उसकी सेना को असफल हो पीछे हटना पड़ा, और बहुत-सा अमेरिकन हथियार पहली बार कम्युनिस्टों के हाथ में गया, जिनकी सूची उन्होंने प्रकाशित कर दी। पत्रकार सम्मेलन में पूछे जाने पर हरले ने बतलाया कि वह शायद चुरा लिये गये हैं।

4. सातवीं पार्टी कांग्रेस (1945 ई.)

इसी समय 24 अप्रैल को येनान् में कम्युनिस्ट पार्टी की सातवीं कांग्रेस हुई, जिसमें पार्टी के 12 लाख 10 हजार मेम्बरों ने अपने 544 प्रतिनिधि भेजे थे।

(1) **मुक्तियुद्ध पर चू-तेह की रिपोर्ट**–इस कांग्रेस के सामने सेनापति चू-तेह ने सैनिक प्रगति का विवरण देते हुए कहा था :

" साथियो ! हमारी पार्टी की सातवीं कांग्रेस ऐसे समय हो रही है, जबकि महान् चीनी जनता जापानी आक्रमणकारियों के विरुद्ध अपने वीरतापूर्ण प्रतिरोध-युद्ध को करीब आठ वर्ष तक चला चुकी है। यह मेरे लिए बड़े सम्मान की बात है कि मुझे यहाँ अपनी पार्टी-कांग्रेस के सामने आठवीं-मोर्चा-सेना के 9 लाख सैनिकों, नई चौथी सेना, दक्षिण-चीन जापान-विरोधी कालम और 2 लाख से अधिक वीरतापूर्वक लड़नेवाले मिलिसिया जवानों की ओर से बोलने का मौका मिला है। मुझे यह बतलाना है कि इन आठ सालों में हमारी महान् चीनी जनता ने एक जापान-विरोधी राष्ट्रीय संयुक्त मोर्चा बनाया और जवान-बूढ़े, नर-नारी सभी ने सभी युद्ध मोर्चों पर आक्रमणकारी जापान के खिलाफ जबर्दस्त जीवन-मरण का संघर्ष जारी रक्खा। जैसे ही एक आदमी गिरा, उसकी जगह लेने के लिए दूसरा आगे बढ़ा। इससे सन्देह की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती, कि चीनी जनता अन्त में विजयिनी होगी। इन आठ वर्षों में हमारी महान् चीनी जनता की सेनाएँ–आठवीं मोर्चा-सेना, नई चौथी सेना और दक्षिण-चीन जापान-विरोधी कालम–जापान-विरोधी मित्र-सेनाओं से कन्धे से कन्धा मिलाकर अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए लड़ी। युद्ध के मैदानों में, उत्तर के मुक्त इलाकों में, केन्द्रीय और दक्षिणी चीन में चीनी जनता के साथ हम कम्युनिस्टों ने विशेष तौर से बहुत भारी परिमाण में अपना खून बहाया। हम चीनी कम्युनिस्ट यह कहने में अभिमान कर सकते हैं कि हमने अपने को चीनी जाति के सर्वश्रेष्ठ पुत्र और पुत्री कहने के अयोग्य नहीं साबित किया, क्योंकि हम उस कर्तव्य को पालन कर रहे हैं, जोकि चीनी जनता के हृदय में सबसे अधिक प्रिय है, और जिसे हम बराबर इसे करते रहेंगे।

" साथियो ! हमारी वर्तमान कांग्रेस इस उद्देश्य से बुलाई गई है कि हम प्रतिरोध-युद्ध के अनुभवों का लेखा-जोखा लें और उसमें अन्तिम विजय के लिए प्रयत्न करने में सारी चीनी जनता और आगे सभी जापान-विरोधी मित्र-सेनाओं के साथ सहयोग करने के लिए तैयारी करें। हमारी पार्टी के नेता साथी माओ चे-तुंग की राजनीतिक रिपोर्ट 'मिली-जुली सरकार' के साथ मैं पूरी तौर से सहमत हूँ। यह ऐतिहासिक महान् दस्तावेज साकार रूप में चीनी स्वतन्त्रता, आजादी, जनतन्त्रता, एकता और समृद्धि के लिए चीनी जनता के अद्वितीय संघर्ष के अनुभवों का सार है। इसमें जापानी आक्रमणकारियों को हराने तथा नवीन चीन के निर्माण करने के लिए साकार उपाय और प्रोग्राम बतलाये गये हैं।

" बिना ठीक राजनीतिक नीति के ठीक सैनिक नीति नहीं हो सकती। ठीक राजनीतिक नीति के पथ-प्रदर्शन में और जनता के साथ जनतांत्रिक मिली-जुली सरकार के आधार पर ही लोकयुद्ध की विजय हो सकती है। आठ सालों तक हमारी महान् चीनी जनता की सेनाओं ने अद्वितीय, वीरतापूर्ण, कठोर, भव्य और विजयी युद्ध को जारी रक्खा और वह चीन के प्रतिरोध-युद्ध का मेरुदण्ड बन गई। यह इसलिए कि साथी माओ चे-तुंग की राजनीतिक और सैनिक नीति ठीक है। साथी माओ चे-तुंग की ठीक राजनीतिक नीति उनकी ठीक सैनिक नीति से मिलकर जनता की सेना, मुक्त इलाके, तीन व्यवस्थाओं के अनुसार जनतांत्रिक मिलीजुली सरकार के अस्तित्व और एक सच्चे लोकयुद्ध को लाने में सफल हुई और मुक्त इलाकों के युद्धक्षेत्रों में एक के बाद एक हमें कितनी ही महान् विजय प्राप्त करने में सफलता मिली। "

सेनापति चू-तेह ने सालों पहले लिखी माओ की महत्त्वपूर्ण पुस्तक 'लम्बा युद्ध' की ओर संकेत करते हुए आगे कहा :

" चाहे परिवर्तन कितने ही पेचीदा क्यों न हुए हों, लेकिन उनका विकास साथी माओ चे-तुंग की पुस्तक 'लम्बे युद्ध' में की गई वैज्ञानिक भविष्यवाणी की सीमा से बाहर नहीं गया, जिसमें कहा गया था कि प्रतिरोध

की तीन मंजिलें होंगी : शत्रु का आक्रमण, शिथिलता और हमारा जवाबी हमला। हम इन तीनों मंजिलों से अभी पार नहीं हो सके हैं। इस समय हम तीसरी मंजिल के आरम्भ में हैं।

" पहली मंजिल 7 जुलाई, 1937 के लूकोउ-चियाओ (पेकिंग के पुल) से शुरू हुई और उसका अन्त अक्टूबर, 1938 में वूहान के पतन के साथ हुआ। इस मंजिल के दौरान में कुओ-मिन्तांग के अधिकारियों ने अप्रतिरोध की ओर होकर घरेलू पालिसी में कुछ प्रगतिशील कदम उठाये थे, चेर्मो की स्थानीय सेनाओं में से काफी ने जापानी आक्रमणकारियों के विरुद्ध सक्रिय और वीरतापूर्ण प्रतिरोध किया, यद्यपि कुओ-मिन्तांग सेना के दूसरे भाग घबराकर शत्रु के मुकाबले में कोई प्रतिरोध किये बिना भाग गये। "

दूसरी मंजिल के बारे में बतलाते हुए चू-तेह ने कहा :

" दूसरी मंजिल··· वूहान् के पतन के बाद आरम्भ हुई···पहले अक्तूबर, 1938 में वूहान के पतन के 1944 तक के साढ़े पाँच साल के लम्बे अर्से में जापानियों ने एक बार फिर कुओ-मिन्तांग युद्धक्षेत्र में दाँव-पेंच का आक्रमण शुरू किया, और चीन में स्थित जापानी आक्रमणकारियों की मुख्य सेनाएँ मुक्त इलाकों के विरुद्ध लड़ने में लगी रहीं। 1943 तक चीन में अवस्थित जापान की सारी आक्रमणकारी सेना का 64 सैकड़ा और कठपुतली सेना का 94 सैकड़ा मुक्त इलाकों को दबोचे हुए था। इस लम्बे समय में कुओ-मिन्तांग के कब्जेवाले भूभाग के युद्धक्षेत्र में एक भी बड़ी लड़ाई नहीं हुई। जहाँ तक कि कुओ-मिन्तांग का सम्बन्ध था, यह सुस्ती का समय था।

" साढ़े पाँच साल के लम्बे अर्से में कुओ-मिन्तांग सरकार को प्रगति के लिए प्रयत्न करने तथा जवाबी हमले की तैयारी करने के लिए काफी अवसर मिला था। लेकिन उसने हमले की तैयारी करने की जगह कम्युनिस्ट-विरोधी तीन अभियान भेजे, प्रतिरोध-युद्ध की शक्तियों को मजबूत करने की जगह उन्हें कमजोर किया, दृढ़तापूर्वक युद्ध को जारी रखने के बदले नारा लगाया, 'राष्ट्रीय मुक्ति घूमघुमौवे तरीके से' और शत्रु के साथ मेल-मिलाप बढ़ाया। फलतः शत्रु के पिछले भाग में कुओ-मिन्तांग की सेनाएँ परीक्षा में पास नहीं हो सकीं। वह या तो अपनी स्थिति को कायम रखने में असफल रहीं, या शत्रु के हाथ की कठपुतली सेना बन गईं। जब जापानी आक्रमणकारियों ने 1944 में इस अभिप्राय से आक्रमण किया कि प्रधान भूमि के साथ यातायात और संचार स्थापित किया जाय तो होनान्, हूनान्, क्वान्तुंग और क्वान्सी के कुओ-मिन्तांग शासित प्रदेशों के विशाल भूभाग थोड़े-से समय में ही शत्रु के हाथ में चले गये।··· जब शत्रु ने कुओ-मिन्तांग वाले इलाकों पर आक्रमण किया, तो हमने मुक्त इलाकों के युद्धक्षेत्रों से शत्रु पर आक्रमण किया। 1944 से ही यह नई स्थिति चली आ रही है।

" इस प्रकार हरेक आदमी समझ सकता है कि कुओ-मिन्तांग के अधिकारियों ने वह काम नहीं किया, जो उन्हें करना चाहिए था, और वह काम बड़े जोर-शोर के साथ किया, जो उन्हें नहीं करना चाहिए था। फलतः कुओ-मिन्तांग की सेनाएँ अधिक और अधिक निर्बल होती गईं। मुक्त इलाकों की स्थिति इससे बिल्कुल उलटी है। आठवीं मोर्चा-सेना, नई चतुर्थ-सेना और दक्षिण-चीन-जापान-विरोधी-कालम लड़ाई करते-करते अधिकाधिक मजबूत होते गये। उन्होंने खोये हुए इलाकों को फिर से अपने हाथ में कर लिया, अत्यन्त गम्भीर कठिनाइयों को पार किया, और अब विकास और विस्तार की नई मंजिल में दाखिल हो रहे हैं। इस समय प्रतिरोध-युद्ध का केन्द्र कुओ-मिन्तांग अधिकृत इलाके में नहीं, बल्कि मुक्त इलाकों के युद्धक्षेत्रों में है।

" आठवीं मोर्चा-सेना, नई चतुर्थ सेना और दक्षिण-चीन-जापान-विरोधी कालम चीनी जनता की सेनाएँ हैं, जिनकी पूर्वज चीनी लालसेना थी। महान् जनता की इस सेना का निर्माण करते समय हमारी पार्टी और साथी माओ चे-तुंग ने–जो चीनी जनता की इच्छा का प्रतिनिधित्व करते हैं–जनता की सेवा और मातृभूमि की प्रतिरक्षा का पवित्र कर्तव्य उसके सामने रक्खा, और राष्ट्र और जनता की मुक्ति के लिए संघर्ष करना उसका लक्ष्य बतलाया। 18 सितम्बर, 1931 के मुकदन-दुर्घटना के बाद हमारी पवित्र भूमि को जापानी आक्रमणकारियों के पैरों तले रौंदी जाती देख खून का घूँट पीती महान् जनता की सेना जापानी आक्रमणकारियों के विरुद्ध लड़ने के लिए पूर्णतया उत्साहित हो गई।

" कितने ही वर्षों तक अगणित कठिनाइयों का सामना करते, भारी परिमाण में खून देते, महान् अभियान को पूरा करते इस सेना ने गृह-युद्ध को खतम करने और जापानी आक्रमणकारियों के विरुद्ध एकताबद्ध हो लड़ने के महान् लक्ष्य को पूरा करने के लिए हर सम्भव तरीके से कोशिश की। शेन्सी-कान्सू-निंग स्या सीमांत भूभाग में पहुँचने के बाद हमारी सेना ने प्रतिरोध-युद्ध के सम्बन्ध में काफी तैयारी का काम पूरा किया। तीनों मोर्चों की सेनाओं का विलयन, सियान्-दुर्घटना का शान्तिपूर्ण समझौता, कर्मियों की शिक्षा की तैयारी और सारे चीन में अनेक मित्र सेनाओं के साथ सम्बन्ध स्थापित करना। यह सभी बातें अच्छी तरह से की गईं।

" लुकोउचियाउ-दुर्घटना (1937 ई.) के तुरन्त ही बाद हमारी पार्टी की केन्द्रीय कमेटी और महान् जनता की सेना के अफसरों और सैनिकों ने तुरन्त एक अपील निकालकर प्रार्थना की कि जनता की सेना को राष्ट्रीय क्रान्तिकारी सेना के रूप में पुनः संगठित किया जाय, और उसे जापानियों से लड़ने के लिए युद्धक्षेत्र में भेजा जाय।

" सितम्बर, 1937 में आठवीं मोर्चा-सेना साथी माओ चे-तुंग की श्रेष्ठ सैनिक सूझ के अनुसार उत्तरी चीन में शत्रु के पीछे की ओर पश्चात् भाग में घुस गई। हमारा 115वाँ डिवीजन शान्सी-चहार-होपेइ भूभाग में दाखिल हुआ, हमारा 120वाँ डिवीजन उत्तर-पश्चिमी शान्सी प्रदेश में और हमारा 129वाँ डिवीजन दक्षिण-पूर्वी शान्सी प्रदेश में घुसा। 1938 में हमारी सेना पूर्व की ओर और भी आगे बढ़ी। इसका एक भाग होपेइ-शान्तुंग-होनान् के मैदानों और शान्तुंग के मैदान में, दूसरा भाग केन्द्रीय होपेइ-मैदान में और एक भाग और भी आगे बढ़ते हुए ऐसे पूर्वी होपेइ में पहुँचा, कि दो लाख जनता के जापान-विरोधी महान् विद्रोह के साथ मिल गया। 1938 के वसन्त में नई चतुर्थ-सेना ने युद्धक्षेत्र में आठवीं मोर्चा-सेना का अनुगमन किया। शत्रु के पश्चात् भाग में केन्द्रीय चीन में घुसकर उसने यांग-ची नदी के दोनों तटों पर जापान-विरोधी गोरिल्ला-युद्ध शुरू कर दिया। इसी साल के जाड़ों में क्वान्तुंग प्रदेश के तुंगकियांग कालम ने कान्तन् के पतन के बाद तुंग कियांग में विद्रोह आरम्भ किया। 1939 में जब हैनान् द्वीप का पतन हुआ, तो हमारी पार्टी के नेतृत्व में स्थानीय लोगों ने जापान से लड़ने के लिए गोरिल्ला सेनाएँ संगठित कीं। युद्धक्षेत्र में पैर रखने के समय आठवीं-मोर्चा-सेना ने शान्सी प्रदेश के पिंग-शिंग-कुआन् में राष्ट्रव्यापी प्रतिरोध-युद्ध में शत्रु के विरुद्ध उसके सत्यानाश की प्रथम लड़ाई लड़ी।"

प्रतिरोध-युद्ध के तीन मंजिलों के बारे में कहते जेनरल चू-तेह ने बतलाया :

"सितम्बर, 1937 में पिंग-शिंग कुआन् युद्ध की विजय से 1944 के 100 रेजिमेंट युद्ध तक आठवीं मोर्चा-सेना और नई चतुर्थ-सेना ने जापानी आक्रमणकारियों के 'बीन-बीनकर मारने' के दाँव-पेंच को पहले बेकार कर दिया। फिर 'चारों तरफ से घेरकर एक बिन्दु पर आक्रमण करने' के दाँव-पेंच को बेकार कर दिया। 1939 के बाद आठवीं मोर्चा-सेना और नई चतुर्थ-सेना ने जापानी कमांडिंग-जेनरल होबुन यमाशिता और डिवीनज-कमांडर कूवा के द्वारा तैयार की गई 'गिराने', 'छिन्न-भिन्न करने' और 'बीन-बीनकर मारने' के सम्मिलित नये दाँव-पेंच को सफलतापूर्वक चूर्ण कर दिया। लगातार होनेवाली इन विजयों ने एक नई स्थिति पैदा कर दी, और उत्तरी तथा केन्द्रीय चीन में बहुत-से मुक्त इलाके पैदा कर दिये। आठवीं मोर्चा-सेना हजारों से अब 5 लाख 40 हजार जवानों की सेना हो गई और मुक्त इलाके की आबादी 4 करोड़ तक पहुँच गई। नई चतुर्थ-सेना 15 हजार से 1 लाख की हो गई और उसने 1 करोड़ 30 लाख की आबादी को मुक्त कर दिया। यह शत्रु के पश्चात्-भाग में मुक्त इलाकों के निर्माण और विस्तार का समय था।

" 1940 के वसन्त में 100 रेजिमेन्ट लड़ाई में आठवीं मोर्चा-सेना की जबर्दस्त विजय से घबराकर शत्रु (जापान) ने उत्तरी चीन में अपनी अभियान-सेना के मुख्य सेनापति को बर्खास्त करके उसकी जगह यासुत्सुगू ओकामुरा को सेनापति बनाया। हमारी सेना पर आक्रमण करने के अपने तरीके को इसने पूरी तौर से बदलकर, 'बृहत्तर-पूर्व एशिया में नवीन व्यवस्था' के स्थापित करने का प्रस्ताव रखा।

" जहाँ भी शत्रु ने पैर रक्खा, वहाँ उसने एक ओर से जलाना-मारना शुरू किया और इस प्रकार 'निर्जन भूमि' बनाकर हमारी सेना के अस्तित्व के लिए आवश्यक स्थितियों को हटाने की कोशिश की। विशेषकर जापानी आक्रमणकारियों ने करीब 1 लाख सेना को काम में ला 'बीनकर मारने' के अभियान को लगातार एक के बाद

एक जारी रक्खा। उनके हरेक अभियान तीन या चार महीने तक चलते। इसके कारण स्थिति अत्यन्त गम्भीर हो गई, विशेषकर इसलिए कि उसी समय सारे उत्तरी-चीन के बहुतेरे स्थानों में अकाल पड़ गया, और सेना और जनता दोनों ही वृक्षों की पत्तियों और घास की जड़ों को खाने के लिए मजबूर हुईं। इसके कारण स्थिति और भी भयंकर हो गई। किन्तु हमारी सेना ने जनता के साथ एकताबद्ध हो दृढ़तापूर्वक बड़ी वीरता के साथ संघर्ष जारी रक्खा।

" 1942 तक रहनेवाले इस काल में उत्तरी चीन में मुक्त इलाकों की जनसंख्या कम होकर ढाई करोड़ रह गई और आठवीं मोर्चा-सेना तीन लाख। केन्द्रीय चीन के मुक्त इलाके में यद्यपि उत्तरी चीन की अपेक्षा छोटे-छोटे कितने ही संघर्ष हुए, किन्तु नई चतुर्थ सेना बढ़कर 1 लाख 80 हजार जवानों की हो गई और उसने 2 करोड़ की आबादी को मुक्त किया। इस सारे कठिन समय में हमारी सेना और मुक्त इलाके की आबादी यद्यपि संख्या में कम हो गई, लेकिन गुण में वह फौलादी तथा और भी अधिक मजबूत हो गई। "

महान् और शानदार कुर्बानियों के बारे में जेनरल चू-तेह ने आगे कहा :

" सितम्बर, 1937 से मार्च, 1945 के साढ़े सात वर्षों में आठवीं मोर्चा-सेना, नई चतुर्थ सेना और दक्षिण चीन-जापान-विरोधी-कालम ने शत्रु के विरुद्ध 1 लाख 15 हजार से अधिक छोटी-बड़ी लड़ाइयाँ लड़ीं और शत्रु तथा कठपुतली सेना के 9 लाख 60 हजार आदमियों को हताहत किया और 2 लाख 80 हजार को बन्दी बनाया। इनके अतिरिक्त 1 लाख शत्रु तथा कठपुतली सेना आत्मसमर्पण करके हमारी ओर मिल गई। सब मिलाकर शत्रु और कठपुतली सेना को 13 लाख 60 हजार आदमियों की हानि उठनी पड़ी। ··· हमारी सेना ने अपने हाथ में जो मुख्य-मुख्य युद्ध-सामग्री की, उसमें 1,028 तोपें, 7,700 मशीनगनें और 4,30,000 राइफलें तथा करबीनें थीं। हमने 34,000 मोर्चाघरों और 11,000 मजबूत मोर्चा-स्थानों पर अधिकार प्राप्त किया।

" जनता के जापान-विरोधी युद्ध की उल्लेखनीय सफलताओं को शत्रु की अपनी स्वीकारोक्तियों से भी देखा जा सकता है। उदाहरणार्थ जून, 1943 में उत्तरी चीन की जापानी अभियान सेना के हेडक्वार्टर ने एक कम्युनिके निकाला था : "इस साल जनवरी से मई तक सेना ने 5,67,424 आदमियों की कम्युनिस्ट सेना के साथ युद्ध किया। "

1943 में··· निम्न रिपोर्ट दी :

" शत्रु सेना का अधिकांश भाग च्यांग काइ-शेक की नहीं, बल्कि कम्युनिस्ट सेना है। इस साल जो 15 हजार लड़ाइयाँ लड़ी गईं, उनमें 75 सैकड़ा कम्युनिस्ट सेनाओं के साथ थीं और जिन 20 लाख सेनाओं से हम लड़े, उनमें आधे से अधिक कम्युनिस्टों की थी। 1 लाख 99 हजार मृत सैनिकों में आधे से अधिक चीनी कम्युनिस्ट सेना के थे। लेकिन, जिन 74 हजार सैनिकों को हमने बन्दी बनाया, उनमें चीनी कम्युनिस्ट सेना के केवल 15 सैकड़ा थे। वह च्यांग की सेना के हल्केपन को बतलाता है, और साथ ही प्रकट करता है, कि चीनी कम्युनिस्ट सेना के लड़ने की हिम्मत बढ़ रही है।··· इसके कारण उत्तरी चीन में साम्राजी सेना के काम का महत्त्व और भी बढ़ जायगा। उत्तरी चीन की साम्राजी सेना का मुख्य काम केवल यही है कि वह उत्तरी चीन में हमारे भयंकर शत्रु चीनी कम्युनिस्ट-सेना के विरुद्ध सर्वनाश के युद्ध को जारी रक्खें।

" इतने महान् बलिदानों को देकर चीनी जनता ने निम्न सफलताएँ प्राप्त कीं : उन्होंने ऐसे मुक्त इलाके बनाये, जोकि उत्तरी, केन्द्रीय और दक्षिणी चीन के उन्नीस प्रदेशों के क्षेत्रों में फैल गये, और जिनकी आबादी 9 करोड़ 55 लाख है। हमारी आठवीं मोर्चा-सेना, नई चतुर्थ-सेना और दक्षिण चीन-जापान-विरोधी कालम में 9 लाख 10 हजार बाकायदा सैनिक और 22 लाख से ऊपर मिलिसिया के जवान हैं। यह आँकड़े साफ तौर से मुक्त इलाके के युद्धक्षेत्रों में लोकयुद्ध के भारी विकास को बतलाते हैं, और यह कुओ-मिन्तांग युद्धक्षेत्रों की नाशकारी पराजयों से बिल्कुल उलटे हैं। "

चू-तेह की इस रिपोर्ट से इसका पता लग जाता है, द्वितीय विश्वयुद्ध के समय माओ चे-तुंग के नेतृत्व में कम्युनिस्ट सेना और चीन की जनता ने कितनी सफलता प्राप्त की, और यह भी मालूम हो जाता है कि च्यांग की सड़ी शक्ति को उखाड़ फेंकने के लिए वह कहाँ तक तैयार हो चुकी थी।

(2) **माओ की राजनीतिक रिपोर्ट**–साथी माओ ने कांग्रेस के सामने अपनी रिपोर्ट में बतलाया :

" आपने साथी चू-तेह की रिपोर्ट से समझ लिया होगा कि कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व के नीचे लोकयुद्ध के मध्य में चीनी जनता ने उन्नीस मुक्त इलाके स्थापित किये, जिनमें कुल 9 करोड़ 55 लाख आदमी बसते हैं। जनता की मुक्तसेना में 9 लाख 10 हजार सैनिक, और हमारी मिलिसिया (सशस्त्र लोक-सेवल दल) में 22 लाख स्वयंसेवक काम करते हैं।

" अब हम लोकयुद्ध की तीसरी और अन्तिम मंजिल में प्रवेश करने की तैयारी कर रहे हैं। ऐसे समय राष्ट्रीय मुक्ति और अपनी भावी सरकार के बारे में हमारे विचार स्पष्ट होने चाहिएँ। पहले की अपेक्षा हम बहुत अध्किा मजबूत हैं, तो भी अभी चीन का भारी भाग कुओ-मिन्तांग के अधिकार में है। अमेरिकन साम्राज्यवाद जापान-विरोधी युद्ध से लाभ उठाकर चीन को अपना उपनिवेश बनाने की चाल चल रहा है, उसकी मदद पाकर कुओ-मिन्तांग का सैनिक बल हमारी अपेक्षा बहुत अधिक है। च्यांग काइ-शेक फिर घरेलू युद्ध शुरू करना चाहता है। लोकयुद्ध के दौरान में उसने हमारे विरुद्ध तीन चढ़ाइयाँ करके हार खाई, फिर यदि ऐसी मूर्खता करेगा तो फिर हारेगा, इसमें सन्देह नहीं। लेकिन, हमें व्यर्थ बरबादी नहीं होने देना चाहिए, ऐसा करना समझ की बात भी है; क्योंकि चीन की सभी जनवादी शक्तियाँ संयुक्त सरकार की स्थापना करना चाहती हैं। "

साथी माओ ने सावधान करते हुए कांग्रेस में बतलाया :

"कुओ-मिन्तांग में भी एक बदनाम गुट की तानाशाही है, जोकि न केवल प्रतिरोध-युद्ध में तथा जनता की एकता और संगठन में भारी बाधा रही, बल्कि वह गृहयुद्ध और तानाशाही की नीति को ही मानता है। वह गृहयुद्ध आरम्भ करने की तैयारी कर रहा था और अब विशेष तौर से कर रहा है। वह केवल मित्र-सेनाओं द्वारा चीन के कुछ भागों से जापानियों के भगाने की बाट जोह रहा है। उसे यह भी आशा है कि मित्र-सेनापति वही पार्ट अदा करेंगे, जोकि ग्रीस में जेनरल स्कोबी ने। ये लोग ग्रीस में प्रतिक्रियावादी सरकार और जेनरल स्कोबी द्वारा किये गये खूनी काण्ड का समर्थन और स्वागत करते हैं।"

माओ ने सामने के करणीयों को बतलाते हुए कहा :

" (1) जापानी आक्रमणकारियों को हमें पूरी तरह से हराना है, इसमें कोई बीच की बात नहीं हो सकती,

" (2) चीन में फासिस्तवाद के अन्तिम स्वरूप को नष्ट करके उसके अवशेष को भी कहीं नहीं रहने देना होगा,

" (3) चीन में जनतांत्रिक शान्ति स्थापित करनी है, और गृहयुद्ध नहीं होने देना चाहिए,

" (4) कुओमिन्तांग की तानाशाही को समाप्त करना होगा। उसकी समाप्ति के साथ-साथ सबसे पहले उसके स्थान पर ऐसी अस्थायी जनवादी संयुक्त सरकार स्थापित करनी है, जिसका समर्थन सारा राष्ट्र करता हो। खोये हुए प्रदेशों पर फिर अधिकार करने के बाद एक स्वतन्त्र और मुक्त चुनाव द्वारा जनता की इच्छा को प्रकट करनेवाली बाकायदा संयुक्त सरकार बनाई जाय।

" हम मित्र-राष्ट्रों से, विशेषकर अमेरिका और इंग्लैण्ड की सरकारों से प्रार्थना करते हैं कि वह चीनी जनता के विस्तृत अंश की आवाज को गम्भीरतापूर्वक सुने, और अपनी नीतियों को चीनी जनता की इच्छा के विरुद्ध न बनावे, नहीं तो वह चीनी जनता की मित्रता को धक्का पहुँचा उसे खोकर रहेगी। यदि कोई विदेशी सरकार चीनी जनता के प्रगतिशील लक्ष्य के विरुद्ध यहाँ प्रतिक्रियावादी दलों की मदद करेगी, तो वह भारी गलती करेगी। "

सातवीं पार्टी-कांग्रेस ने एकमत हो पार्टी के और नई जनवादी-क्रान्ति के काल में पार्टी के आम तथा ठोस कार्यक्रमों को मंजूर किया। इस कांग्रेस ने तत्कालीन विश्व और घरेलू परिस्थितियों का ठीक-ठीक लेखा-जोखा किया और समूची पार्टी का तथा प्रतिरोध-युद्ध में अन्तिम जीत प्राप्त करने एवं मिली-जुली जनवादी सरकार कायम करने के संघर्ष में शामिल होने के लिए सारे देश की जनता का आह्वान किया। राष्ट्रव्यापी विजय की तैयारी करने के लिए खास तौर से नगरों में और सबसे अधिक मजूर-वर्ग में काम को मजबूत करने की और ध्यान देने के लिए समूची पार्टी पर जोर दिया। उसने अपने सेनाबल, जनबल, और भूभाग के बल को

दिखलाते हुए यह भी बतलाया कि यह सारी शक्ति युद्ध के साथ-साथ उत्पादन का भी काम कर रही है।

1944 के बाद जनमुक्ति-सेना ऐसी स्थिति में हो गई थी कि वह दुश्मन पर आंशिक जवाबी हमला कर सके। चीन के अधिकांश बड़े नगरों, रेल, डाक-तार की लाइनों और समुद्र-तटों पर जन-मुक्ति-सेवा का घेरा या कब्जा कायम हो गया था।

5. जापान की हार (1945 ई.)

सातवीं पार्टी-कांग्रेस के बाद जन-मुक्ति-सेना का जवाबी हमला जापानियों के विरुद्ध बड़ी तेजी से आगे बढ़ने लगा। जर्मनी के पराजित होने के बाद 8 अगस्त (1945 ई.) को सोवियत-संघ ने जापान के खिलाफ युद्ध घोषित कर दिया। सोवियत सेना उसी वेग से मंचूरिया में जापानी सेना को खदेड़कर बन्दी बनाने लगी, जिस तरह उसने पूर्वी जर्मनी में किया था। जापान की सर्वश्रेष्ठ क्वान्तुंग-सेना को नष्ट कर उसने मंचूरिया को मुक्त कर दिया। जन-मुक्ति-सेना ने भी लालसेना के साथ कदम से कदम मिलाते जापानियों के संहार में हाथ बँटाया, और उसके अधिकार से चीन के भूभाग को मुक्त किया। अन्त में सोवियत रूस के युद्ध घोषित करने के छः दिन बाद 14 अगस्त को जापान ने भी जर्मनी की तरह बिना शर्त हथियार रख दिये। लेकिन जापान का हथियार रखना निश्चित होने पर भी अमेरिकन थैलीशाहों के सरदार ट्रूमन ने जापान के दो नगरों पर दो अणुबमों को गिरवाकर भीषण नर-संहार करते हुए पूँजीशाही के भविष्य के मनसूबे और काले इरादों को घोषित कर दिया।

16

जनमुक्ति-युद्ध (1945-49 ई.)

जापान के भी पराजित हो जाने पर अब द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त हो गया था, लेकिन अमेरिकन थैलीशाही इस विजय से सारे भूमंडल पर अपनी थैलीशाही का अकंटक राज्य कायम करना चाहते थे। जापान, जर्मनी और इताली की पराजय के कारण उन्होंने समझा था कि अब बाकी राष्ट्र भी इस स्थिति में नहीं हैं कि दुनिया के सारे बाजारों को हमारे हाथ में आने में रुकावट पैदा करेंगे। 47 करोड़ आबादीवाला चीन उनके लिए बहुत बड़ा बाजार था, और उसे वह अब बिलकुल अपना समझने लगे थे। युद्धकाल में अमेरिका ने उधारपट्टा सहायता देते बहुत-से अपने सलाहकार और चर वहाँ भेज दिये थे। चीन के प्रतिक्रियावादी अपने निजी स्वार्थों के कारण अमेरिका के हाथ में पूरी तौर से बिकने के लिए तैयार थे।

1. लुटेरों के चार परिवार

1927 से ही च्यांग चीन के प्रतिक्रियावादी स्वार्थों का अगुवा था। सभी प्रतिक्रियावादी निरीह चीनी जनता की लूट में हाथ मार रहे थे, लेकिन कुछ ही वर्षों में इस लूट के सबसे अधिक भागीदार चीन के चार परिवार हो गये। इनमें च्यांग काइ-शेक का च्यांग-परिवार एक था, उसके बाद, बल्कि उससे भी बढ़कर हाथ मारनेवाला सुंग-परिवार था, जिसकी तीन बहनों में से एक च्यांग काइ-शेक, दूसरी डा. सुन्-यात्-सेन् और तीसरी कुंग के साथ ब्याही थीं। चौथा परिवार चेन् का था। इन चारों परिवारों ने च्यांग के शासन के बीस वर्षों में अमेरिकन डालरों में दस से बीस खरब तक की सम्पत्ति लुटी और सारे देश में अपना एकच्छत्र आर्थिक शासन कायम कर दिया। च्यांग काइ-शेक के शासन ने एक ओर इन चारों परिवारों के हाथ में देश की सबसे अधिक सम्पत्ति लाकर रख दी, तो दूसरी तरफ उसके प्रतिक्रियावादी शासन के आर्थिक स्तम्भ भी यही चारों परिवार हुए। इन चारों परिवारों से केवल मजूर और किसान ही नहीं तंग आ गये थे, बल्कि इनके शोषण के शिकार निम्न-पूँजीपति और मझोले-पूँजीपति वर्ग भी थे। जापान-विरोधी युद्ध के समय और जापान के आत्मसमर्पण

के बाद तो यह परिवार और भी अधिक फूले-फले। 1944 में कुओ-मिन्तांग अधिकृत इलाके में उद्योग-धन्धे में लगी पूँजी का 70 सैकड़ा इन चारों परिवारों के हाथ में था। युद्ध की समाप्ति के बाद और भी तेजी के साथ पूँजी और उद्योग-धन्धे इनके हाथ में आने लगे। 1947 में सरसरी तौर से लिये गये आँकड़ों के अनुसार इन चार परिवारों के पास चीन में बिजली उत्पादन का 65 सैकड़ा, कोयले की खानों का 36 सैकड़ा, टिन की खानों का 37 सैकड़ा, सूत-उद्योग का 39 सैकड़ा, और कपड़ा मिलों का 57 सैकड़ा था। इनके चार बैंक चीन के 4 हजार 7 सौ 34 बैंकों पर नियन्त्रण करते थे। देश की सारी अर्थनीति, मुद्रा, राष्ट्रीय वित्त और बजट इनके हाथों में था। इसी तरह चीन के भीतरी जहाजी-व्यापार और विदेशी व्यापार के भी सर्वेसर्वा यही थे। ये चारों परिवार स्वयं अमेरिकन पूँजी के साथ बहुत मजबूती से बँध चुके थे, क्योंकि दोनों ने एक-दूसरे के सहारे चीन को लूटा-खसोटा था और आगे भी वैसा करने की तैयारी कर रहे थे।

2. अमेरिका का जाल

द्वितीय विश्वयुद्ध के समय और उसके बाद के तीन वर्षों में अमेरिका ने च्यांग काइ-शेक की सरकार को 6 अरब डालर दिये, जिसमें युद्धकालीन कर्ज 62 करोड़ डालर, उधारपट्टा-सहायता 78 करोड़ 20 लाख, युक्त राष्ट्र संघ सहायता 46 करोड़ 60 हजार डालर थे। इसके साथ युद्ध समाप्त होने पर अमेरिका ने च्यांग को 2 अरब 40 करोड़ डालर की और भी युद्ध-सामग्री दी। अमेरिकन आयात-निर्यात बैंक ने 8 करोड़ 30 लाख डालर अलग उधार दिये थे। अमेरिकन सेनाओं और खुफिया-विभाग के ऊपर चीन में कितना खर्च हुआ, वह अलग है। केवल 1940 में चीन में रक्खी अमेरिकन सेना के ऊपर 11 करोड़ डालर खर्च हुए। पूँजीवाद के चरम और आततायी रूप अमेरिकन थैलीशाही यह सारा काम किसी उदार भावना से नहीं कर रही थी, बल्कि वह ऐसा करके च्यांग काइ-शेक के द्वारा चीन को खरीदने का प्रयत्न कर रही थी। युद्ध-समाप्ति के एक साल बाद 1946 में अमेरिका ने चीन के साथ मित्रता-व्यापार सामुद्रिक यातायात के सम्बन्ध में जो सन्धि की, उससे उसे चीन में असीम और अनियन्त्रित अधिकार मिल गये। अब वह चीन में सभी तरह की व्यापार-कम्पनियाँ अबाध गति से खोल सकता था, व्यापार और उद्योग में मनमानी कर सकता था, खानों पर अधिकार, जमीन खरीदने और इमारतें बनाने का हक रखता था। द्वितीय विश्वयुद्ध से पहले भी विदेशियों को चीन के भीतर कितने ही विशेषाधिकार प्राप्त थे, लेकिन अमेरिका की इस अधिकारों की लूट के सामने वह कुछ नहीं थे। 1946 से 1948 तक व्यापारिक सन्धि, वैमानिक यातायात-सन्धि, आर्थिक सहायता-सन्धि, शिक्षा-पुनर्निर्माण-सन्धि के नाम से अमेरिका ने चीन के सारे भविष्य को खरीद लिया था। लेकिन, चीन के भविष्य को बेचना च्यांग के हाथ में नहीं था। उसका यह सारा देशघात कुछ ही सालों तक चल सका। इस समय सलाहकारों के रूप में चीन के वास्तविक शासक अमेरिकन थे। चीन के एक महाद्वीप फारमूसा को अमेरिका ने मानो बिलकुल अपने हाथ में कर लिया था। वहाँ का यातायात, पोतसंचार (जहाज चलाना), अलमुनियम-उद्योग, तेल-शोधनी और चीन के कारखानों और बन्दरगाहों के अमेरिकन ही सर्वेसर्वा थे। अमेरिका के इस तरह से अकेले छा जाने से इंग्लैंड के व्यापार को बहुत घाटा लगा, और वह बहुत बौखलाया भी, लेकिन उस वक्त एटली की तथाकथित समाजवादी मजूर-पार्टी द्वारा शसित इंग्लैण्ड अमेरिका के टुकड़ों पर जी रहा था। अमेरिका ने चीन के बाजारों को अपने फाजिल माल से भर दिया। उसके सामने चीनियों के उद्योग-धन्धे टाट उलटने लगे। केवल 1943 में नानकिंग की पाँच सौ व्यापारिक संस्थाओं ने अपना काम बन्द कर दिया। तियानूचिन् में 70 सैकड़े उद्योग-धन्धे बन्द हो गये और बाकियों ने अपने काम को बहुत कम कर दिया। युद्ध से पूर्व शांघाइ में 5,418 कम्पनियाँ कारबार कर रही थीं, उनमें से केवल 582 बाकी बच रहीं, और इनमें से भी अधिकांश ने 1948 में अपना कारबार बन्द कर दिया। युद्धकाल में पश्चिमी चीन में जो कारखाने बने थे, माल की माँग के कम होने से उन्हें भी अपना उत्पादन घटाना पड़ा।

अमेरिका के इस धावे से चीन के निम्न और मझोले पूँजीपति त्राहि-त्राहि करने लगे, और बेकारी के मारे मजूरों की हालत बहुत बुरी हो गई। चारों परिवारों ने अमेरिकन पूँजीपतियों से मिलकर जो लूट-खसोट

जारी की थी, उसके कारण चीनी डालर का मूल्य दिन-पर-दिन गिरने लगा, भोजन का अकाल पड़ने के कारण शहरों में चावल के लिए विद्रोह होने लगे, जिसमें मध्य-वर्ग का असंतोष भी शामिल हो गया। च्यांग काइ-शेक की सरकार असंतोष प्रकट करने के लिए प्रदर्शनकारियों पर खूनी आघात करके अपना शासन कायम रखना चाहती थी, जिसमें अमेरिका उसका पूरी तौर से साथ दे रहा था।

3. तीसरा क्रान्तिकारी गृहयुद्ध

जापानी आक्रमण के विरुद्ध प्रतिरोध-युद्ध के खतम होने के बाद चीन में वर्गों की स्थिति और उनके सम्बन्धों में नये परिवर्तन हो गये। प्रतिरोध-युद्ध के दौरान बड़े जमींदारों और बड़े पूँजीपतियों का प्रतिनिधित्व करनेवाले कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादियों ने जापान के विरुद्ध निष्क्रिय प्रतिरोध और कम्युनिस्ट पार्टी के विरुद्ध सक्रिय विरोध की नीति पर अमल किया था। उन्हें उम्मीद थी कि ऐसा करके हम कम्युनिस्ट पार्टी की ताकत को खतम कर देंगे और अपनी ताकत को बचा-बटोर सकेंगे। सोवियत-संघ, इंग्लैण्ड, अमेरिका और चीनी जनता–जिसकी प्रतिनिधि कम्युनिस्ट पार्टी थी–के हाथों जब जापान की हार हो जायगी, तो जीत के फल को हथियाने और कम्युनिस्ट-विरोधी युद्ध के द्वारा कम्युनिस्ट पार्टी का नामोनिशान मिटाकर समूचे देश पर अपना शासन करने में समर्थ हो सकेंगे। अपने इसी इरादे को पूरा करने के लिए कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादियों ने कम्युनिस्टों के खिलाफ इस्तेमाल करने के लिए उन सारे हथियारों को बटोरकर रख छोड़ा था, जिन्हें जापान के खिलाफ काम में लाने के लिए विदेशी ताकतों ने दिया था। इस प्रकार महायुद्ध के खतम होते ही चीन की सारी जनता के लिए गृहयुद्ध का संकट आन उपस्थित हुआ। जापान के युद्ध के अन्त में जहाँ तक हथियारों और सेना की संख्या का सम्बन्ध था, कम्युनिस्टों की शक्ति से कुओ-मिन्तांग की शक्ति कहीं अधिक थी, इसे हम बतला आये हैं। यह भी देख चुके हैं कि जापान के आत्मसमर्पण के बाद च्यांग काइ-शेक, टी. बी. सुंग, एच. एच. कुंग और चेन् ली. फू–इन चार बड़े परिवारों ने जापानियों से 'अपने हाथों में बागडोर लेने' की ओट में अनदेखी-अनसुनी लूट-खसोट और हड़पा-घड़पी का परिचय दिया था। नये युद्ध के दौरान में उन्होंने मुद्रा-प्रसार कर अनाज की वसूली और दूसरे आर्थिक कंट्रोलों द्वारा जनता का रक्त चूसा और देखते-देखते उनकी सम्पत्ति और कुछ नहीं तो 20 अरब अमेरिकन डालर तक पहुँच गई।

(1) जनता की माँगें–चार परिवारों को छोड़कर बाकी सारी जनता महाविपद् में फँसी हुई थी। युद्ध के बाद उसकी माँग थी कि राष्ट्रीय स्वतन्त्रता और राजनीतिक जनतन्त्रता कायम हो। किसानों की माँग थी कि जमीन हमें मिले। सभी वर्गों के लोग इतने सालों से विपद् भोगते-भोगते अब अपने पैरों पर खड़े होना चाहते थे। बाहरी संकट जब तक भयंकर रूप से देश के ऊपर था, उस वक्त इन भावनाओं को दबाया जा सकता था, लेकिन अब जनता इस भयंकर जूए को और ढोने की शक्ति नहीं रखती थी। अमेरिकन पूँजी और उसके पिट्ठू चार परिवार उसी तरह गुलछर्रे उड़ा रहे थे, जिस तरह आज के भारत में कुछ-कुछ देखा जाने लगा है।

(2) च्यांग की चालें–च्यांग जनता की माँगों का जवाब इसके सिवा और कोई दूसरे तरीके से नहीं दे सकता था कि वह लोगों के मुँह को जबर्दस्ती बन्द कर दे। कुओ-मिन्तांगी भूभाग में राष्ट्रीय उद्योग और व्यापारिक धंधे अमेरिकन पूँजी और चार परिवारों तथा उनके लागू-भग्गुओं की चक्की के दोहरें पाट के भीतर पड़कर पिस रहे थे। ऊपर से चीन में अमेरिका के सिपाही तथा दूसरे कर्मचारी चीनी जनता का और नुकसान करते, साथ ही उसकी तरह-तरह से बेइज्जती करते थे। कुओ-मिन्तांग के खुफिया विभाग की संस्थाएँ हर तरह से आतंक मचाये हुए थीं और जनता का दमन कर रही थीं। कुओ-मिन्तांगी इलाकों के किसानों को जबर्दस्ती पकड़कर सेना में भरती किया जाता और उनके जबर्दस्ती अनाज वसूल किया जाता। मुक्त इलाकों में किसानों को प्राप्त हुई जमीन को छीनने के लिए कुओ-मिन्तांगी सरकार ने जमींदारों को संगठित किया था।

माओ चे-तुंग की बराबर कोशिश रही कि गृहयुद्ध न हो, भाई-भाई के खून से चीन की धरती लाल न हो। इसके लिए युद्ध-समाप्ति के बाद कम्युनिस्ट पार्टी ने सारे देश की जनता को युद्ध से बचाने, शान्ति तथा एकता के रास्ते पर ले जाने के लिए भारी प्रयत्न किया और बहुत धैर्य से काम लिया।

गृहयुद्ध से बचाने के खयाल से प्रतिरोध-युद्ध की समाप्ति के बाद ही पार्टी की केन्द्रीय कमेटी ने 25 अगस्त, 1945 को 'वर्तमान स्थिति के बारे में एक घोषणा' जारी करके शान्ति, जनतन्त्रता और एकता के लिए इच्छा प्रकट की।

देश में गृहयुद्ध की आग भड़काने के लिए केवल च्यांग काइ-शेक और उसके प्रतिक्रियावादी कुओ-मिन्तांगी ही उतारू नहीं थे, बल्कि ट्रूमन के नेतृत्व में अमेरिकन थैलीशाह भी वही चाहते थे। जब जापान ने बिना शर्त हथियार डाल दिये, तो च्यांग काइ-शेक ने 23 अगस्त को तुरन्त चीन में अवस्थित जापानी सेनापतियों के नाम आदेश निकालकर कहा कि तुम हमारी ही सेनाओं के सामने शस्त्र डालो, यदि दूसरी अनधिकृत सेनाओं के सामने हथियार डालोगे तो तुम इसके लिए जिम्मेवार होगे। उसने कम्युनिस्ट सेनाओं को भी चुपचाप रहने का आदेश दिया। लेकिन, कम्युनिस्ट सेनापति चू-तेह भला ऐसे आदेश को क्यों मानने के लिए तैयार होते ? उन्होंने जापानियों से हथियार लेने, नगरों और यातायात के मुख्य मार्गों पर अधिकार करने के लिए अपनी सेना को आदेश दिया। च्यांग काइ-शेक की सेना एक कोने में जाकर छिपी हुई थी, जबकि कम्युनिस्ट सेनाएँ शत्रु के पश्चात् भाग में बाकायदा सैनिकों या गोरिल्लों के रूप में हर जगह मौजूद थीं, इसलिए शत्रु से हथियार लेना उनके लिए आसान था। जापान-अधिकृत शहरों और गाँवों की सेना जनमुक्ति सेना का स्वागत करने के लिए तैयार थी, तो भी च्यांग के आदेश को मानकर कई जगहों पर जापानी सेना खुशी से अपने हथियार न दे, वह जनमुक्ति सेना से लड़ने लगी। कम्युनिस्टों ने इस लड़ाई को बन्द करने तथा मुक्ति-सेना के अपने स्थानों पर उसके अधिकार को स्वीकार करने की च्यांग से माँग की।

(1) **अमेरिका की दुरंगी**–कम्युनिस्ट खतरे को अमेरिका ने सामने देखा। उसे साफ मालूम हुआ कि चीन की सारी जनता कम्युनिस्टों के साथ है और वह हर जगह मौजूद है; और हारे हुए जापान की जगह सारे ग्रामों और नगरों में छा जाएँगे। इसलिए अमेरिका ने अपनी सेनाएँ तुरन्त चीन के तटवर्ती स्थानों में उतारीं और जापानियों को आत्मसमर्पण करा उनसे छीने गये हथियारों को च्यांग काइ-शेक के हवाले करना शुरू किया। यही नहीं, मुक्त इलाकों के चारों ओर च्यांग की सेना के दस लाख से भी अधिक सैनिकों को उतारने में अमेरिका के हवाई विमानों और जहाजों ने बड़ी मुस्तैदी से काम किया। चुपचाप अपनी इच्छा पूरी करने या दिखावे के तौर पर च्यांग काइ-शेक ने कम्युनिस्ट पार्टी और दूसरी जनतांत्रिक पार्टियों तथा समूहों की माँगों को मान लिया और 10 जनवरी, 1946 को एक विराम-आदेश जारी कर उसने सभी पार्टियों तथा समूहों का एक राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन बुलाने का आवाहन किया। इसी के साथ-साथ अमेरिकी सरकार ने भी दिखावे के लिए युद्धविराम का प्रतिपादन किया और चीन के गृहयुद्ध में 'बीच-बिचाव' करने के लिए पैट्रिक हरले की जगह जेनरल जार्ज सी. मार्शल को भेजा। मार्शल जैसे दक्ष सेनापति को भेजने का मतलब बीच-बिचाव कराना नहीं, बल्कि च्यांग काइ-शेक की शक्ति को और मजबूत तथा संगठित करना था। यह सारा दिखावा था। 23 अगस्त को च्यांग ने पराजित जापानी सेना को किसी दूसरे के हाथ में हथियार न देने के लिए जो आदेश दिया था, काम उसी के अनुसार होता रहा। अमेरिकन, जापानी और च्यांग की सेनाएँ अब एक हो गई थीं, मंचूरिया और उत्तरी चीन में च्यांग की सेनाओं को अमेरिकन जलसेना और वायुसेना ढो रही थी, जिसमें अमेरिका के 30 करोड़ डालर खर्च हुए। जापानियों से हथियार लेने के बहाने उत्तरी चीन के बन्दरगाहों, रेलवे-केन्द्रों और मुख्य स्थानों पर अमेरिकन सेना पहुँची और उसने कुओ-मिन्तांगी आक्रमण के लिए अड्डे तैयार किये। कुओ-मिन्तांग के पास 12 लाख के 127 डिवीजन थे, अमेरिका के हथियारों द्वारा सुशिक्षित चीनी सेनाओं के अतिरिक्त 5 लाख जापानी सैनिक भी शामिल कर लिये गये थे। इतना ही नहीं, कितने ही स्थानों पर अमेरिकन जलसेना और वायुसेना ने भी कुओ-मिन्तांग के आक्रमण में भाग लिया। यह करके भी जब देखा गया कि जन-मुक्ति-सेना को पराजित नहीं किया जा सकता, तब भुलावे में डालकर उन्हें कमजोर करने की नीति अपनाई गई। अमेरिकन राजदूत हरले समझौता कराने के बहाने स्वयं येनान् गया और अमेरिका की ओर से गारंटी

देकर वह माओ चे-तुंग को अपने साथ चुंग-किंग ले गया। माओ अठारह वर्षों बाद पहली बार लालभूमि से बाहर निकले थे। चुंग-किंग में च्यांग काइ-शेक के साथ छः सप्ताह तक उनकी बातचीत होती रही। एक समझौता हुआ।

सम्मेलन में च्यांग काइ-शेक ने जब 'युद्ध रोको' की आज्ञा सुनाई और जनतांत्रिक स्वतन्त्रता, भाषण-प्रकाशन, सभाओं के लिए आजादी तथा सभी राजनीतिक दलों को समानता देने और राजबन्दियों के रिहा करने की घोषणा की, तो प्रतिनिधियों में बड़े उत्साह का संचार हुआ। तीन सप्ताह के विचार-विमर्श के बाद सम्मेलन ने सर्वसम्मति से पाँच प्रस्ताव स्वीकार करके अन्तरिम काल की सरकार, शान्तिपूर्ण निर्माण, राष्ट्रीय परिषद् बुलाने और सभी सेनाओं को एक राष्ट्रीय सेना के रूप में बदलने के सम्बन्ध में निश्चय किये। इसकी खबर सुनकर सारे चीन में आनन्द और उत्साह मनाया जाने लगा।

कम्युनिस्टों ने इसके बदले में शांघाइ और कान्तन के आसपास के 1 करोड़ 70 लाख की आबादी तथा 41 हजार वर्गमीलवाले मुक्त इलाकों को खाली करना स्वीकार कर लिया।

अमेरिकन और कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादी यही चाहते थे कि लोगों का ध्यान युद्ध की ओर से हट जाय। अमेरिका जिस तरह अरबों डालर चीन की भूमि में डाल चुका था, और 20 अरब डालर के मालिक चार परिवारों के जो स्वार्थ थे, उन्हें देखते हुए यह कब हो सकता था कि च्यांग देश में एक नये दौर का आरम्भ होने दे। कुओ-मिन्तांगी अधिकारियों ने समझौते पर हर्ष प्रकट करनेवाले लोगों की पिटाई से ही अपने काम को शुरू कर दिया। मार्च में कुओ-मिन्तांग की कार्यकारिणी समिति की बैठक हुई, जिसने सम्मेलन में सम्मिलित होकर पाँच प्रस्तावों के समर्थन करनेवाले अपने सदस्यों को खूब झाड़ा और उसके निर्णयों को मानने से इन्कार कर दिया। 1 अप्रैल, 1946 ई. को च्यांग ने घोषित किया कि समझौता और उसका विधान स्वीकार नहीं किया जा सकता और सरकार मंचूरिया को जरूर लौटायेगी।

लेकिन च्यांग काइ-शेक और अमेरिकन पूँजीशाही तो विश्वासघात का साकार रूप थी। हस्ताक्षर की स्याही अभी सूखी भी नहीं थी कि च्यांग ने कम्युनिस्टों पर हमला कर दिया और हस्ताक्षर होने के दो दिन बाद ही उसने अपने सेनापतियों के पास आक्रमण करने के लिए छुपे हुए आदेश भेज दिये। यांगची के दक्षिणी तट से लौटती जन-मुक्ति-सेना पर आक्रमण हुआ। होनान् में च्यांग ने कम्युनिस्टों के विरुद्ध तीन सेनाएँ भेजी थीं, जिनमें दो हार गईं और तीसरी ने गृहयुद्ध से हाथ हटा लिया। च्यांग की नई, आठवीं सेना अपने हथियारों और अफसरों सहित मुक्तिसेना से मिल गई–चार परिवारों और अमेरिकन थैलीशाहों के लिए कौन-सा चीनी देशभक्त अपना प्राण देने के लिए तैयार होता। इस हार ने बतला दिया कि उत्तरी चीन में कम्युनिस्टों को परास्त करना च्यांग के बस की बात नहीं है।

अमेरिका ने अब चाल को बदलना उचित समझा। हरले और जेनरल वेडमेयर को वापस बुला लिया और ट्रून के व्यक्तिगत दूत के तौर पर जेनरल जार्ज सी. मार्शल चीन में शान्ति-स्थापना करने के लिए भेजे गये।

(क) मार्शल की करामातें–मार्शल के सम्मान में शांघाइ के विद्यार्थियों ने भारी जलूस निकाला और 'गृहयुद्ध बन्द करो' के नारे लगाये। इस पर च्यांग की पुलिस ने विद्यार्थियों की खूब खबर ली। मास्को में अमेरिका, इंग्लैंड और रूस के विदेश मन्त्रियों का जो सम्मेलन हुआ था, उसमें स्वीकार किया गया था कि न चीन की एकता में और न उसके भीतरी मामलों में ही हस्तक्षेप किया जायगा। ट्रूमन ने इसके समर्थन में अपना एक वक्तव्य भी दिया। कुछ लोग मार्शल को शान्तिदूत मानने लगे थे। मार्शल ने ही च्यांग काइ-शेक से विराम आदेश पर हस्ताक्षर करवाया था। समझौते के अनुसार सभी दलों की राजनीतिक परामर्शदात्री समिति की बैठक प्रारम्भ हुई।

(2) गृह-युद्ध आरम्भ–च्यांग कांइ-शेक ने राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन के प्रस्तावों को फाड़कर रद्दी की टोकरी में फेंक जुलाई, 1946 से अपनी सारी ताकत लगाकर मुक्त इलाकों के खिलाफ चारों ओर से हमला शुरू कर दिया और एक के बाद एक वहाँ के कितने ही नगरों और विस्तृत देहाती जिलों पर कब्जा कर लिया।

इन इलाकों के ही नहीं, बल्कि कुओ-मिन्तांगी इलाकों के किसानों ने भी माओ चे-तुंग के नाम को वर्षों से सुन रक्खा था। वह बराबर मनाया करते थे : "एक दिन हमारा माओ आयेगा और तब निश्चय ही हमें इस नरक की जिन्दगी से छुटकारा मिल जायेगा।" चीन के अनपढ़ किसान माओ चे-तुंग और चे-तूह के नामों को एकसाथ जोड़कर चू-माउ कहा करते थे। एक बार च्यांग काइ-शेक ओमेइ पर्वत पर गर्मियों में विश्राम के लिए गया था। उस वक्त उन्होंने एक विश्वस्त अमेरिकन हितैषी को अपनी राइफलें दिखाकर कहा था : "उपयुक्त समय के लिए हम तैयार हैं। हमारे चू-माउ के नीचे जिन्दगी अच्छी है।" लाल इलाके के किसानों के दिलों में माओ कितने प्रिय थे, यह इसी से मालूम होगा, कि जब हरले माओ को अपने साथ हवाई जहाज में बैठाकर समझौते की बातचीत करने के लिए चुंग-किंग ले गया, उस समय एक किसान ने अमेरिकन महिला पत्रकार अन्ना लुइस्ट्रांग से कहा था : "जब हमारा माओ काफी दिनों तक चुंग-किंग से नहीं लौटा, तो हम सबको बड़ी चिन्ता हुई। यदि बदमाश च्यांग उसे वहीं रख ले, तब तो बड़ा ही अनर्थ हो जायेगा। हमारे माओ ने हमें जमीनें दी हैं, काम करना सिखलाया है और बताया है कि हम एक-दूसरे की किस प्रकार सहायता कर सकते हैं। माओ के बिना न हमारे जैसे किसान रहेंगे और न चुनाव होगा। सम्भव है जमींदार भी फिर लौट आयें। जब हम इस तरह चिन्ता में डूबे हुए थे, उसी समय हमारा एक दोस्त येनान् से दो दिन की यात्रा करके केवल हमें यह खुशखबरी सुनाने के लिए हमारे गाँव में आया कि हमारा माओ वापस आ गया है। उस दिन हमारी खुशी का ठिकाना न था। मैंने जाकर गाँव की पंचायत के सामने प्रस्ताव रक्खा कि हमें माओ और चू-तेह के लिए अलग कुछ जमीन रखनी चाहिए, क्योंकि हमारे चू-माउ दूसरे कामों में इतने व्यस्त रहते हैं, कि वह खेत में मेहनत करके अपने लिए अन्न नहीं पैदा कर सकते। सरपंच ने यह कहकर मुझे टाल दिया कि यह काम हमारा नहीं है। तब मैंने और गाँव के कमकर बिग्रेड ने कुछ फाजिल जमीन बोई, जिसमें ग्यारह बुशेल (6 मन के करीब) गेहूँ पैदा हुआ; आधा माओ के लिए और आधा चू-तेह के लिए। अब हमें संतोष है कि यह उन दोनों के लिए साल-भर के वास्ते पर्याप्त होगा।"

1947 में चू-निंग गाँव के किसानों ने जब सुना कि माओ के निवासस्थान येनान् पर च्यांग काइ-शेक हमला करने की सोच रहा है, तो उन्होंने माओ को लिखा :

"हमने सुना है कि गद्दार च्यांग तुम्हारे बासे येनान् पर हमला करने आ रहा है। किन्तु, उसे इसमें सफलता नहीं मिल सकेगी, क्योंकि धड़ों से अलग हो जाने पर भी हम लोगों के सिर उछल-उछलकर उससे टक्करें लेते रहेंगे। हमारे गाँव के बूढ़े और जवान सब तुमको अभिवादन भेजते हैं और तुम्हारे लिए एक लम्बे अत्यन्त स्वस्थ तरुण जीवन की कामना करते हैं।"

जुलाई, 1946 के आरम्भ में च्यांग ने जो एकाएक जन-मुक्ति-सेना पर हमला किया था, उसमें अमेरिकन सैनिक विशेषज्ञों की देखरेख में अमेरिकन हथियारों से सुसज्जित च्यांग की सेना ने कम्युनिस्टों के ऊपर अपना आक्रमण शुरू किया था। अब च्यांग काइ-शेक को खतम करने के सिवा और कोई चारा नहीं था, जिसके लिए गृहयुद्ध करना अनिवार्य हो पड़ा। कम्युनिस्ट जानते थे कि यह च्यांग नहीं, बल्कि अमेरिकन साम्राज्यवाद आक्रमण कर रहा है, इसलिए हमें अमेरिका से भी लोहा लेना पड़ेगा। अमेरिका के इस तरह खुलकर मदद देने से चीन के लोगों को भी च्यांग का देशघाती रूप प्रकट हो गया, जोकि अभी उसके यहाँ तक जाने की आशा नहीं रखते थे। जहाँ तक देश की भीतरी शक्तियों का सम्बन्ध था, अब च्यांग उनसे अलग हो गया था। दुश्मन की सैनिक श्रेष्ठता और अमेरिकन मदद का असर स्थायी नहीं होगा, यह बात कम्युनिस्टों को मालूम थी। साथी माओ चे-तुंग ने च्यांग को हराने के लिए एक ठीक सैनिक नीति निर्धारित की, जिसका मुख्य उद्देश्य था नगरों और इलाकों की रक्षा करने की जगह दुश्मन की सैन्यशक्ति को खतम करना। ऐसा करने के लिए यह जरूरी था कि हरेक लड़ाई के लिए पूरी तरह से तैयारी की जाय, जिसमें जीत निश्चित हो जाय। दुश्मन को घेरकर पूरी तरह उसका सफाया करने के लिए बहुत भारी तथा जबर्दस्त–दुश्मन की सेना से कई गुना ताकतवाली–सेना की जरूरत थी; इसलिए जिन लड़ाइयों के लिए पूरी तौर से तैयारी नहीं की गई हो, और जिनमें जीत संदिग्ध हो, उनसे बचना था। इस नीति पर अमल करते हुए जन-मुक्ति-सेना गृहयुद्ध के आरम्भ

में कितने ही नगरों और बस्तियों से हट गई, लेकिन साथ ही उसने कुओ-मिन्तांग की सेना को भारी संख्या में नष्ट कर दिया। प्रतिमास आठ पलटनों की औसत से उसने सैनिकों का सफाया किया और युद्ध-बन्दियों को फिर से शिक्षित करने के बाद उन्हें अपनी सेना में ले अपनी शक्ति को बढ़ाया। इस प्रकार, जन-मुक्ति-सेना दिन पर दिन मजबूत होती गई और कुओमिन्तांगी सेना कमजोर। आठ महीनों के संग्राम के बाद जब च्यांग ने अपनी सैनिक शक्ति का भारी नुकसान देखा, तो उसने चारों ओर से हमला करने की नीति को छोड़कर 'घने और गहरे' हमलों की नीति अपनाई। शान्तुंग और उत्तरी शान्सी में 'घने' हमले किये गये। लेकिन भारी लड़ाई के बाद जन-मुक्ति सेना ने शान्तुंग और उत्तरी शान्सी में इन हमलों को चकनाचूर कर दिया। साथ ही, उसने उत्तर-पूर्वी चीन में, शान्सी-चहार-होपेइ क्षेत्र में, शान्सी-होपेइ-शान्तुंग-होनान क्षेत्र में जन-मुक्ति-सेना ने रक्षात्मक युद्ध के बदले जवाबी आक्रमण पहले-पहल शुरू किया। वह ह्वांग हो (पीली नदी) को पार कर उसके दक्षिण तट पर पहुँच यांग ची नदी के उत्तरी तट की ओर बढ़ चली। उसके बाद उत्तर-पूर्वी चीन के दूसरे मोर्चों पर भी जन-मुक्ति-सेना ने बड़े पैमाने पर हमले शुरू कर सभी मोर्चों पर युद्ध की स्थिति में मौलिक परिवर्तन कर दिया।

(3) **भीषण आक्रमण**—1946 की जुलाई में अमेरिकन सहायता के बल पर च्यांग ने बड़ी तत्परता के साथ कम्युनिस्टों पर आक्रमण किया। संख्या और हथियार दोनों में अपनी सेना को कम्युनिस्टों से चौगुनी देखकर वह फूला नहीं समाता था। एक वर्ष तक वह उसी तरह आँख मूँदकर अपनी सेना को मरवाता हमले करता रहा। एक वर्ष के बाद च्यांग की सेना 43 लाख से 37 लाख और उसमें भी बाकायदा सेना 20-30 लाख से 15 लाख रह गई। उसके 248 ब्रिगेडों में से लड़नेवाली मोर्चे पर 40 ही रह गये। लेकिन, जन-मुक्ति-सेना बढ़कर 19 लाख हो गई, जिसमें 10 लाख बाकायदा सैनिक थे। यद्यपि च्यांग की सेना की संख्या अब भी अधिक थी, लेकिन वह सेना क्या लड़ सकती है, जो हिम्मत हार चुकी है, जिसे भविष्य की आशा नहीं। कुओ-मिन्तांग के पश्चात् भाग के इलाकों में लोगों को दबाने को अब उसकी कोई सेना नहीं रह गई। जगह-जगह गोरिल्ला छापे मारने लगे, और जनता में असंतोष की आग भड़कने लगी। सिवा नौकरशाही पूँजीपतियों के चीनी जनता के सभी वर्ग च्यांग को अब फूटी आँखों नहीं देखना चाहते थे। सभी लोग कम्युनिस्टों की जय मनाते थे, इसलिए उनके पश्चात् भाग की रक्षा करने के लिए जनता स्वयं तैयार थी। च्यांग और अमेरिका की कृपा से अब जन-मुक्ति-सेना के पास नये से नये अमेरिकन हथियार भारी परिमाण में मिल गये थे। जन-मुक्ति-सेना को जनता से कोई खतरा नहीं, बल्कि पूरी सहायता की आशा थी, इसलिए वह निडर थी। वह जनता को और हथियार दे-देकर हथियारबन्द कर रही थी।

युद्ध के आरम्भ में जो जीतें प्राप्त हुई थीं, उनके कारण अमेरिकन साम्राज्यवादियों और च्यांग काइ-शेक का दिमाग सातवें आसमान पर पहुँच गया था। 11 अक्टूबर, 1946 को च्यांग की सेना ने उत्तरी चीन के मुक्त इलाकों के महत्त्वपूर्ण नगर कलगन पर कब्जा कर लिया। उसी दिन दोपहर को च्यांग काइ-शेक ने राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन के प्रस्तावों को रद्द कर एक तानाशाही झूठी 'राष्ट्रीय एसेम्बली' के आयोजन पर फरमान जारी कर दिया। विशेष अमेरिकन-दूत मार्शल और अमेरिकन राजदूत लैटन स्टुअर्ट की मदद से 15 नवम्बर को इस नकली राष्ट्रीय एसेम्बली का उद्घाटन हुआ, जिसने एक नकली 'विधान' मंजूर किया। च्यांग काइ-शेक ने यह कदम उठाकर अपने हाथों अपने पैरों में कुल्हाड़ी मारी। अब जनता की जनतंत्रता की माँग के पूरा होने की कोई आशा नहीं रह गई।

दिसम्बर, 1946 में पार्टी की केन्द्रीय समिति ने नई जीत की तैयारी के लिए उत्तरी शेन्सी में एक कान्फरेंस बुलाई, जिसमें साथी माओ चे-तुंग ने 'वर्तमान स्थिति और हमारे कार्य' के बारे में एक रिपोर्ट पेश करते हुए कहा : "चीन की जनता का क्रान्तिकारी जीवन एक मोड़ पर पहुँच गया है—ऐसे मोड़ पर, जिसका आरम्भ चीन में सौ साल से भी पुराने साम्राज्यवादी शासन के विकास की समाप्ति से होता है।" माओ ने सैनिक, आर्थिक और कृषि-सम्बन्धी समस्याओं और जवाबी हमले की स्थिति में पहुँचे क्रान्तिकारी युद्ध के काल में पार्टी के सामने आये संयुक्त मोर्चे की समस्याओं का बारीकी से विश्लेषण किया। उन्होंने उन गलतियों को जिन्होंने

भूमि-सुधार-आन्दोलन के समय उद्योग और व्यापार पर क्षति पहुँचाई थी, ध्यान में रखते हुए अपनी रिपोर्ट में पार्टी के आर्थिक कार्यक्रम की जोरों के साथ पुष्टि की। वह कार्यक्रम था :- "सामन्ती वर्ग की जमीन को जब्त करके किसानों में बाँटना, नौकरशाही पूँजी को जब्त करके उसे नई जनवादी सरकार की पूँजी में बदल देना और तमाम राष्ट्रीय उद्योगों तथा व्यापार की रक्षा करना।" उन्होंने पार्टी के उन कार्यकर्ताओं की कड़ी आलोचना की, जिन्होंने मझोले और निम्न पूँजीवादी तत्त्वों के प्रति अत्यन्त 'वामपक्षी' नीति अपनाई थी। माओ ने बताया कि जब्त हुई नौकरशाही-पूँजी से बना और सारे राष्ट्र के आर्थिक-संचालन का नियंत्रक समाजवादी स्वरूपवाला विराट् राजकीय अर्थतंत्र निर्णायक महत्त्व की चीज होगा, और वह जनता के राज्य के आर्थिक जीवन में अत्यन्त प्रमुख स्थान रखेगा। इसलिए, मझोले और निम्न-पूँजीवादी आर्थिक तत्त्वों का रहना जरूरी ही नहीं, बल्कि उनसे डरने का भी कोई कारण नहीं है। इस कान्फरेंस और इस काल में पार्टी के बहुमुखी कार्यों के कारण पार्टी अपनी ओर से राष्ट्रव्यापी विजय के वास्ते जनता का पथ-प्रदर्शन करने के लिए अच्छी तरह से तैयार हो गई।

मार्च, 1947 में कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादियों ने नानकिंग, शांघाइ और तुंग-किंग से अपने प्रतिनिधिमण्डलों को वापस बुलाने के लिए कम्युनिस्ट पार्टी को बाध्य कर दिया।

इसके बाद कुओ-मिन्तांगी सेनाओं ने आक्रमण करके येनान् पर अधिकार कर लिया। लाल राजधानी पर अधिकार करने के बाद च्यांग ने घोषित किया : "चीन में साम्यवाद का अन्त अब हाथ में है।"

लेकिन, इस तरह गाल बजाकर च्यांग कई बार साम्यवाद का अन्त कर चुका था और हर दूसरी बार जब उसे मुकाबला करना पड़ा, तो उसे कम्युनिस्ट पहले से भी अधिक शक्तिशाली मिले। शायद वह जानता ही होगा कि माओ चे-तुंग नगरों और कस्बों की रक्षा करने की चिन्ता नहीं कर रहे हैं, वह च्यांग के हाथ-पैरों को काटना चाहते हैं, और वह काटना बराबर हो रहा है।

जिस समय च्यांग अपनी विजय-दुन्दुभी बजाने में लगा था, उसी समय चार महीनों में कम्युनिस्टों ने उसकी सेना पर ताबड़तोड़ हमले किये। जुलाई, 1946 से फरवरी, 1947 तक के आठ महीनों में च्यांग के 7 लाख 10 हजार सैनिकों का सफाया हो गया। उसने एक सौ पाँच नगरों पर अधिकार कर लिया था। इसके कारण उसे प्रत्येक नगर पर औसतन 7 हजार सैनिकों को मरवाना पड़ा। अब उसके पास आक्रमण करने के लिए 117 ब्रिगेडों में केवल 85 ही बच रहे थे। इस पराजय का असर उसके सैनिकों पर बुरा पड़ा। कुओ-मिन्तांगी सेना के अफसर और सिपाहियों के सम्बन्ध भी अच्छे नहीं थे।

(4) उतार-चढ़ाव—चीनी जनता, जिसमें राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग भी शामिल था, अब केवल कम्युनिस्ट पार्टी से ही भलाई की आशा रख सकती थी। राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग अभी कम्युनिस्ट और कुओ-मिन्तांग से अलग एक नई तीसरी शक्ति पर आशा लगाये बैठा था। इस विचारधारा के समर्थक थे राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग के दक्षिणपंथी। कुओ-मिन्तांग के क्रान्तिकारी दलों, चीन की जनतांत्रिक लीग, चीन के जनवादी राष्ट्र-निर्माण संघ तथा दूसरी जनतांत्रिक पार्टियों, समूहों तथा जननायकों ने कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादियों के साथ सहयोग देने से इन्कार कर दिया। उन्होंने नकली राष्ट्रीय-सभा (एसेम्बली) में हिस्सा लेने या च्यांग की सरकार में शामिल होने के बुलावे को ठुकरा दिया। अमेरिकन सैनिकों ने एक चीनी छात्रा पर बलात्कार किया था, जिसके कारण 1946 के अन्त और 1947 के प्रारम्भ में सारे छात्रों ने जबर्दस्त प्रदर्शन किया। मई, 1947 में उन्होंने भुखमरी, गृहयुद्ध और दमन के खिलाफ प्रदर्शन किये। भिन्न-भिन्न जगहों के मजूरों और किसानों ने कुओ-मिन्तांग के खिलाफ संघर्ष को और आगे बढ़ाया।

1947 की जुलाई से मुक्ति-सेना ने रक्षात्मक-युद्ध की नीति को छोड़कर आक्रमणात्मक युद्ध की नीति अपनाई। अमेरिकन भी च्यांग की हारों से चिन्तित हो गये, क्योंकि उन्होंने च्यांग के बल पर अरबों डालर दाँव पर लगा रक्खे थे। उन्होंने जेनरल वेडमेयर के नेतृत्व में एक 'चीन मिशन' भेजा। इस सैनिक सलाहकार मिशन ने संकट से पार करने के लिए एक गुप्त योजना बनाई। च्यांग की सेना की मदद के लिए और भी अधिक अमेरिकन सैनिक विशेषज्ञ आये। इन नये सर्वज्ञों ने च्यांग को सलाह दी : प्रत्येक युद्ध में इतने सिपाही लगा दो कि शत्रु की ताकत एकदम कम हो जाय—जिसका अर्थ है शत्रु की सेना से दुगुनी, तिगुनी, चौगुनी

और कभी-कभी पाँच या छह गुनी सेना लगाकर शत्रु को चारों ओर से घेर लो, फिर ऐसा प्रयत्न करो कि जाल में से शत्रु का एक भी आदमी बचकर निकलने न पाये और सब-के-सब खतम हो जायँ। ऐसी लड़ाई न लड़ो, जिसमें अपना नुकसान ज्यादा हो और दुश्मन का कम या हानि-लाभ बराबर हो। लड़ाई छेड़ने से पहले बड़ी मेहनत के साथ तैयारी और ऐसी स्थिति पैदा कर दो, जिसमें शत्रु के विरुद्ध हमारी शक्ति इतनी रहे कि हमारी जीत निश्चिंत हो जाय।

गृह-युद्ध के पहले चार महीनों की अस्सी लड़ाइयों में कम्युनिस्टों ने कुओ-मिन्तांग के तीन लाख सैनिकों को बेकार कर दिया, लेकिन च्यांग ने अपनी आरंभिक जीतों की खुशी में हमला करनेवाले सैनिकों की संख्या बढ़ा दी, उसका 150 शहरों पर अधिकार हो गया। मारे खुशी के उसने नकली राष्ट्रीय सभा को बुलाकर देश का नया संविधान बनाने के लिए कहा।

10 अक्तूबर, 1947 को जन-मुक्ति-सेना ने एक घोषणा जारी की, जिसमें च्यांग काइ-शेक के तख्ते को उलटने और नये चीन के निर्माण के लिए चीनी जनता का आवाहन किया गया था। उसी दिन किसानों की युगों पुरानी जमीन की माँग को पूरा करने के लिए पार्टी ने कृषि व्यवस्था का आधारभूत कार्यक्रम जनता के सामने रक्खा, जिसमें सामन्ती शोषण पर आधारित जमीन की मिलकियत की पुरानी प्रणाली को खतम करने और जोतनेवालों को जमीन देने की नई प्रणाली को चालू करने की घोषणा की गई। भूमि-सुधार की प्रगति ने मुक्त इलाकों के किसानों को पूरी तरह सजग कर दिया। जमींदार वर्ग को खतम कर देने के कारण इन इलाकों की मजबूती बहुत बढ़ी और मुक्ति-युद्ध में उनसे बड़ी सहायता मिली।

च्यांग ने बौखलाकर अपनी 80 सैकड़ा सेना को मुक्त इलाकों के ऊपर भेज दिया। वह समझता था, इस प्रकार एक ही धावे में वह जन-मुक्ति-सेना का गला घोंट देगा। च्यांग की 16 लाख सेना मुक्त इलाकों में घुसने लगी। जन-मुक्ति-सेना ने तुरन्त रक्षात्मक लड़ाई की नीति स्वीकार की : "अगर तुम सैनिकों को बचाकर जमीन को खो देते हो, तो भूमिं पुनः प्राप्त की जा सकती है, किन्तु यदि तुम भूमि को बचाने में सैनिकों को खो देते हो, तो तुम भूमि और सैनिक दोनों को खो दोगे।" जन-मुक्ति-सेना ने हर छोटे-बड़े नगर की रक्षा के लिए लड़ना नहीं अच्छा समझा। उसने इस प्रकार च्यांग की सेना को विशाल भूभाग में फैल जाने दिया, और फिर इस पतली तह पर बारी-बारी से आक्रमण करना शुरू किया। माओ ने कहा था : "पहले शत्रु के फैले हुए छिटपुट दस्तों पर आक्रमण करो, बाद में उनकी खबर लो, जो ज्यादा शक्तिशाली मालूम होते हैं।" च्यांग की सेना को गोरिल्ले भी दिन-रात हैरान करते रहते थे। इसके कारण अब च्यांग को आक्रमण की नीति छोड़ हाथ में आये स्थानों के बचाने की कोशिश करनी पड़ी। इसी समय मार्च में (1947 ई.) च्यांग ने लाल राजधानी येनान् पर अधिकार कर लिया। च्यांग और उसके अमेरिकन संरक्षक और गुरु विजय के उपलक्ष्य में प्याले पर प्याले ढाल रहे थे; लेकिन इससे पहले ही लाल-सेनापति पेंग ते-ह्वाइ ने कह दिया था कि यदि "च्यांग का येनान् पर अधिकार होता है, तो उससे उसका पतन आरम्भ होता है। यदि हम इसी चाल से सेनाओं को घेरते और नष्ट करते रहेंगे, तो शरद् तक हम सारे मोर्चों पर जवाबी हमला आरम्भ कर देंगे।"

लड़ाई अब गोरिल्ला-लड़ाई की जगह दाँव-पेंच की लड़ाई हो चुकी थी। च्यांग के शिक्षित सैनिक अपने अमेरिकन हथियारों को लिये हुए भारी संख्या में जन-मुक्ति-सेना से मिलते गये और वह जमकर लड़ने लगी।

5. विजय-प्रवाह (1947-49 ई.)

जन-मुक्ति-सेना सैलाब की तरह बढ़ने लगी। वह जमकर लड़ने, शहरों को घेरने और शत्रु का भीषण संहार करने लगी। शान्तुंग प्रदेश की विजय के समय लाल-जेनरल चेन् यी ने एक अमेरिकन पत्रकार से कहा था, "हमारे पास राइफलें ही थीं, इसीलिए हम उन्हीं का सब तरह से उपयोग करते रहे। अब हमारे पास अमेरिकन टैंक और तोपें भी आ गई हैं, जिनका हम इस्तेमाल सीख रहे हैं। अगर हमारे पास केवल छुरी ही होती, तो उनके बहुत बढ़िया और सभी तरह से इस्तेमाल करने का ढंग सीखते। यद्यपि हम उन्हें आजकल के आधुनिक शस्त्रास्त्रों से लैस सेना के विरुद्ध युद्धभूमि में इस्तेमाल नहीं कर सकते, लेकिन अन्त में तो शत्रु को छोटी-छोटी

टुकड़ियों में ही हमारे गाँव में आना पड़ता, जहाँ हम छुरों का भी इस्तेमाल कर सकते थे।"

(1) पासा पलटा—च्यांग की सेना के संहार के साथ-साथ अब जन-मुक्ति-सेना ने फिर नगरों और कस्बों पर अधिकार करना शुरू किया। जिन बड़े-बड़े शहरों में शत्रु की सेना बचाव की पूरी तैयारी के साथ मौजूद थी, उन्हें चारों ओर से घेर लिया गया। च्यांग के हाथ में चले गये प्रदेशों को फिर मुक्त किया जाने लगा। जुलाई से दिसम्बर (1947 ई.) तक के सात महीनों में ही च्यांग के साढ़े सात लाख सैनिक खतम कर दिये गये। अमेरिकन सैनिक गुरुओं के सारे दाँव-पेंच विफल गये। अब उनकी सलाह पर च्यांग ने अपने युद्धवाले इलाकों को बीस भागों में बाँटकर हरेक भाग की रक्षा के लिए सेनापति नियुक्त कर दिये—जो वहाँ कुओ-मिन्तांग, राज्य और सेना के संयुक्त तानाशाह थे। च्यांग की सेना ने घिरे हुए बहुत-से नगरों को छोड़ने में ही खैरियत समझी, और उसने महत्त्ववाले नाकों तथा यातायात के केन्द्रों को अपना अड्डा बनाया। सात महीने तक यह नई युद्धनीति चलती रही, लेकिन जन-मुक्ति-सेना के सामने उसका भी दिवाला निकल गया। च्यांग ने इसी समय अपनी नकली राष्ट्रीय सभा के सामने गाल बजाते हुए कहा : "मैं छह महीने के भीतर ह्वांग-हो नदी के दक्षिण में कम्युनिस्टों का एक भी आदमी रहने नहीं दूँगा।" हारों पर हार खाती हुई अपनी सेना से क्रुद्ध होकर वह स्वयं युद्ध-संचालन के लिए मोर्चे पर गया, और पहली लड़ाई में ही उसके 54 हजार सैनिक जन-मुक्ति-सेना के बन्दी बन गये। कुछ ही दिनों बाद उसकी सेना येनान् खाली करके भाग गई।

1947 में जेनरल लिन् पियाओ के नेतृत्व में जन-मुक्ति-सेना ने मंचूरिया में भी जबर्दस्त प्रत्याक्रमण कर दिया। मंचूरिया में अपने जहाजों और विमानों द्वारा ढो-ढोकर अमेरिका ने कुओ-मिन्तांग की सेनाओं को पहुँचाया था, और समझा था कि इस तरह चीन का यह अत्यन्त समृद्ध प्रदेश अब कम्युनिस्टों के हाथ में नहीं जाने पायेगा। लेकिन, लिन् पियाओ के आक्रमण से वहाँ कुओ-मिन्तांग की सेना का सर्वनाश होने लगा। पहले 90 दिनों में ही डेढ़ लाख सेना खतम कर दी गई, 17 नगर मुक्त कर लिये गए, 61 लाख आबादीवाली 19 हजार वर्ग-किलोमीटर धरती पर लालझंडा फहराने लगा। च्यांग के हाथ में अब मंचूरिया का सौवाँ हिस्सा ही रह गया। चांग चुन् और मुकदन् नगर को जन-मुक्ति-सेना ने घेर लिया। सितम्बर में इन नगरों की ओर जानेवाले रास्तों पर अधिकार करके हमला करके 2 नवम्बर को मंचूरिया के इन दो महान् नगरों को ले लिया। अब सारे मंचूरिया से च्यांग की गुड्डी कट गई, जिसको अपने हाथ में करने के लिए च्यांग ने अपनी पौने 5 लाख सेना नष्ट की।

अब च्यांग के पास 29 लाख ही सैनिक रह गये थे, जबकि जन-मुक्ति-सेना की संख्या 30 लाख से ऊपर हो गई थी।

अगले दो महीनों में च्यांग ने अपने पाँच लाख सैनिक और खोये और फिर यांग-ची से दक्षिण भागने लगा। दिसम्बर 5 से 21 जनवरी, 1948 तक पेकिंग, कलगन और तियान्चिन् के बीचवाले चीन के महत्त्वपूर्ण प्रदेश के लिए जबर्दस्त युद्ध हुए। च्यांग की उत्तरी चीनी सेना का सेनापति फू चो-यी स्वयं जन-मुक्ति-सेना से जा मिला। पेकिंग में बिना खून-खराबी के ही लालझंडा गाड़ दिया गया, तियान्चिन् और कलगन जन-मुक्ति-सेना के हाथ में आ गये। इसी युद्ध में च्यांग की 5 लाख से ऊपर सेना नष्ट हुई। अब च्यांग की सैनिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति खराब हो गई। कुओ-मिन्तांगी नेता इन हारों के लिए एक दूसरे को जिम्मेवार ठहराने लगे। अपनी आपसी फूट बहुत बढ़ गई और उधर सारे मंचूरिया, उत्तरी चीन और मध्य चीन को मुक्त करके अब जन-मुक्ति-सेना यांग-ची नदी के उत्तरी तट पर पहुँचकर जयनाद करते हुए बोलने लगी : "तातू के वीरो ! यांग-ची पार करो, चलो नानकिंग।"

(2) फिर समझौते का ढोंग—च्यांग और उनके देवता कूच बोल गये। अमेरिकन सैनिक सर्वज्ञ और नये-से-नये हथियार बेकार गये। हथियारों के बारे में कहना चाहिए, वह अब ठीक हाथों में आ गये। कोई दूसरी आशा न देख फिर भाई का खून न बहाने तथा शान्तिपूर्वक नये चीन के निर्माण के लिए आँसू बहाया जाने लगा। च्यांग ने सरकार के अध्यक्ष पद से त्यागपत्र दे दिया, फिर पहले डा. सुन् फौ फिर ली सुंग जेन् की अध्यक्षता में नई सरकार बनी। डा. सुन् ने जनता से अपील करते हुए कहा कि गृहयुद्ध को समाप्त करके शान्ति स्थापित

की जाय। इसके साथ ही उसने च्यांग काइ-शेक और अमेरिका के शान्ति-दूतों मार्शल और वेडमेयर की प्रशंसा करने में भी कोई कसर नहीं रक्खी। उसने चीन की स्वाधीनता और जनता के हितों की रक्षा के लिए कम्युनिस्टों से सुलह करने के वास्ते सैनिक कार्रवाई बन्द करने के लिए अपील की। कम्युनिस्ट अनेक बार धोखा खा चुके थे, लेकिन वह पक्के खिलाड़ी थे। कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादी और अमेरिकन थैलीशाह उनको धोखा नहीं दे सकते थे। शान्ति के लिए बातचीत करके वह जनता को और भी अपने पक्ष में करने की आशा रखते थे। उन्होंने जनतांत्रिक शान्ति के लिए आठ शर्तें रक्खीं, जिनमें से पहली शर्त थी च्यांग और दूसरे युद्ध-अपराधियों को हमारे हाथ में दे दो। लेकिन, च्यांग और उनके अमेरिकन सलाहकार जनतांत्रिक शान्ति क्यों पसन्द करने लगे। चार महीने की बातचीत के बाद प्रयत्न विफल गया। इस सारे समय को जन-मुक्ति-सेना ने यों ही न खो अपनी तैयारियाँ और भी ज्यादा मजबूत कीं।

जिस समय कुओ-मिन्तांगियों ने फिर सुलह का अभिनय शुरू किया, उस समय किसी तरुण सैनिक ने यांग-ची के किनारे माओ से बात करते हुए कहा : "यह तो उनका धोखा है।" "अध्यक्ष माओ, दुश्मन साँस लेना चाहता है, जिसमें अपनी टूटी-फूटी हरावल को ठीक करके फिर आक्रमण शुरू करे।"–दूसरे जवान ने भी कहा।

"तो क्या हम भी इससे फायदा उठा अपने को ताजा नहीं कर लेंगे ?" माओ ने कहा और फिर पहले जवान की पीठ पर थपथपाते हुए वह गम्भीरता से बोले :

"पार्टी इनके धोखे में नहीं आयेगी। लेकिन, उसे तुम्हारे जैसे नौजवान के साथ अत्यन्त प्रेम है। तीन-तीन क्रान्तियों के भीतर से तपकर निकले जवानों की जान बहुत कीमती है। इसे राष्ट्र के नव-निर्माण में खर्च करना है। हम रण में उन्हें झोंकने के लिए तैयार नहीं हैं; यद्यपि जरूरत पड़ने पर चीन एक नहीं, बहुत-से सपूतों की बलि देने को तैयार है।"

एक बार माओ के सेना में आने से जवानों में सब जगह बड़ी स्फूर्ति दिखाई पड़ रही थी। सभी अनिमिष नयन से अपने नेता के लिए श्रद्धा के फूल चढ़ा रहे थे। इसी समय माओ बोल उठे :

"देखो महादानी अमेरिका ने अपने क्वार्टर-मास्टर जेनरल (महाभण्डारी) के हाथों तुम्हारे लिए क्या भेंट भेजी है ?"

फिर 'लकी स्ट्राइप' नामक अमेरिकन सिगरेट का पुलिन्दा मोटर में से निकालकर माओ ने सैनिकों के सामने रक्खा। जन-मुक्ति-सेना च्यांग काइ-शेक की सेनाओं को हराते समय जहाँ तरह-तरह के हथियार प्राप्त करती, वहाँ सिगरेट और खाने-पीने की चीजों का भी भारी भण्डार उसके हाथ में आता। जन-मुक्ति सैनिक मजाक करते हुए च्यांग काइ-शेक को अपनी सेना का क्वार्टर-मास्टर जेनरल कहा करते। सिगरेट सैनिकों में बँटने लगे। इसी समय माओ ने अपनी जेब में से अमेरिका का बना लाइटर निकालकर सिगरेट सुलगाते हुए कहा, "हम बहुत जल्दी अप-टु-डेट बनने लगे।" फिर लाइटर को सैनिकों को दे माओ चले गये।

कुछ दिनों बाद नानकिंग से आये प्रतिनिधियों से बातचीत करके सुलह का मसौदा तैयार हुआ, जिसे दोनों पक्षों ने मंजूर किया।

(3) **च्यांग-ची के दक्षिण**–17 अप्रैल, 1947 को माओ चे-तुंग ने मुक्ति-सेना को आदेश दिया–"सारे चीन को मुक्त करो।" यांग-ची के किनारे साढ़े तीन सौ मील तक सेना उतारने की तैयारी होने लगी। इस महानदी का पाट कहीं-कहीं दो मील चौड़ा था। मुक्ति-सेना के पास नदी पार करने के साधन नाममात्र के थे–लकड़ी बाँधकर बने बेड़े, मछुओं की पुरानी नावें और बजरे। लेकिन उससे क्या, जन-मुक्ति-सेना के पास अपार साहस और उसके नेताओं के पास अद्भुत प्रतिभा थी। वह एक मिनट भी देर करने के लिए तैयार नहीं थी। 20 अप्रैल को सूर्य उधर क्षितिज से नीचे डूब गया और इधर यांग-ची की धारा पर से पार होनेवाले मुक्ति-सैनिकों का ताँता बँध गया। तिंग से उन्होंने पार उतरना शुरू किया। आकाश में से शत्रु के विमान एकाध बम गिराकर चले गये। उन्हें क्या पता था कि साढ़े तीन सौ मील तक सारी नदी पर माओ की सेना ही बड़ी तेजी से दक्षिणी तीर पर उतर रही है। एक दिन में माओ की 32 लाख की सेना यांग-ची पार हो उसके दाहिने किनारे

पर पहुँच गई। वह एक के बाद एक शहरों को लेते च्यांग की सेना का सर्वसंहार करने लगी। माओ की जन्मभूमि दक्षिणी चीन की जनता ने स्वयं अपना जबर्दस्त अभियान खूनी च्यांग काइ-शेक के खिलाफ शुरू कर दिया था। वहाँ के शोषक जमींदार और दूसरे अत्याचारी जान लेकर भाग रहे थे। च्यांग के कितने ही जेनरल अपनी सेना सहित आकर मुक्ति-सेना में मिल गये।

(क) नानकिंग पर अधिकार—23 अप्रैल को च्यांग की राजधानी और चीन का एक ऐतिहासिक महानगर नानकिंग पर लाल ध्वजा फहराने लगी। फिर अन्-ह्वेई प्रदेश की राजधानी आनकिंग पर अधिकार हुआ। फिर वू-सी, वू-हू, कियान्-गिन् मुक्त किये गये। आठ महीने में सारा दक्षिणी चीन च्यांग की काली छाया से मुक्त हो गया।

(ख) शांघाइ की मुक्ति—28 अप्रैल, 1949 का दिन आया। शांघाइ के हवाई-अड्डे लुनदुआ में भागनेवालों की असाधारण भीड़ थी। स्टेशन के आसपास सैनिकों ने घेरा डाल दिया था। जन-मुक्ति-सेना शांघाइ के पास पहुँच गई थी। सेठ और धनी लोग देश छोड़कर भाग रहे थे। इनमें से कितने ही पिछले साल उत्तर चीन से भागकर चुंग किंग गये थे, फिर वहाँ से नानकिंग भागे। वहाँ भी जब लाल खतरा मालूम हुआ, तो कान्तन् और शांघाइ पहुँचे थे। अब चीन की खूँखार जोंकों के लिए देशों में स्थान नहीं रह गया था। च्यांग काइ-शेक के हुकुम के अनुसार शांघाइ छोड़कर भागनेवाले मिल-मालिकों ने कारखानों की मशीनों को तुड़वाने की कोशिश की, लेकिन वहाँ के मजूरों ने कोई न कोई उपाय करके मशीनों को दुरुस्त रक्खा, क्योंकि अब मिलें मालिकों की नहीं, बल्कि राष्ट्र की थीं। अखिल चीन मजूर-संघ का वचन मानकर शांघाइ से मजूरों ने शहर के यातायात के साधनों, डाक-तार, टेलीफोन आदि को चालू रखा। कुओ-मिन्तांगी अफसर बैंकों में से सोना-चाँदी, रतन-जवाहर लेकर चम्पत हो गये थे। पोत या तो फारमोसा (ताइवान्) चले गये थे या नदी के गर्भ में डुबा दिये गये थे, लेकिन मजूरों ने बन्दरगाह को तोड़ने नहीं दिया। तीसरे दिन मुक्ति-सेना शहर में दाखिल हुई। वहाँ के बचे हुए व्यापारी मिठाई और उपहार लेकर मुक्ति-सेना के सामने उपस्थित हुए। लेकिन वे च्यांग काइ-शेक के लुटेरे सैनिक नहीं बल्कि माओ के सर्वस्वत्यागी रणबाँकुरे थे। इन्होंने इन भेंटों को नजर तक उठाकर नहीं देखा। शांघाइ के बनियों को आश्चर्य हुआ। अगले दिन मुक्ति-सेना ने सारी शांघाइ में घोषणा कर दी : "सभी नागरिकों के जान-माल की रक्षा की जाएगी। निजी मिलों, व्यापारिक कोठियों, सार्वजनिक उपयोग की चीजों, विद्यालयों, अध्यापकों, पूजा-स्थानों और पुरोहितों की रक्षा की जाएगी। देशद्रोहियों के साथियों तथा चीन के कानून को तोड़नेवालों को छोड़कर बाकी सभी परदेसियों की रक्षा की जायगी।

"च्यांग, सुंग, कुंग तथा चेन् की चण्डालचौकड़ी की मिलकियत तथा कुओ-मिन्तांग सरकार की मिलकियत जब्त की जायगी। हथियार और गोला-बारूद जमा करना मना है। मुक्ति-सैनिकों को जनता के पास से बिना दाम के कोई चीज लेना मना है।"

पहले जो आतंक छाया हुआ था, वह मुक्ति-सेना के रवैये से जल्दी ही हट गया। फिर तो व्यापारियों ने अपनी दुकानें खोल दीं, टूटी-फूटी मोटरों में बैठ लड़के खेल खेलने लगे, सड़कों पर बँधे हुए मोर्चे हटा दिये गये और वहाँ मुक्ति-सेना अपने लोकप्रिय नृत्य 'यंग-को' करके जनता का मनोरंजन करने लगी।

शांघाइ पहले से भी सजीव हो उठी, वहाँ के करोड़पति सेठों और धनी गद्दारों के भाग जाने से उसकी चहल-पहल में कोई कमी नहीं आई। च्यांग काइ-शेक के शासन में एक जोड़ा बूट का दाम पाँच लाख डालर तक हो गया था, उसके सिक्के की कीमत कौड़ी के बराबर हो गई थी। नई सरकार ने कुओ-मिन्तांग के एक लाख डालर के बदले में अपना नया एक डालर देना स्वीकार किया।

चू-तेह का सिंहावलोकन—जन-मुक्ति-सेना के प्रधान-सेनापति चू-तेह ने 1951 में चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के 30वें जन्मोत्सव के समय भाषण देते हुए च्यांग काइ-शेक को किस तरह माओ चे-तुंग के नेतृत्व में कम्युनिस्ट वाहिनी ने पराजित किया, इसका बहुत प्रामाणिक और सारगर्भित वर्णन किया है :

"इस समय हम चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के वीरतापूर्ण संघर्ष के 30वें वार्षिकोत्सव को उस समय मना रहे हैं, जबकि चीनी-क्रान्ति ने राष्ट्रव्यापी विजय प्राप्त कर ली है। चीनी जनता के शक्तिशाली शत्रु

साम्राज्यवाद-सामन्तवाद-नौकरशाही पूँजीवाद का संयुक्त प्रतिक्रियावादी शासन अन्तिम रूप से ख़तम हो चुका है।

(1) " मार्क्सवाद-लेनिनवाद के हथियार से सुसज्जित तथा महान् साथी माओ चे-तुंग और चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में 1924-27 ई. की क्रान्ति की पराजय के बाद चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने चीनी जनता का दस साल के गृहयुद्ध (1927-36 ई.) में नेतृत्व किया, और एक जनता की क्रान्तिकारी सेना तथा चीनी क्रान्तिकारी संघर्षों की व्यावहारिक स्थिति में राजनीतिक और सैनिक नीति अपनाई। जापान-विरोधी युद्ध के आठ वर्षों (1917-35 ई.) में उसने जनता की क्रान्तिकारी सेना को और भी मजबूत किया और प्रायः 10 करोड़ आबादीवाले मुक्त इलाकों को तैयार करते हुए 10 लाख जन-मुक्ति-सेना और 22 लाख मिलिसिया (सशस्त्र सेवक दल) को संगठित किया। यह वह ठोस नींव थी, जिसके आधार पर चीनी जनता ने च्यांग काइ-शेक के उस प्रतिक्रियावादी कुओ-मिन्तांगी गुट को हराया, जिसे कि अमेरिकन साम्राज्यवाद ने हथियारबन्द किया था।

" द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के समय से दुनिया की जनता ने शान्ति को बचाये रखने की तुरन्त माँग की। युद्ध के लम्बे सालों में संकट सहते, तथा नये गृहयुद्ध के खतरे से भयभीत चीनी जनता ने विशेषतः शान्ति को वास्तविक रूप में देखने की इच्छा की। लेकिन, द्वितीय विश्वयुद्ध की समाप्ति के बाद से अमेरिकन साम्राज्यवाद ने फासिस्त जर्मनी, इताली और जापान का स्थान लेते हुए दुनिया को दास बनाने की अपनी योजना को बड़ी हठधर्मी के साथ आगे बढ़ाने, दुनिया की जनता को युद्ध की धमकी देने तथा चीन एवं दूसरे स्थानों में सीधे युद्ध भड़काने का जी-जान से प्रयत्न किया।

" दिसम्बर, 1945 में मास्को में हुए सोवियत संघ, इंग्लैंड और युक्त-राष्ट्र के विदेश-मन्त्रियों के सम्मेलन में अमेरिकन साम्राज्यवाद ने चीन के भीतरी मामलों में हस्तक्षेप न करने को स्वीकार किया था, और चीन में शान्ति और जनतंत्रता के स्थापित होने के लिए इच्छा प्रकट की थी। लेकिन, वस्तुतः जापानी साम्राज्यवाद के हथियार रख देने के बाद से ही अमेरिकन साम्राज्यवाद ने अपनी स्थलसेना, जलसेना और वायुसेना एवं सैनिक-मिशन को चीन भेज सारे देश के अत्यन्त सैनिक महत्त्व के अधिकांश स्थानों पर अधिकार कर लिया। उसने विश्वासघाती च्यांग काइ-शेक के गुट को बड़े भारी परिमाण में सैनिक सामान और युद्ध-सामग्री दी। भिन्न-भिन्न प्रकार से उसने च्यांग काइ-शेक को, उसकी सेना को समुद्र तट के बड़े-बड़े शहरों तथा जनता के खिलाफ गृहयुद्ध के मोर्चों पर भेजने में सहायता की। ऐसा करके अमेरिकन साम्राज्यवाद ने च्यांग काइ-शेक द्वारा युद्ध के फल को चीनी जनता के हाथ से छीनकर चीन को अमेरिका का दास-देश बनाना चाहा।

" 1946 के जून के आरम्भ में अमेरिका की जबर्दस्त सहायता के साथ चीनी जनता के विरोध तथा सारी दुनिया के लोकमत की परवाह न करके च्यांग काइ-शेक ने सब कुछ दाँव पर लगाकर जन-मुक्ति-सेना के विरुद्ध ऐसा भारी गृहयुद्ध छेड़ा, जो चीनी इतिहास में अपने परिमाण में अभूतपूर्व था।

" आरम्भिक समय में गृहयुद्ध की स्थिति चीनी जनता के लिए गम्भीर थी। दुनिया का सबसे बड़ा साम्राज्यवाद दुनिया के सबसे बड़े देशघाती गुट को अपनी पूरी मदद दे रहा था। देशद्रोही च्यांग काइ-शेक गुट के पास उस समय विमानों, टैंकों, आधुनिक युद्ध-साधनों और सामग्री–जिसे अमेरिकन साम्राज्यवाद ने उसे प्रदान किया था, और जो चार अरब अमेरिकन डालर की थी–के साथ 43 लाख सेना थी। उसके शासन के नीचे 30 करोड़ आबादीवाली भूमि थी। बड़े-बड़े शहर, समृद्ध प्राकृतिक स्रोत, आधुनिक उद्योग और आधुनिक यातायात के साधन उसके हाथ में थे। चीनी जन-मुक्ति-सेना के पास जो सेनाएँ थीं, वह कुओ-मिन्तांगी सेनाओं की एक-तिहाई से भी कम थीं। साधनों और आगम के स्रोतों में वह और भी निम्न स्थिति रखती थी। मुक्त इलाकों की आबादी च्यांग काइ-शेक के इलाके से एक-तिहाई से भी कम थी। दोनों पक्षों की सैनिक-शक्ति की तुलना करने से सभी बातें जन-मुक्ति-सेना के पक्ष में नहीं थीं, सिवा इसके कि राजनीतिक गुण और जनता के साथ अपने घनिष्ठ सम्बन्ध में वह च्यांग काइ-शेक की सेना से बढ़-चढ़कर थी। इसी कारण च्यांग काइ-शेक ने युद्ध के बिलकुल आरम्भ में ही अपनी 18 लाख नियमित सेना को बड़े विशाल रूप में इस्तेमाल करके उत्तर-पूर्व, केन्द्र, पश्चिम और उत्तर चीन के इलाकों पर आक्रमण करके एक ही प्रहार में जन-मुक्ति-सेना को खतम कर देने की कोशिश

की। लेकिन, जैसाकि साथी माओ चे-तुंग ने कहा :

" मार्क्सवाद-लेनिनवाद के विज्ञान के आधार पर चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने अन्तर्राष्ट्रीय तथा घरेलू स्थिति का ठीक तौर से मूल्यांकन किया और अनुभव किया कि घर और बाहर के सभी प्रतिक्रियावादियों के सभी प्रहार बेकार ही नहीं होंगे. बल्कि उन्हें बेकार किया जा सकेगा।...सैनिक शक्ति में शत्रु का अधिक होना केवल क्षणिक बात है। यह ऐसा तत्व है, जोकि क्षणिक तौर से थोड़े ही समय तक ही काम आयेगा। अमेरिकन साम्राज्यवाद से मिली सहायता भी थोड़े ही समय तक काम करनेवाली बात है। लेकिन च्यांग काइ-शेक के युद्ध का जनता-विरोधी रूप और उसके प्रति जनता के विरोध का समर्थन ऐसी बातें हैं, जोकि बराबर काम करनेवाली हैं। इस बारे में जन-मुक्ति-सेना बढ़-चढ़कर है। जन-मुक्ति-सेना जिस देशभक्तिपूर्ण, न्यायोचित और क्रान्तिकारी स्वभाव के युद्ध को लड़ रही है, उसमें सारे देश की जनता की सहायता और समर्थन अवश्य प्राप्त होगा। च्यांग काइ-शेक के ऊपर विजय प्राप्त करने के लिए यह राजनीतिक आधार है।" युद्ध की प्रगति और उसके परिणाम ने साथी माओ चे-तुंग के निर्णय के ठीक होने को पूरी तौर से साबित कर दिया।

" युद्ध के आरम्भिक दिनों में, जबकि च्यांग काइ-शेक सर्वस्व की बाजी लगाकर आक्रमण शुरू कर हमारे मुक्त-इलाकों में घुस आया, उस समय यद्यपि हमने बहुत-से नगर और विशाल देहाती इलाके खो दिये, लेकिन तो भी जन-मुक्ति-सेना ने प्रतिमास औसतन कुओ-मिन्तांगी सैनिक-शक्ति के आठ ब्रिगेडों को नष्ट किया। आठ महीने के बाद, जब उसकी शक्तियाँ बहुत कमजोर हो गईं, तो च्यांग काइ-शेक सर्वस्व की बाजी लगा, आक्रमण करने की नीति को छोड़ने के लिए मजबूर हुआ। वह केवल शान्तुंग और उत्तर शेन्सी के तथाकथित 'मर्म स्थानों पर आक्रमण' कर सका।...च्यांग काइ-शेक ने शान्तुंग के मुक्त इलाकों पर आक्रमण करने में 60 ब्रिगेडों को इस्तेमाल किया, जोकि इन आक्रमणों में लगी सारी सेना का एक-तिहाई था। उत्तर शेन्सी के मुक्त इलाके पर आक्रमण करनेवाली शत्रु की सेना जन-मुक्ति-सेना से दस गुनी थी। तो भी, चूँकि जन-मुक्ति-सेना हरेक लड़ाई में ठीक दाँव-पेंच की नीति इस्तेमाल करती रही, और किसी नगर या स्थान की प्रतिरक्षा को मुख्य लक्ष्य न बना एक के बाद एक अलग-अलग...शत्रु की सेनाओं को नष्ट करने में लगी। चीनी जन-मुक्ति-सेना ने केवल च्यांग काइ-शेक के 'मर्मस्थानों के आक्रमणों' को ही बड़ी तेजी के साथ चूर-चूर नहीं कर दिया, बल्कि इस काल में उत्तर-पूर्व और उत्तर चीन के युद्ध-मोर्चों पर च्यांग काइ-शेक के विरुद्ध आंशिक तौर से जवाबी हमले भी शुरू कर दिए।

" युद्ध के प्रथम वर्ष के अन्त में जन-मुक्ति-सेना ने शत्रु के 11 लाख 20 हजार सैनिकोंवाले साढ़े 97 ब्रिगेड नष्ट कर दिये और अपनी 12-13 लाख सेना को बढ़ाकर 20 लाख कर दिया। इस प्रकार, युद्ध की स्थिति में एक मौलिक परिवर्तन हुआ : देशद्रोही च्यांग काइ-शेक गुट अपनी पुरुष-शक्ति में भयंकर क्षति उठाकर दाँव-पेंच के आक्रमण की जगह दाँव-पेंच के रक्षात्मक युद्ध को स्वीकार करने के लिए मजबूर हुआ।

" (2) चीनी जनता के मुक्ति-युद्ध के द्वितीय वर्ष के आरम्भ होने के साथ चीनी जन-मुक्ति-सेना ने दाँव-पेंच-सम्बन्धी रक्षात्मक लड़ाई की जगह दाँव-पेंच-सम्बन्धी आक्रमणात्मक ढंग स्वीकार किया। यह सबसे बड़ा परिवर्तन था, जिसने चीनी जनता की क्रान्ति के इतिहास को बहुत प्रभावित किया। उस समय साथी माओ चे-तुंग ने घोषित किया था :

"यह च्यांग काइ-शेक के बीस साल के क्रान्ति-विरोधी शासन के अन्त का मोड़ है। साथ ही, यह चीन में साम्राज्यवाद के एक सौ से अधिक सालों के शासन के विकास और अन्त का भी मोड़ है।

" च्यांग काइ-शेक के प्रतिक्रियावादियों के विरुद्ध आक्रमण आरम्भ करते हुए जन-मुक्ति-सेना की शक्तिशाली फौजों ने ह्वांग-हो नदी पार कर दक्षिण में पहुँच कुओ-मिन्तांगी सेना की प्रतिरक्षा-व्यवस्था को चूर-चूर कर दिया। कुओ-मिन्तांगी शासन के इलाकों में वह घुस गई और उसने पंक्ति को नीचे यांग-ची नदी पर ढकेल दिया। उसने जनता के विरुद्ध गृहयुद्ध छेड़कर चीनी जनता के मुक्त-इलाकों को नष्ट करने की च्यांग काइ-शेक की क्रान्ति-विरोधी योजना को उलट दिया। उसने उन अड्डों में भी क्रान्ति की ज्वाला फैला दी, जहाँ से च्यांग काइ-शेक ने जनता के विरुद्ध गृहयुद्ध आरम्भ किया था। इस प्रकार उसने कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादी शासन

को उसकी जड़ों से बिलकुल हिला दिया और सारे देश में जनता के क्रान्तिकारी संघर्ष की बाढ़ को आगे बढ़ाया।

" कुओ-मिन्तांगी सेना के लगातार नष्ट करने के साथ-साथ जन-मुक्ति-सेना ने युद्ध-क्षेत्र के भिन्न-भिन्न भागों में उत्तर-पूर्व, शान्तुंग, उत्तर शेन्सी और उत्तर चीन जैसे मुक्त इलाकों के अधिकांश भाग को अपने हाथ में करके जन-मुक्ति-सेना ने कुओ-मिन्तांग के मजबूत मोर्चाबन्द नगरों—जिनकी आबादी एक लाख से कई लाख तक की थी—पर कामयाबी से आक्रमण करना शुरू किया। उसने प्रत्येक अभियान में कितने ही सदियों हजारों से लाख तक कुओ-मिन्तांगी सेना को नष्ट किया। कुओ-मिन्तांगी सेना को नष्ट करते हुए जन-मुक्ति-सेना ने बार-बार शत्रु से भारी परिमाण में आधुनिक हथियारों को छीनकर अपने साधनों को मजबूत किया और अपने मजबूत तोपखाने और इंजीनियरी पलटनें तैयार कीं।

" इससे पीछे दृढ़ स्थानों और शत्रु की प्रतिरक्षा-व्यवस्था को नष्ट करने के लिए सर्वनाशी बड़े युद्धों के लड़ने में जन-मुक्ति-सेना सक्षम हो सकी।

"जहाँ तक सेना की क्षतिपूर्ति का सवाल था, जन-मुक्ति-सेना मुख्यतः युद्धबन्दियों और आत्मसमर्पण करनेवाले बहुसंख्यक कुओ-मिन्तांगी सैनिकों पर निर्भर करती थी। वह श्रमिक वर्ग में से आये थे। सुधार और शिक्षा के बाद वह जल्दी ही जन-मुक्ति-सेना के ईमानदार और बहादुर योद्धाओं के रूप में परिणत किये जा सके।

" इन संघर्षों और प्रयत्नों के द्वारा युद्ध के शुरू से ही लगातार भयंकर लड़ाइयों में फँसी रहने पर भी, अमेरिकन साम्राज्यवाद और उसके गीदड़ों की आशा के अनुरूप कमजोर नहीं हुई, बल्कि इसके विरुद्ध और शक्ति पाकर वह तेजी के साथ बढ़ती गई।

" (3) नवम्बर, 1948 में—अमेरिकन साम्राज्यवाद के समर्थन के साथ कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादियों के युद्ध आरम्भ के करीब ढाई साल बाद युद्ध की स्थिति में दूसरा एक और मौलिक परिवर्तन हुआ : कुओ-मिन्तांगी सेनाओं के विरुद्ध करीब एक सौ नाशक अभियानों के बीच से गुजरते हुए उत्तर-पूर्व चीन के ल्याओ निग प्रदेश से पश्चिम वाले अभियान में जन-मुक्ति-सेना ने एक महाविजय प्राप्त की, और उसने उत्तर-पूर्व चीन में कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादियों की सेनाओं का अकेले अभिनय में पैर उखाड़ दिया, और अमेरिकन साम्राज्यवाद द्वारा हथियारों से सुसज्जित और सुशिक्षित च्यांग काइ-शेक की फौलादी फौजों में से अधिकांश को नष्ट कर दिया। इस अभियान के बाद कुओ-मिन्तांगी सेना की देर से चली आती संख्या-बल की अधिकता अब संख्या-बल की हीनता में बदल गई और जनमुक्ति-सेना की संख्या की हीनता अब अधिकता में बदल गई। इस समय कुओ-मिन्तांगी सेना की संख्या 29 लाख रह गई, जब कि जन-मुक्ति-सेना बढ़कर 30 लाख हो गई। इसके बाद सारे देश में युद्ध का पाशा बड़ी तेजी से पलटा।

" जनवरी, 1949 में चीनी जन-मुक्ति-सेना ने फिर दक्षिणी मोर्चे की कुओ-मिन्तांगी सेना की मुख्य फौजों पर शू-चाउ के आसपास के इलाके में एक निर्णायक युद्ध लड़कर विजय प्राप्त की और अमेरिकन साधनों द्वारा मुख्य तौर से सुसज्जित च्यांग काइ-शेक की सबसे मजबूत सेना के सात सैनिक समूहों को नष्ट कर दिया। अब च्यांग काइ-शेक गुट के देशद्रोहियों का शासन-केन्द्र नानकिंग हमारी महाशक्तिशाली आक्रामक सेनाओं के सीधे प्रहार के लिए नंगा हो अरक्षित हो गया था। इसी समय जन-मुक्ति-सेना ने कलगन, तियान्-चिन् तथा उत्तरी चीन के युद्ध मोर्चे के दूसरे नगरों को ले लिया, शान्तिपूर्वक पेकिंग को मुक्त करने में सफलता पाई, एवं उत्तर-चीन क्षेत्र में कुओ-मिन्तांगी सेनाओं का सफाया कर दिया। इस प्रकार पश्चिम-ल्याउ निंग-मुकदेन्, ह्वाइहाइ शूचाउ-पेंग पू क्षेत्र और पेकिंग-तियान्-चिन् के अभियानों के बाद चीनी जनता की क्रान्ति की राष्ट्रव्यापी विजय निश्चित हो चुकी।

" इस समय अमेरिकन साम्राज्यवाद के भड़काने पर कुओ-मिन्तांगी क्रान्ति-विरोधी गुट के यांग-ची नदी के दक्षिणवाले अवशेषों ने फिर से साँस लेने का सपना पूरा करने के खयाल से जन-मुक्ति-सेना को यांग-ची पार करने से रोकने की कोशिश की। उसने देर कराने का दाँव-पेंच चलाते हुए च्यांग काइ-शेक को अस्थायी तौर से राजनीति से अवकाश ग्रहण करने और चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के साथ सुलह की बातचीत करने

के लिए आगे बढ़नेवाले ली चुंग-जेन् को आगे किया। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने नानकिंग की कुओ-मिन्तांगी सरकार के साथ शान्ति की बातचीत करना स्वीकार किया। लेकिन, नानकिंग के प्रतिनिधियों के साथ मिलकर बातचीत के दौरान में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने शान्ति के समझौते का जो मसौदा तैयारी किया था, उसे नानकिंग की कुओ-मिन्तांग सरकार ने मानने से इन्कार कर दिया।

"21 अप्रैल, 1949 को चीनी जन-मुक्ति-सेना सारे चीन को स्वतन्त्र करने के लिए दक्षिण और उत्तर-पश्चिम में बढ़ी। चीनी जनता के विरुद्ध च्यांग काइ-शेक गुट के 22 साल के प्रतिक्रियावादी शासन के नानकिंग को मुक्त करने में केवल तीन दिन लड़ाई करनी पड़ी। फिर अप्रैल के अन्तिम भाग से 1949 के दिसम्बर के अन्त तक तइयुवान, ह्नांग चाउ, वूहान्, चेग, सियान्, शांघाइ, लान्चाउ, कान्तव्, चंग किंग, चे तू क्वेई यांग तथा दूसरे महत्त्वपूर्ण नगर सफलतापूर्वक मुक्त कर लिये गये। हूनान्, सुइयुवान, सिंग-कियांग, सी-क्यांग युन्नान् तथा दूसरे स्थानों को शान्तिपूर्ण तरीके से मुक्त किया गया। च्यांग काइ-शक गुट के देशद्रोहियों का प्रतिक्रियावादी शासन पूरी तौर से नष्ट हो गया। उसके अवशेष चूहों की तरह ताइवान (फारमोसा) द्वीप में भाग गये, जोकि अमेरिका के हथियारबन्द संरक्षण में था।

"1950 में चीनी जन-मुक्ति-सेना ने हैनान् द्वीप और चूशन प्रायद्वीप को मुक्त कर तिब्बत की ओर अपना विजयपूर्ण बढ़ाव शुरू किया। 1951 की मई में केन्द्रीय लोकसरकार ने स्थानीय सरकार के प्रतिनिधियों के साथ तिब्बत की शान्तिपूर्ण मुक्ति के उपाय के सम्बन्ध में सुलहनामे पर दस्तखत किया।

"युद्ध के करीब चार वर्षों में जन-मुक्ति-सेना ने कुओ-मिन्तांग की 80 लाख 70 हजार सेना को नष्ट किया। विद्रोह करके हमारी तरफ आनेवाले या आत्मसमर्पण करने तथा पुनर्संगठन स्वीकार करनेवाली कुओ-मिन्तांग की 17 लाख 70 हजार सेनाओं को हमने अपनी ओर किया। हमने कुओ-मिन्तांग के ऊँचे दर्जे के 1668 सैनिक अफसरों को मारा या बन्दी बनाया, अनेक प्रकार की 50 हजार तोपों, 3 लाख से अधिक मशीनगनों, हजार से अधिक टैंकों और बख्तरदार गाड़ियों, 20 हजार से अधिक मोटरों और इनके अतिरिक्त और बहुत-से हथियार तथा युद्ध-सामग्री को छीना। यह स्पष्ट है कि यह परिणाम अमेरिकन साम्राज्यवाद के लिए कम परेशानी का कारण नहीं है।

"यह संयोग की बात नहीं है, जो अमेरिकन साम्राज्यवाद का पिछलग्गू कुत्ता च्यांग काइ-शेक इतनी तेजी और भयंकर रूप से खतम हुआ। उन सभी प्रतिक्रियावादियों का यह अनिवार्य अन्त है, जोकि जनता की इच्छा और शक्ति की उपेक्षा करते हैं। यह उन साहसवादियों का अनिवार्य अन्त है, जोकि अपने राजनीतिक बिलगाव को न देखते हुए जनता के विरुद्ध काम करते अपनी खुद की हथियारबन्द सेना की क्षणिक और दिखावेवाली शक्ति को ही देखते हैं। च्यांग-काइ-शेक के खूनी प्रतिक्रियावादी बाईस वर्षों के शासन और चीन में साम्राज्यवादियों के खूनी तथा प्रतिक्रियावादी एक शताब्दी से अधिक के शासन के सम्बन्ध में देर तक रुके इतिहास का यह फैसला है।

"लेकिन, चीनी जनता का मुक्ति-युद्ध अभी पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ, क्योंकि जैसाकि मैंने कहा, चीनी जनता के गणराज्य का एक भूभाग ताइवान (फारमोसा) प्रदेश अभी भी मुक्त नहीं हुआ है। 1950 के जून में अमेरिकन आक्रमणकारियों ने हमारे ताइवान पर अपना हथियारबन्द नियंत्रण घोषित किया और साथ ही उन्होंने कोरिया के विरुद्ध हथियारबन्द पाशविक दखलन्दाजी आरम्भ की। यह उसी तरह का बर्बर, निर्लज्जतापूर्ण आक्रमण है, जैसाकि 1931 में जापानी साम्राज्यवाद ने उत्तर-पूर्व चीन पर कब्जा करके किया था। निस्सन्देह, वीर चीनी जनता अमेरिकन साम्राज्यवाद के हाथों से ताइवान को अवश्य मुक्त करेगी और अपने ताइवान के 67 लाख देशभाइयों को अपनी महान् मातृभूमि की गोद में लौटने के योग्य बनायेगी।

6. नई व्यवस्था

भारतीयों को भी चोरबाजारी और भ्रष्टाचार का पिछले छह वर्षों से काफी परिचय मिल रहा है, और जितना ही माला फेरते हमारे भक्त नेता भ्रष्टाचार हटाने के लिए उपदेश दे रहे हैं, उतना ही वह बढ़ता जा रहा है।

लेकिन, च्यांग काइ-शेक के चीन के सामने कांग्रेसी भारत की गति अभी काफी मन्द है, यद्यपि दृढ़ता के साथ वह अपने कदम को उसी तरफ बढ़ाये जा रहा है। पूँजीवादी विचारक और प्रचारक दिल में यह बात बैठाना चाहते हैं कि पापपूर्ण लाभ-लोभ और भ्रष्टाचार मनुष्य के स्वभाव में है। माओ के चीन ने इसे झूठा साबित कर दिया। शांघाइ के विदेशी व्यापारियों तक ने भी इसे मुक्त कण्ठ से स्वीकार किया कि माओ के पास भ्रष्टाचार हटाने का अमोघ मन्त्र है। गली-गली में प्रचार होने लगा, चोरबाजारी के खिलाफ भाषण होने लगे, गीतें गाई जाने लगीं, अभिनय किये जाने लगे। चोरबाजारी बनिये और घूसखोर पहले ही से डर गये थे। उनमें से दस-पाँच ही को कड़ा दण्ड देने के बाद सबने अपना पुराना रास्ता छोड़ दिया। शांघाइ में चोरबाजारी बन्द हो गई।

कम्युनिस्टों के आते ही एक और भी नई बात शांघाइ-निवासी देखने लगे। बड़ी-बड़ी कचहरियों में कुर्सियों पर अब लाटसाहबी ठाट से अफसर नहीं बैठे हुए थे। जहाँ बालकटी छोकरियाँ हाथ में कलम लिये लिख रही थीं। शांघाइवासियों को पहले तो विश्वास नहीं हुआ कि च्यांग के बड़े-बड़े अफसरों का काम छोकरियाँ और इन्हीं की उम्र के छोकरे ठीक तरह से कर पाएँगे, लेकिन तजर्बे ने उन्हें इसे मानने के लिए मजबूर किया। च्यांग के शासन में भला अफसरों की बिना भेंट-पूजा किये व्यापारियों का कोई काम हो सकता था ? लेकिन भेंट-पूजा का आरम्भ च्यांग और उसके मन्त्रियों से होता था। हम अपने यहाँ के तजर्बे से जानते हैं कि जब ऊपर के बड़े-बड़े लोग करोड़ों की रिश्वत खुलकर डकार जाने के लिए स्वतन्त्र हैं, तो वह किस मुँह से छोटों को वैसा करने से रोक सकते हैं। लेकिन, यहाँ माओ चे-तुंग, चाउ एन्-लाइ और चू-तेह जैसे लोग राष्ट्र के कर्णधार थे, इसलिए सबको वैसा ही होना पड़ा और सबको वैसा ही होने की उन्होंने शिक्षा भी दी थी। माओ के शिष्य तरुण-तरुणी लाखों की संख्या में जिस तरह बन्दूक लेकर दुनिया की एक बहुत बड़ी शक्तिशाली सेना को मार भगाने में चतुर थे, जिस तरह वह भाषण देकर जनता को अपनी तरफ खींच सकते थे, उसी तरह वह शासन के हरेक विभाग को चलाने में भी कुशल थे। माओ ने पहले ही से इन्हें राजकाज और व्यापार-व्यवहार चलाने की शिक्षा दी थी। इसलिए च्यांग के अफसरों के भागते ही उन्होंने उनकी जगहों में बैठकर चीन में नई व्यवस्था चालू कर दी।

माओ चू-शी के सिद्धान्तों का लोग गम्भीरतापूर्वक अध्ययन और अनुसरण करने लगे, जिनमें कहा गया है :

" (1) सब कुछ जनता के लिए है। वे सारे सिद्धान्त गलत हैं, जिनके अनुसार किसी व्यक्ति या दल के हित के लिए जनता के हित को न्यौछावर किया जाता है,

" (2) जनता के प्रति अपनी पूर्ण जिम्मेवारी समझनी चाहिए,

" (3) जनता के प्रति अपनी जिम्मेवारी निभाने के बहाने पार्टी के अनुशासन और एकता को तोड़ना अनुचित है, किन्तु साथ ही नेतृत्व करनेवाले कमेटी या व्यक्ति की कमी या भूल को सुधारना आवश्यक है, क्योंकि इस प्रकार की कमियाँ और गलतियाँ जनता और पार्टी के लिए हानिकारक हैं। पार्टी में आत्मालोचना—अपनी गलतियों की स्वयं आलोचना—और अपने नेताओं की गलतियों की आलोचना करने, पार्टी के अनुशासन को मानने का अर्थ है, जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्व को समझना,

" (4) जनता के स्वयं उद्धार करने की शक्ति में हमारी आस्था होनी चाहिए। जनता महान् है। उसकी रचनात्मक शक्ति असीम है। हम उसके ऊपर भरोसा करके ही अजेय हो सकते हैं। केवल जनता ही इतिहास की रचना करती है और जनता का इतिहास ही वास्तविक इतिहास है। जनता का उद्धार कोई सम्राट, देवता या जननायक नहीं करता, बल्कि जनता स्वयं अपना उद्धार करती है। जनता के अपने संघर्षों और प्रयत्नों द्वारा ही उसकी मुक्ति होती है, उसकी स्वतन्त्रता की रक्षा होती है, और वह कायम रह सकती है। जनता के सिवा कोई दूसरा दान के रूप में जनता को मुक्ति नहीं दे सकता। इसलिए जनता के प्रति दया करके उसके उद्धार के लिए लड़ने की धारणा गलत है।

" कम्युनिस्टों का उद्देश्य केवल जनता के हितों को पूरा करना है। हमारे कार्यक्रम और नीति चाहे कितने ही अच्छे हों, किन्तु जनता के सहयोग और जनता द्वारा लगातार किये जाते संघर्ष के बिना उनमें सफलता

नहीं हो सकती। हमारे कार्यक्रम और नीति की सभी बातों का आधार जनता की चेतना है। जनता में चेतना की कमी होने पर कम्युनिस्टों का यह कर्तव्य है कि किसी काम को हाथ में लेने के पहले जनता में सभी उपयोगी और सम्भव उपायों से चेतना पैदा करें। यह काम चाहे जितना भी कठिन हो, और इसमें चाहे जितना भी समय लगे; किन्तु इस काम को सबसे अधिक महत्त्व देकर सबसे पहले इसकी ओर ध्यान देना चाहिए। "

" ऊपर कहा गया है कि पहला कदम जमा लेने के बाद हम दूसरा कदम उठा सकते हैं, अर्थात् जब जनता की चेतना आवश्यक स्तर पर पहुँच जाय, तब हमारा कर्तव्य होता है कि उसे संगठन और संघर्ष के लिए मार्ग दिखलायें। इस मंजिल पर पहुँच जाने के बाद हमारा कर्तव्य हो जाता है कि स्वयं जनता के अनुभव से उसकी चेतना को आगे बढ़ाएँ। जनता को कदम-कदम आगे बढ़ाते उसकी माँगों को अपने नारों का रूप देवें। संघर्ष की ओर ले जाने का यही तरीका है। हम कम्युनिस्ट जनता के उद्देश्य की पूर्ति के लिए यही सबसे बड़ा काम कर सकते हैं। सभी प्रकार की गलतियाँ–उदाहरणार्थ महापुरुष बनने की इच्छा, हुकुमरानी-मनमानी चलाने और जनता के कल्याण कर देने की इच्छा का दिखावा–तभी पैदा होती है, जब लोग इससे बढ़कर कुछ कर दिखाने की चेष्टा करते हैं। जनता की मुक्ति के संघर्ष में कम्युनिस्ट केवल पथ-प्रदर्शन का काम कर सकता है और यही उसे करना चाहिए। कार्यकर्ताओं को जनता की जगह लेकर विश्व-विजय करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए, न ही वे ऐसा कर ही सकते हैं। क्रान्तिकारी संघर्ष में सफलता के लिए जनता को दूरदर्शी और दृढ़-निश्चयी नेताओं तथा पथ-दर्शकों की अनिवार्य आवश्यकता प्रतिक्षण रहती है। जनता के कार्य को महापुरुष पूरा नहीं कर सकते, क्योंकि जनता से दूर रहते महापुरुष जनता की मुक्ति के लिए कुछ भी नहीं कर सकते।

" चौथा सिद्धान्त है : जनता से शिक्षा ग्रहण करना। हम लोग मार्क्सवाद-लेनिनवाद के सिद्धान्तों और दूसरे देशों के जन-संघर्षों के इतिहास का अध्ययन करके शिक्षा ले सकते हैं। हम अपने शत्रुओं से भी शिक्षा ले सकते हैं। लेकिन सबसे महत्त्वपूर्ण बात है जनता से शिक्षा लेना, क्योंकि जनता का ज्ञान और अनुभव सबसे भारी अधिक क्रियात्मक है और उसकी रचनात्मक शक्ति सबसे बड़ी है। इसलिए जनता को शिक्षा देने से पहले हमें जनता से शिक्षा लेनी चाहिए। "

17

जनवादी गणराज्य की स्थापना (1949)

1. नया मार्ग-प्रदर्शन

हम देख चुके हैं कि हर समय की समस्याओं के हल करने में साथी माओ चे-तुंग पथ-प्रदर्शन के वास्ते सिर्फ मौखिक ही नहीं, बल्कि लेखबद्ध करके भी देते रहे हैं। 1949 में उन्होंने 'जनता की जनतांत्रिक अधिनायकता' के नाम से आगे के लिए मार्ग-निर्देश किया।

'लोकशाही जनतांत्रिक अधिनायकता' कम्युनिस्ट पार्टी के 28वें जन्मोत्सव के समय 1 जुलाई, 1949 को माओ ने इस नाम से एक सारगर्भित भाषण दिया था।

(1) **नई सरकार की तैयारी**–देश का शासन चलाने के लिए शासन-यंत्र की आवश्यकता थी। इसके लिए चीनी जनता को राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन के बुलाने की आवश्यकता थी, जिसकी तैयारी करने के लिए 15 जून, 1949 को एक कमेटी बैठी, जिसमें उसी दिन साथी माओ चे-तुंग ने कहा था :

" सहकारी प्रतिनिधियो,

" हमारे राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन की तैयारी करनेवाली बैठक आज शुरू हो रही है। इस बैठक

का कार्य है, उन सभी आवश्यक तैयारियों को पूरा करना, जिसमें कि राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन तुरन्त बुलाया जा सके और एक जनतांत्रिक सम्मिलित सरकार बनाई जाय। इससे सारे देश की जनता को कुओ-मिन्तांग प्रतिक्रियावादी गुट की अवशिष्ट शक्तियों का यथासम्भव शीघ्र सफाया किया जा सकेगा, सारे चीन को एकताबद्ध और राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा राष्ट्रीय सुरक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रव्यापी पैमाने पर सुव्यवस्थित रीति से निर्माण-कार्य किया जा सकेगा। सारे देश के लोग चाहते हैं कि हम इन कामों को करें और हमें करना होगा।

" 1 मई, 1948 को चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने देश की जनता के सामने नये राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन का प्रस्ताव किया था। इस प्रस्ताव को तुरन्त देश की सभी जनतांत्रिक पार्टियों और समुदायों, सार्वजनिक संगठनों, सभी विचारों के जनतांत्रिक व्यक्तियों, देश के भीतर की अल्पसंख्यक जातियों और समुद्र-पार के चीनियों ने तुरन्त पसन्द किया। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और सभी उपरोक्त समुदाय और लोग यह आवश्यक समझते हैं कि साम्राज्यवाद, सामन्तवाद, नौकरशाही पूँजीवाद और कुओ-मिन्तांग प्रतिक्रियावादी गुट के शासन को उखाड़ फेंका जाय। वह यह भी आवश्यक समझते हैं कि सभी जनतांत्रिक पार्टियों, समुदायों, सभी सार्वजनिक संगठनों, सभी विचारों के जनतांत्रिक व्यक्तियों, देश के भीतर की अल्पसंख्यक जातियों और समुद्र पार के चीनियों का एक राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन बुलाया जाय और चीन की जनता के जनतांत्रिक गणराज्य की स्थापना की घोषणा और उस गणराज्य के प्रतिनिधि के तौर पर एक जनतांत्रिक सम्मिलित सरकार का निर्वाचन किया जाय। केवल इसी प्रकार हमारी महान् पितृभूमि अपने को अर्ध-उपनिवेशी और अर्ध-सामन्ती पाश से निकलकर मुक्ति, शान्ति, एकता, शक्ति और समृद्धि के रास्ते को प्राप्त कर सकती है।

" सारे देश की जनता अपनी स्वकीय जन-मुक्ति-सेना का समर्थन करती है, जिससे उसने युद्ध में विजय प्राप्त की। जुलाई, 1946 में आरम्भ हुए महान् जन-मुक्ति-युद्ध को पूरे तीन वर्ष बीत चुके हैं। इस युद्ध को विदेशी साम्राज्यवाद की मदद से कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादियों ने आरम्भ किया। कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादी गुट ने 1946 की जनवरी में राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन द्वारा स्वीकार की गई युद्ध-विराम सन्धि और प्रस्तावों को विश्वासघात के साथ तोड़ फेंका और जनता के विरुद्ध गृहयुद्ध आरम्भ किया। किन्तु केवल तीन वर्षों के भीतर ही वीर जन-मुक्ति-सेना ने प्रतिक्रियावादियों को हरा दिया। कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादियों के गुट के प्रयत्न का पर्दाफाश होने के थोड़े ही दिनों बाद जन-मुक्ति-सेना हिम्मत के साथ आगे बढ़ती यांग-ची नदी को पार कर गई। कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादी गुट की राजधानी नानकिंग पर अधिकार किया जा चुका है, हंग-चाउ, नानचांग, वूहान् और सियान् मुक्त किये जा चुके हैं। इसी क्षण जन-मुक्ति-सेना की भिन्न-भिन्न मैदानी वाहिनियाँ दक्षिणी और उत्तर-पश्चिमी प्रदेशों में इतने जोर से आगे बढ़ रही है, कि जैसा बढ़ाव चीन के इतिहास में इससे पहले कभी नहीं हुआ।

" तीन वर्ष के भीतर जन-मुक्ति-सेना ने 55 लाख 90 हजार प्रतिक्रियावादी कुओ-मिन्तांगी सेनाओं का सफाया कर दिया। इस समय नियमित-अनियमित वाहिनियों, तथा पश्चात्-भाग के सैनिक संगठनों एवं सैनिक स्कूलों को लेते हुए कुओ-मिन्तांगी सेना के अवशेष केवल 15 लाख आदमियों के करीब हैं। इस अवशिष्ट सेना का सफाया करने के लिए कुछ समय जरूर लगेगा, लेकिन वह बहुत लम्बा नहीं होगा।

" यह सारी चीनी जनता की विजय है, और साथ ही यह सारी दुनिया की जनता की विजय है। सिवा भिन्न-भिन्न देशों के साम्राज्यवादियों और प्रतिक्रियावादियों के सारी दुनिया में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं है, जोकि चीनी जनता के इस प्रचण्ड विजय पर बड़े जोश के साथ आनन्द न मानता हो। अपने शत्रुओं के विरुद्ध चीनी जनता का संघर्ष और अपने शत्रुओं के विरुद्ध दुनिया के दूसरे लोगों का संघर्ष एक-सा ही महत्त्व रखता है। सारी चीन की जनता तथा सारी दुनिया की जनता ने निम्न बातें देखी हैं। चीनी जनता के विरोध करते भी क्रान्ति-विरोधी युद्ध करने के लिए साम्राज्यवादियों ने चीनी प्रतिक्रियावादियों का संचालन किया, चीनी जनता ने विजय के साथ प्रतिक्रियावादियों का टाट उलटने के लिए क्रान्तिकारी युद्ध किया।

" यहाँ मैं जनता का ध्यान एक बात की ओर दिलाना चाहता हूँ : साम्राज्यवादी और उनके पिट्ठू चीनी

प्रतिक्रियावादी चीनी भूभाग में अपनी पराजय को स्वीकार नहीं करेंगे। चीनी जनता का विरोध करने के लिए हर तरह के सम्भव साधनों को इस्तेमाल करते वह एक-दूसरे के साथ मिलकर काम करेंगे।

" चीन को अवश्य स्वतन्त्र होना है, चीन को अवश्य आजाद होना है, चीन की सभी बातों का निर्णय और संचालन स्वयं चीनी जनता को करना है। हम किसी साम्राज्यवादी देश की जरा भी दखलंदाजी फिर नहीं होने देंगे।

" साथ ही हम सारी दुनिया के सामने घोषित करते हैं : हम जो विरोध कर रहे हैं, वह केवल साम्राज्यवादी व्यवस्था और चीनी जनता के विरुद्ध उसकी षड्यन्त्री योजनाओं का विरोध करते हैं। समानता के सिद्धान्तों, परस्पर लाभ और भूमिका सर्वप्रभुत्व के प्रति पारस्परिक सम्मान के आधार पर हम किसी भी विदेशी सरकार के साथ दौत्य सम्बन्ध स्थापित करने के प्रश्न पर बातचीत कर सकते हैं, यदि वह सरकार चीनी प्रतिक्रियावादियों से सम्बन्ध तोड़ने के लिए इच्छुक है, यदि वह फिर चीनी प्रतिक्रियावादियों को सहयोग या सहायता नहीं देगी, एवं जनता के चीन के प्रति झूठी नहीं, सच्ची मित्रता का रवैया अख्तियार करेगी। चीनी जनता दुनिया के सभी देशों की जनता के साथ मित्रतापूर्ण सहयोग और उत्पादन के बढ़ाने तथा आर्थिक समृद्धि के लिए अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार को पुनःस्थापित और प्रसारित करने के लिए तैयार है।

" एक बार जब जनतांत्रिक सम्मिलित सरकार बन गई, तो इसका मुख्य काम केन्द्रित होगा : (1) प्रतिक्रियावादियों के अवशेषों का सफाया करना और उनकी तोड़-फोड़ की कार्रवाइयों को खतम करना, (2) जनता के आर्थिक, सांस्कृतिक और शिक्षा-सम्बन्धी कार्यों की पुनः स्थापना और वृद्धि करते हुए जनता के आर्थिक उद्योगों की पुनः स्थापना और वृद्धि के लिए सभी सम्भव प्रयत्न करना।

" एक बार जब चीन का भविष्य जनता के अपने हाथों में आ गया, तो चीनी जनता चीन को उदीयमान सूर्य की तरह चमकते सारी भूमि के ऊपर अपने प्रकाश को बिखेरती और प्रतिक्रियावादी सरकार द्वारा पीछे छोड़े कीचड़वाले गड़हों को जल्दी से सुखाती दीखेगी। युद्ध के घाव भर जायँगे। केवल नाम के लिए ही नहीं, बल्कि वस्तुतः हम एक बिलकुल नये, मजबूत और समृद्ध चीन जनतांत्रिक गणराज्य का निर्माण करेंगे।

चीन जनता जनतांत्रिक गणराज्य चिरंजीव !

जनतांत्रिक सम्मिलित सरकार चिरंजीव !

सारे देश की जनता की महान् एकता चिरंजीव। "

(2) जनता की जनवादी अधिनायकता (1949 ई.)–तैयारी कमेटी की बैठक के बाद चीनी राष्ट्र के पथ-प्रदर्शन के लिए चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के जन्मोत्सव मनाने के समय 1 जुलाई, 1949 को साथी माओ चे-तुंग ने अपने लिखित भाषण में कहा था :

" 1 जुलाई, 1949 का आज का दिन बतला रहा है, चीन की कम्युनिस्ट पार्टी अपने जीवन के 28 साल बिता चुकी है। मानव प्राणी की तरह इसके भी अपने शैशव, तारुण्य, प्रौढ़ता और वार्धक्य हैं। चीन की कम्युनिस्ट पार्टी अब शिशु या अबोध बालक नहीं है। वह वयस्क हो चुकी है। जब कोई आदमी बूढ़ा होता है, तो वह मरेगा, यही बात राजनीतिक पार्टियों पर भी लागू होती है। जब वर्ग समाप्त होंगे, तो वर्ग-संघर्ष के सारे हथियार–राजनीतिक पार्टियाँ और राज्य-यन्त्र–अपने अस्तित्त्व के आधार को खो देंगे, अनावश्यक हो धीरे-धीरे मुरझा जायँगे। वह अपने ऐतिहासिक कर्तव्य को पूरा कर चुकेंगे और मानव-समाज और भी ऊँची मंजिल की ओर अग्रसर होगा।

" हमारी पार्टी बूर्ज्वा की राजनीतिक पार्टियों से ठीक उलटी है। वह पार्टियाँ वर्गों, राज्य-शक्ति और पार्टियों के लोगों के बारे में कहने से डरती है। इसके विरुद्ध हम खुलेआम घोषित करते हैं कि हम अपनी सारी शक्ति से ठीक उन स्थितियों को पैदा करने के लिए कोशिश कर रहे हैं, जोकि इन बातों के खात्मे को जल्दी सामने लायेंगी। कम्युनिस्ट पार्टी और जनता की अधिनायकता की राज्य-शक्ति ऐसी ही स्थितियाँ हैं।

" जो कोई इस सत्य को नहीं स्वीकार करता, वह कम्युनिस्ट नहीं है।

" जैसा कि हम जानते हैं, हमारी पार्टी के जो 28 साल गुजरे हैं, वह शान्तिपूर्ण नहीं रहे, बल्कि कठिनाइयों

से भरे रहे। हमें विदेशी और स्वदेशी शत्रुओं से लड़ना पड़ा, तथा पार्टी के भीतर और बाहर के शत्रुओं से लड़ना पड़ा। हम अपने हथियार के लिए मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन के ऋणी हैं। ये हथियार मशीनगन नहीं हैं, बल्कि मार्क्सवाद-लेनिनवाद।

" 1840 ई. के अफीम-युद्ध में पराजित होने के बाद चीन के प्रगतिशीलों ने कष्ट और मुसीबत सहते पश्चिमी देशों में सत्य की खोज करते रहे। हुंग शिउचुआन, कांग यू-वेइ, येन्-फू और सुन्-यात्-सेन् उन्हीं आदमियों में हैं, जिन्होंने चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के जन्म से पहले सत्य के लिए पश्चिम का मुँह ताका। इस काल में प्रगति का लक्ष्य रखनेवाले सभी चीनी पश्चिम की नई शिक्षावाली हरेक पुस्तक हो पढ़ा करते थे। जापान, इंग्लैण्ड, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, फ्रांस और जर्मनी में आश्चर्यकर संख्या में विद्यार्थी भेजे जाते रहे। पश्चिम से शिक्षा प्राप्त करने के लिए हर तरह की कोशिश की जाती थी। साम्राजी प्रतियोगिता-परीक्षाओं की प्राचीन व्यवस्था बन्द कर दी गई और वसन्त की वर्षा के बाद बाँस के अंकुरों की तरह आधुनिक स्कूल उग आये। अपनी तरुणाई में मैंने भी नई शिक्षा प्राप्त करने की कोशिश की।

" आधुनिक पश्चिमी बूर्ज्वा जनतांत्रिकता की संस्कृति, तथाकथित 'नवीन शिक्षा' के भीतर उस काल की सामाजिक विचारधाराएँ और प्राकृतिक विज्ञान भी सम्मिलित थे, जो चीनी सामन्ती संस्कृति, तथाकथित 'प्राचीन शिक्षा' के विरुद्ध थे।

" काफी लम्बे अर्से तक नवीन शिक्षा के अनुयायी विश्वास करते थे कि इससे चीन की मुक्ति होगी। प्राचीन शिक्षा के अनुयायियों को छोड़ नवीन शिक्षा के बहुत ही कम अनुयायी उसके प्रति सन्देह प्रकट करते थे। चीन की रक्षा के लिए केवल एक ही उपाय था कि उसे आधुनिक बनाया जाय, और आधुनिक बनाने का रास्ता था बाहर के देशों से सीखना।

" उस समय बाहर के देशों में केवल पश्चिमी पूँजीवादी देश ही प्रगतिशील थे। वह आधुनिक बूर्ज्वा राज्य कायम करने में समर्थ हुए थे। जापानियों ने पश्चिम से बहुत काम की बातें सीखीं, और चीन ने अब जापान से सीखने की इच्छा की। जैसाकि उस समय उसे चीनी देखते थे, एक पिछड़ा देश था, उससे बहुत कम ही लोग कुछ सीखना चाहते थे।

" इस तरह 1840 ई. से 20वीं सदी के आरम्भ तक के समय में चीनियों ने बाहरी देशों से सीखना चाहा।

"साम्राज्यवादी आक्रमणों ने पश्चिम से शिक्षा प्राप्त करने के भ्रम को तोड़ दिया। क्या यह अचरज की बात नहीं थी कि गुरु अपने शिष्यों का ही सिर मूड़ना चाहे ?

" चीनियों ने पश्चिम से काफी सीखा, लेकिन उन्होंने जो कुछ सीखा, उसे वह काम में नहीं ला सकते थे, अपने आदर्श को जीवन में अनुभूत नहीं कर सकते थे। उनके बहुत-से संघर्ष, जिनमें 1911 ई. की क्रान्ति जैसा राष्ट्रव्यापी आन्दोलन भी सम्मिलित है, अन्त में असफल हुए। दिन-पर-दिन देश की अवस्था बहुत बुरी होती गई, यहाँ तक कि अन्त में जीवन असम्भव हो गया। सन्देह पैदा हुआ, बढ़ा और फैला। प्रथम विश्वयुद्ध के सारे भूमण्डल को कम्पित कर दिया। रूसियों ने अक्तूबर-क्रान्ति को सफलतापूर्वक पूरा कर दुनिया में प्रथम समाजवादी राज्य का निर्माण किया। लेनिन और स्तालिन के नेतृत्व में महान् रूसी सर्वहारा और कमकर जनता की क्रान्तिकारी शक्ति—जोकि अब तक बाहरवालों के लिए अनर्हित और अदृश्य थी—ज्वालामुखी की तरह एकाएक फूट निकली। चीनी जनता और सारी मानवता रूसियों को नई रोशनी में देखने लगी।

"तभी और केवल तभी चीनी विचार और जीवन दोनों के सम्बन्ध में एक बिलकुल नये युग में चीनियों ने प्रवेश किया। उन्होंने मार्क्सवाद-लेनिनवाद को विश्वव्यापी सत्य पाया, जिसको हर जगह इस्तेमाल किया जा सकता है। चीन का चेहरा बदलने लगा।

" यह रूसी ही थे, जिनके द्वारा चीनियों ने मार्क्सवाद का परिचय प्राप्त किया। अक्तूबर-क्रांति के पहले केवल लेनिन और स्तालिन ही नहीं, बल्कि मार्क्स या एंगेल्स का भी चीनियों को पता नहीं था। अक्तूबर-क्रान्ति के गोलों की आवाज ने हमें मार्क्सवाद-लेनिनवाद के लिए जगा दिया। अक्तूबर-क्रान्ति ने चीन और सारी दुनिया के प्रगतिशीलों को किसी जाति के भविष्य को दूर तक देखने और अपनी-अपनी समस्याओं को नई तरह से

सोचने के लिए एक हथियार के तौर पर सर्वहारा के विश्व दृष्टिकोण को स्वीकार करने में सहायता दी। निष्कर्ष निकला 'रूसियों के रास्ते पर चलो।' 1919 ई. में चीन में चतुर्थ मई-आन्दोलन आरम्भ हुआ, 1921 ई. में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी स्थापित हुई। निराशा के गड़हे में पड़े सुन्-यात्-सेन ने अक्तूबर-क्रान्ति और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी को देखा। उन्होंने अक्तूबर-क्रान्ति का स्वागत किया, चीन के लिए रूसी सहायता का स्वागत किया, और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के सहयोग का स्वागत किया।

" सुन्-यात्-सेन् की मृत्यु पर शक्ति च्यांग काइ-शेक के हाथ में गई। 22 साल के लम्बे अर्से तक च्यांग काइ-शेक चीन को निराशापूर्ण खड्ड में घसीटता रहा।

" इसी काल में फासिस्त-विरोधी द्वितीय विश्वयुद्ध हुआ, जिसमें सोवियत संघ मुख्य शक्ति था। इसके कारण तीन बड़ी साम्राज्यवादी शक्तियों का पतन और दो दूसरी का निर्बल होना हुआ। केवल एक बड़ी साम्राज्यवादी शक्ति–संयुक्त राष्ट्र–अक्षत निर्लेप बच निकला। किन्तु संयुक्त राष्ट्र का घरेलू संकट बहुत भयंकर है, इसलिए वह दुनिया को गुलाम बनाना चाहता है। च्यांग काइ-शेक को हथियार देकर उसने करोड़ों चीनियों की हत्या करने में सहायता की है। चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चीनी जनता ने जापान साम्राज्यवादियों को मार भगाने के बाद तीन साल तक मुक्ति-युद्ध को जारी रक्खा और मौलिक रूप से विजय प्राप्त की।

" यही बात है, जो चीनी जनता की आँखों में पश्चिमी बूर्ज्वा सभ्यता, बूर्ज्वा जनतांत्रिकता, बूर्ज्वा ढंग का गणराज्य सभी दिवालिया दीख पड़े। बूर्ज्वा जनतांत्रिकता का स्थान जनता की जनतन्त्रता ने, मजूर-वर्ग के नेतृत्व ने लिया और बूर्ज्वा गणराज्य का स्थान जनता के गणराज्य ने। जनता के गणराज्य ने समाजवाद और साम्यवाद, वर्गों में और विश्वव्यापी समन्वय करने की सम्भावना पैदा की।

" कांग यू वेइ ने 'विश्वव्यापी समन्वय' पुस्तक लिखी, लेकिन उसे विश्वव्यापी समन्वय का रास्ता न मिला न मिल सकता था। बूर्ज्वा-गणराज्य जैसी चीज दूसरे देशों में मौजूद रही, किन्तु चीन में वह नहीं कायम रह सकती थी; क्योंकि वह साम्राज्यवाद द्वारा उत्पीड़ित देश था। विश्वव्यापी समन्वय का एकमात्र रास्ता है मजूर-वर्ग के नेतृत्व में जनता का गणराज्य।

" हमारे 28 वर्ष के अस्तित्व में हम उसी निष्कर्ष पर पहुँचे, जिसे कि सुन्-यात्-सेन् ने अपनी वसीयत में अपने चालीस साल के अनुभव द्वारा बतलाया था, अर्थात्, 'इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमें अपनी जनता को पूरी तौर से जाग्रत करना होगा, और उन लोगों के साथ सम्मिलित संघर्ष में हमें सहयोग देना होगा, जो हमारे साथ समानता के आधार पर बर्ताव करते हैं।' सुन् यात्-सेन का विश्व-दृष्टिकोण हमसे भिन्न था। समस्याओं का अध्ययन और अनुशीलन उन्होंने वर्ग-दृष्टिकोण से आरम्भ किया था तो भी साम्राज्यवाद के विरुद्ध कैसे संघर्ष किया जाय, इस प्रश्न पर 1920 ई. में आधाररूपेण वह उसी निष्कर्ष पर पहुँचे, जिस पर कि हम।

" सुन् यात्-सेन् को मरे बाईस वर्ष हो गये। इस बीच चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चीनी क्रान्तिकारी सिद्धान्त और प्रयोग प्रचण्ड रूप से आगे बढ़े और उन्होंने चीन के चेहरे को मौलिक रूप से बदल दिया।

" अपने जीवन-काल में सुन् यात्-सेन् ने अनगिनत बार पूँजीवादी देशों से सहायता के लिए प्रार्थना की, लेकिन सब बेकार ही नहीं गया, बल्कि उनकी ओर से हृदयहीन दुत्कार भी मिली। अपने जीवन में डा. सुन् यात-सेन् ने एक ही बार अन्तर्राष्ट्रीय सहायता प्राप्त की और वह सोवियत संघ से। "

इस प्रकार चीन के अतीत का सिंहावलोकन करने के बाद नये चीन के भावी काम के बारे में माओ चे-तुंग ने कहा :

" हमारा वर्तमान कार्य है जनता के राज्य-यन्त्र–मुख्यतः जनता की सेना, जनता की पुलिस और जनता की अदालतों को मजबूत करना, ताकि राष्ट्रीय प्रतिरक्षा को ठीक रक्खा जा सके और जनता के हितों की रक्षा की जा सके। इन स्थितियों में मजूर-वर्ग और कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चीन एक कृषि-प्रधान देश से उद्योग-प्रधान देश और एक नवीन जनतांत्रिक देश से समाजवादी और अन्त में साम्यवादी समाजवाले देश के रूप में दृढ़तापूर्वक वस्तुसत्य बनेगा।

" सेना पुलिस और अदालतें राज्य की मशीनें हैं, वह हथियार हैं, जिसके द्वारा एक वर्ग दूसरे वर्ग का

उत्पीड़न करता है। वह हिंसात्मक है और निश्चय ही 'कल्याणकारी' नहीं है।

" तुम कल्याणकारी नहीं हो।" बिल्कुल ठीक, निश्चय ही हम प्रतिक्रियावादियों या प्रतिक्रियावादी वर्गों के क्रान्ति-विरोधी कार्यों के प्रति कल्याणकारी नीति को नहीं स्वीकार करते। हमारी कल्याणकारी नीति केवल जनता के लिए है। वह उन कार्रवाइयों अथवा उन व्यक्तियों के लिए नहीं है, जोकि जनता की पाँती से बाहर हैं।

" जनता का राज्य जनता की रक्षा के लिए है। एक बार जब जनता का राज्य हो गया, तो जनता के लिए राष्ट्रव्यापी तौर से, व्यापक पैमाने पर अपने को शिक्षित करने और सुधारने के लिए जनता के वास्ते उसका इस्तेमाल करना सम्भव है। इस प्रकार वह अपने को देशी और विदेशी प्रतिक्रियावादियों के प्रभाव से मुक्त कर सकती है। (यह प्रभाव आज भी बहुत मजबूत हैं और भविष्य में एक लम्बे अर्से तक रहेंगे, उन प्रभावों को जल्दी खतम नहीं किया जा सकता।) इस प्रकार लोग पुराने समाज से प्राप्त अपनी बुरी आदतों और विचारों को फिर से ढाल सकते हैं, प्रतिक्रियावादियों के बहकावे से बचकर समाजवादी और फिर साम्यवादी समाज की ओर बढ़ने और विकास करने को जारी रख सकते हैं।

" इसके बारे में हम जिन तरीकों को इस्तेमाल करते हैं, वह जनतांत्रिक हैं, अर्थात् जबर्दस्ती नहीं, बल्कि समझाने-बुझाने के तरीके। यदि कोई कानून तोड़ता है, तो उसको दण्ड मिलेगा, जेल अथवा मृत्युदण्ड भी दिया जायेगा। लेकिन यह वैयक्तिक मामले होंगे, जो वर्ग के तौर पर प्रतिक्रियावादियों के ऊपर लादी अधिनायकता से सिद्धान्तरूपेण भिन्न होंगे।

" प्रतिक्रियावादी वर्गों और समुदायों से सम्बन्ध रखनेवालों का जहाँ तक सम्बन्ध है, हम उन्हें भी भूमि देंगे और उनकी राजनीतिक प्रभुता के उखाड़े जाने के बाद उन्हें जीविका कमाने एवं श्रम द्वारा अपने को नये व्यक्तियों के रूप में फिर से ढालने का अवसर देंगे; लेकिन केवल एक शर्त पर कि वह विद्रोह न करें, तोड़-फोड़ या अशान्ति न पैदा करें। अगर वह काम करना नहीं चाहते, तो जनता का राज्य उन्हें मजबूर करेगा। साथ ही, उनके सम्बन्ध में प्रचार और शिक्षा-सम्बन्धी काम उसी सावधानी और गम्भीरता के साथ किया जायगा, जैसेकि हमने बन्दी बनाये सैनिक अफसरों के साथ किया। इसे भी 'कल्याणकारी नीति' समझा जा सकता है, लेकिन इसे शत्रु वर्गों से आनेवालों के ऊपर जबर्दस्ती लादा जायगा। यह उस तरह का काम नहीं होगा, जिसे कि हम आत्मशिक्षण के ढंग पर क्रान्तिकारी जनता के आदमियों के बीच करते हैं।

" प्रतिक्रियावादी वर्ग के फिर से ढालने के काम को केवल एक जनता की जनतांत्रिक अधिनायकतावाला राज्य ही कर सकता है। जब यह काम पूरा हो जायगा, तो चीन का प्रधान उत्पीड़क वर्ग–जमींदार वर्ग और नौकरशाही पूँजीवादी वर्ग अर्थात् इजारादार पूँजीपति वर्ग–अन्तिम रूप से खतम हो जायगा।

" तब केवल राष्ट्रीय बूर्ज्वाजी (पूँजीपति वर्ग) बाकी रह जायगा। आज की अवस्था में उनमें से बहुतों के भीतर तुरन्त काफी उपयुक्त शिक्षा-सम्बन्धी काम आरम्भ किया जा सकता है। जब समाजवाद को जीवन में लाने अर्थात् निजी उद्योगों के राष्ट्रीयकरण का समय आयेगा, तो हम उनकी शिक्षा और फिर से ढालने के काम में एक कदम और आगे जायँगे। जनता के हाथ में एक शक्तिशाली राज्य-यन्त्र है, और वह राष्ट्रीय बूर्ज्वाजी की ओर से विद्रोह का भय नहीं खा सकती।

" किसानों का शिक्षण एक गम्भीर समस्या है। किसानों का आर्थिक जीवन बिखरा हुआ है। सोवियत संघ के तजर्बे के अनुसार इसमें काफी समय लगेगा और पर्याप्त मेहनत करनी पड़ेगी; तब कृषि को समाजवादी बनाया जा सकेगा। बिना कृषि के समाजवादीकरण के पूर्ण और दृढ़ताबद्ध समाजवाद नहीं स्थापित हो सकता। यदि हम कृषि को समाजवादी बनाना चाहते हैं, तो राज्य द्वारा संचालित उद्योग-धन्धों को प्रधानता देते हुए उन्हें एक शक्ति-उद्योग-धन्धे में हमें विकसित करना होगा। जनता की जनतांत्रिक अधिनायकतावाले राज्य को क्रमशः देश के औद्योगीकरण की समस्या को हल करना होगा।

" 1924 ई. में कुओ-मिन्तांग की प्रथम राष्ट्रीय कांग्रेस–जिसका नेतृत्व स्वयं सुन् यात-सेन् ने किया था और जिसमें कम्युनिस्टों ने भी भाग लिया था–द्वारा स्वीकृत प्रसिद्ध घोषणापत्र में कहा गया था :

" वर्तमान काल में भिन्न-भिन्न देशों में जो तथाकथित सार्वजनिक अधिकार-व्यवस्था प्रचलित है, वह अक्सर बूर्ज्वाजी की इजारादारी है, जो साधारण जनता के उत्पीड़न का एक हथियार है लेकिन कुओ-मिन्तांग के जनताधिकार का सिद्धान्त सारी साधारण जनता के लिए है, वह कुछ लोगों की निजी सम्पत्ति नहीं है।"

" अगर राज्य को बूर्ज्वाजी की निजी सम्पत्ति नहीं बल्कि सारी जनता की सार्वजनिक सम्पत्ति होने देना है, और साथ ही मजूर-वर्ग का नेतृत्व भी रखना है, तो यही जनता की जनतांत्रिक अधिनायकता की राज्य-व्यवस्था है।

" च्यांग काइ-शेक ने सुन् यात-सेन् के सिद्धान्तों के साथ विश्वासघात किया। उसने चीन की साधारण जनता के उत्पीड़न के लिए नौकरशाही पूँजीपति वर्ग और जमींदार वर्ग की अधिनायकता को हथियार के तौर पर इस्तेमाल किया। यह क्रान्तिविरोधी अधिनायकता बाईस सालों तक कायम रही। केवल आज ही हमारे नेतृत्व में चीन की साधारण जनता इसे उखाड़ फेंकने में सफल हुई।

" विदेशी क्रान्ति-विरोधी, जोकि हमारे ऊपर 'अधिनायकता और सर्वयोगवाद' कायम करने का आरोप लगाते हैं–वही लोग हैं, जोकि स्वयं अधिनायकता और सर्वांग-कुशता का व्यवहार कर रहे हैं। वह एक वर्ग की अधिनायकी-व्यवस्था, एक वर्ग की सर्वांगकुशता, बूर्ज्वाजी की सर्वांगकुशता को सर्वहारा वर्ग और जनता के दूसरे अंशों के दबाने के काम में ला रहे हैं।

" यह वही लोग हैं, जिनका उल्लेख सुन् यात-सेन् ने आजकल के प्रत्येक देश में साधारण जनता के उत्पीड़क बूर्ज्वाजी के तौर पर किया है। ऐसे ही प्रतिक्रियावादी गुट से च्यांग काइ-शेक ने सीखा कि अपनी क्रान्ति-विरोधी अधिनायकता को कैसे लागू किया जाय।

" सुंग-वंश (960-1279 ई.) के दार्शनिक चू शि ने बहुत-सी पुस्तकें लिखीं और बहुत-सी बातें लिख छोड़ी हैं, उसे लोग भूल गये हैं। लेकिन उसकी एक कहावत अब भी याद है : 'उसके साथ वैसा करो, जैसा कि वह दूसरों के साथ करता है।' ठीक यही बात हम कह रहे हैं। हम साम्राज्यवादियों और उनके गीदड़ों च्यांग काइ-शेक के प्रतिक्रियावादी गुट के साथ वही करते हैं, जैसाकि वह दूसरों के साथ करते हैं। बस यही।

" क्रान्तिकारी अधिनायकता और क्रान्ति-विरोधी अधिनायकता अपने स्वभाव में एक-दूसरे से बिल्कुल उलटी हैं, तो भी क्रान्तिकारी अधिनायकता ने क्रान्ति-विरोधी अधिनायकता से सीख ली है। इस तरह की सीख लेना बहुत महत्त्व रखता है। यदि क्रान्तिकारी जनता क्रान्ति-विरोधियों के ऊपर शासन करने के ढंगों में कुशल न हो, तो वह अपने राजनीतिक प्रभुत्व को कायम नहीं रख सकती, और उसे देशी और विदेशी क्रान्ति-विरोधी उखाड़ फेंकेंगे। क्रान्ति-विरोधी अपने शासन को चीन पर फिर से स्थापित कर देंगे, जिससे क्रान्तिकारी लोगों का सर्वनाश होगा।

" जनता की जनतांत्रिक अधिनायकता का आधार है मजूर-वर्ग, किसान-वर्ग और नगर का निम्न-मध्य-वर्ग (पेती बूर्ज्वाजी)। मुख्य तौर से वह मजूरों और किसानों के बीच की एकता है क्योंकि यह दोनों वर्ग मिलकर चीन की आबादी में 80 से 50 सैकड़े तक हैं। साम्राज्यवाद और कुओ-मिन्तांग के प्रतिक्रियावादी गुट को उखाड़ फेंकने के लिए मुख्य शक्ति यही दो वर्ग हैं। इन्हीं दोनों वर्गों की एकता पर नवीन जनतंत्रता से समाजवाद के रूप में परिवर्तित होना भी मुख्यतः निर्भर करता है।

" जनता की जनतांत्रिक अधिनायकता को मजूर-वर्ग के नेतृत्व की आवश्यकता है। वह इसीलिए कि मजूर-वर्ग अत्यन्त दूरदर्शी वर्ग है, क्रान्ति में वह अत्यन्त निःस्वार्थ, न्यायप्रवण, गम्भीर तथा स्थिर है। क्रान्ति का सारा इतिहास इसे सिद्ध करता है कि बिना मजूर-वर्ग के नेतृत्व के क्रान्ति असफल होगी और उसके साथ होने पर क्रान्ति अन्त में विजयी होगी। साम्राज्यवाद के युग में किसी देश में कोई दूसरा वर्ग सच्ची क्रान्ति को विजय की ओर नहीं ले जा सकता। इसकी सत्यता का प्रमाण यह भी है कि चीन के निम्न-मध्यम-वर्ग और राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग ने कितने ही अवसरों पर क्रान्ति का नेतृत्व किया, लेकिन सभी का अवसान असफलता के साथ हुआ।

" वर्तमान अवस्था में राष्ट्रीय पूँजीपति वर्ग (बूर्ज्वाजी) का भारी महत्त्व है। अभी भी हम एक भयंकर

शत्रु साम्राज्यवाद को अपनी बगल में खड़े देख रहे हैं। चीन के लिए बहुत समय लगेगा, जबकि उसे सच्ची आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त होगी। यह तभी होगा, जबकि उसका उद्योग-धन्धा विकसित हो जायगा और आर्थिक तौर पर उसका दूसरे देशों पर भी निर्भर रहना खतम हो जायगा, तभी चीन पूर्ण और सच्ची स्वतन्त्रता अनुभव करेगा।··· हमारी वर्तमान नीति है पूँजीवाद को खतम न करना, बल्कि उस पर नियंत्रण करना। राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग क्रान्ति का नेतृत्व नहीं कर सकता, उसे राज्य-प्रबन्ध में प्रधान स्थान नहीं प्राप्त होना चाहिए। यह इसलिए कि राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग की सामाजिक और आर्थिक स्थिति उसके स्वभाव में निर्बलता पैदा करती है। उसके पास दूरदृष्टि और पर्याप्त साहस नहीं है। खास करके इस वर्ग के काफी व्यक्ति जनता से डरते हैं।

" सुन् यात्-सेन् 'जनता-जागरण' अथवा 'कमकर-किसानों' को सहायता करने की बात मानते थे। लेकिन कौन उन्हें 'जाग्रत' करेगा, या कौन उनकी सहायता करेगा ? सुन् यात-सेन् की राय में यह निम्न मध्यवर्ग और राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग था। लेकिन वस्तुतः यह होनेवाली बात नहीं थी। सुन् यात-सेन् के 30 वर्ष के क्रान्तिकारी काम के असफल होने का क्या कारण था ? साम्राज्यवाद के युग में निम्न-मध्यम वर्ग और राष्ट्रीय पूँजीपति-वर्ग किसी सच्ची क्रान्ति को विजय की ओर ले जाने में असमर्थ हैं, यही कारण था।

" हमारे 28 साल उससे बिलकुल भिन्न रहे हैं। हमारे पास बहुत-से मूल्यवान् अनुभव हैं, जिनका सार निम्न तीन तथ्यों में है : (1) प्रथम तथ्य है अनुशासनयुक्त पार्टी, जोकि मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन और स्तालिन के सिद्धान्त द्वारा हथियारबन्द है, जो आत्मालोचना के तरीके को इस्तेमाल में लाती तथा जनता के साथ घनिष्ठतया सम्बद्ध है, (2) ऐसी पार्टी के द्वारा संचालित एक सेना है, और (3) ऐसी पार्टी के नेतृत्व में सभी क्रान्तिकारी पार्टियों और समुदायों का संयुक्त मोर्चा है। यह तथ्य हमारे पूर्वजों से हमें भिन्न बतलाते हैं। इन्हीं तीन बातों के आलम्बन ने हमें मौलिक विजय प्राप्त कराया।

" कोई राजनीतिक पार्टी या व्यक्ति भूलों से बच नहीं सकता। लेकिन, हम इसकी माँग करते हैं कि भूलें कम से कम हों। जब कोई भूल हो गई, तो हम उसे ठीक करने की माँग करते हैं और वह जितना ही जल्दी तथा पूरी तौर से किया जाय उतना ही अच्छा।

" अपने अनुभवों को संक्षेप में कहते और उन्हें गागर में सागर के तौर पर रखते कहना होगा : जनता की जनतांत्रिक अधिनायकता का नेतृत्व कम्युनिस्ट पार्टी द्वारा कमकर-वर्ग करता है, और वह कमकरों और किसानों की मैत्री पर आधारित है। इस अधिनायकता को सभी अन्तर्राष्ट्रीय क्रान्तिकारी शक्तियों के साथ एकताबद्ध करना होगा।

" सोवियत समाजवादी गणसंघ की कम्युनिस्ट पार्टी हमारी सबसे अच्छी शिक्षक है, हमें उससे सीखना होगा। देश और विदेश की स्थिति हमारे अनुकूल है। हमें पूरी तौर से जनता की जनतांत्रिक अधिनायकता के हथियार पर भरोसा करते प्रतिक्रियावादियों को छोड़ सारे देश की सभी जनता को एकताबद्ध करके दृढ़तापूर्वक अपने लक्ष्य की ओर बढ़ना है। "

2. राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन

युद्ध के मैदान में चीन के प्रतिक्रियावादी शासकों को खदेड़ते हुए जिस तरह स्थान-स्थान पर अस्थायी तौर से शासन तथा दूसरे प्रबन्धों को चलाने का काम माओ चे-तुंग बड़ी योग्यतापूर्वक कर रहे थे, इसी तरह उनका ध्यान सारे देश के लिए एक सुव्यवस्थित सरकार के तैयार करने की ओर गया। इसी के लिए राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन बुलाया गया।

(1) सम्मेलन के प्रतिनिधि—प्रथम राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन में 662 प्रतिनिधियों की निम्नलिखित संख्या बतलाती है कि देश में उनका कितना महत्त्व है :

	नाम	प्रतिनिधि	विकल्प
1.	कम्युनिस्ट पार्टी	16	2
2.	कुओ-मिन्तांग क्रान्तिकारी कमेटी	16	2

3.	चीन जनतांत्रिक लीग	16	2
4.	जनतांत्रिक राष्ट्रीय निर्माण एसोसियेशन	12	2
5.	अ-पार्टी जनतंत्रतावादी	10	2
6.	चीन जनतंत्रतावादी संवर्द्धन एसोसियेशन	8	1
7.	चीन किसान-कमकर जनतांत्रिक पार्टी	10	2
8.	चीन जनता राष्ट्रीय मुक्ति एसोसियेशन	10	2
9.	चीन जनता-सिद्धान्त साथी एसोसियेशन	10	2
10.	चीन जनतंत्रता संर्वद्धन कुओ-मिन्तांग एसोसियेशन	8	1
11.	चीन चीह कुंग तांग	6	1
12.	च्यू सान सभा	5	1
13.	ताइवान जनतांत्रिक स्वायत्त सरकार लीग	5	1
14.	चीन नव-जनतांत्रिक तरुण लीग	10	2
	पश्चिमोत्तर मुक्त क्षेत्र	15	2
	उत्तर चीन मुक्त क्षेत्र	15	2
	पूर्व चीन मुक्त क्षेत्र	15	2
	केन्द्रीय चीन मुक्त क्षेत्र	15	2
	दक्षिण चीन मुक्त क्षेत्र	8	1
	भीतरी मंगोलीय स्वायत्त भू-क्षेत्र	6	1
	पेकिंग और तियान्-चिन् नगरपालिकाएँ	6	1
	अ-मुक्त क्षेत्रों के जनतांत्रिक तत्त्व	7	1
	चीनी जन-मुक्ति-सेना हेडक्वार्टर	12	2
	जन-मुक्ति-सेना की प्रथम मैदानवाहिनी	10	2
	जन-मुक्ति-सेना की द्वितीय मैदानवाहिनी	10	2
	जन-मुक्ति-सेना की तृतीय मैदानवाहिनी	10	2
	जन-मुक्ति-सेना की चतुर्थ मैदानवाहिनी	10	2
	दक्षिण चीन जन-मुक्ति-सेना	8	1
	अखिल चीन मजूर-संघ	16	2
	मुक्त क्षेत्रों के किसान-संगठन	16	2
	अखिल चीन जनतांत्रिक महिला संघ	15	2
	अखिल चीन जनतांत्रिक तरुण-संघ	12	2
	अखिल चीन जनतांत्रिक छात्र-संघ	9	1
	सारे चीन के औद्योगिक और व्यापारिक हलके	15	2
	शांघाइ जनता के संगठन	9	1
	अखिल चीन साहित्य-कला हलकों के संघ	15	2
	प्रथम अखिल चीन प्राकृतिक विज्ञान कमकर सम्मेलन की तैयारी कमेटी	15	2
	अखिल चीन शिक्षा कमकर सम्मेलन की तैयारी कमेटी	15	2
	अखिल चीन सामाजिक विज्ञान कमकर सम्मेलन की तैयारी कमेटी	12	2

अखिल चीन पत्रकार एसोसियेशन की तैयारी कमेटी	12	2
जनतांत्रिक पेशेवर लीग	10	2
चीन के भीतर अल्पसंख्यक जातियाँ	10	2
विदेश के जनतांत्रिक चीनी	15	2
जनतांत्रिक धार्मिक हलके	7	1
विशेषतया निमंत्रित	75	
सर्वयोग	662	

(2) माओ का उद्घाटन-भाषण—सम्मेलन के उद्घाटन भाषण में माओ चे-तुंग ने कहा :

" जोड़ीदार प्रतिनिधियो,

" राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन का—जिसकी ओर सारे देश के लोग टकटकी लगाये हुए थे—अब उद्घाटन हो रहा है।

" हमारे सम्मेलन में चीन की सभी राजनीतिक पार्टियाँ और समुदायों, सार्वजनिक संगठनों, जन-मुक्ति-सेना, भिन्न-भिन्न भू-क्षेत्रों, सभी जातियों और समुद्र-पार के चीनियों के प्रतिनिधि हैं। यह बतलाता है कि हमारा सम्मेलन एक महान् राष्ट्रव्यापी सार्वजनिक एकता का प्रतिनिधित्व करता है।

" इस प्रकार की सभी महान् राष्ट्रव्यापी सार्वजनिक एकता इसीलिए प्राप्त हो सकी कि हमने कुओ-मिन्तांगी प्रतिक्रियावादी सरकार को हरा दिया, जिसकी पीठ पर अमेरिकन साम्राज्यवाद था। इस समय जन-मुक्ति-सेना की कई लाख वाहिनियाँ युद्ध को ताइवान, क्वांग-तुंग, क्वांग-सी, जेचुआन् और सिंग-कियांग में पड़ोस में ले गई हैं और चीनी जनता का भारी भाग स्वतंत्र हो चुका है। इस तीन वर्ष से कुछ अधिक समय में सारे देश की जनता ने सपने को एकताबद्ध किया, जन मुक्ति-सेना को सहायता दी, अपने शत्रु का मुकाबला किया और मौलिक विजय प्राप्त की। इसी आधार के ऊपर जनता का राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन बुलाया गया है।

" हमारे सम्मेलन का नाम राजनीतिक सलाहकार इसलिए रक्खा गया है कि तीन साल पहले च्यांग काइ-शेक की कुओ-मिन्तांग के साथ मिलकर हमने राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन किया था।

" उस सम्मेलन के निर्णयों को च्यांग काइ-शेक की कुओ-मिन्तांग और उसके गुटवालों ने विफल कर किया, लेकिन उसने जनता के ऊपर एक अमिट छाप छोड़ी।

" चीनी जनता का वर्तमान राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन एक बिलकुल दूसरे, नये आधार पर बुलाया गया है। यह सारे देश की जनता का प्रतिनिधित्व करता है। इसे उसका विश्वास और समर्थन प्राप्त है। इसलिए चीनी जनता का राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन घोषित करता है कि यह अखिल चीन जनता कांग्रेस के सभी अधिकारों और कर्तव्यों को कार्यरूप में परिणत करेगा। "

माओ ने इस उद्घाटन-भाषण में आगे कहा :

"चीनी जनता, जो सारे विश्व की एक-चौथाई है—आज उठ खड़ी हुई है। चीन सदा से महान्, वीर और मेहनती राष्ट्र रहा है। अभी हाल ही की बात है, जबकि हमारा राष्ट्र पिछड़ गया। इस पिछड़ने का कारण मुख्यतः विदेशी साम्राज्यवाद और घर में प्रतिगामी सरकार का अत्याचार और शोषण है। एक शताब्दी से ऊपर तक हमारे पूर्वज—जिनमें हमारी चीन की आज की क्रान्ति के अग्रदूत तथा 1911 की क्रान्ति के नेता डा. सुन् यात-सेन् भी सम्मिलित हैं—हमारे विदेशी और स्वदेशी उत्पीड़कों के साथ लगातार संघर्ष करते रहे। हमारे पूर्वजों ने हमें शिक्षा दी और हमसे आशा रखी कि हम उनकी वसीयत को पूरा करेंगे। उसे हम आज पूरा कर रहे हैं। जनता के मुक्ति-युद्ध और जनता की महाक्रान्ति द्वारा हमने देशी-विदेशी दोनों उत्पीड़कों को पछाड़ दिया है। हम चीनी जन-गणराज्य स्थापना की घोषणा करते हैं।··· हमारा क्रान्तिकारी कार्य अभी समाप्त नहीं हुआ है।··· हमारी राज-व्यवस्था जनता की जनतान्त्रिक अधिनायकता है, जो जन-क्रान्ति की विजय के फलों की रक्षा और स्वदेशी तथा शत्रुओं के फिर से लौट आने के षड्यन्त्र के विरुद्ध भारी शक्तिशाली हथियार है।··· जनता

की जनतान्त्रिक अधिनायकता और अपने अन्तर्राष्ट्रीय मित्रों के साथ हमारी एकता हमारे निर्माण-कार्य में जल्दी सफलता प्राप्त करने में सहायक होगी। आज हमारे सामने सारे राष्ट्र में आर्थिक निर्माण का कार्य उपस्थित है। इसके लिए हमारे पास अत्यन्त उपयुक्त साधन–47½ करोड़ जनता और 95,97,000 वर्ग-किलोमीटर राष्ट्र-क्षेत्र–है। हमारे सामने कठिनाइयाँ हैं और बहुत तरह की कठिनाइयाँ हैं, लेकिन हमारा दृढ़ विश्वास है कि सारे देश की जनता के वीरतापूर्ण प्रयत्न से सारी कठिनाइयाँ दूर हो जायँगी।··· घर और बाहर के प्रतिगामियों को हमारे सामने काँपने दो। उन्हें लांछन लगाने दो कि हम इस या उस बात में किसी काम के नहीं हैं।"

चीनी संविधान-सभा (चीनी जनता का राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन) ने 30 सितम्बर को घोषित किया– " सारे देश के देशभाइयो, चीनी जनता के सलाहकार सम्मेलन के प्रथम अधिवेशन ने अपने कार्य को सफलतापूर्वक पूरा कर दिया। यह सम्मेलन सभी राजनीतिक पार्टियों और समुदायों, जन-संगठनों, जन-मुक्ति-सभा, भिन्न-भिन्न क्षेत्रों, भिन्न-भिन्न जातियों, प्रवासी चीनियों एवं सारे देश के देशभक्त जनतांत्रिक तत्त्वों के प्रतिनिधियों से मिलकर बनाया गया था। यह सम्मेलन सारे देश की जनता की इच्छाशक्ति का प्रतिनिधित्व एवं अभूतपूर्व महान् एकता को प्रदर्शित करता है। अमरीकन साम्राज्यवाद की सहायता-प्राप्त च्यांग काइ-शेक की प्रतिगामी कुओ-मिन्तांग सरकार को हराकर चीनी कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में चीनी जनता और जन-मुक्ति-सेना के चिरव्यापी वीरतापूर्ण संघर्ष द्वारा यह महान् एकता प्राप्त हुई है।··· चीनी जनता ने अपने शत्रुओं को परास्त किया, चीन के रूप को बदल दिया और चीनी जन-गणराज्य की स्थापना की। हम 47½ करोड़ चीनी जनता आज अपने पैरों पर खड़े हैं और हमारे राष्ट्र का भविष्य असीम उज्ज्वल है। जननायक अध्यक्ष माओ चे-तुंग के नेतृत्व में हमारे सम्मेलन ने एक इच्छाशक्ति के साथ नवीन जनतन्त्रता के सिद्धान्तों के अनुसार अपना संविधान तैयार किया।

" सारे देश के देशभाइयो, चीनी जन-गणराज्य की स्थापना उद्घोषित कर दी गई। अब चीनी जनता के पास अपनी केन्द्रीय सरकार है। यह सरकार चीन की सीमा के भीतर सामान्य प्रोग्राम (संविधान) के अनुसार जनता की जनतांत्रिक अधिनायकता को कार्यरूप में परिणत करेगी।

" सारे देश के देशभाइयो, हमें अपने को संगठित करना है। चीन की सर्वाधिक जनता को राजनीतिक, सैनिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा दूसरे संगठनों में संगठित करके चीन की ढीलम-ढाल तथा अस्त-व्यस्त अवस्था को दूर करना है और एक स्वतन्त्र, जनतांत्रिक, शान्तिपूर्ण, एकताबद्ध, समृद्ध और सबल नवीन चीन के निर्माण के लिए जनसाधारण की महती सामूहिक शक्ति के साथ जन-सरकार और मुक्ति-सेना की सहायता करनी है। अनन्त जय उन जन-वीरों के लिए, जो जन-मुक्ति-युद्ध और जन-क्रान्ति पर निछावर हुए।

" चिरंजीव चीनी जनता की महान् एकता।

" चिरंजीव चीनी जनगणराज्य।

" चिरंजीव केन्द्रीय जन-सरकार। "

चीनी जनगणराज्य की केन्द्रीय जन-सरकार के अध्यक्ष माओ चे-तुंग ने प्रथम अक्तूबर, 1949 को केन्द्रीय सरकार की स्थापना की घोषणा करते हुए पेकिंग में कहा था–"साम्राज्यवादियों से मिलकर पितृभूमि के साथ विश्वासघात करते जब से च्यांग काइ-शेक की प्रतिगामी कुओ-मिन्तांग सरकार ने क्रान्ति-विरोधी युद्ध छेड़ा, तब से चीन की जनता भीषण कष्ट और संकट में पड़ गई किन्तु सारे देश की सहायता प्राप्त करके हमारी जन-मुक्ति-सेना ने बड़ी बहादुरी और आत्म-त्याग के साथ लड़ते हुए पितृभूमि के प्रादेशिक सर्वप्रभुत्व की रक्षा, जनता के प्राणों और सम्पत्ति की सुरक्षा, जनता के कष्ट को दूर करने और उसके अधिकारों के लिए संघर्ष किया, प्रतिगामी सेनाओं को खतम कर दिया और राष्ट्रीय सरकार के प्रतिगामी शासन को उलट दिया।

" सारे देश की जनता की इच्छाशक्ति का प्रतिनिधित्व करते हुए चीनी जनता के राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन के इस अधिवेशन ने चीनी जन-गणराज्य की केन्द्रीय जन-सरकार के मुख्य विधान का निर्माण किया, माओ चे-तुंग को केन्द्रीय जन-सरकार का अध्यक्ष निर्वाचित किया तथा चीनी जन-गणराज्य की स्थापना को घोषित करते हुए निश्चय किया कि पेकिंग चीनी जन-गणराज्य की राजधानी होगी।

" चीनी जन-गणराज्य की केन्द्रीय जन-शासन-परिषद् ने इस राजधानी में कार्य-भार स्वीकार किया और यह भी कि परिषद् के सदस्यों में से लिन्-पो चु को केन्द्रीय जन-शासन-परिषद् महासचिव, चाउ एन्-लाइ को महामन्त्री तथा विदेशमन्त्री, चू-तेह को जन-मुक्ति-सेना का प्रधान सेनापति, शेन्-चुन्-जू को उच्चतम जन-न्यायालय का मुख्य न्यायाधिपति और लो-जुंग ह्वान को महान्यायाधिपति नियुक्त करते हुए इस काम का अधिकार दिया कि सरकार के कार्य का परिचालन करने के लिए भिन्न-भिन्न सरकारी अंगों का निर्माण करें।

" साथ ही केन्द्रीय जन-शासन-परिषद् ने निश्चय किया कि दूसरे सभी देशों को घोषित कर दिया जाय, कि यही चीनी जन-गणराज्य की सारी जनता का प्रतिनिधित्व करनेवाली एकमात्र वैध सरकार है। यह सरकार ऐसी किसी भी विदेशी सरकार के साथ दौत्य सम्बन्ध स्थापित करने के लिए तैयार है, जो समानता, पारस्परिक लाभ, प्रादेशिक अविभक्तता तथा सर्वप्रभुत्व का ख्याल रखने के लिए तैयार है। "

(3) महान् एकता और महाशक्ति—नवीन चीन का जन्म हो गया, और उसने अपने सभी बालग्रहों को पछाड़कर अपने अस्तित्व की घोषणा कर दी, लेकिन उसके बाहरी शत्रु अभी हार मानने के लिए तैयार नहीं हैं। अब भी वे चीन की महान् एकता और भीषण संघर्षों में पैदा हुई महाशक्ति को छिन्न-भिन्न करने की आशा रखते हैं। यह निश्चित है, कि उनकी यह सारी आशा दुराशा-मात्र रहेगी। च्यांग से निराशा होने पर चीनी मुस्लिम तानाशाह मा पू-फांग पर उन्होंने आशा केन्द्रित की—ठीक डूबते को तिनके का सहारा। मा पू-फांग जन-मुक्ति-सेना के एक ही थपेड़े में मैदान छोड़कर अपने स्वामियों के पास कान्तन् पहुँचा और वहाँ से भी निराश हो बेचारे ने मक्का-शरीफ की शरण ली। उसने अपने अनुयायियों की तो क्या, अपने बेटे तक की भी खबर नहीं ली, जो आज मा पू-फांग की भगोड़ी सैनिक टुकड़ी के लिए पूर्व, पश्चिम और उत्तर में कोई रास्ता न देख दक्षिण की ओर भागने को सोच रहा था। तिब्बती शासक सारे विश्व के पास 'त्राहि माम् त्राहि माम्' की गुहार करते रहे। दुनिया के सारे प्रतिगामियों के स्वतः निर्वाचित अभिभावक इंग्लैंड और अमरीका गुहार को सुनकर अनसुनी नहीं करना चाहते थे और यह जानते हुए भी कि माओ चे-तुंग की सरकार तिब्बत के तानाशाहों की सारी चिल्ल-पों तथा उनके विदेशी अभिभावकों की वाचिक सहायता के होते भी तिब्बत को चीन से अलग नहीं होने देगी, वह विशाल चीनी जनता की भाँति तिब्बती जनता को भी खूनी संघर्ष में डालने के लिए कटिबद्ध थे। इंग्लैंड का वैदेशिक विभाग 1914 की अपनी सन्धि की दुहाई देकर तिब्बत की सर्वतन्त्र स्वतन्त्रता घोषित करना चाहता था। अमेरिका अपने भेदियों को भेजकर तिब्बत की पीठ ठोंक रहा था। हमें आशा थी कि भारत अमेरिका के बहुत नजदीक जाने की कोशिश करते हुए भी इस दुश्चेष्टा में सम्मिलित नहीं होगा, और ऐसा ही हुआ।

हमारे प्रधानमन्त्री ने नवीन चीन के प्रति रुख लिया, आशा है, वह स्थायी होगा। हमारी सरकार यह भी समझेगी कि तिब्बत के अलग अस्तित्व को स्वीकार करके हम नवीन चीन से अच्छा सम्बन्ध स्थापित नहीं कर सकते। तिब्बत की दक्षिणी और पश्चिमी सीमा के रूप में सदिया में लद्दाख तक हमारी सीमा चीन जनगणराज्य के साथ मिलती है। यदि हमारा सम्बन्ध चीन के साथ अच्छा नहीं हुआ, तो इस सारी सीमा पर पूरी सैनिक तैयारी रखने के लिए हमें अपने बजट का बहुत भारी भाग लगाना होगा। नेपाल-कुमाऊँ के सीमान्त से लद्दाख सिंग-क्यांग (चीनी तुर्किस्तान) के सीमान्त तक का हमारा और तिब्बत का सीमान्त किसी भी सरकारी नक्शे में चिह्नित नहीं है। तिब्बत के साथ ब्रिटिश सरकार का कोई सीमा-सम्बन्धी झगड़ा नहीं था। इस सीमान्त को जान-बूझकर अचिह्नित रखा गया, क्योंकि अंग्रेज पश्चिमी तिब्बत (मानसरोवर-प्रान्त) पर आँख गड़ाये हुए थे। वहाँ सतलज और सिन्धु के किनारों पर सोने की धुलाई देखकर उनके मुँह में पानी आ रहा था। यदि चीन के साथ हमारा सौहार्द स्थापित नहीं हुआ, तो ये अचिह्नित सीमाएँ भारी झगड़े का कारण बन जायँगी। अचिह्नित होने पर भी स्थानीय लोग जानते हैं कि अल्मोड़ा, गढ़वाल, टिहरी, सतलज-उपत्यका और लद्दाख में कहाँ तक हमारी भूमि है। साथ ही हमारी सीमा के भीतर बीसियों मीलों तक भारतीय नागरिक तिब्बती भाषाभाषी हैं, जिनको लेकर विवाद बढ़ सकता है।

(4) नई संस्कृति का उदय—'कम्युनिस्ट' कहने से कितने ही भोले-भाले लोगों को समझाया जाता है कि

उनका संस्कृति से कोई सम्बन्ध नहीं है, लेकिन यह बिल्कुल झूठा प्रोपैगैण्डा है। चीनी कम्युनिस्ट अपनी संस्कृति के शत्रु नहीं हैं और चीनी संस्कृति के साथ भारतीय संस्कृति का अत्यन्त घनिष्ठ सम्बन्ध है। भारतीय देन को चीन कभी भुला नहीं सकता। हमारे दर्शन, कला और विज्ञान की जो रक्षा चीन ने की है, उसे हम नहीं भुला सकते। इसलिए भी यह आवश्यक है कि एशिया के इन दोनों देशों का सम्बन्ध भाइयों जैसा हो। नवीन चीन साम्राज्यवाद, सामन्तवाद और नौकरशाही पूँजीवाद का कट्टर शत्रु है, यह वह डंके की चोट से घोषित करता है। वह इंग्लैण्ड और अमेरिका के साम्राज्यवादियों से उनके मुँह पर सीधे थप्पड़ मारते हुए उनकी पिछली करतूतों को खुले शब्दों में दोहराता है। विदेशी साम्राज्यवादियों को चेतावनी देते हुए प्रधान सेनापति चू-तेह ने कहा है–"सारे देश की जनता ने हमें सहयोग दिया, जिसके फलस्वरूप हमने जापानी साम्राज्यवादी आक्रमणकारियों को हराया, अमेरिकन साम्राज्यवाद की सहायता प्राप्त कुओ-मिन्तांग सरकार के प्रतिगामी हमले को व्यर्थ किया और अब हम चीन को एकताबद्ध तथा मुक्त करने के महान् कार्य को पूरा करने के लिए बचे-खुचे शत्रुओं का संहार कर रहे हैं। हमारे संयुक्त प्रोग्राम की माँग है कि क्रान्तिकारी युद्ध को समाप्ति तक पहुँचाएँ और चीन के सारे भू-भाग को मुक्त करें, जिसमें फारमूसा (ताइवान), खै-नान और तिब्बत भी सम्मिलित हैं।" यह कहते हुए सेनापति चू-तेह ने राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन को सम्बोधन करके कहा था–"आज मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि हम इस कार्य को करके रहेंगे।"

(5) सामान्य प्रोग्राम–चीन को सबल और समृद्ध सिर्फ बातों से ही नहीं बनाया जा सकता, इस बात को चीनी जननायक भलीभाँति समझते हैं। इसलिए अपने संविधान (सामान्य प्रोग्राम) की 60 धाराओं में से 15 उन्होंने अपने अर्थनीतिक प्रोग्राम की रखी हैं, जिनमें से कुछ हैं :

"26. चीनी जन-गणराज्य के आर्थिक निर्माण का आधारभूत सिद्धान्त है वैयक्तिक और सार्वजनिक लाभ, श्रम और पूँजी दोनों के हित, नगर और देहात के बीच पारस्परिक सहयोग और देश तथा विदेश के भीतर माल के यातायात का खयाल रखते हुए उत्पादन को बढ़ाना और आर्थिक समृद्धि लाना। सरकारी और सहयोगी उद्योगों, किसानों और दस्तकारों के वैयक्तिक व्यवसायों, निजी पूँजीवादी उद्योगों और राजकीय पूँजीवादी उद्योगों के संचालन, कच्चे माल की प्राप्ति, बाजार और मजूरों की स्थितियों, यान्त्रिक साधनों, राष्ट्रीय वित्त-सम्बन्धी नीति आदि को राज्य इस प्रकार एकताबद्ध करेगा कि सामाजिक अर्थनीति के सभी निर्माणक अंग, सारी राष्ट्रीय अर्थनीति की अभिवृद्धि के लिए राज्य-स्वामिक अर्थनीति के अधीन रहते, सहयोगिता, कार्य-विभाजन करते हुए अच्छी तरह अपना पार्ट अदा कर सकें।"

"27. देश की उत्पादक शक्ति को बढ़ाने और औद्योगीकरण के लिए किसानी सुधार सबसे आवश्यक शर्त है। उन सभी क्षेत्रों के किसानों के भूमि-स्वामित्व के अधिकार की रक्षा की जायगी, जहाँ किसानी सुधार हो चुके हैं। जहाँ अभी तक किसानी सुधार कार्यरूप में परिणत नहीं हुए हैं, वहाँ स्थानीय डाकुओं और स्वेच्छाचारी जमींदारों को हटाने, लगान तथा पोते के कम करने और खेतों के फिर से विभाजन द्वारा 'खेत किसानों को' के लक्ष्य को कार्यरूप में परिणत करने के लिए किसान जनसाधारण को किसान संगठनों के रूप में संगठित होने के लिए प्रेरित किया जायगा।"

"28. राज्य-स्वामिक उद्योगों का स्वरूप समाजवादी है। देश के आर्थिक जीवन तथा जनता की जीविका के लिए जो उद्योग अनिवार्य हैं, वे राज्य के एकताबद्ध कार्य-संचालन के अन्तर्गत होंगे। राज्य-स्वामिक सभी सम्पत्ति-स्रोत तथा उद्योग-धन्धे सारी जनता की सम्मिलित सम्पत्ति हैं।"

"29. सहयोगी (को-आपरेटिव) उद्योगों का रूप अर्द्ध-समाजवादी है और वह सारी जनता के आर्थिक जीवन का महत्त्वपूर्ण अंग है। जनता की सरकार इसके विकास में दत्तचित्त रहेगी और उसके साथ विशेष रियायत करेगी।"

"30. राष्ट्र के कल्याण और जनता की जीविका के लिए सरकार हितकारी सभी वैयक्तिक उद्योगों के क्रियात्मक संचालन को प्रोत्साहित करेगी और उनको बढ़ाने में सहायता देगी।"

"32. उत्पादन के प्रबन्ध में मजूरों के भाग लेने की व्यवस्था को राज्य-स्वामिक उद्योगों में कार्य-रूप में

परिणत किया जायगा और फैक्टरी-संचालन के नेतृत्व में फैक्टरी-प्रबन्ध समितियाँ स्थापित की जायँगी। वैयक्तिक कारखानों में श्रम और पूँजी दोनों के हितकारी सिद्धान्त को कार्य-रूप में परिणत करने के लिए मजूरों और कर्मियों की मजूर-सभाओं तथा उद्योगपतियों द्वारा सामूहिक समझौता हस्ताक्षरित किया जायगा। आजकल सरकारी तथा वैयक्तिक कारखानों में आम तौर से 8 से 10 घंटा काम करने का दिन रहेगा, किन्तु विशेष परिस्थितियों में इसमें परिवर्तन किया जा सकेगा। जन-सरकार भिन्न-भिन्न स्थानों और व्यवसायों की स्थितियों के अनुसार अल्पतम मजूरी निश्चित करेगी।"

"33. जल्दी-से-जल्दी केन्द्रीय सरकार सारे देश की सार्वजनिक और वैयक्तिक अर्थनीतिक मुख्य-मुख्य शाखाओं के पुनर्वास और विकास के लिए एक सामान्य योजना बनायेगी।··· केन्द्रीय जन-सरकार के नेतृत्व में केन्द्रीय तथा स्थानीय सरकारों के भिन्न-भिन्न आर्थिक विभाग अपनी सृजनात्मक शक्तियों तथा वैयक्तिक प्रेरणाओं को पूरी तौर से काम में लाने की सुविधा पाएँगे।"

"35. उद्योग–देश के औद्योगीकरण की नींव रखने के लिए खान, लौह-फौलाद, बिजली-शक्ति, मशीन-निर्माण, बिजली-सामग्री-निर्माण तथा मुख्य रासायनिक उद्योगों जैसे भारी उद्योगों को नियमपूर्वक पुनर्वास और विकास करने की केन्द्रीय योजना बनाई जायगी। साथ ही राष्ट्रीय कल्याण तथा जनता की जीविका के लिए हितकारी कपड़ा-उद्योग और दूसरे हलके उद्योगों को फिर से पूर्ववत् स्थापित कर दिया जायगा और उनके उत्पादन में ऐसीं वृद्धि की जायगी, जिसमें वे जनता के दैनिक उपभोग की आवश्यकता को पूरा कर सकें।"

" 37. व्यापार–सभी तरह के वैध सरकारी और वैयक्तिक व्यापार की रक्षा की जाएगी।"

सामान्य प्रोग्राम की इन आर्थिक धाराओं को देखने से मालूम होगा कि नवीन चीन सिर्फ सैनिक और राजनीतिक क्षेत्र में विजय प्राप्त करके ही सन्तुष्ट नहीं है। वह आर्थिक क्षेत्रों में भी बड़ी दृढ़ता के साथ आगे बढ़ने के लिए तैयार है। भारत अभी वर्षों तक अपने औद्योगीकरण के लिए दूसरों का मुँह देखता रहेगा, तब तक चीन अपने को मजबूत कर लेगा। बीस वर्ष से आगे ही बढ़ती चली आती नफाखोरी और चोरबाजारी को नवीन चीन ने अपने देश से छूमन्तर की तरह भगा दिया। आज वहाँ के सभी नर-नारी नवनिर्माण के लिए कटिबद्ध हैं। इन नवनिर्माताओं में चीन के किसान, मजूर और विद्यार्थी ही नहीं शामिल हैं, बल्कि निम्न-मध्य वर्ग, राष्ट्रीय मध्यवर्ग और देशभक्त जनतांत्रिक समुदाय भी सम्मिलित हैं, जो मजूरों और किसानों की मैत्री के साथ कमकर-वर्ग के नेतृत्व में आगे बढ़ रहा है।

पाँच जातियों के प्रतीक पाँच पंचकों के तारोंवाला लाल झण्डा चीन में फहरा रहा है, जो नवीन चीन की अजेय शक्ति का परिचायक है। चीन के शत्रु इस झण्डे को देखकर माओ चे-तुंग के शब्दों में भले ही काँपें, किन्तु भारत इतिहास के आरम्भ से चीन का सुहृद रहा है। आज भी उसे उस परम्परा को निभाना है। इतिहास की यही माँग है और हमारे वर्तमान तथा भविष्य के हित की भी यही माँग है।

3. नई सरकार के कुछ काम

अपनी स्थापना के तुरन्त बाद ही जनता की केन्द्रीय सरकार राष्ट्रीय अर्थनीति को–जिसे साम्राज्यवाद, सामन्तवाद, नौकरशाही पूँजीवाद, युद्ध और प्राकृतिक प्रहारों ने पूरी तरह से नष्ट कर दिया था–फिर से अपने पैरों पर खड़ा करके और सुधारने के लिए बड़ी-बड़ी योजनाओं को चालू कर दिया। कुओ-मिन्तांग की नौकरशाही पूँजी को जब्त करने के बाद जनता की केन्द्रीय सरकार ने समाजवादी स्वरूप के राजकीय अर्थतन्त्र का निर्माण किया, जिसने समूचे देश के अर्थतन्त्र को तेजी के साथ अपने में ले लिया। राजकीय अर्थतन्त्र का बल पाकर जनता की केन्द्रीय सरकार ने तेजी के साथ और सफल रूप में राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को एकताबद्ध और सन्तुलित बना लिया। बीस सालों से चले आये, मुद्राप्रसार के संकट को खत्म किया और औद्योगिक तथा खेती की पैदावार को, रेल-डाक-तार की यातायात और व्यापार को, फिर से स्थापित करने के लिए क्रमबद्ध भारी योजनाओं को चालू कर दिया। बाजार खोलने और औद्योगीकरण के लिए धन जमा करने के लक्ष्य से जनता की केन्द्रीय सरकार ने अपने आर्थिक कामों में खेती, हलके उद्योगों और घरेलू व्यापार को विकसित करने पर जोर देने

का फैसला किया और इसी के साथ-साथ राष्ट्र की रक्षा तथा बिजली-सम्बन्धी अनेक अत्यन्त जरूरी उद्योगों को कायम करने का फैसला। चूँकि समूचे देश के अर्थतन्त्र का नियन्त्रण असल में राजकीय अर्थतन्त्र करता है, और चूँकि वह अत्यधिक केन्द्रित और एकाग्रित है, इसलिए व्यक्तिगत पूँजीवादी उद्योग और व्यापार को भी, धीरे-धीरे राजकीय अर्थतन्त्र की रहनुमाई को मंजूर करने के पथ की ओर बढ़ाया जा रहा है। इसी के साथ-साथ राजकीय अर्थतन्त्र के हितों के साधक एक राजकीय पूँजीवादी अर्थतन्त्र भी धीरे-धीरे विकसित हो रहा है। देश की जरूरतों को पूरा करने की दृष्टि से उद्योग और व्यापार का पुनर्गठन और पुनर्व्यवस्था, योजनाबद्ध औद्योगिक निर्माण की तैयारियों का एक बहुत जरूरी हिस्सा है।

जनता की केन्द्रीय सरकार समूची आर्थिक स्थिति को सुधारने और औद्योगिक निर्माण की तैयारी की दृष्टि से समूचे देश में कृषि-सुधार चालू करने की शर्त को, मुख्य शर्तों में गिनती रही। जून, 1950 में जनता की केन्द्रीय सरकार ने चीनी जनता के गणराज्य भूमि-सुधार कानून को मंजूर किया और 1950 के जाड़ों से लेकर 1951 के बसन्त तक नये आजाद हुए इलाकों के कुल मिलाकर तेरह करोड़ देहाती आबादीवाले क्षेत्रों में, भूमि-सुधार के काम को पूरा करने में किसानों की अगुवाई की। चूँकि युद्ध मुख्य रूप से खतम हो चुका था, इसलिए धनी किसानों की जमीन की समस्या के बारे में 1947 में जारी किये गये कृषि-कानून के उस बुनियादी कार्यक्रम में संशोधन कर दिया गया, जो चीनी जनता के गणराज्य भूमि-सुधार कानून में दर्ज है। धनी किसानों के अतिरिक्त भूमि को जब्त करने की नीति की जगह पर इस भूमि-सुधार कानून ने धनी किसानों के अर्थतन्त्र की रक्षा करने की नीति को अपनाया—अर्थात् केवल खास परिस्थितियों में ही धनी किसानों की जमीन के उस हिस्से को जब्त करना चाहिए, जिसे वह दूसरों को लगान पर देता है, बाकी हिस्से को हाथ नहीं लगाना चाहिए। यह नई नीति मझोले किसानों में पैदावार बढ़ाने में उत्साह पैदा करने के लिए महत्त्वपूर्ण साधन है। अब तक कुल मिलाकर 29 करोड़ देहाती आबादीवाले क्षेत्रों में—जिनमें मुक्त इलाके भी शामिल हैं—भूमि-सुधार का काम पूरा हो चुका है और एक-दो साल के भीतर ही देश के बाकी हिस्सों में भी यह कार्य पूरा कर लिया जायगा। भूमि-सुधार ने, जनता के प्रतिनिधि सम्मेलनों के रूप में समूचे देश में अमली शक्ल दी जानेवाली राज्यसत्ता के निर्माण ने, और जनता के व्यापक समूहों की मदद से प्रतिक्रियावादियों और तोड़-फोड़ की कार्रवाइयों का दमन करने के व्यापक आन्दोलन ने, जनता की (लोकशाही) अधिनायकता की नींव को मजबूत बनाने में भारी योग दिया है, इन नींवों के बिना योजनाबद्ध आर्थिक निर्माण असम्भव होता।

4. पार्टियाँ और संगठन

यह हम बतला चुके हैं कि चीन की सरकार वहाँ की कई पार्टियों की मिलीजुली सरकार है, जिसका नेतृत्व कम्युनिस्ट पार्टी करती है।

(1) कम्युनिस्ट पार्टी—चीनी कम्युनिस्ट पार्टी दुनिया की बहुत बड़ी पार्टी है, जिसके मेम्बरों की संख्या 1951 ई. में 58 लाख थी। दो वर्ष पहले पार्टी ने निश्चय किया कि पुराने मुक्त इलाकों के देहाती जिलों में नये मेम्बरों की भरती को रोक दिया जाय और औद्योगिक मजूरों की भरती ज्यादा से ज्यादा की जाय। पार्टी के 30वें जन्मोत्सव के समय 1 जुलाई, 1951 को पार्टी के एक बड़े नेता ल्यू शाउ-ची ने कम्युनिस्ट पार्टी के बारे में भाषण देते हुए कहा था :

"साथियो ! आज चीन की कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना का 30वाँ वार्षिक दिन है। तीस साल पहले जब हमारी पार्टी की स्थापना हुई थी, उस समय चीन में केवल थोड़ी-सी टोलियाँ थीं, जिनके मेम्बरों की बहुत थोड़ी संख्या थी, जो मार्क्सवाद को पढ़ते और प्रचार करते थे, लेकिन आज हमारी पार्टी बड़ी पार्टी के रूप में विकसित हुई है, चीन की महान् जनता के गणराज्य का नेतृत्व करती है। इस समय हमारी पार्टी के 58 लाख जोकि मेम्बर हैं, जिनमें से 27 लाख सेना, शासन-विभागों, कारखानों, खानों और स्कूलों में काम करते हैं, तथा 36 लाख से ऊपर सारे देहात में फैले हुए हैं। पच्चीस वर्ष से कम उम्र के 6 लाख स्त्री, 12 लाख तरुण सदस्य हैं। इन मेम्बरों ने पार्टी के आधारिक संगठन के रूप में ढाई लाख पार्टी-शाखाएँ स्थापित

की हैं।"

साथी माओ चे-तुंग ने 7वीं पार्टी-कांग्रेस के समय पार्टी और पार्टी मेम्बरों के सम्बन्ध में जो कहा था, वह अब ठीक है :

"किसी भी दूसरी राजनीतिक पार्टी के मेम्बरों से हम कम्युनिस्ट कुछ विभिन्नता रखते हैं। हम जनता के सबसे बड़े भाग के साथ अपने को अत्यन्त घनिष्ठता के साथ सम्बद्ध पाते हैं। हृदय और मस्तिष्क से जनता के साथ एक क्षण के लिए भी अपने को अलग किये बिना जन-सेवा करना, अपने निजी या एक छोटी टोली नहीं, बल्कि जन-गण के हित के लिए हरेक बात करना, और जन-गण के प्रति अपनी जवाबदेही को समझना, यह हमारा आरम्भ-बिन्दु है। कम्युनिस्टों को हमेशा सत्य की रक्षा के लिए तैयार रहना चाहिए क्योंकि सत्य हमेशा जनता के हितों के अनुकूल होता है। उन्हें हमेशा गलतियों को सुधाने के लिए तैयार रहना चाहिए, क्योंकि गलतियाँ जन-गण के हितों के लिए हानिकारक होती हैं। पिछले चौबीस वर्षों का अनुभव हमें बतलाता है कि किसी निश्चित देश या काल में सभी ठीक कार्य, ठीक नीतियाँ और काम करने की अच्छी शैली सदा जनता की माँगों के अनुकूल होती हैं, और वह हमेशा हमें जनगण से घनिष्ठतया सम्बद्ध करती हैं। वह हमें यह भी बतलाते हैं कि सभी गलत कार्य, अशुद्ध नीतियाँ और काम करने के बुरे ढंग जन-गण के हितों के अनुकूल नहीं होते, वह जन-गण से हमें अलग करते हैं। मार्क्सवादी विचारधारा से हथियारबन्द हो चीन की कम्युनिस्ट पार्टी ने चीनी जनता के भीतर काम करने की एक नई शैली को पैदा किया है और वह काम करने की नई शैली मुख्यतः है सिद्धान्त के साथ प्रयोग (व्यवहार) की एकता स्थापित करना, जनता के समूह के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित करना और आत्मालोचना का व्यवहार करना।"

(2) अन्य पार्टियाँ और संगठन—कम्युनिस्ट पार्टी के अतिरिक्त चीन में और भी बहुत-सी पार्टियाँ हैं, जो वहाँ के शासन में हाथ बँटाती हैं।

चीन की पार्टियाँ और उनके मुख्य-मुख्य नेता निम्न प्रकार हैं :

	नाम	**नेता**
1.	कम्युनिस्ट पार्टी (कुन्-सन्-तांग)	माओ चे-तुंग, चू-तेह, चाउ एन्-लाइ, ल्यु शाओ-ची
2.	कुओ-मिन्तांगी क्रान्तिकारी कमेटी	ली ची-शेन्
3.	चीन जनतांत्रिक लीग	चांग लान्
4.	चीन जनतांत्रिक राष्ट्र-निर्माण सभा	ह्वांग येन्-पेइ
5.	चीन जनतन्त्रता सम्वर्द्धन सभा	मा शू-लुन्
6.	चीनी किसान-कमकर जनतांत्रिक पार्टी	चांग पो-चुन्
7.	चीन चीह कुंग तांग	चेन् ची-यू
8.	च्यु सान सभा	शू तेह-हेंग
9.	ताइवान जनतांत्रिक स्वायत्त शासन लीग	शीयेह सूयेह-हुंग
10.	चीन नव-जनतांत्रिक तरुण लीग	फेंक वेन्-पिन्

और जन-संगठनों तथा उनके अध्यक्ष निम्न प्रकार हैं :

1.	अखिल चीन मजूर-संघ	ल्यू शाओ-ची
2.	अखिल चीन जनतांत्रिक महिला-संघ	सुंग चिंग-लिंग (श्रीमती सुन् यात्-सेन्)
3.	अखिल चीन तरुण-संघ	ल्याउ चेंग-चीह
4.	अखिल चीन छात्र-संघ	पियेन तेह-मिन्
5.	विश्व-शान्ति अमेरिकन-आक्रमण विरोधी चीन-लोक-समिति	कुओ मो-जो

6.	चीन सोवियत मैत्री सभा	ल्यू शाओ-ची
7.	विदेश कार्य लोक-प्रतिष्ठान	चाउ एन्-लाइ
8.	अखिल चीन साहित्य-कला चक्र संघ	कुओ मो-जो
9.	रेडक्रास सभा	ली तेह-चुआन्
10.	चीन कल्याण प्रतिष्ठान	सुंग चिंग-लिंग

18
नवनिर्माण (1949-53 ई.)

जन-मुक्ति-सेना की सफलताओं और विजयों द्वारा सारे चीन के एकताबद्ध करने के बाद नहीं, बल्कि जैसे ही भिन्न-भिन्न भाग च्यांग के हाथ से मुक्त होते गए, वैसे-ही-वैसे वहाँ नव-निर्माण का काम शुरू कर दिया गया। यदि चीन के वीरपुत्र लड़ाई के मैदान में अपने कारनामे दिखलाते थे, तो पीछे रहनेवाले भी हाथ पर हाथ धरे कैसे बैठे रह सकते थे ? पिछली मुक्ति के बाद तीन सालों में नये चीन ने क्या-क्या काम किये और क्या करने जा रहा है, इसका पता निम्न बातों से मालूम होगा

1. भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में सफलताएँ

(1) तीन वर्ष का लेखा-जोखा–गणराज्य के तीसरे वार्षिकोत्सव के समय पार्टी केन्द्रीय कमेटी के सदस्य पो यी-पो ने तीन वर्ष की सफलताओं के बारे में बतलाया था :

"चीन जन-गणराज्य की स्थापना के बाद चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और उसके प्रतिभाशाली नेता साथी माओ चे-तुंग के नेतृत्व में एवं पिछले तीन सालों में सारे देश की जनता के प्रयत्नों द्वारा हम योजनाबद्ध बड़े पैमाने पर आर्थिक और सांस्कृतिक निर्माण के लिए आवश्यक स्थितियों को पैदा करने में सफल हुए हैं। इस प्रकार अपने देश के औद्योगीकरण में और भी लम्बा कदम रखने और उसके द्वारा समाजवाद की ओर अपने देश के दृढ़तापूर्वक बढ़ने की गारंटी कर सकते हैं।"

साथी पो ने आगे फिर बतलाया :

" जमीन-सुधार खास तौर से सारे देश में पूरा किया जा चुका है। अगस्त, 1952 तक पहले थोड़ा या बिलकुल भूमि न रखनेवाले 30 करोड़ किसानों और उनके परिवारों को जमींदार के हाथ की 470 लाख हेकर (1 हेकर = ढाई एकड़) जोती जमीन दी गई। चीन के देहातों से जमींदार वर्ग और सामन्ती व्यवस्थावाले भूमि-अधिकार को खतम कर दिया गया। जनता की जनतान्त्रिक व्यवस्था के प्रति चीनी जनता के सबसे अधिक भाग में सबसे अधिक संख्या रखनेवाले किसानों का स्नेह और समर्थन प्राप्त है। इस प्रकार चीन के उद्योगधन्धे के विकास के लिए प्रशस्त पथ खुल गया है।

" पिछले तीन सालों में हमने 20 लाख से अधिक डाकुओं को खतम किया और क्रान्ति-विरोधियों और गुप्तचरों को बन्दीखाने और नियन्त्रण में डाल दिया। अब चीन में डाकुओं का कहीं अस्तित्व नहीं है, और हमारी सामाजिक स्थिति ऐसी हो गई है, जैसी कभी नहीं थी।

" 1951 के अन्त से जून, 1952 तक सरकारी कमकरों के भीतर 'सान्-फान्' आन्दोलन किया गया, जिसका काम था भ्रष्टाचार, खराबी और लाल फीताशाही को खतम करना। इसी तरह निजी उद्योग-धन्धों और व्यापार के खिलाफ 'वू-फान्' आन्दोलन शुरू किया गया, जिसका काम था : (1) रिश्वत, (2) कर से बचना, (3) राज्य-सम्पत्ति की चोरी, (4) सरकारी ठेकों की ठगी और (5) निजी सट्टेबाजी के लिए सरकारी स्रोतों से आर्थिक सूचना चुराने के विरुद्ध काम करना। इन आन्दोलनों के दौरान में सरकारी कर्मचारियों में साढ़े चार सैकड़े भिन्न-भिन्न मात्रा

में रिश्वत, चीज की खराबी और लाल फीताशाही के दोषी पाये गये और उनको उसी के अनुसार दण्ड दिया गया। बहुत गम्भीर मामलों में अदालतों से दण्ड दिया गया। इसके द्वारा सरकारी संस्थाओं को बहुत शुद्ध कर दिया गया। अब जनता की सरकार और कमकर-वर्ग के बीच घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित है। सरकारी संस्थाओं में अनुशासन और कार्यक्षमता बढ़ी है और सरकार का खर्च काफी कम हो गया है। इसी के साथ इन आन्दोलनों द्वारा पेकिंग, शांघाइ, तियान्चिन्, हांगकाउ, कान्तन्, शेंग यांग (मुकदन) आदि नौ बड़े-बड़े शहरों के वैयक्तिक उद्योग तथा व्यापार के साढ़े चार लाख से अधिक फर्मों की तहकीकात की गई, जिनमें से 76 सैकड़े भिन्न-भिन्न प्रकार की गैर-कानूनी कार्रवाइयों के दोषी ठहरे। भारी अपराधियों को अदालत से दण्ड दिया गया, साथ ही उद्योगपतियों और व्यापारियों के विरुद्ध ठीक कार्रवाई करके उन्हें कानून की पाबन्दी करना सिखलाया गया। इस प्रकार मजूर-वर्ग के नेतृत्व तथा सामान्य-प्रोग्राम (संविधान) के प्रयोग द्वारा चीनी नौकरशाही की गैरकानूनी कामों को बहुत कम कर दिया गया और उनकी कार्रवाइयों को सीमित कर दिया गया। 'सान्-फान्' और 'वू-फान्' आन्दोलनों ने राज्य में मजूर-वर्ग के नेतृत्व को मजबूत कर दिया। "

पो ने सेना के बारे में अपने इसी भाषण में कहा :

"पिछले तीन सालों के दौरान हमने अपनी राष्ट्रीय प्रतिरक्षाओं को सफलतापूर्वक मजबूत किया, और हमारे देश पर चढ़ाई करने की अमेरिकन साम्राज्यवादियों की योजना को बेकार कर दिया। कोरिया-युद्ध में फूट पड़ने के बाद चीनी जनता ने अमेरिकन आक्रमण-विरोध और कोरिया-सहायता के लिए लाखों कमकरों, किसानों और बुद्धिजीवियों ने और सेनाएँ अर्पित कीं एवं सारे देश में जनता ने कृषि, उद्योग और दूसरे क्षेत्र में उत्पादन को आगे बढ़ाकर आन्दोलन में बड़े उत्साह के साथ भाग लिया। जनता ने स्वयं-सेवकों के लिए 3 हजार 7 सौ विमान दान दिये।"

देश के भिन्न-भिन्न संगठनों के बारे में पो ने कहा :

" चीन की कमकर जनता राष्ट्रव्यापी पैमाने पर संगठित है। इस समय मजूर-संघ के 73 लाख मेम्बर हैं, एवं नव-जनतांत्रिक तरुण-लीग के 63 लाख, अखिल चीन छात्र-संघ के 21 लाख 70 हजार, अखिल चीन जनतांत्रिक महिला-संघ की कार्रवाइयों में भाग लेनेवाले 7 करोड़ 67 लाख, खरीद-बेच सहयोग समितियों के 1 करोड़ 6 लाख, चीन-सोवियत मैत्री सभा के 2 करोड़ 65 लाख सदस्य हैं।··· पंच-शक्ति शान्ति समझौते पर हस्ताक्षर करनेवाले··· करीब 34 करोड़ हैं···

" 1949 में चीनी जनता का मुक्ति-युद्ध सारे देश में विजयी हुआ, लेकिन जापानी साम्राज्यवाद के विनाशकारी कामों, कुओ-मिन्तांग के क्षयकारी क्रूर शासन और अमेरिकन साम्राज्यवाद की लूट के कारण राष्ट्रीय आर्थिक जीवन बिलकुल ध्वस्त हो गया था। देहात दिवालिया हो गया था, एक के बाद एक कारखाने और खानें बन्द हो गई थीं, सट्टेबाजों की बन आई थी, बाजार पूरी तरह से छिन्न-भिन्न था, जनता अपने दैनिक जीवन के लिए अत्यन्त कष्ट भोग रही थी।

" अमेरिकन सियारों—कुओ-मिन्तांग के प्रतिक्रियावादियों को उखाड़ फेंकने के बाद हमने अपनी लुंज हुई अर्थनीति की स्थिति से उत्पन्न कठिनाइयों पर काबू पाने के लिए भारी कोशिश की। मजूर-वर्ग और जनता के विस्तृत समूह की सहायता से कदम पर कदम हमने कृषि और उद्योग-सम्बन्धी उपज को पुनःस्थापित कर दिया। मार्च, 1950 के बाद कितने ही सफल उपायों को काम में लाकर हम बजट को सन्तुलित करने के नजदीक पहुँचे। हमने मुद्रास्फीति को रोक दिया और सौदे के दामों को नियंत्रण के अनुसार कर दिया। आधे वर्ष के समय में बाजार की स्थिति बेहतर हो गई, यद्यपि उसका आधार अभी भी मजबूत नहीं था और अब भी भले दिनों के लिए मौलिक परिवर्तन नहीं था।

" चीनी कम्युनिस्ट पार्टी-कांग्रेस के तीसरे विस्तारित अधिवेशन में जून, 1950 में साथी माओ चे-तुंग ने बतलाया था कि वित्त तथा अर्थ-सम्बन्धी स्थिति को बेहतर बनाने के लिए आधारित परिवर्तन होने में करीब तीन साल का समय लगेगा। साथी माओ चे-तुंग के निर्देश और सारे देश की जनता के प्रयत्नों द्वारा हम तीन वर्ष से कम समय में ऐसे आधारभूत परिवर्तन को लाने में सफल हुए। कृषि और उद्योग सम्बन्धी उत्पादन

अब पूरी तौर से पुनःस्थापित हो गये हैं, बहुत-सी चीजें युद्धपूर्व के सबसे ऊँचे तल से भी आगे बढ़ गई हैं। राष्ट्रीय आय और व्यय पूरी तौर से सन्तुलित हो गया है, और सौदों की कीमतें स्थिर हैं।

" चीन की कृषि-सम्बन्धी उपज की पुनःस्थापना और विकास का पता निम्न आँकड़ों से मालूम होगा। यदि मुक्ति से पहले के भिन्न-भिन्न प्रकार की कृषि-सम्बन्धी उपजों के उच्चतम वार्षिक मान को 100 लिया जाय तो 1952 में··· उपज है : खाद्यवस्तु 109, कपास 155, भाँगड़ा 259, तम्बाकू 294 और कच्ची चीनी 113।

" कृषि-सुधार के आधार पर पार्टी और जनता की सरकार ने पिछले तीन वर्षों में किसानों को हर सम्भव उपाय से उत्पादन बढ़ाने में नेतृत्व और सहायता प्रदान की। स्वेच्छा सिद्धान्त के आधार पर भिन्न-भिन्न परस्पर-सहायता-संगठनों में किसानों को संगठित किया। 1952 में परस्पर-सहायता-टोलियों में जितने किसान सम्मिलित हुए, वह सारे देश के किसानों के 40 सैकड़ा थे–पुराने मुक्ति क्षेत्रों में वह 70 से 80 सैकड़ा तक थे। चार हजार से अधिक कृषि-सम्बन्धी उत्पादन सहयोग समितियाँ और 10 से अधिक सामूहिक खेतियाँ–पारस्परिक सहायता टोलियों से और अधिक विकसित रूस के नमूने की योजनाएँ–बन चुकी हैं। सारे देश में कृषि-सम्बन्धी उपज के विषय में पारस्परिक सहायता और सहयोग समिति आन्दोलन उठती हुई बाढ़ की तरह फैल रहा है। यह मुख्य दिशा है, जिसकी ओर चीनी कृषि-सम्बन्धी उपज का विकास हो रहा है।

" इन तीन सालों में जन-संरक्षण की कितनी ही विराट योजनाओं का निर्माण हुआ है। इन योजनाओं में 170 करोड़ घनमीटर मिट्टी निकाली गई है, जो कि पनामा नहर से खोदकर निकाली मिट्टी की दसगुना अथवा स्वेज नहर से 23 गुना अधिक है। 1952 में जनता की सरकार ने जलसंरक्षण-योजनाओं में जितना पैसा लगाया है, वह कुओ-मिन्तांग के सबसे अधिक खर्चवाले वर्ष से 52 गुना अधिक है। जल-सरंक्षण के इन सुधारों और दूसरे प्राकृतिक संकटों की रोकथाम के लिए जो उपाय किये गये हैं, उनके कारण प्राकृतिक प्रकोप की शिकार होनेवाली जमीन का क्षेत्रफल बहुत कम हो गया है। 1949 में प्राकृतिक प्रकोप की शिकार भूमि 80 हेक्तर (प्रायः 2 करोड़ एकड़) थी, जोकि 1950 में 46 लाख और 1951 में 14 लाख और 1952 में और भी कम हो गई। "

पो ने औद्योगिक स्थिति के बारे में बतलाया :

" चीन की औद्योगिक उपज भी उसी तरह आगे बढ़ते हुए वेग से पुनः स्थापित और विकसित हुई है, इसका पता निम्न आँकड़ों से लगेगा। मुक्ति से पहलेवाले औद्योगिक और खनिज उपज की भिन्न-भिन्न वस्तुओं की सर्वोच्च उपज-तल को 100 लेने पर 1952 में उपज की प्रति सैकड़ा वृद्धि हुई है : कच्चा लोहा 104, फौलाद 155, कोयला 90, बिजली-शक्ति 115, पेट्रोल 136, सीमेन्ट 148 और लकड़ी 136। इससे मालूम होगा कि कोयला को छोड़कर भिन्न-भिन्न प्रकार के आधारभूत उद्योगों की उपज चीन के इतिहास के सबसे ऊँचे तल से भी आगे बढ़ गई है। इसके साथ ही बहुत-सी दूसरी औद्योगिक उपजों जैसे उपभोग की वस्तुओं तथा दैनिक आवश्यकताओं की चीजों–के बारे में भी आशा रक्खी जाती है कि 1922 में वह चीन के सारे इतिहास के सबसे ऊँचे आँकड़ों से आगे बढ़ जायगी। उपरोक्त क्रम से गणना करने पर हम प्रतिशत उपज को पाते हैं : कपास का सूत 144, कपास का कपड़ा 161, आटा 106, शोधित चीनी 100, कागज 234, सिगरेट 145, दियासलाई 111 इत्यादि।

" इन तीन वर्षों में औद्योगिक विकास और उपभोग में लगे धन के अनुपात में काफी परिवर्तन हुआ है। 1949 में पूँजी-माल औद्योगिक उपज के सारे मूल्य का 32.5 सैकड़ा था, जबकि उपभोग-माल 67.5 सैकड़ा। 1952 में पूँजी-माल में लगा धन सर्वयोग का 43.8 सैकड़ा हो गया और उपभोग-माल में कमी होकर वह 56.2 सैकड़ा रह गया।

" इन तीन वर्षों में राजकीय कारखानों, खानों और दूसरे उद्योग-धन्धों में पूरी तौर से जनतांत्रिक सुधार काम में लाये गये और राजकीय उद्योगों में समाजवादी उत्पादन-सम्बन्धों के अनुकूल नई प्रबन्ध-व्यवस्था स्थापित की गई। "

लोगों की सुख-समृद्धि के बारे में पो ने बतलाया :

" कमकरों और कर्मचारियों की मजूरी में देश के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में 1949 की अपेक्षा 1952 में 60 से 120 सैकड़ा तक वृद्धि हुई है। कमकरों की मजूरी की आय आम तौर से जापानी आक्रमण प्रतिरोध-युद्ध के पहलेवाले तल पर पहुँच या उससे आगे बढ़ गयी।··· जनता की क्रय-शक्ति बहुत बढ़ी है। 1950 की अपेक्षा 1951 में सारे देश में जनता की क्रय-शक्ति करीब 25 सैकड़ा ऊपर थी।···

" 1950 की अपेक्षा 1951 में राज्य द्वारा बाजार में लाया गल्ला 70 सैकड़ा अधिक था। 1952 में वह परिमाण 1951 की अपेक्षा 59 सैकड़ा अधिक होने की आशा थी। "

शिक्षा के बारे में पो का कहना है :

" शिक्षा-सम्बन्धी काम में सुधार और विकास हुए हैं। उच्च शिक्षा, टेकनिकल उच्च शिक्षा की संस्थाओं, टेकनिकल माध्यमिक स्कूलों, नार्मल स्कूलों, कमकरों और किसानों के थोड़े समय के माध्यमिक स्कूलों के सभी विद्यार्थियों के लिए राज्य से जीविकार्य खर्च (वृत्ति) दिया जाता है। माध्यमिक स्कूलों के विद्यार्थियों को अब अधिक संख्या में वृत्ति दी जाती है, जिससे किसानों और कमकरों के लड़के भी उच्च अथवा माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने का अवसर पा रहे हैं।

" कुओ-मिन्तांग-शासन की सबसे अधिक संख्यावाले वर्ष को 100 लेने पर विद्यार्थियों की संख्या निम्न प्रकार है : उच्च संस्थाओं (कालेजों और युनिवर्सिटियों) के विद्यार्थी 2 लाख 18 हजार अथवा 169.9 सैकड़ा, माध्यमिक स्कूल 30 लाख 70 हजार अथवा 163.9 सैकड़ा और प्रारम्भिक स्कूल के विद्यार्थी 490 लाख अथवा 207 सैकड़ा।

" सार्वजनिक स्वास्थ्य के काम में भी काफी विकास हुआ है। औद्योगिक तथा खानवाले क्षेत्रों एवं देहात में क्रमशः चिकित्सा-व्यवस्था और सफाई का विस्तार किया गया है। 1951 के अन्त तक सारे देश के 91.2 सैकड़ा कमिश्नरियों* में स्वास्थ्य केन्द्र स्थापित हो गये हैं। "

2 अक्तूबर 1952 को ली फू-चुन ने तीन वर्षों के औद्योगिक उपज के आँकड़ों को निम्न प्रकार दिया :

नाम	पूर्व का उच्चतम उत्पादन	1949	1952 (आयोजित उत्पादन)
बिजली	100	72	115
कोयला	100	45	90
पेट्रोल	100	38	136
कच्चा लोहा	100	11	104
फौलाद	100	16	155
सीमेन्ट	100	31	148
कपास सूत	100	72	144
कपास कपड़ा	100	73	161
कागज	100	90	234
सिगरेट	100	83	145
दियासलाई	100	85	111
आटा	100	78	106

(2) जल-संरक्षण-मन्त्री फू चौ-यी ने 26 सितम्बर, 1952 में सिंचाई-योजना के विकास के बारे में बतलाया था :

* Counties

" मुक्त चीनी जनता ने अपनी सिंचाई के विकास, उप की वृद्धि और अकाल के रोकने के काम के सम्बन्ध में बहुत काम किया है।

" पिछले तीन वर्षों में सारे देश में आधुनिक ढंग की सिंचाई की 358 योजनाएँ पूरी की गईं, जोकि अकाल की गारंटी हैं। ह्वांग हो नदी के पानी को वेई नदी में मोड़नें की जन-विजय नहर के नाम से प्रसिद्ध योजना 480 हजार मौ जमीन को पानी दे रही है, और अदूर भविष्य में वह 10 लाख मौ से अधिक की सिंचाई करेगी। वेई नदी की पानी की कमी को पूरा करके शिन्-शियांग से तियान्‌चिन् तक की पूरी 900 किलोमीटर की जलधारा को वर्ष-भर के नौकाचालन के उपयुक्त बना दिया गया।

" तुंग लियाओ नदी, पानशान, छहयांग और कुओचियेन्ची उत्तर-पूर्व की चार बड़ी सिंचाई-व्यवस्थाएँ इस समय 6 लाख मौ से अधिक खेतों को पानी देने में समर्थ हैं और उन्हें 40 लाख मौ से अधिक के लायक बढ़ाया जानेवाला है। सुइ-युवान् प्रदेश की हुवांग-यान् बाढ़-नियंत्रण-व्यवस्था ने ह्वांग-ची नहर, यांग-चिया नहर और उला नदी नहर को पानी पहुँचाने और नियंत्रण का सुधार किया है। इस प्रकार केवल बाढ़ों का डर ही नहीं हटा दिया गया, बल्कि क्रमशः सींची हुई भूमि को 10 लाख मौ से अधिक बढ़ाया जा सकता है। चहार प्रदेश के संग-कान्, हुन् और यू नदियों की नहरों के निर्माण द्वारा बाढ़ के पानी को सिंचाई के मतलब के लिए इस्तेमाल करने की सुविधा पैदा करके 3 लाख मौ से अधिक खेतों के सींचने का प्रबन्ध किया गया है, जिसे क्रमशः 980 हजार मौ तक बढ़ा दिया जायगा। शान्सी प्रदेश में हूतूऊ और शियाओ नदियों के नये बने जल-संरक्षण तथा चेतांग नहर के निर्माण द्वारा 6 लाख मौ से अधिक खेत की सिंचाई हो सकती है। शेन्सी प्रदेश में चिंग, वेइ, लो हान, पो और शू नहरों के नियंत्रण और विस्तार करने के बाद सिंचाई की भूमि 5 लाख मौ से अधिक बढ़ाई जायगी। सिंग-कियांग (चीनी तुर्किस्तान) प्रदेश में जन-मुक्ति-सेना ने भूमि के कर्षण में सक्रिय भाग लिया है। वहाँ सिंचाई की योजनाओं ने और भी अधिक प्रगति की है। हु-आइ नदी पर उत्तरी क्यांग-सू सिंचाई नहर का मुख्य काम समाप्त हो गया है, लेकिन शाखा नहरें अभी बनाई नहीं जा चुकी हैं, इसलिए आधुनिक सिंचाई निर्माण के उपरोक्त योग में ये आँकड़े नहीं जोड़े जा सके।

" इसी बीच में बहुत-सी स्थानीय जनता की सरकारों ने लोगों को छोटे पैमाने की सिंचाई के साधनों–खन्दकों, जलनिधियों, पानी जमा करने के लिए बाँधों आदि–की मरम्मत करने और बनाने के लिए उत्साहित किया है। जो प्रारम्भिक आँकड़े प्राप्त हुए हैं, उनसे मालूम होता है, कि इस तरह के कामों की संख्या 3,360 हजार से अधिक है।…

" 6,668 हजार सिंचाई के कुएँ या तो मरम्मत कर दिये गये हैं, या नये बनाये गये हैं, साथ ही भूमि-निहित जल को पूरी तौर से इस्तेमाल करने के लिए किसानों को 263 हजार रेहट उधार पर दिये गये हैं। "

कुओ-मिन्तांगी दुःशासन ने जनता की आर्थिक स्थिति को चौपट कर दिया था। उसके अन्तिम दस वर्षों में कृषि की उपज 25 सैकड़ा कम हो गई, हलके उद्योग की 30 सैकड़ा और भारी उद्योग की 70 सैकड़ा से भी अधिक घट गई। इसके साथ ही कुओ-मिन्तांगी भ्रष्टाचार और लूट-खसोट के मारे चीजों का दाम बहुत बढ़ गया। कुओ-मिन्तांगी नोट की दर तो अविश्वसनीय रूप से गिर गई, यह इसी से मालूम होगा कि अगस्त 1937 से अगस्त 1949 के बीच के दस वर्षों में चीजों का दाम साठ लाख गुना बढ़ गया, अर्थात् जितनी चीज के लिए पहले एक चीनी डालर देना पड़ता था, उसके लिए 60 लाख डालर का नोट देना पड़ता। 1948 के अगस्त में 'सुनहला युवान्' डालर का नोट जो निकाला गया था, वह एक साल के भीतर ही रद्दी का टुकड़ा बन गया।

(2) कृषि में विकास–माओ चे-तुंग ने जिस तरह देश की मुक्ति के लिए पथ-प्रदर्शन किया, उसी तरह हमने देखा, आर्थिक तौर से देश को स्वतंत्र और समृद्ध करने का रास्ता भी उन्होंने बतलाया। खेती यद्यपि अभी भी पुराने वैयक्तिक ढंग से ही अधिक होती है, लेकिन उन्होंने धीरे-धीरे खेती के उत्पादन में सामाजिक संगठन को महत्त्व देने का रास्ता बतलाया। इनमें पारस्परिक सहायता, सहयोग समिति और कुछ सामूहिक खेतियाँ भी होने लगीं, जिनके बारे में यहाँ कुछ अधिक विवरण देना है, विशेषकर इस ख्याल से भी इनके बारे में

जानना आवश्यक है, क्योंकि भारत की भी खेती की समस्याएँ चीन जैसी ही हैं।

(1) पारस्परिक सहायता–यह आन्दोलन उत्तरी चीन में 1943 में आरम्भ हुआ। पारस्परिक सहायता टोलियों का संगठन स्वेच्छा के अनुसार किया गया। इस व्यवस्था में भूमि का स्वामित्व अपना-अपना रहता है, लेकिन श्रम सामूहिक रूप से किया जाता है। इसके अनुसार मौसमी पारस्परिक सहायता से सारे साल-भर के पारस्परिक सहायता तक कम किया जाता है। उत्तरी चीन में आजकल खेती के काम में तीन प्रकार की पारस्परिक सहायताएँ पाई जाती हैं :

(क) पहली सहायक सहायता कुछ उसी तरह की है, जैसीकि अंग्रेजी शासन के प्रभाव से पहले भारतीय गाँव के लोगों की पारस्परिक सहायता करनेवाली प्रवृत्ति जारी थी, और जिसके अनुसार किसान एक-दूसरे के यहाँ जाकर अगाऊ-काम या खेती के जानवरों की 'पैठ' करते थे। यह आम तौर से छोटे पैमाने पर होती है, और सो भी केवल फसल के समय। उत्तरी चीन में किसान वसन्त की बोआई, गर्मियों की जुताई और शरद की कटाई के समय अपने खेती के मुख्य कामों में मिलकर काम करते हैं। लेकिन जब फसल का समय नहीं रहता, तो वह अपने काम अलग-अलग और वैयक्तिक रूप से करते हैं।

(ख) दूसरे प्रकार की पारस्परिक सहायता-टोली नियमपूर्वक पूरे वर्षभर की होती है। टोली के सदस्य प्रायः स्थायी होते हैं और वह एक-दूसरे की वर्ष-भर सहायता करते रहते हैं। इन टोलियों द्वारा खेती के उत्पादन की सीधी-सीधी योजनाओं को वैज्ञानिक ढंग से कार्यरूप में परिणत किया जाता है। इसके द्वारा श्रम-विभाजन के परिणामस्वरूप श्रम की क्षमता बढ़ाई जाती है। इसमें कुछ और सहायक पेशों को भी हाथ में लेते हैं, और उनके द्वारा अपनी आय बढ़ाते हैं। कुछ टोलियाँ अपनी बढ़ी हुई आमदनी से खेती के हथियार, ढोर आदि जैसी सम्पत्ति को सम्मिलित खरीदती हैं, और इस प्रकार वह केवल श्रम ही नहीं, बल्कि आर्थिक सहयोग में सम्मिलित होती हैं।

(ग) केवल खेती के कामों में ही पारस्परिक श्रम का सहयोग न करके अपने सदस्यों को दूसरे सहायता-पेशों में लगाकर सामूहिक आय का रास्ता निकलना तथा उसके द्वारा खेती के हथियार और ढोरों आदि के सामूहिक सम्पत्ति के रूप में खरीदना आदि तीसरी तरह की पारस्परिक सहायता है।

(2) सहयोगी खेती–पारस्परिक सहयोग का ही यह तीसरा ढंग है। यह पहली दोनों व्यवस्थाओं से अधिक उन्नत है। इसमें हरेक मेम्बर अपनी भूमि को अपने हिस्से के तौर पर प्रदान करता है और उसका प्रबन्ध केन्द्रबद्ध होता है। इस प्रणाली में बिखरे हुए छोटे-छोटे खेत इकट्ठा कर दिये जाते हैं, और पारस्परिक सहायता भी सामूहिक रूप से दी जाती है। इस प्रणाली में वैज्ञानिक ढंग से खेती करने की सम्भावना बहुत अधिक है। सहयोगी खेतीवाले ज्यादा सुधरे हुए खेती के हथियारों को इस्तेमाल करते हैं, नये प्रकार के हलों में घोड़े जोतते हैं। श्रम का विभाजन और जुताई भूमि के गुण के अनुसार होती है। फसल के उत्पादन, सिंचाई, पशुपालन, जमीन की उर्वरता को बढ़ाने आदि के सम्बन्ध में अधिक विस्तृत योजना बनाई जाती है तो भी सहयोगी-प्रथा में भूमि का स्वामित्व वैयक्तिक बना रहता है, जिसका अर्थ है हरेक आदमी को अपनी जमीन के अनुसार भी उपज में से कुछ मिलता है लेकिन साथ ही फसल की कटाई सम्मिलित होती है, और उसे भूमि के स्वामित्व के लिए कुछ भाग अलग करके श्रम के परिमाण के अनुसार बाँटा जाता है–उपज में से कुछ निश्चित परिमाण को सम्मिलित कोष के लिए अलग कर दिया जाता है। सहयोगी खेती में खेती के उत्पादन का सामाजिक रूप प्रकट होने लगता है, इसे कहने की आवश्यकता नहीं। उत्तर चीन, होपेइ, शान्सी, चहार, पिंग-युआन्, सुइ-युवान के प्रदेशों में इस तरह के 6 हजार सहयोगी फार्म (खेतियाँ) हैं। भूमि के स्वामी किसानों को समाजवादी खेती की ओर खींचने के लिए यह प्रणाली चीन में बहुत ही उपयुक्त सिद्ध हुई है, और भारत में भी सिद्ध होगी।

1952 में उत्तर चीन के किसानों में से 32 सैकड़े किसी-न-किसी प्रकार की पारस्परिक सहायता प्रणाली की खेती में सम्मिलित थे, जिनकी संख्या 20 लाख के करीब थी, और जो उत्तरी चीन की किसानों की संख्या के आधे हैं।

(3) सामूहिक खेती–सोवियत रूस की सामूहिक या पंचायती खेती–कलखोज के बारे में हमने सुना है।

अभी इस तरह की खेती का आरम्भ ही भर चीन में हुआ है, लेकिन तो भी 1952 में ऐसी खेतियों की संख्या दस थी, जो किसानों के सामने ऊँचे ढंग के उत्पादन का उदाहरण पेश कर रही थी। ऐसे ही एक सामूहिक खेती का वर्णन एक चीनी लेखक ने किया है* :

"उत्तर-पूर्व चीन के चुंग-कियान प्रदेश में तुआन् शान् चे नामक सामूहिक खेती (फार्म) बड़ी सफलतापूर्वक काम कर रही है। चीन में विद्यमान ग्यारह सामूहिक खेतियाँ अभी नमूने के तौर पर हैं, जिनमें से यह एक है। पाँच साल पहले शेन् चे-चुंग नामक किसान के पास दो एकड़ से कम का ही अपना खेत था, जिसमें वह खेती करता था। इसके बाद वह परस्पर सहायता टोली में सम्मिलित हो गया और बाद में कृषि-सम्बन्धी सहयोगी समिति में। शेन् को जल्दी ही अपने तजर्बों से मालूम हो गया, सामूहिक श्रम को कृषि में जितना ही अधिक संगठित किया जाय, उतनी ही एकड़ पीछे, और परिवार पीछे उपज भी अधिक होती है। उसने भिन्न-भिन्न सालों की उपजों की तालिका बनाकर उसे निम्न प्रकार देखा :

सन्	ढंग	उपज (सेर) प्रति एकड़	उपज (सेर) प्रति परिवार
1947	परिवार-खेती	1,202	1,531
1948	परस्पर सहायक चार परिवार टोली	1,128	1,901
1949	परस्पर सहायक पाँच परिवार टोली	1,336	2,093
1950	चौदह परिवार सहयोग	1,514	4,915
1951	छत्तीस परिवार-सामूहिक-खेती	1,979	10,450

कहीं अलग-अलग पारिवारिक खेती में परिवार को 1,513 सेर धान मिलता था और कहाँ सामूहिक खेती में उसे 10,450 सेर मिलने लगा, और उपज भी प्रति एकड़ करीब-करीब दुगुनी हो गई। फिर लोगों का ध्यान इस ओर क्यों न जाता ?

हेइ लुंग-कियांग प्रदेश के कोशन जिले के शान्ति-सामूहिक-खेती को लीजिये। जापान के दीर्घकाल कब्जे के बाद अभी तीन साल भी नहीं हुए थे, जबकि 1947-48 में यहाँ भूमि-सुधार को कार्यरूप में परिणत किया गया। उसके तुरन्त ही बाद किसानों ने सहायता मण्डली संगठित कर ली और जनवरी 1952 में इस गाँव में दो सहयोगी खेतियाँ कायम हो गईं। इससे पहले पास में एक नये यन्त्रों से सुसज्जित राजकीय खेती कायम कर दी गई थी। किसानों ने अपनी आँखों खेती में विज्ञान और नये यन्त्रों के प्रयोग का चमत्कार देख लिया था, इसलिए अप्रैल, 1952 में दोनों सहयोगी खेतियों ने प्रस्ताव पास करके अपना शान्ति-सामूहिक-फार्म संगठित कर लिया। फार्म के नियमानुसार 16 वर्ष से ऊपर के स्त्री या पुरुष उसके मेम्बर बन सकते हैं। प्रवेश के बाद उन्हें अपनी भूमि, खेती के जानवर, गाड़ी और बड़े हथियार को फार्म को देना होता है, जो सबकी सम्मिलित सम्पत्ति हो जाते हैं। नये मेम्बर के पास दूसरे मेम्बरों की औसत भूमि से अधिक मूल्य की भूमि होने पर उसके लिए उसे दो वर्ष के भीतर दाम चुका दिया गया। यदि उसका देना कम है, तो वह दो साल के भीतर उसे पूरा कर देता है। अगर फार्म के नजदीक का किसान शामिल नहीं होना चाहता, तो उसे अपनी भूमि बदलावन में देने के लिए कहा जाता है, जिसमें कि फार्म के सारे खेत एक चक में आ जायँ। यदि कोई मेम्बर सामूहिक फार्म से अलग होना चाहता है, तो उसे स्वतन्त्रतापूर्वक कर सकता है, और उसके लिए आवश्यक चीजों का तालमेल कर दिया जाता है। 'शान्ति-सामूहिक-फार्म' के हरेक किसान के पास अपने परिवार के व्यक्तियों की संख्या के अनुसार एक खेत का टुकड़ा अपने पास रखने का अधिकार है–उदाहरणार्थ 6 व्यक्तियों का परिवार अपने इस्तेमाल की साग-सब्जी उगाने के वास्ते एक एकड़ जमीन निजी तौर से रख सकता है, वह एक गाय, एक बछड़ा, कितने ही सूअर, मुर्गियाँ और कुछ खेती के हथियार भी अपने पास रख सकता है।

सामूहिक फार्म का संगठन इस प्रकार है कि उसके सभी मेम्बर सामूहिक खेती के सर्वोपरि संगठन के

* China Reconstructs, 1953, No. 2, PP. 16-20

सामान्य सम्मेलन के मेम्बर हैं। यह प्रतिवर्ष चार बार बैठकर अपनी बड़ी-बड़ी नीति के बारे में फैसला करता है, एक अध्यक्ष, प्रबन्ध-समिति और निरीक्षण-समिति को चुनता है, भविष्य के लिए योजना बनाता है और नये मेम्बरों को स्वीकार करता है। प्रबन्ध-समिति सम्मेलन की कार्यकारिणी समिति है, जो सम्मेलन के निर्णयों को कार्यरूप में परिणत करती है, इसकी बैठक प्रति सप्ताह होती है, जिसमें वह उत्पादन टोलियों का संगठन और उनमें काम का विभाजन करती है। निरीक्षण-समिति प्रति पाँचवें दिन इकट्ठा होकर किये हुए काम की जाँच-पड़ताल करती है, खर्च को देखती है और सार्वजनिक सम्पत्ति की देखभाल करती है।

'शान्ति-सामूहिक-फर्म' के पास 1680 एकड़ जमीन है, और उसमें 514 आदमियोंवाले 138 परिवार सम्मिलित हैं। इसकी सम्मिलित सम्पत्ति में 136 घोड़े, 23 गाड़ियाँ और घोड़ों से चलनेवाली पाँच खेती की मशीनें हैं। एक खास टोली इसके 139 ढोरों, 130 भेड़ों और 60 से अधिक ऊपर सूअरों की चरवाही करती है।

फार्म की वार्षिक आमदनी का तीन सैकड़ा रक्षित कोष के तौर पर, एक सैकड़ा जन-कल्याण और एक सैकड़ा फार्म के प्रबद्ध व्यय के लिए अलग रख दिया जाता है। फिर उत्पादन के खर्च, बीमा, करों को देने के बाद कुछ धन अगले साल की आवश्यकताओं के लिए भी रख दिया जाता है। बाकी बची हुई उपज को हरेक मेम्बर में काम के दिनों के अनुसार बाँट दिया जाता है। एक किसान साधारण तौर से एक दिन में कितना काम कर सकता है, उसी को एक काम का दिन गिना जाता है।

सामूहिक फार्म के स्थापित होने के बाद हरेक खेती की मेड़ें तोड़ दी गईं और बिना मेड़ों के बड़े-बड़े चक बना दिये गये। खेत की अच्छी तरह देखभाल करके फसल बोने का निश्चय किया जाता है। ऊपर के सूखे चक में बाजरा और आलू जैसी चीजें बोई जाती हैं, खलार (नीची जमीन) में गेहूँ, सोयाबीन और सन बोया जाता है। काम करनेवालों को भी ठीक तरह से संगठित किया जाता है, हरेक आदमी को उसके अनुरूप काम दिया जाता है। सामूहिक फार्म का आदर्श वाक्य है : 'सब हरेक के लिए और हरेक सबके लिए।'

सिंग-क्यांग (चीनी तुर्किस्तान) में 'तिहुआ सामूहिक-रूप फार्म' भी एक आदर्श खेती है। इसमें हान् (चीनी), हुई, उइगुर, कचाक और शिपो जैसी कई जातियों के मेम्बर हैं, जो सभी मिलकर एक परिवार की तरह काम करते हैं। हरेक परिवार गाँव में अपने जातीय और धार्मिक रीति-रवाजों का पालन करते शान्ति से रहता है। तिहुआ के किसान पहले सबसे गरीब किसानों में से थे। अब उनके पास 3,300 एकड़ जमीन है, जोकि पहले निर्जन घास का मैदान था, जिसमें केवल जंगली जानवर और चिड़ियाँ ही रहती थीं। तिहुआ सामूहिक खेती के मेम्बरों ने काम करने की अपनी कई टोलियाँ संगठित कीं, जिनमें से कुछ सिंचाई का प्रबन्ध करतीं, और कुछ परती जमीन को आबाद करने में लगीं। बढ़ई और लोहार भी आकर इस फर्म में सम्मिलित हो गये। सबने मिलकर प्रति परिवार तीन एकड़ की खेती करनी शुरू की। जल्दी ही किसानों को अपने सामूहिक श्रम का फल मालूम हो गया। वह बड़े आराम से रहते हैं। आज हेइलुंग-कियांग प्रदेश का 'नवजीवन-सामूहिक-फार्म', सिंग-क्यांग प्रदेश का 'चिंगारी-सामूहिक-फार्म', या उत्तर-पूर्व चीन का 'शान्ति-सामूहिक-फार्म' जैसे एक दर्जन के करीब सामूहिक फार्म चीन में काम कर रहे हैं। पारस्परिक सहायता प्रणाली ने किसानों को रास्ता दिखला दिया है। वह समय दूर नहीं है, जबकि वहाँ भी खेती समाजवादी प्रणाली से होने लगेगी और किसानों का जीवन अधिक समृद्ध हो जायेगा।

2. प्रथम पंचवार्षिक योजना

रूसी-क्रान्ति को भी गृहयुद्ध और विदेशी दखलंदाजी से गुजरते हुए देश के खंडस्फोट का पुनर्निर्माण करना पड़ा था। वहाँ क्रान्ति के पहले पाँच साल गृहयुद्ध में बीते। उसके बाद के सात साल खंडस्फोट के पुनर्निर्माण में। चीन का गृहयुद्ध-काल, जहाँ तक कि कुओ-मिन्तांग का सम्बन्ध है, बहुत लम्बा था, यदि 1937 में च्यांग काइ-शेक के प्रथम प्रहार से उसको गिना जाय। भीषण गृहयुद्ध, जिसमें अमेरिका ने खुलकर क्रान्ति के विरोध में अपने सिपाही भेजे बिना सब तरह की सहायता दी, चार वर्ष तक रहा। फिर खंडस्फोट की मरम्मत का मौका चीनी जनता को मिला और रूस की तरह सात वर्ष न लगाकर तीन वर्ष में ही माओ चे-तुंग के नेतृत्व में चीन ने

निर्माण और पुनःस्थापना का काम कर डाला। इसमें शक नहीं, ऐसा करने में लाल रूस का नमूना उसके सामने था। इसीलिए माओ हमेशा कहा करते हैं कि हमें सोवियत रूस और उसकी जनता से सीखना चाहिए। 1949-52 ई. तक खंडविस्फोट प्रतिसंस्कार का काम पूरा हो जाने पर चीन ने 1953 ई. के शुरू में अपनी प्रथम पंचवार्षिक योजना रक्खी, जो 1957 ई. के अन्त तक समाप्त हो गयी। जहाँ सोवियत उसको बिना यारोमददगार के सारा काम अपने आप करना था, वहाँ चीन गणराज्य अकेला नहीं है। रूस का विशाल तजर्बा उसके सामने है, रूस के मजूर और हर तरह के विशेषज्ञ बिना किसी लाभ या लोभ के दिल खोलकर अपने चीनी भाइयों को अपने जैसा बनाने के लिए तैयार हैं, साथ ही वह मशीन तथा दूसरे साधनों को बहुत भारी परिमाण में चीन भेज़ रहे हैं। इसलिए इसमें शक नहीं कि रूस को जितना काम करने में दस साल लगा था, माओ चे-तुंग के नेतृत्व में चीन को उससे आधा भी समय नहीं लगेगा।

(1) योजना का प्रथम वर्ष (1953)–अखिल चीन मजूर संघ के उपसभापति ल्यू निंग-यी ने योजना के प्रथम वर्ष के काम के बारे में एक बड़ा ही सारगर्भित लेख लिखा है* :

" पिछले तीन सालों में और चीनी कम्युनिस्ट पार्टी और अध्यक्ष माओ चे-तुंग के नेतृत्व में नवीन चीन की स्थापना के बाद से विशेष करके, मजूर-जनता के अमर शिक्षक साथी स्तालिन के नेतृत्व में सोवियत सरकार और सोवियत जनता की उत्साहपूर्ण और निःस्वार्थ सहायता से किसानों तथा दूसरे जनतान्त्रिक वर्गों से एकता स्थापित करके चीन मजूर-वर्ग ने युद्ध के लम्बे सालों में ध्वस्त राष्ट्रीय अर्थनीति को अत्यन्त शीघ्रता से पुनःस्थापित और विकसित किया। इस प्रकार हमारे देश को औद्योगिकीकरण के लिए एक अतिसुन्दर नींव रख दी गई।

" चीनी मजूर-वर्ग और जनता ने औद्योगीकरण के सम्बन्ध में लेनिन और स्तालिन की शिक्षा को अपने हृदय में धारण किया और अध्यक्ष माओ चे-तुंग के शब्दों में समझ लिया : "उद्योग के बिना न ठोस राष्ट्रीय प्रतिरक्षा हो सकती है, न जन-कल्याण, न राष्ट्रीय समृद्धि और शक्ति।" बहुत समय से, जबकि चीन अर्ध-उपनिवेशी और अर्धसामन्ती देश था, चीनी जनता औद्योगीकरण का सपना देख रही थी। लेकिन, केवल अभी ही चीनी जन-गण्राज्य की स्थापना के साथ, चीनी जनता के अपने राज्य की स्थापना के साथ, वह स्वप्न बड़ी जल्दी के साथ सिद्ध हो सकता है।

" 1953 ई. चीन की प्रथम पंचवार्षिक योजना के प्रथम वर्ष के बजट के अनुसार सम्पूर्ण व्यय का 60 सैकड़ा आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के लिए अलग रक्खा गया है, और 44.34 सैकड़ा राष्ट्रीय आर्थिक निर्माण के लिए, जिसमें भी अधिक जोर भारी उद्योग पर है। इस साल के निर्माण के लक्ष्य हैं : लोहा-फौलाद, अलोह धातु और रसायन के 21 कारखानों की स्थापना और पुनर्नवीकरण, मशीन-निर्माण करनेवाले 24 बड़े-बड़े कारखानों, पनबिजली कारखानों के साथ 24 बिजली के कारखानों और 11 नई रेलवे लाइनों का निर्माण, जिसमें 600 किलोमीटर लाइन इसी साल खुल जायेगी। "

चीनी जनता बड़े उत्साह के साथ अपने नवीन समृद्ध जीवन के साकार निर्माण करने में लगी हुई है। वह अपने शरीर और दिमाग से कितना उत्साह दिखला रही है, यह इसी से पता लगेगा कि 12 नवम्बर, 1952 को आनूशान् (मंचूरिया) के लौह-फौलाद कम्पनी के कमकरों ने 6 घंटे 9 मिनट में इतना अधिक लोहा तैयार किया, जितना कभी तैयार नहीं हुआ था। 1953 के 12 अप्रैल को, काम चालू होने के केवल 35 दिनों बाद, सोवियत के स्वयं-चालित नवीनतम मशीनों द्वारा फिर से निर्मित होने के बाद, आनूशान् के 8वें नम्बर के धौंकूभट्टे ने नियत परिमाण से 1.81 सैकड़ा अधिक दैनिक उत्पादन शुरू किया। जापानियों के अधिकार में रहते समय अधिकतम उपज से यह 78.29 सैकड़ा ऊपर था। इसी तरह पिंगान (फूशिन, उत्तर-पूर्व चीन) के कोयला के खनकों ने सोवियत की मशीन इस्तेमाल करते हुए सोवियत विशेषज्ञों की सहायता से एक महीने में 74.28 मीटर की खुदाई की जोकि अंग्रेज खनकों के रेकार्ड से बहुत आगे तथा सोवियत के नजदीक है। पेंकिंग के पास शीह-चिंग-शान् लौह-फौलाद कारखाने के कमकरों ने 14 मार्च को 42 दिन में पुनर्नवीकृत होनेवाले धौंकूभट्टे

*** The People's China, 1653, No. 2, PP 5-9**

को 28 घंटे में तैयार कर दिया, 1951 में इस काम में 53 दिन लगा था। शायद ही कोई दिन जाता हो, जबकि चीन के कमकर अपने कामों का नया रेकार्ड स्थापित न करते हों।

1952 में माओ चू-शी (अध्यक्ष माओ) ने कमकर जनता से उत्पादन को बढ़ाने और मितव्ययता अर्थात् किसी भी तरह का अपव्यय न होने देने के लिए अपील की थी। उन्होंने बतलाया था कि लेनिन और स्तालिन ने राष्ट्रीय निर्माण के लिए कोष-संचय का यही रास्ता दिखलाया है। सचमुच ही पूँजीवादी औद्योगीकरण और समाजवादी औद्योगीकरण में बहुत बड़ा अन्तर यही है कि जहाँ पूँजीवादी नेता, नौकरशाही और विशेषज्ञ बेदर्दी के साथ हर जगह गरीब जनता की कमाई को बरबाद करते हैं, जैसाकि कि भारत में इस समय सर्वत्र देखा जा रहा है। वहाँ समाजवादी सरकार, कमकर, और विशेषज्ञ एक-एक कौड़ी को खर्च करने में बड़ी सावधानी से काम लेते हैं। सभी जानते हैं कि बूँद-बूँद से समुद्र भर जाता है, इसलिए इस सर्वांगीण और सार्वत्रिक मितव्ययता से औद्योगीकरण के लिए बहुत भारी पूँजी जमा हो जाती है। चीन के कमकरों ने माओ चूशी की पुकार को बड़े ध्यान से सुना और उस पर कड़ाई से अमल करना शुरू किया, और हर जगह अपव्यय को हटाया। श्रम ही वस्तुतः रूपान्तर में पूँजी है, इसलिए श्रम की मितव्ययता के लिए उन्होंने यन्त्रों में नये-नये सुधार और सुझाव पेश किये। आन्शान् के लौह-फौलाद कारखाने के कमकरों ने 1952-1953 में अपने श्रम की उपज को 5.35 सैकड़ा बढ़ाया, जिससे राज्य को 52 अरब 40 करोड़ युआन (डालर) की बचत हुई। 1952 में शेन्यांग इंजीनियरी कारखाने के कमकरों ने मशीनों में 7,266 नये सुधार किये, जिनमें से केवल 156 ने ही 36 अरब 60 करोड़ युआन की अधिक सम्पत्ति पैदा की। 1952 में केवल उत्तर, पूर्व, उत्तर-पूर्व और पूर्वोत्तर और पश्चिमोत्तर प्रदेशों के ही सरकारी उद्योग-धन्धों के कमकरों और कर्मचारियों ने 220 खबर युआन का अतिरिक्त उत्पादन किया। यह रकम 25 हजार किलोमीटर रेलवे-लाइन तैयार करने के लिए काफी है। इस तरह का जोश साधारण कमकर से लेकर इंजीनियर तक, साधारण ग्रामीण से लेकर राष्ट्र के नायकों तक उसी देश में पैदा हो सकता है, जहाँ लोगों को विश्वास है कि सभी पूरे जोश और निःस्वार्थ भाव से काम कर रहे हैं। च्यांग काई-शेक के चार परिवारोंवाली लूट में यह उत्साह कैसे पैदा हो सकता था ? हमारे यहाँ, जहाँ मुट्ठीभर सेठ और नौकरशाह करोड़ों का वारा-न्यारा कर रहे हैं, इस तरह का उत्साह और स्वार्थत्याग दिखाना क्या मल्लू बनना नहीं है ? चीन में भी अब रूस की तरह ऐसे श्रमवीर पैदा हो रहे हैं, जो महीने का काम पखवारों में कर रहे हैं। वेइ यू-शी का नाम आज सारे चीन में प्रसिद्ध है। इस मिस्तरी ने 6 महीने के काम को 3 महीने में किया। सैकड़ों बड़े-बड़े कारखानों के मजूर आपस में होड़ लगाकर अधिक काम और अधिक उत्पादन में लगे हुए हैं।

(2) सोवियत-सहायता–नवीन चीन की स्थापना के लिए कुछ ही महीनों बाद दिसम्बर-फरवरी, 1950 में अध्यक्ष माओ और प्रधानमन्त्री चाउ एन्-लाइ ने मास्को में जाकर मित्रता, सहकार और पारस्परिक सहायता के लिए चीन-सोवियत-सन्धि की, जिसके द्वारा सोवियत सरकार ने बहुत भारी परिमाण में उधार पर सहायता देना स्वीकार किया। साथी माओ ने इस उदारता के बारे में कहा था :

"सोवियत सरकार और सोवियत जनता ने सच्ची और निःस्वार्थ भाव से जो सहायता दी है, वह नये चीन के आर्थिक पुनःस्थापना और विकास में ही जल्दी नहीं कराएगी, बल्कि बड़े पैमाने के राष्ट्रीय विकास की हमारी प्रथम पंचवार्षिक योजना के पूरा करने में भी भारी मदद करेगी।"

1953 के मार्च में सोवियत-संघ और चीन के बीच व्यापार और उधार की मात्रा के बारे में भी एक करारनामा हुआ, जिसके द्वारा चीन को नये बिजली के स्टेशनों तथा दूसरे कारखानों के बनाने में सोवियत-संघ की सहायता मिल रही है। सोवियत ने धातु-कारखानों, खानों, मशीन-निर्माण, रसायन, बिजली-शक्ति तथा दूसरे उद्योग-धन्धों के लिए सामान देना शुरू किया है। सोवियत की बनी हुई आधुनिकतम कृषि-मशीनें वहाँ पहुँच रही हैं, नये आविष्कृत बीज और अच्छी नसल के ढोर और दूसरे पशु बड़े भारी परिमाण में चीन के कोनों-कोनों में पहुँचाये जा रहे हैं। इस नये करारनामे की उपयोगिता के बारे में चीनी पत्र 'जेनमिन् जिह पाओ' ने लिखा है :

"इस समय, जबकि हमारे देश ने आर्थिक विकास के बड़े प्रोग्राम को हाथ में लिया है, दोनों देशों के

बीच में व्यापार तथा हमारे राष्ट्रीय विकास में सहायता प्रदान करने के लिए सोवियत सरकार ने फिर चीन के साथ करारनामा और समझौता किया है। सोवियत संघ हमारे साथ अपने व्यापार को काफी बढ़ायेगा और हमारे आर्थिक विकास के लिए अपेक्षित बहुत तरह के साधनों और सामग्री को देगा।"

"केवल सोवियत-संघ ही नहीं, बल्कि चेकोस्लोवाकिया, पोलन्द और हुंगरी के नवीन जनतांत्रिक गणराज्य भी पूरे उत्साह के साथ अपनी शक्ति के अनुसार चीन की सहायता कर रहे हैं। केवल व्यापार, साधन-सामग्री से ही सोवियत रूस चीन की सहायता नहीं कर रहा है, बल्कि उससे भी मूल्यवान उसकी सहायता है–अपने विशेषज्ञों को बड़ी भारी संख्या में वहाँ भेजना। फिर यह विशेषज्ञ अमेरिकन विशेषज्ञों की तरह न थर्डक्लासी होते हैं, और न भारी खर्चीले, रोब गाँठनेवाले। सोवियत या पश्चिमी कम्युनिस्ट देशों के विशेषज्ञ अपने चीनी विद्यार्थियों को छोटे भाई की तरह बड़ी तत्परता और स्नेह से अपनी हरेक बात को सिखला रहे हैं। उन्हें चीन में अपने माल के लिए हमेशा के वास्ते बाजार नहीं तैयार करना है, बल्कि उनका लक्ष्य है जल्दी से जल्दी चीन को अपने पैरों पर खड़ा कर देना। भला पूँजीवादी किसी दूसरे देश के साथ ऐसा करके अपने लाभ-शुभ को हानि पहुँचाते अपने पैरों में स्वयं कुल्हाड़ी मारने के लिए तैयार हो सकते हैं ?"

माओ चू-शी ने 'सर्वश्रेष्ठ मित्रता' के नाम से लिखे अपने लेख में स्वीकार किया है : "चीनी कम्युनिस्ट और चीनी जनता अपने देश के निर्माण के लिए स्तालिन की शिक्षाओं, सोवियत के विज्ञान और टेकनीक को और भी तत्परता से अध्ययन करेगी।" भारत में राष्ट्रीय धन को वस्तुतः बढ़ानेवाले इंजीनियर और टेकनीक के जानकार जहाँ बेकारी के मारे भूखों मर रहे हैं, वहाँ चीन में इतनी तेजी से हर जगह नव-निर्माण का काम हो रहा है कि उसके लिए बहुत भारी संख्या में इंजीनियरों और टेकनीक-विशेषज्ञों की आवश्यकता पड़ रही है।

हमारे यहाँ बेकारी दूर करने के लिए आफिसों में कलम घिसनेवाले बाबुओं और दस्तखत करनेवाले अफसरों की संख्या जहाँ दिल खोलकर बढ़ाई जा रही है–और यह सभी को मालूम है कि ऊपर से नीचे तक सभी प्रभु लोग अपने भाई-भतीजे-भांजों को बैठाने के लिए नई-नई जगहें तैयार कर रहे हैं–वहाँ चीन उत्पादक कर्मियों की संख्या बड़ी तेजी से बढ़ाते कागजी ही नहीं, बल्कि वास्तविक बड़े पैमाने के निर्माण में लगा हुआ है। केवल 1952 में आन्शान् की लौह-फौलाद कम्पनी ने 1093 ड्राफ्टमैन एकौटेंट, गोदाम-रक्षक और 4,533 टेकनीशियन तैयार किये। अगले पाँच वर्षों में केवल आन्शान् 5,003 साधारण कमकरों को सिखाकर टेकनीशियन और 30,000 मिस्तरियों को तैयार करेगा। फूशिन् के कोयला-केन्द्र में बचे समय में 4,500 कमकरों और आफिस-कर्मचारियों को सिखाने के लिए 12 स्कूल काम कर रहे हैं। चीन के मजूर-संघों ने ऐसे 16,277 अवकाश समय के स्कूल खोले हैं, जिनमें 30 लाख 87 हजार कमकर शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं।

(3) **योजना के काम के आँकड़े**–प्रथम पंचवार्षिक योजना के प्रथम वर्ष में 1952 की अपेक्षा 41 सैकड़ा अधिक पूँजी का निर्माण-कार्य होगा। आधारित उद्योगों और मशीन-निर्माण उद्योग में 47 सैकड़ा और ईंधन-उद्योग में 86 सैकड़ा की वृद्धि होगी। विकास का काम सारे देश में फैला हुआ है, लेकिन सबसे बड़े पैमाने पर वह पूर्वोत्तर चीन में होगा, जहाँ इस साल के वसन्त में ही 30 से 35 लाख वर्गमीटर फर्श भूमिवाले औद्योगिक मकानों और रहने के घरों पर काम शुरू हो गया है। इसके बाद सबसे भारी निर्माण का काम पश्चिमोत्तर चीन में हो रहा है, जहाँ 1952 की अपेक्षा इस साल 6 गुना अधिक निर्माण काम होने जा रहा है, और एक ही साथ वहाँ 170 बड़े-बड़े कारखाने बन रहे हैं। पश्चिमोत्तर चीन तो चीन का उराल बनने जा रहा है। दक्षिण-पश्चिम चीन में 98 बड़े-बड़े औद्योगिक कारखाने बन रहे हैं, जिनमें से अधिकांश 1953 के अन्त तक काम करने लगेंगे।

1953 में मशीन-निर्माण, लौह-अलौह-रसायन उद्योग जैसे आधारभूत उद्योगों को सबसे पहले हाथ में लिया जा रहा है। अपेक्षाकृत 13 बड़े-बड़े कारखाने फिर से ठीक करके बड़े बनाये जा रहे हैं और 18 नये बन रहे हैं, जिनमें केन्द्रीय चीन में चीन का एक बड़ा लौह-फौलाद का कारखाना भी है। 15 मौजूदा मशीन-निर्माण कारखाने फिर से बनाये और बढ़ाये जा रहे हैं और 9 नये बन रहे हैं, जिनमें भारी मशीनों, बिजली सामान और मोटर कारखाने, जहाज कारखाने आदि सम्मिलित हैं।

जहाँ एक ओर इस तरह बड़े पैमाने पर भूमि में छिपी सम्पत्ति को खोज निकालने के लिए देशभर में भूतत्त्वीय पार्टियाँ छानबीन कर रही हैं, वहाँ पता लगते ही कितनी ही जगहों में काम भी शुरू कर दिया गया है। पूर्वोत्तर चीन में 14 कोयले की खानें और फूशिन के पास चीन की सबसे बड़ी खुले काटवाली कोयलाखान में काम शुरू हुआ है। देश के दूसरे भागों में बीस कोयले की खानों को फिर से खोला जा रहा है और कितनों में पहले-पहल काम शुरू किया जा रहा है। ह्वाई नदी की कोयले की खान बड़ी समृद्ध मानी जाती है, जहाँ पर 1 अरब टन कोयले का जखीरा है, जिसमें 50 से 60 सैकड़े तक प्रथम श्रेणी का कोक बनाने लायक है, यह हाल में पता लगा है। यांग ची नदी के दक्षिण क्यांग-सी प्रदेश में पिगस्यांग कोयले की खानों में काम होने लगा है। 1952 की अपेक्षा पंचवार्षिक योजना के प्रथम वर्ष उत्पादन किस तरह बढ़ा है, इसे निम्न आँकड़े बतलाते हैं–

नाम	1952	1953
कच्चा लोहा	100	114
फौलाद	100	123
शक्ति	100	127
तेल	100	142
अलौह धातु	100	139 से 154
कारखाना और खान के साधन	100	253
मशीन-टूल	100	134
सीमेंट	100	117
कपास सूत	100	19
कपास कपड़ा	100	116
कागज	100	106

उपज में सबसे अधिक वृद्धि पश्चिमोत्तर चीन में होगी, जहाँ पर कि राजकीय तथा सम्मिलित उद्योग-धन्धों में पिछले साल की अपेक्षा 70.9 सैकड़ा अधिक होगी। 1952 की अपेक्षा 1953 में पूर्वोत्तर चीन के बड़े-बड़े सरकारी कारखाने के उत्पादन में 23 सैकड़ा की वृद्धि होगी।

फूशिन् की कोयले की खान दुनिया की सबसे बड़ी खानों में है। कहीं-कहीं इसमें कोयले की तह 60 मीटर तक मोटी है, और इसके ऊपर केवल 20 मीटर मोटा गिलाफ है। इस खान को खुले काटवाली प्रणाली से खोदा जायगा, जिसके लिए 56 करोड़ घनमीटर मिट्टी और पत्थर ऊपर से हटाकर 10 किलोमीटर दूर फेंका जायगा। लेकिन यह सारा काम सोवियत के बने हुए शक्तिशाली बिजलीवाले खनक-यन्त्रों, बुलडोजरों और बिजली के इंजनों के सहारे किया जा रहा है। इन मशीनों के चलाने के लिए चीनी कमकरों को सोवियत विशेषज्ञों ने शिक्षित किया है। ऊपर की खोल को हटा देने के बाद कोयला निकालने का काम जुलाई, 1953 से शुरू हो गया।

1950 से ताइवान में भारी मशीनों के निर्माण का कारखाना बन रहा है। इसमें बहुत तरह की बड़ी-बड़ी मशीनें बनाई जायँगी, ऐसी मशीनें जिनमें से कितनी ही यूरोप के भी कितने ही उद्योग-प्रधान देशों में नहीं बनतीं। चीन मशीनें और मशीनों के बनाने की मशीनें अपने ही यहाँ बनाने की तैयारी में लगा हुआ है। जिन चीजों के निर्माण का हमारे यहाँ अभी स्वप्न भी नहीं देखा जा रहा है, वह दुरूह और बारीक मशीनें प्रथम पंचवार्षिक योजना की समाप्ति के समय 'चीन में बनी' के रूप में भारी परिमाणों में देखी जाने लगीं। पूर्व चीन का मशीन कारखाना पहले केवल मशीनों की मरम्मत किया करता था, अब वह खान की मशीनें, मशीन-टूल (मशीन बनानेवाली मशीन) और दूसरी तरह की पेचीदा मशीनें बना रहा है। 1953 से वह भाप की बड़ी-बड़ी टरबाइनें, डीजलमोटर, भारी क्रेन तथा सूक्ष्म खराद तैयार करने लगा है। शांघाइ का एशिया फौलाद कारखाना अब ऊँचे दर्जे के फौलाद तैयार कर रहा है, और ताई-युआन का फौलाद कारखाना पतली चादरें बनाने लगा है। इस तरह हम देख

रहे हैं, दुनिया को अचम्भे में डालनेवाला नव-निर्माण का काम चीन में भी बड़े उत्साह के साथ हो रहा है, जिसे कि सोवियत रूस ने अपनी पंचवार्षिक योजनाओं के समय किया था। उद्योग के विशाल रूप में विकास करने के लिए रेलों की बड़ी आवश्यकता है, जिसकी ओर नवीन चीन का खास तौर से ध्यान है। पश्चिमोत्तर प्रदेश में लनूचाउ नगर से ह्वांग हो के नये पुल तक 36 किलोमीटर रेलवे लाइन 1953 की प्रथम छमाही में बिछ चुकी थी। लानूचाउ सिंगक्यांग रेलवे के बनाने में जोर-जोर से काम हो रहा है। इस साल तक 184 किलोमीटर रेल बन जायगी। हाल में कान्तनू से पेकिंग होते मास्को तक की ट्रेन जारी हुई है, जिसे साइबेरिया होकर जाना पड़ता है। वह समय नजदीक है, जबकि पेकिंग से चीनी और सोवियत मध्य-एशिया होते मास्को जानेवाली एक दूसरी और कम दूरीवाली रेलवे लाइन तैयार हो जायगी। इसी तरह चेंग तू-तियान् शुइ रेलवे लाइन के 118 मील पर भी काम होने लगा है। इस लाइन पर 1 जुलाई, 1952 में काम शुरू हुआ। लाइन के पूरा हो जाने पर चुंग किंग और चुंग-तू (जेचुआन) में यातायात की आसानी के साथ-साथ चीन के एक बहुत पिछले देश में आधुनिक साधनों का प्रवेश होगा।

रेलों के अतिरिक्त मोटर की सड़कें भी बड़ी तेजी से बन रही हैं। चिंगहाइ के सीनिंग शहर से 1,130 किलोमीटर लम्बी चिंगहाइ-सीनिंग-ल्हासा सड़क आधी बन चुकी है और उसमें सीनिंग से ह्वांग होयेन (छमू-दो) तक मोटरें चलने लगी हैं। इस सड़क पर कहीं-कहीं समुद्र-तल से 14,000 फीट की ऊँचाई से मोटर को गुजरना पड़ता है। चुंग किंग से चुंग-तू तक रेलवे लाइन बन रही है और चुंग-तू से आगे तिब्बती भाषा-भाषी स्वायत भूक्षेत्र (जेचुआन प्रदेश) में अहपा तक मोटर की सड़क बन रही है।

चीन के दुरारोह पर्वतों के बीच में जिस तरह चीनी मानव माओ चू-शी के नेतृत्व में विशाल निर्माण का काम कर रहा है, वैसे ही रेगिस्तानों और निर्जन स्थानों में भी वह अपना चमत्कार दिखाने लगा है। पश्चिमोत्तर प्रदेश के तिहुआ (उरूमची) नगरी से 15 किलोमीटर दक्षिण लालहंस सरोवर (हुंग येन् चीह) नामक आधुनिक ढंग की जलनिधि तैयार की गई है, जिसने 1 मई, 1953 से 37 हजार एकड़ प्यासी जमीन को सींचना शुरू किया। यह उस योजना का एक अंग है, जिसके द्वारा तिहुआ नगरी के आसपास की बेकार जमीन को अनाज की बखार बनाया जानेवाला है। इस योजना का आरम्भ सितम्बर, 1950 में शुरू हुआ था। सिंचाई के अभाव के कारण तिहुआ नगरी और उसके आसपास का इलाका–जोकि हजारों वर्षों तक पशुपाल घुमक्कड़ों की विचरणभूमि रहा है–अनाज के लिए बिल्कुल परमुखापेक्षी था। अन्न पाँच हजार से अधिक किलोमीटर दूर से लाना पड़ता था, और यातायात का खर्च अनाज के दाम से दो से पाँच-गुना तक अधिक था। इस योजना के पूरा हो जाने के बाद 68 लाख एकड़ जमीन नहरों से सींची जाकर उर्वर खेती में परिणत हो जायगी। लनूचाउ से इधर की ओर रेल बनने लगी है, इसका वर्णन हम अभी कर चुके हैं।

19
अल्पसंख्यक जातियाँ

चीन गणराज्य में चीनियों के अतिरिक्त तिब्बती, मंगोल, तुर्क आदि कितनी ही और जातियाँ भी बसती हैं, इसलिए वह बहुजातिक राष्ट्र है। बहुजातिक राष्ट्र होने से उसी तरह उसे निर्बल होने का कोई डर नहीं, जिस तरह सोवियत रूस को। इसका कारण यही है कि माओ ने मार्क्स-लेनिन-स्तालिन के बतलाये हुए रास्ते से जातियों की समस्या को बड़ी आसानी से हल कर दिया है। अपने गणराज्य में बसनेवाली सभी जातियाँ भाई-भाई हैं, केवल दिखलाने और कहने के लिए नहीं, बल्कि आर्थिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक तौर से भी सभी जातियों को समान करने के लिए अनवरत कोशिश की जा रही है। जातियों के प्रति वहाँ जो नीति बरती जा रही है, उसका पता हमें प्रधानमन्त्री चाउ एन-लाई के भाषण से मालूम होगा।

1. अल्पमतों के बारे में चाउ एन्-लाइ का भाषण (1951 ई.)

23 अक्तूबर, 1951 को प्रधानमन्त्री चाउ एन्-लाइ ने राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन की जातीय कमेटी के तीसरे अधिवेशन में बोलते हुए चीन के भीतर की जातियों के पारस्परिक सम्बन्ध के बारे में कहा था :

" जातीय अल्पमतों के बारे में पहली बात, जिसका उल्लेख करना चाहता हूँ, वह है तिब्बत की शान्तिपूर्ण मुक्ति के लिए किया गया सुलहनामा अब कार्यरूप में परिणत किया जाने लगा है। जन-मुक्ति-सेना की टुकड़ियों के ल्हासा में दाखिल होने के समय तिब्बती जनता ने बड़े जोश के साथ स्वागत किया। जातियों के प्रति अध्यक्ष माओ चे-तुंग की नीति की यह एक बड़ी विजय रही।

" पिछले साल और पहले केन्द्रीय जन-सरकार ने अल्पमत जातियों के देश में अपने प्रतिनिधि भेजे, और अल्पमत जातियों के प्रतिनिधि बैठकों और दूसरे कामों के लिए पेकिंग आये। और यह इस तरह की दूसरी कार्रवाइयों ने केन्द्रीय जन-सरकार और भिन्न-भिन्न जातियों के बीच नैतिक सम्बन्ध स्थापित करके मजबूत किया, और अपनी महान् मातृभूमि के प्रति जातियों के बीच सद्भाव पैदा करने में प्रोत्साहन दिया।··· भिन्न-भिन्न जातियों के बीच चिरकाल से चली आती फूट और अतीत के विरोध अब स्वयं हटकर उनकी जगह एकता और सहयोग स्थापित हुआ।

" राष्ट्रीय क्षेत्रों में स्वायत्त शासन और राष्ट्रीय जनतान्त्रिक सम्मिलित सरकारों की स्थापना एक-एक करके होती जा रही है। भीतरी मंगोलिया को छोड़कर 30 जातीय स्वायत्त सरकार और 51 जातीय जनतान्त्रिक सम्मिलित सरकारें स्थापित की जा चुकी हैं, जिनका दर्जा छोटे इलाके से शियानू (जिले) के बराबर तक है। इन सरकारों के काम सब मिलाकर बहुत अच्छे हुए हैं। "

प्रधानमन्त्री के इस कथन से मालूम है कि महान् चीन जाति के अतिरिक्त, 81 ऐसे भूक्षेत्र हैं, जहाँ दूसरी जातियाँ बसती हैं, और जिनके विकास तथा चीन के प्रति घनिष्ठतया सम्बन्ध स्थापित करने के लिए माओ चे-तुंग ने 81 स्वायत्त-शासित क्षेत्र बनाये हैं। हमारे यहाँ जब भिन्न-भिन्न भाषा बोलनेवाली, अपना विशेष व्यक्तित्त्व रखनेवाली जातियों के लिए स्वायत्त शासन की बात की जाती है तो हमारे राष्ट्रकर्णधारों का सिर घूमने लगता है, और वे इसमें राष्ट्र को टुकड़े-टुकड़े होता देखते हैं।

आर्थिक, स्वास्थ्य, शिक्षा-संस्कृति तथा दूसरे क्षेत्रों में नवीन चीन किस तरह अल्पमत जातियों के प्रति बर्ताव कर रहा है, यह हमें चाउ एन्-लाइ के भाषण से मालूम होता है :

" राजकीय व्यापारिक संस्थाएँ भिन्न-भिन्न तरीकों से अल्पमत जातियों के भूक्षेत्र में अपने काम को बढ़ा रही हैं। जिन जगहों में राजकीय व्यापारिक संस्थाएँ कुछ काम करने योग्य हैं, वहाँ समान मूल्य या कहीं-कहीं सहायता देकर दामों को ठीक रखने की व्यापारिक नीति माल के भीतर आने के सम्बन्ध में स्वीकार की गई है। इसके कारण स्थानीय उपजों के दाम कहीं-कहीं तीन-चार, बल्कि दस गुने तक बढ़ गये हैं।

" केन्द्रीय जन-सरकार का स्वास्थ्य-मंत्रालय और भिन्न-भिन्न स्थानीय जन-सरकारों ने अल्पमत जातिभूमियों में काम करने के लिए डाक्टर तथा महामारी-विरोधी टोलियों को भेजा अथवा जातीय अल्पमतों को अपना डाक्टरी तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी संगठन कायम करने में सहायता दी। अल्पमत जातियों ने इन टोलियों का बड़े उत्साह के साथ स्वागत किया।

" इस समय अल्पमत जातीय भूक्षेत्रों में सांस्कृतिक और शिक्षा-सम्बन्धी काम हमारी क्षमता के भीतर ही पुनःस्थापित और विकसित किया जा सकता है। लेकिन, तो भी केन्द्रीय जन-सरकारों ने अल्पमत जातियों के लिए कर्मियों को शिक्षित करने के लिए भारी प्रयत्न किया है। सारा समय देनेवाले 50 हजार अल्पमत जातियों के कर्मियों को उत्पादन के काम से हटाकर सारे देश में हमने तैयार किया।···

" इस समय अपने काम में हमें निम्न बातों पर ध्यान देना होगा :

" (1) जनतान्त्रिक केन्द्रवाद पर आधारित सिद्धान्त और जनप्रतिनिधि सम्मेलन प्रणाली के अनुसार हमें ठीक तरह से गम्भीरतापूर्वक सभी जगह जातीय भूक्षेत्रीय स्वायत्त शासन की नीति को कार्यरूप में

परिणत करना होगा और जातीय, जनतान्त्रिक सम्मिलित सरकारों को स्थापित करना होगा। जातीय स्वायत्त भूक्षेत्रों को कितनी मात्रा में स्वायत्त शासन के अधिकार होने चाहिए, इसकी ठीक से व्याख्या होनी चाहिए। जातीय स्वायत्त-शासन का आंगिक रूप भिन्न-भिन्न जातियों के आज के विकास के मुताबिक होना चाहिए, और हमें हान् (चीनी) लोगों की निवासभूमि की प्रणाली को अल्पमत जातियों की निवासभूमि में हूबहू स्थानान्तरित करने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए।

"(2) अल्पमत जातिक भूक्षेत्रों के लिए व्यापार और स्वास्थ्य-रक्षा की सुविधाओं को बढ़ाने के काम में हमें अधिक ध्यान देना चाहिए।

"(3) हमें सभी अल्पमत जातियों के निवासवाले भूक्षेत्र में देशभक्ति की शिक्षा को बढ़ाने और गहरा करने तथा अमेरिकन आक्रमण का प्रतिरोध और कोरिया सहायता आन्दोलन को फैलाना और गहरा करना चाहिए, उनमें सांस्कृतिक शिक्षा-सम्बन्धी सुविधाओं को क्रमशः पुनःस्थापित और विकसित करना चाहिए, एवं केन्द्रीय स्थानों में योजना बनाकर समाचारपत्र और प्रकाशन की सुविधाओं को खास तौर से स्थापित और विकसित करना चाहिए।

"(4) हमें बड़े पैमाने पर सभी जगह अल्पमत जातियों के कर्मियों को शिक्षित करने की नीति को कार्यरूप में परिणत करते रहना चाहिए, और उनके राजनीतिक तथा विचार-सम्बन्धी शिक्षा तथा हमारी सरकारी नीतियों को बतलाने-समझाने को मजबूती से करना चाहिए, जिसमें कि वह नेतृत्व के काम को ठीक से कर सकें और रोज-रोज के अपने कर्तव्यों को योग्यतापूर्वक निभा सकें।

"(5) जातियों के भीतर उचित सुधारों की आवश्यकता है, जिनके द्वारा वह विकास और प्रगति करके अधिक उन्नत जातियों के समकक्ष पहुँच सकें। लेकिन, यह सुधार तत्तद् जातियों के अनुसार होने चाहिए, उन्हें जातियों के जन-साधारण के बहुमत की इच्छा के मुताबिक होना चाहिए। इन सुधारों को कार्यरूप में परिणत करने के लिए उचित तरीके अख्तियार करने चाहिएँ और उनके लिए तत्तद् अल्पमत जातियों के कर्मियों पर विश्वास करना चाहिए।

"(6) हमें हान् (चीनी) जनता और खास करके हान् कर्मियों को शिक्षा देते रहना चाहिए कि उन्हें हर तरह से उनकी रायों और अल्पमत जातियों के जनसाधारण के जातीय समानता के अधिकार को सच्चे अर्थों में सम्मान करना चाहिए, और महत्तर हान् जातीय अहंकार के भिन्न-भिन्न रूपों के प्रभाव को अपने मन से हटा देना चाहिए। इसके साथ ही स्वयं अल्पमत जातियों को भी भिन्न-भिन्न प्रकार के जातीय अहंकार-सम्बन्धी रवैयों को हटाना, हान् तथा दूसरी उन्नत जातियों से अपने काम में सहायता प्राप्त करना, उनके अनुभवों का अध्ययन करना चाहिए, और तत्तद् अल्पमत जातियों के लिए उनके कर्मियों को काम करने की प्रेरणा देनी चाहिए।"

प्रधानमन्त्री चाउ एन्-लाइ के इस भाषण से स्पष्ट हो जाता है कि नवीन चीन अपनी जातियों को किस दृष्टि से देखता है। इसमें शक नहीं, हमारे देश में भी ऐसी अल्पमत जातियाँ बहुत हैं, जिनमें आसाम में नागा और दूसरी जन-जातियों की तरह बहुत-सी पिछड़ी हुई भी हैं, उनके लिए हमें भी यही रुख अख्तियार करना पड़ेगा, तभी राष्ट्र का कल्याण हो सकेगा।

चीन गणराज्य की सभी अल्पमत जातियों के बारे में माओ चे-तुंग का नेतृत्व किस तरह काम कर रहा है, इसे सविस्तार यहाँ लिखना मुश्किल है, किन्तु चीन की मुस्लिम जातियों और तिब्बती जाति के बारे में कुछ कहने से इसके बारे में हमें काफी पता लग सकता है।

2. मुस्लिम जातियाँ

मुहम्मद माकियेन चीनी मुसलमान नेता हुइ-हुइ जाति के हैं। उन्होंने मिस्र के कैरो के अजहर विश्वविद्यालय और कुल्लियात दारुल-उलूम में वर्षों तक अरबी भाषा, साहित्य और दर्शन का अध्ययन किया। वह आजकल पेकिंग विश्वविद्यालय में प्रोफेसर हैं और राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन की जातीय कमेटी के एक सदस्य हैं।

उन्होंने कुरान और कितने ही दूसरे ग्रंथों का चीनी भाषा में अनुवाद किया है और अध्यक्ष माओ की पुस्तक 'जनता की जनतान्त्रिक अधिनायकता' का अरबी में अनुवाद किया है, अरबी भाषा में, 'चीन में इस्लाम' पर पुस्तक लिखी है। हरेक चीनी मुसलमान के नाम की तरह चीनी भाषा में उन्हें मा चियेन् के नाम से पुकारा जाता है। चीनी लिखावट में वर्ण अर्थात् उच्चारण के अनुसार अक्षर नहीं हैं, बल्कि हमारी गिनती के अंकों की तरह सिर्फ भावों के परिचायक संकेत हैं, इसीलिए उसमें उतने ही अक्षर हैं, जितने कि चीनी भाषा में शब्द। यही कारण है, जो नाम को भी लिखने के समय उच्चारण नहीं बल्कि उसके अर्थ को संकेत में प्रकट किया जाता है। इधर पूँजीवादी दुनिया और उनके पिट्ठू भारत तथा पाकिस्तान में गला फाड़-फाड़कर कह रहे हैं कि चीन से इस्लाम को खतम किया जा रहा है। मुस्लिम जनता के खून चूसनेवाले धनी मुल्ले, जागीरदार और सौदागर चीनी तुर्किस्तान से भगाकर भारत और दूसरी जगहों में उसी तरह झूठी-झूठी बातें फैला रहे हैं, जैसाकि सोवियत रूस के विरुद्ध अक्तूबर-क्रान्ति के बाद से ही सारी दुनिया से किया जाता रहा। मुहम्मद माकियेन ने अपने धर्मभाइयों की स्थिति के बारे में अपने एक लेख 'चीन में मुसलमान कैसे रहते हैं ?'* लिखा है :

" चीनी मुसलमानों की संख्या एक करोड़ है। उनके साथ कोई भी भेदभाव नहीं बरता जाता। चीन के जन-गणराज्य के 'सामान्य प्रोग्राम' (संविधान) ने उन्हें पूर्ण समानता और स्वतंत्रता दे रक्खी है। चूँकि अधिकांश चीनी मुसलमान अल्पमत जातियों से सम्बन्ध रखते हैं, इसलिए उनके लिए यह खास तौर से आवश्यक है, कि सामान्य प्रोग्राम सभी धर्मों के लिए स्वतन्त्रता की गारंटी देने तक ही अपने को सीमित न रक्खे, बल्कि हरेक जाति को अपनी भाषा या बोली को विकसित करने तथा अपनी परम्पराओं, रीति-रिवाजों और धार्मिक विश्वासों को अपने लोगों की इच्छा के अनुसार रक्षा करने या सुधारने का अधिकार दे। इस नीति को केन्द्रीय और स्थानीय दोनों सरकारों ने कार्यरूप में परिणत किया है। जहाँ तक धर्म का सम्बन्ध है, सभी मस्जिदें तथा दूसरे धर्मों के पूजा-स्थान वास्तविक मिल्कियत के कर से मुक्त हैं, और उनमें जो ऐतिहासिक महत्त्व रखते हैं, उनकी मरम्मत सरकार के खर्च से होती है। 6 दिसम्बर, 1950 को केन्द्रीय जन-सरकार ने एक विशेष फरमान निकालकर पैगम्बर के जन्मदिन और ईद तथा बकरीद के त्यौहारों के समय कुर्बानी किये जानेवाले गायों और भेड़ों के ऊपर से वध-कर उठा दिया है। त्योहार के समय सरकारी तथा सहयोगी व्यापारिक संस्थाएँ गो-मांस, चावल, आटा, चाय, चीनी और कपड़े जैसी चीजों के दाम में खास रियायत देती हैं। इसके साथ ही सरकार ने आज्ञा निकाली है कि कोई भी मुसलमान विद्यार्थी कमकर या सरकारी कर्मचारी से मुस्लिम त्योहार के दिनों में काम नहीं लिया जायगा। विशेष धार्मिक अवसरों पर पेकिंग तथा दूसरे स्थानों में मुसलमानों के भारी समागम के लिए सभास्थान प्रदान किये गये हैं। सभी राजकीय भोजों तथा प्रतिनिधि-सभाओं में मुसलमानों के लिए हलाल भोजन तथा उपहारवाले खास मेज रक्खे जाते हैं। इस तरह के भोजन का कितने हो रेलवे-स्टेशनों में भी नियमित प्रबन्ध है।

" 1952 में चीनी मुसलमानों की एक जमात हज के लिए मक्का रवाना हुई। यद्यपि उन्हें पाकिस्तान से जाने की इजाजत नहीं मिली··· लेकिन वह सिंगापुर और पाकिस्तान में कुछ समय तक रहकर अपने धर्मभाइयों से मिले। उनकी यात्रा ने मुस्लिम दुनिया को बतला दिया कि चीनी मुसलमान केवल अपने विश्वासों के लिए स्वतन्त्रता नहीं रखते, बल्कि दुनिया के दूसरे भागों में वह अपने भाइयों से सम्बन्ध स्थापित करने की भी स्वतन्त्रता रखते हैं। हाल के एशिया और प्रशान्त सागर भूक्षेत्र के शान्ति-सम्मेलन में भिन्न-भिन्न मुस्लिम देशों के प्रतिनिधि आये थे। वह स्वयं पेकिंग, तियान्-चिन्, शांघाइ, हांग चाउ, वूशिह, कान्तन् की मस्जिदों में गये और नमाज में भाग लिया। वह अपने अनुभव से इस बात की पुष्टि करेंगे कि उनके चीनी धर्मभाई अपने विश्वास के लिए पूरा अधिकार रखते हैं। मुहम्मद माकियेन ने कम्युनिस्ट चीन के मुकाबले में च्यांग के चीन का हवाला देकर बतलाया कि उस समय मुसलमानों पर कितना अत्याचार होता था। अक्सर मस्जिदों को भाड़े की सेनाएँ दखल कर लेतीं, जिनको इस्लाम के धार्मिक भावों के लिए जरा भी सम्मान नहीं था। वह वहाँ शराब पीते,

* China Reconstructs 1953, pp. 13-91

जुआ खेलते, गन्दे गीत गाते और सूअर का मांस खाते–बल्कि आखुनों (मौलवियों) को भी इस्लाम द्वारा निषिद्ध भोजन चखने के लिए मजबूर करते। कुओनितांगियों ने पेकिंग में चाउ-यांग-मेन् के बाहर की मस्जिदों को गिरा दिया, तियान्-चिन् में मूचियांचुंग-चे की मस्जिद को भी नष्ट कर दिया–ये दोनों घटनाएँ 1948 में हुईं।

" कुओमिन्तांगियों ने मुसलमानों के खून की नदी बहाई। 1941-43 में सिंग क्यांग (चीनी तुर्किस्तान) के गवर्नर शेंगे शी-चे ने उस प्रदेश के एक लाख से अधिक क्रान्तिकारी तरुणों का वध करवाया, जिनमें से अधिकांश मुस्लिम जातियों के पुत्र-पुत्रियाँ थीं। 1928 ई. में होचाउ (वर्तमान लिनूशिया जिला) के हुइ-हुइ लोगों ने कान्सू प्रदेश में च्यांग काइ-शेक के डाकुओं के दुःशासन के विरुद्ध हथियारबन्द विद्रोह किया, जिसको दबाने के लिए दस हज़ार से अधिक हुइ-हुइ (चीनी मुसलमान) लोगों को मार डाला गया, अनगिनत मकानों को जला दिया गया, सारे नग को लूट लिया गया। कान्सू में ही हाइ युआन् और कूयुआन् जिलों में अपने अधिकारों की माँग करने के लिए 1939 से 1941 के बीच हजारों मुसलमानों को मार डाला गया। यह लिखते वक्त दिल बहुत दुखी होता है कि स्वयं हुइ-हुइ जाति के होने पर भी माँ परिवार के युद्धपतियों ने हुइ-हुइ और पश्चिमोत्तर की दूसरी मुस्लिम जाति तुंग शियान् (तुंगान्) के वध में भाग लिया। "

च्याँग काइ-शेक के दुःशासन की तुलना कम्युनिस्ट चीन से करते हुए प्रोफेसर मुहम्मद ने बतलाया है, कि किस तरह अब मुसलमानों को राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विकास के क्षेत्र में समानता ही नहीं, बल्कि कितनी ही बातों में विशेष सुविधा प्राप्त है :

"मुसलमान धार्मिक नेताओं और गृहस्थों ने चीनी जनता के राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन के प्रथम अधिवेशन में भाग लिया, जिसने कि चीन की जनता के गणराज्य की स्थापना की और सामान्य प्रोग्राम को स्वीकार किया।··· उनमें से बहुत-से स्थानीय जन-प्रतिनिधिसभाओं, केन्द्रीय जन-सरकार, प्रादेशिक सरकार, नगरपालिका, जिला और तहसील की सभाओं के सदस्य तथा सभी प्रकार की सरकारी नौकरियों में हैं। सैफुद्दीन और ल्यु के-पिंग दो मुसलमान केन्द्रीय जन-सरकार परिषद् के मेम्बर हैं। 13 जनवरी, 1953 की घोषणा से मालूम है कि सैफुद्दीन चीन जन-गणराज्य की संविधान बनानेवाली कमेटी के मेम्बर हैं। बुरखान सिंग-क्यांग प्रादेशिक सरकार के अध्यक्ष हैं। सेना में सभी तरह के दर्जे मुसलमानों के लिए खुले हुए हैं और उनकी धार्मिक उपासनाओं और भोजन के लिए विशेष प्रबन्ध किया गया है।"

प्रोफेसर मुहम्मद ने बतलाया है कि भिन्न-भिन्न मुसलमान जातियों के अनेक स्थानों पर जातीय स्वायत्त सरकारें स्थापित की गई हैं, कान्सू प्रदेश की तुंग-शियांग जाति, सुइयूआन् प्रदेश की हुइ-हुइ जाति की अपनी स्वायत्त सरकारें हैं। "जहाँ भी मुस्लिम जातियों की अपनी कोई विशेष भाषा है, उसे कचहरी की कार्रवाइयों और दूसरे प्रकार के सरकारी कामों में चीनी भाषा के समान इस्तेमाल किया जाता है।" सिंग क्यांग में–जो कि सारा मुस्लिम उइगुर जाति का घर है, और जहाँ के लोगों में उनका बहुमत है–जनबक द्वारा निकाले हुए नोटों पर उइगुर अक्षर छपे रहते हैं। इन नोटों का चलन केवल स्थानीय नहीं, बल्कि सारे देश में वह कानूनी मुद्रा है। चीनी मुसलमान भी औरों की तरह अधिकतर किसान हैं, और भूमि-सुधारों द्वारा नये चीन में उनके लिए बहुत सुविधाएँ मिली हैं। प्रोफेसर मुहम्मद के अनुसार : "कान्सू के तुंग-शियान् लोगों ने एक छोटे-से स्वायत्त इलाके में 53000 गरीब किसानों, खेत-मजूरों तथा कितने ही मझोले किसानों को भूमि, घर, किसानी के ढोर, हथियार और खाद्य-सामग्री दी गई। उदाहरणार्थ, 62 साल के बूढ़े गरीब किसान मा यिको के पास अपने जीवनभर एक फुट भी ज़मीन नहीं थी, जबकि भूमि-सुधार द्वारा उसे तीन कोठरियों का एक घर और एक पूरा खेत मिला। शातुंग प्रदेश के चांग-कुआन् चेन् गाँव में भूमि-सुधार द्वारा हुइ-हुइ लोगों के खेत प्रति व्यक्ति तिगुने हो गये। इस समय सिंग-क्यांग प्रदेश में भूमि-सुधार का काम हो रहा है, जहाँ के निवासियों में बहुत भारी संख्या मुसलमानों की है। तिहुआ (सिंग-क्यांग की राजधानी उरुमची) का एक भेड़िहर देशमुक्ति के पहले 221 सेर ऊन बेचकर एक थान कपास का कपड़ा पाता था। अब वह उतना 23 सेर ऊन में पाता है।"··· 1952 में 1949 की अपेक्षा 24 सैकड़ा अधिक खेत सिंग-क्यांग में था। उस प्रदेश में कपास की फसल 26 सैकड़ा अधिक और दूसरी फसलें 34 सैकड़ा अधिक हुईं। सिंग-क्यांग में अवस्थित जन-मुक्ति-सेना ने 15 बड़ी-बड़ी

नहरों को पुनःस्थापित करने तथा 8 मई को बनाने में स्थानीय जनता को सहायता दी। इसके साथ ही किसानों ने स्वयं छोटी-छोटी नहरों के जाल को फैलाया, जिसके परिणामस्वरूप 110 हजार एकड़ सीधी भूमि बढ़ गई।

" शिक्षा के क्षेत्र में भी जनता की सरकार ने भिन्न-भिन्न प्रदेशों के मुसलमानों के लिए बहुत भारी संख्या में स्कूल स्थापित किये। शान्तुंग प्रदेश में कितने ही हुइ-हुइ लोगों की बस्तियों के इलाके थे, जहाँ एक भी आदमी लिखना-पढ़ना नहीं जानता था, अब वहीं प्रत्येक गाँव में कम-से-कम एक प्रारम्भिक स्कूल है, आधे लड़के स्कूल में जाते हैं। हुइ-हुइ विद्यार्थियों के लिए पेकिंग में एक खास कालेज स्थापित किया गया है, जिसमें एक हजार से अधिक विद्यार्थी हैं। निंगस्या प्रदेश में हुइ-हुइ प्राइमरी स्कूलों की संख्या 14 से 22 और विद्यार्थियों की 1,288 से 8,863 हो गई है। सिंग-क्यांग में उच्च शिक्षा के लिए अपनी जातीय अकादमी कायम की गई है। वहाँ के तीस हाई स्कूलों में 5,500 और 1950 में प्रारम्भिक स्कूलों में 2,59,500 विद्यार्थी पढ़ते थे। वहाँ शिक्षा का माध्यम विद्यार्थियों की अपनी मातृभाषा है, उदाहरणर्थ आनृशान् तहसील में 17 प्रारम्भिक और 1 हाई स्कूल की पढ़ाई कजाक भाषा में होती है।

" कुओ-मिन्तांगी शासक सभी जातियों की संस्कृति को पैरों तले रौंदते थे। यदि वह अध्ययन करना चाहें, तो उन्हें हान् (चीनी) भाषा सीखने के लिए मजबूर करते थे। इसके विरुद्ध जन-सरकार केवल उनकी संस्कृतियों के प्रति सम्मान ही नहीं प्रदर्शित करती, बल्कि उसे विकसित करने में सहायता देती है। उइगुर भाषा में तीन और कजाक भाषा में पाँच अखबार निकलते हैं। "

प्रोफेसर मुहम्मद माकिन् की इन पंक्तियों से मालूम होगा कि नवीन चीन में मुस्लिम जातियों को किस तरह आगे बढ़ने के रास्ते खुले हुए हैं। चीन तुर्किस्तान (सिंग क्यांग) प्रदेश के निवासी प्रायः सारे मुसलमान हैं। 1953 में वहाँ की शिक्षा की अवस्था का पता इसी से लगेगा कि वहाँ के प्रारम्भिक स्कूलों में 330 हजार विद्यार्थी पढ़ते हैं, जो देश-मुक्ति की पहले की संख्या से 70 सैकड़ा अधिक है। हाई स्कूलों और शिक्षक विद्यालयों में तो छात्रों की वृद्धि 221 सैकड़ा हुई है। 1953 की गर्मियों में सिंग-क्यांग के अल्पमत-जातीय-प्रतिष्ठान और शिक्षकों तथा दूसरे कर्मियों के विद्यालयों से शिक्षा समाप्त करके 1,700 तरुण निकले। सिंग-क्यांग के बहुत से विद्यार्थी चीन की दूसरी जगहों के विद्यालयों और कालेजों में पढ़ रहे हैं। पिछले तीन वर्षों में उइगुर, कजाक, औरहान् जैसी सिंग-क्यांग की जातियों के लिए उनकी अपनी भाषाओं में हाई स्कूल और प्राइमरी पाठशालाओं के लिए 30 लाख पाठ्य-पुस्तकें छापी गईं।

3. नवीन तिब्बत

तिब्बत हमारा पड़ोसी है। तिब्बत के लोग हमारे यहाँ अक्सर तीर्थयात्रा या व्यापार के लिए आते-जाते रहते हैं, और तिब्बती भाषा-भाषी एवरेस्ट-विजेता शर्बा तेनजिन नोर्ग्ये की तरह के कई हजार तिब्बत-भाषाभाषी भारतीय नागरिक हैं। अल्पमत जातियों के प्रति जिस विशालहृदयता का परिचय साथी माओ चे-तुंग ने दिया है, वह वहाँ के सब वर्गों को अपनी तरफ खींचने में सफल हुई है। तिब्बत को चीन से अलग करने के लिए इंग्लैंड और अमेरिका के साम्राज्यवादियों ने क्या-क्या नहीं किया ? भारी प्रलोभन देकर उन्होंने अपनी सुलगाई आग में भारत को झोंकने की भी कोशिश की। लेकिन, अन्त में एक भी नहीं चली। 23 मई, 1951 को केन्द्रीय जन-सरकार और तिब्बत की स्थानीय सरकार के बीच में शान्तिपूर्ण तरीके से तिब्बत के मुक्त करने के सम्बन्ध में पेकिंग में समझौता हो गया। तिब्बत दुनिया की सबसे ऊँची भूमि है, जहाँ पर नदियाँ अक्सर 12,000 फीट से ऊपर बहती हैं। यद्यपि इसका क्षेत्रफल उतना है, जितना जर्मनी और फ्रांस दोनों का मिलाकर, लेकिन आबादी बहुत कम है। पश्चिम से पूर्व एक हजार किलोमीटर बहती ब्रह्मपुत्र (यालू चांग पो) तिब्बत को उत्तर और दक्षिण–दो भागों में विभक्त करती है, जिसमें उत्तरी भाग दक्षिणी से बहुत अधिक बड़ा तथा एक तरह से निर्जन है। वहाँ कहीं-कहीं घुमक्कड़ पशुपाल अपने तम्बुओं को लगाये चराई करते रहते हैं। तिब्बत का सम्बन्ध उसी समय से चीन के साथ है, जबसे कि उसका सम्बन्ध भारत के साथ हुआ। नेपाल की राजकन्या के ब्याहने के एकाध साल ही बाद 641 ई. में थांग-वंश (618-907 ई.) के सम्राट् ताइ चुंग, 627-650 ई. की कन्या वेंग-चेंग

का ब्याह तिब्बती सम्राट् स्रोङ्-चेन् गम्-पो से हुआ। तब से बराबर चीन और तिब्बत का घनिष्ट सम्बन्ध रहा, और अधिकांश समय तिब्बत चीन का एक भाग बनकर रहा। तिब्बती लोगों के हृदय में हमेशा चीन के प्रति मधुर भाव रहा। वर्तमान शताब्दी में चीन की कमज़ोरियों से फायदा उठाकर अंग्रेजों ने तिब्बत में टाँग फैलानी चाही। माओ के नेतृत्व में नये चीन को उठते हुए देखकर कोशिश की कि तिब्बत चीनी गणराज्य में सम्मिलित न हो। लेकिन, माओ ने बड़ी शान्ति से काम लिया। दूसरा कोई राष्ट्रनेता होता, तो तिब्बत के प्रतिक्रियावादी सामन्तों के रवैये को देख झुँझलाकर जल्दी कर बैठता और उसका फल भोलेभाले हजारों तिब्बतियों को प्राणों से हाथ धोना होता। माओ चे-तुंग ने बड़ी सावधानी और ठंडे दिल से काम लिया। अन्त में षड्यंत्रियों को मुँह की खानी पड़ी और समझौता हो गया। जन-मुक्ति-सेना का ल्हासा में बड़ा स्वागत हुआ, यह हम कह चुके हैं। तिब्बत के शासक दलाई लामा एक बड़े धार्मिक नेता हैं, और धार्मिक नेता के तौर पर पण्-छेन लामा का भी वहाँ बहुत प्रभाव और सम्मान है। पिछले पण्-छेन् और दलाई लामा के बीच भयंकर झगड़ा खड़ा हो गया, जिसमें अंग्रेजों का कम हाथ नहीं था, और जिसके कारण पण्-छेन् लामा को तिब्बत से भागकर चीन चला जाना पड़ा। दोनों लामाओं की जगह पर उनके नये उत्तराधिकारी बैठे, तो भी वह झगड़ा खतम होने का नाम नहीं लेता था। लेकिन, वह असम्भव काम नये चीन ने करके दिखाया। अप्रैल 1952 में चौदहवें दलाई लामा ने ल्हासा के अपने पोतला प्रासाद में दसवें पण् छेन् लामा का स्वागत किया। 28 वर्ष का वैमनस्य समाप्त हो गया। 28 वर्ष तक अपने लामा से सूना टशी-ल्हुन्पो का मठ अब फिर अपने लामा को पाकर फूला नहीं समाता।

तिब्बत में भी उसी तरह हर क्षेत्र में काम हो रहा है, जिस तरह सिंग-क्यांग में। तिब्बत में अनाज की बहुत कमी है, और वहाँ बहुत-सा अनाज अपने दक्षिणी पड़ोसी भारत और नेपाल से जाता था। जन-मुक्ति-सेना ने वहाँ आते ही जहाँ अपने मेल और भाईचारे से दिखलाया कि वह तिब्बत जनता के साथ कितना सद्भाव रखती है, वहाँ साथ ही उसने इस बात की सफल कोशिश की है कि स्वयं अधिक अन्न उपजाकर अपना ही खर्च पूरा न करें, बल्कि लोगों को भी दें। खास करके नहरों और बाँधों के बनाने में वह बहुत भाग ले रही हैं। स्वीकृत नीति के अनुसार चीन किसी प्रकार के सुधार को लादने की कोशिश नहीं कर रहा है, बल्कि वहाँ के लोगों में शिक्षा और दूसरे तरीकों से वैसे भाव भर रहा है। यद्यपि चीन के दूसरे भागों में भूमि-सुधार का काम पूरा हो गया है—हान् जाति के भूभाग में तो वह कब का पूरा हो गया—लेकिन, अभी तिब्बत में उसे लागू नहीं किया गया, उसके बारे में निर्णय करना तिब्बती लोगों के हाथ में छोड़ दिया गया है। भूमि-सुधार हो करके रहेगा, इसमें शक नहीं, लेकिन उसके बारे में चीन जल्दी नहीं करना चाहता। तिब्बती लोगों की शासन-व्यवस्था में भी लोगों के भावों का ध्यान रक्खा गया है, यद्यपि उसमें भ्रष्टाचार और रिश्वत को खतम कर दिया गया है। तिब्बती लोग अपने (बौद्ध) धर्म को पालन करने के लिए स्वतंत्र हैं। अध्यक्ष माओ चे-तुंग ने उस दिन 1400 वर्ष पुराने ल्हासा के प्रधान मन्दिर के लिए दो सोने के दीपक भेजे, जिसके लिए तिब्बती भिक्षु और लामा उनकी जय-जयकार करते नहीं थकते। वहाँ के मठों और मन्दिरों को संरक्षण दिया गया है, और वह अपने क्रियाकलाप को यथाविधि चला रहे हैं। जन-मुक्ति-सेना तिब्बत में आकर अपने नियम को पूरी तौर से पालन करती हुई एक सूई या धागा भी बिना दाम के लोगों से नहीं लेती। फसल के समय सैनिक किसानों के काम में मदद देते हैं और उनके बदले में कुछ नहीं लेते। बार-बरदारी या दूसरे काम के लिए बेकार उठा दी गई और हरेक काम के लिए पूरी मंजूरी दी जाती है।

तिब्बत की आमदनी का एक सबसे बड़ा जरिया ऊन है, जिसे चीन के साथ समझौता हो जाने के बाद जिसे पुराने खरीदार—अमेरिकन और अंग्रेज—खरीदने से इन्कार करते लोगों को आफत में डालना चाहते थे, लेकिन केन्द्रीय जन-सरकार ने 1951 से सरकारी व्यापार कम्पनी द्वारा ऊन की खरीद का काम शुरू कर दिया। सरकारी कम्पनी ने विदेशियों की अपेक्षा दूना दाम दिया। इसके अतिरिक्त किसानों और ल्हासा के आसपास के 21 युंग-चुंग (जिलों) और शीये (इलाकों) को बिना सूद का कर्ज दिया गया है। पिछले दो सालों में ल्हासा, शिगर्चे और ग्यांची के आसपास के इलाकों में 50 करोड़ युआन् कर्ज दिया गया है। 1953 में यह रकम 390

करोड़ युआन् हो जायगी। चीन जन-बैंक की शाखाएँ ल्हासा, शिगर्चे और ग्यांची में खुल गई हैं। पहले तिब्बती व्यापार के लिए विदेशी, विशेषकर भारतीय सिक्के प्राप्त करना कड़ी समस्या थी, लेकिन अब बैंक से सिक्के बहुत आसानी से मिल जाते हैं, जिसके कारण व्यापार में बहुत वृद्धि हुई है। चीन की चाय को तिब्बती लोग बहुत पसन्द करते थे और उसके न मिलने पर ही वह भारत की ओर हाथ फैलाते थे। तिब्बती व्यापारियों को चीन से चाय मँगाने का इतना सुभीता हो गया है, कि अभी ल्हासा तक ठेठ मोटर की सड़क न बन जाने पर भी चाय का मूल्य एक-तिहाई हो गया है। व्यापार के सौदे की मात्रा का परिमाण पहले से डेढ़ गुना है और व्यापारी 15 से 30 सैकड़ा तक लाभ उठाते हैं। नेपाली व्यापारियों का तो कहना है कि इतना लाभ का और सुरक्षित व्यापार बहुत वर्षों के बाद होने लगा है।

तिब्बत में स्वास्थ्य की ओर खास तौर से ध्यान दिया गया है। केवल ल्हासा शहर में अगस्त 1952 से मार्च, 1953 तक वहाँ के नवस्थापित अस्पताल में 27 हजार रोगी गये और सलाह लेनेवाले 70 हजार से ऊपर थे। केन्द्रीय सरकार ने पिछले दो वर्षों में तिब्बत में 13 करोड़ युआन् स्वास्थ्य पर खर्च किया। ल्हासा में टीका देने के लिए सेरम् बनाने की फैक्टरी खुल गई है। ल्हासा, शिगचे और ग्यांची में ही नहीं, बल्कि बहुत दूर-दूर के स्थानों में स्वास्थ्य-रक्षा का प्रबन्ध करते हुए वहाँ औषधालय या अस्पताल खोले गये हैं। जहाँ जन-मुक्ति-सेना की छावनियाँ हैं, वहाँ जन-चिकित्सा का भी प्रबन्ध किया गया है।

तिब्बत शिक्षा में बहुत पिछड़ा हुआ देश है। एक तरह से शिक्षा मठों में लामाओं और सामन्त की ही इजारादारी थी। सामन्तों के घरों में प्राइवेट अध्यापक पढ़ाया करते थे। मठों में पुराने ढंग की पढ़ाई का इन्तजाम था। लेकिन अब शिक्षा-प्रचार के लिए काफी ध्यान दिया जाने लगा है। अगस्त 1952 में ल्हासा में एक स्कूल खोला गया, जिसमें आठ महीनों के भीतर ही 619 लड़के-लड़कियाँ दाखिल हो गये। शिक्षा का माध्यम अध्यक्ष माओ की नीति के अनुसार विद्यार्थियों की मातृभाषा अर्थात् तिब्बती है। चाहें तो हान् (चीनी) भाषा भी पढ़ सकते हैं। नये ढंग की पाठ्य-पुस्तकों का तिब्बत में पहले अभाव था। अब पुस्तकें भी तैयार हो गई हैं। स्कूलों में तिब्बत के बुद्धिजीवी और शिक्षित लामा (भिक्षु) शिक्षक का काम कर रहे हैं। स्कूल की तरफ दलाई लामा का भी विशेष ध्यान है। अक्तूबर, 1952 में उन्होंने उसके लिए अपना एक निजी बगीचा तथा 20 करोड़ युआन् नगद दान दिया और स्कूलों के अध्यापकों के सम्मान में एक भोज दिया। जन-मुक्ति-सेना के क्षेत्रीय हेडक्वार्टर ने तिब्बती भाषा के पढ़ाने तथा हान् कमिंतीकी शिक्षा के लिए एक स्कूल खोला है, जिसमें अच्छे-अच्छे योग्य गेशे (आचार्य), छोय डग् (धर्मकीर्ति) जैसे अच्छे-अच्छे तिब्बती विद्वान् शिक्षक हैं। तिब्बती भाषा में सचित्र मासिक पत्रिका भी निकलने लगी। मोटर की सड़कें पूर्वी और उत्तरी सीमान्त से मानसरोवर तक बड़ी तेजी से बन रही हैं, जिनके तैयार होते ही समाचार-पत्रों का प्रचार और भी बढ़ जायगा और डाक बड़ी तेजी से एक जगह से दूसरी जगह जाने लगेगी।

सभी जातियों की समानता की ओर अध्यक्ष माओ का उसी तरह ध्यान है, जिस तरह सोवियत रूस में साथी स्तालिन ध्यान रखते थे। जन-मुक्ति-सेना में अफसर और सैनिक सभी जातियों के एकसाथ रहते हैं, जिनमें कितने ही तिब्बती भाषा-भाषी भी हैं। उनका भाईचारे और समानता का भाव केवल सैनिकों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि वह तिब्बती जन-साधारण के साथ बहुत घुले-मिले हैं। जाकर उनके साथ खेतों में काम करते हैं, साथ फावड़ा चलाते, नहरें और बाँध बनाते हैं, उनके नाचों और उत्सवों में भाई-भाई की तरह शामिल होते हैं और अपने आचरण से बतलाते हैं कि चीन गणराज्य की सभी जातियाँ एक समान हैं। जन-मुक्ति-सेना में दूसरे अफसरों के समान दो तिब्बती उपकमाण्डर बनाये गये हैं, और अफसरों की शिक्षा के लिए विशेष प्रबन्ध किया गया है।

जन-मुक्ति-सेना यही नहीं करती कि वह कोई चीज भी लोगों से बिना दाम के नहीं लेती, बल्कि अपने खाने के लिए अनाज स्वयं पैदा करना उसका ध्येय है। 1953 के आरम्भ तक उसने 30 हजार माउ (5 हजार एकड़) जमीन अपने लिए नई आबाद की, और 120 ली (40 मील) लम्बी नहरें खोदीं। उन्होंने ऐसी जगह अनाज और साग-सब्जी की बहुत भारी फसल पैदा की, जहाँ पहले कुछ नहीं होता या हो सकता था। तिब्बती

किसानों को वह खेती के नये-नये ढंग को सिखा रही है। जन-मुक्ति-नेता ने कितनी ही नई तरह की सब्जियाँ और फल लाकर तिब्बत में लगाई हैं। उनका अनुकरण करते तिब्बती किसान भी परती जमीन को आबाद करके फसल बढ़ाने लगे हैं। एक जगह उन्होंने 1 हजार माउ (167 एकड़) नये खेत आबाद किये।

चीन के भिन्न-भिन्न स्थानों में किस तरह जनता नव-निर्माण के विशाल काम में लगी हुई है, इसे देखने के लिए तिब्बती प्रतिनिधिमण्डल वहाँ आ-जा रहे हैं, उनमें से कितने ही पेकिंग जा चुके हैं। कुछ ने जाकर भीतरी मंगोलीय स्वायत्त भूक्षेत्र के बड़े-बड़े निर्माणों को अपनी आँखों देखा—मंगोल लोगों के लिए ल्हासा काबा है, जहाँ सैकड़ों वर्षों से वहाँ के विद्यार्थी उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए जाया करते थे, और तिब्बती भाषा जहाँ एक तरह से धर्मभाषा है, जिसके जाननेवाले हर जगह कुछ-न-कुछ मिल जाते हैं। तिब्बती लोग अब चीन गणराज्य के स्वतन्त्र नागरिक के तौर पर दुनिया के साथ अपना सम्बन्ध जोड़ रहे हैं। दलाई लामा की बहन जेचुनमा वीना के विश्वशान्ति-सम्मेलन में शामिल हुई थी और लौटकर उसने कहा : "बीना से लौटने के बाद मुझे शान्ति और जनतन्त्रता के विश्व कैम्प की महान् शक्ति का पता लगा। मैं अपनी मातृभूमि को और भी अधिक प्यार करती हूँ। मुझे पूरी तौर से विश्वास है कि विश्वशान्ति की रक्षा के लिए मेरा देश निर्णायक पार्ट अदा करेगा।" स्तालिन के निधन के उपलक्ष्य में 1953 के मार्च में एक बड़ी प्रार्थना-सभा हुई थी, जिसमें दलाई लामा स्वयं शामिल हुए, उसमें 20 हजार लामाओं ने भाग लिया था।

इस प्रकार मालूम होगा कि नवीन चीन केवल महान् हान् (चीनी) जाति को ही आगे बढ़ाकर दुनिया के शक्तिशाली, समृद्ध और सुसंस्कृत जातियों की पहली पंक्ति में लाने की कोशिश नहीं कर रहा है, बल्कि वह तिब्बत जैसे पिछड़ी जातियों को आगे बढ़ा रहा है। इसमें शक नहीं, अगले दस वर्षों में तिब्बत भारत को बहुत-सी बातों में पीछे छोड़ जायगा। हमेशा से कैलास-मानसरोवर जाने के मुक्त रास्ते पर भारत सरकार अब निर्बन्ध लगा रही है, और तीर्थ-यात्रियों के जाने में हर तरह की अड़चन पैदा कर रही है; लेकिन जो लोग जाते हैं, वहाँ से दूसरा ही भाव लेकर आते हैं। 1952 की वर्षा में गये हुए कैलास-मानसरोवर के यात्रियों ने बतलाया कि वहाँ सैकड़ों एकड़ नंगी धरती में फसल की हरियाली लहरा रही है, जगह-जगह सड़कें और वैमानिक अड्डे बनाये जा रहे हैं, नये गाँव आबाद हो रहे हैं। मानसरोवर के एक विहार की सैकड़ों फीट ऊँची एक लाट गिर गई। उसके लिए पेड़ लाने के वास्ते मुक्ति-सेना के सैनिकों ने स्वयं काम किया। अब बैटरीवाले रेडियो इस दुनिया में 15,000 फीट ऊँची बस्तियों में दिखाई पड़ रहे हैं।

20

कोरिया-युद्ध, निर्वाचन और सरकार

1. कोरिया युद्ध में चीन क्यों ?

अमेरिकन साम्राज्यवाद सारी दुनिया में अपना पंजा फैलाये सारी दुनिया की जातियों को ग्रसने के लिए राहू बना हुआ है। चीन में उसने इसी के लिए च्यांग काइ-शेक की पीठ ठोकी, लेकिन उसे मुँह की खानी पड़ी। परन्तु, वह इससे हार माननेवाला नहीं है। जून, 1950 में चीन के ताइवान (फारमूसा) द्वीप पर उसने अपनी नौसेना के बल पर कब्जा कर लिया, और च्यांग काइ-शेक और उसके साथी भगोड़ों को वहाँ ले जाकर रक्खा है। कोरिया लड़ाई के समय से उत्तरी और दक्षिणी दो हिस्सों में बँटा है, जिसमें उत्तरी हिस्से में जहाँ बहुजनहिताय शासन हो रहा है, वहाँ दक्षिणी कोरिया में नाक तक भ्रष्टाचार में डूबे सिंगमन री और उसके गुर्गों का खूनी शासन चल रहा है। सिंगमन री ने अपने को च्यांग का छोटा भाई साबित किया। उसकी सेना ने कम्युनिस्ट युद्ध-बन्दियों के साथ इस तरह के बर्बरतापूर्ण खूनी काण्ड किये, जिसके कारण अनेक बार अंग्रेज पत्रों और

कितने ही वहाँ के राजनीति में नरम विचार रखनेवाले नेताओं को भी खुलेआम विरोध करने के लिए मजबूर होना पड़ा। जब तक ताइवान अमेरिका का सैनिक अड्डा बना हुआ है, तब तक चीन कैसे अपने को सुरक्षित समझ सकता है ? लेकिन इधर जब अमेरिका ने हथियार के बल पर उत्तर कोरिया के जनतान्त्रिक शासन को मिटाकर उसे भी सिंगमन री के खूनी हाथों में देने के लिए चीन की सीमान्त पर अवस्थित यालू नदी तक अपनी सेनाएँ भेज दीं, और अमेरिकन सैनिक विभागों ने चीनी सीमा के भीतर बसे शान्त गाँवों और नगरों पर बम गिराये, तो चीन का धैर्य टूट गया। अक्तूबर, 1950 में अमेरिकनों ने उत्तरी चीन की राजधानी प्योंग-यांग पर अधिकार कर लिया, और यालू तथा तूमेन की सीमान्त नदियों पर अपने सैनिक भारी संख्या में पहुँचाए। खतरे को सामने देखकर जब चीन के नेताओं ने पुकार की तो जनता में देशरक्षा के लिए अद्भुत जोश उमड़ पड़ा और धड़ाधड़ लोग कोरियन जन-सेना के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर अमेरिकन जंगबाजों और उसके पिट्ठू री के साथ लड़ने के लिए स्वयंसेवक सेना में भरती होने लगे। उन्होंने अमेरिकनों की खूब खबर ली और वह भागकर दक्षिणी कोरिया के भीतर घूसने के लिए मजबूर हुए।

कोरिया युद्ध के बारे में चीन के जननायकों के भाषणों से हम अच्छी तरह जान सकते हैं

(1) माओ चे-तुंग का भाषण (1951)–23 अक्तूबर, 1951 को राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन की प्रथम जातीय कमेटी के तीसरे अधिवेशन में भाषण देते हुए अध्यक्ष माओ ने कहा था* :

" ··· इस बैठक में जातीय कमेटी के सदस्यों के अतिरिक्त चीनी जनता स्वयंसवेक और जन-मुक्ति-सेना के प्रतिनिधि, उद्योग और कृषि के आदर्श कमकर, पुराने क्रान्तिकारी, आधार-स्थानों के प्रतिनिधि, शिक्षा, साहित्य और कला के कर्मी, उद्योगपति और व्यापारी, भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञ, भिन्न-भिन्न धर्मों और अल्पमत जातियों के प्रतिनिधि, समुद्रपार के चीनियों, महिलाओं और तरुणों के प्रतिनिधि, प्रादेशिक और नगर-पालिकीय सलाहकार कमेटियों तथा दूसरे गिरोहों के प्रतिनिधि एवं बहुत-से सरकारी कर्मचारी उपस्थित हैं।···

" अमेरिकन आक्रमण-विरोध-कोरिया-सहायता-आन्दोलन, भूमि-सुधार-आन्दोलन और क्रान्ति-विरोधी-शमन-आन्दोलन–इन तीनों आन्दोलनों ने बड़ी सफलता प्राप्त की है। चीन के मुख्य भूभाग में क्रान्ति-विरोधियों के अवशेषों की समाप्ति पूरी तौर से बहुत जल्दी होनेवाली है। कुछ अल्पमत जातियों को छोड़कर बाकी सारे देश में भूमि-सुधार-आन्दोलन 1952 तक पूरी तौर से कार्यरूप में परिणत हो जायगा। सारी चीनी जनता कभी इतनी एकताबद्ध नहीं हुई थी, जितनी कि अमेरिकन आक्रमण-विरोध-कोरिया-सहायता के आन्दोलन में वह देखी जा रही है। चीनी जनता के स्वयं सेवक अपनी जनता के जबर्दस्त संकल्प को प्रकट करते हुए कोरियन जनसेना के साथ मिलकर अमेरिका के कोरियन जनतान्त्रिक जनगणराज्य के आक्रमण करने की पागलपन की योजना तथा चीन की मुक्त भूमि के भीतर घुसने के प्रयत्न का मुँहतोड़ जवाब दे रहे हैं। उनकी कार्रवाइयों ने कोरिया, चीन और एशिया की जनता एवं सारे संसार की शान्तिप्रिय दूसरी जनता के हृदय में उत्साह पैदा कर दिया है, और उनके मन में शान्ति-रक्षा और आक्रमण-प्रतिरोध के विषय में विश्वास जमा दिया है। हम उनका अभिनन्दन करते वीर चीनी जनता के वीर स्वयंसेवकों तथा कोरियन जन-सेना के प्रति सम्मान प्रकट करते हैं।···

" अमेरिकन-आक्रमण-प्रतिरोध-कोरिया-सहायता का महान् संघर्ष इस वक्त लगातार जारी है। इसे तब तक जारी रखना होगा, जब तक कि संयुक्त-राष्ट्र की सरकार समस्या का शान्तिपूर्वक हल करने के लिए तैयार नहीं होती। हम किसी देश की एक इंच जमीन को दबाने की इच्छा नहीं रखते। हम केवल अपने देश के साम्राज्यवादी आक्रमण का प्रतिरोध कर रहे हैं। सभी जानते हैं, यदि अमेरिकन सेनाओं ने हमारे ताइवान (फारमूसा) पर कब्जा न किया होता, कोरियन जनतान्त्रिक जन-गणराज्य पर चढ़ाई न की होती, और अपने आक्रमण को हमारे उत्तरी-पूर्वी सीमान्त तक न पहुँचा दिया होता, तो चीनी जनता संयुक्त-राज्य की सेनाओं के साथ आज न लड़ती होती। किन्तु जब अमेरिकन आक्रमणकारियों ने हमारे ऊपर हमला कर दिया तो आक्रमण-प्रतिरोध का झंडा उठाये बिना हम कैसे रह सकते हैं ? वैसा करना हमारे लिए अत्यन्त आवश्यक और पूर्णतया न्याय्य

* 'New China Forges Ahead', pp. 1-4

था। हमारा सारा देश इसे आवश्यक और न्यायोचित स्वीकार करता है।

" हमने बहुत पहले से कह रक्खा है कि कोरिया का प्रश्न शान्तिपूर्ण साधनों से हल किया जा सकता है। अब भी हम उस बात पर खड़े हैं। यदि संयुक्त राज्य की सरकार न्यायोचित तथा समझदारी के आधार पर इस प्रश्न को हल करने के लिए अपने को इच्छुक दिखलाये, यदि वह अब तक के समझौते की बातचीत को रोकने या देर करने के हर तरह के सम्भव निर्लज्जतापूर्ण बातों का करना छोड़ दे, तो कोरिया का युद्ध-विराम-सम्बन्धी समझौता हो सकता है; नहीं तो वह असम्भव है।"

(2) चू-तेह का भाषण–" यथार्थ में ताइवान के विरुद्ध अमेरिकन साम्राज्यवाद का आक्रमण, हमारे देश के विरुद्ध हथियारबन्द आक्रमण अमेरिकन षड्यन्त्र का एक अंग है। कोरिया के विरुद्ध अमेरिकन आक्रमण का वास्तविक लक्ष्य है, कोरिया से होकर हमारे उत्तर-पूर्व को खतरे में डालना। जिस तरह पहले जापानी साम्राज्यवाद ने किया, उसी तरह वहाँ से अमेरिकन आक्रमणकारी सेना का हमारे देश पर हमला करना सम्भव है। अक्तूबर, 1950 में कोरिया में अमेरिकन आक्रमणकारी सेना ने हमारे देश की सीमा, यालू नदी के तट पर और तुमेन नदी के नजदीक तक बड़े भयंकर रूप से कूच कर दिया। अमेरिकन विमानों ने हमारे देश के उत्तर-पूर्वी सीमान्त पर बम बरसा हमारे देशबन्धुओं के जन-धन को हानि पहुँचाई। ऐसे भयंकर खतरे के समय हमारे देश के लोग अमेरिकन आक्रमण के प्रतिरोध में कोरिया की सहायता करने के लिए स्वयंसेवक सेनाओं को बना हमारे घरों और हमारे देश की रक्षा करने एवं अमेरिकन आक्रमणकारियों के विरुद्ध कोरियन लोक-सेना के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर लड़ना छोड़ और कुछ नहीं कर सकते थे।

" कोरिया के आक्रमण-विरोधी मोर्चे पर हमारी स्वयंसेवक-सेनाएँ अत्यन्त वीरता और दृढ़ता का परिचय दे रही हैं। अमेरिकन आक्रमणकारियों के विमानों, टैंकों तोपखानों के बहुत अधिक शक्तिशाली होते, अमेरिकन वायुवाहिनी की क्रूरतापूर्ण बम-वर्षा द्वारा पैदा की गई कठिनाइयों के होते भी 25 अक्तूबर, 1950 में कन्धे से कन्धा मिला अगले पाँच अभियानों में चीनी जन-स्वयंसेवक और कोरियन जन-सेना ने पाँच बड़ी विजय प्राप्त कीं। उस समय से वर्तमान (1951 ई.) वर्ष के 3 जून तक कोरियन लोक-सेना और चीनी लोक-स्वयंसेवकों ने 193 शत्रु सेना को नष्ट किया, जिसमें 89 हजार से अधिक आक्रमणकारी अमेरिकन सेनाएँ थीं।

उत्तर कोरिया पर अधिकार करने और हमारे उत्तर-पूर्व पर चढ़ाई करने की अमेरिकन आक्रमणकारियों की दुरभिसन्धिपूर्ण योजना चूर-चूर कर दी गई, और प्राची में आक्रमण-नीतिक दुःख्यात अमेरिकन महान् अपराधी मैक आर्थर इस पराजय के बाद अपने पद से निकाल दिया गया। अमेरिकन आक्रमणकारी सेना के लिए कोरिया से हटाने के सिवा और कोई रास्ता नहीं है। चीन की वीर जनता आक्रमण को दूर हटाने के लिए कोरियन जनता की अवश्य सहायता करेगी, जिसमें कि चीन के उत्तर-पूर्वी सीमान्त की सुरक्षा हो सके। हम अवश्य इस यशस्कर कर्तव्य को पूरा करेंगे।"

(3) पेंग चेन् का वक्तव्य : कोरिया के संघर्ष के बारे में चीन के जनमत को स्पष्टतया प्रकट करते हुए चीनी विश्वशान्ति कमेटी के उप-सभापति पेंग चेन् ने 24 अक्तूबर, 1951 को कहा था :

" 25 अक्तूबर, 1950 को चीनी जनता के स्वयंसेवकों ने कोरिया में लड़ना शुरू किया। मुक्ति-युद्ध में हमारी विजय और चीन के मुख्य भूभाग से अमेरिकन आक्रमणकारी सेनाओं के भगा देने के बाद साम्राज्यवादी प्रतिरोध के खिलाफ चीनी जनता की दूसरी बड़ी लड़ाई है यह संघर्ष।...

" पिछले साल चीनी जनता के स्वयंसेवकों ने कोरियन जन-सेना के साथ मिलकर कोरियन मोर्चे पर वीरतापूर्वक युद्ध करके बड़ी-बड़ी विजय प्राप्त की है। अक्तूबर, 1950 से 10 अक्तूबर, 1951 तक हमारे सैनिकों तथा कोरियन जन-सेना ने शत्रु के 387 हजार सैनिकों को हताहत या बन्दी किया जिनमें 176 हजार अमेरिकन सैनिक भी हैं। उन्होंने 2,310 शत्रु-विमानों को गिराया, नुकसान पहुँचाया या अपने अधिकार में कर लिया। शत्रु से भिन्न-भिन्न प्रकार के अनगिनत हथियारों को छीना। चीनी और कोरियन योद्धाओं के जबर्दस्त प्रहार के कारण अमेरिकन आक्रमणकारी तथा उसके पिट्ठू और गुड़िया सेनाएँ ढकेलकर वहाँ पहुँचा दी गई हैं, जहाँ से उन्होंने चढ़ाई शुरू की–अर्थात् 38वीं अक्षांश रेखा तक।

" कोरियन युद्ध में जो विजय प्राप्त हुई है, उन्होंने बतला दिया कि अमेरिकन साम्राज्यवाद बाहर से मजबूत किन्तु भीतर से कमजोर है। वस्तुतः वह केवल 'कागज का बाघ' है और उसके आक्रमण को असफल बनाया जा सकता है।

" पहली बात यह कि हमारी विजयों के कारण अमेरिकन साम्राज्यवाद को कोरिया में असाधारण रूप से अधिकाधिक हानि उठानी पड़ी है। 170 हजार से अधिक अमेरिकन सेना को युद्ध के लिए बेकार बना देने का अर्थ यह है कि एक साल से भी कम अर्से में अमेरिकन सेना को जितने परिमाण में बेकार किया गया, वह प्रशान्तसागर युद्ध के पहले साल की अमेरिकन सैनिक क्षति का तीन गुना है। 25 अक्तूबर, 1950 के आगे के पहले तीन महीनों में औसतन 21 हजार सेना की हानि शत्रु को प्रति मास उठानी पड़ रही थी। चौथे से सातवें महीने में मासिक औसत बढ़कर 31 हजार हो गई। आठवें से ग्यारहवें महीने में यह औसत 40 हजार 6 सौ प्रति मास पहुँच गई। 10 अक्तूबर को समाप्त होनेवाले एक पखवारे में शत्रु की हानि 35 हजार तक पहुँच गई, जिसका अर्थ है कि पहले तीन महीने में औसत 3.3 गुना हो गया।

" दूसरी बात यह भी ध्यान में रखने लायक है, कि हमने शत्रु के सैनिक साधनों और अपने साधनों के बीच बहुत असमानता रहते भी यह विजय प्राप्त की है। यह सब होने पर भी हमारे स्वयंसेवकों और कोरियन जन-सेना ने मैक-आर्थर की कमांड में लड़ती आक्रमणकारी फौजों को यालू नदी से ढकेलकर 38वीं अक्षांश रेखा पर पहुँचा दिया है।... "

28 जून, 1950 को ही अध्यक्ष माओ चे-तुंग ने बतला दिया था : "कोरिया, फिलिपीन, वियतनाम और दूसरे देशों के भीतरी मामलों में दखल देने के लिए अमेरिका का कोई अधिकार नहीं है। सारे चीन की जनता तथा सारी दुनिया की जनता की भारी संख्या की सहानुभूति आक्रमण के शिकार होनेवाले लोगों की ओर होगी, वह हर्गिज अमेरिकन साम्राज्यवाद की ओर नहीं होगी।... "

अमेरिकन साम्राज्यवादियों का हौसला बहुत बढ़ गया था। वह समझते थे कि हम हर जगह की तरह चीन के साथ भी अपनी मनमानी कर सकते हैं। इस बात को च्यांग काइ-शेक को हराकर चीनी जनता ने बेहूदा साबित कर दिया था, लेकिन ट्रूमन ने फिर भी कोरिया में हस्तक्षेप करके चीनी सीमान्त तक पहुँचने में आनाकानी नहीं की। ट्रूमन और उसके साम्राज्यवादी सहकारियों ने जिस आततायीपन का परिचय हिरोशिमा और नागासाकी जैसे अशिक्षित नगरों की लाखों जनता के ऊपर अणुबम गिराकर दिया था, उसकी पुनरावृत्ति उन्होंने कोरिया और मंचूरिया के कुछ स्थानों में कीटाणु गिराकर की! उन्होंने समझा था कि इस प्रकार महामारी फैलाकर हम चीन को घुटने टेकने के लिए मजबूर करेंगे। लेकिन चीन सब तरह के हथियारों से अपनी प्रतिरक्षा कर सकता है, इसे उसने इन महामारी के कीटाणुओं को अपने उपायों द्वारा बेकार करके साबित कर दिया। अमेरिकन आततायी दुनिया के सामने खुलकर यह कहने की हिम्मत नहीं रखते : 'हाँ, हम सचमुच कीटाणुबम गिरा रहे हैं।' लेकिन उनके अपने अफसरों ने स्वीकार किया कि हमने अपने विमानों में ढो-ढोकर कीटाणुबम गिराये हैं। अमेरिका और उसके पिट्ठू चाहे कितनी ही दुनिया की आँख में धूल झोंकना चाहें, लेकिन दुनिया अब जानने लगी है, कि अमेरिकन साम्राज्यवाद और उसके थैलीशाह से बढ़कर मानवता का शत्रु 'न भूता न भविष्यति'। अब तक पश्चिमी साम्राज्यावादी देश एशिया को घास-मूल समझते थे, लेकिन उनके सरदार अमेरिका को नाकों चने चबवाकर चीन ने दिखला दिया कि अब वह एशिया नहीं है, जिसके साथ 'निर्बल की जोरू सारे गाँव की भाभी' जैसा बर्ताव कर सकते हैं। वियतमिन के वीर योद्धाओं ने भी इसी बात को फ्रान्स के सामने साबित कर दिखलाया है।

पिछले महायुद्ध से भी अधिक संख्या में अपने पुत्रों को मारे जाते देखकर अमेरिका घबरा उठा है और घबराहट का परिणाम हुआ ट्रूमन को हराकर आइजनहावर का प्रेसीडेंट चुना जाना। आइजनहावर ने अपने निर्वाचन के व्याख्यानों में लोगों के सामने साफ कहा था कि हम कोरिया के युद्ध को बन्द करेंगे। लेकिन, दुनिया की सभी जोंकों की तरह निर्वाचन-भाषण केवल लोगों को धोखे में डालने के लिए होते हैं। आइजनहावर ट्रूमन से कम कसाई नहीं साबित हुआ। अब भी कोरिया में उसी तरह नृशंस काण्ड करते देखा जा रहा है। बेबस

अमेरिकन जनता छटपटा रही है, लेकिन उसके भीतर अभी यह हिम्मत नहीं कि आततायियों का शासन अपने देश में खतम करे।

(4) चाउ एन्-लाई का भाषण—दुनिया के साम्राज्यवादी हारी बाजी लड़ रहे हैं, यह इसी से मालूम होगा कि किसी जगह भी यह पहल नहीं कर पाते। आइजनहावर को अपनी प्रतिरक्षा भूलते और अमेरिकन जनता को लड़ाई की क्षति को देखकर घबराते पा यहाँ पर भी पहल चीन ने की; जबकि प्रधानमन्त्री चाउ एन्-लाई ने कोरिया में युद्ध बन्द करने के लिए अपना वक्तव्य 30 मार्च, 1953 को निकाला। सारी दुनिया बड़ी उत्सुकता के साथ प्रधानमन्त्री के वक्तव्य को पढ़ने लगी, लाखों अमेरिकन घरों में उसके कारण आशा का संचार हो गया और मुट्ठी-भर अमेरिकन कसाई साम्राज्यवादियों के घर में उदासी छा गई। वह बहुतेरा चाउ के भाषण को टरकाने की कोशिश करते थे, लेकिन उनकी जनता नहीं, बल्कि कोरिया के कसाईखाने में खून से हाथ रंगनेवाले इंग्लैण्ड आदि जैसे अमेरिकन सहकारियों ने भी चाउ के भाषण का स्वागत करते हुए अमेरिका पर जोर देना शुरू किया, जिसके कारण समझौते के लिए फिर बात शुरू हुई। प्रधानमन्त्री चाउ ने कहा था :

" चीन जन-गणराज्य की केन्द्रीय जन-सरकार और कोरियन लोकशाही जन-गणराज्य की सरकार ने साथ मिलकर संयुक्त-राष्ट्र कमांड के मुख्य कमांडर जनरल मार्क क्लार्क के युद्ध के समय दोनों तरफ के लड़ाई के बीमार तथा घायल बन्दियों के विनिमय के सम्बन्ध में 22 फरवरी, 1953 के भेजे प्रस्ताव का अध्ययन किया और दोनों की इस बारे में एक राय है कि 1949 के जेनेवा-समझौते की 109 धारा के अनुसार यह प्रश्न समझदारी के साथ हल किया जाना बिलकुल सम्भव है। युद्ध के घायल और बन्दियों के विनिमय के प्रश्न का समझदारी के साथ हल होना युद्ध-बन्दियों के सारे प्रश्न का सुगमता से हल करने में सहायक होगा। इसलिए हमारी राय है कि कोरिया में लड़ाई को बन्द करने तथा विराम-सन्धि करने के लिए युद्ध-बन्दियों के सारे प्रश्न के हल करने का ठीक समय आ गया है।

" ...दोनों सरकारें इस बात में एकराय हैं कि युद्ध-विराम की बातचीत करने के लिए कोरियन जन-सेना तथा चीनी जनता के स्वयंसेवकों के प्रतिनिधियों और संयुक्त-राष्ट्र कमांड के प्रतिनिधियों को तुरन्त युद्ध-विराम-सन्धि के बारे में बातचीत करनेवाले प्रतिनिधियों को लड़ाई के दौरान में घायल और बीमार युद्धबन्दियों के विनिमय के प्रश्न पर तुरन्त बातचीत शुरू कर देनी चाहिए, और युद्धबन्दियों के सवाल के बारे में सभी प्रकार के समझौतों का रास्ता ढूँढ़ना चाहिए।

" पिछले एक साल से अधिक के समय में कोरियन युद्ध-विराम समझौते की बातचीत कोरिया में युद्ध-विराम करने के लिए नींव रख चुकी है। कायेसोंग और पुनमुनजान की बातचीत के दौरान में दोनों ओर के प्रतिनिधि युद्धबन्दियों को छोड़कर बाकी सभी प्रश्नों पर एकराय हो चुके हैं। पहली बात यह है कि कोरिया में लड़ाई बन्द करने के सवालों के बारे में जिसकी सारी दुनिया को चिन्ता है—दोनों पक्ष स्वीकार कर चुके हैं कि इस युद्धविराम-सन्धि पर हस्ताक्षर होने के बारह घंटे बाद दोनों विरोधी पक्षों के कमांडर अपने अधीनस्थ सभी हथियारबन्द सेनाओं को स्थल, जल और वायु की सेनाओं की सभी इकाइयों और व्यक्तियों को लेते—कोरिया में सभी तरह की विरोधी कार्रवाइयों को पूरी तौर से बन्द करने की आज्ञा देंगे और उसे कार्यरूप में परिणत करेंगे।

" दूसरी बात यह है कि दोनों पक्ष युद्ध-विराम की भिन्न-भिन्न महत्त्वपूर्ण शर्तों के बारे में एकराय हो चुके हैं। सैनिक सीमारेखा के निश्चित करने और असैनिक भूमि के स्थापित करने के बारे में भी दोनों पक्ष एकराय हो चुके हैं, कि युद्ध-विराम-सन्धि के कार्यरूप में परिणत होने के समय दोनों पक्षों के सम्पर्क की वास्तविक रेखा सैनिक सीमान्त रेखा होगी और यह कि उस रेखा से दो किलोमीटर पीछे दोनों ही पक्ष हटकर दोनों लड़नेवाली सेनाओं के बीच में असैनिक भूमि स्थापित करेंगे, जो कि फिर से झगड़ा होने के कारण होनेवाली दुर्घटनाओं को रोकने के लिए तटस्थ भूमि होगी। युद्ध-विराम-सन्धि के कार्यरूप में परिणत करने की देखरेख और युद्ध-विराम-सन्धि के तोड़ने के झगड़ों को ठीक करने के लिए दोनों पक्षों ने मंजूर कर लिया है कि कोरियन जन-सेना के सर्वोच्च कमांडर तथा चीनी जनता के स्वयंसेवकों के कमांडर द्वारा नियुक्त पाँच ज्येष्ठ अफसरों,

एवं संयुक्त-राष्ट्र कमांड के कमांडर-इन-चीफ द्वारा नियुक्त पाँच ज्येष्ठ अफसरों का कमीशन युद्ध-विराम-सन्धि के कार्यरूप में परिणत करने के लिए देखरेख का जिम्मेदार होगा। उसी में युद्धबन्दियों के घर लौटाने की कमेटी की देखरेख और संचालन तथा युद्ध-विराम-सन्धि तोड़ने की किसी घटना का बातचीत द्वारा समझौता करने की कमेटी की देखरेख और संचालन भी शामिल होगा। दोनों पक्षों ने यह भी स्वीकार कर लिया है कि तटस्थ राष्ट्रों का एक निरीक्षक-कमीशन बनाया जायगा, जिसमें कोरियन जन-सेना सर्वोच्च कमांडर तथा चीनी स्वयं-सेवकों के कमांडर मिलकर पोलैन्द और चेकोस्लोवाकिया के तटस्थ राष्ट्रों के प्रतिनिधि के तौर पर नियुक्त ज्येष्ठ अफसर एवं संयुक्तराष्ट्र कमांड के कमांडर-इन-चीफ द्वारा स्वीडन और स्विट्ज़र्लैंड के तटस्थ राष्ट्रों के प्रतिनिधि के तौर पर नियुक्त दो ज्येष्ठ-अफसर होंगे। इस कमीशन के अधीन तटस्थ राष्ट्रों की निरीक्षण टोली बनाई जायगी, जो उपरोक्त राष्ट्रों द्वारा नियुक्त अफसरों की होगी। यह निरीक्षण टोलियाँ निम्न प्रवेश-बन्दरगाहों में रहेंगी : उत्तर कोरिया में सिनूइजू, चोंग जिन्, हुंग नाम्, मनूपो और सिनान्जू एवं दक्षिणी कोरिया में इन्चोन्, तयेगू, पूसान, कांगनुंग और कुनसान्।··· इनके अतिरिक्त दोनों पक्ष इस बात में भी सहमत हुए हैं कि दोनों पक्षों के सैनिक कमांडर इनके द्वारा अपने-अपने देशों की सरकारों के साथ सिफारिश करते हैं कि युद्ध-विराम-सन्धि पर हस्ताक्षर होने तथा अमल में लाये जाने के तीन महीने के भीतर दोनों पक्षों की ओर से नियुक्त किये हुए प्रतिनिधियों का ऊँचे स्तर पर एक राजनीतिक सम्मेलन कोरिया से सभी विदेशी सेनाओं के हटाने के सवाल पर बातचीत करके समझौता करने, कोरिया के प्रश्न को शान्तिपूर्वक सुलझाने के लिए होगा।

"कोरिया युद्ध-विराम-सम्बन्धी बातचीत करने के दौरान में केवल एक प्रश्न–युद्धबन्दियों का प्रश्न–कोरिया में सन्धि होने में रुकावट है। बल्कि इस प्रश्न के बारे में भी दोनों पक्ष युद्धबन्दियों को घर भेजने के सवाल को छोड़कर युद्ध-विराम समझौते के मसौदे के युद्धबन्दी-सम्बन्धी प्रबन्धों के सम्बन्धी सभी निर्बन्धों पर एकराय हो चुके हैं। यदि कोरियन युद्धविराम की बातचीत पाँच महीने से टूट न गई होती, तो युद्धबन्दियों के घर लौटाने के इस प्रश्न पर भी बहुत पहले ही कोई हल प्राप्त हो गया होता।

"अब संयुक्त-राष्ट्र कमांडर ने जेनेवा-समझौते की 109 धारा के अनुसार लड़ाई के दौरान में हुए बीमार और घायल युद्धबन्दियों के विनिमय के सवाल को हल करने के लिए प्रस्ताव किया है। इसके सम्बन्ध में हम समझते हैं कि बीमार और घायल युद्धबन्दियों के सवाल के ठीक से हल हो जाने के बाद युद्धबन्दियों के सारे प्रश्न का सुगमता से हल होना बिलकुल आसान हो जायगा, यदि दोनों पक्ष पारस्परिक दे-ले के देन भाव से कोरिया में युद्ध बन्द करने के लिए वास्तविक सद्भावना से प्रेरित हों।

"युद्धबन्दियों के प्रश्न के बारे में चीन जन-गणराज्य की सरकार और कोरिया जनतांत्रिक जन-गणराज्यों की सरकार का हमेशा से यह विचार रहा है, और अब भी है कि 1949 के जेनेवा-समझौते, विशेषकर उसकी 118वीं धारा के अनुसार लड़ाई बन्द होने के बाद बिना देर किये युद्धबन्दियों को मुक्त कर देने और घर लौटा देने से ही वास्तविक हल प्राप्त हो सकता है, तो भी, यह बात सामने रखते हुए कि कोरिया में युद्ध-बन्द हुआ देखने के लिए एकमात्र बाधा अब इस प्रश्न के सम्बन्ध में दोनों पक्षों के बीच का मतभेद है और दुनिया की जनता की शान्ति की लालसा पूरी करने के लिए चीन जन-गणराज्य की सरकार और कोरिया जनतांत्रिक जन-गणराज्य की सरकार··· तैयार हैं। कोरिया में युद्ध बन्द होने के खयाल से इस प्रश्न के मतभेदों को हटाने के लिए कदम उठाने को तैयार हैं। इसी अभिप्राय से··· (दोनों सरकारें) दोनों दलों के सामने प्रस्ताव करती हैं कि समझौता शत्रुता बन्द होने के तुरन्त ही बाद अपने हाथ के उन सभी युद्धबन्दियों को देश लौटा दें, जो घर लौटना चाहते हैं, और बाकी युद्धबन्दियों को एक तटस्थ राज्य के हाथ में दे दें, जिसमें कि उनके घर लौटाने के सवाल का उचित हल निकाला जा सके।

"यहाँ यह कह देना आवश्यक है कि इस प्रस्ताव को रखते हुए हम हर्गिज जेनेवा-समझौते की 118वीं धारा द्वारा बाद शत्रुता होने के बाद युद्धबन्दियों की मुक्ति और घर लौटाने के सिद्धान्त को हर्गिज तोड़ने के लिए तैयार नहीं हैं, और न हम संयुक्तराष्ट्र कमांड के इस दावे को स्वीकार करते हैं कि युद्ध-बन्दियों के भीतर ऐसे व्यक्ति हैं, जो घर लौटने से इन्कारी हैं।"

यह बम था जिसने साम्राज्यवादी कैम्प में खलबली मचा दी, और इच्छा न रखते हुए भी अमेरिकन थैलीशाहों के सरदार को फिर से समझौते की बातचीत करने के लिए मजबूर होना पड़ा। सारी बातें तै हो गईं और केवल समझौते प्रर हस्ताक्षर बाकी रह गया, जबकि अमेरिकन खूँखार दरिन्दों ने अपनी गुड़िया सिंगमन री को खड़ा कर दिया। वह समझौते को अव्वल तो किसी तरह मानने के लिए तैयार नहीं हुआ, और जब अमेरिकन जनता के जोर देने पर अमेरिकन तानाशाहों ने कुछ कड़ाई बरतनी चाही, तो भी सिंगमन री के साथ ऐसी शर्तों पर समझौता किया, जिसके कारण कोरिया में युद्ध बन्द होना फिर खटाई में पड़ गया। पर अन्त में विश्वमत के सामने सिर झुकाने के लिए मजबूर होना पड़ा, यद्यपि अमेरिकन जंगबाज भीतर से शान्ति को अपने लिए घातक समझते हैं।

2. सरकार का निर्वाचन

चीन जन-गणराज्य की जनप्रिय सरकार माओ चे-तुंग की अध्यक्षता में 1949 में ही स्थापित हो गई, यह हम बतला चुके हैं। यद्यपि उसमें जनता के हरेक पक्ष और हितों के प्रतिनिधि मौजूद हैं, और प्रतिनिधियों के पीछे भारी जनमत है, बहुत-से अपने-अपने स्थानों या इकाइयों द्वारा निर्वाचित भी हैं, लेकिन सारे देश में आम निर्वाचन द्वारा संसद् का चुनाव अभी नहीं हुआ था।

निर्वाचन के लिए चीन में बड़े जोर-शोर से तैयारी हुई है, और निर्वाचन का कानून बन चुका है।

(1) **निर्वाचन**—1 मार्च, 1953 को केन्द्रीय जन-सरकार परिषद् द्वारा स्वीकृत निर्वाचन-कानून को अध्यक्ष माओ चे-तुंग ने जारी कर दिया, जिसके कुछ मुख्य-मुख्य अंश हैं :

(1) जाति या नसल, स्त्री-पुरुष-भेद, पेशा, सामाजिक उत्पत्ति, धर्म, शिक्षा, सम्पत्ति के खयाल या निवासस्थान का बिना विचार करते अठारह वर्ष से ऊपरवाले सभी नागरिक वोट देने और चुने जाने का अधिकार रखते हैं।

(2) स्त्रियों को पुरुषों के समान अधिकार हैं।

(3) निर्वाचक बहुमत वोट द्वारा अपने देपुतियों (संसद के सदस्यों) को लौटा सकते हैं।

(4) उम्मीदवारों को निर्वाचन के लिए खर्च नहीं करना होगा। सभी खर्च राज्य की ओर से दिये जाएँगे।

(5) शियांग (ग्राम समूह, तहसील या परगना) की सबसे छोटी सरकार से लेकर केन्द्रीय जन-सरकार तक सभी सरकारें निर्वाचित होंगी।

(6) चीन की जनसंख्या का करीब 14वाँ हिस्सा रखनेवाली अल्पमत जातियों के अखिल चीन जन-कांग्रेस (पार्लियामेंट में) 150 सदस्य होंगे, जो कि सारे पार्लियामेंट-सदस्यों का 7वाँ भाग है।

(7) समुद्रपार के चीनियों को पार्लियामेंट में 30 सीटें मिलेंगी।

इस निर्वाचन-कानून के जारी करने के साथ चीन मानव-इतिहास के सबसे बड़े निर्वाचन की तैयारी करने लगा। आज वहाँ की 50 करोड़ जनता अपने प्रतिनिधि चुन रही है।

यद्यपि पार्लियामेंट का देशव्यापी निर्वाचन अब होने जा रहा है, लेकिन निर्वाचन-प्रणाली वहाँ हमेशा से कम्युनिस्ट पार्टी अपनाये रही। गाँव से लेकर अपने सारे मुक्त क्षेत्र के लिए वह निर्वाचित सदस्यों की सरकार बनाया करती थी, जिसके कारण चीनी जनता निर्वाचन-प्रथा से पूर्णतया अभ्यस्त है। पिछले तीन वर्षों में सभी प्रदेशों, नगरों, जिलों, शियांगों (तहसीलों) में अपने-अपने सर्वमण्डल जन-प्रतिनिधि सम्मेलन निर्वाचित हुए थे। 1952 की रिपोर्टों के अनुसार सारे देश में 1 करोड़ 36 लाख 37 हजार निर्वाचन प्रतिनिधि थे, जिसमें 80 सैकड़ा तक जनता द्वारा सीधे निर्वाचित थे। शान्सी, होपेइ और शान्तुंग प्रदेश पहले मुक्त हुए थे, वहाँ 90 सैकड़ा तक प्रतिनिधि सीधे निर्वाचित हुए थे। कियांग-सी और जेचुआन जैसे बहुत पीछे मुक्त हुए प्रदेशों में भी 80 सैकड़ा प्रतिनिधि निर्वाचित थे।

देश के 29 प्रदेशों में से 20, 159 नगरों में से 109 और 2,129 जिलों में से 811 के अपने जन-प्रतिनिधि सम्मेलन शासन का काम करते हैं। 2 लाख 80 हजार शियांग (तहसील) में सारे देश के किसान प्रतिनिधि सम्मेलन

या जन-प्रतिनिधि सम्मेलन अपना काम करते हैं। अल्पमत जातियों के इलाकों में भी, जहाँ पिछड़ेपन के कारण बहुत-सी कठिनाइयाँ हैं, वहाँ के लोगों ने अपनी जन-सरकार परिषद् के लिए मेम्बर चुने।

6 जून, 1950 को पार्टी की 7वीं कांग्रेस के तीसरे अधिवेशन में भाषण देते हुए अध्यक्ष माओ चे-तुंग ने कहा था : "हमें सभी हलकों के जन-प्रतिनिधि सम्मेलनों को सफलतापूर्वक बुलाना होगा, क्योंकि हमारे सम्मिलित काम को पूरा करने के लिए सभी तरह के लोगों को एकताबद्ध करने के ये सबसे अच्छे साधन हैं। जन-सरकार के सभी महत्त्वपूर्ण कामों को बहस और फैसले के लिए जन-सम्मेलनों के सामने रखना चाहिए। इन सम्मेलनों में सम्मिलित होनेवाले सभी प्रतिनिधियों को उनमें बोलने के लिए पूरा अधिकार होना चाहिए। जन-प्रतिनिधियों के बोलने में रुकावट पैदा करनेवाली हरेक कार्रवाई गलत है।" इससे मालूम होगा कि अखिल हलका जन-प्रतिनिधि सम्मेलन किस तरह हर जगह जनतान्त्रिकता दिखला रहे हैं। इन सम्मेलनों द्वारा जहाँ जनता का विश्वास प्राप्त करने में बड़ी सफलता हुई है, वहाँ उनमें काम के लिए भारी उत्साह भी पैदा हुआ है। उत्तर-पूर्व चीन के आनूशान् में 1953 में जो सम्मेलन हुआ था, उसके परिणामस्वरूप वहाँ के सभी तरह के उत्पादन में भारी वृद्धि हुई है, 42 हजार टन अन्न की जगह 68 हजार टन अन्न पैदा किया गया। चीन का निर्वाचन ऊपर से नीचे तक सभी जगह जनतान्त्रिक है, और वह राष्ट्र के नव-निर्माण में भारी काम कर रहा है।

(1) **सरकार**–चीन जन-गणराज्य के अध्यक्ष माओ चे-तुंग हैं, जिन्हें चीनी जनता माओ चू शी (अध्यक्ष माओ) के नाम से अधिक पुकारती है। शासन-यन्त्र की भिन्न-भिन्न शाखाएँ निम्न प्रकार हैं :

3. शासन-यंत्र

(2) **सरकारी संगठन**–चीनी जनता के राजनीतिक (सलाहकार) सम्मेलन में 662 मेम्बर हैं, जो पार्लियामेंट का काम कर रहा है। नये चुनावों के बाद इसका स्थान जन-कांग्रेस लेगी। सलाहकार सम्मेलन के सदस्यों का विवरण निम्न प्रकार है :

नाम	मेम्बर	अध्यक्ष
1. राजनीतिक सलाहकार सम्मेलन	662	माओ चे-तुंग
2. राजनीतिक जातीय कमीटी	198	माओ चे-तुंग
3. राजनीतिक स्थायी कमीटी	39	माओ चे-तुंग
4. केन्द्रीय जन-सरकार	64	माओ चे-तुंग
5. शासन-प्रबन्ध परिषद्	22	चाउ एन्-लाइ
6. विभाग कमीटियाँ	5	
(क) राजनीतिक और कानूनी विभाग कमीटी	5	तुंग पी-वू
(ख) वित्त और आर्थिक विभाग कमीटी	4	चेन् युन्
(ग) संस्कृति और शिक्षा विभाग कमीटी	5	कुओ मो-जो
(घ) जन-नियंत्रण कमीटी	3	तान पिंग-शान्
(ङ) उत्तर चीन शासन-प्रबन्ध कमीटी	3	ल्यू लान् ताओ

(2) **मंत्रालय**–चीन सरकार के निम्न 26 मंत्रालय हैं :

	नाम	मंत्री/उपमंत्री संख्या	मंत्री
1.	आन्तरिक	3	शियेह चूयेह-चे
2.	विदेश-विभाग	5	चाउ एन्-लाइ
3.	जन-सुरक्षा	3	ली जुइ-चिंग
4.	भारी उद्योग	3	वांग हो-शाउ
5.	ईंधन उद्योग	3	चेन् यू
6.	कपड़ा उद्योग	4	चियांग कुआंग नइ

7.	हल्का उद्योग	4	ह्वांग येन् पेइ
8.	रेलवे	4	तेंग ताइ युआन
9.	डाक-तार	2	चू शुयेह फान
10.	संचार	4	चांग पो चुन्
11.	कृषि	4	ली शू चेंग
12.	वन	3	लियांग शि
13.	जल संरक्षण	3	फू चो यी
14.	श्रम	3	ली ली शान्
15.	सांस्कृतिक विभाग	3	शेन् येन् पिंग
16.	शिक्षा	4	मा शू-लुन्
17.	जन-स्वास्थ्य	4	ली तेह-चुआन्
18.	न्याय	2	शीह लियांग
19.	वैयक्तिक	4	आन् चू-वेन्
20.	विदेशी व्यापार	4	येह चि-चुआंग
21.	व्यापार	4	चेंग शान्
22.	मशीन उद्योग (प्रथम)	3	ह्वांग चिंग
23.	मशीन उद्योग (द्वितीय)	4	चोओ एई लू
24.	गृह-निर्माण	3	
25.	भूतत्व सर्वे	4	ली जू-क्वांग
26.	खाद्य	2	चांग नाइ-ची

(3) **अन्य सरकारी संगठन**—मंत्रालय के अतिरिक्त सेना तथा दूसरे निम्न सरकारी विभाग हैं :

(क) जन-क्रान्तिकारी सेना परिषद्—यह परिषद् सेना-विभाग की जगह पर है, जिसके पदाधिकारी निम्न प्रकार हैं :

अध्यक्ष : माओ चे-तुंग

उपाध्यक्ष : चू-तेह, चाउ एन्-लाइ, चेंग चियेन्, काओ कांग, ल्यू शाओ-ची, पेंग तेह-ह्वाइ, लिन् पियाओ

परिषद् के मेम्बर : हो-लुंग, चेन्-यी, येह चितेन्-यिंग, सू यू, ल्यू पो-पेंग, शू शियांग-चियेन्, नियेह जुंग चेन्, चांग युन्-यी, तेंग शियाओ-पिंग, जाओ शू शीह, शी चुंग-शुन्, फू चो-यी, लुंग युन्, ली शियेंन्-नियेन्, तेंग चू-हइ, लो जुई-चिंग, चांग चिह-चुंग, चे तिग कै, ल्यु फेइ

(ख) **अन्य विभाग**

	नाम	उपाध्यक्ष संख्या	अध्यक्ष या सभापति
1.	विधान-विभाग कमीशन	3	चेन् शाओ यू (अध्यक्ष)
2.	जातियों के विभाग का कमीशन	4	ली-वेड़-हान्
3.	समुद्र-पार चीनी विभाग कमीशन	5	हो-शियांग-निंग
4.	चीन अकादमी	6	कुओ मो-जो
5.	सूचना-प्रबन्ध	2	चौ ता-पेंग (संचालक)
6.	आयातकर-प्रबन्ध	2	कुंग युआन (संचालक)
7.	प्रेस-प्रबन्ध	3	हू चियाओ मू (संचालक)
8.	प्रकाशन-प्रबन्ध	4	हू यू-चिह (संचालक)

(ग) गीत (वोमन् छिंग छिंग दी श्याओ याओ)–
पंच-सितारा लाल ध्वजा के नीचे हम कूदें,
सुख से स्वागत करें सुन्दर वसन्त का,
सूर्य उदय से जैसे हटे शीत तम,
लावे माओ चे-तुंग तथा सुख-उष्णता।

(घ) गीत–
देखो पंच सितारा लाल ध्वजा ऊँजे फहराती,
साभिमान हम गाते जय के गीत
करें प्रशंसा अपनी प्यारी मातृभूमि की.
जो प्रतिदिन होती समृद्धतर और बलवत्तर,
पर्वत और वादियों में से,
बहती ह्वांग हो औ यांग-ची,
महाविशाल औ सुन्दर है,
हमारी मातृभूमि प्यारी
रहते वीर जन मुक्त यहाँ,
हैं दृढ़ता में जैसे फौलाद।

(ङ) चीन का राष्ट्रगीत–
उठो दासता से इन्कार करनेवाले,
हमारे रक्त-मांस से बनेगी एक दीवार,
सामना है चीन जाति का अति महान् संकट से,
हर मुँह से आ रही जोर की पुकार,
उठो, उठो, उठो
शत्रु की ज्वाला में से आगे बढ़ो,
शत्रु की ज्वाला में से आगे बढ़ो
आगे बढ़ो, आगे बढ़ो।

।। इति ।।

परिशिष्ट

वर्षपत्र

1893	झाड़ा	माओ चे-तुंग का जन्म
1894		सुन् यात्-सेन का 'पुनरुज्जीवन संघ' स्थापित
1900		ई-हो-त्वान् (बाक्सर) विद्रोह
1901		पेकिंग-संधि, स्कूल में माओ का प्रवेश
1903		शांघाइ 'देशभक्ति क्लब' का विद्रोह, माओ की पहली असफल उड़ान
1905		सुन् यात्-सेन् के संघ का नाम-परिवर्तन 'क्रान्तिकारी साथी दल'
1906		माओ पढ़ाई छोड़ किसानी और बहीखाते में
1908		जापानी माल का बायकाट
1909		चू-तेह कुओ-मिन्तांग के सदस्य
1910		नकली मंचू पार्लियामेंट
1911		माओ चांगशा में
	अक्तूबर 10	माओ क्रान्ति-सेना में, हानूकाउ में विद्रोह
1912	फरवरी 12	मंचू पुइ गद्दी से उतरा
	फरवरी 14	सुन् यात्-सेन की जगह युआन् शि-काइ राष्ट्रपति
1913		माओ चांगशा प्रादेशिक विद्यालय में
1915		जापान की इक्कीस माँगें
1917		माओ की माँ मरीं, युआन् शि-काइ मरा, माओ का देशभक्तों का आह्वान
	जुलाई 1	मचू पू-ई को फिर गद्दी पर बैठाने का प्रयत्न
	नवम्बर 7	महान् बोल्शेविक क्रान्ति (रूस)
1918		माओ की पढ़ाई समाप्त
1919		माओ पेकिंग और शांघाइ में प्रथम बार
	मई 4	'चतुर्थ मई-आन्दोलन'
	जून 3	'तृतीय जून-आन्दोलन'
	जून 5	शांघाइ में मजूरों की जबर्दस्त हड़ताल
	जून 28	पेरिस-सन्धि पर चीन ने हस्ताक्षर नहीं किया
1920		माओ शांघाइ में
	नवम्बर 7	रूसी-क्रान्ति का माओ के नेतृत्व में प्रथम वार्षिकोत्सव
1921	जुलाई 1	चीनी कम्युनिस्ट पार्टी की स्थापना

1922		चू-तेह का जीवन-परिवर्तन
	मई	पार्टी का घोषणापत्र
1923	फरवरी 7	'7 फरवरी हत्याकांड'
	मई 1	हूनान् में मजूरों की सर्वहड़ताल
	जून	कान्तन् में तीसरी पार्टी-कांग्रेस
1924	जनवरी	कुओ-मिन्तांग की प्रथम राष्ट्रीय कांग्रेस
1925		चू-तेह यूरोप से लौटे
	जनवरी	चतुर्थ पार्टी-कांग्रेस
	मार्च 12	सुन्-यात्-सेन का निधन
	मई	शांघाइ-मजूरों की हड़ताल
	मई 30	शांघाइ-छात्रों का प्रदर्शन
1926	मार्च	च्यांग का कान्तन् में हत्याकाण्ड
	जुलाई	राष्ट्रीय सेना का उत्तरी अभियान
1927	मार्च	चाउ एन-लाई के नेतृत्व में शांघाइ पर मजूरों का अधिकार, राष्ट्रीय सेना शांघाइ में
	अप्रैल 12	च्यांग का शांघाइ में हत्याकाण्ड
	अप्रैल 25	वूहान् में पाँचवीं पार्टी-कांग्रेस
	मई 24	क्रान्तिकारी सेना का नानकिंग पर अधिकार
	जुलाई 11	चांगशा युद्धपति के हाथ से मुक्त
1927	अगस्त 7	अत्यावश्यक पार्टी कांफ्रेंस, चेन् तू-श्यू का पतन और किसान-विद्रोह का आवाहन
	सितम्बर	माओ जल्लादों के हाथ से बचे
	नवम्बर	चिंगकांग में प्रथम सोवियत की स्थापना
1928		छठी पार्टी-कांग्रेस (जाड़ों में)
	मई	चू-तेह माओ से आ मिले
	दिसम्बर	लालसेना की नवीं पार्टी-कांग्रेस
1929		लालसेना क्यांगसी और फूकियान में
1930		ली लि-सान की भूलों का मार्जन
	अप्रैल	यू चेन् लाल-राजधानी
	जून	लालसेना चांगशा के पास
	नवम्बर	च्यांग का प्रथम आक्रमण
1931	जनवरी	च्यांग का प्रथम आक्रमण असफल
	फरवरी	च्यांग का द्वितीय आक्रमण
1931	जुलाई	च्यांग का तृतीय आक्रमण
	सितम्बर	मंचूरिया पर जापानी अधिकार
	दिसम्बर 11	प्रथम सोवियत कांग्रेस
1932	जनवरी	शांघाइ में जापान का आक्रमण और जबर्दस्त प्रतिरोध
	जून	च्यांग का चतुर्थ आक्रमण
1933		जैहोल पर जापानी अधिकार
	मई	फेंग यू-श्यांग का कम्युनिस्टों से मेल
	अक्तूबर	च्यांग का पाँचवाँ आक्रमण

1934	जनवरी	जुइचिन में द्वितीय सोवियत-कांग्रेस
	अक्तूबर 16	महान् अभियान का आरम्भ
1935		पूर्वी होपेइ पर जापान का अधिकार
	जनवरी	चू-नाइ पार्टी-कान्फरेंस
	मई	लालसेना युन्नान् में
	अगस्त	लालसेना ने तुंग-पी सेना को हराया
1935	अक्तूबर 20	शेन्सी में पहुँच अभियान का अन्त
	नवम्बर	कुओ-मिन्तांगी सेना को लालसेना ने हराया
	दिसम्बर 9	पेकिंग में जापान-प्रतिरोध के लिए छात्रों का प्रदर्शन
	दिसम्बर 25	पार्टी राजनीति ब्यूरो की बैठक
1936		शरद् में माओ की पुस्तक 'दाँव-पेंच' निकली
	अगस्त 13	जापान का शांघाइ पर आक्रमण और अधिकार
	दिसम्बर 1	तरुण-मार्शल के साथ कम्युनिस्टों का समझौता
	दिसम्बर 7	च्यांग सियान् में पहुँचा
	दिसम्बर 11	सियान् पर विद्रोहियों का अधिकार
	दिसम्बर 12	च्यांग की गिरफ्तारी
	दिसम्बर 24	च्यांग ने संयुक्त मोर्चा की बात मानी
1937	जून	कम्युनिस्ट नानकिंग सरकार के साथ
	जुलाई	माओ की पुस्तक 'व्यवहार' निकली
	जुलाई 7	जापान का पेकिंग पर आक्रमण और अधिकार
	अगस्त	माओ की पुस्तक 'विरोध' निकली
	सितम्बर	पिंग-शिंग-कुआन् की विजय
1938	मई	माओ की पुस्तक 'लम्बी लड़ाई' निकली
	अक्तूबर	माओ की पुस्तक 'नया दौर' निकली, कान्तन् और वूहान् पर जापान का अधिकार
1939		द्वितीय विश्वयुद्ध आरम्भ, हेनान् पर जापान का अधिकार, वर्ष के अन्त में च्यांग का पहला कम्युनिस्ट-विरोधी जिहाद
1941		माओ की पुस्तक 'नया जनवाद' निकली, प्रशान्त सागर में युद्ध आरम्भ
	जनवरी	'दक्षिणी अन्-ह्वेइ घटना', च्यांग का दूसरा जिहाद
	जून 22	हिटलर का सोवियत पर आक्रमण
1942	मई 2	माओ का भाषण 'कला और साहित्य की समस्याएँ'
1944		येनान् में लाल राजधानी
1945	अप्रैल 24	येनान में सातवीं पार्टी-कांग्रेस
	अगस्त 8	जापान के विरुद्ध सोवियत-रूस की युद्ध-घोषणा
	अगस्त 25	पार्टी-घोषणा
	दिसम्बर	मास्को में त्रिशक्ति-सम्मेलन
1946	जनवरी 10	च्यांग का गृहयुद्ध
	जुलाई	च्यांग का आक्रमण और जन-मुक्ति-सेना का जवाबी हमला
	अक्तूबर 10	जन-मुक्ति-सेना की च्यांग के विरुद्ध घोषणा
	दिसम्बर	माओ की पुस्तक 'वर्तमान स्थिति और हमारे करणीय' निकली

1947	मार्च	लाल राजधानी येनान् च्यांग के हाथ में
	दिसम्बर	मंचूरिया पर जन-मुक्ति-सेना का प्रत्याक्रमण
1948		उत्तरी चीन च्यांग के हाथों से मुक्त
1949	अप्रैल 21	यांग ची के दक्षिण जन-मुक्ति-सेना का प्रयाण
	अप्रैल 23	नानकिंग पर लाल झंडा
	अप्रैल 28	शांघाइ मुक्त
	जुलाई 1	माओ का भाषण 'जनता की जनवादी अधिनायकता'
	सितम्बर 21	पेकिंग में राजनीतिक-सलाहकार-सम्मेलन आरम्भ
	सितम्बर 23	निंग स्या की राजधानी मुक्त
	अक्तूबर 21	माओ की अध्यक्षता में चीन की केन्द्रीय सरकार का पहला अधिवेशन
	अक्तूबर 14	कान्तन् मुक्त
	अक्तूबर 20	सिंगक्यांग मुक्त
	नवम्बर 30	चुंगांचग मुक्त
	दिसम्बर 9	युन्नान् और सीकांग मुक्त
	दिसम्बर 16	माओ मास्को में
	दिसम्बर 27	जेचुआन राजधानी चेंग तू मुक्त
1950		हेनान् द्वीप मुक्त
1950	जनवरी 20	चाओ एन्-लाई मास्को में
	फरवरी 14	चीन-सोवियत-सन्धि पर हस्ताक्षर
	मार्च 4	माओ और चाउ एन्-लाई पेकिंग लौटे
	अप्रैल 1	भारत से दौत्य-सम्बन्ध स्थापित
	अप्रैल 30	हेनान् द्वीप मुक्त
	मई 17	चौशान द्वीपसमूह मुक्त
	जून 6	सातवीं पार्टी-कांग्रेस
	जून 27	ताइवान (फारमूसा) पर अमेरिकन नियंत्रण
	जून 30	भूमि-सुधार कानून लागू
	अक्तूबर 2	कोरिया में अमेरिकन आक्रमणकारियों ने 38 अक्षांश पार किया
	अक्तूबर 25	चीनी स्वयंसेवकों की कोरिया में अमेरिकनों से प्रथम भिड़न्त
1951	अप्रैल 21	कोरिया में अमेरिकन आक्रमणकारी 38वीं अक्षांश तक भगे
	मई 30	तिब्बत-चीन समझौता
	जुलाई 10	कोरिया में समझौते के लिए बात शुरू
	अक्तूबर 12	'माओ संक्षिप्त ग्रंथावलि' की प्रथम जिल्द प्रकाशित
1952		पुनर्निर्माण-कार्य
	मार्च 7	अमेरिका ने कीटाणु-युद्ध शुरू किया
1953	जनवरी 21	प्रथम पंचवार्षिक योजना आरम्भ
	मार्च 1	'निर्वाचन कानून' स्वीकृत
	मार्च 30	कोरिया में शान्ति की बात के लिए चाओ एन्-लाइ का वक्तव्य
		कोरिया सन्धि-वार्ता फिर आरम्भ
		कोरिया सन्धि, विराम-सन्धि पर हस्ताक्षर

पुस्तक-सूची

1. गाँधी, शान्ता : 'माओ चे-तुंग' गुजराती, चेतन प्रकाशन, बम्बई 1951 ई.
2. च्यांग काई-शेक : 'चीन का भाग्य' अनुवादक श्री कृष्णकिंकर सिंह, विश्वभारती, शान्तिनिकेतन 1948 ई.
3. माओ चे-तुंग : 'आत्मकथाएँ' मराठी लोक-साहित्य, बम्बई 1950 ई.
4. बेनीपुरी, रामवृक्ष : 'लाल चीन', ग्रंथमाला कार्यालय, पटना 1939 ई.
5. मेहता, हुक्मराज : 'नया चीन', राजस्थान विश्वविद्यापीठ, उदयपुर 1951 ई.
6. राय, सुप्रकाश : 'छोटे देर माओ चे-तुंग' बंगला, चक्रवर्ती ब्रदर्स, कलकत्ता 1951 ई.
7. वर्मा, शिव : 'माओ त्से-तुंग' प्रभात प्रकाशन, लखनऊ 1951 ई.
8. सांकृत्यायन, राहुल : 'आज की राजनीति' आधुनिक पुस्तक भवन, कलकत्ता 1951 ई.
9. हू चियाओं मू : 'चीन की कम्युनिस्ट पार्टी के तीस वर्ष', पी. पी. एच. बम्बई 1952 ई.
10. Chen Po-Ta : 'Mao Tse-Tung on the Chinese Revolution', Foreign Language Press, Peking, 1953
11. 'China Reconstructs' (Journal) Peking, 1953
12. Chou En-Lai : 'Peoples New Literature', Cultural Press, Peking 1950
13. Chu Teh : 'On the Battlefronts of the Liberated Areas' F. L. P. Peking 1945
    : 'The Great Victory of the Chinese People's Liberation Army.' F. L. P. 1952
14. Emi Sio : 'Mao Tse-Tung : His Childhood and Youth.'
15. Hsao Chien : 'How the Tillers win back their Land' F. L. P. 1951
16. Mao Tse-Tung : 'New China Forges Ahead' F. L. P. 1952
    : 'New Economic Achievements' (1949-52) F. L. P. 1952
    : 'On Contradiction' F. L. P. 1952
    : 'On People's Democratic Dictatorship' F. L. P. 1952
    : 'On Practice' F. L. P. 1952
    : 'Problems of Arts and Literature' P. P. H. 1952
    : 'Strategic Problems of Chinese Revolutionary War' P. P. H. 1951
17. 'People's China' (Journal), Peking 1953
18. Tsui Chi : 'A Short History of Chinese Civilization', London 1945

□□